भारत मे
आर्थिक राष्ट्रवाद का
उद्भव और विकास

दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड
नई दिल्ली बंबई कलकत्ता मद्रास

समस्त विश्व में सहयोगी कंपनियां

अनुवाद डी आर चौधरी

प्रथम अंगरेजी संस्करण 1966
'दि राइज एंड ग्रोथ आफ इकनामिक
नेशनलिज्म इन इंडिया' का अनुवाद
प्रथम हिंदी संस्करण 1977

भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद द्वारा प्रवर्तित

एस जी वसानी द्वारा दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड
के लिए प्रकाशित तथा ग्रंथ भारती दिल्ली 110032 में मुद्रित।
B Chandra BHARAT MEN ARTHIK RASHTRAVAD
KA UDBHAVA AUR VIKAS

अनुसधान परिषद की ओर से

भारतीय इतिहास अनुसधान परिषद के अनेक उद्देश्यो मे एक है शोध की उपलब्धियो को उस पाठकवग तक पहुचाना जो हमसे यह अपेक्षा रखता है कि हम भारतीय भाषाओ मे इतिहास सबधी रचनाए तैयार तथा प्रकाशित करें। अगरेजी भाषा के माध्यम से भारतीय इतिहासविद अतर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे पहुच सकते है नाम और प्रतिष्ठा अर्जित कर सकते हैं, किंतु भारतीय पाठकवग का यह छोटा अश ही इससे लाभ उठा पाता है। शिक्षण और अनुसधान के माध्यम के रूप मे हिंदी तथा अ य भारतीय भाषाओ के प्रयोग की प्रवृत्ति बल पकड रही है। ऐसी स्थिति मे इतिहास की स्तरीय पुस्तको की कमी गभीर रूप से अनुभव की जा रही है। सबसे पहले हमे भारतीय इतिहास की ओर ध्यान देना है। अत भारतीय इतिहास अनुसधान परिषद ने कुछ गौरव ग्रथो (क्लासिक्स) तथा इतिहास विषयक शोध की निर्दोष पद्धतियो पर आधृत और इतिहास की समकालीन प्रवृत्तियो को प्रतिबिंबित करने वाली कुछ अन्य पुस्तको का अनुवाद कराने का निश्चय किया है।

ब्रिटिश शासन से मुक्ति के लिए किए जाने वाला राष्ट्रीय आदोलन कई अवस्थाओ से गुजरा था। भारतीय नेताओ के आर्थिक विचारो से इस आदोलन को नया आधार मिला जिसकी वजह से यह और ज्यादा सुदृढ हुआ। हमारे नेता आग्रहपूवक जिन आर्थिक विचारो को प्रस्तुत कर रहे थे उनमे धनोत्सरण (वेल्थड्रेन) का सिद्धात प्रमुख था। इसमे इस बात की ओर इगित किया गया था कि भारत का धन लगातार ब्रिटेन जा रहा था क्योकि विदेशी शासको के अत्यत महगे सनिक तथा गरसनिक तत्र का रखरखाव बहुत ही खर्चीला था जिसकी वजह से जनता के ऊपर कज का दबाव बढता जा रहा था।

भारतीय नेताओ ने लोगों के सामने ब्रिटिश शासन के औपनिवेशिक चरित्र को खोल कर रखा और उसके ऊपर कल्याणकारी राज्य का जो मुलम्मा चढा था उसे पोछ दिया। ब्रिटिश शासको ने इस मुलम्मे को बनाए रखने की जी तोड कोशिश की थी। इसके बाद के चरण मे पहुचने पर आदोलन को काफी बल मिला।

प्रस्तुत कृति समाचारपत्रो, पत्रिकाओ तथा अन्य विविध स्रोतो से उपलब्ध प्रमाणो के आधार पर भारतीय नेताओ की आर्थिक नीतियो का विश्लेषण विवेचन करती है। इनकी

आगे चलकर स्वदेशी आंदोलन ने सबसे [illegible] तथा ऊ[illegible] [illegible] प्रदान किया।

पुस्तक का प्रकाशन पटना यूनिट के प्रयासों का परिणाम है जिसके लिए [illegible] डी० आर० चौधरी तथा अन्य सभी सहयोगियों के प्रति हम धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

10 मार्च 1977
नई दिल्ली

रामशरण शर्मा
अध्यक्ष
भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद

प्राक्कथन

भारत मे ब्रिटिश शासन से मुक्ति की प्रक्रिया की शुरुआत पिछली शताब्दी के आरभ मे हुई। इस आदोलन का अनेक उतारचढाव देखने पडे। इसमे बहुत से तत्व थ परतु इसका मूल स्वरूप शातिपूण क्राति का था। विदेशी प्रभुत्व की अग्रगति को रोकन का प्रथम उत्साह तथा आक्रमणशील साम्राज्य के पहले शिकार भारतीय रियासतो द्वारा विरोध जब नाम शेष रह गया तो उस समय पनपते शिक्षित नागर मध्यम वग न देश के प्रशासन मे अपनी भावना के प्रदशन के लिए सावैधानिक आदोलन का माग अपनाया। उनकी गतिविधि का प्रमुख साधन सावजनिक प्रेस और राजनीतिक अथवा सामाजिक सगठन थे जिनने मच का उन्होंने जनता की मागो को मनवाने के लिए और जनता के कष्टो को दूर करने के लिए उपयोग किया। लोकमत की यह प्रारभिक अभिव्यक्ति प्रधानरूप मे बडे बडे नगरो तक ही सीमित थी और उसका एकमेव उद्देश्य अधिकारियो को आवेदनपत्र प्रस्तुत करना ही था। यह प्रधान रूप से उस समय इग्लड मे व्याप्त उसकी न्यायवृत्ति तथा उदारतावाद की भावना को जगाने के लिए उसकी आत्मा के प्रति एक प्रकार से विश्वास को लेकर किया गया निवेदन मात्र था। बहुत सारे भारतीय प्रशासक उपयोगितावाद के विचारो से अत्यत प्रभावित थे और भारत मे लोकहित के ही राज्य का एकमात्र उद्देश्य होने के सिद्धात मे दढ विश्वास रखते थे। फिर भी उनकी नीतियो का निर्धारण भारतीय जनता के हित की दष्टि स न होकर ईस्ट इडिया कपनी के लाभ के उद्देश्य से ब्रिटिश उद्योग के विकास की दृष्टि से और ब्रिटिश जनता की समद्धि और प्रगति की भावना से ही होता था। भारत की अधिकाश जनता की आर्थिक दशा पर इसके अपरिहाय प्रतिघातो का होना स्वाभाविक ही था। भारत की अथव्यवस्था मे एक महत्वपूण परिवतन आने लगा था। उसकी आत्मनिभरता और स्वस्थ सतुलन तथा अतीत मे पश्चिम की दष्टि से भारत को सोने की चिडिया बनाने वाला कृषि और उद्योग के मध्य समन्वयन शीघ्रता से नष्ट होता जा रहा था। भारतीय अथव्यवस्था ब्रिटन की अथव्यवस्था के अधीन हो गई और उसकी कृषि का प्रमुख उद्देश्य इग्लड के पनपत उद्योग की आवश्यकता के लिए कच्चे माल की पूर्ति करना रह गया। भारत के औद्योगिक

के नियाना का स्थान कपास और मसाला ने ले लिया। अब आयात भी केवल मात्र सूती तथा अन्य गिनी चुनी विलास सामग्रियों तक ही सीमित न रहा। आयात स्थान भी सूती वस्त्र और अन्यान्य दैनिक उपभोग की उत्पादित वस्तुओं ने ले लिया। विदेश व्यापार की प्रकृति में यह परिवर्तन भारतीय उद्योगों के ह्रास या कृषि पर बढ़ती निर्भरता का तथा इस सबके फलस्वरूप भारत के तेजी से निर्धनता की ओर धकेले जाने का सूचक था। इस परिस्थिति के प्रति जागरूकता ने लोकमत की अभिव्यक्ति में एक प्रबल परिवर्तन ला दिया। अब क्रमश छोटे मोटे प्रशासनिक सुधारों के लिए विनय और मृदु प्रार्थनाओं का स्थान शासकों की नीतियों और उनके व्यवहार की उग्र आलोचना ने ले लिया।

1857 के विद्रोह को मैं व्यक्ति तथा अपराधशाही द्वारा असाधारणीय दमन से दबा जाने से कुछ समय के लिए राजनीतिक अभिव्यक्ति अवश्य पथभ्रष्ट हो गई थी परन्तु विद्रोह की ज्वाला भीतर ही भीतर सुलगती रही तथा राजनीतिक संस्थाओं के जन्म तथा पत्रकारिता उद्योग के विकास के रूप में भारतीय जनता ने अपने आक्रोश को अभिव्यक्त किया। उसका आकार निरंतर बढ़ता गया और अपराधशाही की स्कीमियाँ या वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट जैसे हथकंडे उसकी प्रगति को रोकने में सफल नहीं हो पाए। समाचारपत्रों और पत्रिकाओं की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई और उनमें से अधिकांश ने अपने अपने ढंग से जनता (विशेषत नागर मध्य वर्ग) की भावनाओं को अभिव्यक्ति देने के लिए अथक प्रयत्न किए। विभिन्न प्रांतीय केंद्रों में अनेक राजनीतिक संगठनों की भी स्थापना हो गई। इनमें से बहुतों ने अखिल भारतीय प्रकृति की समस्याओं पर विचार करने का व्यापक दृष्टिकोण अपनाया। उन्नीसवीं शताब्दी की आठवीं दशाब्दी में किए जा रहे प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप शताब्दी की नवीं दशाब्दी के मध्य में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के रूप में सामने आया। इस संस्था ने भारतीय जनता की शिकायतों को वाणी देने के लिए तथा सरकार की प्रकृति में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की दृष्टि से आर्थिक तथा राजनीतिक मांग पेश करने के लिए एक निरंतर सशक्त होने वाला मंच जुटाया। इन संगठनों का एक प्रमुख उद्देश्य संवैधानिक विकास के लिए और उसके फलस्वरूप राज्य की नीतियों के निर्धारण और कार्यान्वयन में भारतीयों के अधिकाधिक भाग लेने के लिए सरकार पर दबाव डालना था। तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए सर्वसाधारण के लिए तथा जनता के विशाल समुदाय के लिए इन राजनीतिक संगठनों के साथ स्वेच्छापूर्वक संबंधित होना कठिन था और जनता के व्यापक रूप से भाग न लेने के कारण सरकार पर वांछनीय रूप से दबाव नहीं डाला जा सकता था। इस प्रकार सरकार अपेक्षाकृत रूप से उच्च वर्ग के राजनीतिज्ञों के तर्कों से अप्रभावित ही रही। जनता कोरी संवैधानिक प्रगति के कार्यक्रम से विशेष रूप से प्रभावित न हो सकी क्योंकि यह संस्थाओं की प्रतिनिधिरूपता और सेवाओं के भारतीयकरण की दृष्टि से कोई विशेष अर्थ ही नहीं रखता था। लोग भारी कर, बेकारी तथा जीवनोपयोगी वस्तुओं के अभाव से पीड़ित थे और यह सब उस समय की भारतीय अर्थव्यवस्था की निरंतर विशेषताएं थीं। आर्थिक अपील ही एक ऐसी अपील थी जो इन लोगों की मूर्छा को भंग कर सकती थी। उनके सक्रिय और स्पष्ट समर्थन के बिना भारतीय राजनीतिक आन्दोलन का दुर्बल रह जाना निश्चित था। अत उनकी आमण्यता

को दूर करने के लिए तथा सरकार पर भारी दबाव डालने के लिए राजनीतिक नेताओ को अपना सारा ध्यान जनता की दीन हीन दशा की ओर लगाना ही पडा। उन्ह लोगो के कष्टो के निदान तथा उनके आर्थिक कष्टो के लिए उत्तरदायी तत्वो का विश्लेषण करना ही पडा। भारतीय नेताओ के आर्थिक विचारो का उदय इसी सदभ म हुआ।

दादाभाई नौरोजी ने इस दिशा मे नेतत्व दिया तथा 19वी शताब्दी के अतिम कुछ दशको मे आर्थिक चिंतन मे कितने ही प्रतिभाशाली आर्थिक विचारको ने उनका अनुसरण किया। रानाडे, जोशी, गोखले, जी०एस० अय्यर, वाचा और दत्त आदि कुछ ऐसे प्रतिभाशाली महानुभावो मे से ह जिनका योगदान बहुमुखी है और जिन्हने उस समय के आर्थिक चिंतन की रूपरेखा निधारित की। भारतीय पत्र पत्रिकाओ ने इस काय को वडे उत्साह के साथ अपने हाथ मे लिया और सारे देश मे विभिन्न मचो से इसका प्रचार प्रसार किया गया था। भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के प्रस्तावो और भाषणो मे इन्ही लोगा के विचारो को मूत रूप मिला। इस प्रकार इन नेताओ के आर्थिक विचारो न पनपते हुए स्वदेशी आदोलन को पुष्ट किया, उसके लिए नया आधार जुटाया और उस सुदृढ बनाया। उस समय मूल प्रश्न भारत मे ब्रिटिश राज्य के समाघात और उसके परिणामो का था। 19वी शताब्दी के उत्तराध मे ब्रिटिश राजनीतिज्ञो और भारत की अफसरशाही ने गोरो के उत्तरदायित्व के सिद्धात पर बल देते हुए यह सिद्ध करने की चेष्टा की कि भारत ने ब्रिटिश राज्य के अतगत सवतोमुखी प्रगति की है और इसलिए यहा साम्राज्यवादी प्रभुत्व उचित है। सभी यूरोपीय साम्राज्यवादी शक्तियो न क्षेत्रीय अधिकार और विश्व मे अपने प्रसार का मुख्य उद्देश्य वहा की जनता को सुसभ्य बनाना घोषित किया था। इस प्रकार उपनिवेशवाद को एक नए रूप मे और एक नए ढग से पेश किया जा रहा था जबकि आर्थिक शोषण की उसकी मूल प्रकृति मे नाममात्र का भी अतर नही आया था। भारत म भी ब्रिटिश राज्य के समथक इसकी विभिन्न देनो—शाति, नवीन शिक्षा और इन सबसे बढ कर रेलो सडको तथा अन्य लोक कर्मों के विस्तार के रूप मे अभिव्यक्त देश की बढती हुई सपन्नता के लिए अगरेजी राज्य का गुणगान करन लगे। बहुतो ने मुगल शासनकालीन और 19वी शताब्दी की (ब्रिटिश शासनकालीन) आर्थिक स्थितिया के अतर का विवेचन किया और तथ्यो को तोडमरोडकर प्रस्तुत करते हुए ब्रिटिश राज्य मे वतमान आर्थिक दशा का स्वर्णिम चित्र प्रस्तुत किया। नरम दलीय नेता सास्कृतिक सपर्को स प्रभावित थे तथा ब्रिटिश साम्राज्य की ससदीय शासन प्रणाली के प्रति आदर का भाव रखत थे। इसके अतिरिक्त देश म ऐस बहुत लोग थे जो ब्रिटिश शासन के परिणामस्वरूप देश म हान वाली समृद्धि के प्रचार स प्रभावित थे। ब्रिटिश शासन से मुक्ति के आदालन की किसी प्रकार की प्रगति और सफलता के लिए इन भ्रात धारणाआ का निमूल करना आवश्यक था। दादाभाई नौरोजी आर अन्यान्य नेताओ का उल्लेखनीय यागदान यह था कि उन्होन इस भ्रम को तोडा और ब्रिटिश राज्य की वास्तविकता को उजागर किया। इस काय को करत हुए उन महानुभावो ने राष्ट्रीय आदालन को एक नया और सुदढ आधार दिया और उग्रवादी दृष्टिकोण के विकास मे सहायता दी जिसन स्वराज्य का माग तयार किया।

भारतीय नेताओ के आर्थिक विचारो का मुख्य विषय था, निकासी सिद्धात, जिसका

सीधे-सादे शब्दों में अभिप्राय था, आयातों पर निर्यातों की अधिकता के रूप में तथा विदेशी राज्य के अत्यन्त महंगे सैनिक और नागरिक प्रशासन तंत्र की व्यवस्था के लिए भारत से इंग्लैंड को निरंतर धन की निकासी का एक प्रकार का निराकरण था। उन्होंने इस तथ्य को भी उजागर किया कि भारतीय कर दाता अपने शासन का अब तक प्रचुर मूल्य अदा कर चुके हैं क्योंकि साम्राज्यीय विस्तार के लिए किए गए युद्धों का भार भारतीय वित्त व्यवस्था को ही उठाना पड़ा है। बढ़ते हुए सरकारी ऋण जनता के लिए भारी बोझ बन गए हैं। इसी प्रकार ब्याज की जमानत के रूप में रेल पथों का निर्माण तथा अत्यन्त महंगे सरकारी नगर निर्माण भी भारतीय राजस्व के लिए बड़ा भारी भार सिद्ध हो रहे हैं। रेलें भी साम्राज्यवाद की अपनी सुरक्षा का एक साधन है। जबकि भारतीय कृषि एवं जनता का पेट भरने के लिए सिंचाई की आवश्यकता है तब ब्रिटिश पूंजीपतियों और इस्पात उद्योग को भारत को अकाल से छुटकारा दिलाने के लिए रेल पथों के सीना-जोर विस्तार से लाभ हुए हैं। इन नेताओं के विचारों के अनुसार निकासी के उल्लेखनीय मार्ग थे, गृह प्रभार इंग्लैंड को भेजी जाने वाली ब्रिटिश अधिकारियों और व्यापारियों की बचतें तथा सैनिक प्रभार। इस विषय को भारतीय करों की जांच के लिए नियुक्त रायल कमीशन के सामने गोखले ने बड़ी ही योग्यता से यह निर्देश करते हुए प्रस्तुत किया कि भारतीय सेनाओं का दोनों स्थानों पर भारत की सीमाओं पर तथा अन्यत्र शाही उद्देश्यों के लिए ही उपयोग किया जा रहा है। यह निकासी भारत की दरिद्रता का कारण है, भारत के आर्थिक विकास को शिथिल बनाने का तथा औद्योगिक विकास को पंगु बनाने का कारण है। भारतीय नेताओं द्वारा प्रहार का दूसरा लक्ष्य ब्रिटिश सरकार की सीमा शुल्क नीति थी जो न केवल अन्यायपूर्ण ही थी प्रत्युत देश के शिशु उद्योग का गला घोंटने और कुटीर उद्योग की हत्या करने के निश्चित उद्देश्य से भी प्रेरित थी। बदले की भावना से कपास पर सीमा शुल्क का लगाना और कपास पर आयात शुल्क का हटाना ब्रिटिश सूती वस्त्र उद्योग के हित में भारत के साथ किए जा रहे अन्याय के प्रत्यक्ष और स्पष्ट प्रमाण थे। आर० सी० दत्त ने कृषकों के रक्त को चूसने वाली और लगातार अकालों को जन्म देकर भारत को दरिद्र बनाने वाली भारत सरकार की राजस्व नीति को नंगा करने का बीड़ा उठाया। भारतीय जनता को असामान्य रूप से प्रभावित करने वाले इस सन्दर्भ के तर्कों से कर्जन की सरकार तिलमिला उठी।

इस प्रकार इन प्रारंभिक भारतीय अर्थशास्त्रियों ने ब्रिटिश राज्य के उपनिवेशवादी चरित्र को नंगा करके रख दिया। ब्रिटिश राजनीतिज्ञों और अर्थशास्त्रियों ने स्थिति की वास्तविकता को छुपाने का जो प्रयास किया था इन भारतीयों ने उस पर पानी फेरते हुए ब्रिटिश राज्य के लोक कल्याणकारी नकली मुखौटे को उघाड़ कर रख दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध लेखों की झड़ी लग गई, जिनमें भारतीय जनता के हितों की घोर उपेक्षा का सरकार पर आरोप लगाया गया। राजनैतिक आंदोलन की परवर्ती उल्लेखनीय धाराओं का भी इसी स्रोत से उद्गम हुआ तथा विदेशी शासन के विरोध ने तेजी पकड़ी।

डा० विपनचन्द्र ने समकालीन लेखों का उपयोग किया है तथा भारतीय आंदोलन

के प्रारभिक नेताओ के आर्थिक विचारो के विश्लेपण के लिए समाचारपत्रो का प्रचुर प्रयोग किया है। इस प्रकार उन्होने विकास काल के राष्ट्रीय आदोलन को और उसके विकास को समझने मे महत्वपूण योगदान दिया है। मुझे इस कार्य को व्यापक जनता के समक्ष प्रस्तुत करने मे महान हर्ष का अनुभव हो रहा है। मुझे पूण विश्वास है कि यह ग्रथ अन्य लोगो को उपनिवेशवादी अधीनता से स्वतत्रता की ओर भारतीयो को उन्मुख करने वाली आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक स्थितियो के विश्लेपण के लिए प्रोत्साहित करेगा।

—विशेश्वर प्रसाद

आमुख

यह पुस्तक 'भारतीय राष्ट्रीय नेतृत्व की आर्थिक नीतिया (1880 से 1905)' शोध प्रबंध का सशोधित रूप है, जो 1963 मे दिल्ली विश्वविद्यालय मे पी०एच०डी० की उपाधि के लिए स्वीकार किया गया था। स्वदेशी आदोलन द्वारा भारतीय राष्ट्रीय आदोलन को एक ऊचे और भिन्न स्तर तक ले जाए जाने से पहले राष्ट्रीय नेताओ की जो आर्थिक नीतिया रही, उन्ही की जाच करना इस पुस्तक का उद्देश्य है।

मैंने उन सभी व्यक्तियो को नेता माना है जिन्होंने आर्थिक प्रश्नो पर उभर रहे राष्ट्रीय जनमत को बनाने और दिशा देने का काय किया। इसी तरह मैंने इस अध्ययन म न केवल भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस, प्रातीय सम्मेलनो दूसरी लोक सस्थाओ एव विधान परिषदो की कार्यवाहियो तथा प्रमुख राष्ट्रवादी व्यक्तियो के व्याख्यानो तथा रचनाओ पर, अपितु उन राष्ट्रवादी पत्र-पत्रिकाओ पर भी निभर किया है जो उन दिनो राष्ट्रीय आदोलन के मुख्य मच और जनमत के प्रभावशाली निर्माता थे। वास्तव मे उस समय निरतर क्रियाशील और सुसगठित किसी राष्ट्रवादी राजनीतिक दल के अभाव मे, क्योकि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस तब तक इस प्रकार का सगठन नही बन पाई थी और तब तक विशाल और आम सभाओ की परपरा भी नही प्रारभ हुई थी राष्ट्रवादी समाचारपत्रो ने ही दनदिन प्रशासन मे विरोध पक्ष की भूमिका निभाई। भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस तथा दूसरी राष्ट्रीय सस्थाओ के प्रस्ताव तथा उनकी कायवाहिया भी मात्र जितना राष्ट्रवादी समाचारपत्रो के माध्यम स छनकर जनता तक पहुच पाती थी उसी सीमा तक जनमत को बनान मे समथ हो पाती थी। यह भी उल्लेखनीय है कि उस समय की बहुत सी पत्र-पत्रिकाओ को उनके मालिक और सपादक व्यावसायिक दष्टि से नही बल्कि स्वय कुछ हानि उठाकर भी राष्ट्रवादी पत्र के रूप मे निकालते थे। इतना ही नही बहुत से सपादको का गहरी निम्न मध्यवर्गीय जीवन से घनिष्ठ सबध था।

मैंने अगरेजी या आग्ल भाषा मे प्रकाशित तत्कालीन अनेक प्रमुख राष्ट्रवादी पत्र-पत्रिकाओ का जिनमे मराठा', 'हिंदू' 'अमृत बाजार पत्रिका', तथा बगाली सम्मिलित हैं मूल रूप मे अध्ययन किया है। इसके अलावा भारतीय भाषाओ के सम के

अध्ययन के लिए मैंने विभिन्न प्रांतों के लिए अप्रकाशित 'रिपोर्ट्स ऑन द नेटिव प्रेस' का उपयोग किया है। रिपोर्ट्स ऑन द नेटिव प्रेस में भारतीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित संपादकीय टिप्पणियों व लेखों का साप्ताहिक संक्षिप्त या पूर्ण विवरण सरकार द्वारा दिया जाता था। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक, जब कि इन रिपोर्टों में भारतीयों द्वारा चलाए जाने वाले समाचारपत्रों की सामग्री का भी समावेश किया जाने लगा, बंबई रिपोर्ट में अंग्रेजी और भारतीय भाषाओं दोनों के समाचारपत्रों की सामग्री रहती थी, जबकि अन्य प्रांतों की रिपोर्टों में केवल भारतीय भाषाओं के पत्रों की। ये रिपोर्टें पूर्ण रूप से गोपनीय थीं और केवल सिविल सर्विस के एक खास ऊपर के स्तर के कर्मचारियों को ही उपलब्ध होती थीं। उनमें सामग्री के निष्पक्ष एवं सही पुनः प्रस्तुतीकरण में उच्च स्तर का निर्वाह किया जाता था, हालांकि कुछेक रिपोर्टों, विशेषकर मद्रास की रिपोर्ट के विवरण पर्याप्त नहीं रहते थे।

प्रस्तुत कृति में उन तमाम व्यक्तियों, संस्थाओं और पत्र-पत्रिकाओं को राष्ट्रीय माना गया है जिन्होंने भारत को एक उभरते हुए राष्ट्र के रूप में देखा, जहां के लोगों के हित एवं नियति व्यापक अर्थ में साझे थे, जिनका अंतिम लक्ष्य अपने लोगों के लिए स्वशासन प्राप्त करना था और जिन्होंने सामाजिक विषयों पर मुट्ठी भर लोगों के दृष्टिकोण को अपनाने की बजाय देश की समस्त या अधिकांश जनता के दृष्टिकोण से सोचने की चेष्टा की। इस विषय में कसौटी इस बात को माना गया है कि वे क्या दावा करते थे, न कि इस बात को कि वे व्यवहार में क्या चाहते थे। इस दूसरे पहलू का शोध प्रबंध के मुख्य भाग में विस्तार से विश्लेषण किया गया है। दूसरे शब्दों में मैंने केवल उनको राष्ट्रीय नेता नहीं माना है जिन्होंने खुलेआम भारत को एक राष्ट्र या इसकी जनता के साझे राजनीतिक भाग्य को मानने से इनकार किया, या उन्हें जो खुल्लमखुल्ला थोड़े से लोगों के प्रतिनिधि बनकर सामने आए। इस प्रकार मैंने हिंदू-मुस्लिम और पारसी संप्रदायवादियों तथा 1888 के बाद के 'रास्त गोफ्तार' और 1901 के बाद के 'हिंदुस्तान जैसे समाचारपत्रों' को छोड़ दिया है। 'दि ब्रिटिश इंडिया एसोसिएशन' तथा 'हिंदू पैट्रियट' को भी छोड़ दिया है क्योंकि 1881 तक वे अपना मौलिक राष्ट्रीय स्वरूप खो चुके थे और खुलकर जमींदारों के हितों की वकालत करने लगे थे।

इस अध्ययन में मेरी रुचि इस बात में उतनी अधिक नहीं रही है कि किसी आर्थिक विचारधारा या नीति के जन्मदाता कौन थे जितनी कि उसके प्रचारकों तथा प्रचार की सीमा और उसके पीछे चलने वाले राजनीतिक आंदोलन के परिमाण और प्रकार में। पाद टिप्पणियों में बहुत से नेताओं एवं समाचारपत्रों का हवाला इसलिए दिया गया है ताकि इस प्रयत्न से उस काल में व्यापक रूप से प्रचलित कुछ नीतियों को प्रकाश में लाया जाए। इसी प्रकार मैंने यह जानने की चेष्टा नहीं की है कि अर्थशास्त्र के नियमों के अनुसार उक्त राष्ट्रवादी रुख और नीतियां सही थीं या नहीं। मैंने अपने आप को इस बात तक ही सीमित रखा है कि राष्ट्रीय नेताओं ने क्या कहा और कैसे कहा तथा हम इससे उनकी आधारभूत आर्थिक और राजनीतिक समझ तथा दृष्टिकोण के बारे में क्या जान सकते हैं। उपर्युक्त पहले कार्य को करने के लिए तो उस काल के भारत का एक बृहद्

आर्थिक इतिहास ही लिखना पडेगा और सभवत इससे भी बहुत कुछ अधिक करना पडेगा। मैंने समकालीन आर्थिक विकास की रूपरेखा प्रस्तुत करने के लिए गौण स्रोतो का उपयोग किया है।

निश्चय ही यह अध्ययन भारतीय राष्ट्रवाद के सास्थानिक आधार के बारे मे नही है जिसके मूल मे वर्ग तथा दूसरे मानवीय सबध होते हैं बल्कि यह इसके सैद्धातिक कार्यक्रम सबधी पहलुओ के बारे मे है। यो पहले को जाने बिना भारतीय राष्ट्रीय आदोलन का पूर्ण ज्ञान सभव नही है। फिर भी मैं आशा करता हू कि प्रारभिक राष्ट्रीय नेताओ के मानस मे पडे आर्थिक यथार्थता के प्रतिबिंब का यह अध्ययन उपयोगी सिद्ध होगा, क्योकि यद्यपि सामाजिक सबधो का अस्तित्व इस बात पर निर्भर नही होता कि लोग उनके बारे मे क्या सोचते हैं फिर भी इन सबधो के बारे मे लोगो की समझ उनकी सामाजिक एव राजनीतिक गतिविधि के लिए निर्णायक होती है। इस प्रकार किसी आदोलन के द्वारा यथार्थ को समझने, इसके लक्ष्यो का निर्धारण करने और सही दिशा मे परिवर्तन लाने के लिए प्रयोग किए जाने वाले राजनीतिक एव बौद्धिक साधनो का अध्ययन उतना ही आवश्यक है जितना कि आदोलन को जन्म देने वाली सामाजिक एव आर्थिक शक्तियो का अध्ययन। अत यह अध्ययन औपनिवेशिक आर्थिक सबधो के विकास या भारत की आधुनिक आर्थिक शक्तियो या वर्गों के उदय की रूपरेखा प्रस्तुत नही करता। हमारी समस्या 1880 से 1905 के बीच भारत मे 'अगरेजी साम्राज्यवाद के आर्थिक आधार एव नीतियो की राष्ट्रीय बोध शक्ति के क्रमिक विकास के साथ साथ एक स्वतत्र राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सवर्धन के लिए एक वैकल्पिक राष्ट्रीय कार्यक्रम के विकास का अध्ययन करना रही है। मुझे आशा है कि मैं उस परिणाम के रूप मे भारतीय राष्ट्रीय आदोलन के अग्रदूतो की बौद्धिक क्षमता के स्तर और उनकी राजनीतिक एव बौद्धिक ईमानदारी तथा साहस को प्रकाश मे लाने मे भी सफल हुआ हू। प्रस्तुत अध्ययन मे उद्धरणो की अधिकता के मूल मे राष्ट्रीय आर्थिक आदोलन के प्रकार तथा विशेषता का सही सही रूप मे प्रकाश मे लाने की इच्छा ही निमित्त कारण रही है। प्राय राष्ट्रीय नेताओ का किसी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने का तरीका उतना ही महत्वपूर्ण होता है जितना कि स्वय वह दृष्टिकोण। इसके अतिरिक्त उसे मूल रूप मे प्रस्तुत करने से उनके अर्थशास्त्रीय ज्ञान का स्वरूप भी और अधिक अच्छी तरह सामने आ जाता है। हर हालत मे, जैसा कि विंस्टन चर्चिल ने कहा है 'मौके पर कही गई एक बात बाद मे कही गई हजार बातो के बराबर होती है'।

मैं अपने उन बहुत से मित्रो का अत्यधिक आभारी हू जिन्होने इस कार्य मे मेरी सहायता की है। दिल्ली विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के प्रोफेसर तथा अध्यक्ष डा० विशेश्वर प्रसाद का मैं कितना ऋणी हू, यह शब्दो मे व्यक्त नही किया जा सकता। इस अध्ययन का आरभ मैंने पूर्णत उनके प्रोत्साहन से ही किया। मुझे विचारो की पूर्ण स्वतत्रता देते हुए उन्होंने धैर्य व प्रेमपूर्वक मेरा मार्गदर्शन किया है। उन्होंने उदारतापूर्वक इस अध्ययन का प्राक्कथन लिखने की भी कृपा की है। उनकी निरतर बहुमूल्य समालोचना और सुझावो के बावजूद इसमे यदि बहुत सी गलतिया रह गई हो तो उसका एकमात्र कारण मेरे अपने ज्ञान की अपूर्णता है। मोहित सेन, बी० एम० भाटिया, सुलेख

गुप्ता, ओ॰ पी॰ तोमर और सव्यसाची भट्टाचार्य जैसे मित्रों ने पांडुलिपि को अनेक बार पढ़ा है और बहुमूल्य सुझाव दिए हैं। मैं अपनी 1961-63 की एम॰ ए॰ कक्षा का ऋणी हूं साथ ही विशेषकर श्री अजितकुमार गुहा का भी, जिन्होंने साथ प्रत्यक्ष के अनेक रूप से टंकण संबंधी अनेक छोटे मोटे कार्य किए तथा मेरे साथ लगातार धैर्यपूर्वक विचार विमर्श किया।

मैं अपने कालेज हिंदू कालेज, के अधिकारियों का आभारी हूं जिन्होंने मुझे शोध कार्य के अध्ययन के लिए अवकाश दिया तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के अधिकारियों का भी आभारी हूं जिन्होंने मुझे रॉकफेलर फाउंडेशन द्वारा इतिहास विभाग को दिए गए अनुदान में से शिक्षावृत्ति प्रदान की।

मैं इस अवसर पर हिंदू कालेज पुस्तकालय (दिल्ली), दिल्ली यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी (दिल्ली) दिल्ली स्कूल आफ इकनामिक्स लाइब्रेरी (दिल्ली), सेंट्रल सेक्रेटेरियट लाइब्रेरी (नई दिल्ली) पार्लियामेंट लाइब्रेरी (नई दिल्ली), इण्डियन काउंसिल आफ वर्ल्ड अफेयर्स लाइब्रेरी (नई दिल्ली) एशियाटिक सोसाइटी लाइब्रेरी (बंबई) गोखले इंस्टिट्यूट आफ इकनामिक्स ऐंड पालिटिक्स (पूना) फरगूसन कालेज लाइब्रेरी (पटना), इंडियन एसोसिएशन लाइब्रेरी (कलकत्ता), और नेशनल लाइब्रेरी (कलकत्ता) के पुस्तकाध्यक्षों तथा अन्य कर्मचारियों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता। स्व॰ श्री हेमन्त प्रसाद घोष ने मुझे पुस्तकों, पम्फ्लेटों व समाचारपत्रों की कतरनों के निजी संग्रह का प्रयोग करने की आज्ञा दी, श्री एच॰ सी॰ मित्रा ने अपने घर पर 'डान' पत्रिका को पढ़ने, 'अमृत बाजार पत्रिका', 'हिंदू', व 'केसरी मराठा' ट्रस्ट के प्रबंधकों ने इन समाचारपत्रों की पुरानी फाइलों को देखने तथा कायस्थ सभा इलाहाबाद के अधिकारियों ने 'हिंदुस्तान रिव्यू और कायस्थ समाचार' की पुरानी फाइलों के प्रयोग करने की आज्ञा दी। मैं विशेष रूप से इन सबका आभारी हूं। मैं नेशनल आरकाइव्ज आफ इंडिया नई दिल्ली और नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता के कर्मचारियों को भी धन्यवाद देता हूं जिन्होंने बिना किसी संकोच के अपना सहयोग दिया।

अंत में मैं अपनी धर्मपत्नी ऊषा चन्द्र को धन्यवाद देना चाहूंगा जिन्होंने इस पुस्तक को पूरा करने में हर चरण पर मुझे बहुमूल्य सहायता दी। उन्होंने पांडुलिपि के हर पन्ने को पढ़ा, कीमती सुझाव दिए, आवश्यकता पड़ने पर मुझे प्रोत्साहन दिया तथा टाइप व प्रूफ-प्रति को ठीक करने में मेरी सहायता की। वास्तव में यदि भाषा एवं छपाई की कोई गलतियां इस पुस्तक में रह गई हों तो इसके लिए मेरे साथ वह भी जिम्मेदार हैं।

20 मार्च, 1966

—विपनचन्द्र

अध्यायानुक्रम

भारत की निर्धनता

'यदि यह सिद्ध किया जा सके कि अगरेजी शासनकाल मे भारत भौतिक सपन्नता की दृष्टि म पहले की तुलना मे और अधिक पिछड गया है—तो इसे मैं आत्मनिंदा मानने का एकदम तैयार हू और स्वीकार करता हू कि इस स्थिति मे हम भारत का अपने नियत्रण म रखने का काई अधिकार नही।' जाज हैमिल्टन भारत सचिव

'भारत की घोर दरिद्रता इतनी अधिक उद्वेगजनक है कि किसी भी अन्य देश की सरकार इस प्रकार की स्थिति मे इस प्रश्न को गभीरतापूवक सोचने को विवश हाती, अन्यथा देश मे क्राति हो गई हाती। जनरल आफ पूना सावजनिक सभा[1]

1857 के विद्रोह के तत्काल बाद की दशाब्दियो म शिक्षित भारतीयो, पनपती राष्ट्रीय भावना के उभरते नेताओ, की यह एक आम धारणा थी कि भारत म अगरेजी शासन जनता के लिए काफी लाभदायक था। किन्तु समय के बीतने पर और राजनीतिक चेतना तथा गतिविधि के बढने के परिणामस्वरूप इन लाभो के महत्व तथा इनकी उपयोगिता मे सदह किया जाने लगा यद्यपि लगभग हमारे अध्ययन काल (1880 1905) तक भारतीय राष्ट्रीय नताओ का एक वग अगरेजी प्रभाव मे इस देश म आई कानूनी, सावैधानिक तथा अन्य भौतिकेतर परिणतियो का न केवल वाछनीय ही मानता था अपितु उन्हे अभिस्वीकार भी करता था। सामान्य रूप से यह धारणा बल्ती गई कि आर्थिक दृष्टि से अगरेजी शासन का परिणाम निराशाजनक ही नही प्रत्युत कदाचित हानिकारक भी था। 1867 मे दादाभाई नौरोजी पहले ही कह चुके थे, 'जनसमूह आज तक अगरेजी शासन के लाभो को समझ ही नही पाया है।' 1871 म उन्होने लिखा—'देश निरतर दरिद्र तथा पगु बनता जा रहा है।[4] 1865 66 म उडीसा मे पडे अकाल के साथ 19वी शताब्दी के उत्तराध मे[5] भारत म पडे दुर्भिक्षो की श्रृखला ने देश को इस बुरी तरह स जकडा कि उसके भयकर परिणाम ने अगरजो द्वारा स्वत प्रस्तुत विदेशी शासन मे शातिपूवक तथा सामान्य गति से उन्नतिशील भारत के चित्र को झकझोर कर रख दिया और साथ ही

विवश प्रजा की स्थिति की ओर ध्यान देने के लिए नागरा का विवश कर दिया।[8]

प्रारंभ में बहुत से भारतीय राष्ट्रीय नेताओं का विश्वास था कि उनके शासक और ब्रिटिश जनता भारत की यथार्थ स्थिति से अपरिचित हैं। अतएव वे ब्रिटिश जनता संसद तथा प्रशासकों को वास्तविकता का ज्ञान कराने के लिए एवं समस्याओं की विषमता के प्रति उनका ध्यान आकृष्ट कराने के लिए देश की सही स्थिति की पूरी जानकारी कराना चाहते थे।[9] इसके अतिरिक्त उनकी इच्छा थी कि भारतीयों की वर्तमान आर्थिक स्थिति अवश्य ही अपने सही रूप में जानी तथा आंकी जाए और इस संदर्भ में भारतीयों की आर्थिक स्थिति की यथार्थ आवश्यकताओं का भी उदारतापूर्वक स्वीकार कर लिया जाए[9] ताकि शासक प्रभावशाली ढंग से इस समस्या का और सुधार का सर्वोत्तम ढंग निकाल सकें।[10] इसके अलावा भारतीय, अपनी एकता तथा राष्ट्रीयता की भावना के प्रति सजग होकर, भारत में समकालीन ब्रिटिश अर्थनीतियों के प्रति अपना दृष्टिकोण भी निश्चित करना चाहते थे। इसमें पूर्व भारतीयों का इन नीतियों के प्रति दृष्टिकोण तथा राजनीतिक एवं आर्थिक गतिविधि के क्षेत्र में उनकी कार्यनीति ब्रिटिश नीतियों के मूल्यांकन और उनके आर्थिक परिणामों से ही प्रभावित होती थी।[11]

1870 में भारतीय नेताओं ने अपने देश की आर्थिक बुराइयों की गहरी छानबीन आरंभ की। 27 जुलाई 1870 को दादाभाई नौरोजी ने कला-परिषद लंदन की बैठक में अपना प्रसिद्ध लेख 'भारत की आवश्यकताएं और साधन' पढ़ा।[12] इस लेख में उन्होंने एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया 'क्या इस समय भारत अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त उत्पादन की स्थिति में है?' और फिर इसका उत्तर उन्होंने नकारात्मक दिया।[13] 1873 में अल्पजीवी बंगाली त्रैमासिक 'मुखर्जी मैगजीन' के पृष्ठों में भोलानाथ चंद्र ने भारत में अंगरेजों की आर्थिक नीति पर घातक प्रहार किया।[14] 1876 में दादाभाई नौरोजी ने अपना 'दी पावर्टी आफ इंडिया' नामक महत्वपूर्ण ग्रंथ प्रकाशित किया।[15] 1870 के अंत में महादेव गोविन्द रानाडे ने पूना से 'सार्वजनिक सभा' त्रैमासिक पत्रिका निकाली तथा जी० वी० जोशी के साथ लगभग दो दशाब्दियों तक भारतीय अर्थनीति का और व्यावहारिक रूप से उसके सभी अंगों का अत्यंत सजीव और सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया।[16] सत्य तो यह है कि सामयिक विषयों पर लेख लिखनेवाले प्रत्येक तत्कालीन भारतीय ने भारत की आर्थिक स्थिति पर या तो लेख अथवा पुस्तकें लिखीं, अथवा इस विषय पर सार्वजनिक मंच से या 'चेंबर आफ कौंसिल' में भाषण दिए। इस प्रकार व्यावहारिक रूप से उस समय के राजनीतिक क्षेत्र का सारा साहित्य प्रधान रूप से आर्थिक विषयों से ही संबंधित था। 1901-1903 में आर० सी० दत्त के दो खंडोंवाले बहुमूल्य ग्रंथ 'इकानामिक हिस्ट्री आफ इंडिया' ने इन छानबीनों को अपने चरम शिखर पर पहुंचा दिया। उपर्युक्त ग्रंथ अंगरेजी राज्य में भारतीयों के व्यापार, उद्योग, कृषि तथा आर्थिक स्थिति आदि के इतिहास को प्रस्तुत करने के विशिष्ट उद्देश्य को लेकर कर्तव्यपालन के रूप में ही लिखा गया था। वस्तुतः उस समय पराधीन भारत की आर्थिक दुर्दशा की गाथा का वर्णन करना तथा भारतीयों की दरिद्रता के गहरी जड़ पकड़े हुए कारणों का विश्लेषण करना कर्तव्य कर्म ही था।[17]

भारतीयो की जाच पडताल मे आगे बढते ही उनके कष्टो की सूची अधिकाधिक लबी होने लगी। आर्थिक स्थिति को काले-धुधले रग मे रगा जाने लगा और यह विश्वास फैल गया कि भारतीय मत्रिमडल द्वारा भारत की अभूतपूर्व समृद्धि की चर्चा तथा भारत को गण्य मान्य समृद्ध देश बनाने का आदश वाक्य सत्य से कोसो दूर है।[18] शीघ्र ही दरिद्रता का विषय भारत की सभी आर्थिक समस्याओ की चर्चाओ पर हावी होने लगा और भारतीय नेता इस विषय को सर्वोच्च महत्व प्रदान करने लगे। दादाभाई नौरोजी ने इसे एक ऐसी शिला, एक ऐसा तत्व तथा एक ऐसी कसौटी बताया जो अपने निपटारे मे या तो ब्रिटेन को भारत के लिए वरदान बना देगी अथवा ईश्वर जाने कौन सी भयकर विपत्ति उपस्थित करगी।[19] इस दरिद्रता को जनता ने इस प्रकार से परिभाषित किया 'आज की बहुत बडी समस्या' [0], 'सभी प्रश्नो का प्रश्न' [1], 'भारत की समग्र आर्थिक दुदशा की मूल व्याधि' [2], 'सर्वोच्च समस्या।'[23] 1901 म आर० सी० दत्त ने लिखा था, 'मेरे विचार मे ब्रिटिश राज्य के किसी प्रदेश मे कोई भी प्रश्न भारत की वतमान स्थिति की अपेक्षा अधिक विषम नही।' [4] जबकि उग्रवादी दल के एक प्रवक्ता विपिनचद्र पाल न उसी वर्ष अपने सघषपरक साप्ताहिक 'न्यू इडिया' के प्रथम अक मे ही लिखा मेरे विचार मे नवीन भारत को व्यग्र बनानेवाली सभी उलझनभरी समस्याओ मे सर्वाधिक महत्वपूण तथा सवाधिक सपीडक आर्थिक समस्या है।' [5] न्यायाधीश रानाडे ने 1892 म अपन 'इडियन पालिटिकल इकोनामी' निबध मे राजनतिक प्रश्नो की अपेक्षा आर्थिक समस्याओ को सर्वोच्च प्राथमिकता देने पर बल दिया था।"[6] अपने जन्मकाल से ही राजनीति म 'उग्रवादी' तथा 19वी शताब्दी के प्रमुख भारतीय राष्ट्रीय समाचार पत्र 'अमृत बाजार पत्रिका' ने 2 जुलाई 1885 के अक मे लिखा 'सत्य तो यह है कि यदि भारतीयो को केवल भरपेट भोजन और कुछ अशो म न्याय ही उपलब्ध हो सके तो वे सतुष्ट होकर अगरेजी राज्य के अधीन रहने को तयार है।'-[7] भारतीय नेता भारत मे अगरेजी शासन के सभी कृत्य इस कसौटी पर परखत थे कि[28] वे करोडो भारतीयो की दशा को किस रूप म प्रभावित करते है? और क्या देश की प्रगति अतत देश की आर्थिक स्थिति मे किसी भी रूप म सुधार लाती है? [9]

भारत मे अगरेज अधिकारी भी भारतीयो द्वारा निधनता की समस्या को सर्वोच्च महत्व देने के प्रति जागरूक थे और उन्होने इस चुनौती को अपने प्रशासन की सफलता के मापदड के रूप मे स्वीकार किया। तदनुसार 15 अगस्त 1894 को 'हाउस आफ कामस' मे भारत सचिव सर हेनरी फौलर ने कहा

> 'मैं इस प्रश्न पर विचार करना चाहता हू कि सरकार ने भारत मे विद्यमान अपने सारे शासन-तत्र के साथ भारत की सामान्य समृद्धि को बढावा दिया है या नही और भारत ब्रिटिश राज्य के अतगत एक प्रात के रूप मे अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति मे है अथवा बुरी? यही एक मापदड है।[30]

इस प्रकार भारतीय राष्ट्रीयतावाद के प्रारभिक काल मे निधनता की समस्या भारतीय राजनैतिक मच का केंद्रबिंदु बनी रही। भारत म ब्रिटिश शासन के प्रवक्ताओ और उभरते भारतीय राष्ट्रीय नेतृत्व न केवल इसी एक समस्या पर दीर्घ काल तक बहस

चलाई। तत्कालीन परिस्थिति में लोगों के लिए शायद अन्य कोई भी ऐसा विषय न था जिसके बारे में नागरिक और शासित के विचारों में इतना गहरा मतभेद रहा हो और ऐसा वाद विवाद भी किसी अन्य विषय पर कम हुआ होगा, जिसने इससे अधिक शान तथा तीव्र निंदा को उकसाया हो।[31]

1 क्या भारत दरिद्र था ?

इस गभीर विवाद का प्रथम पक्ष निर्धनता के अस्तित्व का प्रश्न था। दादाभाई नौरोजी भारत में व्याप्त अपरिमित निर्धनता के अस्तित्व का उद्घोष करनेवाले प्रथम महत्त्वपूर्ण नेता थे। उन्होंने 1876 में अपने निबंध 'पावर्टी इन इंडिया' में घोषणा की 'भारत हर प्रकार से गभीर रूप से विपन्न है और दरिद्रता में दबा हुआ है।[32] वस्तुतः भारतीय जनता को मूल आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी उपयुक्त साधन प्राप्त नहीं हैं।[33] उन्होंने दरिद्रता को अपना 'विशिष्ट विषय'[34] बनाया तथा अपने 'जीवन के लक्ष्य', भारत की वास्तविक स्थिति के प्रति अंगरेजी जनता को जगाना, की पूर्ति के लिए वर्षों तक सारे इंग्लैंड में अभियान जारी रखा।[35] वृद्धावस्था के साथ यह महान वृद्ध पुरुष (ग्रैंड ओल्ड मैन) कोमल होने की अपेक्षा अधिकाधिक उग्र होते गए तथा कठोर शब्दों का ही नहीं प्रत्युत हिंसापरक भाषा का भी प्रयोग करने लगे। 1881 में उन्होंने 'भारत की दुर्भाग्यग्रस्त हृदय विदारक तथा खून खौलानेवाली स्थिति' की भर्त्सना की[36] और दुखी भाव में उन्होंने कहा, 'इस समय जहां तक अंगरेजी भारत का संबंध है, उसमें आज प्राच्य वैभव की बात आलंकारिक वर्णन अथवा एक स्वप्न के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।[37] 1895 में उन्होंने घोषित किया 'भारत भूखा मर रहा है, अपर्याप्त भोजन पर रहने को विवश भारतवासी हल्के से धक्के से भी मरने की स्थिति में हैं।'[38] 1900 में उन्होंने कहा, 'सत्य यह है कि भारतवासी एक प्रकार के दास हैं। उनकी दशा अमरीकी लोगों से भी बुरी है क्योंकि अमरीकी दासों के स्वामी अपनी संपत्ति के रूप में अपने दासों की देखभाल तो करते हैं।[39]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1886 में इस प्रश्न को उठाया और शीघ्र ही भारत में व्याप्त घोर दरिद्रता को अपने कार्यक्रम का एक अंग बना लिया।[40] 1891 में अपने सातवें अधिवेशन में कांग्रेस ने यह प्रस्ताव पारित किया 'पूरी पांच करोड़ जनता, जिसकी संख्या में प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है—एक शोचनीय स्थिति में फंसी हुई भुखमरी के कगार पर खड़ी है और प्रति दशाब्द लाखों व्यक्ति सचमुच ही भुखमरी के कारण मृत्यु का ग्रास बनते हैं।[41] यह प्रस्ताव प्रतिवर्ष कांग्रेस अधिवेशन में बराबर दोहराया जाने लगा।[42] परवर्ती कांग्रेस सभापतियों ने निर्धनता की समस्या को अपने वार्षिक भाषणों का अनिवार्य भाग बनाते हुए ही उनका उपसंहार किया।[43] राष्ट्रवादी लेखकों और वक्ताओं ने तो निर्धनता को अपनी रुचि का विषय ही बना लिया।[44] उदाहरणार्थ 1881 के प्रारंभ में ही एक अनाम लेखक ने 'जरनल आफ दी पूना सार्वजनिक सभा' में घोषित किया, 'भारत की उजागर घोर दरिद्रता इतनी अधिक उद्वेगजनक है कि किसी भी अन्य देश की सरकार इस प्रश्न पर गभीरतापूर्वक विचार न करने की स्थिति में क्रांति का सामना करना पड़ता। होती।'[45] भारत का प्रेस भी निरंतर प्रतिदिन प्रतिसप्ताह भारत की आर्थिक

दुदशा तथा दुर्भाग्य के रोने को वाणी देता रहा।[46] भारतीयो की स्थिति का वणन इन शादा मे किया गया 'दुर्भाग्यपूण', 'गभीर', 'शोचनीय', 'दयनीय' तथा 'निरीह जतुआ से भी सवथा हीन और विकृत'। भारतीयो को इस रूप म चित्रित किया गया 'भुखमरी से अधमृत', 'जीव मात्र अवशिष्ट', 'साक्षात रेंगती, मिमियाती तथा लुढकती दरिद्रता'।[47] कुछ समाचारपत्रो ने भारतीय दरिद्रता का सजीव चित्र पेश किया। उदाहरणाथ बगला पत्र 'सुलभ दैनिक' ने भारतीय नागरिक की स्थिति का वणन निम्नलिखित शादो म किया

'वह अपनी जीवनशक्ति खो चुका है, वह अपना प्राणतत्व नष्ट कर चुका है। उसका रक्त चूस लिया गया है और अथनीति की दृष्टि स देखा जाए तो वह वास्तव मे हड्डियो का ढाचा मात्र होने के अतिरिक्त और कुछ नही। वह आधा भूखा है, आधा नगा है। उसका दैनिक आहार थोडे से चावल और बहुत स कदमूल तथा पौधो के पत्ते हैं। उसने जीवन मे कभी स्वादिष्ट भोजन का आनद नही लिया। उसके वस्त्र फटे हुए चीथडे मात्र है। उसका निवासस्थान एक टूटी फूटी झोपडी मात्र है, जो मौसम के कष्टो से उसकी रक्षा ही नही कर पाती।[48]

1896 मे लोकमान्य तिलक द्वारा सपादित मराठी साप्ताहिक 'केसरी' मे 'शिवाजीज अटर मेस' शीषक से पद्य प्रकाशित हुए, जिनमे शिवाजी ब्रिटिश राज्य के अतगत देश की दुदशा पर इस प्रकार स शिकायत करते हुए दिखाए गए है हाय! हाय! यह मैं अपनी आखो से देश की विनाशलीला को देख रहा हू हाय! यह कैसा विनाश का ताडव नृत्य है। समृद्धि समाप्त हो चुकी है और उसके बाद स्वास्थ्य भी। देश मे दुर्भाग्य का दानव सारे देश को अकाल के शिकजे मे जकडे हुए है।[49] इसी पत्र के 26 जनवरी 1893 के अक मे पजाब के 'विक्टोरिया पेपर' म यहा तक दढतापूवक कहा गया कि भारतीयो को खाता पीता बतानेवाले भारतीय वस्तुत देशद्रोही है।[50]

भारतीय राष्टीय नेताओ का ध्यान उस समय वग विशेष की दशा पर न होकर सव-साधारण की दशा पर ही केंद्रित था। दश के विशाल जनसमूह की घोर दरिद्रता और उनकी आर्थिक दुदशा ही चिता तथा विचार के विषय थे।[51] उस समय समाज के निम्न तथा मध्य वग के खेतिहरो की स्थिति इस प्रकार थी, वे भुखमरी के शिकार थे, सिकुडकर ठठरी मात्र बन गए थे, उनके चेहरे झुर्रियो स भरे हुए थे। उन बेचारो को दिन निकलने से अधेरा होने तक उस थोडे से भोजन के लिए कठोर श्रम करते करते थककर चूर हो जाना पडता था जो देश के अपक्षाकृत अधिक दरिद्र करोडो लोगो को सामान्य काल मे भी बडी कठिनता मे मिल पाता था। वे प्राय आधे भूखे रहते थे तथा अकाल पडने पर तो कीडा-मकोडा के समान मरते थे। इस प्रकार देश की सपन्नता और विपन्नता की सही कसौटी के लिए जनता के अपेक्षाकृत निम्नवग को ही लिया गया।[52] कृषकवग के अतगत भी कृषि श्रमिको की स्थिति की ही तीव्र भत्सना की गई[53] क्योकि ये ही लोग थे जो वष के प्रारभ से अत तक कभी पर्याप्त भोजन उपलब्ध न होने के कारण दुखी रहते थे।[54]

राष्ट्रीय भावना के प्रमुख प्रवक्ताओ ने दरिद्रता की समस्या के कारण की खोज

म उगा कि वितरण प्रणाली के दोषपूर्ण होने की अपेक्षा उत्पादन की ही कमी है। उन्होंने अनुभव किया कि यह प्रश्न अपने आपमे चाहे कितना ही महत्वपूर्ण क्यो न हो कि सभी लोगो के बीच किसके द्वारा और किस मात्रा म माल आय वितरित की जाती है किंतु इसस भी अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या भारत का कुल उत्पादन यहा के निवासियो की सामान्य आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए पर्याप्त है ?[53] समस्या को जब इस दृष्टिकोण से देखा गया तो यह स्पष्ट हो गया कि भारत अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए पर्याप्त उत्पादन नही करता और यह सिद्धात रूप म स्वीकार किया गया कि देश का उत्पादन देश म ही रहना चाहिए।[56] अतएव भारत के अर्थशास्त्रियो न भारतीयो की आर्थिक समृद्धि के लिए कुल उत्पादन को बढाने की आवश्यकता पर बल दिया।[5] निधनता की समस्या के इस विशिष्ट विश्लेषण ने भारतीय राजनीति के उदय म महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय राजनीति ने निधनता को व्यापक राष्ट्रीय प्रश्न बनाया तथा उसके उन्मूलन की सयुक्त माग के प्रस्तुतीकरण हेतु विभिन्न वर्गों को विभाजित करने के बजाय उन्ह सगठित करने म सहायता दी।[58] यह विश्लेषण ही भारतीय आर्थिक विकास के लिए किसी सीमा तक अपवादात्मक सिद्धात (किसी भी अन्य राष्ट्र द्वारा अपनाए गए माग से भिन्न माग पकडना) के लिए उत्तरदायी था। बहुत सारे भारतीयो ने निधनता की समस्या व आर्थिक विकास के अभाव के कारण को इन रूपो म देखा, उत्पादन क्षमता तथा योग्यता म गिरावट और आर्थिक विकास की अपेक्षाकृत निम्न दर।[59]

कुछ समय तक तो ब्रिटिश प्रशासको न भारत की घणित तथा विषम दरिद्रता के अस्तित्व को स्वीकार तक नही किया। वतमान तथा भूतपूर्व सरकारी अधिकारियो ने वास्तविकता के विपरीत कृषको की सम्पन्न तथा सतुष्ट दशा का चित्र ही प्रस्तुत किया। भारतीय राष्ट्रवादियो द्वारा, भारतीयो के चरम अभाव के सतत अभियोग स पीडित होकर 1885 88 मे भारत के वायसराय लार्ड डफरिन ने 1887 म भारतीय समाज के निम्न वर्गो की दशा की गुप्त सरकारी जाच पडताल का आदेश दिया। जाच-पडताल के प्रतिवेदन को प्रकाशित नही किया गया परतु भारत सरकार ने 1888 मे प्रातीय प्रतिवेदनो के आधार पर एक प्रस्ताव प्रकाशित किया। प्रस्ताव के परिशिष्ट 'ए' मे प्रतिवेदनो का सक्षेप प्रस्तुत किया गया।[60] प्रातीय प्रतिवेदन इस बारे मे एकमत थे कि भारत म खाद्य पदार्थों की कोई कमी नही। किसानो के अपेक्षाकृत निम्न वग की स्थिति भी अभी कोई विशेष चितनीय नही,[61] सामान्य वर्षो म तो लोगो के पास आवश्यकता स अधिक सामग्री सचित हो जाती है।[6] 1893 मे भारत सरकार इससे भी अधिक आशावादी थी। 1881 91 तक 'भारतीय जनता की आर्थिक स्थिति पर प्रातीय प्रतिवेदनो की समीक्षा करते हुए सरकार ने घोषणा की कि देश समृद्ध दशा मे है।[63] ततीय दशवार्षिक नैतिक तथा भौतिक प्रगति प्रतिवेदन (थड डिसेनिअल मारल ऐंड मैटिरियल प्रोग्रेस रिपोर्ट) (1891 92) म इस बात की पुष्टि की गई कि क्रमश और निरतर बढते हुए जीवनस्तर के सदभ म खेतिहर किसानो की दशा भौतिक दृष्टि स आत्मनिर्भरता की है।[64] गैरसरकारी ब्रिटिश लेखको ने सरकारी मत की पुष्टि की तथा कम उत्तरदायी होने के कारण उन्होंने अपने मन को अधिक खुलकर अभिव्यक्त किया।[65]

2 दरिद्रता का प्रमाण

भारतीय राष्ट्रीय नेताओ का भारत मे व्याप्त दरिद्रता को प्रमाणित करने का सर्वाधिक प्रचलित ढग था, ब्रिटिश भारतीय अधिकारियो के लेखो से अवतरण उद्धृत करना। इसका स्पष्ट उद्देश्य विरोधी को उसी के शस्त्र से परास्त करना था। अधिकाशत उद्धृत दो अवतरण सर डब्लू हटर की पुस्तक 'इग्लड्स वर्क इन इडिया' तथा सर चार्ल्स एलीट की टिप्पणी' से क्रमश इस प्रकार थे प्रथम, 'भारत की चालीस करोड जनता अपर्याप्त भोजन पर जीवन निर्वाह करती है।' द्वितीय, 'मुझे यह कहने मे कोई सकोच नही कि आधी खेतिहर जनता पूरे के पूरे वर्ष के बीतन पर भी एक बार भरपेट भोजन नही कर पाती।'[66]

प्रति व्यक्ति की आय के अनुपात के अको को प्राय साक्ष्य रूप मे उद्धृत किया जाता था। कुल राष्ट्रीय आय को कुल जनसख्या मे बाटकर ये आकडे निकाले जाते थे। इस अकेली अनुक्रमणिका म प्राप्त आर्थिक योगक्षेम की न्यूनता अथवा अभाव का उपयोग समस्या को उजागर करने, उसे नाटकीय रूप देने तथा अन्य देशो के समकालीन निवासियो के स्तर स तुलना करने मे किया जाता था।[6] इसके अतिरिक्त ये स्पष्ट तथा सुबोध अक अपने म तर्क का काम करते थे, ठोस आधार लिए ये आकडे[68] ऐसा जादू का प्रभाव रखते थे कि इनसे अशिक्षित भारतीयो की जड-बुद्धि भी सचेत हुए बिना न रह सकी।[69]

साख्यिकी गणना के आधार पर आनुपातिक प्रति व्यक्ति आय का प्रथम विवरण प्रस्तुत करने का श्रेय दादाभाई नौरोजी को है। उन्होंने 1873 मे सरल किन्तु प्रभावी ढग का प्रयोग करते हुए गणना की कि 1867-68 म ब्रिटिश भारत की सत्रह करोड जनसख्या की कुल राष्ट्रीय आय 3 4 अरब रु० है, अथवा दूसरे शब्दो म, इस देश की आय बीस रुपये प्रति व्यक्ति है।[70] दादाभाई अपने इस निष्कर्ष के मोटे अनुमान से भली प्रकार परिचित थे परन्तु उनकी दृष्टि मे उन्ह उस समय तक उपलब्ध साख्यिकी सूचना का यही सर्वोत्तम सम्भव अनुमान था।[1] परवर्ती वर्षों मे 'बीस रुपये प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय का अक' राष्ट्रीय आदोलन का सगठन मत्र बन गया तथा इस अक को विनाशात्मक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए सभी राष्ट्रवादी समाचारपत्रो, पत्रिकाओ, पुस्तको तथा भाषणो मे बडे विस्तार से उद्धृत किया गया।

दादाभाई द्वारा प्रस्तुत चित्र इतना अधिक घिनौना था कि अधिकारियो के लिए उस समय दादाभाई द्वारा अपनाए गए उसी सरल तथा सुबोध साख्यिकी आधार पर ही उसका उत्तर ढूढना आवश्यक हो गया। 1882 में भारत सरकार ने वित्त सदस्य मेजर ऐवेलीन तथा डेविड बावर द्वारा तैयार किए गए तखमीने को प्रचारित किया, जिसके अनुसार ब्रिटिश भारत की कुल आय सवा पाच अरब रुपये और प्रतिव्यक्ति आय 27 रु० कूती गई थी।[7]- 1901 मे लार्ड कर्जन ने घोषणा की कि 1897-98 मे प्रति व्यक्ति आय तीस रुपये थी।[73] जब विलियम डिगबी ने साख्यिकी तर्कों के शस्त्र स इस अक पर प्रहार किया,[74] तो भारत सरकार के लेखा विभाग के एक उच्चाधिकारी फ्रेड जे० ८८१५ बचाव के लिए आगे बढे। उन्होने 'रायल स्टटिस्टिकल सोसाइटी' के सामने 1902 मे

पेपर पर्स जिसमें उन्होंने ब्रिटिश भारत की आनुमानिक प्रति व्यक्ति आय 1875 में 30.5 रुपए के मुकाबले 1895 में 39.5 रुपए गणित की।[5]

भारतीय नेता प्रमुख रूप से भारत में व्याप्त निर्धनता को ही प्रमाणित करना चाहते थे। अतः कानूनी अथवा सांख्यिकी दावपेंचों में उनकी कोई रुचि नहीं थी। यही कारण था कि दादाभाई नौरोजी के आंकड़ों की सरलता पर विश्वास रखते हुए भी तथा यह मानते हुए भी कि प्रति व्यक्ति आय का सरकारी अधिकारियों द्वारा तैयार किया गया आंकलन-लेखन नगण्य सीमा तक ही अपनी ही त्रुटियों की जांच में पूर्णतः से मुक्त है, दूसरे वह अनिरंजित भी है फिर भी वे उस पर स्वतंत्र विचार-विमर्श करने को तैयार हो गए कि उसमें भी बराबर भारत की घोर दरिद्रता प्रकट होती थी।[6]

प्रति व्यक्ति आय के अंक अपने आपमें भारतीय दरिद्रता के स्पष्ट द्योतक थे। भारतीय प्रवक्ताओं का मत था कि भारत की दरिद्रता—तुलनात्मक और सापेक्ष—दोनों रूपों में है। अतः भारत की वास्तविक दरिद्रता की सही जानकारी तभी मिल सकती है जब भारत की आय की तुलना दूसरे देशों की आय से की जाए, अथवा मानव की मूल आवश्यकताओं से उसका अंतर दिखाया जाए, अतः उन्होंने यह सिद्ध करने का बीड़ा उठाया कि इन मानदंडों से भी भारतीयों की स्थिति अपार रूप विषम ही सिद्ध होती है। उन्होंने सर्वप्रथम भारत की प्रति व्यक्ति आय पर विचार किया और उसके उपरान्त अन्य देशों की आय से उसकी तुलना के प्रश्न पर विचार किया। उत्तर सर्वथा प्रतिकूल था। यह तुलना एक बार फिर तालिका के रूप में प्रायः सरल सुबोध सांख्यिकी शब्दावली में अभिव्यक्त की गई।[7] भारतीय नेताओं के अनुसार तालिकाबद्ध तुलना भारतीयों की आर्थिक स्थिति का अधकारमय रूप प्रस्तुत करती है। यह प्रमाणित करती है कि सुप्रशासित देशों जैसे देश भारत की अपेक्षा प्रति व्यक्ति दुगुना उत्पादन करते हैं अथवा भारत इंग्लैंड से बीस गुणा पीछे है, अथवा भारत की दरिद्रता की तुलना में अत्यन्त निष्पीड़ित तथा कुप्रशासित रूस भी अपेक्षाकृत समृद्ध है। इस प्रकार हमारे अध्ययनकाल तथा उसके परवर्ती वर्षों में यह एक व्यापक धारणा बन गई थी कि सभ्य संसार में भारत दरिद्रतम देश है।[8] यह धारणा भारतीयों के हृदय में निर्धनता के प्रति सशक्त तथा गहन चिंतन की सूचक थी।[9]

भारतीय नेताओं ने अगला प्रश्न प्रति व्यक्ति आवश्यक व्यय का उठाया। उनके विचार में समस्या के सही रूप को देखने के लिए आनुपातिक आय की जांच वर्तमान जीवननिर्वाह व्यय के संदर्भ में ही की जानी चाहिए ताकि यह स्पष्ट हो सके कि सामान्य भारतीय की आय इतनी अपर्याप्त है कि वह बेचारा मनुष्य होने के नाते अपने जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं कर सकता। उनका यह भी विचार था कि भारत में निर्धनता की व्यापकता का विषय इस प्रकार अनाक्राम्य धरातल पर अवस्थित हो जाएगा। फलतः भारतीय राष्ट्रवादियों में अर्थशास्त्र के पंडितों ने इस दिशा में जांच पड़ताल प्रारंभ कर दी। उन दिनों जीवननिर्वाह व्यय के अथवा पोषण स्तर के अध्ययन का अस्तित्व ही नहीं था। इसके लिए प्रवासी कुलियों, अकाल कार्यों में लगे श्रमिकों, श्रमिकों, भारतीय सिपाहियों, खेतिहरों तथा जेल के कैदियों के जीवन की

आवश्यकताओ जैसे विखरे अनुमाना पर निभर करना पडता था। उपर्युक्त सभी श्रेणियो के लोगो की प्रति व्यक्ति आय इतनी कम पाई गई कि उससे उनकी आवश्यकताओ की पूर्ति सभव नहीं थी।[81] जेल के कदिया के भोजन और भरण-व्यय के सदभ मे प्रति व्यक्ति आय की तुलना भारत की स्थिति का सर्वाधिक प्रभावी विवरण था। दादाभाई नौरोजी ने विभिन प्रातो के 1867-68 के प्रतिवेदना के आधार पर जेल मे कैदी के भाजन और वस्त्रो पर सरकारी खच की गणना इस प्रकार मे प्रस्तुत की[8]

सेंट्रल प्राविसज़	31 रु०
पजाव	27 रु० 3 आने
नाथ-वैस्ट प्राविसज़	21 रु० 13 आन
वगाल	31 रु० 11 आने
मद्रास	53 रु० 2 आने
ववई	47 रु० 7 आने

इस प्रकार की सगणना कुछ एक अय भारतीय लेखको द्वारा भी की गई।[83] जेल के कैदियो पर होनेवाले प्रति व्यक्ति व्यय-अव के साथ प्रति व्यक्ति आय की तुलना से यह निष्कष स्वत स्पष्ट तथा आत्मनिरूपक हो गया कि अनुकूल ऋतु मे भी भारत का उत्पादन एक अपराधी को मिलनेवाले भोजन की तुलना मे भी पर्याप्त नही। फिर थोडी-बहुत विलासिता के लिए सामाजिक और धार्मिक आवश्यकताओ के लिए, दुख-सुख के अवसरो पर होनेवाले खर्चों के लिए तथा बुरे दिनो के लिए अतिरिक्त धन की व्यवस्था एव पूर्ति आदि का तो प्रश्न ही कहा उठता है।[84] इस प्रकार वे सही तार पर इस निष्कष पर पहुचे कि भारतीयो की बडी सख्या स्थायी रूप से भुखमरी की शिकार है और यूनतम जीवन स्तर से नीचे रहती है।

दादाभाई नौरोजी, जी० वी० जोशी, जी० सुब्रह्मण्य अय्यर तथा सुरेंद्रनाथ बनर्जी जैसे नेताओ ने यह सम्यक रूप से अनुभव किया कि 'औसत शब्द एक आर्थिक कल्पना होने के कारण अपार दोषो को छुपा देता है, क्याकि जनता का अपेक्षाकृत अधिक निधनवग तो औसत आय का पूरा भाग ले ही नही पाता है। औसत प्रति व्यक्ति आय मे तो विदशी पजीपतिया, सिविल सर्विस के उच्च वेतनभोगिया, विदशी अधिकारियो, वडे बडे भूमिपतिया, शहरी व्यापारियो, नगर तथा ग्राम के मध्यवर्गीय तथा उच्च मध्य-वर्गीय लोगो की आय सम्मिलित है। अतएव समाज के निम्न वग की आय तो प्रति व्यक्ति औसत आय स बहुत नीची होगी और इस रूप मे प्रति व्यक्ति औसत आय के अक स अनुमित स्थिति की अपेक्षा उन्ह अधिक कठिनाइया का सामना करते हुए जीवन के लिए सघष करना पडता होगा।[85]

इसके अतिरिक्त लगातार आनेवाले विनाशकारी दुर्भिक्षो ने राष्ट्रीय दृष्टिकोण से समस्या पर पूरा प्रकाश डाला और जनता की दयनीय दरिद्रता तथा स्थायी भुखमरी का प्रामाणिक साक्ष्य प्रस्तुत किया। उन्होने सामान्य वर्षों मे भारत की स्थायी दरिद्रता का

अपेक्षाकृत अधिक बडी बुराई के रूप मे सूचित किया। उन्होने 'राष्ट्र की पूर्ण क्षीणता का नाडा फोडा' 'इस देश म बहुसख्यक जनता के चरम दुर्भाग्य, उसकी उदासीनता और विवशता के अतिरिक्त प्रमाण का प्रस्तुत किया', 'अन्य सभी तथ्यों और अको से बढकर निष्कर्ष रूप म भारत म व्याप्त घोर दरिद्रता को स्पष्ट प्रमाणित किया।' वस्तुत वे भारत की दरिद्रता के 'बाह्य चिह्न' थे।[16]

राष्ट्रीय नेताओ ने भारत म व्याप्त घोर दरिद्रता को प्रमाणित करने के लिए निश्चित प्रमाणो को प्रस्तुत करने के साथ-साथ ब्रिटिश भारतीय प्रशासको और लेखको द्वारा देश म समृद्धि और सपन्नता सिद्ध करने के लिए प्रस्तुत तर्कों का प्रबल खडन करना भी प्रारभ कर दिया। भारतीयो की सपन्नता के मूल्याकन किसी भी वस्तुगत मानदड के अभाव म ब्रिटिश प्रवक्ताओ ने व्यक्तिगत मानदड को अपनाने का मार्ग ग्रहण किया। उनका तर्क था कि भारतीय जनता अपनी इच्छानुरूप ही समृद्ध है। भारतीयो की निम्न आय उनकी दरिद्रता की सूचक न होकर उनकी आवश्यकताओ की स्वल्पता की ही द्योतक है।[8] इस प्रकार निरपेक्ष रूप स देखने पर भारत की स्पष्ट दिखाई देनेवाली दरिद्रता जनता की सीमित आवश्यकताओ के परिप्रेक्ष्य मे देखने पर सर्वथा भिन्न रूप ग्रहण कर गई। इस तर्क का निर्देशक पक्ष यह था कि खेतिहरो की सतुष्टि का अर्थ तथ्यत उनकी सपन्नता भी है। 1880-91 के वर्षों की 'बगाली रिपोर्ट' ने भारतीयो की भौतिक स्थिति पर इस प्रकार टिप्पणी की 'बगाल का किसान अपने मानदड के आधार पर ही जाचे जाने पर प्रसन्न तथा सपन्न पाया गया है।'[89] उत्तर पश्चिमी प्रातो और अवध की रिपोर्ट लिखनेवाले ने तो इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया हिंदू कृषक किस प्रकार घटिया खाना खाता है जबकि वह बहुत स अच्छे खाते पीते लोगो की अपेक्षा अधिक मोटा न सही, पूर्णत स्वस्थ और प्रसन्न अवश्य है।[89] इस तर्क का पोषक सिद्धात यह कल्पना थी कि धार्मिक शिक्षा तथा दीर्घ काल से प्रचलित सामाजिक मूल्यो के कारण भारतीय कृषक भौतिक आवश्यकताओ की सतुष्टि की अपेक्षा आध्यात्मिक सतोष म अधिक रुचि रखता है।[90] ब्रिटिश भूतपूर्व तथा वर्तमान अधिकारी भारतीयो की प्रतिव्यक्ति आय की यूरोप के लोगो की आय से तुलना की प्रवृत्ति के मुकाबले व्यक्तिनिष्ठ और सापेक्षिक सिद्धात पर आधारित विरोधी दृष्टिकोण प्रस्तुत करने लगे। उनम से अपेक्षाकृत अधिक गभीर व्यक्तियो ने घोषित किया जीवन आवश्यकताओ और मूल्यो मे गहरे अतर के कारण यूरोप के लोगो के साथ भारतीयो के जीवन निर्वाह तथा जीवन स्तर की तुलना एक अर्थहीन चेष्टा है। उनकी जाच पडताल तो देश की अपनी आवश्यकताओ के सदर्भ मे ही करनी उचित है।[91] कम सतर्क सरकारी अधिकारी तो टिप्पणी करते हुए इस सीमा तक बढ गए कि तुलना की दृष्टि से यूरोप के खेतिहर की अपेक्षा भारत के किसान की दशा बेहतर है। इसी प्रकार सामान्य भारतीय कृषक को प्राप्त सुख-सुविधाओ की दृष्टि से उसकी तुलना यूरोप के बहुत बडे भाग म विद्यमान किसानो से करते हुए जान स्ट्रेचे ने 1898 मे यह मत व्यक्त किया 'निस्सदेह भारतीय कृषक ही अधिक लाभसपन्न है।'[9] मद्रास के भूतपूर्व गवर्नर ग्राट डफ 1887 म एक पत्रिका म प्रकाशित अपने लेख म पहले ही [illegible] चुके थे।[93] छोटे अधिकारी तो और भी अधिक असयत थे।

ढाका का कमिश्नर 1888 मे इस चौंकानेवाले परिणाम पर पहुचा अपनी आवश्यकताओ के मदम मे बगाल का किसान विश्व मे समृद्धतम है। हुगली का कलक्टर टायनर भी उद्धतता मे पीछे नही था। उसने यहा तक लिखा इस जिले के दरिद्रतम वग की स्थिति इगलड के उसी वर्ग की स्थिति की तुलना म सभी दृष्टियो से निस्सकोच रूप से बेहतर कही जा सकती है। और मुझे इस बात मे लेशमात्र भी सदेह नही कि हजारो-हजार निधन अगरेज भारतीयो के साथ स्थान परिवतन करने मे प्रसन्नता अनुभव करेंगे।[94]

भारतीय नताओ ने इस विचारधारा के आधारभूत दृष्टिकोण का सवथा क्रूर तथा भावनाशून्य[95] बताया। उन्होने बडी तीव्रता से इस सिद्धात को अस्वीकार किया कि भारतीयो की आवश्यकताए सीमित है[96] अथवा वे जीवन म भौतिक सुख-सुविधाओ का आनद लेन तथा उनकी आवश्यकता अनुभव करन के अयोग्य है।[97] उनके वतमान निम्न जीवनस्तर को उनकी स्थिति मे सुधार के अधिकार को नकारने के पोषक तत्व के रूप मे नही लिया जा सकता।[98] विषय का सार इस प्रकार था

ब्रिटेन न प्रथम उनके साधन छीन लिए, उन्ह अधिक उत्पादन के अयोग्य बना दिया, अवशिष्ट तुच्छ साधनो की सीमा तक उन्ह अपनी आवश्यकताओ को घटाने को विवश कर दिया और फिर उन्ह कोसना शुरू कर दिया। घाव पर नमक छिडकते हुए उन्ह कहना प्रारभ कर दिया देखो, तुम्हारी आवश्यकताए सीमित है। तुम्हे अवश्य ही सीमित आवश्यकताओ वाले निधन व्यक्ति बने रहना चाहिए। तुम्हारे लिए आधा सेर चावल, हम तुम्हे अधिक उदारता से सेर भर चावल रखने की अनुमति दे देंगे, थोडे से वस्त्र और आश्रय पर्याप्त ह। बडी बडी मानवीय आवश्यकताओ की सतुष्टि और सुखो का उपभोग तो हमारे लिए है। तुम्ह हमारे भाडे के टट्टू के रूप मे हमारे पशुओ के समान हमारी दासता करनी चाहिए और हमारे लिए श्रम करना चाहिए।[99]

भारतीय नेताओ ने वैराग्यपरक दृष्टिकोण तथा आध्यात्मिकता के नाम पर निधनता की महिमा दने की प्रवत्ति की निंदा की। उन्होने भौतिक सुख-सुविधाओ को बहुत ऊचा स्थान दिया।[100] उन्होने राष्ट्र की भौतिक उत्पादकता मे सभावित वृद्धि के साथ राष्ट्र की भौतिक सपदा मे वृद्धि की इच्छा को जोड दिया क्योकि उनके अनुसार भौतिक सामग्री के उपलब्ध परिमाण का मानवीय आवश्यकताओ की सतुष्टि से सापेक्ष सबध है।[101] उनकी सारी आर्थिक गतिविधि का केंद्र दरिद्रता को दूर करना था न कि अप्रसन्नता को। उन्होने अपना तात्कालिक लक्ष्य भूखे मरते लोगो के लिए रोटी के दो टुकडे जुटाना बताया और इस रूप मे उनके तक का सार यह था कि बेचारे भारतीयो की सीमित आवश्यकताओ की भी सतुष्टि नही होती।[10]

3 क्या दरिद्रता बढ रही थी ?

राष्ट्रीय आदोलन, स्वतत्र जाच पडतालो तथा बहुत बडे क्षेत्र और बहुत बडी जनसख्या को बहुत बुरी तरह प्रभावित करनवाले और साथ ही सपन्नता का पर्दाफाश करनेवाले दुर्भिक्षो की निरतरता के फलस्वरूप सारे दश म व्याप्त घोर दरिद्रता के राष्ट्रीय दृष्टिकोण को न्यूनाधिक रूप मे न केवल भारतीय जनता ने ही अपितु शासकवग ने भी निर्विवाद

रूप से स्वीकार किया। 1888 की आर्थिक जाच पर प्रस्ताव म यह तो कहा गया था कि खेतिहरा के निम्न वर्गों की स्थिति भी वतमान म उतनी नहीं जितने निता का विषय कहा जा सक किंतु यह भी स्वीकार किया गया कि देश के सभी भागा म बहुसख्यक जनता के अभावग्रस्त हान के प्रमाण उपलब्ध है[103], और यह कथन अतिशयोक्ति नहीं कि देश के बहुत बडे भूभाग के छोट किसान तथा मजदूर, दो समय का भोजन भी नहीं जुटा पाते।[104] 1898 म 'लायल दुर्भिक्ष आयोग' ने यह पाया कि कृषक जनता का निम्नवग अभी घोर दरिद्रता के शिकजे म इतना कसा हुआ है कि उनके पास सामान्य वर्षों म भी पर्याप्त भोजन नही होता।[105] अपनी वायसराई के अतिम वर्षा म लाड कर्जन ने स्पष्टता से स्वीकार किया 'भारत म पर्याप्त, यहा तक कि पर्याप्त से बहुत अधिक दरिद्रता है।[106] मेजर बेरिंग तथा लाड कर्जन द्वारा प्रमाणित प्रति व्यक्ति आय के अनुमान यद्यपि अन्य रूपा मे विवादास्पद है तथापि उनसे प्रभावशाली ढग से भारतीय जनसमुदाय की घोर दरिद्रता का पता चलता है। इस प्रकार 19वीं शताब्दी के बीतते बीतते भारत म व्याप्त घोर दरिद्रता के विश्वास ने सत्य के रूप म प्रचार और प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली।

भारत के उदीयमान राष्ट्रीय नेतृत्व तथा ब्रिटिश प्रशासको के मध्य प्रचारयुद्ध का केंद्र एव अन्य अधिक विस्फोटक यह प्रश्न बन गया कि 'भारत की दरिद्रता पहले की अपेक्षा बढ रही है अथवा घट रही है?[107] यह प्रश्न इस दृष्टि से महत्वपूर्ण था कि इसके उत्तर म एक निर्णय निहित था और इसीलिए दोनो पक्षो ने इस प्रश्न को इस रूप म प्रस्तुत किया 'भारत ब्रिटिश उपनिवेश बनने पर पहले की अपेक्षा अच्छी स्थिति म है अथवा बुरी स्थिति म है?[108] भारत म विद्यमान ब्रिटिश अधिकारी देश म व्यापक दरिद्रता के प्रश्न की अपेक्षा इस प्रश्न पर अधिक सवेदनशील थे क्योंकि भारत का पूर्वापेक्षा दरिद्र होते जाना मानने का अर्थ केवल आत्मनिंदा ही नही था प्रत्युत उसके गभीर राजनीतिक प्रतिघात भुगतना भी था। उच्च ब्रिटिश अधिकारी सत्य के इस रूप म भली प्रकार परिचित थे। भारत सचिव लाड जाज हैमिलटन ने समस्या की इस चुनौती को स्वीकार करते हुए 16 अगस्त 1901 को 'हाउस आफ कामस' म घोषणा की यदि यह सिद्ध किया जा सके कि हमारे प्रशासन मे भारत भौतिक सपन्नता की दृष्टि से और अधिक पिछड गया है तो मैं इसे एकदम आत्मनिंदा मानने को तैयार हू तथा स्वीकार करता हू कि इस स्थिति म हम भारत को और अधिक समय तक अपने नियत्रण म रखने के विश्वसनीय अधिकारी नही।'[109] यह विषय इस दृष्टि से भी अधिक महत्वपूर्ण था क्योंकि यदि रोग को अभी स्वीकार ही नही किया गया तो उसके कारणो और उपचारो के ढूढने का क्या लाभ हो सकता था?

वर्षों तक भारतीय नेता इसी स्थिति को सिद्ध करने मे लगे रहे कि भारत दरिद्र ही नही प्रत्युत दिन प्रतिदिन दरिद्रतर होता जा रहा है। उन्होंने भारतीय जनता की निरतर बढती हुई और उत्तरोत्तर अधिक गहरी जड पकडती हुई निर्धनता को दिखाने के लिए अथक और निरतर प्रयत्न किए। उदाहरणार्थ गोपालकृष्ण गोखले ने इसे 1902 के अपने प्रसिद्ध बजट भाषण का केंद्रबिंदु बनाया और उसके बाद इस समस्या के सभी पक्षो पर विचार करने के उपरात वह इस निष्कर्ष पर पहुचे कि भारत के जनसमुदाय की

भौतिक स्थिति निरंतर बद से बदतर होती जा रही है तथा यह दृष्टिगोचर है कि यह स्थिति विश्व के आर्थिक इतिहास के क्षेत्र विस्तार के अंतर्गत सर्वाधिक दुखद स्थिति है।[110] भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने द्वितीय अधिवेशन में ही भारतीय जनता की विशाल संख्या की बढ़ती हुई दरिद्रता के अपने दृढ़ विश्वास को वाणी दी[111] तथा एक के पश्चात दूसरे अधिवेशन में इस प्रस्ताव को दोहराया। राष्ट्रीय प्रेस ने भी प्रतिदिन बढ़ती दरिद्रता को 'स्पष्टगोचर' तथा 'पूर्णत सिद्ध वास्तविकता' कहते हुए अत्यंत उग्रता से उसकी घोर निंदा की।[112]

दूसरी ओर भारत में रहनेवाले ब्रिटिश अधिकारी तथा सामान्यत सभी ब्रिटिश लेखक यह मानते रहे कि ब्रिटिश राज्य से भारतीय जनता की भौतिक दशा निरंतर न केवल सुधर रही है प्रत्युत देश की संपन्नता में वृद्धि भी हो रही है। उनके अनुसार दरिद्रता की कल्पना सर्वथा निराधार और पूर्ण रूप से पाखंड है। सत्य यह है कि भारत पहले से ही समृद्धि के राजपथ पर चलना शुरू कर चुका है, अत उसका भविष्य उज्ज्वल तथा उत्साहवर्धक है।[113] इस सिद्धांत के प्रबलतम समर्थक व्याख्याता लार्ड कर्जन थे जिन्होंने बार बार, यहां तक कि लगभग अपने सभी बजट भाषणों में इस विषय को उठाया।[114] 1901 में उन्होंने, जैसा हम पूर्व निर्देश कर चुके हैं, संगणना द्वारा यह सिद्ध किया कि भारत की 1882 में 27 रुपये प्रति व्यक्ति आय बढ़कर 1898 में 30 रुपये प्रति व्यक्ति हो गई है। वृद्धि की इस दर से असंतोष प्रकट करते हुए भी उन्होंने दावा किया कि आर्थिक गतिविधि निश्चित रूप से प्रगति की ओर उन्मुख है, अवनति की ओर नहीं।[115] 1901 तक तो वे और अधिक विश्वस्त हो गए थे। उन्होंने गोपालकृष्ण गोखले जैसे भारतीय नेताओं का उपहास करते हुए, 'तपती धूप में वर्षा होने की बात कहकर आत्मरक्षा के लिए छाता ताननेवालों' से उनकी तुलना करते हुए बलपूर्वक कहा कि भारत सभी दिशाओं में हृष्ट-पुष्टता, क्षमता और संपन्नता के संकेतों का स्पष्ट प्रदर्शन कर रहा है।[116] 1906 तक तो उनका यह निश्चित मत था कि भारत की भौतिक प्रगति न केवल भारतीय इतिहास की अभूतपूर्व घटना है प्रत्युत विश्व के किसी भी देश के इतिहास की एक विरल घटना है।[117]

प्रतिद्वंद्वी विवादों की विस्तृत परीक्षा के समय दोनों पक्षों ने समान रूप से स्वीकृत परंतु भिन्न विधि से और विपरीत रूप में विश्लेषित निर्देशकों पर न केवल तर्क-वितर्क किया प्रत्युत भारतीय नेताओं ने भौतिक संपन्नता संबंधी कतिपय पक्षों पर सहमत होते हुए भी यह स्पष्ट कर दिया कि राष्ट्रीय संपन्नता संबंधी बड़े कारणों के अभाव में ये पक्ष आवश्यकता से अधिक कमजोर पड़ गए थे।

राष्ट्रीय नेताओं की दृष्टि में दुर्भिक्ष भारत की दरिद्रता के स्पष्ट प्रमाण थे। दुर्भिक्षों की निरंतर बढ़ती हुई तीव्रता, प्रसार तथा विनाशशीलता[118] भारत की बढ़ती हुई अशक्यता के पक्के अभिसूचक थे।[119] इसके विपरीत ब्रिटिश दृष्टिकोण यह था कि दुर्भिक्ष प्राकृतिक प्रकोप के परिणाम थे और इनके साथ मानवीय प्रयत्नों का कोई संबंध नहीं था।[120] भारतीयों की दृष्टि में खेतिहरों पर बढ़ता हुआ ऋण तथा भूमि जोतनेवालों द्वारा भूमि न जोतनेवालों के हाथों भूमि की बिक्री, साधनों के बढ़ते अभाव के सूचक थे।[121] कुछएक ब्रिटिश अधिकारियों तथा लेखकों ने इस तथ्य को मानने से इनकार कर

दिया कि ऋणग्रस्तता ऐतिहासिक रूप से निर्धनता की दशा की सूचक है।[122] विकल्पतः उन्होंने ऋणग्रस्तता को निर्धनता का कारण माना, परिणाम नहीं।[123] जी० वी० जोशी और गोखले ने भी अकाल और प्लेग से अलग हटकर बढ़ती हुई मृत्यु-दर के आंकड़े प्रस्तुत करके यह दिखाने का प्रयत्न किया कि बहुत अधिक जनसंख्या को भरपेट खाना नहीं मिलता।[124] एक ओर जहाँ भारतीय नेता ब्रिटिश अधिकारियों के भारतीय सम्पन्नता के दावे को झूठा सिद्ध करने के लिए निश्चयात्मक प्रमाण जुटा रहे थे, वहाँ वे अब यह भी मानने लगे थे कि वस्तुतः प्रमाण जुटाने का उत्तरदायित्व तो निश्चित धारणा के प्रस्तावकों का ही है।

ब्रिटिश प्रवक्ताओं ने इतिहास को बहुत बड़ा न्यायाधीश मानकर उसके आगे अपील करते हुए अपना पक्ष प्रस्तुत किया। उनका मंतव्य था कि ब्रिटिश राज के सापेक्षिक भौतिक परिणामों पर निर्णय देने से पूर्व तुलना के लिए यह देखना चाहिए कि ब्रिटिश पूर्ववर्ती शासकों के अधीनस्थ भारत की क्या दशा थी। इस तुलनात्मक विवेचन में उनका तर्क था कि अंग्रेजों के आने से पूर्व भारत अत्यधिक दरिद्र था और ब्रिटिश राज्य का पक्ष इस दृष्टि से उज्ज्वल है।[125] भारतीय नेता अपने अतीत पर आधारित निर्णय को स्वीकार करने पर सहमत थे। कुछ एक महानुभावों ने तो बड़ी तत्परता से मान लिया कि भारतीय दरिद्रता की जड़ें इतिहास के अंतराल में हैं और इस प्रकार दरिद्रता एक पुरानी बहुत पुरानी विरासत में प्राप्त बुराई है।[126] भारत अतीत में कभी समृद्धि का भंडार नहीं रहा।[127] परन्तु उनमें से बहुतों की मान्यता यह थी कि वर्तमान युग की दरिद्रता और दुर्भाग्य अतीत के किसी भी युग में नहीं रहे।[128] इनसे प्राय ने भारत को जकड़ने वाला अंग्रेजी राज्य सबसे बड़ा अभिशाप है।[129] उनमें से कुछ एक ने तो यह प्रमाणित करने की चेष्टा भी की कि अकबर तथा अन्य भारतीय शासकों के समय भारतीयों की स्थिति अपेक्षाकृत अच्छी थी।[130] कुछ एक राष्ट्रवादी प्रवक्ताओं ने तो अतीत का गौरव गान किया और अतीत की समृद्धि और गरिमा के विनाश पर उच्च स्वर से विलाप किया।[131] ऐल्फ्रेड नडी के इस विषम प्रश्न ने बड़ी सफाई से सरकारी दृष्टिकोण का खंडन किया—क्या अंग्रेज व्यापारी भारत में गरीबों के दुखों के निवारण के लिए इस देश में आने को आकृष्ट हुए थे? अथवा उनके अपने ऐतिहासिक कथन के अनुसार, क्या वे इस देश की सम्पत्ति से आकृष्ट होकर यहाँ आये थे?[132]

ब्रिटिश भारतीय अधिकारियों तथा लेखकों ने भारत में असंख्य विभिन्न मूल्यवान धातुओं के बढ़ते हुए आयात तथा उसके फलस्वरूप लोगों के पास उन धातुओं के संचित भंडार को देश की बढ़ती हुई सम्पत्ति का निश्चित संकेत के रूप में ग्रहण किया।[133] उनमें से एक महानुभाव फ्रेड जे० एटकिंसन ने तो 1902 में संगणना की कि 1800 1895 की अवधि में भारत ने 141,705 000 पौंड का सोना तथा 4792 403 000 पौंड की चाँदी आयात की है। सिक्का आदि के लिए कटौती के पश्चात उसने आंकड़ों में सिद्ध किया कि भारत की संचित आय 26 रु० प्रति व्यक्ति है।[134] उल्लेखनीय यह है कि उसका यह तर्क भारतीय नेताओं को किसी प्रकार दिग्भ्रांत न कर सका। भारतीय नेताओं ने यह स्वीकार किया कि 19वीं शताब्दी की पूरी अवधि में मूल्यवान धातुओं का आयात हुआ है परन्तु

इसे वे बढ़ती समृद्धि का अथवा राष्ट्रीय आय में बढ़ोत्तरी का लक्षण मानने को तैयार नहीं हुए। उन्होंने स्पष्ट किया कि चांदी के इन आयात का बहुत बड़ा भाग संग्रह अथवा आभूषणों के काम न आकर मुद्रा की अनिवार्य आर्थिक तथा व्यापारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के ही काम आता है। आयातित चांदी प्रमुख रूप में मुद्रानिर्माण के ही काम आती है जिसकी मांग इन वर्षों में भूराजस्व की नकद अदायगी तथा देश के विदेश व्यापार के आर्थिक भुगतान के कारण काफी बढ़ गई थी।[135] मुद्रानिर्माण, टूट फूट तथा राजकीय जमा आदि के पश्चात आयातित मूल्यवान धातुओं का अवशिष्ट जनता की बढ़ती समृद्धि को दिखाने के लिए प्रयोग किया जानेवाला एक नगण्य प्रमाण था।[136] इतना ही नहीं इस तुच्छ राशि का उपयोग भी प्रमुख रूप में उच्च वर्गों में सर्वाग ने नाग ही करते हैं। यह धातु तो कदाचित ही जनता के निम्नवर्ग के हाथ में पहुंच पाती है।[137] दादाभाई नौरोजी ने जोर देते हुए कहा कि सोना चांदी के आयात संपत्ति में वृद्धि प्रगति नहीं करते क्योंकि उनका उद्देश्य व्यापार के निश्चित संतुलन का प्रमाण रखना नहीं है। भारत का निर्यात आयात की अपेक्षा अधिक है। इन मूल्यवान धातुओं के आयात के बदले उसी मूल्य की अन्य वस्तुओं का निर्यात करना पड़ता है अतः इस रूप में मूल्यवान धातुओं के आयात से संपत्ति में वृद्धि की अपेक्षा जीवननिर्वाह के साधनों की हानि ही अधिक होती है।[138]

ब्रिटिश भारतीय अधिकारियों ने हर्षोत्फुल्ल होकर वर्ष प्रतिवर्ष मूल्य और परिमाण में शीघ्र गति से फैलते भारत के विदेश व्यापार को देश की बढ़ती संपन्नता के साक्ष्य रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने एक ओर यह तर्क प्रस्तुत किया कि केवल बढ़ती संपन्नतावाला देश ही नियमित रूप से और ऊंची दर पर विदेशी सामग्री के आयातों में वृद्धि कर सकता है। दूसरी ओर उनका तर्क था कि बढ़ते हुए निर्यातों से किसानों की जेब अधिकाधिक भर रही होगी।[139] भारतीय नेताओं ने इस प्रपंच के प्रति विपरीत दृष्टिकोण अपनाया। विदेश व्यापार के प्रति उनके दृष्टिकोण की समीक्षा तो आगे के एक अध्याय में प्रस्तुत की गई है। यहां इतना लिखना पर्याप्त होगा कि उनके अनुसार विदेश वाणिज्य लाभ का साधन न होकर राष्ट्रीय क्षति का ही एक बहुत बड़ा साधन है क्योंकि आयात से थोड़े से लाभ की अपेक्षा बहुत बड़ी हानि इस रूप में होती है कि स्वदेशी उत्पादकों के अपने क्षेत्र से हट जाने से औद्योगिक उदासीनता छा गई है। इसके अतिरिक्त आयातों में वृद्धि देश के योगक्षेम में बढ़ोत्तरी की अपेक्षा देश से धन के निकास में वृद्धि की ही संकेतक है। मजे की बात यह है कि उसकी बुराइयां तो भारतीयों को भुगतनी पड़ती हैं और उसके लाभों का आनंद विदेशी लेते हैं।[140]

ब्रिटिश भारतीय प्रशासकों ने निरंतर सुधरते हुए भारत के राजस्व की ओर संकेत किया जो करों के अतिरिक्त बोझ को बढ़ाए बिना ही बढ़ता जा रहा था। उन्होंने राजस्व के प्रमुख विषयों द्वारा लचीलापन दिखाए जाने के लिए तथा क्रयशक्ति और समृद्धि के सूचक साधनों में प्राप्ति में निरंतर विकास के लिए अपने आपको बधाई दी।[141] उन्होंने देश में सुविधाओं और समृद्धि के सीमांत में सुधार के द्योतक के रूप में सीमा शुल्क, डाक कर, नमक कर, आय कर, मुद्रांक तथा उत्पाद शुल्क से प्राप्त राजस्व में वृद्धि

का उल्लेख विशेष रूप से किया।[11] भारतीय, जिनके दृष्टिकोण को गोपालकृष्ण गोखले ने सभी राष्ट्रवादी विचारकों द्वारा बहुप्रशंसित 1902-3 के अपने बजट भाषण में प्रखरता और प्रबलता से प्रस्तुत किया था, राजस्व म बढोत्तरी को देश की भौतिक प्रगति का सकेत मानने को सहमत नहीं थे। उनके अनुसार करो का आधान देश की दरिद्रता का बहुत बडा कारण है।[113] वह राजस्व के खाता म विकास को भारतीय जनता की दरिद्रता के निवारण का सूचक मानने के ब्रिटिश दृष्टिकोण का भी स्वीकार नहीं करते थे। उनका विश्वास था कि उत्पादक राजस्व म वृद्धि राष्ट्र की सपन्नता की अपेक्षा राष्ट्र के विनाश और दुर्भाग्य के पथ पर बढने की सूचक है। एव सभ्य सरकार को इस स्थिति का अनुमोदन करने के बदले उसकी निंदा करनी चाहिए।[114] सीमाशुल्क म वद्धि केवल यथादृष्ट विदश व्यापार के प्रसार मात्र की मापक है जिसकी निन्दा पहले ही की जा चुकी है। केवल दो करो आयकर तथा बिक्रीकर से प्राप्त आय देश की भौतिक स्थिति का ज्ञान करा सकती है। आयकर मध्यवग की और बिक्रीकर जनसाधारण की स्थिति के परिचायक हैं।[115] यह निर्देश किया गया कि आयकर से प्राप्त होनेवाली आय वर्षो से न्यूनाधिक रूप म स्थिर ही रही है।[116] बिक्रीकर की आय भी जनसख्या के विस्तार के अनुपात म नहा बढी है।[117] नमक जैसी मानवीय उपयोग की मूल तथा आवश्यक वस्तुओ की प्रति व्यक्ति खपत मे गिरावट का सूचक यह तथ्य जनसमुदाय की गिरती दशा का सचमुच एक बहुत बडा साक्ष्य है।[118]

ब्रिटिश भारतीय अधिकारियो ने कृषियोग्य भूमि के क्षेत्र मे विस्तार तथा कृषि उपज मे वद्धि को भारतीय सपन्नता के विकास के एक अन्य प्रमाण के रूप मे उद्धृत किया क्योकि उनके अनुसार इनका परिणाम था कृषि आय म अपेक्षाकृत अधिकता तथा खाद्य पदार्थो की अपेक्षाकृत प्रचुरता से उपलब्धि।[119] भारतीय नेताओ ने इस तर्क का खडन निम्नलिखित युक्ति से किया। उसके अनुसार देश मे, विशेषत पुराने प्रान्तो मे, कृषि योग्य भूमि का क्षेत्र तथा कुल खाद्य समरण बढती जनसख्या के अनुरूप नही बढ रहे।[150] इसके अतिरिक्त व्यापारिक फसलो के क्षेत्र की वद्धि के मुकाबले खाद्य फसलो के क्षेत्र की वृद्धि भी नगण्य है।[151] कृषिक्षेत्र का विस्तार कृषि उत्पादनो के निर्यात म वृद्धि के परिणाम के अनुरूप नहीं।[15] प्रत्येक स्थिति मे यह विस्तार जगलो प्राकृतिक चरागाहो तथा परती धरती पर अनुचित कब्जा का ही परिणाम है।[153] इसके अतिरिक्त उन्होने अगरजो के धरती की उत्पादकता म सुधार के दावे को गलत मानते हुए उसका प्रबल खडन किया। उनके अनुसार धरती पर जनसख्या के दबाव और उसके फलस्वरूप स्वदेशी उत्पादको के टूट जाने से, घटिया धरती पर व्यवसाय खेती के विस्तार से[154] तथा निरतर खाद के बिना ही फसल उगाते रहने से धरती की उवराशक्ति क्षीण हो जाने से उत्पादन घट गया है।[155] अतएव निष्कर्ष रूप म उनकी मान्यता थी कि भारत कृषि के क्षेत्र म निरतर और भयकर अपकर्ष से विपन्न होता जा रहा है जिसका परिणाम यहा बार-बार पडनेवाले दुर्भिक्ष है।[156]

सुधरती दशा का सरकारी तत्र द्वारा प्रस्तुत एक रोचक साक्ष्य मूल्यो मे वद्धि था। उनके अनुसार यह एक सत्य था क्योकि इससे एक ओर खेतिहरो की जेबें भारी हो रही

थी और दूसरी ओर लोगो की क्रयशक्ति मे वृद्धि से प्रेरित खाद्यान्नो तथा अन्य उपभोग वस्तुओ की माग बढ रही थी ।[157] राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियो की दृष्टि मे मूल्यवृद्धि की भूमिका का तर्क सर्वथा निस्सार और भ्रातिमूलक था। उन्होंने वर्षो तक तो आशिक, स्थानीय तथा अस्थायी वृद्धि को छोडकर देश मे सामान्य अथवा उल्लेखनीय रूप मे मूल्य वृद्धि का स्वीकार ही नही किया ।[158] आगे चलकर उन्होने मूल्यवृद्धि के तथ्य को तो स्वीकार किया परतु उसकी सार्थकता का विश्लेषण भिन्न रूप से प्रस्तुत किया । उनके विचार मे मूल्यवृद्धि क्रयशक्ति मे वृद्धि की सूचक न होकर राष्ट्रीय उत्पादन मे गिरावट की और कृषि उत्पादन मे ह्रास की द्योतक थी ।[159] इसके अतिरिक्त यह कृषि उपजो के बढते निर्यात तथा यूरोप के बाजारो की ऊची कीमतो का प्रभाव था ।[160] उनमे से कुछ एक ने सकेत किया कि किसी भी रूप मे बढी कीमतो का लाभ वास्तविक उत्पादक को न मिलकर बिचौलियो, ऋणदाता साहूकारो तथा निर्यात व्यापारियो द्वारा ही हडप लिया जाता था ।[161] उन्होने अविलब यह भी सकेत किया कि खेती तथा अन्य प्रकार के श्रम कार्यो मे लगे समाज के निम्नतम वर्ग के मजदूरो की आय बढती कीमतो के साथ उसी गति से नही बढी है। बल्कि कुछ लोगो की आय तो घट गई है। ऐसे लोगो का तथा उन छोटे किसानो का, जिनके पास बेचने के लिए फालतू अनाज नही होता और जिन बेचारो को अपनी आवश्यकता के खाद्यान्न का कुछ भाग खरीदना पडता है ऊची कीमतो से समृद्धि के बदले दुर्भाग्य ही बढा है ।[16]

आधुनिक उद्योगो तथा यातायात साधनो का उदय और विकास समकालीन भारतीय आर्थिक विकास का एक ऐसा पहलू था जिसे दोनो पक्षो ने प्रचारात्मकता से हटकर एक मत से समर्थन दिया तथा उसे आर्थिक क्षमता का स्रोत स्वीकार किया। परतु इस सबध मे भी भारतीय अर्थशास्त्रियो ने स्वदेशी उद्योगो के द्रुतगामी ह्रास पर गभीर चिंता और निराशा प्रकट की। इस औद्योगिक उदासीनता से भारतीय समाज द्वारा अनुभूत आजीविका की भारी क्षति की पूर्ति आधुनिक मशीनी उद्योग के विकास द्वारा होती दिखाई नही देती ।[163] उल्लेखनीय यह है कि विदेशी धन का आधुनिक भारतीय उद्योगो पर प्रभुत्व लाभप्रद परिणामो के बहुत बडे भाग को अपने अधिकार मे कर लेता है।[164] उनकी दृष्टि मे रेलें भी विशुद्ध वरदान रूप नही थी ।[165]

भारतीय नेताओ ने एक दृष्टि से अगरेजी प्रशासन को नीचा दिखाया। भारत मे व्याप्त घोर दरिद्रता और उसकी उत्तरोत्तर बढती गति के सबध मे उनकी धारणाए दृढ थी। वे सदैव इस तथ्य की सत्यता की परीक्षा के लिए तथा वास्तविकता को उसकी गहराई मे देखने के लिए निष्पक्ष तथा खुली जाच-पडताल का समर्थन करते थे। वस्तुत उन्होने जाच-पडतालो को भारत की दरिद्रता समस्या सबधी अपने आदोलन का अभिन्न अग बना लिया। दादाभाई नौरोजी अपने सपूर्ण सक्रिय राजनीतिक जीवन मे, अपने निबधो मे, हाउस आफ कामस मे, काग्रेस के अध्यक्ष के रूप मे तथा सिलेक्ट कमेटी आन ईस्ट इडियन फाइनेंस ऐंड दि रायल कमीशन आन दि ऐडमिनिस्ट्रेशन आफ दि एक्सपेंडीचर आफ इडिया' (विलेबी कमीशन) के सामने साक्ष्य देते हुए, निरतर जाच-पडताल की माग करते रहे।[166]

राष्ट्रीय काग्रेस ने 1900 मे भारतीयो की आर्थिक दशा की पूर्ण तथा निष्पक्ष जाच की माग प्रस्तुत की।[167] 1901 म इग्लैड स्थित भारतीय अकाल सघ ने भारत के बहुत से विशिष्ट ग्रामो की आर्थिक स्थिति की विस्तृत जाच की योजना बनाई तो काग्रेस ने उस योजना को अपना हार्दिक समर्थन दिया।[168] भारतीय नेताओ ने 1882 की बार बूर जाच के और 1888 की डफरिन जाच के परिणामो के प्रकाशन का बार-बार आग्रह किया। उन्होने इन प्रकाशनो को रोकने को विश्वासघात बताते हुए अपने गुप्त गुप्त दावो की पूर्ति के प्रति उपेक्षा के लिए सरकारी तत्र की अच्छी खबर ली।[169]

IV दरिद्रता के कारण

भारत की बढ़ती दरिद्रता अथवा सपन्नता विषयक वाग्युद्ध दोनो पक्षो द्वारा प्रबल पराक्रम और उत्कट साहसपूर्वक लडा गया। यद्यपि यह मतभेद वर्षों तक भारतीय राजनीति को जीवन प्रदान करता रहा तथापि अधिकाधिक इसे दो तथ्यो की स्थापना म सफलता मिली, प्रथम, भारतीय जनता के अपेक्षाकृत अधिक निर्धन वर्ग का जीवन स्तर अत्यत ही निम्न है। इतना अधिक निम्न है कि उसे और अधिक नीचे नही धकेला जा सकता। द्वितीय, यदि भौतिक प्रगति अथवा परागति नाम की कोई स्थिति है भी तो उसकी दर इतनी स्वल्प तथा अपने-आप मे उसका क्षेत्र इतना सकुचित है कि उसे वैज्ञानिक दृष्टि से स्थापित ही नही किया जा सकता।[170] दूसरे शब्दो म भारत की भौतिक स्थिति दरिद्रता के निम्न स्तर पर स्थिरता की ही है।

भारतीय नेताओ की दृष्टि मे भारत की अर्थव्यवस्था की गति की दिशा का प्रश्न इस दृष्टि से महत्वपूर्ण था कि इससे प्रमुख रूप से तो भारतीय जनता और सरकार का दरिद्रता की समस्या पर ध्यान केंद्रित किया जा सकता था और दूसरे बाद म यह निर्णय करने मे कि इसके लिए किसका दायित्व है—सहायता भी ली जा सकती थी।[171] अध्ययन काल की अवधि के अधिकाश वर्षों म उनका प्रमुख लक्ष्य भारत की विकमस्सन घोर दरिद्रता का उन्मूलन था न कि चिडिया द्वारा खेत चुगे जाने के बाद पछताना था।[172] विदेशी शासको तथा भारतीय नेताओ ने देश की चरम दरिद्रता के लिए उत्तरदायी तत्वो की समीक्षा करने मे तथा उनके सुलझाने मे अधिक ध्यान दिया क्योकि वे इस तथ्य से भलीभाति परिचित थे कि आर्थिक विकास के मार्ग की बाधाओ को भली प्रकार जान लेने पर ही उनके हटाने के उपायो का अनुशासन अथवा प्रयोग किया जा सकता है।[173] समय समय पर ब्रिटिश भारतीय लेखको और अधिकारियो ने भारत की असाधारण दरिद्रता के सबध मे अनेक विश्लेषण प्रस्तुत किए। भारतीय राष्ट्रवादियो ने उन्हे प्राय निस्सार अपर्याप्त तथा असतोषप्रद बताते हुए अस्वीकार कर दिया।

ब्रिटिश प्रशासको ने अनेक बार भारत की निर्धनता के लिए भारत की जनसख्या के आकार व वृद्धि को दोष दिया। उनके अनुसार जनसख्या की वृद्धि आजीविका के साधनो को शीघ्रता से पीछे छोडती जा रही है और इस प्रकार निर्धनता को अनिवार्य बनाती जा रही है।[174] लार्ड डफरिन ने 1888 म सेंट ऐंड्रयूज के भोज मे पूछा जब इस देश मे बडे-बडे जिलो और इलाको मे जनसख्या बाढ की तरह बढती जा रही है और

संपत्ति को अधिक प्रभावी बनाने वाली स्थितियां के विकास के साथ जुड़ जाती है तो उसका निश्चित परिणाम होता है उत्पादन में वृद्धि। भारत में भी जनवृद्धि वांछनीय है क्योंकि इस देश के आर्थिक विकास के आधारभूत प्राकृतिक साधन असीम तथा अप्रयुक्त हैं। इस प्रकार निष्कर्ष सर्वथा स्पष्ट है कि भारत में बुराई की जड़ कल्पित अधिक जनसंख्या न होकर वास्तविक में कम जनसंख्या है।[132] जी०वी० जोशी ने निम्नलिखित अवतरण में विषय का अधिक स्पष्टीकरण तथा विश्लेषण इस प्रकार से प्रस्तुत किया है:

> जनसंख्या और उत्पादन में सदैव एक प्राकृत अनुपात रहता है जो प्रत्येक समाज के औसत जीवनस्तर का निर्धारण करता है। जब जनसंख्या और उत्पादन दोनों सामान्य तथा बराबर दर से आगे बढ़ते हैं और अनुपात बनाए रखते हैं तब राष्ट्र के जीवनस्तर में किसी प्रकार की गड़बड़ी नहीं होती। इसके विपरीत जब जनसंख्या असामान्य गति से बढ़ती है और उत्पादन अपनी सामान्य स्थिति में रहता है तब सही अर्थों में अत्यधिक जनसंख्या का रोग माना जाता है। जब उत्पादन गिर जाए और जनसंख्या सामान्य गति से बढ़ रही हो तो उसे अपर्याप्त उत्पादन का रोग ही कहना चाहिए। पश्चिम की पूंजीपति राजनीतिक अर्थव्यवस्था केवल एक 'अनुपात' शब्द को ही देखती हुई दो नितांत भिन्न प्रकृति की बुराइयों को परस्पर मिला देती है। इसी रूप में वह भारत के संबंध में दोनों स्थितियों में 'अत्यधिक जनसंख्या' का प्रयोग करती है। जैसाकि हम पहले देख चुके हैं, यहां जनसंख्या सामान्य गति का अतिक्रमण करके नहीं बढ़ रही है और यदि देश का कुल उत्पादन आवश्यकता के परिमाण के अनुरूप नहीं बढ़ता जबकि देश में भौतिक साधनों की प्रचुरता है, तो यह स्पष्टतः राजनीतिक अर्थशास्त्रियों द्वारा घोषित अत्यधिक जनसंख्या का रोग न होकर अपर्याप्त उत्पादन का ही रोग है जिसे वे लोग मान्यता नहीं देते।[133]

इसके अतिरिक्त यदि जनसंख्या बढ़ रही है तो भी उसके परिणामस्वरूप दरिद्रता में वृद्धि होना आवश्यक नहीं, क्योंकि तेजी से उद्योगीकरण करके इसका प्रतिकार किया जा सकता है। इस देश की बढ़ती जनसंख्या के लिए रोटी जुटाने का प्रश्न इस समय निस्संदेह गंभीर है और दुर्निवार है, परंतु हमारी समझ में बढ़ते हुए मजदूरों के लिए पर्याप्त काम जुटाना उससे भी अधिक गंभीर और दुर्निवार प्रश्न है।[134] परोक्ष रूप से उस समय सभी भारतीय नेताओं ने यही सिद्धांत अपनाया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि भारतीय कृषि पर सचमुच आवश्यकता से अधिक दबाव है परंतु यह दबाव अत्यधिक जनसंख्या का फल न होकर देशी उद्योग के बलपूर्वक विनाश तथा नियोजन के अभाव का परिणाम है और यह भारत में ब्रिटिश सर्वोच्चता की देन है।[135] इस समय अत्यधिक जनसंख्या की बात कहना किसी व्यक्ति के हाथ काटकर उसपर अपने का पालन में अशक्त अथवा काम करने में अयोग्य होने का व्यंग्य करने के समान है।[136] यह कहा गया कि इन परिस्थितियों में अत्यधिक जनसंख्या का सिद्धांत मूल समस्या से जनता का ध्यान हटाने की एक चेष्टा है और यह दुखते घावों पर नमक छिड़कने के समान भयंकर रूप से पीड़ादायक तथा अपमानजनक है।[137]

भारतीयों की दरिद्रता के संबंध में एक अन्य घिसा पिटा सरकारी स्पष्टीकरण

भारत की निर्धनता का बहाना न होकर एक सामाजिक रोग है। इस रूप मे भारतीय नेताओ ने सामाजिक उत्सवो पर अनुचित तथा अधिक व्यय की भर्त्सना भी की तथा आत्मसयम का प्रचार भी किया।[60] जहा तक कचहरियो द्वारा किसान के गरीब होने का प्रश्न था राष्ट्रवादियो की दृष्टि म इसके लिए स्वय ब्रिटिश राज्य ही दोषी था, क्योकि कचहरिया उसकी देन थी, राष्ट्रवादियो ने तत्परता से इन कचहरियो का समझौता समितियो की स्थापना अथवा पुरानी पचायत व्यवस्था के पुनरुद्धार द्वारा हटाने का समर्थन किया।[61]

भारतीय नेताओ ने इस मत का भी खडन किया कि भयकर दर से सूद वसूलने वाले साहूकार ग्रामीण जीवन के विनाश का तथा भारत की दरिद्रता का महत्वपूर्ण कारण थे।[6] उनके दृष्टिकोण का विस्तृत विवरण इसी ग्रथ के दसम अध्याय म प्रस्तुत किया गया ह। उनके विचार मे किसानो की दरिद्रता मे साहूकार की भूमिका गौण थी। वस्तुत वह किसानो की दरिद्रता के लिए उत्तरदायी कारणभूत तत्व ही नही था। वह तो परिस्थितियो का कारण न होकर परिणाम था क्योकि केवल पहले से ही अभावग्रस्त और असहाय किसान ही उसके पास सहायता के लिए जात थ।

19वी शताब्दी के अत म जब बार बार पडने वाले भयकर अकालो से भारत विनाश का ऐसा बुरा शिकार बना कि उसने समस्त विश्व की आत्मा को झकझोर कर रख दिया और जसाकि हम पहले देख चुके ह, उन्होने भारत की दरिद्रता की समस्या को देश की राजनीति का प्रमुखतम प्रश्न बना दिया—दरिद्रता के कारणो को अकालो के उद्गमो से मिला दिया गया—तो ब्रिटिश अधिकारियो ने अकाल के वर्षो मे और उसके परवर्ती वर्षो म फले दुर्भाग्य तथा भौतिक पदार्थों के नाश को दखते हुए अकालो को भारत की दरिद्रता के लिए दोषी ठहराया। परतु इस धारणा के विरुद्ध भारतीय नताओ न देश वासियो की दरिद्रता को ही निरतर, तीव्र और विनाशकारी अकालो के लिए उत्तरदायी स्वीकार किया। इस प्रकार प्रश्न उठा कि अकालो के क्या कारण थ? लाड कजन न उत्तर देन का दायित्व लेत हुए 1900 म अपनी सामान्य सशक्त शैली मे कहा, 'अकालो का वास्तविक कारण समय पर वर्षा का न होना और उसके फलस्वरूप फसल का सूख जाना ही था। उसका तक था कि यदि भारत मे पडे बहुत बडे सूखे के फलस्वरूप अपरिहार्य कृषि उत्पादन की भारी हानि को ध्यान मे रखा जाए तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि कोई भी सरकार न तो आकाश पर नियत्रण रख सकती है और न ही प्रकृति के इतने बडे पमाने पर विनाशकारी रूप की तथा उसके परिणामो की पहले से ही कल्पना कर सकती है।[63] 1902 तक तो भारत के वायसराय और गवनर जनरल न्यूनाधिक रूप से यह मानने लगे थे कि भारत के अकाल ईश्वर का विधान थे और उन्हे रोकने अथवा हटाने की दिशा मे मानव कुछ भी करन म असमथ है

> किसी सरकार को उस देश मे पडनेवाले अकालो को रोकने के लिए कहना जिसकी मौसम सबधी स्थिति ऐसी हो जैसी भारत देश की है और जिसकी जनसख्या उस परिमाण म बढ रही हो जैसी इस समय भारत म बढ रही है सवशक्तिमान विधाता के हाथ से विश्व का नियत्रण छीनकर अपने हाथ मे करने को कहना है। गत वष

शरद ऋतु म केवल ईश्वर की ही कृपादृष्टि थी कि मानसून फिर से आ गया फलत इस शीत ऋतु म सभावित अकाल की स्थिति सपन्नता म बदल गई। विश्व की सर्वोत्तम सरकार एक क्षण म परिवतन को द्रुतगामी नही बना सकती और निकृष्टतम सरकार उस विलबित नही कर सकती। [04] अकाल भारत म सदा स रहे ह और आनवाले अपरिमित समय तक पडत रहगे। एक सभ्य सरकार तो अधिक स अधिक उनकी तीव्रता और विस्तार को ही घटा सकती है।"[05]

दूसरी ओर राष्ट्रीय मान्यता यह थी कि दुर्भिक्ष प्रकृति के प्रकोप के फल न होकर मानव की असफलताओ के परिणाम हैं अत वे रोके जा सकत ह। [06] यह ठीक है कि अकालो का तात्कालिक कारण वर्षा का अभाव है। [07] परतु स्थिति के इस विश्लेषण पर रुक जाना उचित नही। अपर्याप्त वर्षा अकालो का समुचित विश्लेषण नही क्योकि सिचाई जैसे वैज्ञानिक प्रयत्नो द्वारा प्रकृति को मानव के नियत्रण म लाया जा सकता है। [08] इसस भी अधिक महत्वपूर्ण एव विचारणीय विषय यह है कि अति द्रुतगामी यातायात साधनो के होने पर भी किसी एक विशेष कोने म केवल एक ही फसल क बिगड जाने पर अकाल की स्थिति क्या उत्पन्न हो जाती है ? [09] आखिर सारे देश म एक साथ ही फसलें यद ही कभी खराब होती हो ? और ऐसा वष कभी नही रहा जब देश का कुल खाद्य उत्पादन यहा की कुल जनसख्या की पूर्ति के लिए अपर्याप्त पडा हो। [10] विचारणीय यह भी है कि यूरोप के बहुत सारे देश भी तो अकाल का शिकार बनत है परतु फिर भी प्राय व इस भयकर दानव के उत्पात स बच जाते है। [11] इग्लड तब भी भुखमरी का शिकार नही हुआ जब सामान्य वर्षों म ही उसका उत्पादन उसकी खाद्य आवश्यकताओ के मुकाबल कठिनता स 50 प्रतिशत था। [1] भारत म सामान्य नियम के अनुसार या तो खाद्यान्नो का विदशो से आयात किया जा सकता था अथवा दश म ही अतिरिक्त अनाज वाले क्षेत्रो से अभावग्रस्त क्षेत्रो का अनाज भेजा जा सकता था। [13] इन दोनो सभावनाओ का न अपनाना यही सिद्ध करता है कि अकाल फसल के बिगडने का फल नही बल्कि खाद्य पदार्थों के उपलब्ध सभरण को खरीदन के साधनो के अभाव के ही परिणाम ह।"[14] यदि भारतीय वर्षा के अभाव के एक ही धक्के को सहन करने का दम नही रखत तो यह तथ्य उनकी नितात दरिद्रता का ही सिद्ध करता है। [15] अतएव दुर्भिक्षा का मूल तथा स्पष्ट कारण देश को जकडने वाली दरिद्रता है।"[16] दुर्भिक्षा की तीव्रता तथा विस्तार स देशवासियो की अवरोध शक्ति घट रही है, सहनशक्ति का पूर्ण अभाव हो गया है इसका ही परिणाम फसलो के बिगडने का अर्थ समग्र रूप स भुखमरी हो गया है।"[17] फसलो का उजडना गरीबी का कारण नही बनता बल्कि गरीबी ही उसी का अकाल का रूप दे देती है। [18] एक दूसरे दृष्टिकोण से देखने पर यही कहा जा सकता है कि फसलो की असफलता ने भारतीय दरिद्रता पर केवल तीव्र प्रकाश ही डाला है। [19]

भारतीय नेताओ ने सिद्ध किया कि प्रकृति को भारत की दरिद्रता के लिए किसी भी रूप मे उत्तरदायी नही ठहराया जा सकता। देश को प्रकृति ने तो बहुत उपहार दिए है। इसके पास भौतिक साधनो का इतना बडा अक्षय भडार है कि जिस अतुल भले ही न कहा जाए परतु वह अद्वितीय अवश्य है। भारत को भौतिक प्रगति के लिए

अनुकूल परिस्थितिया के रूप मे प्रकृति से सौभाग्य का वरदान मिला हुआ है।"[10] इस विश्लेषण न समस्या को और अधिक कटु बना दिया और प्रश्न उठा कि जब देश सपन्न है तो देशवासी क्यो विपन्न है ?[11]

राष्ट्रवादियो न अगरेजो के भारत की दरिद्रता विषयक विश्लेषण को निस्सार तथा पक्षपातपूर्ण बताते हुए उसे अमान्य कर दिया। वे भारत की दरिद्रता के सही कारण को जाचने के लिए प्रवृत्त हुए और अपनी खोज के फलस्वरूप इस निष्कर्ष पर पहुचे कि भारत की दरिद्रता पारम्परिक और अपरिहार्य नही। यह मानव निर्मित है अत इसका विश्लेषण तथा निवारण किया जा सकता है। "भारत कुछ एक आर्थिक तत्वो के फल स्वरूप निधन है। उन तत्वो की खोज समीक्षा तथा उनपर नियत्रण किया जा सकता है।"[3] इस प्रकार समस्या के प्रति शासक और शासित के दृष्टिकोण मे एक मौलिक अतर था जिसका अभी ऊपर निर्देश किया गया है। ब्रिटिश भारतीय प्रशासकों न भारत की दरिद्रता के दो सभव कारण प्रस्तुत किए। प्रथम या तो यह प्रकृति के क्रूर हाथो का परिणाम है अत यह असाध्य रोग है। कम से कम इस थोडे से समय म तो इसका प्रतिकार नही किया जा सकता अथवा यह भारतीयो की अपनी सामाजिक अथवा आर्थिक त्रुटियो का फल है जिसका प्रतिकार यदि किया जा सकता है तो स्वय भारतीयो द्वारा अपने आप ही किया जा सकता है। "इन दोनो अवस्थाओ म निधनता के अस्तित्व तथा निराकरण के लिए शासको का कोई विशेष दायित्व नही।"[5] दूसरी ओर भारतीय नेताओ न भारत की दरिद्रता के जन्म के तत्वो और शक्तियो को रेखाकित किया। उनके अनुसार जिन तत्वो ने भारत की निधनता मे वृद्धि की वे ब्रिटिश राज्य के वे जाने-अन जाने तत्व और शक्तिया थी जिन्हे पूरी ढील दी गई और जिनका प्रमुख रूप स प्रशासनिक नीतियो म परिवर्तन द्वारा प्रतिकार किया जा सकता था।[6] इस प्रकार इतिहास के एक विचित्र व्यग्य के रूप मे यह तथ्य सामने आया कि बनानिक दष्टि स उन्नत पश्चिम प्रकृति के तथा वर्तमान सामाजिक शक्तियो के अपरिहार्य प्रभाव की भाग्यवादी धारणा का पुष्टि करता है और पिछडा हुआ पूर्व मनुष्य की प्रकृति और समाज को नियत्रित तथा शासित करने की क्षमता को स्वीकार करता है।

भारतीय जनता की दरिद्रता के लिए उत्तरदायी कारणो और तदनुसार उनके निवारण के उपायो की खोज की धुन मे ही भारतीय नेताओ न कुछ एक महत्वपूर्ण आर्थिक प्रश्न तैयार किए ताकि उनपर अपनी जाच पडताल, वाद विवाद तथा आदोलन केंद्रित कर सकें। अतत उन्होने अपनी आर्थिक नीतियो और दृष्टिकोण निर्धारित किए तथा भारत मे ब्रिटिश साम्राज्यवाद के आर्थिक तत्र तथा उसकी प्रकृति को समझने की चेष्टा की। निधनता को हटाने के सघर्ष के समय तथा आर्थिक नीतियो को कार्यरूप मे परिणत करने के समय उनकी राजनीतिक चेतना एक रूप ग्रहण करती गई। इस विकास की प्रक्रिया का अध्ययन हम अगले अध्यायो म करेंगे। यहा इतना स्मरण रखना आवश्यक है कि निधनता की समस्या ने भारतीय नेताओ की सभी परवर्ती खोजो, मतभेदो तथा प्रचार आदि के लिए निरतर सजीवनी का काम किया।

सदर्भ

1 दादाभाई नौरोजी के 'स्पीचेज ऍंड राइटिंग्ज (मद्रास तिथिरहित) (निर्देश के लिए इस आग 'स्पीचज से सकेतित किया जाएगा।) पृ० 669-670

2 जिन लाभो की बहुधा घोषणा की जाती थी वे इस प्रकार थ
शाति कानून और व्यवस्था पश्चिमी शिक्षा केंद्रीकृत प्रशासन देश का राजनीतिक एकीकरण और इन सबके फलस्वरूप राष्ट्रीय भावना का विकास रेल तार अस्पताल आदि।

देखिए—सी० एल० पारीख द्वारा सपादित—नौरोजा क एसज स्पीचेज ऍंड राइटिंग्ज (बबई 1887) (निर्देश के लिए इसे आगे 'एसेज मे सकेतित किया जाएगा) प० 26 7 37, 131 2. 'स्पीचेज—प० 235-6 इडियन नेशनल काग्रेस भाग 1 काग्रेस प्रेसिडेटो (अध्यक्षो) के एड्रेसेज (भाषण) मद्रास, तिथि रहित (निर्देश के लिए इस आग सी० पी० ए० स सकेतित किया जाएगा।) प० 6-10 अग्रेजी शासन के अन्य लाभो की समीक्षा के लिए उदाहरण के रूप म देखिए, सी पी ए म अनक काग्रेस अध्यक्ष प० 4 81 115 307 11 346 375 6 738 जी० वी० जोशी के राइटिंग्ज ऍंड स्पीचज (पूना 1912), प० 616 आर० एन० मुधोलकर की रचना दि इकोनामिक कडीशन आफ दि पीपुल आफ इडिया इडियन पालिटिक्स (मद्रास, 1898), प० 3-8 तेलग्रद नड्डी दि पावर्टी आफ इडिया वहा प० 106 सा० वी० चिंतामणि कृत' इडिया ऍंड लाड कर्जन हिंदुस्तान रिव्यू तथा 'कायस्थ समाचार (निर्देश के लिए इसे आगे एच० आर० मे सकेतित किया जाएगा)—जून 1901 प० 451 आर० सी० दत्त द्वारा लिखित, 'इकोनामिक हिस्ट्री आफ इडिया अर्ली ब्रिटिश रूल (1901 म प्रथम प्रकाशित सस्करण का लदन म 1956 म मुद्रित रूप) (निर्देश के लिए इसे आग इ० एच०' स सकेतित किया जाएगा) पी० वी० एस० एन० बनर्जी के स्पीचेज ऍंड राइटिंग्ज (मद्रास, तिथिरहित) (सदर्भ के लिए इसे आगे एस० डब्ल्यू० से सकेतित किया जाएगा) प० 219 20 258-9, 303 5 331 इसके अतिरिक्त देखिए दि अमृतबाजार पत्रिका (निर्देश के लिए इस आग ए० बी० पी० से सकेतित किया जाएगा)—दिसबर 1878 24 नवबर 1897

3 नौराजी 'एसज, प० 28

4 वही पृ० 134 5 भोलानाथ चद्र मुकर्जी के मगजीन (कलकत्ता) म 1875 6 म बिना नाम के प्रकाशित) अपने अपेक्षाकृत अप्रसिद्ध परतु अत्यत बुद्धिमत्तापूर्ण लेख ए वाइस फार दि कामस ऍंड मनूफक्चरस आफ इडिया —(निर्देश के लिए इसे आग एम० एस० से सकेतित किया जाएगा) में लिखत हैं 'देश के लिए वास्तविक अथनीति का सुभान म अक्षम भारतीया ने अपन चारा ओर की थोथी चकाचौध से चौधिया कर अपने शासका पर विश्वास करत हुए उनके दृष्टिकोण को बिना किसी आलोचन प्रत्यालोचन के स्वीकार कर लिया। भारतीया न बच्चा क समान अग्रेजी अधिकारिया का व्यापार नीति पर अधविश्वास ही किया, परतु दिन प्रतिदिन ज्ञान का प्रकाश उनके दिमाग को धुध को साफ कर रहा है। भारतीय जितना अधिक गहराई स विचार करते गए उतना ही यह तथ्य अपने नग्न रूप मे उनके सामने स्पष्ट होता गया कि 'अग्रेजी व्यापार नीति उन्नति के माग को निरतर सकीर्ण बनाती हुई उन्हे घोर दरिद्रता की ओर ले जा रही है'

—खड II 1873 प० 83-4

बाल गगाधर तिलक ने 1893 मे राष्ट्रीय दृष्टिकोण के इस परिवतन को अत्यत ही सजीव

रूप मे इन शब्दो म प्रकट किया 'सवप्रथम भारतीय अगरेजो के अनुशासन से अत्यत चमत्कृत हुए। रेल तार सडको पुलो तथा स्कूलो आदि ने उन्हें विस्मित विमोहित कर दिया। उपद्रव समाप्त हो गए तथा लोग शांति और स्थिरता का आनद भोगने लग। लोग यह कहने लगे कि एक अधा व्यक्ति भी खुले रूप म सोना लेकर बनारस से रामेश्वर तक की यात्रा कर सकता है परतु जिस प्रकार मदिरा का नशा दीघ काल तक नहीं बना रहता, उसी प्रकार भ्राति क कारण उत्पन्न यह मतिभ्रम भी काफी समय तक न बना रहा लोग यह अनुभव करने लग कि एक अधा व्यक्ति भी पुन सोना लेकर यात्रा अवश्य कर सकता है परतु दिन प्रतिदिन सोना दुलभ होता जा रहा है

—जी० पी० प्रधान तथा ए० के० भागवत के 'लोकमान्य तिलक' (बबई 1958) पृ० 72 स उदधृत

और देखिए बगाली 10 मई 1884 'इडियन स्पेक्टेटर, 18 मई 1884 मराठा 21 दिसबर 1884 6 जून 1886 के मराठा म प्रकाशित ए० एल० राय का लेख जी० सुब्रह्मण्य अय्यर की रचना 'सम इकोनामिक आस्पेक्टस आफ ब्रिटिश रूल इन इडिया (मद्रास 1903) (निर्देश के लिए इसे आग इ० ए० से सकेतित किया जाएगा), पृ० 337 एल० एम० घोष की कृति सी० पी० ए० पृ० 762

5 1901 (लदन) म प्रकाशन के समय से ही भारतीय राष्ट्रवादियो के लिए सचमुच पाठयपुस्तक बनने योग्य कृति प्रास्परस ब्रिटिश इडिया म पृ० 127 १ 131 में विलयम डिगबी महोदय ने 1876-1900 तक 18 अकालो की क्रमश गणना की है जिनम चार तो अभूतपूव रूप से भयकर अकाल थे

6 परतु इससे भी गभीर प्रश्न यह उठा कि भारत म इतन दुर्भिक्ष क्यो पडते हैं ? भूख से मृत्यु दर इतनी भयकर क्यो है ? विश्व के किसी अन्य सभ्य देश म उन्होंने ऐसे दुर्भिक्ष कभी नहा सुन थ

आर० सी० दत्त 'स्पीचेज ऐंड पेपस आन इडियन क्वश्चन्स 1897 1900 (कलकत्ता 1908) (निर्देश के लिए इसे आगे 'स्पीचेज सकेतित किया जाएगा), पृ० 36

इडियन नेशनल काग्रेस (सदभ के लिए इसे आगे आइ० एन० सी० से सकेतित किया जाएगा) के 1900 वष का प्रस्ताव 11 भी देखिये

7 उदाहरण के लिए देखिए नौरोजी एसेज पृ० 135 तथा जब आप हमारी वास्तविक इच्छाओ को जान लेंगे तब न्याय करेंगे इसम मुझ लेशमात्र भी सदेह नहा। वही और भी देखिए सी० पी० ए० पृ० 13 22 3 91 2 129 149 188 324 380 397 405 475 490, 532

8 उदाहरण के लिए देखिए नौरोजी एसेज पृ० 128

9 जी० के० गोखले 'स्पीचेज (मद्रास 1916) पृ० 52

10 उदाहरण के लिए देखिए नौरोजी पावर्टी ऐंड अन ब्रिटिश रूल इन इडिया (लन्दन 1901) (निर्देश के लिए इसे पावर्टी से सकेतित किया जाएगा) पृ० 147 तथा आई० एन० सी० का 1900 का द्वितीय प्रस्ताव

11 उदाहरण के लिए देखिए रानाडे एसेज आन इडियन इकोनामिक्स' (बबई 1892) (निर्देश के लिए इसे एसेज स सकेतित किया जाएगा) पृ० 191 2 तथा जा० वा० जोशी की पूर्वोक्त रचना पृ० 754

25 न्यू इंडिया (कलकत्ता) 12 अगस्त 1901 सपादकीय म आगे कहा गया है 'और यह म त का उत्घाटन करता है कि सभी उग्रवादी राष्ट्रीय नेता प्रमुख रूप से भावात्मक राष्ट्रीयतावाद में रुचि नहा नेत थ और यद्यपि वे नवीन भारत का प्रभावित करने वाले किसी भी—राजनीतिक सामाजिक अथवा धार्मिक—प्रश्न की उपेक्षा कदापि नहा करना चाहते थ तथापि वे आज का आर्थिक और शैक्षणिक समस्याओ के लिए निरतर आन्दोलन को ही अपना विशिष्ट विषय बनाना चाहते थे

26 रानाड एमज प० 5

27 इसी पत्र न 7 नवबर 1894 के ग्रंथ मे इस दृष्टिकोण के एक अन्य मौलिक प र की आर इस प्रकार सकेत किया शरीर और आत्मा को एक साथ रख पा न के साधना से हीन राष्ट्र कभी सतुष्ट नहा हो सकता कभी स्वामिभक्त नहा हो सकता

28 1886 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के सभापति पद स अपने भाषण म दादाभाई नौरोजी ने घोषणा की यदि अनत भारत दुर्भाग्य के गड्ढे म गहरे स गहरे धसता ही गया तो अंग्रेजो रा य से प्राप्त नाम तथा अंग्रेजी शासको की सदर कल्पनाए सर्वथा निरर्थक ही हो जाएगी

—सी०पी०ए० प०22

सुरेद्रनाथ बनर्जी द्वारा सपादित दि बगाली म 9 मार्च 1902 म लिखा इस बात को कौन अस्वीकार करेगा कि अशक्त और भूखे लोगो के लिए कानून और व्यवस्था देने वाला एक अच्छी और वैज्ञानिक सरकार की अपेक्षा प्रतिदिन की रोटी अधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता है निस्सदह कानून और व्यवस्था बहुत अच्छी चीजें है परतु रोटी उनस भी अधिक अच्छी है

साथ ही देखिए एस०एन० बनर्जी स्पीचेज (1880 84 खड II) (कलकत्ता 1885) प०35 सी०पी०ए० प०697 बगाली, 28 जनवरी 1882 मराठा 30 दिसबर 1894, पी० मेहता स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज (इलाहाबाद 1905) (निर्देश के लिए इस आगे 'स्पीचेज' स सकेतित किया जाएगा) प० 451 नौरोजी स्पीचेज प० 389 भारतजीवन 11 दिसबर 'दि दी रिपोर्ट आन नेटिव प्रेस इन नार्थ-वेस्ट प्राविसेज एड अवध (निर्देश के लिए इसे आ आर०एन० पी०एन० स सकेतित किया जाएगा) 19 दिसबर 1899 एडवोकेट 27 नवबर (वही 29 नवबर 1901)

29 काग्रेस के 1902 के सत्र म तीसरे प्रस्ताव को प्रस्तुत करते हुए जी एस० अय्यर का तर्क था काग्रेस अपनी सारी शक्ति और सारा ध्यान जहा तक सभव हो विशिष्ट तथा अतिमहत्वपूर्ण प्रश्नो पर ही केंद्रित करे जनता की दरिद्रता का प्रश्न सर्वोच्च और ध्यानाकर्षक प्रश्न है वस्तुत इस एक प्रश्न का सतोषप्रद तथा सही समाधान ही अन्य सभी दिशाओ म देश के सुधार का एकमात्र आधार है। रिपोर्ट आफ इंडियन नेशनल काग्रेस—1902 (निर्देश के लिए इसे आगे रिप आई०एन०सी० से सकेतित किया जाएगा) पृ० 72. साथ ही देखिए एन०के०एन० अय्यर रिप०आई०एन०सी —1901 प० 142

30 हसाड (चतुर्थ वर्ग) खड 27 लगभग 1135

31 15 अगस्त 1947 तक क्रोध और भर्त्सना जारी रही भारतीय इतिहास के ब्रिटिश काल के इतिहासकारो म आज भी इस सबध म मतभेद है

32 नौरोजी पावर्टी प०1

33 वही पृ० 31

34 नौरोजी इन एमिनेंट इंडियस प० 161

35 उनके द्वारा इंग्लैंड मे अपने प्रिय विषय पर सैकडो भाषाओं में से अधिकांश उनकी उपयुक्त तीन प्रकाशित कृतियों एसेज, स्पीचेज एंड पावर्टी में भी दिए गए हैं। बहुत सारे अन्य भाषण पूर्ण अथवा संक्षिप्त रूप में भारत में खोज का विषय है। आई०एन०सी० की ब्रिटिश कमेटी का 1890 से लंदन से प्रकाशित जनरल

36 नौरोजी पावर्टी, प०161

37 वही प० 88

38 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट ए, प० 6

39 नौरोजी पावर्टी, प० 652

40 प्रस्ताव II 1886 के कांग्रेस के प्रतिवेदन की भूमिका में कहा गया है कि जनता में व्याप्त घोर दरिद्रता के प्रति किसी एक प्रतिनिधि ने भी किसी रूप में संदेह अथवा प्रश्न प्रस्तुत नहीं किया। ब्रिटिश राज्य के प्रत्येक एकल प्रांत तथा उपप्रांत के सभी प्रतिनिधियों में एक के उपरांत दूसरे ने अपने प्रांत के निम्न वर्ग में व्याप्त दुर्भाग्य के भुक्तभोगी होने का वर्णन किया। (प०18)

41 प्रस्ताव III

42 देखिए 1892 का प्रस्ताव X 1893 का VII 1894 का III 1895 का XXII 1896 का XII तथा XIII, और इसी प्रकार से अन्य

43 उदाहरणार्थ बारहवें कांग्रेसी सभापति आर०एम० सायानी ने दुख प्रकट करते हुए कहा, 'भारत एक इतना दरिद्र राष्ट्र है कि भारतीय दो समय का भोजन भी नहीं जुटा पाते। सचमुच इनमें से कुछ भारतीय तो वास्तव में ही भुखमरी के शिकार हैं और बहुत सारे कठिनता से केवल एक समय का भोजन जुटा पाते हैं। (सी०पी०ए० प०351) 1897 के सभापति सी शंकरन नायर ने शोकविह्वल होकर कहा, भारत की दरिद्रता प्रत्येक दिशा में प्रत्येक क्षेत्र में प्रत्येक रूप में अपने आपको हमारे सामने स्वतः प्रकट कर रही है, (वही प० 604) सी०पी०ए० प०506 में एन०पी० चन्दावरकर ने सी०पी०ए० प० 761 में एल०एम० घोष ने तथा अन्य वक्ताओं ने कांग्रेस मंच से वर्षों तक भारतीय जनता की निर्धनता का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया

44 प्रमाणस्वरूप, बंगाली किसान को उद्धृत करते हुए सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने उसके दुर्भाग्य की अत्यंत दयनीय स्थिति की उसके भूखे मरते बच्चों की, सूखकर कांटा बने उसके पशुओं की तथा सूखे बंजर पड़े उसके खेतों की दुखभरी कहानी का वर्णन करके बताया कि वस्तुतः उसकी दरिद्रता की गहराई का अथवा उसके दुर्भाग्य की अनंतता का वर्णन करने में भाषा असमर्थ है एस० एन० बनर्जी स्पीचेज 1886-1890 खंड III (कलकत्ता 1890) प० 13 1890 में उन्होंने अंग्रेजों का ध्यान करोड़ों भारतीयों को अपमानित करने वाली दुर्भाग्यपूर्ण और कुत्सित दरिद्रता की ओर खींचा। (वही प० 195) जस्टिस रानाडे ने 1890 में लिखा इस प्रकार की दरिद्रता के अस्तित्व के प्रदर्शन की कोई आवश्यकता नहीं। इस देश की दरिद्रता तो विलक्षण है।' हमें केवल अपने रास्ते पर चलना है और अपनी आर्थिक अवस्था के अत्यंत यथार्थ पक्षों का अध्ययन करना है। यह सत्य हमारे सामने उजागर है कि हमारे साधन सीमित हैं। एसेज प०182 उसी वर्ष जी०वी० जोशी ने लिखा 'बढ़ती हुई असमानता व दरिद्रता समाज के निम्न स्तर के लाखों-करोड़ों को पहले से ही चूसने और अपमानित करनेवाली दरिद्रता सारे देश में पहले से ही व्याप्त दुखों और दुर्भाग्य में और अधिक वृद्धि करने वाली दरिद्रता पूर्वोद्धृत प० 818 आर० एन० मधोलकर ने 1891 में कांग्रेस अधिवेशन में भारत की दरिद्रता प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा था, 'आज का भारत अत्यंत विषादपूर्ण तथा सर्वथा अप्राकृतिक चित्र प्रस्तुत करता है।

रिप०आई०एन०सी० 1891 पृ०19 आर०सी० दत्त ने 1901 म लिखा था आज के भारतीयो की दरिद्रता की तुलना किसी भी सभ्य देश के नागरिको से नही की जा सकती।' इ०एच० 1 प० 6 साथ ही देखिए उनकी 'इग्लड और इडिया' (लदन 1897) प०125-6 तथा 'इकोनामिक हिस्टरी आफ इडिया इन दी विक्टोरियन एज' (लन्दन छठा सस्करण प्रथम 1903 म प्रकाशित) (निर्देश के लिए इसे आगे ई० एच० II से सकेतित किया जाएगा), प०5 भारत म कृषि-श्रमिको की दरिद्रता के विस्तृत विवरण के लिए देखिए ई०एच०II प०606 1902 म सी०वाई० चितामणि ने लिखा, 'दुर्भिक्ष और महामारी भारत की सामान्य प्रवृत्तिया बन गई हैं और मेरे देश के लाखों निरपराध और शांतिप्रिय नागरिक भुखमरी तथा उसके प्रभाव से मृत्यु का ग्रास बन रहे हैं।एच०आर० जुलाई 1901 प०447 और देखिए मालवीय की स्पीचेज मद्रास तिथि रहित)

45 रिव्यू आफ इडियन साल्ट टक्स (भारत नमक कर की समीक्षा) जरनल आफ पूना सावजनिक सभा (निर्देश के लिए आगे 'जे०पी०एस०एस०' से सकेतित किया जाएगा) जुलाई 1881 (खड IV स०1) प० 60

46 ऐसे हवाले इतने अधिक हैं कि उन्हे यहा देना कठिन है' अमृत बाजार पत्रिका दि बगाली दि हिंदू मराठा और विभिन्न प्रान्तो के देसी प्रेस पर प्रतिवेदन तथा समीक्षाधीन अवधि के विभिन्न समाचारपत्र भारत की निर्धनता की टिप्पणियो स भरे पडे हैं।

47 उदाहरणाथ देखिए दि अमृतबाजार पत्रिका 13 अप्रल, 'इन दि रिपोट आफ नेटिव प्रेस फार बगाल (निर्देश के लिए इस आगे आर०एन०पी० बग से सकेतित किया जाएगा) 24 अप्रल 1880 मित्रविलास—8अक्टूबर 'इन दि रिपोट आन दि नेटिव प्रेस फार दि पजाब नाथ वस्ट प्राविसिज ऐंड अवध' (निर्देश के लिए इस आगे 'आर०एन०पी०पी०एन० स सकेतित किया जाएगा) 7 अक्तूबर 1880 सजीवनी —14 जून आर०पी०एन०बग० —21 जून 1884 निबधमाला, मइ इन दि रिपोट आन नेटिव प्रेस फार बबई (निर्देश के लिए इस आगे आर०एन०पी०बब से सकेतित किया जाएगा) 23 नवबर 1880 'नरग'— 2 माच 'आर० एन०पी०एन० —10 माच 1891 प्रपच मित्रन—10 नवबर 'इन दि रिपोट आन नेटिव प्रेस फार मद्रास (निर्देश के लिए इसे आगे आर०एन०पी०एम० से सकेतित किया जाएगा) 30 नवबर 1899 निबधमाला —जून आर० पी० एन० बम —31 दिसबर 1881 बन्दान सजीवनी' 30 दिसबर आर० पी० एन० बग 10 जनवरी 1881 हिन्दी प्रदीप नवबर आर० एन० पी० पी० एन० 11 नवबर 1880 हरिशचद्रिका स०8 (वही० 25 नवबर 1880 बगाली 23 जनवरी, 1891 तथा हिंदू' 25 अप्रल 1884

48 नवबर 1895 आर एन०पी०बग 9 नव० 1893

49 रामगोपाल द्वारा लिखित लोकमान्य तिलक ए बायोग्राफी मे उदधृत (बबई 1956) प० 186-8 बाद म सरकार ने तिलक को विद्रोह के अभियोग म दडित करने के लिए इन पद्यो का उपयोग किया था।

50 रिपाट आन दि नेटिव प्रेस फार दि पजाब' (निर्देश के लिए आगे आर०एन पी पी से सकेतित किया जाएगा) 4 फरवरी 1893

51 गोखले स्पीचज प०16 1873 के प्रारभ मे ही भोलानाथ चन्द्र घोषित कर चुके थे बहु सख्यक जनसमुदाय को खुशहाल बनाए बिना देश की भौतिक सपन्नता की बात एक भ्रम कल्पना तथा बकवास के अतिरिक्त और कुछ नही। पूर्वोद्धृत प० 66 1881 मे तिलक ने यह विचार

व्यक्त किया था जब तक देश के बहुसख्यक मेहनतकशो की स्थिति म सुधार नही होता तब तक आर्थिक दृष्टि से देश के सुधार की बात ही नहीं की जा सकती डी०वी० ताम्हणकर के 'लोकमान्य तिलक' से उन्धृत (लदन 1956), प० 319

52 गोखले स्पीचेज प० 934 (तथा जोशी पूर्वोद्धृत, प० 753) श्रमण नडी इडियन पालिटिक्स प०106 गोखले रिप०आइ०एन०सी 1895, पृ० 105 जी०सी० अय्यर इ०ए०, पृ०6, जोशी पूर्वोदधृत, पृ० 818 देखिए। यू०पी० काग्रेस के एक वरिष्ठ नेता ए० नदी ने 1898 म 'इडियन पालिटिक्स' म प्रकाशित अपने एक निबध पावर्टी आफ इडिया' म स्पष्ट विज्ञापित किया कि वस्तुत आज कृषक ही भारत हैं अर्थात भारत व्यवहारिक रूप स कृषको का ही देश है और यदि कृषको की स्थिति दयनीय है तो अवशिष्ट अन्य भौतिक प्रगति का कोई मूल्य ही नही' उन्होने एडम स्मिथ को उदधृत किया 'जिस समाज का अपेक्षाकृत विशाल समुदाय निधन और दुर्भाग्यग्रस्त है वह कभी समृद्ध और विकसित नही कहा जा सकता।' (प० 106) उन्होंने आगे कहा यह देखकर कसे सतोष किया जा सकता है कि ऋण दन वाले साहूकार निधनो के दुर्भाग्य से लाभ उठा रहे हैं अथवा निर्यात व्यापारी दश क जीवन रक्त को ही चूसकर उससे ऊचा मुनाफा कमा रहे हैं ? (पृ०105) उन्होने स्वीकार किया ब्रिटिश राज्य म मुट्ठी भर राजा और नवाब धनी जमीन्दार हैं। मुट्ठी भर महाजन और व्यापारी भी धनी हैं। कुछ एक व्यापारी और व्यवसायी भी खाते-पीते हैं। उन्होने सारा सोना चादी इकट्ठा कर रखा है। साथ ही उन्होंने यह भी स्पष्ट उल्लेख किया 'जनता का बहुत बडा वग घोर दरिद्रता म गात खा रहा है।' (प० 112) और दखिए एन०के०एन० अय्यर रिप०आई०एन०सी० 1901, प० 140-1

53 जोशी पूर्वोन्धत प० 658 दत्त ई०एच० II प० 605 6 जी०एस० अय्यर ई०ए० प० 191

54 दत्त इ एच० II पृ० 606

55 नौरोजी पावर्टी प० 188 उनके एसेज भी पृ० 98 स्पीचेज प० 591

56 नौरोजी एसज प०98 जोशी ने इस बात से इनकार किया कि भारतीय दरिद्रता का कारण धन का असमान वितरण है जैसा कि पश्चिम क कुछ देशो म है (प०75) उन्होने आगे बताया हमारी समस्या समाजवादी समस्या नही है जिसे समाजवादी तरीको स सुलझाया जा सके (पृ० 753) हमारी दरिद्रता की बुराई कुछ विशिष्ट वर्गों तक सीमित नही है हमारे यहा धन क वितरण म अधिक असमानता, एक वग व दूसर वग मे अतर मजदूरो की माग पूजी का दायित्व और सपत्ति का अधिकार' की समस्याए नही हैं जिनका सुलझाना आवश्यक है। (प० 819)

57 पी० के० गोपाल कृष्णन डवलपमेंट आफ इकोनामिक आइडियाज इन इंडिया 1880 1950 (नई दिल्ली 1959) पृ० 183 जोशी ने इस बात पर बल दिया कि निधनता की समस्या अनिवाय रूप स तथा निश्चित रूप से एक औद्योगिक समस्या है

58 जोशी (पूर्वोन्धृत, पृ० 819) 'हमारी स्थिति अपवाद रूप है। प्रतिद्वद्वी वर्गों के विरोध म खडे सारे समाज का प्रश्न है। हम न तो महारानी एलिजाबथ के पगु कानून की आवश्यकता है और न ही फ्रास की प्रातीय सरकार के चित्रालय म सजाने योग्य कानून की। हम तो सामूहिक प्रयत्न की एक विस्तृत तथा बुद्धिमत्तापूण योजना इसी सकेत से भारत मे ब्रिटिश प्रवक्ता एकाएक वगभदवादी बन गए और सारा दोष जमीदारो साहूकारो और वकीलो पर

डालकर एक वग को दूसरे वग क विरुद्ध करन क प्रयत्न म लग गए

59 द्वितीय अध्याय म इसका विस्तत विवरण प्रस्तुत किया जाएगा। और देखिए, रानाड एमेज प० 23 183 185 191 जाशी पूर्वोद्धत प० 738 760 803-4, दत्त ई०एच० प० VII कमरा 31 माच (आर०एन०पा० सख 4 अप्रल 1903) 'बढते हुए हाथा के लिए उत्तरोत्तर काम की कमी तथा मनुष्या क लिए खाद्यान्न की कमी' यह हमारी वतमान सामान्य औद्योगिक स्थिति की सक्षिप्त रूपरेखा है

(जोशी, पूर्वोद्धृत प०804)

60 दक्षिण भारत सरकार का प्रस्ताव परिपत्र स० 96 एफ/6-59 दिनाक 19 अक्तूबर 1888 (प मिन प्राग स० 19 दिसबर 1888)

61 वही कडिका 4

62 वही परिशिष्ट-ग मद्रास म यह पाया गया कि 6 रु० मासिक वतनभागी व्यक्ति चार परिवारको पूरा महीना तीन समय प्रतिदिन चावल बाजरा ताडी अथवा मछली क साथ समुद्र क किनारे के पास का भाजन तथा सप्ताह म एक दो-चार इस्तमाल किया माग खिला सकता है। बबई म खाद्य पदार्थों की अपर्याप्तता क अभियोग को पूरे तौर पर अस्वीकार कर दिया गया। प्रांतीय सरकार ने मराठा प्रस द्वारा क्षत्र विशष म निधनता की व्यापकता क अभियोग की चर्चा करते हुए इस बात से इनकार किया कि दक्षिण म कहा भी व्यापक रूप से बुरी दशा है। मध्य प्रात के मुख्य आयुक्त मि० मकजी इस निष्कष पर पहुच कि निस्सन्देह देश म निधनता है फिर भी अवस्था बुरी नही। लाग अच्छा खात-पीते हैं। नाथ-वेस्टर्न प्राविंसेज (उत्तर-पश्चिमी प्रांत) म एटा क कमिश्नर मि० बुर न विचार प्रकट किया खतिहर जनता हृष्टपुष्ट है और यह उनकी सपन्नता का प्रमाण है

63 भारत सरकार का प्रस्ताव दिनाक 27 नवबर 1893 (राजस्व तथा कृषि विभाग) (सामान्य) फाइल स० 95 क्रमाक 7) बगाल के प्रतिवेदन म दावा किया गया है निम्न वग क लोग सपन्नता क ऊच और प्रतिदिन उत्तरोत्तर बढते स्तर का आनन्द भोग रहे हैं

64 1891 2 तथा परवर्ती 9 वर्षों म भारत की स्थिति और नतिक भौतिक प्रगति का प्रदशक विवरण (ततीय दसवार्षिकी प्रतिवेदन) ज०ए० बस द्वारा तयार किया गया (लदन 1804) प०427

65 उदाहरण के लिए भारत सरकार के भूतपूव वित्त सदस्य सर जान स्ट्रची ने अपने 'इडिया (नया तथा अय सशोधित-परिवर्द्धित सस्करण लदन 1894) मे लिखा अब प्रत्येक किसान प्राचीन काल के ब्राह्मणो अथवा जमीदारो जसी वेशभूषा धारण करता है। उसकी पत्नी को प्राय अवकाश रहता है। उसके चादी के गहने चमकते रहते हैं। अपनी जीवन की आवश्यकताओ की तथा सामान्य विलास की पूर्ति क पश्चात भी उसके पास गहने खरीदने के लिए निरतर कुछ बचा रहता है। (पृ०303),और देखिए जान स्ट्रच रिचाड स्ट्रच की दि फाइनेंस ऐंड पब्लिक वक्स आफ इण्डिया 1869-1881 (लदन 1882), पृ० 8 जाज चेस्नी की इडियन पोलिटी' (लदन 1884) पृ० 314 340

66 सर डब्ल्यू० हटर भारत सरकार क साख्यिकी विभाग क महानिदेशक थ और सर चाल्स इलियट गवनर जनरल की कौंसिल के सावजनिक निर्माण सदस्य थ। य दोनो टिप्पणिया असख्य लेखो और पुस्तको मे दुहराई गई। उदाहरण क लिए देखिए नौरोजी स्पीचज' प० 587 मालवीय स्पीचज प० 227 जोशी पूर्वोद्धत प० 76 पी सी० राय दि पावर्टी प्राब्लम इन इडिया (कलकत्ता 1893) (निर्देश के लिए इसे आगे पावर्टी से सकेतित किया जाएगा) पृ० 149

नरी 'इन इंडियन पालिटिक्स', पृ० 115 मधोलकर वही पृ० 36 उस समय के राष्ट्रीय साहित्य में अधिकांशतया मिलने वाले अन्य अवतरणों में ये लाड लारेंस (1864) का यह अवतरण 'कुल मिलाकर भारत एक अति निधन देश है बहुसंख्यक जनता कठिनता से जीवन निर्वाह कर पाती है' सर ई० बरिंग (1881) का कथन 'करदाता समाज अत्यंत निधन है' सर ए० कालविन का कथन 'भारत की जनता का बड़ा वर्ग इस प्रकार के व्यक्तियों का है जिनकी आय जीवन रक्षा के लिए अनिवार्य आवश्यक सामग्री के खरीदने के लिए कठिनता से पर्याप्त है अत वे जीवन के लिए अनिवार्य उपयोगी वस्तुओं के अभाव म जीवन बिताने को विवश हैं' रडोल्फ चर्चिल तथा 1898 के अकाल आयोग के प्रतिवेदन को भी प्राय उद्धत किया जाता था अनेक लेखकों और बक्ताओं ने 1888 की डफरिन जांच के परिणामों तथा जिला अधिकारियों के प्रतिवेदन का उद्धत किया देखिए जोशी पूर्वोद्धत पृ० 763-6 बी०एन०धर रिप०आई०एन०सी०—1892 प० 102, ए०नदा रिप०आई०एन०सी०—1894 प० 55-6 मधोलकर 'इंडियन पालिटिक्स प० 36 एस०एन०बनर्जी सी०पा०ए० प० 686

7 देखिए नौरोजी 'पावर्टी, पृ० 188 तुलनीय वा०के०आर०वी० राव दि नेशनल इनकम आफ ब्रिटिश इंडिया 1931 32 (लदन 1940), प० 7 तथा पी०ए० वधवा और के० टी० मर्चेंट आवर इकोनामिकम प्राबलम (बबई, 1946) प० 522

8 डेनियल थानर लाग टम ट्रेंड्स इन आउटपुट इन इंडिया इन इकोनामिक ग्रोथ ब्राजील इंडिया जापान सीमन कुजनिटस तथा इतर द्वारा सपादित (डरहम एन०सी० 1955) पृ० 105

9 राव दि नेशनल इनकम आफ ब्रिटिश इंडिया 1931 2 पृ० 2

10 उनकी सगणना विधि को जानने के इच्छुक व्यक्ति देखें उनकी 'पावर्टी तथा अन ब्रिटिश रूल इन इंडिया' पृ० 4-25 और प० 147 73 सक्षेपत उन्होंने कुल वार्षिक कृषि उत्पादन म खानो कारखानों मछली उद्योग के अनुमानित उत्पादन तथा मामूली से विदेशी व्यापार के वार्षिक लाभ के साथ साथ बडी सख्या म होने वाले दवी उत्पातों को गिन जोडकर 1867 8 की कुल राष्ट्रीय आय की सगणना की यहा यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने सेवाओं से प्राप्त आय को स्पष्ट रूप से आय नही माना क्योंकि उनका तक था कि यह वास्तविक आय न होकर पूव सचित आय का उपयोग मात्र है (पृ० 180-5 तथा 220) दादाभाई के राष्ट्रीय आय सबधी विचार के औचित्य का समीक्षा के लिए देखिए आर०पी० मसानी दादाभाई नौरोजी दि ग्रैंड ओल्डमन आफ इण्डिया' (लदन 1939) प० 203-4 के०टी० शाह तथा के०जी०खबात वल्थ ऐंड टक्सेबल कपेसिटी आफ इंडिया (बबई 1924) प०7 वी०के०आर०वी० राव 'एन एसे आन इंडियन्ज नेशनल इनकम 1925 9 (लदन 1939) प० 19 22 वाडिया और मर्चेंट पूर्वोद्धत प० 520 3 सुरेंद्र जे० पटेल लाग टम चेंजेस इन आउटपुट ऐंड इनकम इन इंडिया' 1896 1960 इन इंडियन इकोनामिक जनरल' जनवरी 1958 (खड V, सख्या 3) पाल ए बरन दि पोलिटिक्स इकोनमी आफ ग्रोथ (भारतीय सस्करण नई दिल्ली 1957) प०36 7 दादाभाई के राष्ट्रीय आय सबधी दृष्टिकोण के सद्धांतिक गुण-दोषों की चर्चा किए बिना सक्षेप में यह कहा जा सकता है कि 'राष्ट्रीय आय को कुल वास्तविक उत्पादन स जोडना उनके दृष्टिकोण की उपयोगिता का एक प्रबल पक्ष था वस्तुत पिछडे देशो म छिपी व्यापक बकारी की सामाजिक क्षेत्र मे सेवा पक्ष के एक बहुत बड भाग की परोपजीविता की तथा समाज के गठन सबधी एव सस्थागत परिवतनो उदाहरणाथ पश्चिम के सपक म आने के समय से ही मद्रा निर्माण अथवा उपयोगी सामग्री के उत्पादन में वृद्धि आदि की सही जानकारी का तुलनात्मक

अथवा अन्य आर्थिक विश्लेषण के उद्देश्य का सच्चा आधार उपभोग सामग्री का वास्तविक उत्पादन ही बन सकता है

71 नौरोजी पावर्टी पृ० 4 अपने निष्कर्षों की परिसमाप्ति पर दादाभाई ने टिप्पणी करते हुए लिखा 'एक बात स्पष्ट है कि मैं उत्पादन के अवमूल्यन का दोषी नहीं हू' (पावर्टी पृ० 25) उन्होंने और अधिक स्पष्ट सूचनाओं का आग्रह करते हुए कहा किसी भारतीय द्वारा पूरी सूचनाए देने पर ही वर्ष प्रतिवर्ष भारत का वास्तविक भौतिक स्थिति की सही रूपरेखा प्रस्तुत की जा सकती है (वही, पृ० 147) सभी प्रकार की सीमाओं के होने पर भी उनका 20 रु० प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय का प्रव इस क्षेत्र के सभी परवर्ती अनुसधानों की कसौटी बना, यह उनके लिए एक बडे गौरव की बात है (मसानी पूर्वोद्धत पृ०204) शाह और खबाता पूर्वोद्धत पृ० 201 राव एन एसे आन इडियाज नशनल इनकम—1925-29 पृ० 16-22

72 डिगबी पूर्वोद्धत पृ० 364 442 3 इस तखमाने म कुल सामग्री के उत्पादन तथा सेवाओं को सम्मिलित किया गया था उल्लखनीय यह है कि भारत सरकार ने इन गणनाओं के मआधार भूत विस्तृत जाचों के प्रतिवेदनों को कभी प्रकाशित नहीं किया

73 किडिल्स्टन के लाड कर्जन स्पीचेज खड I IV (कलकत्ता 1900 1902 1904 1906) खण्ड I पृ० 289 90

74 डिगबी पूर्वोद्धत अध्याय XII

75 फ्रेड जे० अटकिंसन ए स्टेटिस्टिकल रिव्यू आफ दि इनकम ऐंड वल्थ आफ ब्रिटिश इण्डिया जनरल आफ दि रायल स्टेटिस्टिकल सोसाइटी खण्ड 65 भाग 2 (जून 1902) पृ 238

76 देखिए नौरोजी सा०पा०ए० पृ० 160 1 स्पीचेज पृ० 114 527, जोशी पूर्वोद्धत पृ० 758 मधोलकर इन इडियन पालिटिक्स पृ० 38 जी०सी० अय्यर दि वायसराय आन दि इको नामिक कडीशन आफ इडिया' एच०आर० मई 1901 पृ० 355 ई ग पृ० 37-8 गोखले स्पीचेज पृ० 17 दत्त ई एच II, पृ० 603 एस० एन० बनर्जी ने 1895 म पूना काग्रस मे सभापति पद से दिए गए अपने भाषण म सारे राष्ट्रीय दृष्टिकोण के निष्कर्ष को इन शब्दों म प्रस्तुत किया प्रति व्यक्ति आय बीस रुपये है अथवा सत्ताईस रुपये इसमे कोई बहुत बड़ा अतर नहीं पडता। सत्य यह है कि यह भारत की जनता की गर्हित दरिद्रता का एक विश्वसनीय प्रमाण है।' —(सी०पी०ए पृ० 257)

77

इंग्लड	41 पौंड	स्काटलड	32 पौंड	आयरलड	16 पौंड
यूनाइटिड किंगडम	35 2	फ्रास	25 7		
रूस	9 9	आस्ट्रिया	16 3	जर्मनी	18 7
स्पेन	13 8	पुर्तगाल	13 6	इटली	12
हालड	26	डेनमार्क	23 2	बलजियम	22 1
स्विटजरलड	16	यूरोप	18	स्वीडन तथा नार्वे	16 2
टर्की	4	आस्ट्रेलिया	43 4	यूनाइटिड स्टटस	27 2
कनाडा	26 9			इडिया	2

नौरोजी स्पीचेज पृ० 590 जोशी पूर्वोद्धत पृ 758 राय पावर्टी, पृ० 340 बनर्जी

सी०पी०ए०, पृ० 257 8 आर० एम० सायानी सी० पी० ए० पृ० 346

78 बनर्जी सी०पी०ए०, पृ० 257 8 नौरोजी इन ऐमिनेंट इंडियन्स प० 164 आर०एम० सायानी सी०पी०ए०, प० 347 नौरोजी स्पीचेज पृ० 310 क्रमश

79 नौरोजी इन ऐमिनेंट इंडियन्स पृ० 164 और देखिए उदाहरणार्थ बनर्जी स्पीचेज, खंड III पृ० 12, ए०बी०पी० 30 मार्च 1882

80 बहुत से आधुनिक अर्थशास्त्रियों की धारणा है 'बहुत सी सांख्यिकी कठिनाइयां तथा संबद्ध मूल्यों में सैद्धांतिकता जुड़ी होने के कारण राष्ट्रीय आय के अंक अंतर्राष्ट्रीय तुलना की दृष्टि से कोई विशेष महत्व नहीं रखते —(वाडिया तथा मर्चेंट पूर्वोद्धृत प० 523) परंतु यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की तुलना के लिए सामान्य व्यवहार को ही उपयुक्त सूत्र (विधि) के रूप में ग्रहण किया जा सकता है' देखिए कोलिन क्लार्क पूर्वोद्धृत 'कंडीशंस आफ इकोनामिक प्रोग्रेस प० 528 किसी भी ऐसे विषय में जहां आय का अंतर अधिक गहरा है यहां तक कि उसे दो अथवा अधिक अंक से गुणा करके मापा जा सकता है जैसा कि तुलना द्वारा भारतीय नेताओं ने पाया था, इस प्रकार के अंतर की सार्थकता त्वरित और अस्पष्ट' ही मानी जाएगी

81 नौरोजी पावर्टी, प० 25 31 जोशी पूर्वोद्धृत, प० 759-60 मधोलकर रिप०आई०एन०सी 1891 पृ० 20 जे०सी० अय्यर ई ए प० 28

82 नौरोजी पावर्टी, प० 30 और स्पीचेज, परिशिष्ट-डी प० 187

83 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 759-60 मधोलकर रिप०आई०एन०सी० 1891, पृ० 19 और इन इंडियन पालिटिक्स, प० 38

84 नौरोजी पावर्टी प० 31 समस्या के इस पक्ष पर डफरिन की जांच तथा 1888 के प्रस्ताव ने सुंदर प्रकाश डाला। नौलोर (मद्रास) के सिविल सर्जन ने रिपोर्ट की कि जेल में रहने के कुछ देर उपरांत कैदियों का वजन बढ़ गया है मद्रास के राजस्व मंडल का उत्तर था कि इसका कारण जेल में अत्यंत उदारतापूर्ण भोजन का संभरण और कठोर श्रम न कराना है इसके अतिरिक्त जल उसे घरेलू चिंताओं से मुक्ति प्रदान करती है। प्रांतीय प्रतिवेदना पर आधृत सरकारी टिप्पणी का संक्षेप इस प्रकार से है कैद की अवधि में वजन का बढ़ जाना एक महत्वपूर्ण प्रश्न है और यह स्थिति अन्य प्रांतों में भी पाई गई है देखिए भारत सरकार का 19 अक्तूबर 1888 का प्रस्ताव, पूर्वोद्धृत परिशिष्ट-ए

85 नौरोजी पावर्टी प० 31 सी०पी०ए० पृ० 260, स्पीचेज प० 528 580 परिशिष्ट प०186 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 62 3 बनर्जी सी०पी०ए०, प० 258 जी०सी० अय्यर ई ए प०28 दादाभाई ने आय के वितरण में क्षेत्रीय असमानताओं के अस्तित्व को भी स्वीकार किया देखिए, स्पीचेज परिशिष्ट, पृ० 186

86 दत्त ई एच II प०6 ए० बी० पी० 11 मार्च 1897 एन०एम० समर्थ रिप०आई०एन०सी० 1896 पृ० 158 9 सायानी सी०पी०ए० प० 366 एडवोकेट 2 फरवरी (आर०एन०पी० एन० 4 फरवरी 1905) क्रमश उदाहरणार्थ और भी देखिए मालवीय स्पीचेज प० 248 आई०एन०सी० 1966 का प्रस्ताव 12 आई०एन०सी० 1897 का प्रस्ताव 9 सी० संकरन नायर सी०पी०ए० प० 383 डी०ई०वाचा सी०पी०ए०, पृ 360 दत्त स्पीचेज II प० 35 केसरी 22 जून (आर०एन०पी बंबई, 26 जून 1897) दरिद्रता और अकाल के पारस्परिक संबंध की विस्तृत जांच नीचे की गई है

87 लार्ड एलगिन ने 'दरिद्रता और संपन्नता का अंतर सापेक्षिक शब्द घोषित करते हुए अपनी राय

इस प्रकार स्पष्ट की मैं यह नही मानता कि बहुसंख्यक जनता अपने को विपन्न समझती है यदि उनकी आय कम है तो उसका कारण उनकी सीमित आवश्यकताए हैं' स्पीचेज (कलकत्ता 1899) पृ० 491

88 भारत के भौतिक साधनो पर 1880-91 के प्रातीय प्रतिवेदन (शिमला, 1894) बगाल रिपोर्ट पृ० 9

89 वही नाथ वस्ट प्राता तथा अवध का प्रतिवेदन पृ० 19 और देखिए, स्ट्रचे इडिया 1894 पृ० 301 3 ब्रिटिश प्रशासको ने बार बार भारत के सबध म सपन्नता के इस भाग्यवादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया स्ट्रचे ने लिखा भारत मे जलवायु म जीवन का प्रतिदिन का आवश्यकताओ की पूर्ति आसानी से हो जाती है भारतवासी को मिट्टी से लिपी-पुती भोपडी उसके अपने विचारानुसार शुद्ध और विश्रामप्रद आश्रय है सामान्य स्थिति म उसके पास अपनी रुचि का आहार पर्याप्त मात्रा म रहता है। उसके पास अधिक वस्त्र नहा हैं परतु अधिक वस्त्रो की उसे आवश्यकता भी नहा यहा तक कि शीत ऋतु म भी उसे कोई विशष कष्ट नही होता (इडिया 1894 पृ० 301 3)

1888 की डफरिन जाच के लिए बहुत से मडला और प्राता के अधिकारियो ने इसी दृष्टिकोण पर आधारित अपने निष्कर्ष भेजे उदाहरणाथ, मालदा के कलक्टर ने लिखा सामान्य वर्षो म एक छोट से किसान के पास भी देश की जलवायु तथा उसकी अपनी प्रकृति के अनुरूप उसे हृष्टपुष्ट बनान वाला आहार आवश्यकता से अधिक मात्रा म रहता है' हुगली के कलक्टर का तो निश्चित मत था भारतीय अपने मान्य दृष्टिकोण और अपने अपेक्षित स्तर के अनुसार सपन्न तथा सतुष्ट है (दढतापूवक कहा गया) भारत सरकार का 19 अक्तूबर 1888 का प्रस्ताव पूर्वोद्धत परिशिष्ट ए

90 जनता का भौतिक स्थिति पर प्रातीय प्रतिवेदन 1880-91 बगाल प्रतिवेदन पृ० 9 तथा हुगली के कलक्टर न भारत सरकार के 19 अक्तूबर 1888 के प्रस्ताव को उद्धत किया पूर्वोद्धत परिशिष्ट-ए तुलनीय— भारत क आर्थिक प्रश्न पर विचार हुए यह विशष रूप से कभी नही भूलना चाहिए कि धन सचय अथवा उची आय की अपेक्षा मानसिक सुख तथा आत्मिक शाति की प्राप्ति हा भारतीयो का जीवन लक्ष्य है गवनर जनरल की कौसिल के स्वर्गीय सदस्य जे०डा० रीस न प्रकाशनाधीन रियल इडिया' म इसे ब्रिटिश राज्य की अनेक देनो म एक बहुत बडी देन बताया (लदन 1908) पृ० 319 20

91 दि थड डिमिनियल मारल ऐंड मटिरियल प्राग्रस रिपोर्ट पृ० 419 और देखिए प्रस्ताव पूर्वोद्धत पृ 318 थीडोर मौरीसन इकोनामिक ट्राजीशन इन इडिया पृ 159 60 मोरीसन का मत था अनुनयाय की तुलना से विचारो म उलझाव क अतिरिक्त कुछ भी परिणाम नही निकलता (पृ० 160)

92 इडिया (1894) पृ० 301 जिन अकाल आयुक्तो को वह उद्धत कर रहा था उन्होंने यह मजदार परन्तुक जोडी जो अनजाने तौर पर व्यग्यपूण है यद्यपि उसकी आय अपेक्षाकृत थोडी और बड जोखिमा स भरी हुई है इसी प्रकार 1894 म भारत सचिव एच०एच फौलर ने दढतापूवक कहा जलवायु की दृष्टि से ग्रामीण भारत की दरिद्र जनता का इग्लड की जनता की अपेक्षा आवश्यकताए कम हैं और भारत का निधन इग्लड के निधन की अपेक्षा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति अधिक आसानी से कर सकता है हसाड (चतुथ वग) 15 अगस्त 1894 खड 27 लगभग 1138 9

93 नौराजी की स्पीचेज से उदधृत, प० 583 और देखिए अतकिंसन के लख पर रीस की टिप्पणी, पूर्वोन्धृत, प 276

94 बल दिया गया भारत सरकार का 19 अक्तूबर 1888 का प्रस्ताव—पूर्वोद्धत परिशिष्ट-ए बहुत से अन्य सरकारी अधिकारिया ने अपने प्रतिवेदनो मे यही दष्टिकोण अपनाया

95 जी०सी० अय्यर ई ए प०20

96 दूसरी ओर आर०सी०दत्त ने लिखा जीवन भर की भूख बेचारे अधिक निधन लोगा को आवश्यकता कम करने का प्रशिक्षण देती है' ई एच I पृ०22

97 दादाभाई नौरोजी ने सकत किया 'बवई निवासी धनी हिंदुओ और मुसलमानो की रहन-सहन की स्थिति तो देखिए एसेज, प० 134

98 दादाभाई ने पूछा एक समय ब्रिटेन के लोग इस देश के जगला म घूमत थे और उनकी आव श्यकताए कुछ न था यदि वे उसी स्थिति मे रहत तो आज का ब्रिटेन कसा हाता ? (स्पीचेज, पृ० 311)

99 वही पृ० 311 2

100 जी०वी० जोशी ने इस अत्यन्त स्पष्ट करत हुए कहा 'सुख सुविधाआ का उच्च स्तर तो हमारे लिए एक प्रकार का अवरुद्ध न तिक बल है जा हमे सकट काल म अधिक श्रम करन और कष्ट सहन के लिए उत्साहित करता है तथा परिस्थितियो पर विजय पान के योग्य बनाता है देश पर पडने वाला बुरे से बुरा सकट यदि देश के जीवन स्तर को बुरी तरह प्रभावित नहा करता तो वह किसी भी रूप म भयकर अथवा शोचनीय नहा कहा जा सकता इसके विपरीत बल पूवक थापी गई शाति का वरदान यदि देशवासियो को अपने निम्न जीवन स्तर स समझौता करने के लिए विवश कर दता है तो उसे अभिशाप ही कहा जा सकता है (पूर्वोद्धत प०768)

101 गोपालकृष्णन पूर्वोद्धत प० 183 तथा काग्रस का 1892 का नवा प्रस्ताव

102 देखिए आई०एन०सी० 1882 का प्रस्ताव 9 तथा काग्रेस के इसी प्रकार के परवर्ती प्रस्ताव

103 भारत सरकार का 19 अक्तूबर 1888 का प्रस्ताव पूर्वोद्धत कडिका-4

104 वही परिशिष्ट ए अपन ही प्रस्ताव पर लाड डफरिन का मत था इस परिणाम स पर्याप्त सतुष्ट व्यक्ति या ता आशावादी है या कठोर प्रकृति का है लाड डफरिन स्पीचेज (कलकत्ता 1889) प० 241 वस्तुत प्रस्ताव के परिशिष्ट-ए म प्रकाशित बहुत स मडलाय तथा प्रातीय प्रतिवदनो मे भारत मे व्याप्त घोर दरिद्रता और दुर्भाग्य के अस्तित्व को प्रमाणित किया गया था सरकारी प्रस्ताव केवल यह सिद्ध करने म सफल हुआ कि भारत मे स्थाई अकाल नहीं है वस्तुत यह एक क्षुद्र सात्वना थी

105 1898 के अकाल आयोग का प्रतिवेदन (कलकत्ता 1898) कडिका 591 2.

106 कजन स्पीचेज खड III प० 149 इसी प्रकार भारत सचिव जाज हैमिल्टन इस तथ्य से सहमत थ कि भारत म धनी जनसख्या दरिद्र है —इडियन डिबेटस 3 फरवरी 1902 लगभग 108

107 लाड कजन ने इस रूप मे बडी विशदता से प्रश्न प्रस्तुत किया —स्पीचेज खड IV पृ० 36 1838 मे ही बगाली युवक सघ स सबधित बाबू रामगोपाल घोष ने इस प्रश्न की जाच पडताल करन की इच्छा व्यक्त की—'सपत्ति बढ रही है अथवा घट रही है ? क्या बहुसख्यक जनता की सुविधाआ म विस्तार हो रहा है अथवा सकोचन ? तथा इन सबके क्या कारण हैं ?' रामगोपाल सान्याल के 'ए जनरल बायोग्राफी आफ बगाल सलिब्रिटीज' म उद्धत (कलकत्ता

1889) प०175

108 और इस बात का उत्तर देना आवश्यक था सार्पादता का कोई तव प्रश्न को धूमिल नही कर सकता दोनो पक्ष सही नही हो सकते एक को तो गलत होना ही पड़ेगा—तुलनीय, डिगवा पूर्वोद्धत

109 हसाड (चतुथ वग) खड XCIX लग० 1209 इसी प्रकार 3 फरवरी 1902 का उसन पुन घोषणा का मैं एक से अधिक बार अपना मत व्यक्त कर चुका हू कि भारत म हमारे प्रशासन का मुख्य और एकमात्र उद्देश्य केवल हमारा यह विश्वास है कि हम दरिद्र भारतीय जनता का भौतिक दृष्टि से समृद्ध बना सकते हैं (इडियन डिबेटस 3 फरवरी 1902 लगभग 105)

110 गाखले स्पीचेज प० 19 और देखिए वही प० 934 नौरोजी पावर्टी प० 186 तथा स्पीचज परिशिष्ट डी प० 167 लालमोहन घोष स्पीचेज (कलकत्ता 1883) पृ० 87 सी०पी०ए०, प० 756 मालवाय स्पीचेज प० 219 238 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 738 752 3 मद्योत्तर इडियन पालिटिक्स प० 35 नटी पूर्वोद्धत प० 101 वाचा सी०पी०ए० पृ० 560

111 आइ०एन०सी० 1886 का प्रस्ताव II तथा वाचा रिप०आई०एन०सी० 1886 पृ०60 जी०सी० अय्यर 3 ए प० 6 दत्त स्पीचेज II प० 28 159

112 उदाहरण रूप म देखिए हिंदू 10 सित० 1884 29 अगस्त 1887 1 फरवरी 1888 मराठा 21 दिसबर 1884 11 नवबर 1900 नेटिव आपीनियन 13 अप्रल (आर०एन०पी० बबइ 19 अप्रल 1884) नव विभाकर 7 जनवरी (आर०एन०पी० बग 7 जून 1884) साधारणी 27 जुलाई (वही 27 अगस्त 1884) सजीवनी 18 जुलाई (वही, 25 जुलाई 1885) ज्ञान प्रकाश 19 माच (आर०एन०पी० बबई 21 माच 1885) 'वाइस आफ इडिया द्वारा आवत समाचारपत्र (निर्देश के लिए आगे वी०ओ०आई० से सकेतित किया जाएगा) अक्तूबर 1887 अबाला गजट 27 जून (आर०एन०पी०पी० 7 जुलाई 1888) पसा अखबार' 13 अप्रल (वही 18 अप्रल 1891) दोस्ते हिंद 12 जून (वही, 20 जून 1891) केसरी 22 जून (आर०एन० पा० बबइ 26 जून 1897) भारत जीवन 25 जुलाई (आर० एन० पा० एन०, 3 अगस्त 1898) ए० वा० पी० 17 जून 1898 12 अक्तूबर 1901, बगाली 9 माच 1902

113 नौरोजी स्पीचेज (1886) म उद्ध त ग्राट डफ पृ 583 पूर्वोद्ध त के अध्याय 1 मे जान स्ट्रे. और रिचाड स्ट्रेची उद्ध त 1888 के 'स्पीचेज म डफरिन उद्ध त पृ० 241, स्ट्रेची 'इडिया (1894)प० 303 जनरल सर जाज चसनी 'इडियन पालिटी (लदन 1894)पृ० 394 ऐलगन स्पीचज फौलर हसाड (चतुथ वग) 15 अगस्त 1894 खड XXVIII लग० 1139 1901 2 और 9 पूववर्ती वर्षों प० 360-1 1898 के अकाल आयोग का प्रतिवेदन कडिका 592 1901 2 और 9 पूववर्ती वर्षो की अवधि म भारत की स्थिति और उसकी नतिक तथा मौतिक प्रगति का विवरण प्रस्तुत करन वाला प्रतिवेदन (चतुथ दशाब्दिक प्रतिवेदन होने के कारण) फ्राम सी० ड्रेक द्वारा तयार किया गया (लदन 1903) 1901 2 का आर्थिक वक्तव्य (कडिका 136) 1902 3 का वक्तव्य (कडिका 90) 1902-4 (कडिका 117) 1902 म फ्रेड जे० अतर्विसन ने सगणना की कि 1875 95 म भारत की प्रति व्यक्ति आय 29 5 प्रतिशत कम गई है (पूर्वोक्त स्थल प० 238)

114 कजन स्पीचेज खड I पृ० 158 खड II पृ० 165 288 90 खड III पृ०148-9 तथा खड IV पृ० 36-7 211 2

115 वही खड II प० 290 इसी प्रकार जार्ज हैमिलटन ने दावा किया यद्यपि मद गति के कारण वह लगभग अगोचर सी हो गई है तथापि भौतिक अप्रगति म निरतरता बनी रही है—हसाड

(चतुथ वग) 16 अगस्त 1901, खड XCIX लग० 1208 9 तथा इडियन डिबेटस 3 फरवरी 1902 लगभग 108 110

116 वही खड III, पृ० 389

117 वही खड IV प० 212

118 गत 19वी शती के अंतिम पच्चीस वर्षो की अवधि मे भारत को निधन बनाने वाले दुर्भिक्ष अपने विस्तार और तीव्रता म प्राचीन अथवा आधुनिक काल के इतिहास म अभूतपूव उदाहरण हैं (दत्त, इ एच I प० VI)

119 1902 मे कांग्रेस सभापति के पद पर आसान सुरद्रनाथ बनर्जी ने प्रश्न प्रस्तुत किया क्या अपनी बढ़ती हुई तीव्रता तथा बहुलता के साथ जनता की भौतिक अधोगति का मौन किंतु निर्णीत प्रमाण प्रस्तुत करने वाले इन दुर्भिक्षो की साथकता को नकारना सभव है ? (सी० पी० ए० प० 68) और देखिए जी० सी० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1900, प० 29 दत्त स्पीचज II, प० 28 तथा नीचे देखिए

120 इस दृष्टिकोण की विस्तृत जाच नीचे की गई है।

121 जाशी पूर्वोद्धत, प० 420 पी०पी० पिल्ले रिप०आई०एन०सी० 1892, प० 98, मधोलकर इडियन पालिटिक्स, प० 39 नदी वही, प० 166 7 जी०एस० अय्यर भारत के खर्चों के प्रशासन पर रायल कमीशन का प्रतिवेदन (निर्देश के लिए इसे आगे वेलबी कमीशन से सकेतित किया जाएगा) मिनिटस आफ इविडेंस (साक्ष्य के सन्निप्ताश) खड III पालियामटरी पेपस (हाउस आफ कामस) 1900 खड 29 लगभग 130 प्रश्न 19615 6 तथा ई ए प० 13 वाचा सा०पी०ए०, प० 360 दत्त ओपन लेटस टू लाड कजन (लाड कजन क नाम खुली चिटिठया) कलकत्ता 1904 (निर्देश के लिए इसे आगे ओपन लटस से सकेतित किया जाएगा) प० 17 बेनर्जी, सी०पी०ए० प० 689 गोखले स्पीचेज प० 53 1904 की आई०एन०सी० का प्रस्ताव और प्रस्ताव पर भाषण की रिप०आई०एन०सी 1904 प० 128 तथा नीचे अध्याय X

122 ऋणग्रस्तता आवश्यक रूप से न निधनता है और न ही दुदशा सामान्य ऋणकर्ता की स्थिति की तुलना उस व्यक्ति स की जा सकती है जो बक मे अपना चालू खाता रखता है और कभी-कभार अधिविक्रय करता (जमा पूजी से अधिक निकालता) है दि थड डिस्सनियन मारल ऐंड मटिरियल प्राग्रेस रिपोट पृ०435 एव अन्य सरकारी प्रकाशन इससे भी आगे बढ़ गया 'ऋण तो आवश्यकताओ की अपेक्षा समाधनो की अधिकता पर अधिकार का सूचक है।' प्राविंशल रिपोट आन दि मटीरियल कडीशन आफ दि पीपुल 1881 91 प०8 आफ दि बगाल रिपोट तथा प्रेजिडेंसी डिवीजन और पटना के कमिश्नरों तथा एन०डब्ल्यू०पी० ऐंड ओ० म एटा के कलक्टर सेंट्रल प्राविंसेज म दमोह तथा भडारा के कमिश्नरो के प्रतिवेदन तथा भारत सरकार के 19 अक्तूबर के प्रस्ताव का स्वय सरकार द्वारा सक्षेप पूर्वोद्धत परिशिष्ट ए

123 ऊपर देखिए अध्याय X

124 जाशी पूर्वोद्धत प०227 769 70 गाखले स्पीचज पृ० 18 52.

125 भूतपूव सनिक सदस्य जनरल जाज चिमनी ने 1894 मे लिखा 'सपत्ति हमारे शासन की ही सृष्टि है हमने भारत को गरीबी म जकडा हुआ पाया क्योंकि यह पहले से रहता आया है यदि हम इस देश म न आते तो यह आज भी उसी प्रकार विपन्न होता (पूर्वोद्धत प० 397) लाड कजन ने 1904 म टिप्पणी की कि यदि आप आज के भारत की सिकदर अशोक अकबर अथवा

औरगजेब के भारत से तुलना करें तो पाएगे कि पूर्वकाल मे अनुभूत पराश्रितता की अपेक्षा आज भौतिक समृद्धि का स्तर काफी ऊचा है (स्पीचेज खड IV, पृ० 37)

126 रानाडे एसेज पृ० 182

127 राष्ट्रीय काग्रेस के बगाल के विषयो म सक्रिय भाग लेन वाले एक भारतीय युवा लेखक ने तो यहा तक स्वीकार किया कि भारतीय इतिहास की वमव और सपन्नता की सभी विभिन्न अवस्थाओ और युगो मे भारतीय कृषक जनता कुचली और विपन्न रही है (राय पावर्टी पृ० 199) परतु उन्होने साथ म यह अवश्य जोडा ब्रिटिश राज्य म ता दुर्भाग्य और अधिक विषम हो गया है' वही पृ० 224 इसके साथ देखिए मधोलकर रिप०आई०एन०सी०—1891 पृ० 21

128 आनद बाजार पत्रिका 13 अप्रल (आर०एन०पी०बग 24 अप्रल 1880)

129 नौरोजी पावर्टी पृ० 579 कलकत्ता रिव्यू म एक भारतीय लेखक कैलाशचद्र काजालाल ने लिखा ब्रिटिश राज्य ने एक ऐसी दुर्भाग्य की स्थिति उत्पन्न कर दी है जो इससे पूर्व किसी भी हिंदू अथवा मुगल शासक अथवा टीपू साहब अथवा पेशवा के राज्य म कभी नही रही (कलकत्ता रिव्यू अक्तूबर 1901, पृ०309 10)

130 उदाहरणार्थ देखिए सजीवनी 14 जून (आर०एन०पी० बग 22 जून 1884) ग्राम वार्ता प्रकाशिका 9 अगस्त (वही 16 अगस्त 1884) एस०एन० बनर्जी रिप०आई०एन०सी०—1896, पृ० 135 6 केसरी 22 जून (आर०एन०पी० बबई 26 जून 1897) तथा 14 जनवरी (वही 18 जनवरी 1902) एन०के०एन० अय्यर रिप०आई०एन०सी०—1901 पृ० 140-1 सी०वाई० चितामणि दि इकोनामिक्स आसपेक्टस आफ ब्रिटिश रूल इन इडिया एच०आर०दिस० 1901, पृ० 485 6 बगाली 22 अक्तू० 1903 साथ ही देखिए नौरोजी स्पीचेज प 389 प्रउ न और भागवत म उद्धत तिलक पूर्वोद्धत पृ० 72 राय पावर्टी पृ 75

131 अमृत बाजार पत्रिका ने 22 मई 1884 मे लिखा एक समय भारत विश्व म समृद्धतम देश था' वर्षों तक एक के बाद एक दूसरे काग्रेसी प्रतिनिधियो ने भारत की विगत सपन्नता का गौरवगान किया 1899 1904 तक के आई०एन०सी० के प्रतिवेदन देखिए दादाभाई नौरोजी ने अपनी पुस्तक पावर्टी एड अन ब्रिटिश रूल इन इडिया मे 1853 म लिख एक निबध दि स्टट ऐंड दि गवनमेट आफ इडिया अडर दि नेटिव रूलस को 1901 मे पुन प्रकाशित किया इसम उन्होने अनेक ब्रिटिश लेखको को उद्धत करते हुए यह दिखाने की चेष्टा की कि सिकदर के आक्रमण का तिथि और उससे शताब्दियो पूव से लेकर मुगल शासनकाल तक भारतीय सपन्नता के उच्च स्तर पर थे (पृ० 584) इसी निबध को वास्तव मे 1903 मे जी०सी अय्यर ने अपन सम इकानामिक आसपेक्टस आफ ब्रिटिश रूल इन इडिया मे पुन प्रकाशित किया और देखिए न्यू इडियन पालिटिक्स पृ० 103 105 110 रानाडे दि राइज आफ मराठा पावर इन इन्डिया (बबई 1900) वास्तव मे इसी बात के उल्लेख के लिए लिखा गया था और देखिए आर० एन० सायानी ऐवस्ट्रक्ट आफ दि प्रोसीडिंग्स आफ दि इपीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल' (निर्देश के लिए इसे आगे एल०सी०पी० से सकेतित किया जाएगा) 1897 खड XXXVI पृ०190 पी०ए चारलू वही पृ० 232

132 न्यू इडियन पालिटिक्स पृ० 110

133 नौरोजी की स्पीचेज में उद्धृत ग्राट डफ पृ० 610 फौलर हसाड (चतुर्थ खड) 15 अगस्त 1894 खड XXVIII 1139-40 जे० पीले वेलबी आयोग खड III प्रश्न 18235

बढ़ातरी को भी भारतीय निधनता के एक कारण के रूप म उद्धृत किया गया नीचे देखिए

143 नीचे IX अध्याय देखिए

144 नीच XI अध्याय म सीमा शुल्क प्रकरण देखिए इसके साथ ही देखिए गोखले स्पीचेज, पृ० 17 मालवीय स्पीचेज पृ० 380-1

145 गोखले स्पीचज, पृ० 17

146 वही तथा 1904 की रिप० आई० एन० सी०, प० 166-7 मालवीय स्पीचेज, प० 381 इसके अतिरिक्त इस बात का स्पष्ट निर्देश किया गया कि इस कर से बहुत कम वसूली भारत की निम्नतम दरिद्रता को प्रमाणित करती है नदी इडियन पालिटिक्स', पृ० 119

147 गोखले स्पीचज प० 17 तथा 1904 की रिप० आई० एन० सी०, प० 166-7

148 गोखले स्पीचज प० 18 जोशी पूर्वोद्धृत प० 200, 227 डी० ई० वाचा ने कांग्रेस के अध्यक्षीय भाषण मे निम्नलिखित आंकडे प्रस्तुत किए 1886-7 म प्रति व्यक्ति खपत 13 9 पौं थी और 1899 1900 म 12 7 पौंड थी—सी०पी०ए० प० 603 बनर्जी सी०पी०ए०, पृ० 680

149 फोय सिसिनियल मारल ऐंड मटिरियल प्रोग्रस रिपोर्ट पृ० 332 कर्जन स्पीचज, खड II, प० 290 1 अतकिंसन पूर्वोद्धृत प० 215 20 269 1901 म कर्जन ने सगणना द्वारा सिद्ध किया कि कृषि भूमि का क्षेत्र 1880 म 1940 एकड के स्थान पर 1898 म बढ़कर 2170 एकड हो गया है अथवा दूसरे शब्दों मे कृषि भूमि का विस्तार सर्वथा जनसंख्या म वद्धि के अनुरूप हुआ है उसने यह भी सिद्ध किया कि 1880 म 730 पौंड प्रति एकड उपज के मुकाबले 1898 म 840 पौंड उपज बढ़ जाने से प्रति व्यक्ति के लिए खाद्यान्न प्रचुर परिमाण म उपलब्ध है स्पीचेज खड II प० 290 1 अतकिंसन के अनुसार जो खाद्य उत्पादन 1875 म 1 701 पौंड प्रति दिन था वह 1895 म बढ़कर 1 739 हो गया

150 जोशी पूर्वोद्धत प० 227 334 335 839 नदी इडियन पालिटिक्स प० 109 सायानी सी०पी०ए० प० 363 वाचा सी०पी०ए० पृ० 395 सायानी 15 फरवरी (आर० एन० पी० बग) 27 फरवरी 1890 गोखले स्पीचज प० 33 जोशी ने 1890 मे कहा 1871 2—1888-9 की अवधि म बबई, मद्रास, नार्थवेस्ट प्राविंस तथा अवध और सेंट्रल प्राविंसेज तथा पजाब म कृषि भूमि के क्षेत्र म 45 लाख एकड की वृद्धि हुई है जबकि इसी अवधि म इन प्रांतो म जनसंख्या 110 लाख बढी है (यदि सर डब्ल्यू० हटर का एक एकड का तीसरा-चौथा भाग खाद्यान्न प्रति व्यक्ति का तखमीना स्वीकार कर लिया जाए) तो 45 लाख एकड कृषि भूमि की कमी माननी पडगी प० 839

151 सायानी सी० पी० ए० प० 363-4 जोशी पूर्वोद्धत प० 900

152 जोशी पूर्वोद्धत प० 839 सायानी सी० पी० ए० प० 363

153 जोशी पूर्वोद्धत प० 841 3 नदी इडियन पालिटिक्स' प० 109

154 जोशी पूर्वोद्धत प० 832, 835 841 844 852 नदी इडियन पालिटिक्स प० 109

155 जोशी पूर्वोद्धत प० 227, 333 338 753 गोखले स्पीचेज प० 19

156 जोशी पूर्वोद्धत प० 836 गोखले स्पीचज पृ० 18 32

157 थड डिसिनियल मारल ऐंड मटिरियल प्रोग्रेस रिपोर्ट पृ० 428 रिपोर्ट आफ इडियन फाइनेंस कमीशन 1898 कडिका 590 आर्थिक विवरण 1904 5 कडिका 67

158 नौरोजी पावर्टी प० 66 72 79 जोशी पूर्वोद्धत प० 663 898 जी सी० अय्यर 'रलवेज इन इडिया इन इडियन पालिटिक्स'—पृ० 191 वलबी कमीशन खड III प्रश्न

22 मार्च 1902 1807 म बहुत सारे भारतीय राष्ट्रवादी समाचारपत्रो ने ऐसी मांग का समथन किया था देखिए *मराठा 28 फरवरी 1897* एडवोकेट 23 फरवरी इंडियन मिरर, 28 फरवरी विहार हैराल्ड 27 फरवरी, इंडियन स्पक्टेटर तथा वाइस आफ इडिया (निर्देश के लिए इस आग आई० एस० वी० ओ० आई० से सवेतित किया जाएगा) 28 मार्च 1897

169 आई० एन० सी० *1903* प्रस्ताव *III* एस० एन० बनर्जी प० 630-1 गोखले स्पीचज पृ० 20 और देखिए, वाचा सी० पी० ए० पृ० 589 595

170 अनेक सरकारी तथा अधसरकारी अधिकृत घोषणाओ मे यह दृष्टिकोण स्वीकार *किया गया था* देखिए ऊपर 1898 के अकाल आयोग ने एक प्राय उद्धत म टिप्पणी मे कहा ऋतु सकट तथा *घटिया फसल के कारण इस देश के समाज का अपेक्षाकृत* निम्न वग सुखसुविधाओ के *निम्न स्तर तथा अभाव का जीवन सदा से जीता आया है* और आज भी उसी रूप म जी रहा है यह निम्न वग अपनी विशालता मे मजदूरो तथा अपकुशल कारीगरो को बहुत बडी सख्या में समेटे हुए है इस कठिन प्रश्न पर साक्ष्यो को सुनने तथा प्रस्तुत आकडो को देखने क उपरात हम यह धारणा बना पाए हैं कि इन मजदूरो की आय पिछले बीस वर्षों में जीवन की आवश्यकताओ मे मूल्यवद्धि के उचित अनुपात मे बढी नही है वतमान दुर्भिक्ष का अनुभव यह सिद्ध नही कर पाया कि समाज के इस वग क पास साधनो की प्रचुरता अथवा सहनशक्ति की अधिकता है यह वग कम होने के बदले और अधिक विशेषत अधिक घनी आबादी वाले जिलो म धीरे धीरे फलता जा रहा है उसकी पराभूतता अथवा परास्त होने की भावना क्षीण होने के बदले और प्रबल ही होती जा रही है (भारतीय अकाल आयोग 1898 का प्रतिवेदन कडिका 592) एक अमरीकी विद्वान जाज ब्लेन का नवीन अध्ययन दि ऐग्रीकलचरल ग्रोथ आफ इंडिया 1893 4 ट 1945-6 ए स्टटिसटिकल स्टडी आफ आउटपुटस ऐंड ट्रडस' (अप्रकाशित, पाडलिपि) पेंसलवानिया विश्वविद्यालय क दक्षिण एशिया क्षत्रीय अध्ययन विभाग न अनुमान लगाया है अध्ययन काल की अवधि म प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति खाद्य उत्पादनो म निरतर ह्रास हो रहा था 1893 94 वर्षों म उत्पादन 587 पौंड था 1936-37 से 1945 6 तक यह गिरकर 399 पौंड हो गया —थनर म उद्धत पूर्वोद्धत प० 123 एक अन्य समकालीन लेखक न सगणना की है कि सभी साधनो से होने वाली भारत की प्रति व्यक्ति आय 1896 से 1945 म आठ प्रतिशत गिर गई था —मुरद्र ज० पटल लाग टम चेंजज इन आउटपुट ऐंड इनकम इन इंडिया 1896-1960 इंडियन इकोनोमिक जरनल जनवरी 1958 खड V स 3

171 वाचा सी पी० ए०, पृ० 598

172 एन० पा० चदावरकर सी० पी० ए० प० 512 दादाभाई नौरोजी न 1898 को इंडियन करसी कमेटी को भेजे गए अपने एक बयान मे वकालत करते हुए कहा मान लीजिए, इस देश का भूतकाल खराब था रक्तरजित और अपमानजनक था आप भविष्य को तो उत्तम सपन्न और गौरवपूर्ण बताकर दिखाइए (पावर्टी प० 548) जस्टिस रानाडे का तो सदा स यह विश्वास था कि विदेशी शासन मे उन्नति अथवा अवनति के प्रश्न को तुलनात्मक रूप लेना पुरातत्व विषयक इतिहास के प्रश्न के समान है हम सबके लिए व्यावहारिक प्रश्न तो देश की सामान्य रूप से सापेक्षिक नही पूर्ण दरिद्रता और वतमान विवशता पर ध्यान केंद्रित करना है उन्होंने यह स्वीकार किया कि 'कुछ सीमा तक तो स्थिति का ऐतिहासिक विश्लेषण शिक्षाप्रद ही है'— (एसेज पृ० 182)

173 जोशी पूर्वोद्धत प० 770 मालवीय स्पीचेज प० 262 3 दत्त इंग्लड ऐंड इंडिया—

प० 126 आई० एन० सी० 1900 प्रस्ताव II तथा परवर्ती काग्रेस का प्रस्ताव वाचा सी० पी० ए०, पृ० 539, दत्त ई० एच० I, पृ० VI

174 कर्जन स्पीचेज खड III, पृ० 180 तथा यही खड II प० 194 289 भारत सरकार के 19 अक्तूबर 1888 म बगाल सरकार का सक्षेप पूर्वोद्धत, परिशिष्ट ग चिसनी पूर्वोद्धत, प० 395

175 डफरिन पूर्वोद्धत, प० 240 1

176 लसडोन स्पीचज (कलकत्ता) खड II पृ० 376 तथा यह डिनिसियल मारल ऐंड मटिरियल प्राग्रेस रिपोर्ट, पृ० 432 3 और जाज हैमिल्टन हुसाड (चतुथ वग) 26 जुलाई 1900 खड XLV लगभग 539, भारतीयो ने इस असगति के बडे मज से चटखारे लिए एक ने तो तत्काल व्यग्य करते हुए कहा कि सचमुच ही जनसख्या की वद्धि एक साथ दो प्रयोजन सिद्ध करती है एक समय वह देश की भौतिक प्रगति का सूचक है तो दूसरे समय देश की बढती दरिद्रता का कारण है (नदी इडियन पालिटिक्स', प० 107)

177 नौरोजी पावर्टी पृ० 266 7 स्पीचेज प० 620 जोशी पूर्वोद्धत प० 773 जी० एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी०—1900 प० 29 एन० जी० चदावरकर सी० पी० ए० प० 514 एस० एन० बनर्जी सी०पी०ए० प० 684 पिरराजू रिप०आई०एन० सी०—1902 प० 75 दत्त 'इग्लड ऐंड इडिया, प० 132 स्पीचेज I प० 26 ई० एच० आई० प० VI साधारणी, 27 जुलाई (आर० एन० पी० बग, 2 अगस्त 1884) हिंदू 6 जुलाइ 1898 मद्रास स्टडड 5 अगस्त स्वदेश मित्रन 5 अगस्त (आर० एन० पी० मद्र 10 अगस्त 1901)

178 जोशी पूर्वोद्धत, प० 773 तथा दत्त सी० पी० ए०, पृ० 477 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 684

179 नौरोजी स्पीचेज, पृ० 325 6 621 ए० बी० पी० 5 अगस्त 1886 राय पावर्टी प० 168 9

180 नौरोजी पावर्टी प० 620 1 स्पीचेज पृ० 324 जोशी पूर्वोद्धत प० 772 राय पावर्टी, प० 197 दत्त इग्लड ऐंड इडिया प० 132 ओपन लटस (खुली चिट्ठिया) प 17 एन पी० चन्दावरकर सी० पी० ए० प० 514 5 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 684 जी० एस० अय्यर वेलबी कमीशन खड III प्र० 18648 9 रिप० आई० एन० सी० 1900 प० 29 हिंदू 6 जुलाई 1898 सजीवनी 15 फरवरी (आर० एन० पी० बग 22 फरवरी 1900) केसरी 31 मार्च (आर० एन० पी० बवई 4 अप्रल 1903) एन० श्रीनिवासाचारियर रिप० आई० एन० सी० 1903 प० 66

181 पूना के सावजनिक सभा क जनवरी तथा अक्तूबर 1890 के अको मे प्रकाशित तथा उनके भाषणो और लेखो मे पुन तथाकथित

182 जोशी पूर्वोद्धत प० 773 5 (बल दिया गया)

183 वही प० 774 5 कुछ वष पूव अमत बाजार पत्रिका ने 5 अगस्त 1886 को यही दष्टिकोण थोडे अस्पष्ट एव असबद्ध रूप म इन शब्दों मे प्रस्तुत किया था यह सिद्ध हो चुका है कि किसी भी उन्नत सभ्य राज्य मे किन्ही निश्चित विस्तत सीमाओ के अतगत कृषि अथवा अन्य कार्यों मे लग लोगो की थोडी सख्या की अपेक्षा बडी सख्या को ही सामूहिक रूप से अधिक साधन जुटाए जा सकते हैं तथा देखिए नौरोजी स्पीचेज प० 391—ब्रिटिश राज्य भारत पर अपना नियंत्रण छोडकर देख ले कि जनसख्या की वद्धि उसके द्वारा कल्पित अकाल और दरिद्रता का कारण है अथवा इसके सर्वथा विपरीत शक्ति और उत्पादन मे वृद्धि का आधारभूत कारण है ? देखिए जी० एस० अय्यर वेलबी कमीशन, खड III प्रश्न 18733-6

184 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 852, तथा रानाडे एसेज, पृ० 207, वाचा सी० पी० ए०, पृ० 600

185 देखिए अध्याय II

186 नौरोजी पावर्टी प० 217

187 पी० सी० राय 'इडियन फमिस (भारतीय अकाल) (कलकत्ता 1901) पृ० 35 और नौराजी पावर्टी प० 217 क्रमश

188 डफरिन स्पीचेज प० 240 खड डिनिमिअल मारल ऐंड मैटिरियल प्रोग्रस रिपोट प० 434 पाय डिनिसिअल मारल ऐंड मटिरियल प्रोग्रस रिपाट, पृ० 354 कजन स्पीचेज खण्ड III, प० 149 भारत सरकार का प्रस्ताव स० 1 दिनाक 16 जनवरी 1902 (कलकत्ता 1902) कडिका 31

189 भारत सरकार का प्रस्ताव दिनाक 19 अक्तूबर 1888 पूर्वोद्धत, परिशिष्ट ए

190 कजन स्पीचेज प० 166 खड II भारत सरकार का प्रस्ताव दिनाक 16 जनवरी 1903, पूर्वोद्धत कडिका 31

191 भारत सरकार का प्रस्ताव, दिनाक 19 अक्तूबर 1888 पूर्वोद्धत परिशिष्ट-ए

192 दत्त ई० एच० *I* प० *VI* तथा रानाडे *लैंड ला रिफाम ऐंड एग्रीकल्चरल वक्स* (भूमि कानून मे सुधार तथा कृषि वक) जे० पी० एस० एस० अक्तूबर 1881 (खड IV स० 2), प० 55 (जी० ए० मानेकर के साक्ष्य के आधार पर यह लेख रानाडे का ही लिखा हुआ है देखिए उनकी पुस्तक 'ए स्केच आफ दि लाइफ ऐंड वक्स आफ दि लेट मिस्टर जस्टिस एम० जी० रानाडे दो खड बबई 1902 खड I पृ० 215) जोशी पूर्वोद्धत पृ० 778 राय पावर्टी पृ० 194 5 पी० मेहता स्पीचज प० 663-4 एन० जी० चदावरकर सी० पी० ए० प० 516 दत्त सी०पी०ए० प० 478 480 ओपन लैटस प० 17 ई० एच० II प० XIII एन० के० एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी०—1901 प० 140 श्रीराम एल० सी० पी० *190 खड XLI प० 146 7 एम० एन० बनर्जी* सी० पी० ए० प० *684 5 ज० बजामिन* रिप० आइ० एन० सी०—1904 प० 128

193 सामान्य किसान के विषय मे भी सत्य यह है कि जीवन भर सूर्योदय से सूर्यास्त तक अनवरत और अथक श्रम करने के उपरात भी वह बेचारा जावन मे समारोह के अवसर पर घर गृहस्थी मे आनन्द मनाने के लिए मिट्टी के कुछ नए बरतनों थाडे बहुत जगली फूलो गाव की टमटम पेट भर खाना, घटिया पान-सुपारी तथा तबाकू के पत्तो और कही कही कभी कभी घटिया किस्म के गहनो को जुटाने म ही टूटकर रह जाता है (पी० महता स्पीचेज पृ० 663) वस्तुत भारतीय किसान के लिए कोई भी दिन उत्सव-समारोह का नहा वह तो सारा वष सूर्योदय से सूयास्त तक कठोर श्रम करता है उसे वष मे एक दिन का भी अवकाश नहीं मिलता (ए० बी० पी० 2 अगस्त *1901*)

194 नौराजी स्पीचेज पृ० 619 स्वदेश मित्र 3 अप्रल (आर० एन० पी० एम० 30 अप्रल 1897) नटी इडियन पालिटिक्स प० 117 पी० मेहता स्पीचज पृ० 663 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 14 एन०पी० चन्दावरकर सी०पी० ए० पृ० 516 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 684-5

195 नौरोजी स्पीचेज पृ० 312 तथा वही प० 619 पी० महता स्पीचज, पृ० 664 एन० पी० चन्दावरकर सी० पी ए० पृ० 516

196 *पूर्वोद्धत प० 775* और वाचा रिप० आई० एन० सी० 1886 प० 61

एन० पी० चदावरकर सी० पी० ए०, पृ० 514 दत्त 'ओपन लैटर्स, पृ० 18 राय फर्मिस
प० 24 एन० के० रामास्वामी अय्यर रिप० आई० एन० सी०—1901, पृ० 134 केसरी 25
दिसबर आर० एन० पी० बबई 29 दिस० 1900)
208 जोशी पूर्वोदधत पृ० 346 869 हिंदू—2 अप्रल 1900 रामास्वामी अय्यर रिप० आई० एन०
सी० 1900 प० 134 दत्त ओपन लटस प० 18
209 ए०बी०पी० 1 माच 1897 मधोलकर पूर्वोद्धत, प० 33 आई० एन० सी० 1896 का प्रस्ताव
XII आई० एन० सी० 1900 का प्रस्ताव II आई० एन० सी०—1892 का प्रस्ताव III
दत्त ई० एच० I प० VII राय फर्मिस, पृ० 29 30
210 दत्त ई० एच० I प० VII केसरी 10 अप्रल(आर० एन० पी० बबई 14 अप्रल 1900)मद्रास
स्टडड 5 अगस्त स्वदेशमित्रन 5 अगस्त (आर० एन० पी० एम० 10 अगस्त 1901) वाचा
सी० पी० ए० प० 537 तुलनीय—भारत सरकार कम से कम इस तथ्य से तो सतुष्ट हो सकती
है कि भारत मे खाद्यान्न सभरण की लगभग कोई कठिनता नहा। यहा तक कि सूखो के दिनों मे
भी इस महाद्वीप म पर्याप्त खाद्य उपलब्ध है —भारत सचिव जाज हैमिल्टन का 26 जुलाई 1900
को हाउस आफ कामस म कथन ईसाई (चतुथ वग) खड LXXXVI लगभग 1346
211 राय फर्मिस प० 78 और देखिए एन० जी० चदावरकर सी० पी० ए० पृ० 514 श्रीराम
एल० सी० पी० 1901 खड XL प० 238 तथा एल० सी० पी० 1902 XLI प० 147 ए०
बी० पी० 13 नवबर 1901 एस०एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 683 केसरी—21 जुलाई
(आर० एन० पी० बबई 25 जुलाई 1903)
212 जी० सी० अय्यर रिप० आई० एन० सी०—1900, पृ० 31 नौरोजी पावर्टी प० 656
वाचा सी० पी० ए० पृ० 559
213 नौरोजी पावर्टी प० 656 और स्पीचेज प० 237 राय फर्मिस पृ० 32 दत्त ई० एच० I
प० VII तथा ई० एच II प० VI बैनर्जी सी० पी० ए० 683-4
214 वस्तुत अन्न की न्यूनता अथवा अभाव नही प्रत्युत निर्धनता के कारण क्रयशक्ति के अभाव को
ही वस्तुत भारतीय अकाल कहा जाता है (ए० बी० पी० 22 मई 1892) और ज्ञानप्रकाश 16
जनवरी(आर० एन० पी० बबई 18 जून 1879) साम प्रकाश 1 दिस० (आर० एन० पी० बग
6 दिस० 1884) मराठा 29 माच 1891 मधोलकर पूर्वोदधत पृ० 38 नौरोजी पावर्टी पृ०
656 केसरी, 3 अप्रल(आर० एन० पी० बबई 7 अप्रल 1900) राय फर्मिस प० 31 वाचा
सी० पी० ए० प० 557 श्रीराम एल० सी० पी० 1901 खड XL प० 238 एम० के०
पटेल रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 76 बगाली 9 माच 1902
215 गोखले वेलबी कमीशन खड III प्रश्न 18314-8 भारत जीवन 25 जुलाई(आर० एन० पी०
एन० 3 अगस्त 1898)तिलक रिप० आई एन सी० 1900 प० 36 बनर्जी सी० पी० ए०
प० 684 केसरी, 25 दिस० (आर० एन० पी० बबई 29 दिसबर 1900) श्रीराम एल० सी०
पी०—1902 खड XLI पृ० 147
216 आई०एन सी०—1896 का प्रस्ताव XII आई० एन० सी०—1897 का प्रस्ताव IX आई०एन०
सी०—1901 का प्रस्ताव VII सी० सकरन नायर सी०पी ए० प०383 जी०सी० अय्यर
रिप० आई० एन० सी०—1900 प० 29 एन० के० एन अय्यर रिप० आई० एन० सी०—
1901 पृ० 140 राय फर्मिस प० 29 नौरोजी स्पीचेज प० 251 एस० एन० बनर्जी
सी० पी० ए०, पृ० 683

217 जोशी पूर्वोद्धृत, पृ० 152. आई० एन० सी० — 1896 का प्रस्ताव XII मधोलकर पूर्वोद्धृत पृ० 33 आई०एन० सी०—1900 का प्रस्ताव II चन्द्रावरकर सी०पी०ए० प० 514 वाचा सी० पी० ए०, पृ० 560 दत्त ओपन लटर्स पृ० 18 रामास्वामी अय्यर रिप० आई० एन० सी—1901, पृ० 134 कसरे हिन्द 22 सितंबर (आर० एन० पी० बंबई 28 सितंबर 1901)

218 यहा तक कि लोग अच्छी फसल के वर्षों मे आधे भूखे रहते थे और जब बुरे दिन आते थे तो वे बेचारे शीघ्र ही मृत्यु का ग्रास बन जाते थे—(नौरोजी पावर्टी प० 656) और देखिए वर्षा के अभाव से तो देश के किसी भाग की ही फसल नष्ट होती है वस्तुत लोगो की दरिद्रता ही तीव्र अकालो को निमंत्रित करती है —(दत्त ई एच II प० 5)

219 ऊपर देखिए

220 जोशी पूर्वोद्धृत प० 752 उपजाऊ धरती उत्तम भौगोलिक स्थिति तथा उत्पादन के अनुकूल वातावरण की विविधता से संपन्न ऊंचे स्तर के खनिज साधनो से समृद्ध तथा अल्पव्ययी विवेकी, शांतिप्रिय तथा परिश्रमी जनसंख्या वाला यह देश संपत्ति के उत्पादन और संचय के लिए अपवादात्मक सुविधाओ से संपन्न है इस प्रकार की स्पृहणीय स्थिति मे ऐसा कोई कारण नही होना चाहिए कि भारत न केवल कवियो द्वारा प्रशंसित अपितु इतिहासकारो तथा समकालीन लेखको द्वारा भी समर्थित वैभव मे अतीत की श्रेष्ठता को प्राप्त न करे—(मधोलकर पूर्वोद्धृत प० 35) जी० एस० अय्यर ने अठारहवी कांग्रेस को निर्दिष्ट किया भारत के पास समृद्धि की पूर्वापेक्षित आवश्यकताओ मे एक है सभी संभव कृषि उत्पादनो तथा दस्तकारियो को खपाने के लिए बहुत बडी मंडी है रिप० आई० एन० सी०—1902 पृ० 72 और नौरोजी पावर्टी प० 40 सी शंकरन नायर सी० पी० ए०, पृ० 384 दत्त स्पीचेज II प० 37 ई एच II पृ० 611 एन० के० एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 140-1 जी० सी० अय्यर ई ए—परिशिष्ट ए प० 3

221 जान आदम दि परमानेंट सेंटलमट क्वेश्चन इन इंडियन पालिटिक्स प० 80 जान स्ट्रेची ने शायद फाइनेंशल स्टेटमेट —1878 9 कंडिका 2 मे पहले ही इस विरोधाभास को अभिव्यक्ति दी थी

222 हमारे अपने ही देश के इतिहास का अध्ययन इस महान सत्य का बड विलक्षण ढंग से उदघाटन करता है कि हम कितने विपन्न और कितने अपमानित है? हमारा दुर्भाग्य श्रेणीबद्ध और शृंखलाबद्ध रूप मे आता रहा है जिसकी प्रत्येक कडी का विश्लेषण किया जा सकता है हम भाग्य के क्रूर हाथो के शिकार नही हुए, हम अभूतपूर्व संकटो का शिकार नही हुए और जहा परिस्थितियो ने वास्तव मे ही हमारी नियति पर पूर्ण अंकुश लगाया है वहा भी यदि हम प्रयत्न करते तो आंशिक रूप से उन परिस्थितियो पर नियंत्रण कर सकते थे और इसके फलस्वरूप देश का और कदाचित व्यापक रूप से विश्व का चेहरा बदल सकते थे —एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I प० 26 अमृत बाजार पत्रिका ने अपने 12 अगस्त 1886 के अंक मे लिखा—भारत की दरिद्रता और दुर्भाग्य का वास्तविक कारण ईश्वर की कृपणता न होकर मानव की लोभ-लालसा है

223 आर्थिक नियमो का तो यूरोप और एशिया मे एक ही रूप है। यदि भारत दरिद्र है तो यह आर्थिक कारणो का ही व्यापारगत प्रभाव है आर्थिक नियम तो अपने व्यापार मे अचल और अपरिवर्तित रहते हैं दत्त ई एच II प० XVI XVIII और देखिए उनकी पुस्तक इंग्लड ऐंड इंडिया प० 144 स्पीचेज II प० 63 ई एच I प० VI XII XIV तथा वाचा सी पी० ए० प० 560 थोडी पूर्व सूचना के लिए भारतीय नेताओ द्वारा भारतीय दरिद्रता के प्रस्तुत कारण थे 'भारत के देशी उद्योगो का विनाश और उसके फलस्वरूप देश ।

किसानो से भारी भू राजस्व की माग, महगा प्रशासन और परिणाम म ऊचे कराधान तथा भारत से इग्लड को धन की निकासी

224 1900 मे लाड कजन ने मद्रास महाजन सभा के सदस्यो को परामश दिया कि सरकार की आलोचना करने की अपेक्षा वे किसान को साहूकार और कानूनी कचहरियो से बचाने म अपना समय लगाए —कजन स्पीचेज, खड II पृ० 166 तथा देखिए, डफरिन स्पीचेज पृ० 241 2

225 1902 के भू राजस्व प्रस्ताव ने समीक्षको को चेतावनी दी कि व स्वय अपने द्वारा तथाकथित पहचाने रोग और सरकार के कतव्य अथवा शक्ति क्षेत्र क अतगत उसके उपचार क प्रयोग के सबध म अत्यत विकृत विश्लेषण प्रस्तुत न कर (बल दिया गया, पूर्वोद्धत, कडिका 31)

226 आई० एन० सी०—1891 का प्रस्ताव III प्रस्ताव क उपसहार म ग्रेट ब्रिटेन तथा आयरलड की जनता से अनुनय विनय की गई कि वह निस्सन्देह शुभ इच्छाओ से प्रेरित होते हुए भी पर्याप्त रूप से असतोषप्रद वतमान प्रशासन की त्रुटियो से और अधिक जनहानि न होने दें —प्रस्ताव का समथन करते हुए मदनमोहन मालवीय ने जोर दिया इस प्रस्ताव म हम उन कारणो का उल्लेख कर रहे हैं जिसके लिए सरकार ही प्रमुख रूप स उत्तरदायी है और साथ ही हम वे उपचार सुझा रहे हैं जिनके प्रयोग का प्रत्यक्ष सबध सरकार से है परतु यह तभी सभव है जब सरकार इस ओर ध्यान देने की चिन्ता करे वस्तुत यदि सरकार को अपने को सभ्य सरकार कहलाने की चिन्ता है तो इन उपचारो का प्रयोग उसका प्रमुखतम कतव्य है —(मालवीय स्पीचेज प० 229) और देखिए उदाहरणाथ नौरोजी पावर्टी प० 216-7 स्पीचेज प० 225 228 306 परिशिष्ट प० 17 78 एसेज पृ० 368 जोशी पूर्वोद्धत प० 785 6 818 आई० एन० सी० 1892 का प्रस्ताव IX नैयर सी०पी०ए० पृ० 384 दत्त 'इग्लड ऐंड इडिया पृ० 144 स्पीचज II प० 37 ई एच II प० 611 2 614 (वस्तुत यही भावना उनके आर्थिक इतिहासो के दोनो ग्रथो की भूमिकाओ म सन्निहित है) जी० सी० अय्यर वेलबी कमीशन खड III प्र० 18644 ई ए प० 3 नदी 'इडियन पालिटिक्स प० 134 तिलक रिप० आई० एन० सी०—1900 प० 36 तथा प्रधान ऐंड भागवत म उद्धत —पूर्वोद्धत प० 102 143 4 वाचा सा०पी०ए० प 626 एन० श्री निवास वरदाचारी रिप० आई० एन० सी०—1903 प० 66 9 माच 1902 क प्रस म बगाली न टिप्पणी की सरकार स्वाभाविक रूप से स्पष्ट कारणो से ही राष्ट्रीय दल द्वारा भारत के अकालो के सबध म प्रस्तुत विश्लेषण को स्वीकार करने को उद्यत नही । क्योकि इसकी स्वीकृति का अथ वतमान सारी प्रशासन व्यवस्था का एसे आधार पर पुनगठन होगा जो भारत पहले अग्रेजो के लिए और बाद म भारतीयो के लिए वाले सिद्धात क विरुद्ध पडगा ।

उद्योग I

भारतीयो की विशाल जनसख्या कृषि म प्रशिक्षित है। भारतीय शारीरिक दृ मे कृषि के उपयुक्त हैं। वे कृषि को छोड अन्य किसी उद्योग म प्रवत्त ही नही ह सकते।

लाड कज

भारत पर राजनीतिक प्रभुत्व जमाने के दिन से ही इग्लड की निश्चित नीति भारत को इग्लड के शिल्पकारो और औद्योगिक व्यापारियो के लाभ के लिए कच्चा माल पैदा करने वाले देश के रूप मे बदलने की रही है।

सुरद्रनाथ बनर्जी

I स्वदेशी उद्योग-धधो का ह्रास

भारत मे ब्रिटिश राज्य की स्थापना के महत्वपूर्ण परिणामो म से एक था भारतीय कस्बा की हस्तकलाओ और ग्रामा के हस्तशिल्प उद्योगो के क्रमश बढते क्षय और विध्वस क फलस्वरूप कृषि और उद्योग व्यवसाया के सदिया पुराने ऐक्य का छिन भिन्न होना।[1] 18वी शताब्दी तक भारत की आर्थिक दशा अपेक्षित रूप से उन्नत थी तथा भारत की उत्पादन विधिया तथा उसके व्यापारिक और औद्योगिक सगठन विश्व क किसी भी अन्य देश म प्रचलित इस प्रकार की विधिया और सगठनो की तुलना मे रखे जा सकते थ।[2] हा 19वी शताब्दी के अत तक बहुत से स्वदेशी उद्योग धधे या तो पुनरुद्धार की सीमा के बाहर जाकर नष्ट हो चुके थे या विनाश के पथ पर बढते हुए अतिम सास ले रहे थे जबकि आधुनिक उद्योग न अभी पर्याप्त उन्नति नही की थी।[3]

प्रारभिक भारतीय नेताओ की प्रमुख आर्थिक समस्या थी, देश की औद्योगिक दशा। उन्होने भारत की दरिद्रता का विश्लेषण अधिकाशत स्वदेशी उद्योगो के विनाश के फल-स्वरूप औद्योगिक पगुता तथा इस विनाश की पर्याप्त क्षतिपूर्ति के लिए आधुनिक उद्योग के द्रुत विकास म असफलता क रूप म ही प्रस्तुत किया।[4] प्रचलित विषयो पर लेख लिखनवालो ने दिन प्रतिदिन इस विषय पर अनवरत प्रहार किए तथा एक अथवा दूसरे उद्योग के विनाश पर निरतर विलाप किया।[5] इस ह्रास की ऐतिहासिक प्रक्रिया

की खोज करते हुए उन्होने बताया कि भारत कभी एक बहुत बडा शिल्प उत्पादक राष्ट्र था और उसके औद्योगिक उत्पादन शताब्दिया तक एशिया तथा यूरोप के बाजारो की माग की पूर्ति करते रहे है।[6] इस देश के कताई-बुनाई तथा अन्य उद्योग धधो ने लाखो नर-नारियो को पूर्णकालिक अथवा अशकालिक आजीविका जुटाई है।[7] परतु ब्रिटिश सत्ता के साथ यह सब कुछ लुप्त हो गया है। भारत ने अपना विदेशी बाजार ही नही खोया, प्रत्युत अपनी घरेलू मडी भी खो दी है। इस समय भारत को बराबर बहुत बडे परिमाण मे विदेशी सामान का आयात करना पड रहा है।[8] फलस्वरूप जो देश अपने देशवासियो के लिए 50 वर्ष पूर्व तक स्वय वस्त्रो का उत्पादन करता था, आज वस्त्रो के लिए दूर के मालिको पर निर्भर हो गया है। यही स्थिति हमारे रेशम, ऊन, चर्बी तथा खाल उद्योगो की है। कुल मिलाकर यही हमारी शोचनीय दशा है और इस सारी स्थिति की सामूहिक समीक्षा करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि हम पतन के उस भयकर कगार पर खडे है कि जहा से मामूली सा धक्का ही हम निश्चित और पूर्ण विनाश के गहरे गड्ढे मे धकेल सकता है।[9] आर०सी० दत्त के अनुसार 'विदेशी उत्पादनो द्वारा भारतीय शिल्प उत्पादनो की स्थानापन्नता ब्रिटिश भारत के इतिहास का निकृष्टतम अध्याय है।'[10] क्योकि इसमे भारत के आर्थिक स्रोतो मे हुए सकोच और भारतीयो की आजीविका मे आई और अधिक कृच्छता तथा विषमता के स्पष्ट सकेत मिलते है।[11] भारतीय नेताओ ने स्पष्ट किया कि अर्थव्यवस्था के कृषि सबधी और उद्योग सबधी क्षेत्रो के सतुलन मे विकार न और इसके फलस्वरूप औद्योगिक ह्रास ने न केवल राष्ट्रीय आय के एक बहुत बडे तथा महत्वपूर्ण स्रोत को ही नष्ट-भ्रष्ट किया है प्रत्युत लाखो कारीगरो का परपरागत व्यवसायो मे वचित करके उन्हे आजीविका के अन्य साधनो के अभाव के कारण, आजीविका के एकमात्र अवशिष्ट साधन कृषि पर अधिकाधिक निर्भर होने को विवश भी किया है।[1] इस प्रकार हस्तशिल्प उद्योगो के ह्रास ने भूमि पर लोगो का दबाव बढा दिया है[13]। इसके फलस्वरूप भारत का ग्रामीकरण बढता जा रहा है और भारतीयो की अकेले कृषि के ही विषम साधनो पर निर्भरता मे वृद्धि हो रही है।[14] भारतीय जनता के आजीविका के लिए कृषि पर निर्भरता के बढते अनुपात से भारत के ग्रामीकरण के विस्तार को नापा जा सकता है।[15] कृषि पर एकात निर्भरता भी चिंतनीय है क्योकि अनिश्चित वर्षा के रूप मे प्रकृति की कृपा पर निर्भर होने के कारण यह एक अविश्वसनीय उद्योग है।[16] इसके अतिरिक्त देश का ग्रामीकरण भी एक भयकर आर्थिक रोग है क्योकि कृषि भूमि के सीमित होने के कारण उसमे नए प्रवेश को खपाने की क्षमता नही है।[17] विचारणीय यह है कि एकातत और पूर्णतया कृषि पर निर्भर रहने वाले राष्ट्र का दरिद्र होना निश्चित ही है।[18] बहुत से राष्ट्रीय नेताओ ने 1880 के अकाल आयोग की राय का अनुमोदन करते हुए उसे उद्धृत किया भारत के लोगो की अधिकाश दरिद्रता का तथा अभाव के दिनो मे अनुभूत खतरो का मूल कारण यह दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति है कि अधिकाश भारतीय जनता के लिए एकमात्र व्यवसाय कृषि है।[19] कृषि पर अवाछनीय भार कृषि सबधी दक्षता को भी प्रभावित करता है।[20] इसके अतिरिक्त इसमे खेतो का उपविभाजन होता है, आवश्यकता से अधिक जुताई होने लगती है, घटिया और अनुत्पादक धरती

पर जुताई होने लगती है तथा जगलो और चरागाहो पर अनुचित कब्जा किया जाने लगता है।"[1] इन सबका परिणाम ग्रामो की प्रच्छन्न बेकारी है। जी० वी० जोशी ने भी निर्देश किया कि एक ओर भूमि को अवाछनीय श्रमिको का भार सहन करना पडता है और दूसरी ओर बचत के अभाव के फलस्वरूप भूमि म सुधार के लिए आर्थिक साधनो की कमी होती है।"[3] भूमि पर दबाव खेतिहरो म सबथा अलाभकारी तथा बहुत ऊचे किरायों पर धरती को लेने म विनाशकारी प्रतियोगिता की प्रवृत्ति को बढावा देता है।"[4] इस प्रतियोगिता के कारण कृषि श्रमिक एक-दूसरे की मजदूरी का अवमूल्यन करते है।[5] रानाडे ने भी अनुभव किया कि आधुनिक भारत के ग्रामीकरण का अथ है उसे असभ्य बनाना अर्थात उसकी शक्ति, प्रतिभा और आत्मरक्षा की भावना का विनाश करना।" पारपरिक उद्योग धधो के इस बढते हुए विनाश के साथ उनके स्थान पर नवीन उद्योगो की स्थापना म असफलता का निकृष्टतम परिणाम यह था कि भारत का आर्थिक जीवन अधिकाधिक विदेशी आर्थिक प्रभुत्व के अधीन हो गया था। विदशी शासको ने तुच्छ दृष्टि से भारत को ब्रिटिश अभिकर्ताओ द्वारा ब्रिटिश जहाजो पर लादने के लिए कच्चा माल उत्पन्न करनेवाली एक बस्ती के रूप म ही लिया। भारत का कच्चा माल ब्रिटिश कारीगरी और ब्रिटिश धन से वस्त्रो के रूप मे परिणत होता था और फिर वही सामान ब्रिटिश व्यापारियो द्वारा भारत तथा अन्य अधीनस्थ राज्यो म ब्रिटिश व्यापार सघो के माध्यम स पुन नियातित किया जाता था। परतु ग्रामीण तथा शहरी हस्त उद्योगो का यह द्रुत विनाश हुआ कैसे? क्या यह समय अथवा परिस्थितियो के परिवनन का अपरिहार्य परिणाम था? यदि ऐसा था तो यह एक दु खद प्रतिक्रिया के सिवा और कुछ नही था। इस सबध म भी भारतीय नेताओ का विश्वास था कि मनुष्यो के नियत्रण स बाहर की घटनाओ की भी भूमिका रही होगी। किंतु वस्तुत भारत के उद्योग-धधो का विनाश तो निश्चित रूप से हृदयहीन स्वाथपरता तथा क्रूर अन्याय की एक करुण कहानी थी।[8] उन्होने इसका बहुत बडा उत्तरदायित्व ब्रिटन पर तथा भारत म स्थित ब्रिटिश अधिकारियो के कधे पर ही डाला, जिन्होने एक निश्चित सकल्प तथा विनाशक दृढता के साथ[9] भारत के उद्योगो के विनाश की सुविचारित नीति का अनुसरण किया।[30]

भारतीय नेताओ का विश्वास था कि ब्रिटिश अधिकारी ब्रिटेन के व्यापारियो और शिल्प उत्पादको के दबाव के कारण भारतीय उद्योगो पर उसके दुष्प्रभाव की चिंता किए बिना और यहा तक कि उनके मूल्य पर भी, इग्लड के विनासशील उद्योग को प्रोत्साहन देने को दृढसकल्प थे।[31] उनके अनुसार भारत मे ब्रिटिश नीति का द्विपक्षीय उद्देश्य था, एक तो ब्रिटेन के औद्योगिक उत्पादनो की खपत के लिए भारत को एक मूल्यवान मडी बनाना, भले ही इसके लिए भारतीय उद्योग धधो के कुचलने के लिए विविध तीव्र साधन ही क्यो न अपनाने पड़ें।[3] दूसरा, ब्रिटेन के तेजी से बढते हुए उद्योगो के लिए ब्रिटन की बढती हुई आवश्यकता के कच्चे माल को सस्ती दर और सुनिश्चित परिमाण मे सतोषजनक सभरण के लिए भारत को कच्चे माल के उत्पादक कृषि देश के रूप म परिवर्तित करना।[33] इन दोनो उद्देश्यो की सिद्धि भारतीय उद्योग धधो को आघात पहुचाकर और

इस प्रकार भारतीय अर्थ व्यवस्था को ब्रिटिश उद्योगों की सहायक बनाकर ही की जा सकती थी।[34]

भारतीय नेताओं को पूरा यकीन था कि ब्रिटेन ने अपने राजनीतिक नियन्त्रण का दुरुपयोग करते हुए भारत और ब्रिटेन में व्यापार में प्रतियोगिता की अन्यायपूर्ण परिस्थितियां उत्पन्न करके भारत के उद्योगों का बड़ी ही तत्परता और तेजी से विनाश किया है।[35] उन्होंने इतिहासकार एच०एच० विलसन के इस मत से सहमति प्रकट की कि विदेशी उत्पादक समान शर्तों पर समझौता अथवा बराबरी न कर सकने पर अपने प्रतियोगी को नीचा दिखाने और अंततः उसका गला घोटने के लिए राजनीतिक अन्याय के शस्त्र का प्रयोग करता है।[36] 1765 में बंगाल में ब्रिटिश प्रशासन के प्रारंभ काल से यह कहा जाने लगा कि शासकों ने स्वदेशी हस्त शिल्पों को कुचलने के लिए आदेश जारी किए हैं।[37] 1813 और 1833 की संसदीय जांचों का एकमात्र उद्देश्य भारतीय बाजार में ब्रिटिश निर्माताओं के स्वदेशी उत्पादनों को अपदस्थ करने के साधन खोजना था।[38] भारतीय नेताओं के अनुसार इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए खोजा गया अति महत्वपूर्ण उपाय था, भेदमूलक सीमा शुल्कों का कराधान। भारतीय उत्पादकों के लिए जहां प्रतिबंधों और अत्यधिक ऊंची शुल्क पद्धति के कारण अंगरेजी बाजार तेजी से संकुचित होता जा रहा था, वहां उन्मुक्त व्यापार लागू होने के कारण भारतीय बाजार अंगरेज व्यापारियों के लिए अधिकाधिक विस्तृत होता जा रहा था।[39] 1848 में भारत के इंग्लैंड को निर्यात पर निषेधक करों को हटा दिया गया परंतु उस समय तक वे कर अपना संहारक प्रहार कर चुके थे।[40] भारत का आंतरिक व्यापार भी अंतर्देशीय सीमा शुल्कों तथा संक्रमण शुल्कों की प्रथा के लागू होने से प्रतिबंधित तथा संकुचित था तथा इससे अपने ही बाजार में स्वदेशी उत्पादनों में एक दूसरे के विरुद्ध भेदभाव पनपता था।[41] ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी जुलाहों तथा अन्य दूसरे उत्पादकों पर एकाधिकारी नियंत्रण रखने के लिए, उन्हें अलाभकारी सस्ते दामों पर माल का उत्पादन करने के लिए विवश किया और इस प्रकार उन्हें अपना पैतृक व्यवसाय छोड़ने को बाध्य करने के लिए राजनीतिक शक्ति का दुरुपयोग किया।[42]

भारतीय अर्थनीति के विचारकों ने विदेशी शासकों द्वारा भारतीय उद्योग धंधों के विनाश के सुविचारित प्रयत्नों की भूमिका पर विचार करते हुए अपने अंतिम विश्लेषण में इस तथ्य को तत्परता से अभिस्वीकार किया कि वाष्पशक्ति और उत्तम मशीनरी पर आधृत उत्पादन कला की श्रेष्ठता के कारण ही ब्रिटिश उत्पादक स्वयं भारत के बाजारों में ही भारतीय कारीगरों के उत्पादन के मुकाबले अपना बढ़िया और सस्ता उत्पादन खपा कर वास्तव में ही भारतीय उद्योग धंधों को मंडी से बाहर धकेलने में सफल हुए हैं।[43] उदाहरणार्थ जस्टिस रानडे ने इस तथ्य की पुष्टि की कि विदेशी प्रतियोगिता विदेशी होने के कारण नहीं प्रत्युत मानव श्रम के साथ प्राकृतिक शक्ति की प्रतियोगिता, अज्ञान और अकर्मण्यता के साथ सुनियोजित शिल्प कौशल तथा विज्ञान की प्रतियोगिता होने के कारण न केवल संपत्ति पर प्रत्युत उससे भी अधिक उल्लेखनीय एवं महत्वपूर्ण दूसरों के कौशल, प्रतिभा तथा गतिविधि पर एकाधिकार को स्थानांतरित कर रही है।[44] बहुत से राष्ट्रवादी
... की मान्यता थी कि केवल शिल्प कौशल की श्रेष्ठता से भारतीय हस्तकौशल का

समूल विनाश सभव नही था ।[45] वस्तुत सत्य यह है कि इसमे सहायक तत्व थे, रेलवे के शीघ्र निर्माण के रूप म भारतीय यातायात साधनो का विकास[46] तथा भारत म उमुक्त व्यापार की अनुमति ।[4] य दोनो तत्व भारत पर ब्रिटिश साम्राज्य के ही राजनीतिक परिणाम थे। इसके अतिरिक्त उनका प्रश्न यह था कि भारत को पराजित करनवाली इग्लड की द्रुत गति स विकसित शिल्पकला की उत्कृष्टता का आधार क्या था ? उनके विचार म इग्लड के तथा अय अधीनस्थ देशा के वासियो स अपरिमित धन की लूट से ही ब्रिटेन के मशीन उद्योग का पोषण और विकास सभव हुआ था ।[48] कुल मिलाकर भारतीय नताआ का यह मत था कि राजनीतिक शक्तिया के प्रयोग स प्ररित आर्थिक नियम लागू हाने स अतीत म भारतीय शिल्पकला की इग्लड के उद्योगा पर प्रतिष्ठित श्रेष्ठता समाप्त होकर विरोधी को हस्तान्तरित हो गई है ।[49] यह उल्लखनीय है कि इस युग के जन नेताआ न ग्रामा क शिल्पो और कलाआ के ह्रास और विस्थापन पर ध्यान दन के बजाय वस्त्रा के हस्त उद्याग धधा के विनाश पर ही[49a] अपना ध्यान केंद्रित किया। इसम भी उन्होने न्यूनाधिक रूप म कच्चे माल के निर्यात तथा ग्राम पचायतो के ह्रास और लोप के फलस्वरूप भारतीय समाज के उच्च और मध्यवग के लोगो की रुचिया म आए परिवतना के प्रभावा की उपेक्षा कर दी।

राष्ट्रवादियो न स्वदेशी उद्योगा क ह्रास को भारत की दरिद्रता का मूल कारण मानते हुए जनता की भौतिक स्थिति मे और अधिक गिरावट को रोकने के लिए तथा दश के आर्थिक पुनर्जागरण के लिए भारतीय हस्त उद्योग धधो की सुरक्षा, पुनर्स्थापना, पुनर्नियोजन तथा आधुनिकीकरण का स्वाभावत ही अपने कायक्रम का प्रमुख अग बनाया ।[50] भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने बार बार अपनी घोषणा को दोहराया कि देश मे पडनेवाल अकाला के निवारण की सही औषधि अयाय उपायो क साथ वास्तव म नष्टप्राय स्वदशी और स्थानीय कलाओ और उद्योगा के विकास को आगे बढानवाली नीति अपनाना है ।[51] इसके साथ ही भारतीय नताआ ने यह भी स्पष्ट रूप से अभिस्वीकार किया कि अय दशो का अनुभव इस ओर सकत करता है कि आज क मशीनी यत्रो तथा विशाल उत्पादन के युग म सस्ते प्राकृतिक अभिकरणा द्वारा सचालित उद्योगो के मुकाबल म हस्तसचालित उद्योगधधा के फलने फूलने की सभावना कम ही है ।[5] इन लक्षणा क बावजूद कुछ एक नेताआ का विश्वास था कि भारतीय हस्तशिल्पो के ह्रास का प्रक्रिया कितनी ही अपरिहाय क्यो न हो, उसका सशोधन और व्यवस्थापन इस रूप म हो सकता है और अवश्य होना चाहिए कि इसस लोगा को यथासभव न्यूनतम कष्ट हो। इसके अतिरिक्त इन उद्योगा को बडे पैमाने के उद्योगो म भी अपेक्षाकृत सुविधाजनक प्रक्रिया स बदलना चाहिए ।[53] उनका सरकार पर एक अभियोग यह था कि उसन तकनीकी शक्तियो के प्रवतन म सशोधन अथवा नियत्रण की कोई चेष्टा नही की ।[54] इस सबध म आर्थिक चितन की उन्नत गहराई लिए हुई जी० वी० जोशी की टिप्पणियो का विस्तत पुनर्लेखन समुचित होगा

कोई भी समझदार, दूरदर्शी अपनी सत्ता के प्रति जागरूक तथा दायित्वो को समझने वाली सरकार अपन अधिकृत दश के औद्योगिक गठन म ऐसे विनाशकारी मौलिक परिवतना को उन्हे रोकने के सशक्त उपाय किए बिना कदापि न होन दती।

निस्सदेह हस्त उद्योगो का भापशक्ति वाले उद्योगो मे परिवर्तन सर्वथा अनिवार्य है और इसे किसी भी देश में रोका नही जा सकता, परतु भारत जैसे पिछडे और अध-विकसित देशा मे स्पष्ट रूप स इन देशो की सरकारा का यह वैधानिक दायित्व है कि वह सामयिक और अस्थायी हस्तक्षेप द्वारा इस परिवर्तन को इस प्रकार स नियत्रित कर कि जिससे वह वहा के निवासियो के लिए लाभप्रद बन सके।[55]

II आधुनिक उद्योगो को प्रोत्साहन

प्रारभिक भारतीय नताआ न आधुनिक उद्योगा की स्थापना और उन्नति पर ता सदैव बल दिया किंतु आधुनिक उद्योगो के विकास के विराध मे अथवा विकल्प के रूप म हस्त शिल्प उद्योगो के सरक्षण और पुनरुज्जीवन की इच्छा का कभी मन म स्थान नही दिया।[56] उन्होंने लगभग एक मत स यह स्वीकार किया कि आधुनिक मशीना द्वारा देश के अर्थतत्र का पूणरूप मे परिवर्तन उनकी अर्थनीतिया का प्रमुख लक्ष्य तथा देश के सभी आर्थिक रोगो की अचूक औषधि है। भारतीया द्वारा आधुनिक उद्योगा की स्वीकृति और वकालत को आधुनिक भारत म उद्योगीकरण के अग्रदूत जस्टिस रानाडे ने अपन देशवासिया का सबोधित निम्नलिखित प्रवाचन मे सर्वोत्तम रूप से इस प्रकार प्रकट किया है हमें सर्वोत्तम शिक्षका से सीखन के लिए यह ईश्वर द्वारा सुस्थापित व्यावहारिक काय है। हम अपन कच्चे माल के स्तर को सुधारना है अथवा हमारी धरती के उत्तम स्तर के उत्पादन क अनुकूल न हान पर उसका आयात करना है। हमे सहयाग द्वारा श्रम और पूजी का सग ठित करना है और उन्मुक्त रूप से विदशी कौशल तथा मशीनरी का तब तक आयात करना ह जब तक हम अपन आप भली प्रकार काय करना सीख नहा जाते हैं तथा उनकी सहायता की अपक्षा छोड नही देते। हम बहुत अधिक पिछड गए ह अब हम नए कामो म हाथ डालना है तथा और अधिक कठोर श्रम के लिए ईमानदारी स कमर कसनी है। यह एक नागरिक गुण है जो हमे सीखना है। यदि हम इस गुण को अपनाते है ता युद्ध म हमारी विजय निश्चित है। इसके विपरीत यदि हम इस गुण की उपेक्षा करत ह ता पराजय मुह बाए खडी है मुझे विश्वास है कि शीघ्र ही कठोर श्रम सारे देश का धम बन जाएगा तथा प्राचीन भारत मे स्थाई रूप स नवीन भावनाआ का बिगुल बजेगा।[57]

भारतीय नेताआ ने नए उद्योगो की स्थापना की दिशा म उठाए गए प्रत्यक पग का स्वागत किया तथा किसी भी प्रत्यक्ष रूप स यत्नसाध्य क्षेत्र म भारतीयो की निश्चेष्टता पर विलाप किया और उन्ह अपने सभी साधनो को जुटाकर उद्योग तथा व्यापार म प्रवत होने के लिए प्रवाधित किया।[58] उनका युद्धघोष था हम अवश्य ही पूजीपति तथा उद्यमी बनना चाहिए। अपने देश का व्यापारिया का देश मशीन बनान वाला का देश तथा दुकानदारा का देश बनाना चाहिए।[59] कुछ महानुभावो की दृष्टि मे उद्योगीकरण जनता की प्रगति की एकमात्र भले न सही अत्यधिक महत्वपूण कसौटी अवश्य था।[60] यह एक मात्र कसौटी थी जिसके आधार पर देश के आर्थिक विकास की गतिशीलता को देखा परखा जा सकता।[61]

उद्योगीकरण के बहुत से बढते हुए लाभो के कारण भारतीया की दृष्टि मे आधुनिक

उद्योगो पर बल देना सवथा न्यायसगत था, क्योकि वस्तुत भारत की आर्थिक कठिनाइया के मूल कारण अपूण उत्पादन तथा अपूण रोजगार ही थे। दरिद्रता तथा ह्रास के और अधिक विकास को रोकने की सही औषधि राष्ट्रीय सपदा को बढाना तथा लाखो-करोडा लागो को सपन्न बनने के लिए प्रोत्साहित करना था। यह सब आधुनिक उद्यागो और उत्पादनो के विकास द्वारा ही सभव था।[6-] इसके अतिक्ति भारत म अधिकाश जोतन योग्य भूमि को पहल ही जोता जा चुका था और इस प्रकार कृषि विस्तार अपनी सीमा पर पहुच गया था।[63] इस स्थिति म आधुनिक उद्योग एक एसा अभिकरण था जिसम भूमि पर आबादी के बढत हुए दबाव को कम किया जा सकता था तथा दश की निरतर बढती हुई आबादी की देहाती अपूण रोजगारी और बेरोजगारी कम की जा सकती थी और साथ ही आजीविका के वैकल्पिक साधन जुटाए जा सकत थ।[64] इस प्रकार किसी भी रूप म आजीविका के अनिश्चित और सदिग्ध साधन कृषि पर एकात निभरता का समाप्त करन के लिए तथा दश को और अधिक असभ्य बनने स रोकन के लिए दश का उद्यागीकरण आवश्यक था।[6] उद्यागा के विकास से ही कच्चे माल के नियात तथा उत्पादना के आयात स होन वाली दश की सपदा की निकासी और श्रम तथा पूजी की हानि आदि को घटाया जा सकता था।[66]

कुछ एक भारतीय नेता एक अन्य दृष्टि देश की सामाजिक और सास्कृतिक प्रगति की दृष्टि से भी बडे पमान के उद्योगो की आवश्यकता मानत थ। उनके अनुसार आधुनिक उद्योगो से अधिक सपदा का ही उत्पादन नही हागा प्रत्युत उससे भी अधिक महत्वपूण काय उत्पादक शक्तिया का पूण और बहुमुखी विकास भी होगा।[6] कृषि और उद्योग द्वारा कुल उत्पादित पूजी की राशि समान होन पर भी कृषि का सकीर्ण और सकुचित क्षेत्र आर्थिक विकास के निम्न स्तर को और इसके विपरीत उद्योग और वाणिज्य का क्षत्र उन्मुक्त तथा उन्नत विकास को सूचित करता है।[63] इसके अतिरिक्त यह भी माना जाता था कि औद्योगिकता सभ्यता के उच्च स्तर तथा विशिष्ट आदश का प्रतिनिधित्व करती है।[69] साथ ही यह देश की सस्कृति चरित्र और प्रतिभा के विकास और विस्तार म सहायक होती है।[70] 1890 मे रानाडे न लिखा स्कूलो और कालेजो की अपक्षा कारखाने और मिलें अधिक प्रभावशाली ढग से राष्ट की गतिविधियो को जन्म दे सकती है।[1] इसके अतिरिक्त सक्षप मे आधुनिक उद्योग ही एक ऐसी शक्ति है जा भारत क विभिन्न लागो का सामान्य लाभ के आधार पर एक राष्ट्रीय सत्ता के रूप म सगठित करन म सहायक हो सकती है।

राजनीतिक अधिकारो के लिए आदोलन भारत के विभिन्न राष्ट्रवादिया को कुछ समय के लिए एकता के सूत्र मे अवश्य बाध सकता है परतु इन अधिकारो की उपलब्धि पर हिता की समानता समाप्त हो सकती है। इसके विपरीत विभिन्न भारतीय राष्ट्रवादिया का एक बार वाणिज्य सगठन स्थापित हो जान पर वह कभी अस्तित्वशून्य नही हो सकता। अतएव वाणिज्य और उद्योग सबधी गतिविधि बडा सुदृढ सगठन है तथा भारत के महान राष्ट्र के निर्माण का एक सशक्त तत्व है।"

इस प्रकार 19वी शताब्दी के अत तक देश के आधुनिक ढग से उद्योगीकरण की माग

को राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हो गई थी। समीक्षाधीन काल की अवधि मे एक भी ऐसा राष्ट्रवादी समाचारपत्र अथवा लोकनायक नहीं था जिसने भारत म पश्चिमी तकनीक और उद्योग के प्रवतन और उन्नयन की वाछनीयता और उपयोगिता पर कभी सन्देह किया हो अथवा उन्हें नकारा हो। बडे पैमाने के पूजीमूलक उद्योग के विरुद्ध अकेला स्वर कलकत्ता म प्रकाशित 'दि डान' पत्रिका के सपादक सतीशचंद्र मुखर्जी का था। 1905 स पूर्व के वर्षो मे तो उनका महत्व अपेक्षाकृत कम था परतु उसके उपरात उन्होंने प्रमुख तथा अपने बहुत सारे प्रसिद्ध शिष्यों के प्रभाव के कारण बगाल के राजनीतिक जीवन म अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था। सक्षिप्त रूप से इस सबध म प्रस्तुत उनके विचार दो दृष्टियो स महत्वपूर्ण थे। एक ओर वे कुछ रूपो मे महात्मा गाधी द्वारा अपनाई गई नीति से मिलते जुलते थे और दूसरी ओर वे निगम पद्धति से मेल खाते थे।[3] उनके अनुसार आधुनिक उद्योग पद्धति मे दो प्रमुख दोष थे। एक ओर यह पूजीपतियो के एक छोटे से परतु सुसगठित अल्पसख्यक वर्ग को जन्म देता है और दूसरी ओर यह भयकर श्रम सगठनो के रूप म श्रमिको को इकट्ठा होने की प्रेरणा देता है जो विशेषतया भारत जैसे विशाल देश के लिए निश्चित रूप से एक स्थाई सामाजिक तथा राजनीतिक खतरा बन सकता है। इसके उपचार के लिए उन्होंने दो उपायो का सुझाव दिया। प्रथम, अधिकाश उद्योगो को पारिवारिक हस्तकलाओ के आधार पर सगठित किया जाए तथा बडे पैमाने के पूजीमूलक उद्योगो म केवल उन कुछ एक उद्यमो (इजीनियरी खान, रेलवे, आदि) को ही विकसित किया जाए जिनकी आवश्यकता समाज के बहुत बडे वर्ग को व्यक्तिगत रूप मे तथा पारिवारिक शिल्पो के लिए रहती है। द्वितीय, सामूहिक नैतिक जीवन का इस प्रकार से सयोजन करना चाहिए कि इसके अतर्गत सामाजिक जीवनतत्र म प्रत्येक वर्ग का एक निश्चित सम्मानित तथा स्वतत्र स्थान हो। प्रत्येक व्यक्ति पारस्परिक सहयोग और समन्वय की भावना स इस प्रकार काय करे कि उससे सभी को समान रूप स लाभ मिले सारे भारतीय समाज का सयुक्त रूप स भौतिक उत्कर्ष और आध्यात्मिक विकास हो।[7]

कुछ एक अन्य भारतीय लेखको न भी पश्चिम की प्रतियोगिता और लालुप प्रवृत्ति वाली औद्योगिक सस्थाओ की आलोचना की। उनके विचार म इन सस्थाओ न सामाजिक मर्यादा को भ्रष्ट करके रख दिया है और मनुष्य को अपने द्वारा अपने लिए जीने पर बाध्य कर दिया है। 'पूना सावजनिक सभा' के अप्रैल 1893 के अक म प्रकाशित 'दि एमर्जेंसीज आफ प्राग्रेस इन इडिया' लेख के अज्ञात लेखक द्वारा समकालीन पश्चिमी यूरोपीय पूजीवाद पर निंदित स्वर म घोषित अभियोग स बडा अभियोग किसी भी तत्कालीन अन्य लेखक द्वारा नहीं लगाया गया

> अतीत की सभी क्रूरताए मिलकर भी अपनी तीव्रता म जीवन की आवश्यकताओ के असमान वितरण, धन सपत्ति के केंद्रीकरण श्रम पर पूजी की वैध दासता, अपर्याप्त आजीविका के कारण दुखो और वेदनाओ भुखमरी स होने वाली असख्य मृत्युओ तथा कुठा और निराशा के कारण हुई अनभिलिखित आत्महत्याओ के रूप म प्रस्तुत दीर्घकाय दुर्भाग्य का मुकाबला नहीं कर सकती।[76]

इन लेखको ने पश्चिमी औद्योगिकता के दोषो को जानते हुए भी उसे उसके मूल रूप मे भी नकारा नहीं क्योंकि मूलत वे लेखक पूर्वी जीवनपद्धति की अपेक्षा पश्चिमी जीवन-पद्धति मे ही विश्वास करते थे। इसके अतिरिक्त वस्तुत अब भारत के चाहने या न चाहने की कोई बात ही नही रह गई थी क्योकि अब तक तो वह सासारिक पूजीवादी प्रणाली का एक अग बन चुका था और अब उसके लिए अलग अलग रहना सभव ही नहीं था। अतएव उस समय अपरिहाय माग को स्वीकार करना, समय की माग के अनुसार अपने आपको ढालना तथा सभ्यता के बढते कदम के साथ कदम मिलाना ही अधिक उपयुक्त था।[77]

कालक्रम की दृष्टि से भारत म सवप्रथम नील, चाय तथा काफी बागान के उद्योग ही शुरू हुए। उनका स्वामित्व एकातत यूरोपीयो का था और वे पूणत आधुनिक मशीनी आविष्कारो पर निभर नही थे। अतएव भारतीयो का इस ओर विशेष ध्यान ही नहीं गया। भारतीय नता तो फैक्टरी उद्योग के प्रति दत्तचित रह और इनकी उनति के साथ ही अपना प्रमुख नाता जोडे रहे। रेलवे का आगमन भारत मे आधुनिक मशीनरी के प्रवेश की घोषणा थी और 1850 की अवधि मे भारत म सूती कपडा, पटसन तथा कोयला खान उद्योग स्थापित हो चुके थे। अतिम दो औद्योगिक क्षेत्र प्रमुख रूप से यूरोपीय पूजी के अतगत थे अत भारतीयो के उद्यम और आशा का केंद्र एकमात्र सूती कपडा उद्योग ही था। यही कारण है कि इसे अपन ज मकाल से ही दश के कारखाना उद्योगा मे महत्वपूण स्थान प्राप्त रहा है। 1879 मे देश मे 56 सूती मिलें थी और इनम लगभग 43,000 व्यक्ति काम करत थे। इनमे 75 प्रतिशत कारखान बबई प्रात म स्थित थे। 1882 मे केवल 22 पटसन मिलें थी और उनमे म अधिकाश मिलें बगाल मे थी। इनमे लगभग 20,000 व्यक्ति कायरत थे। इस प्रकार स्पष्ट है कि 1880 तक भारत म आधुनिक उद्योग का विस्तार अत्यत स्वल्प था, पुनरपि वह स्वल्प विस्तार भारतीय नेताओ और उद्यमियो के दूरदर्शी वग मे आधुनिक उद्योग के प्रति रुचि उत्पन करने मे तथा उनके प्रलोभन को बढाने मे पर्याप्त समथ था। 1880 के उपरात दश मे औद्योगिक विस्तार ने मद होने पर भी निरतरता ग्रहण की और इसके फलस्वरूप 1901 02 मे भारत मे 1,14,795 व्यक्तियो का सेवारत करनेवाली 36 पटसन मिलें, 1904 05 मे 1,96,369 व्यक्तियो को आजीविका देने वाली 206 सूती कपडा मिलें और 1906 मे लगभग 99 000 लोगो को काम देने वाले कोयला खान आदि उद्योग अस्तित्व मे आए। इस अवधि मे अपेक्षाकृत कम विस्तार से पनपने वाले अय उद्योग थे रुई बलन यत्र, चावल, आटा और इमारती लकडी की मिलें, चमडा कमाने के कारखाने, ऊनी कपडे की मिलें कागज और चीनी मिलें तथा नमक, अभ्रक, शोरा पैट्रोल तथा लोहा जैसी धातुओ के उद्योग, थोडी सी इजीनियरी और रेलवे कमशालाए तथा लोहे और पीतल की ढलाई करने के कारखाने भी अस्तित्व मे आए।[8] स्पष्ट है कि हमारे अध्ययन के काल की अवधि मे भारत म औद्योगिक प्रगति कुल मिलाकर बहुत ही धीमी थी तथा रुई और पटसन उद्योगा तक ही सीमित थी।[79] अत यह स्वदेशी हस्तशिल्पो के विस्थापन की क्षतिपूर्ति म भी समथ नहीं थी।[80]

यह स्वाभाविक था कि भारतीय नेताओ का ध्यान दश की औद्योगिक प्रगति का

विलंबित करने वाले कारणों की जांच की ओर तथा साथ ही प्रयोग में लाए जाने वाले उपचारों की खोज की ओर जाता। सर्वप्रथम भारतीय नेताओं ने इंग्लैंड में तथा भारत में सरकारी क्षेत्र में व्यापक रूप से अत्यंत लोकप्रिय इस धारणा का खंडन तथा विरोध किया कि भारत के भाग्य में एक महान औद्योगिक देश बनना नहीं बदा था और एक उष्ण कटिबंधीय देश होने के नाते उसकी प्राकृतिक भूमिका यूरोपीय देशों के प्राकृतिक तकनीकी और वैज्ञानिक अभिरुचि रखने वाले उत्पादकों के प्रयोग में आनेवाले कच्चे माल के उत्पादन की थी।[81] भारत के अति प्राचीन काल में ही एक अत्यंत उपयुक्त महान उत्पादक देश होने के संबंध में भारतीय नेताओं ने अनेक उत्पादन कलाओं में देश की अतीत की उपलब्धियों का उल्लेख किया।[82] इसके अतिरिक्त उन्होंने इस तथ्य का स्वतः सिद्ध प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया कि भारत आधुनिक उद्योग के लिए अपेक्षित कच्चे माल आदि का उत्पादक है और इस प्रकार यह स्वाभाविक रूप से सर्वाधिक सस्ता उत्पादक देश होने के योग्य है।[83] यहां यह भी उल्लेखनीय है कि भारतीयों में किसी भी देश को व्यावसायिक तथा औद्योगिक दृष्टि से महान बनाने में सहायक बहुत सी विशेषताएं, दूरदर्शिता, प्रतिभा, कौशल, आत्मविश्वास तथा कठोर श्रम की क्षमता विद्यमान हैं।[84] फलतः भारतीय नेता कुछ एक अन्य मानवनिर्मित न कि ईश्वरनिर्मित वित्तीय बाधाओं को समुचित सामाजिक प्रयत्नों द्वारा मार्ग से हटा दिए जाने पर भारत के औद्योगिक भविष्य की उज्ज्वलता के संबंध में आशावादी ही नहीं थे, प्रत्युत पूर्ण रूप से विश्वस्त थे।[85]

III पूंजी की कमी

राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार भारत के पास भूमि और श्रम की तो प्रचुरता थी परंतु बड़े पैमाने पर उद्योगों की स्थापना के मार्ग में औद्योगिक चेष्टाओं के लिए अपेक्षित पूंजी की कमी एक बड़ी भारी अड़चन थी।[86] रानाडे ने लिखा कि जिस प्रकार भारत की भूमि प्यास से तड़प रही है उसी प्रकार देश का उद्योग पूंजी के अभाव से झुलस रहा है।[87] पूंजी के अभाव की समस्या के दो पहलू थे (क) जमा पूंजी तथा चालू बचत की विरलता।[88] इसके कारण थे निकट भूतकाल में शांति और सुरक्षा का अभाव।[89] भारत की अत्यधिक निर्धनता, जिसके कारण सामान्य बचत असंभव न सही परंतु अति कठिन अवश्य थी।[90] हिंदुओं की सामाजिक प्रथाएं तथा धार्मिक मान्यताएं जिनके अनुसार वे संपदा के संग्रह की अपेक्षा उसके उपविभाजन में ही विश्वास रखते थे।[91] लोगों की कमर तोड़ने वाले ऊंचे सरकारी कराधान[92] तथा संपदा की आर्थिक निकासी, जिसके अंतर्गत समाज की सशक्त बचतों का बहुत बड़ा भाग विदेशों को चला जा रहा था।[93] (ख) आधुनिक उद्योग की दशा में उपलब्ध परंतु बिखरे हुए आर्थिक साधनों का संजाल तथा उन्हें गति देने में असफलता।[94] यह असफलता एक तो बड़े उद्यमों के प्रवर्तन तथा उनमें सफलता प्राप्ति के लिए अनिवार्य रूप से अपेक्षित पूंजीपतिवर्ग में पारस्परिक विश्वास के साथ मिलजुल कर काम करने की प्रवृत्ति के पारस्परिक सहयोग की भावना के तथा नियमित और संगठित रूप से कार्य संचालन की प्रवृत्ति में अभाव का[95] और दूसरे आधुनिक बैंकों जैसे अपेक्षित पर्याप्त साख संगठनों के अभाव का परिणाम थी और केवल इन्हीं साधनों के

जरिए असंख्य निवेशकों की छोटी बचतों को पूंजी के अभाव से ग्रस्त आधुनिक उद्योगों की ओर प्रवाहित किया जा सकता था।[96] बड़े पैमाने के उद्योगों का पूंजी को अपनी ओर न खींच पाने का आंशिक कारण यह भी था कि भारतीय धनाढ्य अनुद्यमी थे और वे किसी प्रकार का खतरा मोल लेने को उद्यत नहीं थे।[9]

भारतीय नेता इस तथ्य से सहमत थे कि संचित पूंजी की राशि रातोंरात नहीं बढ़ाई जा सकती परन्तु उनका कथन यह था कि ग्रेट ब्रिटेन के लिए भारत से होने वाली निकासी को रोककर[98] तथा भारतीयों में दृढ़तापूर्वक मितव्ययिता से रहने तथा बचत करने की प्रवृत्ति को पनपाकर चालू बचतें बढ़ाई जा सकती हैं।[99] इसके अतिरिक्त उन्होंने देश के उपलब्ध पूंजी स्रोतों के उपयुक्त उपयोग के लिए भी सुझाव दिए। उन्होंने जमींदारों और राजाओं को देश के एकमात्र संपन्न व्यक्ति होने के नाते देश के विकासशील बड़े पैमाने के उद्योगों को वित्तीय सहायता देने के लिए आगे आने का परामर्श दिया।[100] उन्होंने लोगों से अपने गुप्त संचयों को बाहर निकालने का अनुरोध किया।[101] उन्होंने आधुनिक बैंकों, बीमा कंपनियों आदि के माध्यम से उत्तम साख संगठन की स्थापना की वकालत की जिसमें धन के छोटे छोटे, बिखरे हुए निर्जीव कणों को निस्सीम विस्तार के योग्य सुनियोजित तथा सजीव पूंजी में परिवर्तित किया जाए।[10] उन्होंने सर्वाधिक बल पश्चिमी देशों में अत्यंत सफल सिद्ध होने वाली 'मिश्रित पूंजी समुदाय' नामक पूंजीवादी संस्था अपनाने के रूप में पारस्परिक विश्वास की प्रवृत्ति के प्रसार पर तथा वैयक्तिक प्रयासों के संयोजन पर दिया।[103] उन्होंने इस संबंध में दूसरे अभीष्ट उपायों (अगले अध्याय में विवेचित) के रूप में राज्य द्वारा सहायता और प्रोत्साहन पर विशेष बल दिया।

IV तकनीकी शिक्षा

औद्योगिक विकास की दिशा में उल्लेखनीय बाधक तत्वों में प्रमुख था, भारत में पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित तकनीशियनों की कमी। फलतः समीक्षाधीन अवधि में राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा बार बार दुहराई गई महत्वपूर्ण मांगों में एक विशेष मांग थी, देश भर में तकनीकी शिक्षा और ज्ञान के प्रसार के लिए तकनीकी स्कूलों, कालेजों और संस्थाओं की स्थापना।[104] प्रशिक्षित तकनीकी कर्मचारियों की चालू मांग अधिकांशतः उच्च वेतनभोगी विदेशी तकनीशियनों के आयात द्वारा ही पूरी की जाती है। इस प्रकार यह निश्चित दृष्टिकोण बना कि जब तक भारतीयों के अपने ही जनसमुदाय को उत्पादन और व्यापार के प्रत्येक विभाग को सुनियोजित करने, व्यवस्थित करने तथा निपुणता और सस्ती घरेलू कुशलता के साथ संचालित करने की दिशा में प्रशिक्षित नहीं किया जाता तब तक बड़े पैमाने के उद्योग देश में कभी जड़ नहीं जमा सकते।[10] भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1887 में अपने तृतीय अधिवेशन में तकनीकी शिक्षा के मामले को उठाया और मांग की कि सरकार को जनता की दरिद्रता को नजर में रखते हुए तकनीकी शिक्षा पद्धति के समुचित विकास की ओर ध्यान देना चाहिए।[106] अपने अगले अधिवेशन में 1888 में कांग्रेस ने अन्यान्य वस्तुओं में सामान्य तकनीकी शिक्षा पद्धति लागू करने के प्रारंभिक कदम के रूप में देश की औद्यो-

गिक स्थिति की जाच के लिए एक मिलेजुले आयोग की नियुक्ति का आग्रह किया।[107] 1891, 1892 और 1893 मे उसने अपना अनुरोध दोहराया।[108] 1894 मे उसने अत्यत प्रभावशाली ढग स तकनीकी स्कूलो और कालेजो की स्थापना के औचित्य का प्रतिपादन किया।[109] काग्रेस ने तदुपरात प्राय हर वष अपनी इस माग का दोहराया। 1904 मे उसने देश मे कम मे कम एक पूणत उपस्कृत केंद्रीय पालीटैक्निक सस्था की और विभिन्न प्राता म छोटे वडे स्कूलो और कालेजो की स्थापना की वकालत की।[110] इस सबध म यहा यह उल्लेखनीय है कि हाल ही मे आविष्कृत तकनीकी शिक्षा पद्धति को आशिक रूप मे यूरोप महाद्वीप म और विशेष रूप मे जमनी, अमरीका और जापान मे वडे पैमाने के उद्योगो की उन्नति मे उपलब्ध उल्लेखनीय तथा स्पष्ट सफलता से भी भारत मे तकनीकी शिक्षा पद्धति की माग को प्रोत्साहन मिला।[111]

भारतीय नेता विश्वस्त थे कि तकनीकी सवग के बारे मे आधुनिक उद्योग की माग की पूर्ति की दिशा मे तब तक अग्रगति नही हो सकती जब तक कि सरकार स्वय इस दिशा मे उपक्रम न करे और देश मे तकनीकी शिक्षा के प्रसार का बोझा अपने कधे पर न ले।[112] कुछ एक नेताओ ने स्थानीय मडलो तथा नगरपालिकाओ से अपने अपने क्षेत्रा म तकनीकी स्कूलो और कालेजो की स्थापना के लिए अपनी धनराशि के कुछ भाग को समर्पित करने का प्रस्ताव किया।[113] इस प्रकार उनका विचार था कि धन के अभाव के कारण तकनीकी शिक्षा को कमजोर नही होने देना चाहिए। यद्यपि वे सामान्यत मित व्ययी प्रवत्ति के थे परतु इस विषय मे उन्होने सरकार को इस क्षेत्र मे आवश्यक धनराशि वह कितनी ही बडी क्या न हो, व्यय करने का परमश दिया।[114] उनके अनुसार भारतीय युवको द्वारा तकनीकी शिक्षा के प्रति रुचि और उत्साह के अभाव का प्रमुख कारण देश के औद्योगिक क्षेत्र मे पिछडे होने के कारण इस क्षेत्र म रोजगार के अवसरो का अभाव था।[115] अतएव सरकार से अनुरोध किया गया कि वह तकनीकी शिक्षा पानेवालो के लिए काय जुटाए और विशेषत भारतीयो को सावजनिक निमाण जगल, तार विभागो और रेलवे मे ऊचे पदो पर प्रतिष्ठित करे।[116] सरकार से वहुत अपेक्षा की गई थी और आशा के विपरीत सरकार का वास्तविक योगदान देश की आवश्यकताओ के अनुरूप तकनीकी शिक्षा के विकास मे वर्षो तक निराशाजनक रहा, अत भारतीयो ने आगामी वर्षों मे सरकार की तीव्र भर्त्सना की।[117]

भारतीय नेताओ ने जहा एक ओर देश मे तकनीकी शिक्षा के प्रसार को सरकार का दायित्व बतलाया, वहा दूसरी ओर भारतीय जनता के खुद अपने परो पर खडे होने की आवश्यकता पर भी बल दिया। उन्होने सामान्य रूप से सारी जनता स और विशेष रूप से शिक्षित वग लखपतियो, जमीदारो और रियासतो के शासको से तकनीकी स्कूलो और कालेजो के खोलने के लिए तथा भारतीय विद्यार्थियो को विदेशो मे पढने के लिए सहाय ताथ छात्रवत्तियो के निमित्त उदारतापूवक धन प्रदान करने का अनुरोध किया।[118] 1876 म कलकत्ता की इडिया लीग न एक तकनीकी सस्था की स्थापना के रूप म अपनी ही समा धना से तकनीकी शिक्षा प्रसार के आदोलन को गति देने का प्रयत्न किया।[119] 1899 म जब एन० टाटा ने देश म उच्च वज्ञानिक शिक्षा और अनुसधान की उन्नति के लिए 30

लाख रुपयों का दान दिया तो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने आगे बढ़कर उनके इस देश भक्तिपूर्ण तथा उदार उपहार के प्रति कृतज्ञतापूर्ण प्रशंसा की अभिव्यक्ति के लिए धन्यवाद प्रस्ताव पारित किया।[10] 1904 में कलकत्ता में के० सी० बैनर्जी, सुरेंद्रनाथ बैनर्जी, ए० एम० बोस तथा अन्य गण्यमान्य नेताओं के नेतृत्व में वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा की प्रगति के लिए एक संस्था का संगठन आत्मसहायता की दिशा में कदाचित एक सर्वाधिक सफल उदाहरण था। संस्था ने छात्रों को विदेशों में शिक्षा प्राप्ति के लिए भेजने, भारतीय विशेषज्ञों को विदेशों से भारत लौटने में सहायता देने, नए उद्योगों को प्रारंभ करने तथा कलकत्ता की सेंट्रल लाइब्रेरी को भवन बनाने और व्यवस्थित ढंग से चलाने के लिए एक लाख रुपया प्रतिवर्ष उगाहने का निश्चय किया। संस्था का वार्षिक न्यूनतम सदस्यता शुल्क चार आना निर्धारित किया गया।[11]

भारतीय नेताओं का ध्यान नई खुली तकनीकी संस्थाओं में दी जाने वाली तकनीकी शिक्षा की प्रकृति की ओर भी गया। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक भारत में केवल चार इंजीनियरी कालेज थे जिनसे निकलनेवाले स्नातक विभिन्न सरकारी विभागों में खप जाते थे। कलकत्ता, मद्रास, बंबई और लाहौर के कला विद्यालयों में भी औद्योगिक अनुभाग थे। परंतु ये अनुभाग रुई बुनने, मिट्टी के बरतन बनाने, नक्काशी करने, मीनाकारी करने, लकड़ी पर खुदाई करने, सोने चांदी तथा अन्य धातुओं के गहने बनाने के काम जैसे शिल्पों में ही प्रशिक्षण देने तक सीमित थे। 1902 में देश में औद्योगिक संस्थानों की संख्या बढ़कर 123 हो गई परंतु इन सब संस्थानों में सामान्यतया प्रशिक्षण के विषय थे तक्षण कला, धातु कला, चर्म कला तथा सिलाई कला।[12] राष्ट्रवादी नेताओं ने इसे बहुत बुरा माना और सरकार की तकनीकी शिक्षा को अधिकांशतः तक्षक, लोहार और सुनार जैसे हस्त कलाकारों की कार्य शैली में सुधार तक सीमित रखने की नीति की घोर भर्त्सना की।[13] उन्होंने स्पष्ट निर्देश किया कि भारत के पास प्रशिक्षित हस्तशिल्पियों का पहले से ही बड़ा भंडार है। देश को तो इस समय आधुनिक इंजीनियरों की आवश्यकता है। तकनीकी शिक्षा का लक्ष्य नष्टप्राय अथवा विनाशोन्मुख उद्योगों को पुनर्जीवित करना नहीं, प्रत्युत बाहर से मंगाई जानेवाली सामग्री का उत्पादन करने वाले बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना करना है।[14] अतः इस शिक्षा में भारतीयों को आधुनिक मशीनों और मशीनी औजारों की चरम विकसित तकनीकों की सैद्धांतिक और व्यावहारिक जानकारी से पूर्ण परिचित कराने और उन्हें नए उद्योगों के संचालन में सहायता देने की सामर्थ्य होनी चाहिए।[15] यही कारण था कि भारतीयों ने जहां तकनीकी सबंध में विदेशी शिक्षण और प्रशिक्षण पर अत्यधिक बल दिया[16] वहां देश में अत्युन्नत तकनीकी शिक्षा देनेवाले ऊंचे स्तर के संस्थान खोलने का भी दृढ़ता से समर्थन किया।[17]

V उद्यम की भावना

कुछ-एक भारतीय नेताओं के अनुसार देश के औद्योगिक पिछड़ेपन का कारण देशवासियों में उपक्रम और उद्यम संबंधी अपेक्षित भावना का अभाव था।[18] 1825 में जी०वी० जोशी ने अत्यंत दुख से कहा कि भारतीयों में व्यक्तिगत, स्वतंत्र तथा आत्म-

…पूर्ण उपक्रम के लिए आवश्यक कमशक्ति का अभाव शोचनीय है।[129] कुछ एवं अन्य राष्ट्रवादी नेताओं के अनुसार भारतीयो म निम्नलिखित अन्य गुणो की कमी थी पारस्परिक सहयोग तथा विश्वास की भावना, जाच-पडताल की प्रवत्ति, विचारो और काय व्यापार मे स्वतत्रता, साहस तथा आत्मविश्वास, सकल्प, साहस तथा दृढ निश्चय,[130] अतिरिक्त विरोध का मुकाबला करने और उस पर विजय पाने की तत्परता।[131] नेताओ की दष्टि मे इन गुणो के अभाव का कारण राष्ट्रीय चरित्र की परपरागत दुबलता नही थी अपितु देश म प्रचलित सामाजिक प्रथाए, रीति रिवाज तथा परपराए ही प्रमुख रूप से सामान्यत भारत के औद्योगिक पिछडेपन के लिए और विशेषत भारतीयो मे उद्यमी भावना के अभाव के लिए उत्तरदायी थी। भारत की जाति प्रथा एक ओर श्रम और पूजी की गतिशीलता मे बाधक थी और दूसरी ओर उच्चकुलीन प्रतिभाशाली नवयुवको के तकनीक और उद्योग क्षेत्र म जाने के माग मे एक बाधा थी, इसके फलस्वरूप उच्च प्रतिभा उच्च कौशल से विच्छिन्न हो गई थी।[13] विदेश यात्रा पर प्रतिबधो ने भारतीय व्यापार के विदेशो मे प्रसार को सकुचित कर दिया था।[133] भारतीय धार्मिक आदश एक ओर सतोष का प्रचार करते थे और दूसरी ओर धन के प्रति उत्कट प्रवत्ति की निंदा करते थे। इसके फलस्वरूप भारतीयो की भौतिक सफलता की महत्वाकाक्षा दब गई थी तथा सामाजिक सपत्ति म वद्धि का महत्वपूण प्रोत्साहन ठडा पड गया था।[134] भारत म पूरी तरह निराशावाद व्याप्त था। यहा यह धारणा प्रचलित थी कि मानव जीवन का दुर्भाग्य पूवनिर्दिष्ट है तथा मानव की दशा को बेहतर बनाने के सभी प्रयत्नो की असफलता निश्चित है।[135] भारतीय रीति रिवाजो तथा आचार-व्यवहारो के अनुसार भारतीयो का निवत्ति अकमण्यता, विश्राति, उदासीनता तथा निरुद्योगिता का जीवन ही ब्रह्मानद की प्राप्ति के लिए आदश जीवन था।[136] भारतीय न प्राप्त होने वाली वस्तु की निरतर खोज म विचारो व स्वप्नो की दुनिया मे खोए रहते थे।[137] परतु आधुनिक औद्योगिक सभ्यता पूणत व्यावहारिक थी।[138] अतिम, भारतीयो की व्यक्तिगत आध्यात्मिक मोक्ष की धारणा व जातपात की भावना उस समय भारत म सामाजिक चेतना के अभाव का कारण बनी।[139]

जस्टिस रानाडे के नेतृत्व मे भारतीय समाजसुधारको ने भारत मे आधुनिक उद्योग तथा व्यापार के स्वस्थ विकास के लिए भारतीय सामाजिक रूढियो मे मूलभूत परिवतन का प्रचार किया।[140] रानाडे का कथन था सामाजिक व्यवस्था के दूषित होने पर उत्तम आर्थिक पद्धति के प्रवतन की आशा नही की जा सकती।[141] अत सुधारको ने लोगो से रीति रिवाजो तथा परपराओ के अत्यत शक्तिशाली प्रभाव से मुक्ति पाने तथा पश्चिम की नई प्रवत्ति को अपनाने और नए दष्टिकोण, पूजीवादी प्रवत्ति को मन म स्थान देने का अनुरोध किया।[14] उन्होने निम्नलिखित आधुनिक धारणाओ को प्रशसनीय और स्पृहणीय घोषित किया प्रगति तथा विज्ञान, विचार और कम की स्वतत्रता, परिवतन तथा साहसिक कार्यों म रुचि मन की आशावादिता तथा व्यावहारिकता जीवन स्तर म सुधार की इच्छा, आदि आदि।[143] भारतीय नेताओ म अपेक्षाकृत पुरातनपथी नेता कुछ एक सामाजिक सुधारो की आवश्यकता को तो अनुभव करते थे परतु हिंदुओ के आचार-

चालू कर दिया।[147] रानाडे ने पूना म स्थापित 'काटन ऍड सिल्क स्पिनिंग ऍड वीविंग फैक्टरी', 'मैटल मैनुफक्चरिंग फक्टरी', 'दि पूना मर्केंटाइल बक', 'दि पूना डाइग कम्पनी', 'दी रिए पेपर मिल' आदि के प्रवतन और विकास म महत्वपूण भूमिका निभाई।[148] गाखले के अनुसार 'पिछले 20 वर्षों मे पूना मे उदित औद्योगिक और व्यापारिक सस्थानो मे अधिकाश उनकी प्रेरणा, प्रात्साहन, परामश तथा सहायता के लिए उनक आभारी है।[149] भारत की कलाआ और उद्योगो की उन्नति के लिए नवोत्पन्न उत्साह स सपन्न यत्नशील व्यक्तियो मे के०टी० तैलग और फीरोजशाह मेहता ने तो 1870 म बबई मे एक साबुन का कारखाना ही खोल दिया।[150] वास्तव मे फीरोजशाह मेहता का भारत के मिल उद्योग से घनिष्ठ सबध था।[151] तिलक ने भी थोडे समय के लिए ही सही, 1891 मे अपने दो मित्रो की साझेदारी मे निजाम के अधीनस्थ पदेश लातूर मे रुई मे बिनौला निकालने वाला कारखाना चालू करन के रूप म औद्योगिक क्षेत्र म अपन उत्साह का परिचय दिया।[15] डी०ई० वाचा बडे पैमाने की फूलती-फलती मोरारजी गाकुलदास और शोलापुर मिलो के प्रबधक अभिकर्ता थे। वे बहुत वर्षो तक बबई के मिलमालिक सघ की प्रबध समिति के सदस्य रहे।[153] 19वी शताब्दी के प्रमुख काग्रेसी नेता आर०एन० मधोलकर बरार मे आधुनिक उद्योग और व्यापार को बढावा देन वालो म एक थे। 1881 82 मे उन्होने अपने कुछ मित्रो के सहयोग से बरार के प्रथम मिश्रित पूजी समुदाय बरार टेडिंग कपनी की स्थापना की तथा उसके सचिव के रूप म कार्य किया। बाद म 1885 म उन्हान अपने मित्रो के सहयोग से बरार मे प्रथम कपडा बुनने की मिल की स्थापना की। इसके अतिरिक्त एक तेल निकालने की मिल और रुई बिनने तथा सपीडन के अनेक कारखानो की स्थापना का पयाप्त श्रेय भी इन्ही का प्राप्त है।[154] काग्रेस क एक अन्य बडे नेता मदनमोहन मालवीय ने 1881 मे इलाहबाद मे 'दसी तिजारत कपनी' की स्थापना मे सहायता दी और कालातर मे प्रयाग मे चीनी मिल की स्थापना म महत्व पूण भूमिका निभाई।[155] विस्तृत व्यापारो से सबधित लाला लाजपतराय एक अन्य प्रमुख राष्ट्रवादी नेता थे। उन्होने एक प्रारभिक भारतीय बक पजाब नेशनल बक के निदेशक की हैसियत से अनेक रुई मिलो और रुई प्रेसो की स्थापना मे सहायता की। वे कई निदशक मडलो के सदस्य थे।[156] बगाल के राष्ट्रवादी नता औद्योगिक क्षेत्र मे इतन सक्रिय नही थे जितन पश्चिमी और उत्तरी भारत के नेता थे। किंतु वहा भी ए० एम० बोस, दुर्गामोहनदास और भुवनमोहन दास जैसे अन्य दो महानुभाव व्यक्तियो के साथ मिल कर 1880 मे 'बगाल बकिंग निगम व्यावसायिक सघ की स्थापना की।[15] इसक अतिरिक्त सुरेंद्रनाथ बनर्जी, ए०एम० बोस तथा नरेंद्रनाथ सेन ने बगाल मे अपन वाणिज्यपरक प्रयासो स बगाल राष्ट्रीय वाणिज्य मडल के अवतनिक सदस्य बनत हुए नाममात्र रूप से ही सही, अपन को उससे सबधित रखा।[158]

पूजी के आतरिक साधना और साहसवृत्ति का उपयाग करत हुए देश के उद्योगीकरण की अदम्य राष्ट्रीय आकाक्षा का एक रोचक उदाहरण है 'पैसा निधि'। रानीगज (बगाल) के तारापद मुकर्जी न 1865 म इडियन मिरर मे इस पसा निधि के उद्देश्य, निधन और मध्यवित्तीय लोगो की बचत का उपयाग तथा नए औद्योगिक प्रतिष्ठानो को वित्तीय

अनुदान को स्पष्ट किया है। इस योजना को कुछ तत्कालीन नेताओ का समर्थन भी मिला। 1873 मे बबई के जी० वी० जोशी ने 'जनता पाई निधि' चालू करने का प्रयत्न किया परतु वह केवल 150 रुपये उगाहने मे ही सफल हो सके। 1899 मे इस विचार से एक युवक अध्यापक ए० डी० काले इतना अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने अपनी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया तथा 'पैसा निधि' के लिए धन सग्रह का काम प्रारभ कर दिया। इस निधि म प्रत्येक व्यक्ति से प्रति वर्ष केवल एक पैसा देने की अपेक्षा की जाती थी और यह सचित निधि आधुनिक उद्योग को प्रतिष्ठित करने और उसे लोकप्रिय बनाने मे प्रयुक्त होती थी। साहसिक कार्य मे काले को तिलक तथा अन्य महाराष्ट्रीय नेताओ से प्रोत्साहन तथा समर्थन मिला। काले के अनुराग और श्रम को शीघ्र ही सफलता मिली और 1908 मे इस 'पैसा निधि' की सहायता से महाराष्ट्र के तिलगाना प्रदेश मे शीशे का कारखाना (प्रशिक्षण केंद्र सहित) स्थापित किया गया।[159]

भारतीय नेताओ ने औद्योगिक सघ बनाए औद्योगिक सम्मेलनो का आयोजन किया तथा औद्योगिक प्रदर्शनिया लगाई। इन सबका उद्देश्य था औद्योगिकता के सिद्धात को आगे बढाना, औद्योगिक और वाणिज्य सबधी रुचि जागृत करना, उद्यम की भावना को उभारना, विश्वासपूर्ण तथा आशाजनक औद्योगिक दृष्टिकोण उत्पन्न करना, विकसित औद्योगिक तकनीक का जनता म प्रसार करना, विभिन्न उद्योगो के अवसर और अवकाश के सबध मे उपयुक्त जानकारी देना, आदि।[160] इस दिशा मे पथप्रदर्शक कार्य रानाडे महोदय का है जो 1890 मे बने पश्चिमी भारत के औद्योगिक सघ के तथा उसी वर्ष पूना म प्रथम बार आयोजित होने वाले औद्योगिक सम्मेलन के प्रधान सयोजक थे। इससे पूर्व वे उस नगर मे एक औद्योगिक प्रदर्शनी का आयोजन भी कर चुके थे।[161] उनको इन सभी गतिविधियो मे जी० वी० जोशी तथा महाराष्ट्र के एम० बी० नामजोशी आदि अन्य नेताओ ने भी सहायता की। 1890 से आगे के कई वर्षों तक प्रतिवर्ष औद्योगिक सम्मेलन आयोजित होते रहे तथा वहा भारतीय औद्योगिक और आर्थिक समस्याओ पर विधि पूर्वक तथा क्रमानुसार विचारो की अभिव्यक्ति के रूप म इस दिशा म बहुत बडी सेवा की। वस्तुत रानाडे तथा जोशी के भारतीय आर्थिक समस्याओ पर लिखे बहुत सारे सुप्रसिद्ध निबध इन सम्मेलनो मे पढने के लिए लिखे गए परचे ही थे। पूना के अनुसरण म अक्तूबर 1891 म कलकत्ता म भी एक सम्मेलन हुआ।[162] परतु दुर्भाग्यवश यह सम्मेलन अपना विशेष प्रभाव नही छोड पाया। निश्चय ही कलकत्ता को औद्योगिक प्रदर्शनियो के आयोजन मे अधिक सफलता मिली। इस दिशा मे प्रथम साधारण प्रयास जे० चौधरी तथा अन्य लोगो द्वारा कलकत्ता के काग्रेस अधिवेशन म 1890 म एक औद्योगिक प्रदर्शनी का आयोजन था।[163] परतु यह प्रयास अकेला ही सिद्ध हुआ, परवर्ती अधिवेशनो म यह परपरा का रूप धारण न कर सका। 1900 म काग्रेस ने अपने लाहौर के 16वें अधिवेशन मे विधिवत इस मामले को उठाया और उसने औद्योगिक समस्याओ पर विचार के लिए कम से कम आधा दिन लगाने का निर्णय किया। उसने देश की ... विधि की प्रगति मे काग्रेस के सभावित सहयोग के रूप और दिशाओ पर विचार के लिए एक औद्योगिक समिति का गठन भी किया।[164] इस समिति के विचार ...

फलस्वरूप ही 1901 मे कलकत्ता मे काग्रेस के अग के रूप मे औद्योगिक प्रदर्शनी लगाई गई[165] और उसके उपरात यह कागेस अधिवेशन की एक अविभाज्य परपरा वन गई।

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ का यह भी मत था कि द्रुत उद्योगीकरण के भारतीय प्रत्यनो के माग मे एक महत्वपूर्ण बाधा सरकार की उन्मुक्त व्यापार की नीति थी। यह नीति देश के प्रारभिक तथा अविकसित उद्योगो को, पश्चिम के ऊचे स्तर पर सुनियाजित तथा सुविकसित उद्यागो के साथ, अपरिपक्व और असमान होने के कारण अनुचित प्रतियोगिता के लिए बाध्य करती थी। भारतीयो के इस दृष्टिकोण का तथा भारत सरकार की उन्मुक्त व्यापार नीति को लागू करने के विभिन्न उपाया के विरुद्ध उनके सघष का इस पुस्तक के अगले अध्याया म विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

सदभ

1 भारतीय हस्तकलाआ के विनाश का विवरण भारतीय अथशास्त्र की अनक पुस्तको म उपलब्ध है सरल निर्देश के लिए देखिए डी० आर० गाडगिल दि इडस्ट्रियल इवोल्यूशन आफ इडिया इन रीसट टाइम्स (कलकत्ता 1942 म चतुथ सस्करण का पुन मुद्रण) अध्याय III और XII आर० चौधरी दि इवोल्यूशन आफ इडियन इडस्ट्रीज' (कलकत्ता 1939) अध्याय I तथा बी० डी० बसु 'दि रुइन आफ इडियन ट्रेडस इडस्ट्रीज (कलकत्ता 1935)

2 वेरा अनस्टे दि इकानामिक डवलपमट आफ इडिया (लदन ततीय सस्करण), प० 5

3 गाडगिल पूर्वोन्धृत, अध्याय III और XII पृ० XXII अनस्टे पूर्वोदधृत, प० 5 207

4 1901 के कलकत्ता अधिवेशन म इडियन नेशनल काग्रेस ने घोषित किया कि भारत की घोर दरिद्रता क प्रमुख कारणा म एक था स्वदेशी शिल्प और उद्योग का ह्रास (प्रस्ताव III) जाशी का 1885 म कथन था तेजी से बढ़ता हुआ विनाश जिसे हम अपने विभिन्न हस्तशिल्प उद्यागो का सहसा पूर्णक्षय कह सकते हैं वस्तुओ की शोचनीय स्थिति का मूल कारण है (पूर्वोन्धत प० 738) 1896 की काग्रेस को सबोधित करते हुए आर० एन० मधोलकर ने सकेत किया हमारी घनघोर और व्यापक दरिद्रता हमारे प्राचीन कला शिल्पा तथा उद्योगो के ह्रास, लगभग पूर्ण विनाश का ही परिणाम है (रिप०आई०एन० सी० 1896 पृ० 157) भोलानाथ चद्र ने 1876 म लिखा था नवीन प्रचलित शिल्पा और उद्योगा म किए गए सुधारो की अपेक्षा पुराने शिल्पा उद्योगा पर किए गए प्रहार अधिक विचारणीय हैं वस्तुत यह तो हमारे राष्ट्र के लिए करोडो गवाकर हजारा पाने के समान एक क्षुद्र सात्वना है (एम० एम० खड V, पृ० 5) उस युग के राष्ट्रीय भाषणा और लेखो म इस प्रकार के असख्य निर्देश उपलब्ध हैं उदाहरणार्थ देखिए, एजुकेशन गजट 2 मई (आर० एन० पी० बग 10 मई 1883) जोशी पूर्वोद्धृत पृ 637 753 778-79 802-4 चारु दत्त 9 फरवरी (आर० एन० पी० बग 14 फरवरी 1885) वाचा रिप० आई०एन०सी० 1886 प० 64 बन्गवान सजीवनी 29 नवबर (वही 10 दिस० 1887) शख कादिर बख्श रिप० आई एन० सी० 1887 पृ० 142 पजाबी अखबार 21 अगस्त (आर० एन० पी 31 अगस्त 1889) खैर मेश 13 अक्तूबर (वही 19 अक्तूबर 1889) राम पार्वटी, प० 85 निजामुलमुल्क 16 जनवरी (आर० एन० पी० एन० 20 जनवरी 1897) भारत जीवन 20 नवबर (वही 1 दिसबर 1897) नदा पूर्वोक्त स्थल, पृ० 122 दत्त डा०

पी० ए, प० 489 मनात चितामणि, 15 मार्च (आर० एन० पी० एम०, 15 मार्च 1900), हिंदुस्तान, 13 अप्रल (आर० एन० पी० एन, 17 अप्रल 1900) स्वदशमित्रन, 28 अप्रल (आर० एन० पी० एम० 20 अप्रल 1900) केसरी, 8 मई (आर० एन० पी० वब 12 मई 1900) मराठा 11 नवबर 1900 मद्रास स्टडड, 21 जनवरी (आर० एन० पी० एम०, 25 जनवरी 1902), आई० एन० सी० 1902 और 1904 के प्रस्ताव III और III एन० के० रामास्वामी अय्यर रिप० आई० एन० सी०1901, पृ० 137 एम० के० पटेल रिप० आई० एन० सी—1902 पृ० 77 जी० सी० अय्यर ई ए, प० 218 249 गोखले स्पीचेज प० 52 दत्त ई० एच० II पृ० 345 और सी० पी० ए०, पृ० 469 बगाली 12 मार्च 1902

5 उदाहरण के रूप म देखिए ए० बी० पी०, 5 अगस्त 1872 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड V (1876) प० 5 जोशी पूर्वोद्धत, प० 227 780 गोखले स्पीचज, पृ० 52 आर० सी० दत्त ने अपनी दो खडा वाली 'इकानामिक हिस्टरी आफ इडिया पुस्तक' म तथा अनक सम कालीन पत्रो म प्रकाशित अपने लेखों मे इस प्रक्रिया का बडा गहरा और सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया है पी० सी० राय न भी अपनी पुस्तक दि पावर्टी प्राब्लम्स आफ इडिया म इस प्रक्रिया का विस्तृत विवेचन किया है

6 दत्त स्पीचेज, II पृ० 106 नदी पूर्वोक्त स्थल, 122 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 691 2 जी० मी० अय्यर ई ए अध्याय XVI और XVII

7 दत्त ई० एच० I, पृ० 256

8 भारत से इग्लड को कपास के गट्ठो के निर्यात-आकडा के लिए देखिए दत्त ई० एच० I पृ० 295, ई० एच० II पृ० 109 भारत मे कपडो के आयात आकडा के लिए देखिए दत्त ई० एच० I, पृ० 257, ई० एच० II, पृ० 108 तथा देखिए, एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 692 3

9 रानाडे एसेज प० 185

10 दत्त इग्लड ऐंड इडिया' पृ० 128

11 दत्त ई० एच० I प० VII VIII और देखिए के० मी० ए० चौधरी रिप० आई० एन० सी० 1886 प० 64 जोशी पूर्वोद्धत प० 785 रानाडे एसेज, प० 185 राय पावर्टी प० 93 मधोलकर रिप० आई० एन० सी०—1898 प० 121 दत्त ई० एच० I प० VIII गोखले स्पीचज प० 52

12 रानाड एसेज प० 27 जोशी पूर्वोद्धत, प 784-5 दत्त ई० एच० II, प० 103 345 स्पीचेज II, प० 81 गोखले स्पीचेज प० 52

13 आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी०—1890 प० 47 जोशी पूर्वोद्धत प० 785 835 दत्त 'इग्लड ऐंड इडिया प० 129 ई० एच० II प० 345 बगाली 12 मार्च 1902

14 रानाडे एसेज प० 191, वाचा सी० पी० ए० पृ० 624 दत्त ई एच I प० VIII ई एच० II प० VIII एम० के० पटेल रिप० आई० एन० सी० 1902, प० 77 दत्त आदि के समान रानाडे ने भी यह अभिस्वीकार नहीं किया कि भारत प्राचीनतम काल से पूर्ण रूप से तथा एकातत कृषि प्रधान देश रहा है उन्होंने यह अवश्य कहा कि ब्रिटिश राज्य ने स्थिति की गभी रता को और अधिक भयकर बनाया है—(एसेज प० 183) साथ ही देखिए ट्रिब्यून (लाहौर) 8 जुलाई (आई० एस० वी० ओ० आई०, 2 अगस्त, 1891)

15 दत्त ने सगणना की कि 80 प्रतिशत भारतीय जनता कृषि पर निर्भर है (ई० एच० I पृ० IX)

जोशी का अनुमान था कि लगभग 86 प्रतिशत औद्योगिक जनता भूमि से सबधित थी (पूर्वोद्धत, प० 784) और देखिए वाचा सी० पी० ए०, पृ० 624 एम० के० पटेल रिप० आई० एन० सी० 1902, पृ० 77

16 रानाडे एसेज, प० 26, 183 जोशी पूर्वोद्धत, प० 360 मधोलकर 'इडियन पालिटिक्स', पृ० 44, केसरी, 11 नवबर (आर० एन० पी० बब, 15 नवबर 1902)

17 जोशी पूर्वोद्धत प० 849 50, 868, मधोलकर 'इडियन पालिटिक्स', पृ० 45

18 दत्त स्पीचेज I पृ०24 तथा देखिए मराठा, 19 जून, 1881, 12 फरवरी 1882, सोमप्रकाश, 6 फरवरी (आर० एन० पी० बग, 11 फरवरी 1882) ए०बी०पी०, 22 मई 1884 भारत मिहिर 17 जून (आर० एन०पी० बग 28 जून 1884) स्वदेश मित्रन, 5 माच (आर० एन० पा० एन० माच 1885) रानाडे एसेज प० 27 राय पावर्टी, प० 97 केसरी 11 नवबर (आर० एन० पा० बब 17 नवबर 1902) एस० ए० बनर्जी, सी० पी० ए०, पृ० 69

19 1880 के अकाल आयोग का प्रतिवेदन भाग II कडिका I इस अवतरण को अर्थो के अतिरिक्त रानाड ने उद्धत किया था, एसेज, प० 121 जोशी पूर्वोद्धत, प० 642 मधालकर 'इडियन पालिटिक्स प० 44 रिप० आई० एन० सी०—1899, पृ० 88 9

20 बी० सी० पाल रिप० आई० एन० सी०—1888 प० 159 मधोलकर 'इडियन पालिटिक्स', प० 47

21 रानाडे एसेज पृ० 66 जोशी पूर्वोद्धत प० 871 874 ए० बी० पी० 2 अगस्त 1901 मधोलकर 'इण्डियन पालिटिक्स प० 45 जी० सी० अय्यर, ई ए प० 218

22 मराठा 23 जनवरी 1881 जोशी पूर्वोद्धत प० 700-2 804 840-52

23 जोशी पूर्वोद्धत प० 702 इस विषय म उसके प्रश्न को 1880 के अकाल आयोग के प्रतिवेदन म प० 853 पर देखिए

24 वही पृ० 350 658

25 जोशी पूर्वोद्धत प० 658 तथा जी० सी० अय्यर ई ए अध्याय XII

26 रानाडे एसेज प० 27

27 रानाडे एसेज पृ० 90 तथा वही, प० 183 185 हिंदू—16 जनवरी 1883 जोशी पूर्वोद्धत प० 675 76 गोखले स्पीचज प० 52 'इडियन पीपल', 27 फरवरी 1903 दत्त स्पीचेज II, प० 42 3 ई० एच० प० VIII, 276 ई० एच० II पृ० 114 129 518 जी० एस० अय्यर ई ए प० 116-7 123 5 1873 म भोलानाथ चद्र ने राजनीतिक दासता के अतिरिक्त औद्योगिक क्षत्र म भी दासता के गड्ढ मे धकेलने वाली नीति की निंदा की (एम० एम० खड II पृ० 110)

28 एम० एम० बनर्जी सी० पी० ए०, प० 694

29 दत्त ई० एच० I पृ० VIII

30 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड V प० 13 एस० एन० बैनर्जी रिप० आई०एन० सी०—1896 पृ० 136 तथा सी०पी० ए० प० 691 694 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 750 दत्त ई० एच० I प० VIII और ई० एच० II प० VIII सी० वाई० चितामणि 'इकानामिक आसपेक्ट्स आफ ब्रिटिश रूल इन इडिया', एच० आर० जनवरी 1902, प० 32 जी० एस० अय्यर, ई ए, पृ० 125 240

31 दत्त ई०एच० I पृ० VIII 261 ई०एच० II पृ० VIII IX पिछली एक डेढ़ शताब्दी म ब्रिटिश शासकों की वाणिज्य नीति का आधार भारतीय उत्पादकों के हितों की अपेक्षा ब्रिटिश

उत्पादकों के हित की रक्षा ही रहा है' तथा वही प० 120

32 भालानाथ चद्र, एम०एम० खड V, पृ० 14 15 हिंदू 16 जून 1883 समय 2 दिसबर (आर० एन० पी० बग 10 दिसबर 1887) दत्त, ई० एच० II पृ० 518 स्पीचेज II, प० 108, 113 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 125 ऊपर 27वी पादटिप्पणी मे उद्धत नेतागण

33 भारत म अपने शासनकाल क प्रारभिक दिन से ही इग्लड के उत्पादको और शिल्पकर्मिया के लाभ क निए इस देश का कच्चे माल के उत्पादन की बस्ता के रूप मे बदलना ब्रिटिश शासको की एक निश्चित नीति रही है (एम० एन० बनर्जी सा० पी० ए०, प० 691) तथा देखिए, भालानाथ चद्र, एम० एम० खड III प० 99 100 ऊपर 27वी पादटिप्पणी म उद्धत नेतागण जी० एस० अय्यर, रिप० आई० एन० सा—1902 पृ० 72 दत्त ई०एच० I पृ० VIII तथा ई०एच० II प० 129 केसरी 11 अप्रल (आर० एन० पी० बब 15 अप्रल 1905) फलत किसी समय ब्रिटिश सरकार की भारतीय कृषि के विकास पर अत्यधिक बल देने की प्रवति की ऊपर लिखे नेताओ उदाहरणाथ केसरी भोलानाथ चद्र तथा जी० एस० अय्यर द्वारा आलाचना की गई थी

34 दत्त ई० एच० II प० 518 स्पीचेज II प० 42.

35 वाचा सी० पी०ए० पृ० 622 एस० एन० बनर्जी सी०पी०ए० प० 694 डान फरवरी 30 1903 प० 207 स्वदेश मित्रन 13 अगस्त (आर० एन० पी० एम० 15 अगस्त 1903), हितकारी, अक्तूबर (आर०एन०पी० बग नवबर 1903 मधोलकर, रिप०आई०एन०सी० 1904, प० 102

36 मिल हिस्टरी आफ ब्रिटिश इडिया' विल्सन काटीन्यूएशन पुस्तक I अध्याय VII मधोलकर की इन्डियन पालिटिक्स में उद्धत प० 43 पी० मेहता स्पीचेज प० 750 दत्त, ई० एच० I प० 260-3 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 692

37 दत्त ई० एच० I पृ० 45 जी० एस० अय्यर, ई ए पृ० 250 चितामणि एच० आर० जनवरी 1902 प० 32.

38 वाचा सी० पी० ए० प० 623 दत्त ई० एच० I प० 257 ई० एच० II प० VIII स्पीचज II पृ० 42 चितामणि एच० आर० जनवरी 1902 पृ० 32

39 भालानाथ चद्र एम० एम० खड V प० 42 वाचा, रिप० आई० एन० सी० 1894, प० 32 मधोलकर 'इडियन पालिटिक्स, प० 44 वाचा सी० पी० ए० पृ० 625 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 692 3 696 जी० सी० अय्यर ई ए प० 242 चितामणि एच० आर० जनवरी 1902 पृ० 32 एल०एम० घोष० सी०पी०ए०, पृ० 754 दत्त ई०एच० I प० 7 इससे बढकर आर०सी० दत्त न अपनी पुस्तको ई० एच० I अध्याय III XIV XV मे तथा ई० एच० II अध्याय VII VIII IX मे भेदमूलक चुगी दरों के तरीक की और उसक विनाशकारी प्रभाव का खाज की 1812 32 तक भारत के निर्यातका क भारत से इग्लड को निर्यात पर लगाए गए करो के सारणीबद्ध अध्ययन के लिए देखिए, दत्त स्पीचेज II प० 117 1831 मे तालिका रूप मे 117 प्रतिष्ठित भारतीयो द्वारा हस्ताक्षरित एक याचिका परम श्रेष्ठ महाराजा धिराज की प्रिवी कासिल को एक अपील भेजी गई थी जिसमे यह याचना की गई थी कि बगाल के सूती और रेशमी कपड के इग्लड को नि शुल्क अथवा बगाल म खपने वाल ब्रिटिश वस्त्रो पर वसूल किए जाने वाले कपडे की दर पर निर्यात की अनुमति प्रदान की जाए (डी० डी० बसु की पूर्वोद्धत पुस्तक प० 32 3 मं उद्धत)

40 दत्त स्पीचेज, II, प० 80 तथा ई० एच० II प० 123. चितामणि एच० आर०, जनवरी 1902 पृ० 32.

41 दत्त ई० एच० I प० 303-04

42 दत्त ई० एच० I प० VIII 264-7 हितवादा, 30 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग 7 नवबर 1903)

43 कादिर बख्श रिप० आई० एन० सी०—1887 पृ० 142 जोशी, पूर्वोद्धत प० 683 785 6 राय पावर्टी प० 34 मधोलकर इडियन पालिटिक्स प० 44 दत्त ई० एच० I प० VIII एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, प० 694 एम० के० पटल रिप० आइ० एन० सी० 1902 प० 77 मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1904 प० 103 यहा तक कि दत्त सहमत थे भारत क हस्तकला उद्योग इग्लड के भाप और मशीन उद्योग का मुकाबला नही कर सकते (दत्त इग्लड ऐंड इडिया प० 81)

44 रानाडे एसेज प० 183 तथा प० 100

45 डान फरवरी 1903 प० 207 तथा देखिए वाचा सी० पी० ए० प० 623 जोशी पूर्वोद्धत प० 680 683-4 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 694

46 देखिए नीचे अध्याय 6 तथा 14 और ऊपर 39 की पादटिप्पणी

47 देखिए नीचे अध्याय 5

48 हितवादी 30 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग 7 नवबर 1903) जी० एस० अय्यर के अनुसार ब्रिटिश साहसिको न भारत की निधि को खूब लूटा और इस प्रकार अपार भारतीय धन के अत्यधिक सग्रह के फलस्वरूप एक पूजीपति वग अस्तित्व म आ गया इस धन के कारण इस वग की साख बढ गई तथा शक्ति उद्योग और साहस म गतिशीलता आ गई 19वी शताब्दी के प्रारभ तक भारत और आयरलड की लूट पर ब्रिटिश समृद्धि की आधारशिला भली प्रकार से रखी जा चुकी थी (ई० ए० प० 243) तथा देखिए ए० बी० पी० 27 अक्तूबर 1886 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 695 बनर्जी न अपन काग्रेस के भाषण म ब्रुक आदम्स की पुस्तक ला आफ सिविलाइजशन ऐंड डिके से एक अवतरण उद्धत किया जिसे 19वीं शताब्दी मे परवर्ती भारत पर बोलने और लिखने वाला का नियमित सहारा बनना था

49 दि डान फरवरी 1903 प० 207

49-ए इसमे अपवाद रूप थ पी० ए० चारलू आई० सी० पी० 1899 खड XXXVII पृ० 177 8

50 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड 5 प० 2 जोशी पूर्वोद्धत प० 738 753 मराठा 24 जनवरी 1886 इन्दु प्रकाश 25 जनवरी 1886 हिन्दी बगवासी 30 माच (आर० एन० पी०, बग 11 अप्रल 1891) राय पावर्टी प० 98 145 मधोरकर रिप० आई० एन० सी०—1898 प० 121 ए० एन० बोस सी० पी० ए० प 427 एम० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, प० 691 707 जी० सी० अय्यर 9 ई ए प० 171 दत्त स्पीचज प 24 163 ई० एच० II प० 519 528 612

51 आर० एन० सी 1896 का प्रस्ताव 12 और देखिए 1888 का प्रस्ताव 10 1897 का प्रस्ताव 9 1899 का प्रस्ताव 13 1902 का प्रस्ताव III

52 रानाडे एसेज प० 193 1898 म इकट्ठे काग्रस प्रतिनिधियो का आर० एन० मधोलकर न सकेत किया वाष्प शक्ति द्वारा सचालित करघो के साथ हथकरघे का मुकाबला इस प्रकार का है जिस प्रकार एक भाप-इजन के साथ दौड म बलगाडी का मुकाबला (रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 121) और देखिए जोशी पूर्वोद्धत पृ० 785 974 वाचा सी० पी ए० प 622 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स पृ० 193

एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र पर अपनी स्थापित श्रेष्ठता के आधार पर ही की जाती है —दि एकमीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इंडिया, जे० पी० एस० एस० अप्रल 1893 (खड स० 4) प० 6 तथा जोशी पूर्वोद्धत प० 816, राय पावर्टी पृ० 43, 111, जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी०—1901 पृ० 124

61 नेटिव ओपीनियन 25 मई 1884 रानाडे एसेज प० 19 पी० ए० चारलू आई० सी० पी० 1901 खड XI प० 283 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 131

62 भोलानाथ चद्र एम० एम खड 5 प० 2 नौरोजी एसेज, प० 103 ए० बी० पी० 16 जुलाई 1704 अखबारे आम 8 जनवरी, 1 माच (आर० एन० पी० एन०, 11 जनवरी 8 माच 1879) बम्बई पत्रिक ओपीनियन 24 जून 1880 बाबे समाचार 19 अगस्त (आर० एन० पी० ब० 20 अगस्त 1881) मराठा 23 जनवरी 1881 1 जनवरी 12 फरवरी 1882, 24 जनवरी 1886 स्वदेशमित्रन, 17 दिसबर (आर० एन० पी० एम० 31 दिस० 1887) कन्वान सजीवनी 29 नवबर (आर० एन० पी० बग 10 दिसबर 1887) ए० एस० मुन्नालियर रिप० आई० एन० सी० 1886 प० 65 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 751, 804-05 रानाडे एसेज, पृ० 121 केरल पत्रिका, 4 नवबर (आर० एन० पी० एम० 30 नवबर 1893) दि एकमीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इंडिया, पूर्वोक्त स्थल प० 13 अखबारे आम, 30 जुलाई (आर० एन० पी०, प० 28 अगस्त 1897) भारत जीवन 1 अगस्त (आर० एन० पी० एन० 10 अगस्त 1898 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव XIII तथा 1902 का प्रस्ताव III सियालकोट पेपर 1 माच (आर०एन० पी० पी० 10 माच 1900) मधोलकर रिप० आई० एन० सी०—1899 प० 89 केसरी 23 जुलाई (आर० एन० पी० बब 28 जुलाई 1900) एन० सी० चदावरकर सी० पी० ए०, पृ० 524 पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1901 खड XI प० 283 वाचा सी० पी० ए०, प० 624 जी० एस० अय्यर रिप० आई० ए सी० 1901 प० 124 5 और ई ए प० 65 इडियन नेशन 23 दिस० 1901 (बी० अ आई०—8 फरवरी 1902) पी० मेहता स्पीचेज पृ० 746 एम०के० पटेल रिप० आई० ए सी० 1902 प० 79 तथा रिप० आई० एन० सी०—1904 प० 115 दत्त ई० एच० प० XIII XIV

63 रानाडे एसज प 207, जोशी पूर्वोद्धत प० 868

64 मराठा 23 जनवरी मितबर 1881 नेटिव ओपीनियन, 25 मई 1884 जोशी पूर्वोद्ध प० 368 751 804 05 851 3 रानाडे एसज प० 113 207 बी० एन० सील रिप आई० एन० सी० 1892 प० 95 राय पावर्टी प० 98 जी० एस० अय्यर लाड कर्जन रिजल्यूशन आफ लड रवयू ऐंड फमिन (लाड कर्जन का भूराजस्व तथा अकाल पर प्रस्ताव एच० आर० फरवरा 1902 प० 148-9 एम० के पटेल रिप० आई० एन० सी०—190 प० 114 5 एग्रीकल्चर ऐंड इडस्ट्री का नीचे अध्याय 10 का सबधित भाग

65 मराठा 19 जून 1881 12 फरवरी 1882 स्वदेशमित्रन 5 मार्च (आर० एन० पी० एम० माच 1885) सहचर 6 मई (आर० एन० पी० बग 16 मई 1885) रानाडे एसेज प० 25-6 100 जोशी पूर्वोद्धत प० 642 667 दत्त स्पीचज I, पृ० 24-5 केसरी 11 न (आर० एन० पी० बब 15 नवबर 1902)

66 ऐजुकेशन गजट 2 मई (आर० एन० पी० बग 10 मई 1883) बगाली 26 अप्रल 188 मराठा 24 जून 1886 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 645-8 666-7 मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1892, पृ० 121 जी० एस० अय्यर ई ए, पृ० 85. एच० एन० बनर्जी सी० पी० ए०

पृ० 637 सियालकोट पेपर, 24 अगस्त (आर० एन० पी० पी०, 6 सितंबर 1902) और देखिए नीचे अध्याय 4 और 13

67 रानाडे एसेज, प० 19 जी० एस० अय्यर ई ए प० 131

68 जोशी पूर्वोद्धत प० 829 के० टी० तैलंग जरनल आफ ईस्ट इंडिया एसोसिएशन, खंड XI, प० 9 भाग I रानाडे एसेज प० 19

69 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 616 और भोलानाथ चंद्र एम० एम० खंड 5 पृ० 2 के० टी० तलंग फ्री ट्रेड ऐंड प्रोटक्शन फ्राम एन इंडियन प्वाइंट आफ व्यू, (बंबई 1877) पृ० 51 3

70 रानाडे एसेज प० 19 दि ऐक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इंडिया पूर्वोक्त स्थल, पृ० 22 3. जी० एस० अय्यर ई ए, प० 266

71 रानाडे एसेज प० 96

72 बंगाली 18 जनवरी 1902 और देखिए, ए० बी० पी० 16 जुलाई 1874 जमीयुल उलूम 28 जून (आर० एन०पी०एन० 7 जुलाई 1897) बंगाली तो और आगे बढ़ा और 1900 में उसने यह विचार प्रकट किया, देशभक्ति का गुण व्यापार की भावना से जुड़ा हुआ है' (6 जुलाई)

73 दि इंडियन इकानामिक प्राब्लम, 'दि डान, मार्च जून 1900

74 वही अप्रल 1900 पृ० 265-6

75 'दि ऐक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इंडिया', पूर्वोक्त स्थल, पृ० 8

76 वही, पूर्वोद्धत, पृ० 8-9 और देखिए जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 209

77 'दि ऐक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इंडिया पूर्वोक्त स्थल पृ० 11 2 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 300 राय चावर्टी पृ० 110-1

78 भारत मे आधुनिक उद्योग के विकास का प्रस्तुत संक्षिप्त विवरण प्रो० डी० आर० गाडगिल के ग्रंथ, 'दि इंडस्ट्रियल इवोल्यूशन आफ इंडिया', के 4,6 तथा 8 अध्यायों पर आधृत है

79 साथ ही देखिए, दत्त ई० एच० II, पृ० 520-1

80 इसी अध्याय-पादटिप्पणी सं० 4 देखिए और गाडगिल पूर्वोद्धत, प० 185

81 इस दृष्टिकोण के प्रचलित होने के साक्ष्य के रूप में देखिए, 1916-18 के इंडियन इंडस्ट्रियल कमीशन का प्रतिवेदन, प० 2 तथा अनस्ट पूर्वोद्धत प० 210 अपने को भारत में औद्योगिक प्रवृत्तियों का प्रमुख संचालक मानने वाले लार्ड कर्जन तक ने 1903 में यह मत प्रकट किया भारत की बहुसंख्यक जनता कृषि कर्म में ही प्रशिक्षित है व्यावहारिक (शारीरिक) दृष्टि से भी वह कृषि कर्म के ही योग्य है और वह कृषि कर्म को छोड़कर अन्य किसी उद्योग में प्रवृत्त नहीं होगी (स्पीचेज खंड III पृ० 133) भारतीयों द्वारा इस दृष्टिकोण को नकारने के संबंध में देखिए, भोलानाथ चंद्र एम० एम०, खंड II, पृ० 557 के० टी० तलंग फ्री इंडियन ऐंड प्रोटेक्शन पृ० 34-5 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 642 रानाडे एसेज, प० 24-5 जी० एस० अय्यर ई ए, पृ० 258-274

82 भोलानाथ चंद्र एम० एम० खंड II, प० 560-617 रानाडे एसेज पृ० 24, 159-60 राय चावर्टी प० 82-4 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 258 275 अध्याय 16 17 18 दत्त स्पीचेज II पृ० 79 106 एस० एन० बैनर्जी ने 1903 में अध्यक्ष पद से कांग्रेस को संबोधित करते हुए एक बहुत ही उपयुक्त तथ्य का उल्लेख किया यूरोपीय सर्वप्रथम हमारे कच्चे माल से नहीं प्रत्युत उत्पादित सामग्री की उत्कृष्टता से ही प्रभावित और आकृष्ट हुए थे (सी० पी० ए०, पृ० 691)

83 भोलानाथ चद्र एम० एम०, खड II पृ० 57 रानाडे एसेज प० 24 राय पावर्टी पृ० 109 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 145

84 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 668 रानाडे एसेज पृ० 24 राय पावर्टी पृ० 109 जी० एस० अय्यर ई ए प० 147 149

85 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 668, 742 रानाडे एसेज प० 120 जी० एस० अय्यर ई ए प० 146-7

86 नौरोजी एसेज प० 105 ए० बी० पी० 2 अप्रल 1881 मराठा 9 अगस्त 1885 जोशी पूर्वोद्धत पृ०666 741 743 रानाडे एसेज, प० 22 91 2 गोखले वेलबी कमीशन खड III प्रश्न 18140 वाचा सी० पी० ए० प० 625 जी० सी० अय्यर वलबी कमीशन खड III प्रश्न 18675 18690 ई ए पृ० 145 लाजपत राय दि मन इन हिज वड (ला० लाजपत राय के भाषणो और लखो का सग्रह) (मद्रास 1907) प० 39-41 अपने साधनो स ही बड पैमाने के उद्योग खडा कर सकने मे समथ धनी वित्त विनियोजको की अनुपस्थिति पर बल दिया गया —बगाली 28 जनवरी 1882 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 742

87 रानाडे एसेज, प० 92

88 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 666 741 2 745 803 रानाडे एसेज प० 22 91

89 जोशी पूर्वोद्धत प० 793 रानाडे एसेज पृ० 22

90 जोशी पूर्वोद्धत प० 761 794-6 803

91 रानाडे एसेज प० 23 और नीचे देखिए

92 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 795 रानाडे एसेज प० 91 तथा वित्त पर अध्याय 11

93 देखिए दि डेन अध्याय 13

94 जोशी पूर्वोद्धत प० 747 796 रानाडे एसेज प० 22 41 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 146

95 जोशी पूर्वोद्धत, प० 740 और देखिए रानाडे एसेज प० 22 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 150 लाजपतराय पूर्वोद्धत, प 142

96 जोशी पूर्वोद्धत, प० 797 8 रानाडे एसेज प० 40 42

97 जोशी पूर्वोद्धत, प० 746 रानाडे एसेज 22 91

98 देखिए नीचे अध्याय 13 ड्रेन पर

99 मराठा 13 फरवरी 1881 तथा जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सा०—1901 प० 127

100 ए० बी० पी० 2 अप्रैल 1881 सवाद प्रभाकर 9 मई (आर० एन पी० बग 17 मई 1883) मराठा, 9 अगस्त 1883 राय पावर्टी पृ० 127 7 जमीयुल उलुम, 28 जून (आर० एन० पी० एन० 7 जुलाई 1807) 26 मई 1903 मे चारुमिहिर ने लिखा राजा और जमीदार लोग कमर कस लें और युद्ध मे लडने को उद्यत हो जाए इन दिनो धन की सहायता से देश क समाधनों का परिरक्षण तथा देश की प्रगति का सरक्षण ही क्षत्रियो का कतव्य कम है इन दिनो उन्नत विचारोवाला टाटा राजा तथा सनिक का एक उत्कृष्ट उदाहरण है (आर० एन पी० बग 6 जून 1901)

101 रानाडे एसज पृ० 188

102 जी० एस० अय्यर ई ए पृ 15 तथा देखिए, वही पृ० 150-4 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 797-8

रानाडे एसेज प० 43 49 118 जी० एस०, अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 127

103 ब्राह्म पब्लिक ओपीनियन, 24 जून 1880 बगाली 28 जनवरी 1882 बदवान सजीवनी, 27 मई (आर० एन० पी० बग 7 जून 1881) मराठा 9 अगस्त 1885, हिंदू 29 दिसबर 1883 जोशी पूर्वोद्धत, प० 800, 806 रानाडे एसेज प० 193 एजूकेशन गजट, 13 नवबर (आर० एन० पी० बग 21 नवबर 1891) भारत जीवन 10 जुलाई (आर० एन० पी० 19 जुलाई 1891 मुरलीधर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 174 लाजपत राय पूर्वोद्धत, पृ० 39, 41

104 कलकत्ता म 1883 म नेशनल कार्फेस का प्रथम प्रस्ताव बगाली 5 जनवरी 1884 मराठा 20 जनवरी 1884 9 अगस्त 1885, 19 सितबर 1886 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 747 8 भारत-मित्र 5 जून, नवविभाकर, 28 जुलाई अबुलात वक्ता, 5 सितबर सुरभि तथा सहचर, 30 सित० (आर० एन० पी० बग, 14 जून 2 अगस्त 12 सित० 3 अक्तूबर 1884 क्रमश) हिंदू 21 जनवरी 1884 3 जुलाई 1885, 10 अगस्त 1886 21 अप्रल 1902 इदु प्रकाश 23 जन० (वी० ओ० आई०, फरवरी 1886) बगाली 17 अप्रल और 31 जुलाई 1886 इडियन नेशन 2 अगस्त ट्रिब्यून, 14 अगस्त बिहार हैराल्ड 17 अगस्त (वी० ओ० आई० अगस्त 1886) 'ढाका प्रकाश', 7 माच (आर० एन० पी० बग 11 सित० 1886) भारत मिहिर 8 अप्रल (आर० एन०पी० बग 17 अप्रल 1886 सजीवनी 4 सित०, भारतवासी 4 सित०, नवविभाकर, साधारणी 6 सित० (आर० एन० पी० बग 11 सित० 1886), स्वदेशमित्रन 8 फरवरी (आर० एन० पी० एम० फरवरी 1886), एम० आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1887, प० 137 8 एस० एन० बनर्जी स्पीचज ऐंड राइटिंग्ज (मद्रास तिथिरहित) (निर्देश के लिए इसे आगे 'एस०ऐंड०डब्ल्यू' से सकेतित किया जाएगा) प० 260 सी० पी० ए० प० 696-7 टी० एन० सिंह रिप० आई० एन० सी० 1888, प० 150 जोशी पूर्वोद्धत प० 632, 666 743 तथा और आगे पावर्टी प० 138 9 भारत जीवन 3 अक्तूबर (आर० एन० पी० ए० 12 अक्तू० 1898) ए० एन० बोस सी० पी० ए० प० 427 ए० बी० पी० 2 माच 3 मई 1901 मालवीय स्पीचेज प० 269 लाजपतराय पूर्वोद्धत पृ० 39 एम० के० पटेल, रिप० आई० एन०सी० 1902 प० 79 जी० एस० अय्यर ई ए प० 90 97 पसा अखबार, 22 फरवरी (आर० एन० पी० पी० 8 माच 1922) श्रीराम एल० सी० पी० 1903 खड XVII, पृ० 103 04 मद्रास स्टडड 16 जन०, ट्रिब्यून 15 जन० (वी० ओ० आई 6 -फरवरी 1904) इडियन पीपुल 1 जन० ऐडवोकेट 24 जून (वही 13 फर० 1904) तथा देखिए, कजन स्पीचेज खड II पृ० 330

105 जी० पी० एम० एस० जनवरी 1882 प० 31 पूना सावजनिक सभा की शिक्षा समिति द्वारा एक अपील

106 प्रस्ताव VII

107 प्रस्ताव X

108 क्रमश प्रस्ताव XIII VIII और XII

109 प्रस्ताव XV

110 प्रस्ताव II जी० एस० अय्यर न थोडा और आगे बढते हुए तथा वतमान भारत सरकार की योजनाओ को प्रत्याशित करते हुए भारत की पाच बडी राजधानियो म मि० टाटा के विज्ञान

सस्थान' के समान पाच सस्थानो की स्थापना का अनुरोध किया, ई ए प० 97

111 टी० एन० सिंह रिप० आई० एन० सी० 1888, पृ० 156 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 745 1059 एन० जी० चदावरकर, सी० पी० ए०, प० 525 मालवीय स्पीचेज, प० 269 वाचा सी० पी० ए० पृ० 628 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 92 तथा कजन स्पीचेज, खड II पृ० 330

112 इस मुद्दे पर आई० एन० सी० के प्रस्ताव के लिए ऊपर देखिए पाद टिप्पणियां 106 110 और भारतमित्र 3 जून (आर०एन०पी० बग, 14 जून 1884) बगाली 31 जुलाई 1886 27 अगस्त 1887 4 सितबर 1897 इडियन नेशन 2 अगस्त ट्रिब्यून, 14 अगस्त, बिहार हेराल्ड 17 अगस्त (वी० ओ० आई० अगस्त 1886), हिंदू 27 अक्तूबर 1884, 10 अगस्त 1886 मराठा 15 अगस्त 1886 जोशी पूर्वोद्धत प० 667 811 मालवीय स्पीचेज, प० 269 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 97 9 पसा अखबार 5 अगस्त (आर० एन० पी० पी०, 15 अप्रैल 1899)

113 मराठा, 20 जनवरी 1884, जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 98

114 मराठा 24 जून 1880 बगाली 31 जुलाई 1886 हिंदू 10 अगस्त 1886 ट्रिब्यून 14 अगस्त, (वी० ओ० आई० अगस्त 1886) जोशी पूर्वोद्धत, प० 745 आई० एन० सी० 1898 1899 1900 1901 और 1904 के प्रस्ताव क्रमश XVIII, XV, VIII, XIV और II जी० एस० अय्यर ई ए प० 99 100

115 राय पावर्टी प० 140 हिंदुस्तानी 5 दिस० (आर० एन० पी० एन०, 11 दिस० 1900) वाचा सी० पी० ए० प० 626

116 बगाली 31 जुलाई 1886 हिंदू 10 अगस्त 1886 मराठा 15 अगस्त 1886 इडियन नेशन 2 अगस्त ट्रिब्यून 14 अगस्त बिहार हेराल्ड 17 अगस्त (वी० ओ आई० अगस्त 1888) बगाली 4 सितबर 1897, हिंदुस्तानी 5 दिसबर (आर० एन० पी० एन 11 दिसबर 1900)

117 नव विभाकर 28 जुलाई (आर० एन० पी० बग, 2 अगस्त 1884) भारतमित्र, 15 अप्रल सहचर 14 अप्रल (आर० एन० पी० बग 24 अप्रल 1886), साधारणी 25 अप्रल ढाका प्रकाश 23 अप्रल (आर० एन० पी० बग 1 मई 1886), सुरभि और पताका 12 मई (आर० एन० पी० बग 22 मई 1886) मुरलीधर रिप० आई० एन० सी० 1892 प० 90 भारत जीवन 3 अक्तूबर (आर० एन० पी० एन०, 12 अक्तूबर 1892) ए० एम० बोस सी० पी० ए० पृ० 427 8 मराठा 18 नव० 1900 श्रीराम एल० सी० पी०—1903 खड XLII प० 103-4 मालवीय स्पीचेज प० 269 लाजपतराय पूर्वोद्धत पृ० 39 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 92 कांग्रेस ने 1898 के अपने चौदहवें अधिवेशन मे अपनी दृढ धारणा को इन शब्दो मे व्यक्त किया इस समय प्रचलित तकनीकी शिक्षा पद्धति पूर्णत अपर्याप्त और असतोषप्रद है (प्रस्ताव XVIII) 1899 1900 तथा 1901 के क्रमश XVI, VIII तथा XIX प्रस्तावो मे इस राय को दोहराया गया

118 शिवाजी 1 अक्तूबर (आर० एन० पी० बब 9 अक्तू० 1880) पूना सावजनिक सभा की कार्यकारिणी समिति द्वारा एक अपील ज० पी० एस० एस० जनवरी 1880 पृ० 30-31 पजाबी अखबार 10 नवबर (आर० एन० पी० पी० 14 नव० 1883) कलकत्ता में नेशनल कांग्रेस का प्रथम प्रस्ताव बगाली 5 जनवरी 1884 मराठा 20 अप्रैल 1884 नव विभाकर 28 जुलाई (आर० एन० पी० बग 2 अगस्त 1884) जोशी पूर्वोद्धत प० 812 जमीउल उलूम 28 जून (आर एन० पी० एन० 7 जुलाई 1897) भारत जीवन 3 अक्तूबर (आर० एन० पी० एन०,

18 अक्तूबर 1898) अल्मोड़ा अखबार 8 अक्तू० (आर० एन० पी० एन० 19 अक्तू० 1898) लाजपतराय पूर्वोद्धृत पृ० 40-1 नेटिव ओपीनियन, 30 जुलाई इंदु प्रकाश, 31 जुलाई (आर० एन० पी० बब 2 अगस्त 1902)

119 जे० सी० बागल हिस्टरी आफ दि इंडियन एसोसिएशन' 1876-1951 (कलकत्ता 1953) पृ० 10

120 प्रस्ताव XVI 1900 में इसी भावना की पुन अभिव्यक्ति की गई 1898 म कांग्रेस अध्यक्ष ए० एम० बोस ने पहले ही टाटा की देश के सच्चे लोकोपकारक के रूप म प्रशंसा की थी—(सी० पी० ए०, पृ० 456)

121 ए० बी० पी० 11 मार्च 23 जून 1904 कलकत्ता प्रेस ने संस्था का बड़े बड़ उत्साह के साथ स्वागत किया देखिए बगाली 16 मार्च 8 सितंबर 1904, ए० बी० पी० 23 जून 1904 इंडियन मिरर, 4 मई (आर० एन० पी० बग 14 मई 1904) तथा दुनिया प्रकाश, 7 अप्रल (आर० एन० पी० बब 9 अप्रल 1904)

122 इंपीरियल गजेटियर आफ इंडिया 1909 खड IV पृ० 436-9

123 मराठा 1 15 अगस्त 1886 18 नव० 1900 भारत मिहिर 8 अप्रैल नव विभाकर, 12 अप्रल (आर० एन० पी० बग 17 अप्रल 1886) सुबोध पत्रिका, 6 फरवरी (आर० एन० पी० बब 12 फर० 1887) बंबई समाचार 12 अप्रल (आर० एन० पी० बब 16 अप्रल 1887), हिंदुस्तानी 5 दिसबर (आर० एन० पी० एन० 11 दिस० 1900) स्वदेशमित्रन 1 मार्च (आर० एन० पी० एम० 2 मार्च 1901) वाचा सी० पी० ए० प० 628 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 126 इंडियन पीपुल 1 जन० एडवोकेट 24 जन० (बी० ओ० आई० 13 फर० 1904) तुलनीय इ० बी० हावेल टकनीकल एजुकेशन इन इंडिया' कलकत्ता रिव्यू' अप्रैल 1897 हावेल ने प्राथमिक तकनीकी शिक्षा पर बल दिया तथा उच्च तकनीकी शिक्षा की माग का तिरस्कार किया

124 सुबोध पत्रिका 6 फरवरी (आर० एन० पी बब, 12 फरवरी 1887), बबई समाचार, 12 अप्रल (आर० एन० पी० बब 16 अप्रल 1887) स्वदेशमित्रन 1 मार्च (आर० एन० पी० एम० 2 मार्च 1901) इंडियन स्पक्टेटर 9 जून 1901 हिंदू 23 फरवरी 1901, इंडियन पीपुल 1 जन० ऐडवोकेट 24 जन० (बी० ओ० आई० 13 फरवरी 1904)

125 हम हस्तशिल्पियों को प्रशिक्षित करने की इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी कि उच्च स्तर के नवयुवकों के हृदय को प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है क्योंकि यही लोग भारत की औद्योगिकता को नीचे से ऊपर उठान में पुरोगामी बनेंगे (जी०एस० अय्यर रिप०आई० एन० सी० 1901 पृ० 126) तथा पाद टिप्पणी 124 ऊपर और मराठा 15 अगस्त 1886 भारतवासी 4 सित० (आर० एन० पी० बग 11 सित० 1886) वाचा सी० पी० ए०, प० 627 8 इसके विरुद्ध भारतीय दृष्टिकोण को देखने के लिए देखिए दि इंडियन इकानामिक प्राब्लम' 'दि डान जून 1900 पृ० 31 2

126 सपश पादटिप्पणियां 118 और 121 तथा जी० एस० अय्यर ई ए प० 98

127 देखिए ऊपर पादटिप्पणी 110 तथा भारतवासी 4 सितंबर (आर० एन० पी० बग 11 सित० 1886) वाचा सी० पी० ए० प० 628 आई० एन० सी—1902 का प्रस्ताव IX इंडियन पीपुल 1 जनवरी ऐडवोकेट, 24 जनवरी (बी० ओ० आई० 13 फरवरी 1904)

128 ज० एन० सिंह रिप० आई० एन० सी० 1888 प० 156-7 आर० बोस वही

रानाडे एसेज, प० 122, 187 दि ऐक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इडिया, पूर्वोक्त स्थल पृ० 4 जी० एस० अय्यर ई ए प० 149 बी०सी० पाल दि नेशनल प्रा लम', 26 जनवरी 1903 को कलकत्ता म दिया गया एक भाषण यू स्पिरिट (कलकत्ता, 1907) पृ० 175

129 जोशी पूर्वोद्धत प० 740 तथा प० 826

130 आर० बोस रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 162

131 रानाडे एसज पृ० 122 तथा जोशी पूर्वोद्धत प० 740 801-02 दि ऐक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इडिया', पूर्वोक्त स्थल, पृ० 4 23 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 149 50 लाजपतराय पूर्वोद्धत पृ० 42

132 दि ऐक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इडिया पूर्वोक्त स्थल, प० 23 जाशी पूर्वोद्धत प० 625 मराठा 1 फरवरी 1884, बगाली, 17 दिसबर 1901 गोखले स्पीचेज प० 1057 जी० एस० अय्यर ई ए प० 216

133 जोशी पूर्वोद्धत प० 625 बगाली 17 मई 1902

134 रानाडे एसेज प० 23 122 बी० सी० पाल दि नेशनल प्रा लम, पूर्वोक्त स्थल प० 179 80 तथा देखिए जी० एस० अय्यर ई ए प० 132-4 भारतीय दृष्टिकोण के विरुद्ध दि एक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रेस इन इडिया क अनातनाम लेखक न सकेतित किया आधुनिक सभ्यता अस्तित्व की स्थिति है जिसमे प्रत्येक व्यक्ति जीवन म अपनी दशा को सुधारने अपनी शक्तियों के विकास तथा जीवन की सुख सुविधाआ मे वद्धि का अथक प्रयास कर रहा है (पूर्वोक्त स्थल, पृ० 5)

135 दि ऐक्सीजेंसीज आफ प्राग्रेस इन इडिया पूर्वोक्त स्थल, प० 5

136 वही प० 3 जे० एन० सिंह रिप० आई० एन० सी० 1888 प० 157 जी० एस० अय्यर ई ए प० 151

137 दि ऐक्सीजेंसीज आफ प्राग्रस इन इडिया पूर्वोक्त स्थल प० 5 जे० एन० सिंह रिप० आई० एन० सी० 1886 प० 157

138 दि एक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रस इन इडिया पूर्वोक्त स्थल प० 5-6 23 बी० सी० पाल दि नेशनल प्राब्लम, पूर्वोक्त स्थल प० 186

139 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 150 बी०सी० पाल दि नेशनल प्राब्लम पूर्वोक्त स्थल प० 179

140 अज्ञात अनुसधानो म सफलता क लिए हम अपने निजी जीवन म क्रातिकारी परिवतन की आवश्यकता है हम उन पारपरिक प्रतिबधो से अपने आपको मुक्त करना है जो सुधार म बाधक हैं तथा विचारा को अस्पष्ट बनाने वाले और निणय को विपयस्त करन वाले पूवग्रहो एव भावनाओ के त्याग से समझौते पर विवश करते हैं दि एक्सीजेंसीज आफ प्रोग्रस इन इडिया पूर्वोक्त स्थल प० 1 2

141 रानाडे मिसलेनियस राइटिंग्ज (बबई 1915) पृ० 131 तुलनीय डी० सी० कर्वे, रानाडे दि प्रोफेट आफ लिबरेटिड इडिया (पूना 1944) रानाडे की इच्छा थी कि जनता का सामाजिक राजनीतिक तथा आर्थिक सारा जीवन पुनगठित करना चाहिए ताकि भारत के लोग आधुनिक व्यवसाय तथा उद्योग की आवश्यकताओ के आधार पर व्यवसायपरक दृष्टिकोणवाले बनें (प 106)

142 वही पृ० 116 जी० एस० अय्यर ई ए प० 300 तथा भोलानाथ चद्र—एम० एम० खड 5 प० 7 9

143 दि ऐक्सीजेंसी आफ प्रोग्रेस इन इडिया पूर्वोक्त स्थल प० 1 23 तथा ऊपर 130 131 की पादटिप्पणियां

144 भारत जीवन 6 नवबर (आर० एन० पी० एन०, 14 नवबर 1899) प्रधान ऐंड भागवत मे तिलक ने कहा—पूर्वोद्धत, प० 50 63 96 एन० जी० चदावरकर स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज एल० वी० कक्निी द्वारा सपादित (बबई 1912) प० 75 (अन्यथा वह सुधारक वग से सबधित था) लाजपतराय पूर्वोद्धत प० 114-28

145 1904 मे लाजपतराय ने अपना मत प्रकट किया हमारे धमग्रथो से इतनी पर्याप्त सामग्री है कि हम सामाजिक शक्ति और सुधार के लिए उस पर निभर कर सकते है (पूर्वोद्धत प० 90) तथा वही, पृ० 73 116, 122 124 प्रधान ऐंड भागवत मे तिलक ने कहा—पूर्वोद्धत, प० 76-7 119

146 प्रधान ऐंड भागवत, म तिलक ने कहा—पूर्वोद्धत प० 63-4 लाजपतराय पूर्वोद्धत, प० 76-7 119

146-ए ए० सी० मजूमदार 'इडियन नेशनल इवोल्यूशन (मद्रास 1917) प० 187

147 मसानी पूर्वोद्धत, पृ० 71 78

148 जी० ए० मनकर पूर्वोद्धत, खड I, पृ० 82 3

149 गोखले स्पीचेज प० 927

150 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 747

151 दि इडियन नेशन बिल्डस (मद्रास, तिथिरहित), भाग I प० 182

152 राम गोपाल पूर्वोद्धत, पृ० 42

153 दि इडियन नेशन बिल्डस, भाग II, प० 93 296

154 वही प० 361, 372

155 वही, भाग I प० 155-6

156 लाजपतराय पूर्वोद्धत इट्रोडक्शन पृ० XXIII

157 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 22 जनवरी, 8 अप्रैल 1880

158 बगाल नेशन चैंबर आफ कामस—1887 का प्रतिवेदन प० 71 2.

159 ये तथ्य पसा निधि की रजत जयती ग्रथ (पूना 1933) से लिए गए हैं

160 मराठा, 9 अगस्त 1885, 22 सितबर 1895, रानाडे एसेज पृ० 120 180, जोशी पूर्वोद्धत प० 971 8 तथा डी० पी कर्वे पूर्वोद्धत प० 106

161 केलाकर महादेव गोविंद रानाडे (कलकत्ता 1926) प० 321 2 गोखले स्पीचेज, पृ० 927

162 बगाली 12 सितबर 7 नवबर 1891

163 एस० एन० बैनर्जी 'ए नेशन इन मेकिंग' (आक्सफोर्ड प्रेस 1925) पृ० 146

164 आई० एन० सी०—1900 के प्रस्ताव VII और XXV

165 बा० पट्टाभि सीतारमया दि हिस्टरी आफ इडियन नेशनल काग्रेस 1883-1935 (मद्रास 1935) प० 68 प्रदर्शनियो को लोकप्रिय भारतीय समाचारपत्रो से प्रोत्साहन और समथन मिला देखिए बगाली 18 जनवरी 1902 इडियन नेशन 23 दिसबर 1901 एडवोकेट—9 जनवरी 1902 इडियन मिरर 19 जनवरी 1902 वी० ओ० आई०, 8 फरवरी 1902.

उद्योग II

ब्रिटिश पूजी (भारत की) राष्ट्रीय प्रगति के लिए एक अपरिहार्य आवश्यकता है।
लार्ड कर्जन

विदेशी, अधिकांशतया ब्रिटिश, पूजी का देश के ससाधनो के विकास म विनियोजन देशवासियो की आर्थिक दशा के सुधार मे सहायक होने की अपेक्षा इस दिशा मे एक बहुत बडी बाधा ही सिद्ध हुआ है।
विपिनचन्द्र पाल

I विदेशी पूजी की भूमिका

भारत मे एक ओर स्वदेशी पूजी की कमी थी और यहा के लोग सकोचवश अथवा खतरो से घबराकर नए क्षेत्रो मे पूजी के निवेश से कतराते थे जिसके फलस्वरूप भारत के औद्योगिक विकास का क्षेत्र सकुचित और सीमित हो गया था तो दूसरी ओर ब्रिटिश पूजी अपने देश मे पूरी तरह न खप पाने के कारण निवेश के लिए नए क्षेत्रो की खोज मे थी। ब्रिटेन का विचार यह था कि इस ब्रिटिश पूजी को भारत के आर्थिक विकास की शून्यता को भरने के काम मे लगाया जाए तथा इसका प्रयोग उद्योगीकरण के विकास म किया जाए। ग्रेट ब्रिटेन के तथा भारत के अधिकारियो का विचार था कि ब्रिटिश पूजी को भारत मे आकृष्ट करने तथा सभी बाधाओ को हटाकर उसका प्रयोग करने से न केवल भारत के सभी आर्थिक रोगो का उपचार हो जाएगा प्रत्युत ब्रिटेन की अतिरिक्त पूजी का भी सुरक्षित और लाभदायक विकास मिल जाएगा।[1]

ब्रिटिश सत्ता ने भारत मे ब्रिटिश पूजी के प्रवाह को सुरक्षा और आवरण प्रदान किया। स्वदेशी पूजी तथा साहस के अभाव तथा ब्रिटिश राजनीतिक सर्वोच्चता के परिणामस्वरूप प्रारभिक अवस्था में ब्रिटिश पूजीपति ही भारत में आधुनिक उद्योगो के अग्रदूत तथा प्रधान प्रोत्साहक बने। इस पर भी आश्चर्यजनक बात यह है कि ब्रिटिश पूजी का मूल निवेश अत्यल्प था। भारतीय साम्राज्य की विजय का आधार भारतीय वित्त तथा यही से जुटाए गए कर्ज थे। 19वी शती के पूर्वार्ध में जन्म लेने वाले व्यवसाय नए ढग तथा

व्यावसायिक और औद्योगिक सस्थाओ मे निवेशित थी। स्पष्ट है कि इस प्रकार औद्योगिक निवेश का भाग अपेक्षाकृत और भी कम था।[9] तृतीयत, यद्यपि आधुनिक उद्योगो म निवेशित विदेशी पूजी की राशि किसी भी मानदड से तुच्छ थी तथापि उसने भारत के औद्योगिक मच पर एकधिकार जमाए रखा तथा इस क्षेत्र मे भारतीय पूजी को दबा कर रखा। बहुत सारी पटसन मिलो, ऊन और सिल्क की मिलो, कागज मिलो, चीनी के कारखानो, चमडे के कारखानो, लोहा तथा पीतल के ढलाई कारखानो के मालिक विदेशी निवेशक ही थे।[9] भारतीयो का प्रारभ से ही प्रमुख भाग केवल सूती कपडा उद्योग म ही था किंतु यहा भी आशिक पूजी विदेशी थी, प्रबध अधिकाशत विदेशी था तथा तकनीकी सवग मे अधिकाश का जबरदस्ती ही आयात करना पडता था।[10]

भारतीय राष्ट्रवादी नेता विदेशी पूजी के उपयोग के सबध मे पर्याप्त समय तक सभ्रम, मतभेद तथा सकोच का शिकार बने रहे। प्रारभ मे विदेशी सरक्षण मे जब रेलवे और नहरो, खानों, बागान और आधुनिक उद्योगो का आगमन हुआ, उस समय विदेशी पूजी के भारत मे अत प्रवेश का कोई विरोध नही हुआ, परतु ज्योही भारतीयो के स्वामित्व के उद्योग धीरे धीरे विकसित होने लगे और भारतीयो को विदेशी पूजी के एकाधिकार के दुष्प्रभाव का पता चलता गया, त्योही विदेशी पूजी के विरुद्ध आलोचना की प्रवृत्ति जोर पकडने लगी। 19वी शताब्दी के अत तक भारतीयो का एक वर्ग तो अब भी विदेशी पूजी के उपयोग के पक्ष मे था, परतु बहुमत उसका तीव्र विरोधी था।[11] राष्ट्रीय दृष्टिकोण मे परिवर्तन का सर्वोत्तम उदाहरण दादाभाई नौरोजी हैं, जो पहले विदेशी पूजी के प्रबल समर्थक थे परतु कालातर मे उसके तीव्र आलोचक तथा प्रखर विरोधी बन गए।[1] यहा यह उल्लेखनीय है कि जहा विदेशी पूजी के निवेश के समर्थक अनेक भारतीय नेताओ ने उसके कुछ विशेष पहलुओ की निंदा की, वहा उसके विरोधी उससे होने वाले कुछ लाभो से सहमत थे। बहुसख्यक राष्ट्रवादी नेताओ का यह जटिल व डावाडोल दृष्टिकोण उनके मत को वास्तविकता मे प्राय असबद्ध और कभी कभी तक हीन बना देता था। यह बात अवश्य है कि 1905 तक उन्होने विदेशी पूजी की तत्कालीन और आने वाले वर्षों मे निभाई जानेवाली भावी भूमिका के सबध म सशक्त और विस्तृत जानकारी प्राप्त कर ली थी।

विदेशी पूजी के उपयोग के समर्थक भारतीय नेताओ के एक वर्ग के समर्थन का आधार यह था कि भारत जैसा निर्धन देश अपनी देशी पूजी से अपने नए उद्योगो का उपक्रम करने मे असमर्थ है अत उसे अपने उद्योगो और यातायात के साधनो के विकास तथा इसके फलस्वरूप अपने लोगो की भौतिक दशा को उन्नत बनाने के लिए निश्चित रूप से ही विदेशी पूजी की जरूरत है।[13] अमृतबाजार पत्रिका ने अपने 23 फरवरी 1903 के अक म तो यह मत प्रकट किया वर्तमान परिस्थितियो म विदेशी पूजी के अत प्रवाह का विरोध मूर्खतापूर्ण तथा आत्महत्या जैसा काम है। यह आशा की जाती थी कि विदेशी उद्यम एक उदाहरण और एक आदर्श का काम करते हुए स्वदेशी उद्योग और व्यापार को प्रेरणा प्रदान करेगा।[14] इससे वस्तुत ही भारतीय उद्यमियो के लिए निदर्श का। करने की अपेक्षा की गई थी।[15] राष्ट्रीय नेताओ के इस वर्ग का विश्वास था कि

भारतीय पूजीपतियो द्वारा औद्योगिकता की प्रक्रिया के उपक्रम और विकास किए जाने पर ही देश का वास्तविक आर्थिक विकास और सुधार सभव था, विदेशी पूजीपति इस काय के सपादन मे असमथ थे।[8] जी० एस० अय्यर ने 1901 मे कहा आधुनिक काल के अथवा प्राचीन काल के एसे किसी देश का कोई एक भी उदाहरण उपलब्ध नही जहा शासक जाति के होने के नात सभी सभव राजनीतिक और सामाजिक सुविधा प्राप्त विदेशी पूजीपतियो ने शासित प्रदेश के लोगो की औद्योगिक समृद्धि मे सहायता की हो।"[9] उन्होन तो साथ मे यह भी कहा, 'मुझे यह कहने मे कोई सकोच नही कि अपन देशवासियो को ही कच्चे माल का उत्पादन अपने हाथ मे लेने के योग्य बनाने के लिए शिक्षित तथा प्रशिक्षित करने से देश म कृषि से इतर सपत्ति का उपाजन किया जा सकता है।'[30]

आलोचको की दृष्टि मे विदेशी पूजी अपन मूल मे राष्ट्रविरोधी थी, की क्योकि यह भारतीय पूजी की सहायता करने तथा उसे प्रोत्साहित करने के बदले उलट खदेड कर उसे कुचल रही थी।[31] विदेशी तकनीक अथवा मशीनरी की अपक्षा न रखन वाले तथा भारतीयो के काय व्यापार के स्वत सिद्ध अधिकारक्षेत्र वक जस व्यवसाया स भी विदेशी उद्यम भारतीय उद्यम को जबरदस्ती बाहर धकेल रहा था।[3] भारतीय उद्यमा विदेशी पूजीपतियो द्वारा अपना माग अवरुद्ध ही पात रहे है।[33] जिस प्रकार अप्रतिबधित विदेशी आयाता ने पहले भारत के शहरी उद्योगा को नष्ट किया है, उसी प्रकार अब विदेशिया के स्वामित्व के उद्यम ग्रामीण हस्तशिल्पो का नष्ट-भ्रष्ट करन म लग हैं।[31] विदेशी उत्पादना की देश के उत्पादनो के साथ प्रतियोगिता और भी अधिक भयकर है क्योकि वह देश के सस्त श्रम पर निभर है। समालोचको का उन लोगो को, जो यह मानत थे कि विदेशी पूजी के अभाव मे अविकसित रह जानेवाले साधना के विदेशिया द्वारा विकसित किए जाने से कोई हानि नही उत्तर था कि यह हानि आनवाली पीढिया का ही दिखाई पडेगी। कालातर म काफी वर्षो के बाद जब भारतीय पूजी की विपुल राशि क निवश तथा सचालन की स्थिति म हो जाएग तब उस समय उन्ह पता चलगा कि औद्योगिक उद्यमो के बहुत सारे क्षेत्र विदेशिया ने पहले ही बुरी तरह से अपने अधिकार म कर रख हैं और इस दिशा मे नए उद्यमा के लिए कोई अवकाश ही नही है। इस प्रकार आज क क्षुद्र लाभो के लिए सारा भविष्य अधकारमय हो जाएगा। अत उनका कथन था कि इसकी अनुमति कदापि नही देनी चाहिए। कोई भी व्यक्ति, यहा तक कि वतमान पीढी को भी यह अधिकार कदापि नही है कि वह स्थाई रूप से भारत के औद्योगिक क्षेत्र का पराधीन करन के रूप म देश के भविष्य और स्थाई लाभा का बलिदान कर दे।[35] उन्होने लाड कजन की इस टिप्पणी का भी तकपूवक विरोध किया 'सारा औद्योगिक और व्यापारिक विश्व एक प्रकार का क्षेत्र है, जिस पर कपक का कृषि करनी है, और यदि स्थानीय व्यक्ति अपनी कुदाली स उस खेत की जुताई नही करता तो उस अपने हल के साथ उसके खत को जोतने के लिए आने वाले बाहरी व्यक्तिया को दोष देने का कोई अधिकार नहा।'[36] उन्होने इस बात पर जार दिया कि भारत का औद्योगिक क्षेत्र, अधिकृत अथवा अनधिकृत, भारतीया का ही है, किसी अन्य का नहीं।[37] और पूछा

यदि वाइसराय के तक सही है तो हम जानना चाहग कि फिर आस्ट्रेलिया और

दक्षिणी अफ्रीका मे भारतीयो के विरुद्ध, अमरीका मे चीनियो के विरुद्ध, इग्लैंड मे अमरीकी पूजीपतिया के आगमन के विरुद्ध तथा ब्रिटेन द्वारा अपने पूर्ण एकाधिकार के रूप में स्वीकृत बाजारो मे सस्ते माल के प्रवाह के विरुद्ध विस्फोट के क्या कारण हैं ? यहा तक कि स्वय लार्ड कर्जन ने अमरीकी तेल कपनी को बर्मा की तेल खाना में काम करने की अनुमति क्यो नही दी ? क्या इन सबके कारण वही नही हैं जिनके लिए हमारे देशवासी विदेशी शोषण के विरुद्ध आपत्ति करते आ रहे हैं ?[38]

वस्तुत विदेशी पूजी के इन विरोधिया ने यह कभी स्वीकार नही किया कि भारत मे विदेशी पूजी के निवेश के बिना औद्योगिक विकास सभव नही होगा ।[39] वे इस विडबना से सहमत नही थे कि या तो विदेशी पूजी का उपयोग कीजिए, अन्यथा पूजी से सवथा वचित रहिए । उनके अनुसार वास्तविक विकल्प विदेशी और स्वदेशी पूजी के मध्य है । उनके अनुसार स्वदेशी पूजी का उदय और उसकी प्रौढता प्राप्ति समय सापेक्ष भले ही हो परतु विदेशी पूजी का आगमन और प्रयोग सचमुच ही उसे अपनी पूजी से या तो वचित कर देगा या उसके उदय को विलबित करेगा ।[40]

विदेशी पूजी के आलोचको द्वारा विदेशी पूजी के प्रयोग के विरुद्ध प्रस्तुत तर्क यह था कि वह देश की पूजी की देश के बाहर निकासी करती है क्योकि विदेशी उद्यमी केवल अपनी पूजी के ब्याज की राशि ही नही प्रत्युत सारे ही लाभ भारत से बाहर भेज देते थे।[41] उन्होने इस तथ्य को स्वीकार किया कि विदेशी पूजी के निवेश ने सयुक्त राज्य अमरीका अथवा इग्लड अथवा अन्य स्वतन्त्र देशो म सबधित राष्ट्रो और देशवासियो को प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ पहुचाए हैं। उन राष्ट्रो को इन लाभो के मूल्य के रूप म केवल पूजी का ब्याज ही देना पडा है ।[4] परतु उन्होने सकेत किया कि भारतीय लोगो को अपनी विशिष्ट आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितिया के कारण इस विदेशी पूजी से कोई लाभ नही हो पाता । वस्तुत इसके विपरीत उन्हे इससे हानि ही उठानी पडती है । वे विशिष्ट परिस्थितिया कौन सी थी, उनका विवरण इस प्रकार है

प्रथम, विदेशी पूजी का आयात स्वेच्छाप्रेरित नही था, वह विदेशी शासन के कारण बलपूवक लादा हुआ था । ब्रिटिश राज्य के प्रत्यक्ष प्रमाण, ऊचे कराधान तथा विपुल सामग्री की निकासी देश की पूजी का बहुत बडा भाग स्वायत्त कर लेते थे, अत देशवासिया के पास नाममात्र की पूजी अवशिष्ट रह पाती थी। इस स्थिति म पूजी की क्रमिक वृद्धि की सभावना लगभग असभव थी । भारतीय पूजी की विरलता के कारण नए औद्योगिक क्षेत्रो के उपक्रम नही किए जा सकते थे अत विदेशियो ने आकर इनपर अपना अधिकार कर लिया । प्रथम तो इस तरीके से भारतीय उद्यमियो के मार्ग मे बाधा डाली गई और उसके उपरात आर्थिक आवश्यकता का बहाना करके देश पर विदेशी पूजी बलपूवक थोप दी गई ।[43] इस प्रकार भारतीय नताओ का मतव्य था कि विदेशी पूजी भारत मे इस देश की पूजी की वृद्धि के लिए नही, प्रत्युत उसके ह्रास के लिए, उसकी से लिए नही, प्रत्युत उसे अपने अधीन बनाने के लिए, इसके विकास के लिए नही, इसके साधनो के अपहरण के लिए ही आई है ।

द्वितीय, आलोचको ने निर्दिष्ट किया कि विदेशी पूजी भारतीय पूजी को वि

कर देती है। इसका कारण यह नही कि विदेशी पूजीपति आर्थिक दृष्टि से अधिक योग्य है अथवा भारतीय पूजीपति सकोची वृत्ति के हैं, अथवा विदेशी पूजीपति अधिक उत्साही साहसी है। इसका वास्तविक कारण यह है कि भारत म ब्रिटिश शासन द्वारा विदेशी पूजी को आने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है, सभी प्रकार की रियायतो से उसकी सहायता की जाती है, उसे सभी प्रकार के प्रलोभन और विशिष्ट सुविधाए दी जाती है। उदाहरणार्थ, लाभो की गारटी, मुफ्त अथवा सस्ते दाम पर भूमि, उसके हितो की रक्षा के लिए प्रशासनिक तथा सावैधानिक उपाय आदि। इसके विपरीत स्वदेशी पूजीपतियो को निरुत्साहित किया जाता है, उन्ह सभी साधनो मे वचित किया जाता है तथा उन्हे अपनी हालत पर छोड दिया जाता है। इस प्रकार स्वदेशी और विदेशी पूजी म न्यायोचित तथा समता के आधार पर प्रतियोगिता नही है। विदेशी पूजीपति भारतीय पूजीपतियो के मुकाबले अनुचित सुविधाओ का उपभोग कर रहे है।[44]

तृतीय, आलोचको का तर्क था कि जहा अन्य देशो मे विदेशी पूजी के, विदेशी निधि के आयात द्वारा उस देश की पूजी के आतरिक सकीर्ण साधनो के विकास मे सहायक होने से दोष किसी सीमा तक सतुलित हो जाते थे, वहा भारत मे विदेशी पूजी का निवेश इस देश मे विदेशी निधि का आयात नही करता था, क्योकि इस देश म विदेशी पूजी का प्रवाह स्वाभाविक न होकर अप्राकृतिक ही था। वस्तुत इस देश मे विदेशी निवेशको ने अपने देश के साधनो से पूजी सचित नही की, प्रत्युत भारत की पूजी की ही प्रथम विदेशियो द्वारा नियन्त्रित व्यापारो, वैको, उद्योगो तथा प्रशासनिक व्यय के माध्यम से विदेशो म निकासी हुई और पुन उसका कुछ अश निवेश पूजी के रूप मे लौटकर भारत आ गया। राष्ट्रीय खातो की दृष्टि से समीक्षा करने पर सारा कार्य व्यापार कागज पर अको का कोरा खेल तमाशा था।[45] देश के व्यापार खाते के अध्ययन से यह भी स्पष्ट हो जाता था कि भारत वास्तविक विदेशी निधि का आयात नही करता था। दादाभाई नौरोजी ने 1887 म सकेत किया था कि यह स्मरणीय है कि भारत के शुद्ध आयात म सभी विदेशी ऋणो और निवेशो को जोड देने के बाद भी उसके शुद्ध निर्यात बढचढकर है।[46] इस प्रकार भारत अपनी ही पूजी से अपने ही शोषण की अपरिहार्य स्थिति म पहुच गया है। 'प्राचीन समय मे भारतीयो ने अपने ही राजनीतिक दमन के लिए अगरेजो की जिस प्रकार सहायता की है, उसी प्रकार आज वे अपनी ही आर्थिक उदासीनता का कार्य सपन्न करने के लिए अगरेजो की सहायता कर रहे हैं।'[47] यह एक रोचक तथ्य है कि देश की पूर्वनिष्कासित सपत्ति की विदेशी पूजी के रूप म वापसी तथा भारत के विदेशी उद्यमियो द्वारा प्राप्त लाभो के पुर्ननिवेश न बहुत सारे भारतीय नेताओ को भ्रमजाल म उलझाए रखा तथा विदेशी पूजी के प्रति आतरिक रूप स असगत प्रतीत होन वाली स्थिति को भी स्वीकार करने के लिए विवश किया। एक ओर उन्होने विदेशी पूजी के लाभो के निर्यात का विरोध किया तथा दूसरी ओर इन लाभो के पुर्ननियोजन का समर्थन नहीं किया, क्योकि इससे स्वत ही लाभो की राशि म वृद्धि हो जाती थी और उसका परिणाम भविष्य म सपत्ति का निष्कासन था।[48] भारतीय नेताओ की यह असगति उनकी गलत चिंतन प्रक्रिया का न होकर एक प्रकार स स्वाभाविक ही थी। उन्होंने इस जटिल प्रक्रिया का जो

कि आंतरिक विसगतियो से परिपूर्ण थी, सही तौर पर व द्वद्वात्मक रूप से समझा।[49] उनका कथन था कि विदेशी पूजी से अर्जित लाभो के पुर्ननिवेश ने धन की स्वत विस्तृत होने वाली तथा कभी समाप्त न होने वाली निकासी की प्रक्रिया को जन्म दिया था। 1887 मे दादाभाई नौरोजी ने लिखा, 'सवप्रथम ब्रिटिश भारत की सपत्ति बाहर ले जाई जाती है और फिर उसी सपत्ति को ऋणो के रूप मे यहा वापस लाया जाता है और फिर उन्ही ऋणो पर ऊचा ब्याज वसूल किया जाता है। इस प्रकार यह सारा दुश्चक्र अत्यत घृणित तथा उत्तेजक रूप मे चल रहा है।[50] इसके फलस्वरूप इस समस्या के प्रति उनका दृष्टिकोण भी द्वद्वात्मक था। उनके अनुसार चुनाव का प्रश्न विदेशी पूजी की स्वीकृति अथवा उसे सहन करने मे, तथा लाभो के नियात अथवा उनके पुर्ननिवेश से ही सबधित नहीं था, बल्कि दुश्चक्र के साथ गतिशील बने रहने और सपत्ति की निकासी को रोकने और औद्योगिक विकास के लिए स्वदेशी सपत्ति पर निभर रह कर इस दुश्चक्र को गतिशून्य करने का था। इस प्रकार दोनो रोगो से बचाव किया जा सकता है।

भारतीय नताओ ने इस ओर भी सकेत किया कि विदेशी पूजी की सहायता से भारत के विकसित होने वाले नए साधनो के लाभ अत्यत सीमित थे क्योकि यह अपनी विशिष्ट राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थितिया के कारण देश की विशाल जनसख्या के एक छोटे से भाग के लिए ही अतिरिक्त आजीविका जुटाती है और इसके फलस्वरूप राष्ट्रीय मज-दूरी निधि मे साधारण सी वद्धि होती है।[51] आजीविका की इस तुच्छ वद्धि का प्रमुख भाग विदेशी उद्यमो के निर्माण तथा सचालन मे उच्च पदो पर प्रतिष्ठित तथा उच्च वेतन-भोगी अधीक्षक पदो पर एकाधिकार किए विदेशियो के पास चला जाता है।[52] दुर्भाग्यवश राज्य व्यवसायो की भी बराबर यही स्थिति थी।[53] यह तथ्य भारतीयो को न केवल उनके न्यायसगत अतिरिक्त आजीविका के अवसरो से वचित करता था तथा उपभोग मे वृद्धि करता था,[54] प्रत्युत अन्य अनेक महत्वपूर्ण तथा दूरगामी बुराइया भी पनपाता था। बहुत सारे विदेशी भारत को पूजी के सचय और निवेश के लाभप्रद साधनो से वचित करते हुए, अपने वेतन का बडा भाग विदेश मे भेज देते थे।[55] इसके अतिरिक्त विदेशी पूजी के विनियोग भारतीयो को औद्योगिक तकनीक और व्यापार सचालन मे उन्नत प्रशिक्षण से वचित करते थे। इस प्रकार विदेशी पूजी का एक सगव घोषित लाभ व्यवहारत उप-लब्ध ही नही था तथा एक समृद्ध औद्योगिक व्यवसाय से लोगो को प्राप्त होने वाली शिक्षा और जानकारी सवथा अनुपलब्ध थी।[56] इसके साथ साथ नवीन आशिक नियोजन भी भारत मे नही किए जाते थे प्रत्युत विदेशी उद्यम की घरेलू व्यवस्था द्वारा स्वय निवेशको के अपने ही देश मे किए जाते थे।[57] विदेशी पूजी के आलोचको की एक अन्य शिकायत यह थी कि यदि थोडे बहुत भारतीयो को कुलियो और अकुशल मजदूरो के रूप मे विदे-शियो के अधीनस्थ बागो, खानो, फैक्टरियो तथा रेलवे मे नौकरी मिलती भी है तो वहा उन्हें बहुत ही कम वेतन दिया जाता है। बहुतो को तो शोचनीय रूप मे एक या दो आने प्रतिदिन के हिसाब से काम करना पडता है, जिससे वे अपना दुर्भाग्यग्रस्त जीवन भी नही जी पाते।[58] यह स्थिति भारतीयो को सचमुच ही जीवन्मृत श्रमिको के स्तर पर ला रही है[59] तथा इस देश को 'पानी खीचने वालो का, लकडी काटने वालो[60] का और इससे भी

बढकर 'दासो का' देश बना रही है ।[61] भारतीयो को अपने ही देश मे क्रीतदास की स्थिति से सतुष्ट होना पडता है ।[6] दादाभाई नौरोजी का कथन था कि 'वास्तव मे वे तुच्छ दासो के रूप मे ही काय करते थे । ब्रिटिश पूजीपतियो को अपने उत्पादन सौपने के लिए उन बचारो ने अपनी ही धरती और अपने ही साधनो को पराधीन कर रखा था ।[63] फिर भी कुछ एक आलोचक आजीविका के नए साधनो को जन्म देने के लिए विदेशी पूजी के स्वागत को तैयार थे परतु वे इस दिशा मे स्पष्ट सूचित करते थे कि इससे देश का वास्तविक आर्थिक विकास कदापि सभव नही ।[64] उन्हाने यह भी स्पष्ट सूचित किया कि विदेशियो से मजदूरी के रूप मे मिलने वाले इस तुच्छ वेतन से भारतीय सदा के लिए सतुष्ट नही रहेंगे । एक दिन वे निश्चित रूप से सदा के लिए कुली और मजदूर बनाए रखने की प्रवत्ति के प्रति विरोध प्रकट करेंगे ।[65]

विदशी पूजी के विरोधिया ने यह मत भी स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त किया कि भारतीयो को मजदूरी के रूप म मिलने वाला पारिश्रमिक उनके ससाधनो के शोषण[66] तथा स्वदशी उद्योग धधा के विनाश[67] के परिप्रेक्ष्य मे किसी भी कसौटी पर कसने पर सवथा तुच्छ तथा अपर्याप्त था । प्राकृतिक उपज सबधी उद्योगो के सबध मे तो यह स्वत सिद्ध सत्य था। बागान उद्योगा के विषय मे भी यह पर्याप्त अशा मे सत्य ही था । समालोचका न स्थिति का इस सदभ मे प्रस्तुत करते हुए अपना मत प्रकट किया कि खान उद्योगो का विदेशिया द्वारा शोषण एक अत्यधिक गभीर प्रश्न है क्योकि खाना से निकलने वाली सामग्री के चुक जाने पर उनको फिर से चालू करना सभव ही नही है ।[68] विदेशिया द्वारा लूटे जाने की अपेक्षा अच्छा यही है कि खानो की सपदा खानो मे ही दबी तथा अविकसित बनी पडी रहे ताकि कालातर म भारतीय स्वय उसका सदुपयोग कर सकें ।[69] आलाचको का कथन था कि एक वास्तविक भारतीय सरकार से कम से कम इतने आवश्वासन की अपेक्षा तो की जा सकती थी ।[70] इसी प्रकार बागान उद्योग भी धरती की उवरता को समाप्त करते जा रहे थे ।[71] इन उद्योगा के सबध मे तो जी० वी० जोशी की टिप्पणी यह थी कि इनके द्वारा भारतीया के प्रति अतिरिक्त अन्याय हुआ है क्योकि प्रथम, राज्य ने सरकारी व्यय से अधिकाश बागान का विकास किया है और पुन क्षतिपूर्ति किए बिना ही ये उद्योग विदेशिया को सौप दिए गए हैं । उन्हें यहा पर भूमि भी नाममात्र की दरो पर दी गई है । वस्तुत इन उद्योगा पर बहुत थोडी सी ही विदेशी पूजी का निवेश हुआ है । य उद्योग सामान्य रूप मे भारतीय उद्यमिया को ही सुविधापूवक सौंपे जा सकते हैं ।[72]

भारतीय नताओ की दृष्टि मे विदेशी पूजी के प्रयोग से उत्पन्न होन वाले आर्थिक खतरे के साथ साथ राजनीतिक खतरा भी था ।[73] इस आलोचनापरक दृष्टिकोण का आधार यह विश्वास था कि विदेशी पूजी द्वारा किसी देश मे घुसने का अथ उस देश का राजनीतिक दमन है अथवा जिस प्रकार रानाडे न कहा व्यावसायिक तथा उत्पादन विशिष्टता स्वभावत ही राजनीतिक प्रभुत्व मे परिवर्तित हो जाती है ।[74] यह सकारण सबध इस तथ्य से भी सिद्ध था कि विदेशी पूजी समय के साथ साथ निहित स्वार्थों एव प्रबल विदेशी अभिमान तत्र को जन्म देती है[75] जो देश की प्रशासनिक नीतिया पर निरतर बढ़ते प्रबल प्रभाव को दृढ बनाने का काय करता है ।[76] 'हिंदू' ने अपने 23 सितबर

1889 के अक मे लिखा कि जिस देश मे विदेशी पूजी लगने लगती है, उस देश का प्रशासन तत्काल समृद्ध तत्वो के हाथ मे चला जाता है।

भारतीय नेताओ की चिता यह थी कि भारत जैसे पहले से ही विदेशी प्रशासन से अधिकृत देश मे यह राजनीतिक खतरा और कई गुना बढ जाता है। इस प्रकार की स्थिति मे विदेशी निहित स्वार्थों से प्रेरित होकर देशवासियो की न्यायोचित राजनीतिक आकाक्षाओ के प्रति शत्रुतापूर्ण दृष्टिकोण अपनाते हैं तथा उनकी राजनीतिक उन्नति के माग का रोडा बनते हैं।[77] 23 सितबर 1889 के अक मे हिंदू ने विलक्षण राजनीतिक दूरदर्शिता से यह भविष्यवाणी की कि यदि राजनीतिक सुधारो की अवधि मे देश मे विदेशी पूजीपतियो के प्रभाव को बढने दिया गया तो भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस की सफलता के अवसरो को नमस्कार करना पडेगा क्योकि उसका स्वर विदेशी पूजीपतियो के, 'साम्राज्य खतरे मे हैं', के भयकर गजन मे दबकर रह जाएगा।[77ए] कालातर मे जब कर्जन के शासनकाल मे राजनीतिक प्रतिक्रिया इतनी अधिक उग्र हो गई कि उसे लगभग प्रत्यक भारतीय जन नेता अनुभव करने लगा, तब सुरेंद्रनाथ बैनर्जी के 'बगाली' ने अवसरोचित टिप्पणी की इस प्रतिक्रिया का मूल भारत मे विदेशी पूजी द्वारा प्रयुक्त प्रभाव ही है।[78] तथ्यात्मक दृष्टि से देखें तो 20वी शताब्दी के प्रारभ मे ही भारतीय नेताओ ने यह भली प्रकार समझ लिया था तथा स्पष्ट निर्देश किया था कि भारत सरकार और भारत के ब्रिटिश पूजीपतियो म साठ गाठ है तथा भारत सरकार ब्रिटिश पूजीपतियो के हितो के अधीन है। इस दृष्टिकोण का 1903 मे उस समय शचीद्रनाथ सिन्हा द्वारा सपादित, इलाहाबाद के 'इडियन पीपुल' ने बडी स्पष्टता तथा प्रबलता के साथ प्रस्तुत किया

> लाड कर्जन के साक्ष्य पर अगरेजो का प्रशासनिक काय केवल शोषको के शोषण काय मे उनकी चाकरी करना है। बिना कुशल प्रशासन के व्यापार फल फूल नही सकता और व्यापार के लाभरहित होने पर प्रशासन, प्रशासन नही कहला सकता। भारत सरकार सदैव वाणिज्य सदन की स्वीकृति तथा अधिकाशत उसके आदेश के अनुसार ही काय करती है और यह गोरो के 'दायित्व' का रहस्य है।[79]

और यहा तक कि रानाडे ने भी टिप्पणी की कि विदेशी आर्थिक प्रभुत्व ने विदेशी राजनीतिक प्रभुत्व को और अधिक द्वेषजनक बना दिया है।[80]

बहुत सारे भारतीय नेता समस्या के दूसरे पक्ष से भी अभिज्ञ थे कि यह मूलत विदेशी शासन ही था जिसके कारण इस देश मे विदेशी पूजी ने एक बड भारी रोग का रूप ले लिया। यदि भारत एक स्वतत्र देश होता, तो वह अमरीका जैसे अन्य स्वतत्र देशो के समान सपत्ति की निकासी से मुक्त होता, अपनी आवश्यकताओ के अनुरूप अपने ससाधनो के विकास के लिए स्वतत्र होता, समान शर्तों पर विदेशी पूजी से प्रतियोगिता के लिए स्वतत्र होता, विदेशी पूजी से अपना प्रयोजन सिद्ध हो जाने पर उस अपदस्थ करने मे स्वतत्र होता तथा उसका एक ऐसा स्वतत्र प्रशासन होता जो स्वदेशी उद्यम को सहायता तथा प्रोत्साहन देता और यह देखता कि विदेशी पूजी का प्रयोग स्वदेशी उद्यम के विकास मे पूरक और सहायक सिद्ध हो।[81]

अधिकाश भारतीय नेता विदेशी पूजी के नियोजन के राजनीतिक तथा आर्थिक

प्रतिघातो के अध्ययन के परिणामस्वरूप इस तथ्य पर सहमत थे कि भले ही भारत को विदेशी पूजी की आवश्यकता हो परतु उसे विदेशी पूजीपतियो की तो कोई आवश्यकता नही। उन्होने ऋण पूजी तथा औद्यगिक पूजी के अतर को समझा था तथा उसे रेखाकित किया था।[82] जहा औद्योगिक पूजी उद्यम के सारे लाभा को हडप लेती है तथा सारे क्षेत्र पर एकाधिकार जमा लेती है।[83] वहा ऋण पूजी ब्याज के रूप मे केवल एक निश्चित तथा निर्धारित राशि की ही अधिकारी होती है। इस प्रकार वह अवशिष्ट लाभो, और मूल धन की अदायगी के पश्चात, सारे लाभा को उस देश मे ही रहने देती है। इस प्रकार आवश्यकता होने पर स्वदेशी उद्यम के विकास के लिए विदेशी पूजी उधार लेना तथा विदेशी तकनीकी लोगो से काम लेना तो बुरा नही, परतु सीधे विदेशी निवेश की तथा सीधे विदेशी पूजीपतिया द्वारा अपने स्वामित्व के उद्योग के सचालन की अनुमति कदापि नही देनी चाहिए।[84] दादाभाई नौरोजी का कहना था कि भारत को विदेशी पूजी की उत्कट आवश्यकता है न कि उसकी पूजी और उत्पादको को हडपने वाले अगरेजी धावे की।[85]

इस दृष्टिकोण मे दो दोष थे। भारतीय पूजीपतियो के पास अधिकाश वडे पमाने के नए उद्योगो, खाना तथा परिवहन सस्थाना के सचालन के लिए न तो पर्याप्त पूजी थी और न ही विदेशी पूजी बाजार म वाछित निधि के ऋण लेने की अपेक्षित साख। इस स्थिति म विदेशी पूजीपतिया को व्यक्तिगत रूप से इस दश मे आने तथा अधिकाश औद्योगिक क्षेत्र का स्वामित्व सभालने से किस प्रकार रोका जा सकता था ? इस समस्या का राष्ट्रीयकरण के रूप मे एक सवथा नवीन उत्तर देने के लिए 19वी शताब्दी के प्रमुखतम नेता, दादाभाई नौरोजी तथा जी० वी० जाशी आगे आए। उन्हाने 60 वष पीछे स्वतत्र भारत की सरकार द्वारा अपनाए जाने वाले माग को अपनी उल्लेखनीय सूक्ष्म दृष्टि से उस समय ही देख लिया था। उनका सुझाव था कि विदशी पूजी के हानिप्रद आर्थिक तथा राजनीतिक दुष्परिणामा से बचकर उससे लाभान्वित होने का एकमात्र उपाय उन उद्योगा का राष्ट्रीयकरण था, जिनके लिए अपरिमित विदशी धनराशि अपक्षित थी। इस प्रकार की स्थिति मे सरकार अपन राजस्वा की गारटी पर ब्याज की थोडी दर पर विदेशो से पूजी ऋण में ले सकती है तथा उसका देश के प्राकृतिक ससाधनो के विकास के लिए उपयोग कर सकती है।[86] यहा यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि उस समय राष्ट्रीयकरण की कल्पना केवल विदेशी पूजीपतिया के प्रवेश को राकने के उपाय के रूप म की गई थी। इसके सिवाय उसका समाजवाद के प्रवतन जसा कोई अन्य उद्देश्य नही था। वस्तुत सरकारी पूजीवाद तब तक के लिए एक अतरिम तथा अस्थाई उपाय था जब तक कि भारतीय उद्यमी इस पयाप्त सीमा तक जागरूक तथा विकसित नहीं हो जात कि इन उद्योगा को स्वदेशी पूजीपतियो के हाथो म ही सौंपा जा सके।[87]

निष्कपत उपयुक्त विवेचन म हम इन परिणामो पर पहुचते हैं प्रथम, विदेशी पूजी के उपयोग के समयक अथवा विरोधी भारतीय राष्ट्रवादी नेता भारत मे विदेशी निवेश के आर्थिक तथा राजनीतिक धारणा तथा परिणामो के प्रति अत्यत जागरूक थे। द्वितीय, सभी राष्ट्रवादी नताओ का दृढ विश्वास था कि दश का वास्तविक औद्योगिक विकास दश के अपने प्रयत्नो तथा अपनी पूजी पर निभर था। विदेशी पूजी के प्रयाग के समयको का

भी स्पष्ट मत यह था कि देश के सर्वथा अनुद्योगीकरण जैसी अपेक्षाकृत बड़ी बुराई की तुलना मे उद्योगीकरण के लिए विदेशी पूजी के निवेश की छोटी बुराई अपनाना ही अच्छा है। अधिकाश नेता तो विदेशी पूजी के साधन द्वारा देश के औद्योगिक विकास के निष्पादन की अपेक्षा उसके स्थगन के ही पक्षधर थे। इस प्रकार समीक्षाधीन काल के राष्ट्रीय आदोलन की अवधि मे दलाल पूजीवादी के दृष्टिकोण का न्यूनाधिक रूप से अभाव ही था। यहा यह भी भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि सभी राष्ट्रवादियो न समवेत स्वर म औद्योगिक पूजी के विकास का समथन किया था, न कि व्यापारिक पूजी के विकास का। ततीय, विदेशी उद्योगो के द्रुत विस्तार के कारण रेलवे आदि ने परोक्ष रूप से भारतीय उद्योग के विकास को प्रोत्साहन दिया था। दोनो मे शत्रुता अभी महत्वपूण अथवा निर्णायक नही बन पाई थी। उदाहरणार्थ, भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस इस प्रश्न पर पूणत मौन ही रही। 1885 95 की अवधि के अधिवेशनो मे उसने इस प्रश्न पर न तो विचार विमश किया और न ही इस पर कोई प्रस्ताव पारित किया तथा न ही सभापति पद से दिए गए किसी भाषण म इसका स्पष्ट उल्लेख हुआ। इस विषय पर काग्रेस की ओर से प्रथम भाषण 1898 के अधिवेशन मे जी० एस० अय्यर का था। हा, 20वी शताब्दी के उदय के साथ ही भारतीय औद्योगिक प्रयास बाल्यकाल से आगे बढने लगे तथा विदेशी पूजीपतियो से जिन्हे अपने उद्यम का लार्ड कर्जन जैसा प्रबल उन्नायक तथा शक्तिशाली वकील मिल चुका था, सघष करने लगे। इसके फलस्वरूप 1900 के पश्चात राष्ट्रवादी समाचारपत्र तथा काग्रेस मच से वक्ता विदेशी पूजी पर निरतर तीव्र प्रहार करने लगे।

II राज्य की भूमिका

भारतीय उद्यमी वग के ज्ञान, शक्ति तथा पूजी के अभाव की तथा उद्योगीकरण के मार्ग की प्रारभिक कठिनाइयो पर काबू पाने मे सुरक्षा तथा सहायता के अभाव की पूर्ति राज्य की सहायता और सहयोग से ही कदाचित सभव थी। अत भारतीय नेता उद्योगीकरण की प्रक्रिया मे राजकीय सहायता के प्रखर समथन मे न्यूनाधिक रूप से एकमत ही थे।[88] उनका यह दृढ विश्वास था कि औद्योगिक प्रयास के प्रत्येक क्षेत्र तक प्रसृत सरकारी सहायता की व्यापक नीति के बिना तथा स्वदेशी तथा आधुनिक दोनो औद्योगिक उद्यमो की प्रत्येक रूप और दिशा मे प्रगति सबधी सरकार की प्रत्यक्ष, सूझबूझवाली तथा सहानुभूतिपूण नीति के बिना देश की आर्थिक स्थिति नही सुधर सकती। यद्यपि भारतीय अथशास्त्री नेताओ ने इस दृष्टिकोण का विस्तृत विवरण सरकार के सामने काफी देर के बाद प्रस्तुत किया तथापि देश के उत्पादको और वाणिज्य को प्रोत्साहन देने की माग को सवप्रथम 1853 मे कलकत्ता की ब्रिटिश इडिया एसोसिएशन ने ईस्ट इडिया कपनी की घोषणा के नवीकरण के समय हाउस आफ कामस को निवेदित प्रज्ञप्ति मे प्रस्तुत किया।[89] 1891 म पूना म आयोजित द्वितीय औद्योगिक सम्मेलन मे निजी उद्योग को सरकार द्वारा सीधे वित्तीय तथा अन्य सहायता देने की माग प्रस्तुत की गई।[90] काग्रेस ने 1902 मे स्वदेशी कला और उत्पादन के उद्धार तथा विकास के लिए तथा नए उद्योग लगाने के लिए सरकारी प्रोत्साहन की माग की।[91] अन्य भारतीय नेताओ मे कदाचित जी० वी० जोशी और रानाडे इस नीति के

सबसे पक्के तथा मुखर समर्थक थे।[9] इस संबंध में जी० सुब्रह्मण्यम के शब्दों में मीजी की वापसी के बाद आधुनिक उद्योग के प्रोत्साहन में जापानी सरकार की भूमिका भारतीय अर्थशास्त्री नेताओं के लिए अत्यधिक रोचक तथा आकर्षक सिद्ध हुई[93] और उन्होंने भारत सरकार से इसकी प्रतिस्पर्धा करने का अनुरोध किया।[94]

भारतीय राष्ट्रवादियों ने औद्योगिक प्रयासों में सरकारी हस्तक्षेप की मांग की तथा उनकी भारतीयों के स्वामित्व के उद्योगों के प्रति भारत सरकार के सैद्धांतिक और व्यावहारिक बरताव के बारे में सरकार के साथ सीधी टक्कर हुई। ब्रिटिश शासकों ने अपने को *तटस्थता सिद्धांत का अनुयायी बताते हुए उस समय यह मत अभिव्यक्त किया कि औद्यो*गिक विकास को आगे बढ़ाने में सरकार अयोग्य है, अतः सभी ऐसे मामले निजी उद्यमियों पर ही छोड़ देने चाहिए।[95] इस प्रकार समीक्षाधीन अवधि के दौरान उद्योगों को प्राप्त सरकारी सहायता नगण्य सी ही थी। इस सहायता के दो रूप थे तकनीकी शिक्षा की सर्वथा अपर्याप्त व्यवस्था तथा टूटे मन से औद्योगिक जानकारी के संचय तथा प्रसार की चेष्टा।[96] इस क्षेत्र में सरकार के और अधिक प्रत्यक्ष तथा ऊर्जस्वी योगदान की *मांग करने* वाले भारतीयों को अपने आपको औद्योगिक प्रयासों के प्रबल समर्थक मानने वाले लार्ड कर्जन ने बुरी तरह से इन शब्दों में लताड़ा वर्तमान सरकार अथवा अन्य कोई भारतीय सरकार जादू की छड़ी घुमाकर ही इस विस्तृत देश की आर्थिक, सामाजिक तथा औद्योगिक स्थितियों में क्रांति ला सकती है।[97]

भारतीय अर्थशास्त्रियों ने इस बारे में भारत की नीति की दिशा बदलने की चेष्टा की। उनका विश्वास था कि इस नीति का दृढ़ता से पालन करने का एकमात्र कारण *शासकों का क्लासिकी राजनीतिक अर्थव्यवस्था में विश्वास व इसका अनुसरण ही था।* अतः उन्होंने तटस्थता सिद्धांत की सरकारी कार्यक्षेत्र में व्यावहारिकता पर विशेषतः भारत जैसे आर्थिक दृष्टि से पिछड़े देश के संदर्भ में, कटु सैद्धांतिक प्रहार करने आरंभ कर दिए। तटस्थता सिद्धांत के विरुद्ध किए गए सैद्धांतिक प्रहारों का विस्तृत विवरण इस पुस्तक के एक अगले अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

इसके *अतिरिक्त तत्कालीन भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के अग्रणी महान प्रतिभाशाली* अर्थशास्त्री नेता रानाडे ने भारतीय शासकों के वर्तमान तथा भूतकालीन आचरणों को उनकी सैद्धांतिक मान्यताओं के विरुद्ध बताया। उन्होंने यह निर्देश किया कि विगत वर्षों में सरकार ने औद्योगिक तथा व्यावसायिक उद्यम के प्रवर्तन तथा उन्नयन में और भारत में ब्रिटिश पूंजीपतियों को अतिरिक्त विशेषाधिकार प्रदान करने में प्रत्यक्ष तथा सक्रिय भाग लिया है।[98] *सरकार ने सर्वप्रथम रेल कंपनियों को सरकारी तौर पर गारंटी* प्रदान की और बाद में सरकारी रेलों के निर्माणकार्य को अपने हाथ में लिया।[99] सरकार ने ही भारत में सरकारी खर्चे पर और बड़े महंगे दामों पर कुनीन, चाय तथा कॉफी के पौधे उगाने के लिए बागान उद्योगों का प्रारंभिक प्रवर्तन किया है।[100] सरकार ने लोहा उद्योग की उन्नति के लिए उसे अनुकूल रियायतें देने के अतिरिक्त भूगर्भीय सर्वेक्षणों, प्रयोगात्मक परीक्षणों तथा उपादानों के रूप में राज्य की भारी धनराशि खर्च की है।[101] उसने अपनी इच्छा से कितनी ही कोयले की खानों पर लंबे समय तक काम किया है।[102] इस प्रकार

सरकारी सहायता का सिद्धात तो व्यावहारिक रूप से मान्यता प्राप्त है। समझ नही आता कि उसी प्रकार की सहायता अब अन्यान्य औद्योगिक उद्यमो को प्रदान क्यो नही की जाती? इस समय किसी नए सिद्धात के प्रस्थापन की आवश्यकता नही, प्रत्युत इस तथ्य के निर्धारण की आवश्यकता है कि किस प्रकार के उद्योगो को राजकीय सहायता प्रदान की जाए। गत वर्षों के समान बागान और परिवहन साधनो को बढावा देने के स्थान पर अब देश मे आधुनिक उत्पादक उद्योगो के प्रोत्साहन मे सरकारी सहायता का और अधिक लाभदायक ढग से प्रयोग किया जा सकता है।[103]

उद्योग को सरकारी सहायता और प्रोत्साहन के कई भिन्न भिन्न प्रकार के रूप हो सकते हैं। उनमे से अधिक महत्वपूर्ण की, जिनके आवश्यकतानुसार एकल अथवा सयुक्त रूप से ग्रहण के लिए बहुत सारे भारतीय नेताओ ने वकालत की, सक्षिप्त समीक्षा निम्न लिखित है

भारतीयो की दृष्टि मे भारत के औद्योगिक विकास की प्रबलतम बाधाओ मे से एक भारतीय औद्योगिक उद्यमियो के पास अपेक्षित पूजी का अभाव था अत उन्होने उपलब्ध व्यापारिक तथा साहूकारी पूजी को औद्योगिक पूजी म बदलने के लिए सरकारी सहायता की प्रबल आवश्यकता की माग की। इस महत काय के सपादन के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाना वाछित था। प्रथम, ऋण प्रणाली को आधुनिक रूप म पुनगठित करना होगा ताकि देश के आतरिक परतु बिखरे हुए उपलब्ध साधनो को गतिशील बनाया जा सके।[104] यह तक भी प्रस्तुत किया गया कि ऋण प्रणाली का निजी विकास ऋणदाता तथा ऋणकर्ता के आपसी विश्वास पर निभर है अत उसकी प्रक्रिया का अत्यत मद होना निश्चित ही है। देश की विशाल धनराशि की तथा सावदेशिक साख और विश्वास की एकमेव पात्र होने के कारण सरकार जमा और निकासी करने वाले बको का सरकारी सरक्षण अथवा गारटी देकर बचत करने वालो और उधार लेने वालो के बीच व्यापारिक सबध स्थापित करने मे अपनी साख तथा अभिकरण का उपयोग कर सकती है।[105] राज्य के निर्देशन तथा नियत्रण मे काय करने वाले सयुक्त पूजी-बको का बहुत बडा जाल बिछाने की आवश्यकता थी।[106] इस काय मे सरकार का एक पैसा भी खच करने की आवश्यकता नही। उसे केवल बको को ऋण उगाहने की सुविधाए जुटाना मडलीय शेष राशि का उपलब्ध कराना तथा नियत्रक लेखा परीक्षा की व्यवस्था करना है।[107] इससे भी अधिक अच्छा यह है कि सरकार स्वय प्राइवेट पूजीपतियो को अपनी उचित देखरेख मे ब्याज की थोडी दर पर अग्रिम ऋण देने की व्यवस्था करे।[108] इसके लिए सरकार धन उधार ले सकती है अथवा बचत खातो पर निभर कर सकती है।[109]। इस सबध मे रानाडे ने एक रोचक सुझाव यह दिया कि सरकार अथवा स्थानीय समितिया विशिष्ट वित्त निगमो की स्थापना करें। ये निगम सरकार से सस्ती दर पर रुपया उधार लें तथा भावी उद्योग पतियो को अग्रिम ऋण प्रदान करें।[110] इसके अतिरिक्त सरकार रेल कपनियो के प्रति अपनाई सहायता की नीति के समान आधुनिक उद्योगो के प्रति अपनी नीति निर्धारित कर सकती है तथा पूजी जुटाने वाले भारतीयो को न्यूनतम निश्चित ब्याज चुकाने की गारटी देकर उन्हें नए उद्योगो मे पूजी लगाने को प्रेरित कर सकती है।[111] सरकार रेलो

के समान भारतीय पूजीपतियो को विदेशी बाजार से ऋण लेने मे गारटी दे सकती है[112] तथा सस्ते ऋणो की प्राप्त के प्रतिफल के रूप मे सरकार औद्योगिक व्यवस्था के देखभाल और नियत्रण की शक्ति प्राप्त कर सकती है कालातर मे तो लाभो की भागीदार तक बन सकती है।[113] सरकार से तो इसमे भी और आगे बढने के लिए इस प्रकार कहा गया कि सरकार जन्म और शैशवकालीन प्रारभिक कठिनाइयो से जूझते हुए पनपन वाले उद्योगो की अनुग्रहो अनुदानो के रूप मे सीधे ही सरकारी कोष से सहायता करे[114] ताकि वे उद्योग अपनी कठिनाइयो पर काबू पा सकें तथा अपने पैरो पर खडे हो सकें।[115]

भारतीय नेताओ का सरकार से दूसरा अनुरोध सरकारी तथा रेल भडारो की क्रय सबधी नीति के पुनर्निर्धारण का था। भारत मे आयातित कुल उत्पादन सामग्री का उल्लेखनीय भाग इन भडारो म था। आयायित सामग्री मे ये वस्तुए सम्मिलित थी भारतीय सेना तथा पुलिस के उपयोग के उपकरण, नगर सुधार की सामग्री, जल, गैस, मलमूत्र व्यवस्था, मैडिकल स्टोरो तथा हस्पतालो के उपयोग की सामग्री, गोदी, पुलो बिल्डिगो तथा सडको के बनाने के लिए लोहा तथा सीमेंट, तार तथा टेलीफोन के लिए अपेक्षित सामान, प्रशासन के उपयोग मे आने वाली स्टेशनरी तथा अन्य वस्तुए। इन सबसे बढकर और अधिक सामान था रेलो की पटरिया, पुल, गाडी के डिब्बे तथा सेना के लिए भवन निर्माण की सामग्री। इन भडारो के लिए थोडे बहुत नगण्य सामान को छोडकर प्राय सारा ही सामान इग्लैंड से खरीदा जाता था। फलत भारतीय नेताओ की शिकायत थी कि सरकार की भडारो की क्रयनीति भारतीय उत्पादको के प्रति विद्वेषपूर्ण थी तथा ब्रिटिश उत्पादको को सहायता पहुचाती थी। उनका तक था कि सरकार इन भडारो के लिए भारतीय उत्पादको से माल खरीद कर भारतीय उत्पादको के लिए लाभदायक दरो पर न्यूनतम सुरक्षित बाजार की गारटी देकर भारतीय औद्योगिक प्रयत्नो को जबरदस्त प्रोत्साहन दे सकती है।[116] पर्याप्त रोचक तथ्य यह है कि इस माग का समर्थन भारत म कायरत कुछ एक ब्रिटिश पूजीपतियो ने भी किया और इसे 1880 के अकाल आयोग का, लार्ड रिपन की सरकार का तथा 1916 18 की अवधि के भारतीय उद्योग आयोग का भी अनुमोदन प्राप्त हुआ।[117] अतत इसका परिणाम यह निकला कि भारत स्थित फर्मों म भी माल खरीदा जाने लगा। इसके फलस्वरूप 1898 मे लखनऊ के 'हिंदुस्तान' ने सरकार की भारत स्थित भारतीयो की फर्मों की उपेक्षा तथा यूरोपीयो के स्वामित्व की फर्मों से माल खरीदने की प्रवृत्ति का विरोध किया।[118]

भडारो की सभी वस्तुए भारत म उपलब्ध नही अथवा उत्पादित नही होती इस आपत्ति का उत्तर कुछ एक भारतीय नेताओ ने और भी अधिक मौलिक सुझाव के रूप म इस प्रकार दिया कि सरकार स्वय इन वस्तुओ का उत्पादन करे।[119] अनेक भारतीय लेखको ने यह सुझाव तथा सरकार द्वारा प्रत्यक्ष उद्यम को अपनाने का और इस प्रकार तटस्थता की नीति के परित्याग का सुझाव एक अन्य आधार पर भी दिया। उनका सुझाव था कि नए उद्योग के प्रारभ करने म असख्य विषम प्रकृतिगत कठिनाइयो के कारण सरकार को आगे आना चाहिए तथा उनकी व्यावहारिक उपयोगिता तथा लाभकारी चरित्र को ... करते हुए प्रारभिक कठिनाइयो पर[120] काबू पाकर उद्यम का माग प्रशस्त करना

चाहिए तथा निजी उद्यमियों को इस कार्य में प्रवृत्त होने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए।[11]

भारतीय नेताओं द्वारा भारतीय उद्योगों की उन्नति के लिए सरकार को सुझाए गए अन्य महत्वपूर्ण उपाय थे वाणिज्य और उत्पादन के एक पृथक सविभाग की स्थापना[1] - जिसे उपलब्ध साधनों[13] को जुटाने की, सरकार और निजी कंपनियों की विशेषज्ञता के ज्ञान तथा कौशल में सहायता करने व परामर्श देने की, सर्वेक्षण आदि के द्वारा जानकारी के संग्रह तथा उसके व्यापक प्रसार की, शुल्क-पद्धति में सरक्षण प्रदान करने की, मशीनरी पर निर्यात शुल्क हटाने की तथा तकनीकी शिक्षा को प्रोत्साहन देने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो।[14] उद्योगीकरण की प्रक्रिया में राजकीय प्रोत्साहन की भारतीयों की माग उस समय अपने चरम पर पहुच गई जब 1904 में गोपालकृष्ण गोखले ने कुछ एक राजकीय आर्थिक योजनाओं की वकालत की। उस वर्ष के अपने बजट भाषण में उन्होंने कहा, वास्तव में परिस्थितियों की माग यह है कि पूर्ण विवेक तथा दूरदृष्टि का उपयोग करते हुए जनता की नैतिक तथा भौतिक उन्नति के लिए व्यापक तथा विस्तृत योजना बनाई जाए और फिर उसपर दृढ़ता तथा निरंतरता के साथ अमल किया जाए तथा लगभग वर्ष प्रतिवर्ष उसकी प्रगति की पूरी समीक्षा की जाए।'[155]

औद्योगिक प्रयासों में सरकारी सहायता की माग में उल्लेखनीय स्पष्टता को देखते हुए इस तथ्य को नहीं भूल जाना चाहिए कि निश्चय रूप में इस माग को प्रधान रूप से तो भारतीय नेतावर्ग में अर्थशास्त्रियों ने ही अभिव्यक्त किया। उस समय राष्ट्रीय समाचारपत्रों तथा कांग्रेस के अधिवेशन में सामान्य रूप में इस बात की जोरदार माग नहीं की गई। स्पष्टत इस लाभकारी माग के लिए उत्साहपूर्ण चेष्टा के अभाव का कारण यह व्यापक संदेह था कि क्या एक विदेशी सरकार, चाहे वह कितनी भी उदार क्यों न हो, अपने देश के उत्पादकों के हितों के विरुद्ध जाने वाली कोई नीति अपनाएगी? उदाहरणार्थ जी० वी० जोशी द्वारा जनवरी 1890 के 'पूना सार्वजनिक सभा' जनरल में प्रकाशित एक लेख 'इकानामिक सिचुएशन इन इंडिया' में विश्लेषित राज्य की आर्थिक भूमिका का समर्थन करते हुए हिंदू ने अपने 3 फरवरी 1890 के अंक में पैनी अंतर्दृष्टि से लिखा

> स्वदेशी उद्योगों के प्रत्यक्ष विकास के लिए उन्हें यथासंभव किसी भी मूल्य पर कोई प्रोत्साहन न देकर उन्हें अवनत बनाए रखना ब्रिटिश राष्ट्र के हित में ही है। ब्रिटिश शासक भारत की अधीनता के फलस्वरूप एक सबसे बड़े लाभ की आशा करते और उस यथार्थ में प्राप्त करते हैं कि भारत उन्हें अपने औद्योगिक उत्पादनों की खपत के लिए एक असीमित बाजार जुटाता है। इस प्रकार की परिस्थिति में पूना के लेखक के सुझाव के अनुरूप सरकार से कुछ भी करने की आशा की संभावना नहीं है।

31 मई 1890 के अंक में बंगवासी ने इस तथ्य को और भी स्पष्ट रूप दिया

> ' निस्संदेह स्वदेशी उद्योगों के उद्धार और विकास के लिए सरकारी सहायता अति आवश्यक है परंतु क्या उस सरकार से भारतीय उद्योगों को प्रोत्साहन देने की आशा

> की जा सकती है जो न केवल विदेशियो की है, विरोधी धम वालो की है प्रत्युत उन लोगो की है जो स्वय उत्पादक और व्यवसायी है ? तथ्य यह है कि अगरज उत्पादक भारतीयो द्वारा स्वदेशी उत्पादन की अत्यत साधारण वस्तुआ के प्रयोग को भी फूटी आख नही देख सकते और वस्तुत वे तब तक चैन नही लेंगे जब तक भारत मे उत्पादित पदार्थों को भारतीय बाजार से बाहर न फिकवा दें। और यह अगरेज उत्पादक ही अगरेजी राष्ट्र हैं, जिनका हित अन्य सबके हिता में ऊपर है। इस हित की देखभाल और सुरक्षा ही अगरेजी कूटनीति का उद्देश्य है।[16]

भारतीय लोकमत के अन्य अनेक प्रवक्ताओ ने भी इसी प्रकार के सदेह प्रकट किए।[17] इन सदेहो का आधार उस समय ब्रिटिश विचारधारा पर आधिपत्य जमाए हुई औपनिवेशिक अथनीति के चरित्र का तथा ब्रिटिश की भारत म वास्तविक राजनीतियो का अध्ययन था। उनके अनुसार अपनी कथनी के प्रतिकूल व्यवहार करते हुए ब्रिटिश भारतीय सरकार व्यवहार मे न केवल भारतीय उद्योग की सहायता मे असफल रही है प्रत्युत उसने विदेशी प्रतियोगियो—जिन्होने यहा के उद्योगा को आमूल चल नष्ट भ्रष्ट कर दिया है—को सहायता देकर उसे हानि भी पहुचाई है।[18] यह तथ्य उनके भय की सर्वोत्तम सपुष्टि करने वाला था।

स्वदेशी

भारतीय राष्ट्रवादिया द्वारा देश की बढती दरिद्रता को रोकने तथा परपरागत और आधुनिक उद्योगो को प्रोत्साहन देन के उपायो मे वर्षों तक स्वीकृत तथा समर्थित एक उपाय था स्वदेशी की भावना का प्रचार प्रसार। स्वदेशी आदोलन का अथ था भारत निर्मित सामग्री के प्रयोग को प्रोत्साहन देना तथा विदेशी माल न खरीदना, उसका परित्याग और यहा तक कि उसका बहिष्कार। यद्यपि आधुनिक भारत के इतिहास म स्वदेशी आदोलन को 1905 मे बगाल के विभाजन के विरुद्ध अखिल भारतीय आदोलन के समय उल्लेखनीय सफलता मिली तथापि स्वदेशी भावना की तत्काल तथा विस्तृत स्वीकृति के लिए तथा आन्दोलन की उस विशिष्ट घटना मे मिली प्रभावशाली सफलता के लिए गत दशाब्दिया से ही उपयुक्त क्षेत्र प्रस्तुत किया जा रहा था। वस्तुत स्वदेशी भावना और स्वदेशी आदोलन दोनो उतने पुराने है जितनी कि स्वय उदीयमान राष्ट्रीय चेतना। सहज भाव से और अत्यधिक अव्यवस्थित तथा विच्छिन्न रूप से पनपे स्वदेशी आन्दोलन को अपने प्रारभिक वर्षों म ही न केवल अपने समय की मान्यता प्राप्त सामाजिक सस्थाओ का, प्रत्युत भारतीय भाषाओ के समाचारपत्रो तथा असख्य अप्रतिबद्ध लोगो के स्थानीय प्रयासो का भी व्यापक समर्थन प्राप्त हो गया। इस विषय पर प्रकाशित सामग्री की अत्यन्त स्वल्पता के कारण इस आदोलन के प्रारभिक इतिहास का यहा सक्षिप्त विवेचन कदाचित अनुचित न होगा।

1849 म ही 'प्रभाकर' पत्र के लेखो म आयातित सामान के स्थान पर भारतीय उत्पादो के प्रयोग का समर्थन करने वाले पूना के गोपाल राव देशमुख भारतीय जनता के महानुभावो म एक थे।[19] बगाल म स्वदेशी आदोलन के इतिहास का सूत्रपात

नवगोपाल मित्र के प्रयासो से होता है जिन्होने 1867 मे एक हिंदू अथवा राष्ट्रीय मेले का आयोजन किया, जो नियमित रूप से चौदह वर्षों तक प्रतिवर्ष लगता रहा। अन्य राष्ट्र निर्माण सबधी गतिविधियो के अलावा इस मेले के प्रमुख उद्देश्यो म से एक भारतीय शिल्पकला के उत्पादनों की प्रदशनी लगाकर स्वदेशी उत्पादनो के प्रयोग को बढावा देना था।[130] नवगोपाल मित्र को इस क्षेत्र मे प्रवत्त तथा यत्नशील होने की प्रेरणा राजनारायण वसु से मिली। राजनारायण प्रारभिक बगाली राष्ट्रवादी नेताओ मे आदरणीय ऋषि तुल्य थे। वह विदेशी उत्पादनो के परित्याग तथा स्वदशी वस्त्रो व अन्य वस्तुओ के प्रयोग को प्रोत्साहन देने वालो मे अग्रणी थे।[131]

उन्नीसवी शताब्दी के आठवें दशक मे स्वदेशी भावना का अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त हो गई। 1870 मे विश्वनाथ नारायण मित्र द्वारा सचालित नेटिव ओपीनियन ने देशप्रेम की भावना वाले लोगो मे अनुरोध किया तथा उन्हे अपने देशवासियो मे महगे दाम पर भी स्वदेशी वस्तुओ के खरीदने का परामश दिया।[132] 1872 मे रानाडे ने पूना मे आर्थिक विषयो पर एक सावजनिक भाषणमाला का आयोजन किया जिसम उन्होने स्वदशी भावना को इस रूप म लोकप्रिय बनाया कि अपने देश के बने सामान भले ही विदशी उत्पादनो से महगे हो और उनकी अपेक्षा भले ही कम सतोषजनक हो, हमारे लिए उनको ही प्राथमिकता दना उचित है।[133] इन गौरवमडित भाषणो ने श्रोताओ को इतना अधिक उत्तेजित किया कि उनमे से बहुतो ने जिनमे प्रमुख रूप से थे, गनेश वासुदेव जोशी[134] जो अपनी लोकप्रियता मे सावजनिक रूप मे 'काका' के नाम से प्रसिद्ध थे तथा पूना सावजनिक सभा के सस्थापको मे तथा प्रधान सक्रिय कायकर्ताओ म अग्रणी थे और वासुदेव फडके ने जिन्होने बाद मे सरकार के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह किया था उत्साहित होकर केवल स्वदेशी वस्त्र धारण करने तथा एकमात्र स्वदेशी वस्तुओ के ही प्रयोग की कसम खाई।[135] जी० बी० जोशी अपनी धोती, कुरते और साफे के लिए प्रतिदिन स्वय सूत कातते थे, उन्होंने स्वदेशी सामान को लोकप्रिय बनाने तथा उसका प्रचार करने के लिए अनेक स्थानो पर दुकानें खोली तथा 1873 के तडक-भडक और धूमधाम वाले दिल्ली दरबार म अपने हाथो की बनी खादी की वेशभूषा मे ही सावजनिक सभा का प्रतिनिधित्व किया।[136] फडके महोदय भी समान रूप से स्वदेशी के प्रचार के दीवाने थ। उन्होने सैकडो युवको को स्वदेशी प्रयोग की कसम खाने को तैयार किया।[137] 1873 म 'रास्त गोफ्तार' ने अपने 13 जुलाई के अक म मराठी के 'निश्चय पत्रिका' अथवा 'जन प्रस्ताव पत्र' का गुजराती अनुवाद प्रकाशित किया जिसके सबध मे कहा जाता है कि वह अनेकानेक लोगो द्वारा सयुक्त रूप से हस्ताक्षरित होकर परिचलित किया जा रहा था। प्रस्ताव मे लोगो का आह्वान किया गया था कि जो लोग अपने देश से प्यार करते हैं उन्हे देश के अपने उद्योगो के द्रुत विनाश को रोकने के लिए विदेशी सामग्री खरीदना बद कर देना चाहिए तथा थोडे-बहुत महगे तथा स्तर मे थोडे-बहुत घटिया होने पर भी अपने देश के उत्पादन ही खरीदने चाहिए।[138] 'इदु प्रकाश' के 23 अगस्त 1875 के अक मे भी इसी प्रकार के भाव अभिव्यक्त किए गए थे।[139] विपिनचन्द्र पाल के अनुसार 1874 मे नागपुर मे गृहनिर्मित वस्तुओ के उपयोग को प्रोत्साहित करने के लिए एक सगठन अस्तित्व म आ गया था।[140] उसी वष केवल भारत

मे ही उत्पादित सूती सामान के व्यापार के लिए बगलौर मे एक कपनी का गठन किया गया। कपनी ने मानचेस्टर के सामान का व्यापार करने का सकल्प किया।[141] अमृत बाजार पत्रिका के 6 जनवरी 1876 के अक मे राजकोट के एक पाठक ने लिखा 'हमने विदेशी सामान का इस्तेमाल न करने का सकल्प कर लिया है। हम एक ओर अगरेजी सामग्री को अपदस्थ करने के साधनो की खोज का और दूसरी ओर जनता की स्वदेशी वस्तुओ के प्रति रुचि बढाने का प्रयत्न कर रहे है।'[14]

'ए वाइस फार दि कामर्स ऐंड मैनुफैक्चर्स आफ इडिया' शीर्षक से बगाल मे 1873 76 की अवधि मे मुकर्जी की पत्रिका मे प्रकाशित विस्तृत लेख मे भोलानाथ चद्र ने स्वदेशी के पक्ष मे अपनी बुलद आवाज उठाई। उन्होने देशवासियो से अनुरोध किया कि वे विदेशी सामान की खरीद छोडकर थोडी सी देशभक्ति का परिचय तो दें।[143] उन्होने अपने देश वासियो के यूरोप मे बने सामान के प्रति सामान्य उन्माद को अराष्ट्रीय प्रवृत्ति बताते हुए उसकी भर्त्सना की। इस सबध में उन्होने निर्देश किया

> अब अपने राष्ट्र के प्रति अत्यत झूठे और राष्ट्रीय उत्पादनो की गिरावट के लिए प्रेरक लोग हैं राजा,जमीदार, बाबू तथा हमारे बडे बडे कस्बो और शहरो के लोग। उत्कृष्टता तथा सस्तेपन की इच्छा वास्तविक इच्छा न होकर चापलूसी और बुद्धिव्यामोह ही अधिक है। इस व्यवहार का वास्तविक कारण यही है। उनके इस विश्वासघात को रुचि-परिष्कार कहकर क्षमा नही किया जा सकता क्योंकि उनके इस आचरण से देश के सर्वोत्तम हितो को आघात पहुचता है।

उन्होंने अपनी जाति की अप्रतिम दासवृत्ति तथा भ्रष्टता पर विलाप किया परतु आशा प्रकट की कि सदा के लिए सर्वस्व समाप्त नही हो गया है। उन्होने राजनीति, दूरदर्शिता, तर्क तथा कौशल से अपने देशवासियों से विनष्ट समृद्धि की पुन प्राप्ति के लिए नैतिक विरोध के शस्त्र का प्रयोग करने के रूप म विदेशी सामान का बहिष्कार करने का अनुरोध किया।[144] उनके इस दृष्टिकोण के प्रतिपादक पूरे अवतरण को यहा प्रस्तुत करके ही उसे समझा जा सकता है

> कल की गलतियो से जो हानि हुई है उसकी पूर्ति आज की बुद्धिमत्ता से की जा सकती है। किसी प्रकार के शारीरिक बल प्रयोग के बिना, किसी प्रकार के राजद्रोह के बिना तथा किसी प्रकार की सावैधानिक सकटकालीन सहायता के लिए प्रार्थना के बिना ही, अपनी पूर्वस्थिति को पुन प्राप्त करना सर्वथा हमारे अपने ही हाथ में है। और कुछ नहीं केवल हमारी सक्रिय सहानुभूति न मानचेस्टर के लक्ष्य को सिद्ध किया है। हमारी सहानुभूति यदि उसके विरुद्ध हो तो उसका परिणाम भी निश्चित ही विपरीत होगा। हमारे लिए एकमात्र परतु अत्यत प्रभावशाली नैतिक विरोध के आखिरी शस्त्र का प्रयोग अपराध नहीं। हम अगरेजी सामग्री के प्रयोग न करने के सकल्प रूप सशक्त शस्त्र का प्रयोग करना चाहिए और फिर देखिए कि इस प्रकार के सकल्प की प्रवृत्ति के फलस्वरूप गलत विषयो को किस तरह ठीक किया जा सकता है।[145]

75 मे ढाका के लोग पहले से ही नैतिक विरोध के इस शस्त्र के प्रयोग का निश्च

तथा मांचेस्टर के वस्त्रो के बहिष्कार का सकल्प कर चुके थे।[146] बगाल के अनेक समाचारपत्रो ने अपने पाठको मे अगरेजी वस्त्रो के प्रयोग को बद करने तथा भारतीय मिलो को सरक्षण देने का अनुरोध किया।[147]

1880-1895 की अवधि के पद्रह वर्षों मे स्वदेशी की लहर देश मे उत्तरोत्तर बढती ही गई। जब भारत सरकार ने लकाशायर के उत्पादको को सतुष्ट करने के लिए सूती कपडो पर आयात शुल्क हटा दिए तो सरकार की इस करनीति से स्वदेशी की लहर को बडा प्रोत्साहन मिला।[148] पश्चिमी भारत के लोगो मे स्वदेशी उद्योगो के विनाश के विरुद्ध तथा अगरेजी मशीनो से बने सामान के प्रयोग के विरुद्ध रचित लोकप्रिय गीत बहुत प्रचलित हो गए।[149] उस समय देश म एक शक्ति समझी जाने वाली अमृत बाजार पत्रिका ने 1881 म एक लोकप्रिय सगठन बनाने का प्रबल आह्वान किया ताकि भारत के बाहर उत्पादित सूती वस्त्रो के बहिष्कार का प्रचार करते हुए मांचेस्टर की चुनौती का सामना किया जा सके। भारत के सभी प्रमुख नगरो मे अपने शिष्टमडल भेजिए भारत की सभी भाषाओ म इश्तहार छापिए। उसन स्वदेशी आदोलन के भावी विकास को बडी बुद्धिमत्ता स पहले से ही देखते हुए यह माग प्रस्तुत की कि विदेशी उत्पादनो के व्यापारियो के जाति बहिष्कार का प्रयत्न करना चाहिए।[150]

1881 मे देशी उत्पादनो के प्रयोग को बढाने के लिए इलाहाबाद मे एक देशी तिजारत कपनी शुरू की गई। मदनमोहन मालवीय इसके प्रमुख जन्मदाताओ मे एक थे।[151] 18 अप्रैल 1883 के कोहेनूर के प्रतिवेदन के अनुसार लाहौर मे कतिपय शिक्षित भारतीयो ने 'इडियन नेशनल ऐसोसिएशन' नामक एक सस्था की स्थापना की थी। इसके सदस्यो को एक लिखित शपथ ग्रहण करनी पडती थी जिसके अतगत यथासभव स्वदेशी वस्तुओ का उपयोग उनके लिए अनिवार्य था।[152] अजमेर मे भी इसी प्रकार की सस्था के सगठन की सूचना मिलती है।[153] 1890 मे ढाका कालेज के छात्रो ने एक स्वदेशी भडार खोला।[154] बबई के विभिन्न भागो म अगरेजी वस्त्रो के स्थान पर भारतनिर्मित वस्त्रो के प्रयोग के प्रचार के लिए असख्य जनसभाए हुई और इन बहुत सी सभाओ मे नियुक्त प्रतिनिधियो ने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बबई मिलमालिक सघ से सलाह और सहायता की याचना की।[155] देश के सभी भागो के भारतीय समाचारपत्रो ने भारतीयो से विदेशी माल का बहिष्कार करने का, एकमात्र भारतीय सामान के प्रयोग का, स्वदेशी उत्पादनो की बिक्री के लिए भडार खोलने का तथा इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए लोकप्रिय सघो के सगठित करने का प्रबल अनुरोध किया। उत्तर-पश्चिमी प्रातो तथा अवध के अल्मोडा अखबार ने 1 मई 1882 के अक मे, 'नसीमे आगरा' ने 7 जून 1889 के अक मे 'रहबर' न 16 जुलाई 1889 के अक मे, हिंदुस्तानी' ने 11 अप्रैल 1894 के अक में, पजाब के 'इपीरियल अखबार' ने 9 फरवरी 1889 के अक मे, पजाब पच ने 30 जुलाई 1891 के अक मे, पैसा अखबार' ने 10 अगस्त 1891 के अक मे, 'अखबारे आम' ने 18 जुलाई 1895 के अक मे, मद्रास से, 'आय जन पारपालिनी, ने 1 सितबर 1889 के अक मे, बरार से 'बृहद समाचार' ने 22 जून 1891 के अक मे, बबई से 'मराठा' ने 13 मार्च 1881 के तथा 8 जुलाई 1894 के अको में, 'नेटिव ओपीनियन' ने 26 मार्च 1891 के अक मे,

'पूना वैभव' ने 10 मई 1891 के अक में, 'हिंदू पच' ने 22 माच 1894 के अक में, 'आर्योदय' ने 18 माच 1894 के अक में, 'मादवत्त' ने 2 अगस्त 1894 के अक में, बगाल स 'सोम प्रकाश' ने 23 जनवरी 1882 के अक मे, 'आनद बाजार पत्रिका' ने 27 माच 1882 के अक मे, 'भारत मिहिर' ने 16 मई 1882 के अक मे, 'सजीवनी' ने 14 जून 1884 के अक में, 'समय' ने 22 जून 1882 के अक म, 'बगवासी' ने 16 तथा 23 नवबर 1889 के और 2 मई 1891 के अक में, 'समय और साहित्य' ने 5 अप्रैल 1891 के अक में तथा 'एजुकेशन गजट' ने 5 जून 1891 के अक में इस कायक्रम का बडा जोरदार समथन किया।[156] जनता तथा प्रशासका मे अधिक सुसस्कृत तथा सम्मानित दिखाई दन के लिए पश्चिमी वस्त्रा तथा अन्य उत्पादनों का प्रयोग करने वाला की तीव्र भत्सना की गई। अमृत बाजार पत्रिका ने अपने 19 जुलाई 1891 के अक में लिखा

> विभिन्न प्रकार के यूरोपीय वस्त्रा की आवश्यकता केवल उन लागा को है, जो अपने को छैलछबीला दिखाने के शौकीन है। हम हिंदुओ की तो हजारा वष पुरानी आत्म सस्कृति है, हम इन रातोरात धनी बन जाने वाला तथा सब प्रकार की सौम्यता का विकृत करने वाला की कलुषित रुचि से निश्चित रूप से वरेण्य सिद्ध हो सकते हैं। वस्तुत इन लोगा के आचार व्यवहार मे तो अपन को सम्मानित एव कुलीन दिखान को कुछ होता नही अत वे लाग धन से उपलब्ध हाने वाले साधना स ही अपने का ऊचा दिखान की चेष्टा करत है।

इस अवधि म स्वदेशी भावना को देश की मान्य जन सस्थाए भी अपनाने लगी। पश्चिमी भारत औद्योगिक सघ के तत्वावधान मे हुए द्वितीय औद्योगिक सम्मेलन म प्रमुख विधिवेत्ता, शिक्षाशास्त्री, उद्योगपति तथा लोकनायक पूना के एम० वी० नामजोशी ने सस्था के सदस्या से आग्रह किया कि वे आयातित वस्तुआ के स्थान पर भारतीय उत्पादना के प्रयोग का प्रयत्न करें तथा अगले वार्षिक सम्मेलन म अपने प्रयत्ना के परिणामा की सूचना दें।[157] बगाल मे आयोजित पहले के कुछ एक प्रातीय सम्मेलना म स्वदशी की आवश्यकता पर उत्साहपूवक बल दिया गया। इन सम्मेलना म 1894 म बदवान म आयोजित सम्मेलन विशेष उल्लेखनीय है।[158] काग्रेस मच से यह नारा 1891 के अधिवेशन म उस समय सुनाई दिया जब पजाब के प्रचड काग्रेसी नेता लाला मुरलीधर ने प्रतिनिधिया का आड हाथा लेते हुए कहा कि आयातित सामान खरीदने का अथ अपने भाइया के हृदय के रक्त म हाथ रगना है।[159] 1894 म उन्होंने इस विषय को फिर उठाया और प्रतिनिधिया से विदेशी वस्त्रा तथा विलास सामग्री का छोडने तथा व्यवहार म भी निधना स सच्ची सहानुभूति रखने वाला बनकर दिखाने का अनुरोध किया। अधिवेशन के सवाददाता के अनुसार श्रोताओ ने लालाजी के इस अनुरोध पर दर तक प्रचड जयजयकार की।[160]

1896 म स्वदेशी आदोलन उस समय प्रबल हो उठा जब राजनीतिक दृष्टि स सचेत सारा भारत भारतीय वस्त्रा पर बदले की भावना स लगाए गए सीमा शुल्क के विरुद्ध गुस्से म आगबबूला हो गया।[161] नेताओ ने अनुभव किया कि धम तथा अन्य भेदभावा को भुलाकर सभी भारतीया के लिए सगठित होने तथा लकाशायर के वस्त्रा के बहिष्कार की शपथ लेते हुए राष्ट्रीय उद्देश्य के लिए जागत होने का उपयुक्त समय यही था।[162] इस

भी अनुभव किया गया कि इस आंदोलन को कोरी प्रार्थनाओं, मौखिक विरोधों तथा प्रस्तावों से बहुत ऊपर ले जाने और आगे बढाने की आवश्यकता थी। समय की माग मानचेस्टर के साथ सभी प्रकार के व्यापार का बंद करने के संगठित प्रयास करने की थी।[163] भारत में आधुनिक वस्त्र उद्योग के केंद्र की गरिमा के अनुरूप बंबई प्रांत ने आंदोलन को नया आयाम देने का नेतृत्व किया। इस प्रांत के विभिन्न भागों में लंकाशायर के उत्पादनों का बहिष्कार करने के लिए संस्थाओं और समितियों को संगठित किया गया।[164] बंबई प्रांत के सारे समाचारपत्र बहिष्कार के आंदोलन के समर्थन के लिए सक्रिय हो उठे।[165] स्वदेशी वस्त्र के अतिरिक्त न कुछ पहनने और न कुछ बेचने की सार्वजनिक प्रतिज्ञाएं प्राप्त करने के लिए तथा विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार को सुगठित करने के लिए पूना, अहमदनगर, सतारा, बारसी, जलगाव, मनमाड तथा राजापुर में विशाल जनसभाएं हुईं। बंबई की गतिविधि की लोकप्रियता का परिचय अहमदनगर की स्वदेशी गतिविधि पर 17 मार्च 1896 के 'टाइम्स आफ इंडिया' में प्रकाशित एक रिपोर्ट[166] से प्राप्त किया जा सकता है। रिपोर्ट में कहा गया था कि लंकाशायर के उत्पादनों के बहिष्कार के लिए स्थानीय समिति नगर के विभिन्न भागों में जनसभाओं का आयोजन तथा जिले के जन साधारण में परिचालन के लिए परिपत्र तथा पुस्तिकाएं तैयार कर रही है। अंगरेजी वस्त्रों के बहिष्कार के लोकप्रिय दृढ निश्चय का प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट प्रमाण देने के लिए इसने एक जन-प्रदर्शन का आयोजन किया जिसमें जनता ने अपने अंगरेजी कपडों की होली जलाई।[167] टाइम्स के संवाददाता का कथन था कि किसी सम्मानित व्यक्ति के लिए बिना सैकडों जटिल प्रश्नों का सामना किए नए अंगरेजी वस्त्र का एक टुकडा तक ले जाना संभव नहीं था। पूना के न्यू इंगलिश स्कूल के छात्रों ने भी अंगरेजी कपडों की सार्वजनिक होली जलाने के लिए इसी प्रकार की जनसभा का आयोजन किया।[168] बहिष्कार आंदोलन की इस अपरिपक्व अवस्था में बाल गंगाधर तिलक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण थी।[169] बहिष्कार आंदोलन की नई लहर यद्यपि प्रमुख रूप से बंबई तक ही सीमित रही तथापि इसे देश के अन्य भागों के समाचारपत्रों से भी पूरा पूरा समर्थन मिला।[170]

सूती कपडे पर कराधान के विरुद्ध जन आन्दोलन के कम होते ही स्वदेशी का आंदोलन भी शिथिल पड गया परंतु पूर्ण रूप से यह समाप्त कभी नहीं हुआ। समाचारपत्र स्वदेशी की आवश्यकता को लोगों के सम्मुख उजागर करते रहे।[171] 1899 में बनारस के 'भारत जीवन' ने देशभक्ति की भावना से आप्लावित भाषण देने वाले तथा लेख लिखने वाले भारतीय शिक्षितों से इस दिशा में देशवासियों के सामने उदाहरण प्रस्तुत करने की अपील की।[1] संजीवनी कुछ वर्षों के उपरांत 1905 में विदेशी बहिष्कार और स्वदेशी प्रयोग के आह्वान का नेतृत्व करने वाला पत्र बन गया और उसने स्वदेशी कार्यक्रम की आवश्यकता तथा उसे लागू करने के उपायों और साधनों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया। उसने अपेक्षित स्तर की स्वदेशी वस्तुओं की विद्यमानता से जनता के अपरिचय को तथा इन वस्तुओं की सुलभ प्राप्ति के लिए दुकानों तथा अभिकरणों के अभाव को स्वदेशी संघर्ष के मार्ग की बहुत बडी बाधाएं बताया। उसने इस बात की ओर भी संकेत किया कि बडे बडे थोक व्यापारी और छोटे दुकानदार यदि चाहें तो जनता को स्वदेशी

माल खरीदने के लिए विवश कर सकते हैं।[173] पैसा अखबार ने 15 मार्च 1902 के अपने अंक मे वचन दिया कि वह विदेशी वस्त्रो के प्रयोग न करने की प्रतिज्ञा करने वाले देश भक्तों के नाम प्रकाशित करेगा।[174]

बख्शी जैशीराम ने कांग्रेस के मंच से चौदहवें अधिवेशन के प्रतिनिधियों से भारत में बनी सामग्री के प्रयोग का तथा उसके प्रचार के लिए संस्थाओं की स्थापना का अनुरोध किया।[175] 1901 में कलकत्ता कांग्रेस कमेटी के सेक्रेटरी ने सार्वजनिक रूप से कलकत्ता में कांग्रेस के आगामी अधिवेशन के प्रतिनिधियों तथा दर्शकों से प्रार्थना की कि वे यथा संभव स्वदेशी उत्पादनों से निर्मित वस्त्र पहनकर ही अधिवेशन के सम्मेलनों में सम्मिलित हों।[176] आगामी वर्ष सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने कांग्रेस सभापति पद से स्वदेशी की अपील की।[177] 1902 में प्रथम बार कांग्रेस ने स्वदेशी आंदोलन की योजना को औपचारिक मान्यता देने के लिए उसे अहमदाबाद कांग्रेस की विषय समिति को सौंपा परंतु उल्लेखनीय यह है कि प्रस्ताव को व्यापक समर्थन न मिलने के कारण समिति ने इसे अस्वीकार कर दिया।[178] फिर भी बहुत सारे लोगों ने स्वदेशी विचारधारा को व्यावहारिक रूप देने के लिए उपयोगी उपाय जारी रखा। 1898 में पंजाब में 'स्वदेशी वस्तु प्रचारिणी सभा' नाम की एक संस्था विद्यमान थी जिसका घोषित उद्देश्य भारतीय वस्तुओं का स्तर सुधार और उनका उपयोग बढ़ाना था।[179] 1902 में पूना में एक लाख रुपए की साधारण धन राशि से एक स्वदेशी दुकान खोली गई जिसे शीघ्र ही सफलता मिली।[180] उसी वर्ष स्वदेशी आंदोलन के बंगाली अग्रदूत जे० चौधरी के सक्रिय नेतृत्व में कलकत्ता में 'इंडियन स्टोर्स लिमिटेड' खोला गया।[181] आगामी वर्ष अहमदाबाद में 'स्वदेशी वस्तु संरक्षण संस्था' बनाई गई और इसका उद्घाटन दीवान बहादुर अंबालाल साकेरलाल ने किया।[182]

इस प्रकार भारत में स्वदेशी भावना का उद्भव और विकास हमारे अध्ययन काल की अवधि में एक खास रूप में हुआ जिसमें इस बात को स्वीकार किया गया कि स्वदेशी वस्तुओं का ही इस्तेमाल किया जाना चाहिए चाहे वे विदेशी वस्तुओं की तुलना में महंगी तथा स्तर में घटिया ही क्यों न हों।[183] विभिन्न कालों तथा विभिन्न लोगों के व्यवहार में भले ही स्वदेशी भावना के पृथक अथवा संयुक्त रूप में अनेक उद्देश्य रहे हों परंतु समीक्षाधीन काल में इसका प्रमुख उद्देश्य आर्थिक ही था, राजनीतिक नहीं। वस्तुतः इस भावना का जन्म ही भारत की अशक्त तथा शोचनीय औद्योगिक स्थिति की अनुभूति से हुआ था। इस आंदोलन के अस्तित्व का लक्ष्य इसी आशा में निहित था कि यह भारतीय उद्योगों का संरक्षण और प्रोत्साहन देकर देश की औद्योगिक और आर्थिक स्थिति का उद्धार और सुधार करने में सहायक होगा। स्वदेशी के अनेक प्रस्तावकों ने इस दृष्टिकोण का स्पष्ट प्रतिपादन किया।[184] उदाहरणार्थ लोकमान्य तिलक के अंग्रेजी भाषा के मुखपत्र 'मराठा' ने 2 अप्रैल 1896 के अंक में लिखा

> आंदोलन का उद्देश्य देशप्रेम की भावना का संचार है जिससे भारत में सूती उद्योग को प्रबल प्रोत्साहन मिल सके। स्वदेशी वस्त्रों की व्यापक माँग द्वारा प्रतिस्पर्धा अधिकाधिक व्यापक रूप ग्रहण करती जा रही है। अतः विश्वास है कि शीघ्र ही इससे मशीनी सुधार को द्रुतगति तथा देश में पूंजी के नियोजन को प्रोत्साहन मिलेगा।[185]

एक महीने के बाद उसने (मराठा पत्र) आशाओं की आंशिक पूर्ति की सूचना दी और उल्लास प्रकट किया कि स्वदेशी आंदोलन के फलस्वरूप बंबई प्रांत में पुन 13, बबई म 7 और अहमदाबाद म 6 नई मिलें अस्तित्व म आ गई है और मिलो के लिए अधिक बढ़िया कपास उगाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं।[186] बगाल म इस आदोलन को निरतर गतिशील बनाने वाले तथा अत्यधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति के० के० मित्र की 'सजीवनी' न भी औद्योगिक लाभ को इस आदोलन का उद्देश्य बताया।[187] सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने भी 1902 की काग्रेस के सभापति पद से दिए गए भाषण म इसी पक्ष को उजागर किया।[188]

अनेक लोगो ने विदेशी प्रतियोगियो के हाथो परलू कारीगरो तथा हस्तशिल्पियो को निश्चित विनाश स बचाने के लिए स्वदेशी का प्रयोग तथा प्रचार किया।[189] यह एक पर्याप्त रोचक तथ्य है कि स्वदेशी आदोलन म स्वदेशी हस्तशिल्पकारो को स्वदेशी मशीन उत्पादको की प्रतियोगिता स बचाने की ओर किसी का ध्यान नही गया।

भारतीय राष्ट्रवादियो द्वारा स्वदेशी की रक्षा और उसे लोकप्रिय बनाने के लिए प्रस्तुत तर्कों म एक सर्वाधिक आकर्षक तर्क यह था कि सरकार ने ब्रिटिश उत्पादको की हित रक्षा के हेतु अथवा उन्मुक्त व्यापार सिद्धांत पर आस्था रखने के कारण भारत के नवजात उद्योगो को नितात आवश्यक सरक्षण देना अस्वीकार कर दिया है अत अब लोगो को स्वय ही प्रबल स्वदेशी आदोलन चलाकर उसे सरक्षण देने का दायित्व लेना चाहिए।[190] इसके अतिरिक्त यह अभियान न्यूनाधिक रूप स व्यावहारिक और सभव की परिधि म आता था। इसकी सफलता विदेशी सरकार की कृपा और इच्छा अथवा कानून म परिवर्तन पर नही प्रत्युत जनता के अपने प्रयासो तथा आत्मविश्वास पर निर्भर थी। वस्तुत अधीन प्रजा के लिए यही तो एक साधन अवशिष्ट था।[191] 1902 म सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने काग्रेस के सभापति पद स दिए गए भाषण मे इस दृष्टिकोण को अत्यत मुखरित रूप से प्रस्तुत किया 'कानूनी व्यवस्था से स्वदेशी को सरक्षण देना भले ही असभव हो परतु हम राष्ट्रीय सकल्प से तो यथाशक्ति उसे सरक्षण प्रदान कर सकते हैं।[192]

राष्ट्रवादियो के अनुसार सामान्य रूप से स्वदेशी आदोलन और विशेष रूप से विदेशी वस्त्रो का बहिष्कार लकाशायर के उन स्वार्थी उत्पादको के विरुद्ध प्रभावी विरोध तथा प्रतिकार के उपयुक्त शस्त्र थे जो भारत के पनपते सूती वस्त्र उद्योग को लूला-लगडा बनाने के लिए भारत सरकार पर अपना राजनीतिक प्रभाव डाल रहे थे। यह तक प्रस्तुत किया गया कि इन शस्त्रो से विदेशी उत्पादको को इस प्रकार की हरकतो को छोडने के लिए बाध्य किया जा सकता है अथवा कम से कम उनके परिणामो का आनद लेने से तो उन्हे वचित किया ही जा सकता है। यह सब तभी सभव है जब सशक्त बहिष्कार आदोलन द्वारा उनके मुनाफे कम किए जाए।[193] मराठा ने 9 फरवरी 1896 के अक मे लिखा 'यदि लकाशायर की अतृप्त लोभवृत्ति को ही भारत पर शासन करना है तो भारतीयो को लकाशायर को नष्ट करने के लिए दृढ निश्चय करना है। भारत कुछ वर्षों के लिए लकाशायर के वस्त्र का ही बहिष्कार कर ले तो माचेस्टर के अतिलोलुप व्यापारियो के होश ठिकाने आ जाएगे। विदेशी उत्पादनो के स्थान पर स्वदेशी उत्पादनो के प्रयोग के

आदोलन का एक उद्देश्य यह भी था कि विदेशी उत्पादनो के फलस्वरूप भारतीय धन की निकासी को कम किया जा सके।[191]

इस युग के राष्ट्रीय दृष्टिकोण के सूक्ष्म अध्ययन से विदित होता है कि इस युग के राष्ट्रीय नेताओ ने स्वदेशी आदोलन को राजनीतिक युद्ध लडने के लिए प्रभावशाली शस्त्र के रूप म ग्रहण नही किया। यह बात नही कि स्वदेशी को राजनीतिक शस्त्र के रूप मे प्रयोग करने का विचार उनमे से कुछ के दिमाग म भी नही आया अथवा इस सावजनिक अभिव्यक्ति नहीं मिली। 1891 म पूना वैभव ने जनता से अपील की कि वह 'कामट ऐक्ट' का रद्द करवाने के लिए सरकार पर दबाव के रूप मे अगरेजी वस्त्रा का प्रयोग बद कर दें।[19] 1894 मे मराठी के 'मोदवत्त' ने जिमके सपादक के० बी० वाले को 1897 मे राजद्राह के अभियोग मे नौ महीने का कारावास मिला था, वकालत की कि विदेशी वस्त्रा का बहिष्कार सरकार के विरुद्ध जनता की आम शिकायतें दूर करान के शातिपूण सघष के बहुत बडे कायक्रम का एक अग था।[196] काफी समय बाद 1901 म लखनऊ के विख्यात राष्ट्रीय साप्ताहिक 'एडवोकेट' ने तो स्वदेशी के प्रयोग को आत्म रक्षा के लिए अपने पास बचा एकमात्र शस्त्र बताया। उसके अनुसार इसी शस्त्र स हम आस्ट्रलिया सरकार को आस्ट्रेलिया मे रहने वाले भारतीयो पर थोपे प्रतिबध हटान के लिए तथा हमारे प्रति तनिक शिष्ट जना जैसा सभ्य आचरण करने के लिए विवश कर सकते है।[197] भारतीय नताओ के समक्ष चीनिया द्वारा अमरीकी सामान के सफल बहिष्कार का उदाहरण भी था।[198] ऐसा प्रतीत होता है कि उनका अनुमान था कि स्वदेशी को राजनीतिक शस्त्र के रूप म प्रयाग करने का अभी उपयुक्त समय नही था। किंतु 1880 मे ही दादाभाई नौरोजी न बडी बुद्धिमत्तापूण तथा न्यायसगत भविष्यवाणी की थी कि वह समय अवश्य आएगा। लोकप्रिय गीतो द्वारा विदशी उत्पादना के आयात का रोकन की लाकप्रिय चेष्टा का निर्देश करत हुए उन्होंने लिखा था

> हाथ के बने महगे सामान के मुकाबले अगरेजी मशीनों से बन सस्त सामान के बहिष्कार का एक निस्सार चेष्टा मानकर आज हम उसका उपहास भले ही कर लें परतु हम यह नही भूलना चाहिए कि इस आदोलन का पनपना और समय आने पर नया रूप ग्रहण करना निश्चित है। यदि अगरेज अपने अविवेक का परिचय देत हैं तो इस समय के अगरेजी वस्त्रा के विरुद्ध लिखे गीत समय आने पर अन्य अगरेजी वस्तुओ के विरुद्ध भी स्वाभाविक रूप मे प्रभावी प्रचार का काय करेंगे। परतु यदि भारत की वतमान पतन प्रक्रिया जारी रहती है यदि जनता का बहुत बडा वग अतत किसी भी प्रकार की उन्नति के लिए निराशा अनुभव करने लगता है, यदि विवेक तथा सासारिक अनुभव से रहित शिक्षित युवक ही जनता के नता बनन लगत हैं तो यह इष्ट से अनिष्ट की दिशा मे, अगरेजी वस्त्रा स अगरेजी शासन की ओर एक अत्यत छोटा सा कदम होगा। गीत ता वही रहग परतु हा, शासन के बार म एक अप्रिय चिंगारी का काम करेगा।[199]

एक आर्थिक आंदोलन के रूप म भी गमीशाधीन अवधि म स्वदेशी भावना ने , अखिल भारतीय तथा सवव्यापक आंदोलन का रूप ग्रहण न कर सकी क्योंकि

राष्ट्रवादी नेताओ मे एक वग ने तथा पनपते भारतीय उद्योगपति वग ने इसका विरोध किया। कही कही तो इस विरोध का मुखर रूप देखने को मिला परतु अधिकाशत आदोलन के प्रति समयन के निषेध के रूप म ही इसने अपने को अभिव्यक्त किया। इन्होने स्वदेशी आदोलन को देशप्रेम का प्रत्यक्ष रूप तो माना परतु इस व्यावसायिक दृष्टि से अव्यावहारिक, यहा तक कि लाभशक्ति का हानिप्रद मोड बताया।[00] उनकी प्रमुख आपत्ति यह थी कि इस आदोलन का प्रमुख आधार आर्थिक भ्रातिया हैं।[10] लोगो के लिए आयातित उत्तम और मध्यम दर्जे के वस्त्रो के प्रयोग को तिलाजलि देना सभव नही था। वे सदैव सस्ता और बढ़िया माल खरीदेंगे। यह सोचना भ्राति थी कि देशप्रेम की अपीलें इस प्रवत्ति को पलट देंगी। अत इस प्रकार के सभी प्रयत्न अवश्य असफल होंगे।[0] देशभक्ति की उत्कटता देश की विशाल जनता को विशुद्ध व्यापार के माग म एक इच भी इधर-उधर न हटा सकेगी।[03] जनसाधारण का तो कहना ही क्या, यहा तक कि सुशिक्षित और विचारशील व्यक्तियो से भी इसकी अपेक्षा नही की जा सकती। वाचा का प्रश्न था 'क्या व एसा कर सकत थे? उदाहरणाथ आप उनकी महिलाओ और बच्चो स जरा साडिया और चोलिया, छीटें और छाप वाले कपडे पहनना छोडने का कहिए तो सही'?[04] अरुचिकर वास्तविकता यह थी कि एक साधारण उपभोक्ता चाहे वह किसी भी बौद्धिक स्तर का क्यो न हो, केवल देशप्रेम की भावुकता के वशीभूत होकर आर्थिक श्रेष्ठता और सस्तेपन के कठोर सत्य की उपेक्षा करता हुआ अपनी स्वतत्र इच्छा से आख नही मूद सकता है।[05] इसके अतिरिक्त भारतीय मिलें उस समय भारत द्वारा इग्लैड से आयातित वस्त्रो के परिमाण म उत्पादन की स्थिति म नही थी। भारतीय उद्यमियो के पास या तो मशीनें नही थी अथवा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मशीनें खरीदने का पूजी नही थी। बहिष्कार आदोलन के पास कोई ऐसा अलादीन का चिराग नही कि वह एकदम ऐसे कारखाने लगा सके जो एक दिन म अथवा एक वष मे अथवा पाच वर्षो मे सारे भारत के लिए उतने परिमाण म वस्त्र जुटा सकें जितने परिमाण मे इस समय भारत इग्लैड से आयातित करता है।[206] इस सदभ म वाचा ने टिप्पणी ही नही प्रत्युत भविष्यवाणी की कि भारतीय वस्त्र उद्योग को कदाचित अपनी अपेक्षित पूर्ण क्षमता प्राप्ति के लिए बीस वष लगेंगे[07] और इसका स्पष्ट तात्पर्य यह है कि स्वदेशी आदोलन चलाने का कदाचित वही उपयुक्त समय होगा। इस सारी बहस के पीछे यह तक काम कर रहा था कि मिलो का उत्पादन स्वदेशी आदोलन के बाद नही प्रत्युत पहले बढना चाहिए।[08] यहा यह उल्लेखनीय है कि हथकरघा स बना वस्त्र देश म वस्त्र की आवश्यकता तथा मिल के उत्पादन के बीच के अतर की पूर्ति कर सकता था। सत्य तो यह है कि स्वदेशी के विभिन्न समथको ने उस समय यह सुझाव दिया भी था[09] परतु उस समय वाचा तथा उसकी विचारधारा के महानुभाव उसी प्रकार के भारतीय वस्त्रो म नही प्रत्युत भारतीय मिलो से निर्मित वस्त्रो के ही पक्ष मे थे। स्वदेशी का अथ उन लोगो के लिए लकाशायर के वस्त्र के स्थान पर भारतीय मिलो मे बने वस्त्रो के प्रचार का साधन मात्र था। लकाशायर के वस्त्रो के हटाने मे हथकरघो की भूमिका को उन्होने कोई महत्त्व ही नही दिया। उनका लक्ष्य भारतीय उद्योगो, उनकी प्रगति और सुधार को पुन गतिशील बनाना था न कि सडी-

गली वस्तुओ को आश्रय देना।[210] हथकरघो के वस्त्र को तो उन्होने वस्त्र उद्योग के विकास से एक खतरनाक प्रतिद्वद्वी के रूप मे देखा। उदाहरणार्थ 1901 मे वाचा ने हथकरघा जुलाहो को मिलमालिको के विरुद्ध सरक्षण देने के लिए कपास सीमा शुल्क लगाने की निम्नोक्त शब्दो मे निंदा की

> कररहित भारतीय सूत का प्रयोग करने वाले हथकरघा जुलाहो के उत्पादन मिलो द्वारा उत्पादित वस्त्रो की प्रतियोगिता मे हैं। अत्यत दुदशाग्रस्त हथकरघा जुलाहा के दृष्टिकोण से निस्सदेह यह अच्छी बात है कि वे अपने उद्योग को उन्नत करें परतु जहा तक मिलमालिको का सबध है, यह सवथा असहनीय है। यह तो सरक्षण के भीतर ही सरक्षण है।[211]

अतएव सुविधापूवक यह निष्कप निकाला जा सकता है कि बबई की मिलो के मालिक तथा उनके राष्ट्रवादी प्रतिनिधि उस समय तक विदेशी वस्त्रो के बहिष्कार के पक्ष म नही थे जब तक भारतीय मिलें अप्रतिशोधित माग को पूरा करके विदेशी वस्त्रो के आयात को बद करने की स्थिति मे नही आ जाती। इसका अथ उनके अपने अनुमान के अनुसार बीस वप थे।[212] उस समय वे खादी आदोलन का समथन देने के लिए भी सहमत हो जाते क्योकि वे अच्छी तरह जानते थे कि खादी के उस समय उनका प्रतिद्वद्वी बन पाने की सभावना ही नही थी।[13]

स्वदेशी आदोलन के औचित्य पर सदेह करने वालो के मन म छुपा हुआ एक और भय यह था कि ब्रिटिश उत्पादक भारत की नई मिलो को मशीनरी देने से इकार करके अथवा अय इसी प्रकार के साधनो का प्रयोग करके भारत के विरुद्ध बदले की भावना से काम कर सकते हैं। उनके विचार मे शासक पक्ष सुदृढ और शक्तिशाली था और उसके विरुद्ध शासित भारतीय पक्ष शोचनीय रूप से दुबल था। अतत उनके तथा मिलमालिको के समथन के अभाव तथा उनके विरोध का विश्लेषण निम्नलिखित दो बातो स किया जा सकता है 1 उनका विश्वास था कि भारतीय मिलो की वतमान उत्पादन क्षमता के लिए आतरिक बाजार मे पयाप्त अवकाश है। इस बाजार का कृत्रिम रूप से अथवा जबरदस्ती किया गया प्रसार उनके लिए अपेक्षित रूप से उपयोगी नही होगा क्योकि देश म मोटे वस्त्र उद्योग पर पहले ही उनका एकाधिकार है और इससे उनके वास्तविक प्रतिद्वद्वी हथकरघा उद्योग को सहायता मिलेगी और 2 अपनी आर्थिक शक्ति पर तथा जनता के बलिदान की भावना की क्षमता[14] और सुदृढता पर अविश्वास और विदेशी शासको की शक्ति को बढा-चढाकर आका जाना।

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ के प्रभावशाली वग तथा मिलमालिको के विरोध का परिणाम यह हुआ कि देश के राष्ट्रवादी शिक्षित मध्यवग का व्यापक समथन उपलब्ध होने पर भी स्वदेशी आदोलन देश का शक्तिशाली आंदोलन न बन पाया। यहा तक कि उसे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस का औपचारिक समथन तक प्राप्त नहीं हो सका।

सदर्भ

1 भारत से बाहर निवेश के अन्य स्रोत धीरे धीरे न केवल ब्रिटिश पूजी से प्रयुक्त विश्व के सभी पूजी उत्पादक देशो की पूजी से भरते जा रहे हैं और यदि यही स्थिति रही तो वह समय शीघ्र आ जाएगा कि बैंको म दीर्घकाल से खाली पडी हुई ब्रिटिश चालू पूजी को वहा से निकालकर नए स्रोतो म लगाना होगा और इस रूप मे 'आर्थिक गुरुत्वाकर्षण' के नियम के अनुसार उसकी गति भारत की ओर ही होगी ब्रिटिश कानूनो और ब्रिटिश सस्थाओ द्वारा ब्रिटिश पूजी को सुरक्षा प्राप्त होने से इसे भारत के लिए अतिरिक्त आकर्षक बनना चाहिए (कर्जन स्पीचज, खड III पृ० 134) इससे पूर्व वह घोषित कर चुका था कि ब्रिटिश पूजी भारत की राष्ट्रीय प्रगति के लिए अपरिहार्य आवश्यकता है (स्पीचेज खड I, पृ० 34) और भी देखिए, एलगिन स्पीचेज, पृ० 489

2. लिलड हैमिल्टन जेंक्स दि माइग्रेशन आफ ब्रिटिश कपिटल टू *1875* (न्यूयार्क, *1927*) पृ० *208*

3 वही, पृ० 225 तथा देखिए भारतीय अकाल आयोग 1880 का प्रतिवेदन भाग II अनुभाग VIII कडिका 3

4 पी० पी० पिल्ले की इकानामिक कडीशस इन इडिया', (लदन 1925) पृ० 281 म उद्धत

5 जाज पाइश ग्रेट ब्रिटेंस कपीटल इनवेस्टमेंट इन इडीवीज्युअल कालोनीयल फारन कट्रीज, जरनल आफ रायल स्टटिस्टिकल सोसाइटी, खड LXXIV, भाग II (जनवरी 1911), पृ० 180

6 पिल्ले म पूर्वोद्धत पृ० 28

7 जेंक्स पूर्वोद्धृत पृ० 230 1880 के अकाल आयोग का प्रतिवेदन भाग II, वर्ग VIII कडिका 3

8 जाज पाइश पूर्वोद्धत

9 जोशी पूर्वोद्धत चाटर्फोसिंग प० 780 राय पावर्टी, *113-4, 125-6*

10 जोशी पूर्वोद्धत पृ० *652 757*

11 भारतीय अर्थशास्त्र के बहुत से विद्यार्थियो ने ही नही बल्कि अर्थशास्त्रीय समस्याओ के प्रति जागरूक हमारे बहुत सारे विद्वान लेखको ने भी इस तथ्य की उपेक्षा की है (बबई *1946*) प्रोफेसर पी० ए० वाडिया तथा के० टी० मर्चेंट ने इस तथ्य को प्रामाणिकता दी है कि प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद तक भारतीय नेताओ के पास विदेशी पूजी के सबध म कुछ कहने को ही नही था उन्होने लिखा है 1922 तक भारतीय लोकमत ने भारत में विदेशी पूजी के निवेश के सबध में अपने आपको निश्चित रूप म अभिव्यक्त नहीं किया फिसकल आयोग ने ही निर्देश किया था कि गवाहो ने अपना मत व्यक्त किया है कि कतिपय निश्चित प्रतिबधो के बिना भारत मे विदेशी पूजी के प्रवेश को अनुमति नही मिलनी चाहिए (प० *479-80*)

12. *8* दिसबर *1886* को लदन म हुई ईस्ट इडिया एसोसिएशन की बठक मे प्रस्तुत एक लेख म दादाभाई ने लिखा था मैं सभी अगरेज उद्यमियो से विनयपूर्वक प्रार्थना करता हू कि वे भारत जाकर यथासभव अधिकाधिक लाभ उपार्जित करें वे हम इससे बडा न कोई और लाभ पहुचा सकते हैं और न ही अनुग्रह कर सकते हैं वस्तुत हमारे देश म अगरेजो द्वारा निवेशित प्रत्येक कौडी हमारी स्थिति के सुधार में हमारे लिए महत्व रखती है (जरनल आफ ईस्ट इडिया

एसोसिएशन खड III 1969 स० 1 प० 13) तथा दखिए नौरोजी एसेज, पृ० 39-41 102 104 106, 124 7 130-1, 135 विदेश पूजी के उत्तरगामी विरोध क लिए दखिए अघोतिखित विवेचन

13 नौरोजी एसेज प० 39-40 106 127 एस० एन० बैनर्जी स्पीचेज I पृ० 190 हिंदुस्तान 21 23 24 अगस्त (आर० एन० पी० एन० 26 अगस्त 1888) केल्लाक पूर्वोद्धत म उद्धत रानाडे का वक्तव्य प० 122 तथा 'एसेज प० 105 हितवादी 13 जून (आर० एन० पी० बग 20 जून 1891) ए० बी० पी० 8 फरवरी 1895 6 जनवरी 15 अक्तूबर 1900 10 अगस्त 1903 एम० एन० बैनर्जी सी० पी० ए० प० 270 आर० एम० सायानी आई० सा० पी० 1897 खड XXXVII प० 524 हिंदुस्तान 8 अक्तूबर (आर० एन० पी० एन०, 11 अक्तूबर 1988)

प्रारभिक वर्षों म दादाभाई का विचार था कि भारतीय धन और पूजी के ब्रिटेन म अपरिहार्य निकासा के माग म विदेशी पूजी का आयात आशिक रूप म निरोध तथा क्षतिपूर्ति स्वरूप था

14 *दादाभाई नौरोजी ने इस मुद्दे के लिए जोन स्टुअट मिल को उद्धत किया (एसज, प० 104)* तथा दखिए, जोशी पूर्वोद्धत प० 789 90 आर० एम० सायानी एल० सी० पी०, खड XXXVII, प० 524

15 रानाडे एसज, प० 186

16 सरकार का सवप्रथम कतव्य इगलड स और अमरीका तक से पूजीपतियो को भारत म उद्योग खोलने क लिए निमत्रित और उत्साहित करना है (ए० बा० पी० 17 माच 1902) समाचार पत्रो न ता विदेशी निवशको के प्रास्पो के प्रति उदासीनता और अनुदारता दिखान क लिए भारत सरकार की निंदा की तथा देखिए एस० एन० बनर्जी स्पीचज I प० 190 हिंदुस्तान 21 23 24 अगस्त (आर० एन० पी० एन 15 नव० 1898) ए० बी० पी० 15 जनाई 1893 और नौरोजी उपर उद्धत पादटिप्पणी स० 12

17 हिंदुस्तान 21 23 24 अगस्त (आर० एन० पी०एन० 28 अगस्त 1888) एस० एन० बनर्जी सी० पा० ए० पृ० 270

18 जोशी पूर्वोद्धत 756 हिंदू 23 फरवरी 1900 बगाला 25 मई 1902 जी एस० अय्यर दि विक्टरी आन दि इकानामिक कडीशस आफ इडिया एच० आर० जून 1901 पृ० 415-7 नौरोजा स्पीच ऐट पोटस माउथ इन्डिया 20 माच 1901 प० 140

19 नौरोजी स्पीचेज प० 250-1 382 398 परिशिष्ट प० 3 जी० एस० अय्यर रिप० आई एन० सी० 1898 पृ० 107 चत्रियन 30 जुलाइ (आर० एन० पी० बब 5 अगस्त 1899) हिंदू 23 फरवरी 1900 बगाली 25 मई 1901 विदेशी पूजा क प्रवाह की कल्पना करने वालों को प्रत्युत्तर देते हुए डा० ई० वाचा ने 1898 म टिप्पणी की जब तक देश म विदेशी लुटेरे बड़ी सख्या मे टिड्डी दल की तरह फल रहेंगे और उनके भव और माँस को खाते रहेंगे तब तक यहां के लोग किस प्रकार सामाजिक हो सकते हैं ? विदेशी निवेशक एक हो अपने धन के लाभों को दूसरे स्थानो पर खीच ले जाते रहेंग और इसक अतिरिक्त समय आने पर पूजी को भी खींच लेंग (रिप० आई० एन० सा० 1890 पृ० 50)

20 सोमप्रकाश 24 सित० (आर० एन० पा० बब 30 सितबर 1883) दादा [illegible] इंडिया पृ० 13 चत्रियन 30 जलाई (आर० एन० पा० बब 5 अगस्त 1899) हिंदू 23 फरवरी 1902 बगाली 25 मई 1901

21 नौराजा स्पीचेज, पृ० 133 तथा देखिए, वही, पृ० 240, 382, 398 परिशिष्ट पृ० 7 जाशी पूर्वोद्धत पृ० 700

22 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 122 तथा देखिए हिंदू 23 फरवरी 1900 न्यू इंडिया 26 अगस्त 1901

23 नौरोजी पावर्टी पृ० 34 568 9 स्पीचज पृ० 196 परिशिष्ट, पृ० 7 इंडिया 10 मई 1901 मे प्रकाशित एक पत्र, प० 233 और स्पीचेज ऐट पोटग माउथ, इंडिया 20 माच 1903 प० 140 बगाली 25 मई 1901 इंडियन पीपुल 23 फरवरी 1905 हिंदुस्तान रिव्यू तथा 'कायस्थ समाचार' के सपादक न विदेशी पूजी के प्रयोग को एक अतर्राष्ट्रीय लूट खसोट पद्धति' की सज्ञा दी (फरवरी 1903 पृ० 193) तथा गोखले वेलबी आयोग खड III, पृ० 18140-1

24 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 3 बगाली 25 मई 1901 जी० एस० अय्यर लाड कजन का बजट भाषण—एच० आर०, अप्रल 1903, पृ० 318

25 बगाली 1 जून 1901 तथा मराठा 30 जून 1881

26 जोशी पूर्वोद्धत प० 673 700 739-40 तथा नौरोजी पावर्टी प० 227 मद्रास स्टडड 28 मई (आर० एन० पी० एम० 1 जून 1901) 18 जुलाई 1883 क 'भारत मिहिर' म एक लेखक ने सकेत किया विदेशी पूजी अमरीकिया का स्थिति के सुधार क लिए और हिंदुस्तानियो को पश्चो से नामशप करन तथा अफीकी हब्शियो को अमरीकिया के दास बनाने म तथा मिस्र को अपना उपनिवश बनाने के लिए उत्तरदायी है (आर० एन० पा० बग, 21 जुलाई 1883)

27 न्यू इंडिया 12 अगस्त 1901 (बल दिया गया) न्यू इंडिया के अगल अक म उसने लिखा वतमान आर्थिक और वित्तीय परिस्थितियो म हम इगलड के उद्यम द्वारा प्रवर्तित तथा ब्रिटिश पूजी द्वारा सचालित प्रत्येक उद्योग को आर्थिक खतरे के एक नए स्रोत के रूप म देखने को विवश हो गए हैं (19 अगस्त 1901) 1890 म 'केसरी म प्रकाशित एक लेख म तो यहा तक घोषित किया गया कि विदेशी पूजी के गुणगान करन वाला महादेव रानाड देशद्रोही है' (कलाक म उद्धत, पूर्वोद्धत, प० 123)

28 जोशी पूर्वोद्धत प० 757 केसरी 22 जून (आर० एन० पी० बब 26 जून 1897) दत्त स्पीचेज II प० 82 एल० एम० घोष सी० पी० ए० पृ० 781

29 जी० एस० अय्यर रि० आइ० एन० सी० 1901 पृ० 121 तथा मद्रास स्टडड, 28 मई (आर० एन० पी० एम० 1 जून 1901)

30 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 132 वाचा ने 1899 मे टिप्पणी की 'स्वदेशी पूजी ही एकातत लाभदायक हो सकती है वह पूजी ही भावी पूजी का सवधन करेगी इसकी प्रक्रिया मद हान पर भी निश्चित अवश्य होगी (रिप० आई० एन० सी० 1899, प० 59)

31 भारत मिहिर 17 जुलाई (आर० एन० पी० बग 21 जुलाई 1883) जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 682 700 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 556 हिंदू 23 फरवरी 1900 जी० एस० अय्यर वलबी आयोग, खड III प्रश्न 18664 ई ए—परिशिष्ट, पृ० 2

32 जोशी पूर्वोद्धत प० 682

33 जोशी पूर्वोद्धत पृ 782 वाचा, सी० पी० ए० प० 626 मद्रास स्टडड 28 मई (आर० एन० पा० एम० जून 1901)

34 जोशी पूर्वोद्धत प० 756 779 789 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 257

35 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 673, 700, 739-40 746 गोखले वेलवी आयोग, खड III, प्रश्न 18140 18145 मद्रास स्टैंडर्ड 28 मई (आर० एन० पी० एम० 1 जून 1901) जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी 1901, प० 74 ई ए, प० 123 127

36 कर्जन स्पीचेज III प० 141

37 जोशी पूर्वोद्धत, प० 673 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 123

38 एच० आर०, फरवरी 1903 का सपादकीय, प० 193-4 तथा जी० एस० अय्यर ई ए प० 123

39 उदाहरणार्थ देखिए जी० एस० अय्यर ई ए, प० 124 स्वीकृत तथ्य के लिए देखिए स्वय कर्जन स्पीचेज पृ० 140

40 देखिए नीचे तथा अध्याय XIII दि ड्रेन

41 यद्यपि दादाभाई नौरोजी ने इस दृष्टिकोण का अत्यत सशक्तता तथा सुस्पष्टता स विश्लेषण किया था तथापि निकासी सिद्धांत के इस भविष्यवक्ता का समकालीन नेताओ ने भी व्यापक रूप से अनुमोदन किया देखिए नौरोजी पावर्टी पृ० 38, 54 567 8, स्पीचेज, प० 250-1 395 6 614 परिशिष्ट प० 7 8 इन इडिया, 2 सितबर 1904 मराठा 30 जनवरी 1881 हिंदू 30 अक्तूबर 1885 23 फरवरी 1900 जोशी पूर्वोद्धत प० 756-7 राय पावर्टी प० 126 गोखले वलवी आयाग खड III प्रश्न 18140 18142, 18170 18176 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 107 रिप० आई० एन० सी० 1902 प० 121 ई ए पृ० 128 हितवादी 10 फरवरी (आर० एन० पी० बग, 5 अगस्त 1899) स्वदेशमित्रन 22 जनवरी (आर० एन० पी० एम० 26 जनवरी 1901) बगाली 25 मई 1901, न्यू इडिया 18 नवबर 1901, मराठा 7 दिसबर 1902

42 नौरोजी पावर्टी प० 194 बगाली 25 मई 1901 1903 में भारतीय राष्ट्रवादियो पर बरसते हुए लार्ड कर्जन ने कहा

विदेशी पूजी के भारत म अत प्रवाह के विरुद्ध प्रस्तुत तर्क कि यह भारतीयो को निर्धन बनाने का साधन है तथा यह देश की सपत्ति को विदेशो म खीच ले जाता है मुझे तो मूर्खतापूर्ण और खतरनाक मतिभ्रम दिखाई देता है जब ब्रिटेन ने अमरीका और चीन मे अपनी पूजी प्रवाहित की तो उन देशो के वासियों ने कभी यह शिकायत नहीं की कि उनका सत्यानाश किया जा रहा है विदेशी सरकार द्वारा मिस्र के साधनो और नील बाधनी व्यवस्था करने पर किसी को भी उस देश पर दया नही आई आज अपने देश के लाभो का साधन बनने जा रहे हम के उद्योगों का विकास विदेशी पूजी तथा विदेशी मस्तिष्क द्वारा ही हुआ अब जब अमरीका अपनी सचित पूजी, अपनी आश्चर्यजनक आविष्कार शक्ति अपना व्यावसायिक प्रतिभा आदि इग्लैंड की इग्लैंड म बाढ़ सा रहा है तो हमम से कोई भी विदेशी निवासी से अपने लूटे जाने के दुर्भाग्य पर बठकर आसू नहा बहाता (स्पीचेज खड III पृ० 140-1)

43 नौरोजी स्पीचेज पृ० 152 3 319 312 395 परिशिष्ट प० 5 7 8 पावर्टी प० 54 38 135 दादाभाई नौरोजी और गोखले वलबी आयाग खड III प्रश्न 18168 9 18183-4 हिंदू 23 फरवरी 1900 और अध्याय XIII दि ड्रेन पर वलबी आयोग का प्रस्तुत विवरण मे 1900 दादाभाई ने लिखा अन्यायपूर्ण तथा निरकुश शासनपद्धति ब्रिटिश भारतीयों को अपने ही उत्पादनो अथवा साधनो का उपभोग नहीं करने देती उन्हें पूजीविहीन तथा असहाय बनाते है तब विदेशी पूजीपति आते हैं और विनाश की बची-खुची कसर पूरी कर देते हैं (इन्डिया

जनता और अधिक तथा स्थाई दरिद्रता का उपभोग करेगी (न्यू इडिया 18 नवबर 1901) तथा देखिए, नौरोजी पावर्टी, प० 38, 567, स्पीचेज प० 397 परिशिष्ट प० 6-7 तथा अंतर्राष्ट्रीय समाज काग्रेस मे भाषण, इडिया 2 सितबर 1904 प० 116 मद्रास स्टन्ड', 28 मई (आर० एन० पी० एम० 1 जून 1901), बगाली 1 जून 1901, जी० एस० अय्यर ई ए, प० 128

51 नौरोजी पावर्टी प० 228 जोशी पूर्वोद्धत प० 699 779, राय पावर्टी, पृ० 322 324 गाखले वेलबी आयोग खड III प्रश्न 18146 18156, 18171 18176 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी०, 1898 प० 107 और एच० आर० जून 1910 प० 445 447 वाचा रिप० आई० एन० पा० 59 स्वदेशमित्रन 22 जून (आर० एन० पी० एम० 26 जनवरी 1901), हिंदू 13 जून 1904

52 नौरोजी पावर्टी प० 54 194 228 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, प० 270

53 नौरोजी पावर्टी प० 228

54 वही प० 194 228

55 वही प० 54 194 228

56 हिंदू 6 अक्तूबर 1885 तथा जोशी पूर्वोद्धत प० 756 779 नौरोजी स्पीचेज प० 398

57 नौरोजी पावर्टी पृ० 194

58 नौरोजी स्पीचेज प० 634 राय पावर्टी प० 322 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1899 प० 59 स्वदेशमित्रन 22 जनवरी (आर० एन० पी० एम०, 26 जनवरी 1901) जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 121

59 जोशी पूर्वोद्धत प० 70

60 वही प० 757 नौरोजी ऐंड गोखल वलबी आयोग, खड III प्रश्न 18170 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 7 और पादटिप्पणी 21 तथा 22 उपयुक्त

61 जी० एस० अय्यर इडियन रिव्यू फरवरी 1912 प० 83 तथा देखिए राय पावर्टी पृ० 3-4

62 न्यू इंडिया 26 अगस्त 2 सितबर 1901

63 स्पीच एट पाट स साउथ इन इडिया' 20 मार्च 1903 प० 140

64 जोशी पूर्वोद्धत प० 699 700 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 107 एच० आर० अप्रल 1903 प० 320 म प्रकाशित दत्त स्पीचेज II पृ० 82

65 यूनाइटेड इंडिया 9 जून (इंडियन स्पेक्टेटर 9 जलाई 1904) जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 121

66 जोशी पूर्वोद्धत प० 699 बगाली 25 मई 1901 न्यू इंडिया 26 अगस्त 1901

67 जी० एस० अय्यर ई ए प० 243

68 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 788 बगाली 1 जून 1901 17 फरवरी 1903 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1902 प० 73-4 ई ए प० 127 हिंदू 13 जून 1904 बेंगाली 9 मई (आर० एन० पी० बग 13 मई 1905)

69 बगाली 9 जून 1901 दादाभाई नौरोजी का जे० एन टाटा को पत्र तिथि 16 सितबर 190 मसानी की रचना म उद्धत पूर्वोद्धत प० 448

70 बगाली 17 फरवरी 1903 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 127

71 बगाली 1 जून 1901

72 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 688 9

73 उदाहरण के रूप मे देखिए जोशी पूर्वोद्धत, प० 700 हिंदू 10 अक्तूबर 1885

74 रानाडे एसेज पृ० 186

75 जोशी पूर्वोद्धत, प० 673

76 1885 मे जोशी ने लिखा राजनीतिक दष्टि से यदि हम इतिहास का गलत अध्ययन नही करते तो यह निश्चित है कि धन-सपत्ति की ओर शक्ति का आकषण रहेगा तथा देश म सुदृढ़ विदेशी व्यापारिक हित राज्य मे निश्चित रूप से अत्यत कष्टदायक सक्रिय तत्व बनेंगे यह सदैव अपने निजी स्वार्थों तथा उद्दश्यो के लिए अपन वश भर शक्ति और प्रभाव का प्रयोग करेंगे तथा सरकारी निणयो को अपने पक्ष म करने के लिए दबाव डालेंगे (पूर्वाद्धत प० 640) तथा देखिए वही प० 700, बगाली 10 जून 1901

77 मद्रास स्टडड 28 मई (आर० एन० पी० एम० 1 जून 1901) बगाली, 10 जून 1901

77-ए देखिए लाड डफरिन का भाषण तिथि 6 नवबर 1888

'इन दायित्वो के साथ मातृभूमि के अपरिमित व्यावसायिक हितो का दायित्व भी जुड़ा है जिनका प्रतिनिधित्व भारतीयो के महान लाभ के लिए सरकार को उधार दी गई अथवा रलवे जसे कतिपय उद्यमो म लगाई गई 2200 लाख पौंड स्टरलिंग की पूजी करती है हम इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि इस देश मे सवप्रथम इस देश के हितो का सरक्षण सवथा उचित ही है परतु सरकार द्वारा उन लोगो के प्रति जिन्होने सरकारी गारटी के विश्वास पर भारत के साधनो के विकास मे बहुत बडी रकम लगाई है अथवा जिन्होने शाही भारतीय सरकार के निमत्रण पर अपनी पूजी का निवेश किया है अपने दायित्व की उपक्षा एक कानूनी अपराध होगा यही स्थिति चायबागानो और नील क खेतो पटसन तथा अन्य इस प्रकार के उद्योगो म निजी ब्रिटिश व्यापारियो द्वारा उत्पादन म निवेशित विपुल पूजी की है क्योकि उन्होने भी इसी विश्वास पर पूजी का निवेश किया है कि भारत म अगरेजी शासन तथा अगरेजी न्याय सुदृढ़ रहगा' (गवनर जनरल का भारत सचिव को प्रेषण स० 67 तिथि 6 नवबर 1888)

78 बगाली ने 10 जून के अक म लिखा ब्रिटिश पूजी का देश मे बढ़ता हुआ निवेश तथा उसपर अर्जित चक्रवद्धि ब्याज ही भारत सरकार की ब्रिटिश प्रकृति तथा परपराओ क पूण तथा स्वतत्र विकास म सचमुच ही बाधक है गत वर्षों से भारत सरकार की चरित्रगत यह नीति ही प्रतिक्रिया के लिए उत्तरदायी है सही कारण यह डर है कि क्यो हमारे प्रतिनिधियो को बजट निर्माण मे भाग नही लेने दिया जाता और यदि भारतीयो को यह अधिकार नही दिया जाता तो इसका परिणाम यह होगा कि भारतीय सचमुच ही विदेशी शोषको के हितों के विरुद्ध साधनो की खोज करेंगे

79 27 फरवरी 1903 इसी प्रकार बी० पी० पाल ने 'न्यू इंडिया' के 2 नवबर 1902 के अक मे लिखा भारत सरकार यह दोहराते हुए स्वीकार कर चुकी है कि वह देश के प्राकृतिक साधनो के तथाकथित विकास के लिए भारत मे यथासभव अधिकाधिक ब्रिटिश पूजी लाना चाहती है इस नियत्रण के पश्चात सरकार ब्रिटिश पूजी तथा उसके अभिकर्ताओ को उनके द्वारा मागी जान वाली सुरक्षा दने को विवश है भारतीयो को बजट के सबध म बोलन देने के अधिकार से वचित करने का वास्तविक कारण भी यही है 'न्यू इडिया' के 11 दिसबर 1902 के अक मे उन्होने लिखा वहा की आवश्यकता नही कि केवल दरिद्र बगाल पर ही नहीं प्रत्युत सारे असहाय भारत पर अधिकाशत ब्रिटिश पूजी ही शासन करती है 14 फरवरी 1903 के अक

म बगाली ने टिप्पणी की जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी को मनचाहा रूप देता है उसी प्रकार सरकार वाणिज्य सदन क हाथ म है और उसकी इच्छा से काय करती है' तथा देखिए हिंदू 6 माच 1894 मद्रास स्टडड 28 मई (आर० एन० पी० एम० 1 जून 1901) बगाली 10 जून 1901 रगालय 18 फरवरी हितवादी 20 फरवरी वसुमती 21 फरवरी (आर० एन० पी० बग 28 फरवरी 1903) सजावनी 5 माच (आर० एन० पी० बग, 14 माच, 1901), जी० एम० अय्यर ई ए प० 120-2

80 रानाडे एसेज प० 66

81 नौरोजी पावर्टी प० 34, 135 567 8 स्पाचेज प० 322 परिशिष्ट, प० 55-6 गोखले वेलबी आयोग खड III, प्र० 18170 जी० एस० अय्यर वही प्र० 19636 19680-1 19644 रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 121 2 मद्रास स्टडड 28 मई (आर० एन० पी० एम० 1 जून 1901)

82 विदेशी पूजी की सहायता से किसी देश के विकास म और विदेशी पूजीपतिया द्वारा किसी देश के साधनो के शोषण म आकाश-पाताल का अतर है (बगाली 25 मई 1901)

83 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 739

84 इस तक की सारी रूपरेखा का विकास उपलब्ध है नौराजी पावर्टी पृ० 228 9 जोशी पूर्वोद्धत, 673 739, मराठा 30 अगस्त 1891, मद्रास स्टडड 28 मई (आर० एन० पी० एम० 1 जून 1901) जी० एस० अय्यर रिप० आई० एम० पी० 1901 पृ० 121 2 डा० जी० कर्वे के अनुसार जस्टिस रानाडे भी इसी दृष्टिकोण क थे देखिए उनकी पुस्तक, रानाड दि प्रोफेट आफ लिबरेटेड इडिया पृ० XXIX

85 नौरोजी पावर्टी, पृ० 229

86 1881 म दादाभाई ने लिखा भारत की वतमान उदासीनता की विशिष्ट परिस्थितिया म अगरजा पूजी से भारत के लाभ उठान का असदिग्ध रूप स सर्वोत्तम साधन सरकार द्वारा कार्यों का सचालन होगा भारत क निश्चित रूप से लाभान्वित हान का योजना यह होगी कि सरकार सभी प्रकार क पूजीसापेक्ष सावजनिक कार्यों अथवा खाना अथवा सारे ही कारोबार को अपन हाथ म ल ले उनम अगरेजी पूजी भले ही हो परतु अभिकरण स्वदेशी हो तथा केवल सवथा अपरिहार्य स्थिति म ही योग्य यूरोपीयो को उनका प्रधान बनाया जाए (पावर्टी पृ० 228) तथा देखिए वही प० 229 जोशी क दृष्टिकोण को देखने क लिए देखिए उनकी राइटिंग्ज ऐंड स्पीचेज पृ० 672 3 तथा 746 और देखिए न्यू इडिया 16 सितबर 1901। इससे पूववर्ती बाब समाचार के 18 मई 1880 क अक का दृष्टिकोण तो और भी रोचक है भारत म अभी अभी आविष्कृत खान की खाना क विदेशी स्वामित्व पर आपत्ति करते हुए उसने अपना मत इस प्रकार प्रकट किया क्योकि देशवासी अपना समवाय बनान म असमथ है अत सावदेशिक म सरकार को खाना की खुदाई का काय अपन हाथ म ले लेना चाहिए इसके अतिरिक्त इन खाना के लाभो का उपयोग देशवासियो पर लगे करो के बोझ को कम करने म हो करना चाहिए (आर० एन० पी० बब 8 मई 1880)

87 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 672 3 698 नौरोजी पावर्टी पृ० 229 इसके साथ ही जोशी महोदय सरकार की प्रवृत्ति को परखने और उसके विरुद्ध विरोध प्रकट करने म अग्रगण्य थे उन्होंने बागान जैसे उद्योगों को भारतीय निधि स और भारतीयो क व्यय तथा मूल्य पर विकसित करके विदेशी पूजीपतियो को साधारण मूल्य दर पर सौंपने का तीव्र निदा की (देखिए पृ० 679)

और यह कि व्यवहार मे सरकार भारतीयो की नही प्रत्युत विदेशी उद्यमियो की सहायता कर रही थी तथा उन्हें उपदान प्रदान कर रही थी (पृ० 825)

88 इस सबध म एकमात्र उपलब्ध अपवाद बगाली के 28 जुलाई 1883 के अक का निम्नलिखित अवतरण है न हीं हमे स्पष्ट दिखाई देता है कि किस प्रकार एक सरकार दूर की कौडी लाने की बात छोडकर व्यापार और वाणिज्य के विध्वसक कानूनो को लौटाए बिना उन्हे उत्साहित कर सकती है

89 उद्धृत भोलानाथ चद्र राजा दिगबर मित्र (दो खड) (कलकत्ता 1896) खड I प० 75

90 मराठा 11 सितबर 1891

91 1896 का प्रस्ताव III तथा देखिए प्रस्ताव XIII 1899 का XIII 1901 का VIII

92 जी० वी० जोशी के विचारो के लिए देखिए उनकी 'राटिंग्स ऐंड स्पीचेज', पृ० 743 750 785-6 807 1885 म उन्होने लिखा सवप्रथम हमारी आवश्यकता यह है कि सरकार पूरे तौर से दिल और दिमाग से हमारे साथ हो उसकी सहायता के बिना हम अपनी वतमान दुबलता तथा ना-तैयारी की स्थिति म राष्ट्रीय प्रगति की दिशा म कुछ भी नही कर पाएगे इस भयकर प्रतियोगिता के सामने जिसके शिकार हम हैं सरकार को राष्ट्र की सच्ची आवश्यकताओ को अवश्यमेव अभिस्वीकार करना चाहिए और मित्रतापूवक राष्ट्रीय उद्योगो के हित के साथ अपने को जोडना चाहिए (वही, प० 743) तथा देखिए वही, प० 746, जस्टिस रानाडे के विचारो के लिए देखिए उनके निबध 'नीदरलडस इडिया ऐंड दि कल्चर सिस्टम आइरन इडस्ट्री पायनीयर अटम्प्टस' और 'इडस्ट्रियल कान्फरेंस तथा देखिए, के० टी० तलग 'ट्रेड ऐंड प्राटक्शन (बबई 1877) प० 49, बबई समाचार' 8 जुलाई (आर० एन० पी० बब, 9 जुलाई 1881) मराठा 14 फरवरी 1886 22 सितबर 1895, 18 नवबर 1900 30 माच 1902 बगवासी 31 मई (आर० एन० पी० बग 7 जून 1890) मालवीय स्पीचेज प० 250 जी० एस० अय्यर वेलबी आयोग, खड III प्रश्न 18661, और 'ई ए, प० 264 एन० के० एन० अय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1902 प० 138 हिंदू 21 अप्रल 1902 वत्तात चितामणि 15 माच (आर० एन० पी० एम, 15 माच 1900) पी० मेहता स्पीचेज प० 750 दत्त, ई० एच० II प० XVII स्पीचेज I प० 24 सी० पी० ए०, प० 490-1 आर० सी० दत्त ने 1904 में बडौदा के राजस्व मत्री बनन पर सवप्रथम काय यह किया कि उन्होने निजी उद्यमियो का नए उद्योग खोलने मे सहायता का वचन दिया —जे० एन० गुप्ता लाइफ ऐंड वक आफ रमेशचद्र दत्त (लदन 1921) प० 402

93 रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 123

94 वही मराठा 12 सितबर 1895 18 जनवरी 1900 दत्त ई० एच० I प० 289 गोखले स्पीचेज पृ० 28

95 भारतीय उद्योग आयोग 1916 18 का प्रतिवेदन प० 2 1880 के अकाल आयोग ने इस नीति का प्रतिपादन स्पष्ट शब्दो मे किया उसने यद्यपि देश के उद्योगीकरण की आवश्यकता पर बल दिया तथापि उसने स्वत सिद्ध सत्य के रूप मे यह अनुभव किया कि राज्य के किसी भी प्रत्यक्ष हस्तक्षप से जनता की स्थिति म कोई परिवतन नही लाया जा सकता उलटे इस प्रकार के हस्तक्षप से बहुत बडा खतरा यह है कि एक तो इसस व्यापार के सशक्त सिद्धातो के प्रसार को ठस पहुचेगी तथा दूसरे निजी उद्यम के प्रवतन म भी बाधा उपस्थित होगी हमारा विश्वास है कि परोक्ष उपायो रेल के विस्तार तथा स्थानीय व्यापार और विदेशी वाणिज्य के विकास

आदि से ही लक्ष्य प्राप्ति होगी उद्योग की किसी शाखा विशेष को अनिश्चित सहायता देने से कोई भी लाभ नही होगा (रिपोट आफ इंडियन फमिन कमीशन 1880 भाग II अनभाग कडिका, 2 तथा 3)

96 भारतीय उद्योग आयोग 1916-18 का प्रतिवेदन, अध्याय VIII तथा अनस्टे पूर्वोद्धत प० 210

97 वजन स्पीचेज II पृ० 164

98 रानाडे एसेज प० 88 165 166

99 वही, पृ० 33 86-7

100 वही प० 32, 89 तथा देखिए जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 743, 809

101 रानाडे एसेज, प० 165

102 वही, पृ० 94

103 वही प० 87 9, 91 95 उदाहरणार्थ रानाडे द्वारा प्रस्तुत स्थिति का निम्नलिखित सीधा उपस्थापन देखिए रेलवे नीति के समथको के लिए आपत्ति प्रस्तुत करना उचित प्रतीत नही होता क्योकि इस सिद्धांत को स्वीकार करने का अथ होगा कि सरकार को रेलवे अथवा नहरो के लिए अथवा चाय काफी उद्योगो के प्रवतन क लिए धन जुटान का कोई अधिकार ही नहीं —(वही पृ० 91) और देखिए, जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 740 809, मराठा 18 नवबर 1900

104 जोशी पूर्वोधृत, पृ० 797 812 रानाडे एस्सेज प० 91

105 जोशी पूर्वोधृत, प० 797 तथा वही प० 812 826 रानाडे एसेज पृ० 91 2 190 193 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 155

106 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 812.

107 वही तथा रानाडे एसेज, प० 190 193 जी० एस० अय्यर, ई ए पृ० 163 5

108 रानाडे एसेज पृ० 89 92 3 178 193 जोशी पूर्वोधृत, पृ० 797

109 रानाडे एसेज प० 95 जोशी पूर्वोद्धत प० 797 दि इंडियन स्पेक्टटर ने अपने 26 अक्तूबर 1884 के अक में यह इच्छा प्रकट की कि सरकार इग्लैंड से ऋण ले और भारतीयों को ऋण दे

110 रानाडे एसेज प० 95-6

111 वही पृ० 177 तथा वही प० 89 169 189 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 809-10 एम० वी० नामजोशी मराठा 30 अगस्त 1891 में, द्वितीय औद्योगिक सम्मेलन पूना का प्रस्ताव मराठा 11 सितबर 1891 हितवादी 10 फरवरी (आर० एन० पी० बग 18 फरवरी 1892) स्वदेश मित्रन, 13 अक्तूबर (आर० एन० पी० एम० 17 अक्तूबर 1903) जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 264 या गारटी लोहा और इस्पात जसे उद्योग क लिए विशेष रूप से आवश्यक थी क्योंकि इस उद्योग म प्रारभिक कतिपय प्रयोगात्मक वर्षों म लाभ की आशा नहीं की जा सकती। अत इनम कोई पूजीपति तब तक पूजीनिवेश का साहस नहीं करेगा जब तक उसे पर्याप्त उत्तर रियायतो का विश्वस्त आश्वासन प्रतिभूत रेलवे कपनियो को पूजी पाने म सहायक आश्वासन जैसा न मिले (रानाडे एसेज पृ० 168 9)

112. मराठा 9 अगस्त 1885 जोशी पूर्वोद्धत प० 746.

113 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 747 रानाडे एसेज प० 137

114 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 747

वही पृ० 648 680 689 747 8 810 826 रानाडे एसेज पृ० 89 189 193 हिन्दु

23 माच 1885 द्वितीय औद्योगिक सम्मेलन पूना का प्रस्ताव मराठा 11 सितबर 1891 मराठा 30 माच 1902. राय 'पावर्टी', पृ० 143 जी० एस० अय्यर, ई० ए० पृ० 155

16 *1887 की राष्ट्रीय काग्रस ने सरकार से अनुरोध किया कि वह पहले से ही अस्तित्व म आए* आदशा पर और अधिक कठोर आचरण करके भारतीय उत्पादनो को सरकारी कार्यों के उपयोग म लाकर उ हें प्रोत्साहित करे प्रस्ताव VII और दखिए इन्दु प्रकाश 19 मई (आर० एन० पी० बब 15 जून 1881) बबई समाचार 6 जुलाई (वही, 9 जुलाई 1881) बबई गजेटियर (?) 19 नवबर हितेच्छु 23 नवबर, गुजराती 19 नवबर, बबई समाचार 20 नवबर, अखबार सौदागर 20 नवबर (वही 25 नवबर 1882) लोकमित्र 26 नवबर (वही, 2 दिसबर 1882) रास्त गुफ्तार 10 जुलाई (वही 16 जुलाई 1887), ए० बी० पी० 14 अप्रल 1881, 23 मार्च 1882 नव विभाकर 20 जून 25 जुलाई (आर० एन० पी० बग 2 जुलाई, 6 अगस्त 1881) चारुवत्त 8 जुलाई (वही 16 जुलाई 1881) बग 11 माच 9 सितबर 1882 काशी सावजनिक सभा का स्मरण प्रपत्र 1886 के अकाल आयोग का प्रतिवेदन प० 451 मराठा 14 फरवरी 1886 हिंदुस्तानी 6 अक्तूबर (आर० एन० पी० एन० 8 अक्तूबर 1891) अखबारे आम 25 अक्तूबर (आर० एन० पी० एन० 1 नवबर 1887) केसरी 23 सितबर (आर० एन० पी० बाबे 27 सितबर 1890) रानाडे एसेज पृ० 178 189 190 193 के० जी० नाटू इन मराठा 30 अगस्त 1891 मे उद्धत द्वितीय उद्योग सम्मेलन पूना का प्रस्ताव मराठा 11 सितबर 1891 एस० के० नय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 74 राय पावर्टी, पृ० 39-40

17 कलकत्ता के व्यापारसघ का 31 जनवरी 1890 का अभिभाषण कर्जन स्पीचेज पृ० 33 पर उदधृत 1880 के अकाल आयोग का प्रतिवेदन उद्योग आयोग इस निष्कष पर पहुचा कि भारत की औद्योगिक प्रगति को तीव्र बनाने क लिए भारत मे सरकार के तथा रेलो के भडार खरीदने *के उपायो मे आमूल परिवतन किया जाना चाहिए*

18 30 जून (आर० एन० पी० एन० 6 जुलाई 1898)

19 युनाइटेड इडिया 11 अगस्त (वी० ओ० आई० 31 अगस्त 1884), मराठा 14 फरवरी 1886 रानाडे एसेज, पृ० 189 193 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 810

20 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 743

21 वही प० 743 813, 819 20 रानाडे एसेज पृ० 32 3 193 नेटिव ओपिनीयन 20 दिसबर 1885 हिंदू 21 अप्रल 1902 1870 के वर्षों म बबई के स्वदेशी पत्रो का यह एक अत्यत लोकप्रिय सुझाव था उदाहरणाथ देखिए गुजरात मित्र 22 जनवरी (आर० एन० पी० बब 27 जनवरी 1871) जामे जमशेद 21 माच (वही 22 माच 1873) शमशेर बहादुर 12 अप्रल (वही 12 अप्रल 1873) बबई समाचार 16 दिसबर (वही 22 दिसबर 1873) 6 जून 1886 के मराठा ने सरकार से देश के खनिज साधनो के विकास को अपने हाथ मे लेने का अनुरोध किया ताकि इससे अन्य उद्योगो क खोलने में सहायता मिले

122 द्वितीय औद्योगिक सम्मेलन पूना का प्रस्ताव मराठा 11 सितबर 1892 और रानाड एसेज पृ० 178

123 रानाडे एसेज पृ० 177 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 743 मराठा, 22 सितबर 1895

124 अतिम तीन उपायो की चर्चा इस पुस्तक के अन्य भागो में की गई है

125 गोखले स्पीचेज पृ० 70

126 आर० एन० पी० बग 7 जून 1890

127 1900 मे आर० सी० दत्त ने लिखा यह सोचना सभव है कि औद्योगिक विकास को दृष्टि म रखकर काम करने वाली सरकार हमारी पीढ़ी की अवधि मे ही जापान के लोगों मे प्रचलित उत्तम ढगों से भारत के परिश्रमी और कुशल व्यक्तियो को भी परिचित कराती परतु अपने ही लाभो के लिए काम करने वाले विदेशी व्यापारियो तथा प्रतियोगी उत्पादको स इस उद्देश्य की पूर्ति होना कदापि सभव नही यही कारण है कि इस दिशा मे कभी कोई प्रयत्न नहीं हुआ (ई० एच० I, प० 289) और देखिए गुजरात मित्र, 22 जन० (आर० एन० पी० बब 28 जनवरी 1871) राजनारायण बोस स्टडीज इन बगाल रेनेसा', ए गुप्ता द्वारा सपादित (कलकत्ता 1958), प० 210 पर उद्धत भोलानाथ चद्र एम० एम० खड 1876 पृ० 17 राय पावर्टी प० 124 5 जी० एस० अय्यर ई० ए०, पृ० 125 6 जमीयुल उलूम 28 जन (आर० एन० पी० एन० 7 जुलाई 1897) ढाका गजट, 11 जुलाई (आर० एन० पी० बग 16 जुलाई 1904) बहुत बडे आशावादी रानाडे भी इस सबध म प्रासगिक सन्देह और निराशा प्रकट करने को विवश हो गए उदाहरणाथ हम इस देश मे सरकार से उस प्रकार का कुछ करने की आशा नहा कर सकत, जिस प्रकार फ्रास और जमनी की सरकारो ने अपने पोत व्यापार और चीनी उद्योगो के लिए किया है तथा सरकार को दिए जाने वाले सामान्य करा म से उपदान अधिदान इन निरथक विवेचन म शक्ति का प्रयोग उसका अपव्यय ही है (एसेज पृ० 189)

128 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 780 786 801 दत्त ई० एच० I प० 251 तथा देखिए अध्याय II

129 रामगोपाल पूर्वोद्धत प० 15 16

130 शिवनाथ शास्त्री मन आई हैव सीन (कलकत्ता 1919) पृ० 190

131 विपिनचद्र पाल मिमोराज आफ माई लाइफ ऐंड टाइम्स (कलकत्ता 1932) पृ० 264 और शिवनाथ शास्त्री पूर्वोद्धत पृ० 200

132 3 जुलाई (आर० एन० पी० बब 9 जुलाई 1870)

133 कर्वे पूर्वोद्धत

134 ये अथशास्त्री तथा सामाजिक राय बहादुर जी० वी० जोशी जा के नाम से जाने जाते थे

135 कर्वे पूर्वोद्धत पृ० XX प्रधान ऐंड भागवत पूर्वोद्धत पृ० 8 रामगोपाल पूर्वोद्धत पृ० 13

136 प्रधान ऐंड भागवत पूर्वोद्धत प० 8 10 रामगोपाल पूर्वोद्धत पृ० 18

137 रामगोपाल पूर्वोद्धत पृ० 13

138 आर० एन० पी० बब, 19 जुलाई 1873 तथा आयमित्र' 13 जुलाई (वही)

139 वही 28 अगस्त 1875 और ज्ञान सुधाकर 5 फरवरी (वहा 15 फरवरी 1879 सुबोध पत्रिका 20 अप्रैल (वही 26 अप्रैल 1879)

140 बी० के० बोस स्ट्रे थाटस (कलकत्ता 1919) पृ० 47 बोस ने दावा किया कि नागपुर के लोहारों से बातचीत कर ली गई है और वे छुरे कचिया बनाने को तयार हो गए है य छुरे तथा कचिया इस उद्देश्य से ही उगाही गई विशेष धनराशि से खरीदे गए और देश के विभिन्न भागो में भेजे गए अनाहार के कारण उत्पादन को सस्ता बनाने के लिए उनके प्रयोग म आने वाले अविकसित उपकरणों को भी सुधारने का प्रयास किया गया है (पृ० 47)

141 15 नवंबर 1874 के हिन्दू पेट्रियट द्वारा उद्धत बगलोर हेराल्ड जसा कि भोलानाथ चन्द्र द्वारा प्रस्तुत एम० एम० खड 1 1876 पृ 12.

142. उसी मे प्रस्तुत
143 वही खड II 1873 पृ० 621
144 वही, खड V, 1876, पृ० 10 2
145 वही खड 1876, पृ० 12
146 बी० बी० मजूमदार हिस्टरी आफ पालिटिकल थाट फ्राम राममोहन टु दयानद (1821 84) खड I, बगाल (कलकत्ता 1934) पृ० 379
147 उदाहरणाथ भारत मिहिर, 15 माच ए० बी० पी०, 16 माच (आर० एम० पी० बग 25 माच 1876)
148 शुल्कनीति का समीक्षा के लिए देखिए अध्याय 6
149 नौरोजी पावर्टी, पृ० 207
150 8 दिसबर 1881 और 10 फरवरी 1881
151 मालवीय स्पीचेज, पृ० 22
152 आर० एन० पी० पी० एन०, 26 अप्रल 1883
153 सजीवनी, 9 फरवरी (आर० एन० पी० बग 16 फरवरी 1884) पत्र के सवाददाता न आग यह सूचना दी कि उत्तर-पश्चिमी प्रातो के निवासी बगाली, पजाबी, राजपूत और मराठे, सभी सदस्य बन रहे हैं
154 केलाक पूर्वोद्धत पृ० 122
155 बबई मिलमालिक सघ का 1895 का प्रतिवेदन पृ० 2
156 सदभ के लिए विभिन्न सबद्ध प्राता के नटिव प्रेस के सबधित साप्ताहिक के प्रतिवेदना को देखिए 5 जून 1891 के अक म एजुकेशन गजट ने वकालत करते हुए लिखा भारतीय उत्पादना की अच्छाई बुराई की चिंता किए बिना उनके प्रति ठीक उसी प्रकार सहानुभूतिशील होना चाहिए जिस प्रकार व्यक्ति अपने माता पिता के गुण दोषा की चिंता किए बिना उनका आदर करते हैं
157 मराठा 30 अगस्त 1891
158 ए० सी० मजूमदार इडियन नेशनल इवोल्यूशन (मद्रास 1917) पृ० 188
159 और जब श्रोताओ ने 'नही नही कहा तो लालाजी भडक उठे और बोले हा ! मैं कहता हू हा ! अपने चारो ओर देखिए ये भाड़फानूस मे लप और ये यूरोप मे बनी कुर्सिया और मेजें चुस्त कपडे टोपिया अगरेजी कोट स्त्रियो की टोपिया फाक चादी से मढी हुई बेंतें और आपके घरो की विलासितापूर्ण सजावट आदि ये सब और कुछ न होकर भारत के दुर्भाग्य के उपहार हैं, भारत की भुखमरी के विजयस्तभ हैं आपने जो भी रुपया यूरोप के बने सामान पर खच किया है वह प्रत्येक रुपया आपने अपने गरीब भाइयो से लूटा है, अपने ईमानदार कारीगरो से लूटा है जिसके फलस्वरूप अब वे बेचारे रोटी कमाने के योग्य तक नही रहे (रिप० आई० एन० सी० 1891 पृ० 21)
160 रिप० आई० एन० सी 1894 पृ० 38
161 इस पुस्तक का अध्याय 6 देखिए 15 माच 1896 के अक मे मराठा ने लिखा यह इस अन्याय का ज्वलत प्रमाण है कि शिक्षित भारतीय मानचेस्टर के वस्त्रो के विरुद्ध धमयुद्ध का प्रचार कर रहा है
162 मराठा 15 माच 1896 तथा वही फरवरी 1896, बग निवासी 9 फरवरी (आर० एन० पी० बग 15 फरवरी 1896) तथा देखिए धारावार वत्त (6 फरवरी आर० एन० पी० बव 8

फरवरी 1896) अरुणोदय 16 फरवरी ज्ञान सागर 17 फरवरी (वही 22 फरवरी)

163 अमृत बाजार पत्रिका न 3 फरवरी 1896 के अंक म लिखा भारत के सभी प्रधान नगरो में वैतनिक अभिकर्ता नियुक्त कीजिए और उन्हें सहायता के लिए सहायक दीजिए पत्रिका के अनुसार इस उद्देश्य के लिए धन सीधे मिलमालिको की जवा स आना चाहिए और देशी मित्र 20 फरवरी नागा समाचार 15 फरवरी, अरुणोदय 16 फरवरी ज्ञान सागर 17 फरवरी जगदादश 16 फरवरी प्रभाकर 19 फरवरी (आर० एन० पी० बग, 22 फरवरी 1896)

164 मराठा 15 माच 1896

165 जामे जमशद 24 जनवरी (आर० एन० पी० बव 25 जन० 1896) मादवत्त 30 जनवरी और जगदादश 26 जनवरी (वही 1 फरवरी 1896), सुबोध पत्रिका 5 फरवरी धारवार वत्त 6 फरवरी अरुणोदय 2 फरवरी (वही, 8 फरवरी 1896) मराठा 9 फरवरी 15 माच 1896 और महाराष्ट्र स नेटिव ओपीनियन 2 फरवरी, 26 माच 1896 तथा दक्षिण पादटिप्पणी 161

166 आर० एन० पी० बव 22 29 फरवरी 1896 तथा नीचे 169 की पादटिप्पणी म प्रस्तुत सन्द

167 2 माच 1896 के न्याय सिंधु के अनुसार उम वष अंगरेजी कपडो के बडे मोट मोट गट्ठर होली की आग म फेंके गए आर० एन० पी० बव 7 माच 1896

168 जगद्हितेच्छा 7 माच (आर० एन० पी० बव 14 माच 1896)

169 बबई के गह (पब्लिक) गोपनीय विभाग के विशेष शाखागृह द्वारा लिखित हिस्ट्री आफ दि बी० जी० तिलक अक्तूबर 1899 प्रोग 29 (डिपोजिट) प० 14

170 देखिए ए० बी० पी० 5 फरवरी 1896 सजीवनी 1 फरवरी (आर० एन० पी० बग 8 फरवरी 1886) चारुमिहिर 3 फरवरी (वही 15 फरवरी 1896) बग निवासी 9 फरवरी (वही) सहचर 11 माच (वही 21 माच 1896) सजीवनी 14 मार्च (वही) ढाका गजट 23 माच (वहा 28 माच 1896) बगाल बिहार से हेराल्ड 14 अप्रल (आई० एस० बी० थी० आई० 17 मई 1896) बिहार स उत्कल दीपिका 22 फर० (आर० एन० पी० बग 18 मार्च 1896) उडिया और नामसवाद 7 अप्रल (वहा 23 मई 1896) सवादवाहिका 17 सित० (वही 14 नवबर 1896) उडीसा और मद्रास से स्टडड 23 माच (आई० एस० बी० ओ० आई० 10 मई 1896) मद्रास स हिंदुस्तानी 12 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 19 फर० 1896) नागरी नीरद 13 फरवरी (वही 26 फर० 1896) रहबर 24 फर० (वही 4 माच 1896) नजमल हिंद 29 फरवरी प्रजमने हिंद 7 माच और जमाना 5 माच (वही 11 माच 1896) अलमोडा अखबार 9 मई और उत्तर-पश्चिम प्रांतो तथा अवध से नसीमे आगरा 7 मई (वही 12 मई 1896)

171 देखिए ए० बी० पी० 14 नवबर 1898 अखबारे आम 30 जलाई (आर० एन० पी० पी० 28 अगस्त 1897) नसीम आगरा 15 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 21 जलाई 1897) रियाजुल अखबार 28 नवबर (वही 6 दिसबर 1898) सुरमाए रोजगार 24 अप्रैल (वही 10 मई 1899) भारत जीवन 26 जून (वही 5 जुलाई 1899) और 17 जलाई (वही 2 अग 1901) सजीवनी 14 नवबर (आर० एन० पी० बव 26 जुलाई 1902) प्रवासी 7 दिसबर (वही 13 सितबर 1902) पसा अखबार 15 मार्च (आर० एन० पी० पी० 29 मार्च 190) बगामी 12 माच 27 सितबर 1902 मराठा 17 अगस्त 1902 सूर्योदय प्रकाशिका 18 मई (आर० एन० पी० एम० 21 मई 1904)

26 जून (आर० एन० पी० एन० 5 जलाई 1899)

173 14 नवंबर (आर० एन० पी० पी० बंग 23 नवंबर 1901)

174 आर० एन० पी० पी०, 29 मार्च 1902

175 रिप० आई० एन० सी० 1899, प० 125

176 इंडियन डेली मिरर, 22 दिसंबर (आर० एन० पी० एन० 28 दिसंबर 1901) भारत जीवन ने 14 नवंबर के अंक में इस सुझाव का बड़ा जोरदार समर्थन किया (आर० एन० पी० एन० 15 नवंबर 1898) संजीवनी ने 12 दिसंबर 1901 के अंक में लिखा हिंदुओं में पवित्र अवसरों पर रेशम पहनने की प्रथा है मातृभूमि की पूजा से बढ़कर कोई पवित्र अवसर नहीं और मातृभूमि की पूजा के स्थल-पंडाल में विदेशी सामान से बनी वेषभूषा वाले व्यक्ति को कभी प्रविष्ट नहीं होना चाहिए (आर० एन० पी० बंग 21 दिसंबर 1901)

177 सी० पी० ए० म 636

178 मजूमदार पूर्वोद्धृत, पृ० 188

179 बख्शी जसीराम, रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 125

180 मराठा 17 अगस्त 1902

181 बंगाली 26 सितंबर 1902 वस्तुत वह एक तरह का स्वदेशी भंडार 1896 में ही खोल चुके थे (बागल पूर्वोद्धृत पृ० 124)

182 प्रजाबंधु, 18 जनवरी (आर० एन० पी० बंब, 24 जून 1903) और 15 फरवरी (वही 21 फरवरी 1903)

183 यह काफी मजेदार बात है कि स्वदेशी को लोकप्रिय बनाने के लिए स्वदेशी उत्पादकों द्वारा कीमतें घटाने का सुझाव किसी ने भी नहा दिया जबकि स्वदेशी उत्पादक वस्त्र उद्योग में काफी ऊंचे लाभ कमा रहे थे

184 संक्षेप तथा पुनरावृत्ति न होने देने के लिए हम यहां इस विषय पर उपलब्ध असंख्य संदर्भों को प्रस्तुत नहा कर रहे हैं अधिकांश तो ऊपर प्रस्तुत किए ही जा चुके हैं

185 और मद्रास स्टैंडर्ड 23 मार्च (आई० एस० बी० ओ० आई० 10 मई 1896)

186 17 मई 1896

187 उदाहरणार्थ 14 मार्च 1896 का अंक (आर० एन० पी० बंग 21 मार्च 1896)

188 सी० पी० ए० पृ० 636-7

189 उदाहरणार्थ देखिए बी० के० बोस पूर्वोद्धृत पृ० 47 भोलानाथ चंद्र एम० एम० खंड V 1876 प० 10-2 संजीवनी 22 जून (आर० एन० पी० बंग 28 जून 1884) नसीमे आगरा, 7 जून (आर० एन० पी० एन० 12 जून 1889) ए० बी० पी० 12 जुलाई 1891 पूना वैभव 10 मई (आर० एन० पी० बंब 16 मई 1891) भारत जीवन 26 जून (आर० एन० पी० एन० 5 जुलाई 1899)

190 मराठा 13 मार्च 1881, वृहद समाचार 22 जून (आर० एन० पी० बरार 27 जून 1891) मराठा 15 मार्च 1896 प्रजाबंधु 7 सितंबर (आर० एन० पी० बंब 13 सितंबर 1902) बंगाली 26 सितंबर 1902

191 और भी देखिए भोलानाथ चंद्र एम० एम०, खंड V 1896 प० 32 बंगाल रिनेसां में राजनारायण बोस का उद्धरण इन पृ० 210 मराठा 9 फरवरी 1896 एडवोकेट, 1 फरवरी (आर० एन० पी० एन०, दो फरवरी 1901)

192 सी० पी० ए०, पृ० 636

193 देखिए, सुबोध पत्रिका 20 अप्रैल (आर० एन० पी० बब० 26 अप्रैल 1879), मराठा 13 माच 1881 ए० बी० पी० 10 फरवरी 1881 सोम प्रकाश, 23 जन० (आर० एन० पी बग०, 28 जनवरी 1882) आनन्द बाजार पत्रिका, 27 माच (वही, 8 अप्रल 1882) भारत मिहिर 6 मई (वही, 27 मई 1882) पूना वभव, 10 मई (आर० एन० पी० बब 16 मई 1891) हिंदुस्तानी 11 अप्रल (आर० एन० पा० एन० 18 अप्रल 1789), मराठा 8 जलाई 1894 1896 मे परवर्ती तथा अधिक प्रचड अभियक्ति के लिए देखिए प० 130 ऊपर सी० वाई० चितामणि की इडियन पालिटिक्स सिंस दि म्यूटिनी (इलाहाबाद, 1937) म एक रोचक विवरण इस प्रकार है बी० के० मधोक वायसराय की कौंसिल मे वस्त्र उद्योग पर आयात शल्क लगाने के विरुद्ध अपना विरोध प्रकट करने वाले दिन घर के बुने वस्त्र पहनकर वहा पहुचे

194 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 617 और देखिए सजीवनी 21 जून (आर० एन० पी वग 28 जून 1884) समय 22 जून (वही 27 जून 1885) महचर 11 माच (वही 21 माच 1896)सुरमा ए रोजगार 24 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 10 मई 1899) गोहरे हिन्द 26 जुलाई (आर० एन० पी० यू० पी० 2 अगस्त 1902) पसा अखबार, 15 माच (आर० एन० पी० पी० 20 माच 1902)

195 5 अप्रल (आर० एन० पी० बब 11 अप्रल 1891)

196 2 अगस्त (आर० एन० पी० बब, 8 अगस्त 1894 वास्तविक तथ्य यह है कि ज्ञोन्दल ने लोगो से स्वदेशी वस्त्रो के प्रयोग का सरकारी कचहरियो म दीवानी या फौजदारी मुकदमे न ले जाने का तथा अपने आपको सरकारी नौकरी से स्वतत्र रखने का अनुरोध करके एक प्रकार से असहयोग आन्दोलन की ही पूवघोषणा कर दी थी

197 1 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 2 फरवरी 1901)

198 तिलक रामगोपाल पूर्वोद्धत पृ० 231

199 नौरोजी पावर्टी पृ० 207

200 यह दृष्टिकोण मिलमालिक तथा उस समय काग्रेस के सयुक्त सचिव और 1901 म राष्ट्रपति डी० ई० वाचा क 11 तथा 18 माच 1896 के टाइम्स आफ इडिया के प्रको म प्रकाशित दो पत्रा म भली प्रकार व्यक्त किया गया है इसके अतिरिक्त उनके लेख दि इकानामिक्स हेरेसीज आफ दि स्वदेशी मूवमट इकोनामिक्स इडियन रिव्यू सितबर 1903 और यू० पी० कुरियन का दि स्वदेशी मूवमट इडियन रिव्यू दिसबर 1903 दि डिस्कशन आफ दि प्वाइट आफ व्यू आफ दि ब्रिटिश आफ दि स्वदेशी मूवमट एट फालोज' उपर की स्रोत सामग्री पर आधारित है और देखिए कसरे हिन्द 8 माच (आर० एन० पी० बब 14 माच 1896) और पारसी 1 अप्रल (आई० एन० बी० आ० आई० 17 मई 1890) वाचा ने लिखा भवन्त दन्भ का गुबार है परतु जब इस सकल्प को कायरूप मे परिणत किया जाएगा तो यह सामग्रा तथा निरथक दरियानूसी विचार मात्र बनकर रह जाएगा

201 कुरियन पूर्वोक्त स्थल पृ० 763

202 वाचा टाइम्स आफ इडिया 12 माच 1896

203 कुरियन पूर्वोक्त स्थल पृ० 763

204 वाचा पूर्वोक्त स्थल पृ० 11 मार्च 1896.

205 इकानामिक्स पूर्वोक्त स्थल पृ० 541

206 वाचा पूर्वोक्त स्थल 11 माच 1896

207 वही

208 इसका स्वच्छी पक्षीय उत्तर यह था माग आने दीजिए आपूर्ति हो जाएगी (ए० बी० पी०, 12 जुलाई 1891) और देखिए, मराठा, 12 अप्रल 1896 मद्रास स्टडड, 23 माच (आई० एस० बी० ओ० आई०, 10 मई 1896)

209 उदाहरणाथ, बगवासी 2 मई (आर० एन० पी० बग 9 मई 1891) तथा सजीवनी 14 नवबर (वही 23 नव० 1901)

210 कुरिल्लय पूर्वोक्त स्थल, पृ० 763

211 3 मई 1901 का भाषण बबई मिलमालिक सघ का 1901 का प्रतिवेदन पृ० 53 बबई मिलमालिक सघ का अध्यक्ष राष्ट्रवादी नेता नहा था अत 22 माच 1899 को सघ की साधारण वार्षिक बैठक म उसने अपने भाषण म और अधिक स्पष्ट शब्दा म कहा हम मिलमालिक समता लान वाले सीमाशुल्क को भारत और इगलड म प्रतियोगिता की दृष्टि से भारत के लिए घातक मानकर उसके विरुद्ध कोई शिकायत नहा रखते हैं जसाकि सघ पहले ही स्पष्ट कर चुका है लकाशायर के बढ़िया कपडे म और भारत के मोट कपड म किसी प्रकार की प्रतियोगिता का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता हो इसमे कोई सदेह नही कि सीमाशुल्क ने हथकरघा जुलाहो को सरक्षण प्रदान किया है और इसके फलस्वरूप हम देखते हैं कि जहा हथकरघे वप प्रतिवष सूत की खपत का उत्तरोत्तर बढ़ाते जा रहे हैं, वहा 1896 के पश्चात बबई म मशीनी करघा द्वारा खपत म कोई बढ़ोतरी नहा हुई (बबई मिलमालिक सघ 1898 वष का प्रतिवेदन, पृ० 85)

212 वाचा पूर्वोक्त स्थल, 18 माच 1896 1903 मे नौरोजी द्वारा वाचा को लिखा पत्र, मसानी म उद्धत, पूर्वोद्धत प० 450

213 इस बात पर कदाचित अधिक विस्तत विश्लेषण की आवश्यकता है 19वी शती के अतिम पचीस वर्षों मे भारतीय वस्त्र उद्योग न लकाशायर के कपडे के व्यापार को धीरे धीरे देश के माटे वस्त्र के क्षेत्र स निकाल फेंका परतु यह अभी तक उत्तम तथा मध्यम कोटि के वस्त्रो का स्तरीय उत्पादन काफी मात्रा म नही कर पाया था बीसवी शताब्दी के प्रारभ म स्वदेशी हथ करघा उद्योग मोट कपड के उत्पादन मे तथा लकाशायर के उद्योग मध्यम तथा उत्तम वस्त्र के उत्पादन म भारतीय मिलो से प्रतियोगिता की स्थिति म थे अत एक खास समय म तो स्वदेशी आदोलन न हथकरघा उद्योग के ही फूलने फलने मे योग दिया प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात स्थिति अवश्य मौलिक रूप से बदल गई थी उस समय भारतीय मिलें मध्यम ही नहीं, उत्तम कोटि के वस्त्र का भी पर्याप्त मात्रा म उत्पादन करने लगी थी —तुलनीय परिमल राय इडियाज फारेन ट्रेड सिस 1870 लदन 1914 पृ० 184)

214 201 से 205 सख्या तक की पादटिप्पणियो म उद्धत सदभ

विदेश व्यापार

पिछली अर्धशताब्दी की अवधि मे भारत के विदेश व्यापार का उल्लेखनीय विकास हुआ है और यह देश की समृद्धि मे वृद्धि का एक महत्वपूर्ण निदर्शन है। —जान स्ट्रेची

भारत के व्यापार को प्राकृतिक आधार पर प्रतिष्ठित करना होगा और वह प्राकृतिक आधार यह होगा कि देश की बढ़ती जनसख्या के सभरण की विशाल और अपरिमित मडी मुख्य रूप से उसके स्वदेशी उत्पादनो के लिए ही सुरक्षित रखनी होगी तथा अवशिष्ट अतिरिक्त सामग्री का यहा अनुत्पन्न तथा अनुत्पादित सामग्री के विनिमय के रूप म निर्यात करना होगा। ऐसा करने स ही निकट भविष्य मे भारत के पूर्ण आर्थिक विनाश की चेतावनी देने वाले सकट को टाला जा सकता है।

—जी० सुब्रह्मण्य अय्यर

19वी शताब्दी म, विशेषत 1850 के उपरात भारत न विदेश व्यापार म बहुत उन्नति की जिससे देश म वास्तव म ही व्यापारिक क्राति का श्रीगणेश हो गया। आयात और निर्यात के परिणाम तथा मूल्य उल्लेखनीय गति स बढ़ गए।[1] उनके विस्तारक्षेत्र व स्वरूप मे मौलिक परिवर्तन आया। 19वी शताब्दी की अवधि म भारत के विदेश व्यापार के विकास का विवरण पृष्ठ 127 की तालिका म प्रस्तुत है

19वी शताब्दी के दौरान भारत के आयात निर्यात के ढाच म भी आमूल परिवर्तन हुआ। 1813 स तथा पूर्व अतीत काल म ही जहा भारत मदव निर्मित वस्तुओ का निर्यातक तथा मूल्यवान धातुओ और विलास उत्पादनो का आयातक था वहा वह क्रमश विशेषत 1858 के पश्चात प्रमुख रूप स कृषि सबधी कच्चा सामान तथा खाद्य पदार्थों का निर्यातक तथा निर्मित सामान का आयातक बन गया। परपरागत निर्यात की वस्तुओं सूती और रेशमी वस्त्र तथा धागे का स्थान धीरे धीरे कृषि के विविध उत्पादनो प्रमुख रूप स कच्ची कपास और पटसन, चाय और कॉफी, अफीम तिलहन तथा गेहू और चावल ने ले लिया। 1881 82 म तथा 1904 5 म कुल निर्यात का क्रमश 17 प्रतिशत तथा

26 प्रतिशत भाग गेहू और चावल का था। आयातित सामग्री म सूती धागो और सूती कपड़ा, धातुआ, मशीना, चीनी तथा तला का अनुपात बढ़न लगा। 1881-2 म तथा 1904 5 मे आयातित सूती उत्पाद ही कुल आयात का क्रमश 24 तथा 39 प्रतिशत थ।

मूल्य लाख रुपयो मे

वार्षिक औसत	आयात			निर्यात
"	1834 5 स	1838 9	7,32	11,32
"	1849 50 ,,	1853 4	15,85	20,02
"	1859 60 ,,	1863 4	41 06	43 17
"	1869 70 ,	1873 4	41,30	57,84
"	1879 80 ,	1883 4	61,81	80,41
"	1889 90 ,	1893 4	88,70	108,67
"	1899 1900 ,	1903-4	110,69	136,59
वष	1904 5 ,,		143 92	174,14

टिप्पणी इन मदो म सरकारी भडारा व धान के आयात निर्यात सम्मिलित हैं

पिछली शताब्दी क उत्तराद्ध म भारत के विदेश व्यापार म यह एक नई तथा सुखद प्रवात्त देखने को मिली कि एक ओर भारत मे लोहा, इस्पात, मशीनें तथा कारखानो के धधे निरतर बढ़ने लग तथा दूसरी ओर आधुनिक मशीनो के उत्पादन के रूप मे सूती वस्त्रा और पटसन के माना का निर्यात एक बार पुन नियात व्यापार म स्थान पाने लगा तथा निरतर उत्तरोत्तर महत्व प्राप्त करने लगा।

1856 के बाद सात वर्षों की सक्षिप्त अवधि को छोड़कर सारी 19वी शताब्दी मे भारतीय विदेश व्यापार का एक उल्लेखनीय परतु सामान्य तत्व था आयात के मुकाबल नियात का निरतर बढ़ता हुआ आधिक्य। इस तत्व न भारतीय आर्थिक चितन मे महत्व पूण भूमिका निभाई।

राष्ट्रीय दृष्टिकोण

विदेश व्यापार के विषय ने भारतीय नताओ के चित्त को सक्रिय रूप मे आकृष्ट अथवा प्रबलता से उत्तेजित नही किया क्योकि इसका एक आधिक कारण यह था कि यह आदोलन का विषय नही बन सका, हा उन्होंने इस प्रश्न पर चितन किया तथा उसके विविध पक्षो पर अपने विचारा की अभिव्यक्ति भी की परतु इसे अपने आप मे महत्वपूण नही समझा। उन्होंने अतर्राष्ट्रीय वाणिज्य मे कोरी वृद्धि को अपने आप मे एक लाभ तथा विचारणीय विषय नही माना। उनके अनुसार विदेशी व्यापार केवल इस रूप मे महत्वपूण था कि यह भारत की अधालिखित केंद्रीय आर्थिक समस्याओ को प्रभावित करता था दरिद्रता, उद्योगीकरण तथा विदशी आर्थिक शोषण। फलत उन्होंने विदेश व्यापार के

विस्तार की विशुद्ध रूप में, अन्याय पक्षों से विच्छिन्न रूप में अथवा उसके लाभदायक अथवा घातक प्रभावों के सैद्धांतिक आधारों पर प्रशंसा अथवा निंदा करने से इंकार कर दिया।

ब्रिटिश भारतीय अधिकारियों तथा प्रवक्ताओं के अनुसार विदेश व्यापार का द्रुत विकास देश के हित में था। उन्होंने प्राय इसे जनता की बढ़ती हुई संपन्नता के प्रत्यक्ष प्रमाण बताया।[3] भारतीय राष्ट्रवादियों ने कुल मिलाकर इस धारणा को स्वीकार नहीं किया। कुछ एक ने तो इस विश्वास पर ही शंका व्यक्त की कि भारत का विदेश व्यापार, विशेषत देश के आकार और जनसंख्या के अनुपात में संपन्न स्थिति में है अथवा तीव्रगति से विकास कर रहा है। 1887 में ही दादाभाई नौरोजी ने निर्देश किया कि यूरोप के देशों के व्यापार के साथ और यहां तक कि ब्रिटिश राज्य के अन्य भागों के व्यापार के साथ भारत के विदेश व्यापार की तुलना करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रिटिश भारतीय व्यापार कितना निकृष्ट है। आर० सी० दत्त, डी० ई० वाचा तथा जी० एस० अय्यर ने इस तथ्य पर उचित ध्यान दिया।[4] किसी भी रूप में उन्होंने विदेश व्यापार के विस्तार को अपने आप में समृद्धि का लक्षण अथवा हर्षोल्लास का कारण नहीं माना। सामग्री के अंतर्राष्ट्रीय विनिमय के सामान्य लाभों को न नकारते हुए भी उन्होंने व्यापार की कुल मात्रा तथा मूल्य में वृद्धि को वास्तविक आर्थिक प्रगति के विश्वस्त संकेतक अथवा विशुद्ध हित मानना स्वीकार नहीं किया। उनके अनुसार यूरोप के व्यापारिक देशों के संबंध में यह मापदंड सही हो सकता है क्योंकि वहां व्यापार की मात्रा राष्ट्रीय आय की स्थिति का पर्याप्त अंश में संकेतक होती है परंतु भारत अभी तक व्यावसायिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं था अत उसके संबंध में यह कसौटी लागू नहीं होती थी। वस्तुत इस देश के संबंध में इस प्रकार के तर्कों का निस्सार, मिथ्या तथा भ्रामक होना ही अधिक संभव था।[5] अर्ध सत्य होने के कारण यह और भी अधिक भयंकर था। 'बंगाली' ने 7 दिसंबर 1872 के अंक में लिखा केवल ऊंची संख्याओं अथवा साधारण सक्रियता से व्यापार की सुदृढ़ता का अनुमान उसी प्रकार मिथ्या सिद्ध हो सकता है जिस प्रकार किसी व्यक्ति की आयु, निग तथा अन्य परिस्थितियों पर ध्यान दिए बिना केवल उसके शरीर में रक्त-संचार की गति यता में ही उसके उत्तम स्वास्थ्य की कल्पना।[6] राष्ट्रीय भौतिक उत्पादनों के विकास की दृष्टि से इसपर विचार करते हुए जी० वी० जोशी ने 1884 में बल देकर कहा बढ़ता हुआ विदेश व्यापार अपने आप में घरेलू उत्पादनों में वृद्धि का सूचक नहीं। व्यापार तो उत्पा दनों का केवल वितरण करता है और प्रत्येक स्थिति में आवश्यक रूप से संभरण की सृष्टि नहीं करता।[7] इस विषय को आर० सी० दत्त ने सही ढंग से पकड़ा और आंकड़ों भूत का हवाला देते हुए कहा

> 1881 82 में लार्ड रिपन के शांत और अपेक्षाकृत समृद्ध शासनकाल में भारत के कुल आयात और निर्यात 830 लाख स्टर्लिंग पौंड था। 1900 1 के संकट और दुर्भिक्ष के वर्षों में कुल निर्यात और आयात 1220 लाख पौंड थे। जो भारत को जानता है अथवा जिसने भारत के विषय में कभी कुछ सुना है, निश्चित रूप से कहेगा कि भारत 1900-01 की अपेक्षा 1881 82 में अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति में था और अधिक संपन्न था।[8]

भारत के विषय मे विदेश व्यापार और राष्ट्रीय समृद्धि के बीच के सरल, सहेतुक सबध को असगत बनाने वाले तत्व कौन से थे ? इस विषय मे भारतीय नेताओ के मत म एक कारण यह था कि भारतीय विदेश व्यापार का विस्तार स्वाभाविक स्वतत्र तथा आर्थिक गतिविधि के सामान्य पथ में रूप म नही हुआ था। अधिकारियो द्वारा इसे अस्वाभाविक रूप से बढावा दिया गया था। अत इस रूप म वह लादा हुआ, कृत्रिम, अस्वस्थ तथा आर्थिक दृष्टि से अशक्त था।[9] हम आगे चलकर इसी अध्याय म भारतीय नेताओ के विचारो के अनुसार भारतीय विदेश व्यापार के विशद रूप तथा ढग का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करेंगे परतु यहा सक्षेप म यह कहा जा सकता है कि उनके दृष्टिकोण का आधार यह विश्वास तथा आस्था थी कि भारत के भाग्य मे केवल कृषि सबधी कच्चे सामान का उत्पादन नही बदा है। भारत को एसा देश बनाना अप्राकृतिक है क्योंकि इस देश की धरती थोडी और पूर्ति सीमित है जबकि श्रम बडी मात्रा म उपलब्ध है।[10]

द्वितीय, उनकी धारणा थी, इस सबध म यह उनके मत को सर्वाधिक सुनिश्चित रूप देने वाला तत्व था, कि किसी देश के विदेश व्यापार की महत्ता का निर्णय उसके स्वरूप के विश्लेषण के द्वारा ही सही रूप मे किया जा सकता है। उसकी उपयोगिता अथवा अनुपयोगिता का निर्णायक तत्व उसकी कुल मात्रा न होकर अतर्राष्ट्रीय स्तर पर विनिमयित सामान का स्वरूप तथा राष्ट्रीय कृषि और उद्योग पर उस विनिमय का प्रतिफल ही अपेक्षाकृत अधिक प्रबल निर्णायक तत्व है। वस्तुत मौलिक प्रश्न यही था।[11] उन्होने व्यापार के आकडो की पूरी जाच की और निर्यात की कच्चे सामान के प्रति तथा आयात के उत्पादित सामान के प्रति विध्वसक तथा सपीडक प्रवृत्ति और उसके फलस्वरूप देश के क्षरित होकर केवल ब्रिटेन के कृषिक उपकरण के रूप मे रह जाने की ओर सकेत किया।[12] उनम स बहुतो को इस बात मे कोई सदेह नही था कि भारत की विपन्नता प्राकृतिक शक्तियों का दुष्परिणाम न होकर इग्लैड की भारत के प्रति निर्धारित नीति का ही कुफल था।[13] यहा यह उल्लेखनीय है कि प्रमुख राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियो न 19वी शताब्दी के अतिम दशक की अवधि मे स्वत अनुभव किए जाने वाली व्यापार की विरोधी प्रवृत्ति, आधुनिक उद्योगो के उत्पादनो के निर्यात तथा मशीनरी, मिलो की सामग्री और कच्चे सामान के आयात, की ओर उचित ध्यान दिया।[14] उन्होने प्रवाह के इस परिवर्तन का स्वागत किया परतु इस प्रवृत्ति की क्षुद्रता सीमा तथा मदता की ओर भी सकेत किया।[15] आगे चलकर इसी अध्याय म तथा 'टैरिफ', 'करसी', 'एक्सचेंज' आदि अध्यायो मे दिखाया गया है। वास्तव मे विदेश व्यापार मे यही एक प्रवृत्ति थी जिसे राजनीतिक दबाव के द्वारा प्रोत्साहित करने का उन्होन प्रयत्न किया।

तृतीय, उनके विश्वास के अनुसार व्यापार के फूलने फलने की परिस्थितिया और वातावरण भी विषय के अनुरूप अर्थात विचारणीय तत्व थ। क्या देश को व्यापारिक स्वायत्तता प्राप्त हुई है ? किसने इस व्यापार का सचालन किया है ? किसन इस व्यापार पर नियत्रण रखा है ? और किसने इन लाभो का उपभोग किया है ? क्या व्यापार राष्ट्र की अवशिष्ट और विलास सामग्री का हुआ है अथवा राष्ट के उपयोग व आवश्यक सामान का ? व्यापारातर क्या था और उसके क्या कारण थे ? किसी निश्चित निर्णय पर पहुचने

मे पूव उन्होने इन कुछ एक जिज्ञासाओ को उठाया और उन पर विचार विमश किया।[16]

उनका निष्कर्ष यह था कि विदेश व्यापार के विस्तार को अपने आप म आर्थिक नीति का लक्ष्य नही बनाया जा सकता। सवप्रथम इससे देश को होने वाली लाभ हानियो पर विचार करना आवश्यक है। इसके लिए सतक विचारको को व्यापार के कुल आकडो से भी आगे जाना पडा तथा उनके उदगम की, उनके स्वरूप की तथा राष्ट्र हित पर उनके प्रभाव की जाच करनी पडी।

विदेश व्यापार के लाभ

भारतीय नेताओ ने कुल मिलाकर विदेश व्यापार के व्यापक रूप से प्रचारित उपयोगी स्वरूप को भारतीय जनसाधारण के सदभ म मानने से इकार कर दिया। उन्होने तो इसके विपरीत यह मत अभिव्यक्त किया कि समष्टि रूप मे भारतीय जनता पर विदेश व्यापार का हानिप्रद प्रभाव ही पडा है।[17] उन्होने सवप्रथम बढते निर्याता के स्वरूप और उनके समघातको की जाच की और उसके आधार पर उन्ह अपने आप मे पनपती राष्ट्रीय समद्धि का सकेत अथवा देश की सपदा जुटाने का साधन मानने से इकार कर दिया। उन्होने इस तथ्य की ओर सकेत किया कि आशिक रूप स उत्पादित सामग्री के अतिरिक्त आयातो के भुगतान के लिए कृषि सबधी कच्चे माल का निर्यात करना जा रहा था और जनसाधारण के हितो को भयकर क्षति उठानी पड रही थी[18] तथा आर्थिक रूप से भार शासकों का विध्वसक रूप से महगी नौकरिया देने के रूप मे विदेशी शासन के दल सर्च का चुकाना पड रहा था।[19] उन्होन इस दूसरे तत्व (महगी नौकरियो) की सारी 19वी शताब्दी म और उसके उपरात आयात पर निर्यात की बढती अधिकता के सदभ म जाच की। 1834 5 म 1838 9 तक के पाच वर्षों की अवधि म निर्यात और आयात म वार्षिक अतर औसत चार करोड रुपए था। 1869 70 से 1873 4 की अवधि म 16 5 करोड, 1899 1900 मे 1903-4 की अवधि मे 25 9 करोड तथा 1904 5 म 30 2 करोड रुपए था।[20] भारतीय नताओ ने भारतीय निर्यात और आयात के मध्य की लगभग अप्रतिबाधित तथा सतत वद्धिशील गहरी खाई को[21] देखते हुए व्यापार के इस प्रकार के अनुकूल व्यापारातर पर हर्षोत्फुल्ल होने के बदले इस दमनीय रूप म चिन्तन करने वाला तत्व बताया।

राष्ट्रवादियो द्वारा इस समस्या का विश्लेषण उनकी उन्नतशील अथशास्त्रीय बुद्धिमत्ता का एक अत्यत रोचक प्रमाण प्रस्तुत करता है। उनका कथन था कि आयात की अपेक्षा निर्यात की अधिकता वास्तव म अतिरिक्त निर्यात नही थे अर्थात यह अनुकूल व्यापारातर नही था। यदि ऐसा होता तो इसस सोना चादी अथवा सामग्री अथवा उपभोगी पदार्थों के आयातो म वद्धि होती। वस्तुत उनके अनुसार यह एक विशिष्ट प्रकार का, विशिष्ट अनुकूल व्यापारातर था जिसका आयात की तरह से देश को किसी रूप म कोई लाभ न पहुचता था। निर्यात की अधिकता पर और बकाया राशि के भुगतान पर कोई समाधार हो नही था। दादाभाई नौरोजी ने आयात की अपेक्षा निर्यात की अधिकता की ओर सकेत किया जिसके अनुसार न तो चादी के रूप म और न ही किसी

सामग्री के रूप मे 1871 मे अथवा उससे पूव किसी प्रकार का आयात हुआ है ।[22] अपने 'दि पावर्टी आफ इडिया' लेख मे उन्होंने अपने भाव और भी अधिक सफलता के साथ अभिव्यक्त किए। भारत के पक्ष मे व्यापारातर और भारत को इसमे कभी न कभी लाभ प्राप्ति के सिद्धात पर विश्वास करने वाले लेखको की प्रताडना करते हुए उन्होने कहा वे महानुभाव इस तथ्य की ओर ध्यान न देते हुए ही प्रतीत होते है कि निर्यात से प्राप्ति के रूप मे भारत को एक भी पाई का अथवा सामान का लाभ नही होता और इस प्रकार देश को आयात मे घाटा ही उठाना पडता है।[23] 1898 की भारतीय करेंसी कमेटी को अपना विवरण प्रस्तुत करते हुए दादाभाई और भी अधिक क्रुद्ध थे। उन्होने वतमान स्थिति मे भारतीय विदेश व्यापार को 'भारत पक्षीय व्यापारातर' कहना विशुद्धतम रूप से भाषा का दुरुपयोग करना घोषित किया। उन्होने स्पष्ट शब्दो मे कहा 'यह न तो कोई व्यापार है और न ही व्यापारातर।' भारत की प्रतिवष 400,000 000 रुपयो की विपुल राशि के बदले उसे कभी एक कौडी तक निजी धन के रूप मे वापस नही मिलेगी।[4] रानाडे को छोडकर भारतीय नेताओ मे अथशास्त्रियो ने बल देकर तत्काल यह निर्देश किया कि निर्यात की अधिकता मे भारत का किसी प्रकार का व्यापारिक लाभ नही होगा।[5]

निर्यात की अधिकता को फिर किस रूप मे ग्रहण करना चाहिए ? इस दु खद असगति का वास्तविक अभिप्राय क्या है ? वस्तुत भारतीय नेताओ के अनुसार निर्यात की अधिकता निम्नलिखित कारणो से आवश्यक और निश्चित सी ही थी

(क) भारत पर विदेशो के बढने ऋणो के व्याज के भुगतान के लिए[6]

(ख) द्रुतगति से बढते हुए गृह प्रभारो को अथवा ब्रिटेन मे भारत सरकार के खच जुटाने के लिए,[7] तथा

(ग) ब्रिटिश प्रशासको, व्यापारियो, खेत मालिको, और पूजीपतियो को इस देश के बढते आथिक शोषण के फल के रूप म उगाहे अपने लाभ और बचत को अपनी जन्मभूमि म भेजने की व्यवस्था के लिए।[8]

सक्षेप मे निर्यात और आयात का अतर विदेशी शासको द्वारा भारत पर बढाए जाने वाले कर शुल्क का ही निदशन था।[9] निर्यात की अधिकता म राष्ट्रीय सपत्ति की वद्धि म ही बाधा नही उपस्थित होती थी प्रत्युत ये भारत से इग्लड का सपत्ति की निकासी' अथवा स्थानातरण के रूपविशेष भी थे। सोना चादी उपलब्ध न होने से निधि के इस एक पक्षीय स्थानातरण को सामग्री का रूप ग्रहण करना ही था। अत भारत द्वारा अनुकूल व्यापारातर को बनाए रखना अनिवाय था अथवा दूसरे शब्दो म निर्यात की अधिकता का भारतीय विदेश व्यापार के एक महत्वपूण तत्व, न्यूनाधिक रूप से कानून का रूप लेना ही था। विदेश व्यापार, निर्यात की अधिकता तथा भारत म सपत्ति की निकासी के निकट सबध पर सवप्रथम 1871 मे दादाभाई नौरोजी ने ही टिप्पणी की।[10] कालातर मे 1895 म उन्होंने इसे इस प्रकार स्पष्ट प्रस्तुत किया अधिकाशत यही एक अकेला तरीका है जिससे ब्रिटिश भारत के निधन लोगो द्वारा विदेशियो के निरतर बढते हुए कमरतोड करो की व्यापार-लाभो की तथा उनकी आवश्यकताओ की पूर्ति की व्यवस्था की

जाती है।[31] अन्य भारतीय अर्थशास्त्रियों ने भी इस तथ्य का अनुमोदन किया।[32] अपनी सामान्य सूक्ष्म दृष्टि से जोशी महोदय ने संकेत किया कि निर्यातों की अधिकता इस संपत्ति की निकासी को अंशतः ही प्रदर्शित करती है[33] तथा अधिक निर्यातों के रूप में इंग्लैंड को वार्षिक विशाल भुगतानों की विवशता हमारे निर्यातों के बहुत बड़े भाग को अनिवार्य स्वरूप प्रदान करती है।[34] आर० सी० दत्त ने इस दूसरे पक्ष पर बल देते हुए लिखा : गृह अधिकारों के लिए भारत से आर्थिक निकासी देश का संभव आयातों की अपेक्षा अधिक निर्यातों के लिए बाध्य करती है।[35] इस प्रक्रिया की अनिवार्यता पर भी उन्होंने प्रकाश डाला। उन्होंने इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाया कि भारत को 1896-1900 के दुर्भिक्ष के वर्षों में भी इस अधिकता को बनाए रखना पड़ा था।[36] उन्होंने इस बात को भी स्पष्ट किया कि इस समय निर्यातों की अधिकता तथा कर शुल्कों के बीच संबंध अप्रत्यक्ष होने के कारण लोकदृष्टि से छुपे हुए हैं परंतु अतीत में सदैव ऐसा नहीं था। ईस्ट इंडिया कंपनी के व्यापारिक एकाधिकार के दिनों में कंपनी के निवेश साम्राज्य के राजस्व से खरीदे जाते थे अतः उन दोनों के बीच के संबंध न केवल प्रत्यक्षगोचर थे प्रत्युत उच्च अधिकारियों द्वारा सार्वजनिक रूप से अभिस्वीकार भी किए जाते थे।[37]

अमृत बाजार पत्रिका ने, जिसके संपादक मोतीलाल घोष महत्वपूर्ण राजनीतिक आर्थिक विषयों को सहज बुद्धिमत्ता के स्तर पर लाने में सिद्धहस्त थे, अपने 11 जनवरी 1896 के अंक में संपत्ति की निकासी और निर्यातों की अधिकता में घनिष्ट तथा अपरिहार्य संबंध का विश्लेषण एक अन्य विधि से करते हुए स्पष्ट रूप में घोषित किया : वर्तमान विदेश व्यापार के अभाव में विदेशी शासक भारत के शोषण को जारी नहीं रख सकते थे। अंतराष्ट्रीय विनिमय के अभाव में भारत सचिव और सिविल तथा सैनिक अधिकारी भारत का रुपया ही ले पाते। भारत निरंतर अपने रुपए से रिक्त अवश्य होता जाता परंतु उसकी उपज दूसरे शब्दों में उसकी वास्तविक संपत्ति उसके अपने बच्चों के पोषण के लिए उसके अपने पास ही रहती।[38]

निर्यातों की अधिकता के इस विशिष्ट पक्ष में संपत्ति की निकासी स्वतः सिद्ध था, अतः अधिकांश भारतीय नेता इस स्वस्थ दिखाई देने वाले अन्य व्यवस्थापरक सिद्धांत पर प्रसन्न न हो सके। उन्होंने अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार प्रकट की कि कृषि संबंधी कच्चे माल के बढ़ते हुए निर्यात कृषिपरक संपन्नता के सूचक न होकर यह संकेत करते हैं कि कृषि जगत की बहुसंख्यक जनता और अधिक अधीन बनती जा रही है। जनता पर अतिरिक्त बोझ पड़ता जा रहा है तथा देश की सामग्रीगत शून्यता और फलस्वरूप दरिद्रता बढ़ती जा रही है।[39] परंतु क्या यह उस उदार विदेशी शासन का मूल्य नहीं है जिसने देश और देशवासियों के लिए इतना कुछ किया है जैसाकि हम इस अध्याय में दिखाएंगे। राष्ट्रवादियों ने मूलतः इसका स्वीकार करने से इंकार कर दिया। इसके अतिरिक्त उनका मत था कि यह सर्वथा एक भिन्न विषय है। जी० वी० जोशी ने लिखा और दृष्टियों से यह कुछ भी क्यों न हो, व्यापारिक दृष्टि से कहना चाहें तो इसे हानि ही माना जाएगा और देश के सामान्य व्यापार खाते में देश के लाभ-हानि के इस संतुलन पर प्रभाव डालता ही होगा।[40]

राष्ट्रीय नेतृत्व ने इसके उपरात आयात, जो प्राय अपने समग रूप मे ही उत्पादित सामग्री का था, के समघात की जाच-पडताल की। जहा ब्रिटिश अधिकारियो के अनुसार वढते आयात देश की वढती क्रयशक्ति के सूचक थ, वहा भारतीय नेताओ की दृष्टि मे ये भारत के उत्पादनो को क्षतिग्रस्त करने का सबसे बड़े कारण ये राष्ट्रीय हानि के स्रोत थे तथा राष्ट्र की आर्थिक और औद्योगिक मृत्यु के प्रबल सूचक थे। विषय का पूण अध्ययन करने पर उन्होने टिप्पणी की कि आयातित सामग्री न तो देशी उत्पादना का वढाती है, न उनकी शेप पूर्ति करती है, न ही नई आवश्यकताओ तथा नए उद्योगो को जन्म देती है अथवा तकनीकी ढग से कहना चाहे तो यह किसी नई तथा प्रभावी माग की सृष्टि नही करती है।[11] इसके विपरीत उन्मुक्त व्यापार की अनुकूल स्थिति मे अपने सस्तेपन तथा स्पर्धा की योग्यता के कारण वह भारत के अपन वाजार से ही भारत की हस्तनिर्मित सामग्री को अपदस्थ कर रही है।[3] भारतीयो ने आयात व्यापार के इस पक्ष पर 1831 मे उस समय ध्यान दिया जब लगभग सौ प्रतिष्ठित भारतीयो न ब्रिटिश सरकार से एक प्रार्थना के रूप म शिकायत की कि आपके प्रार्थियो ने यह पाया है कि बगाल मे ग्रेट ब्रिटेन के वस्त्रो के प्रवेश ने हमारे व्यापार को लगभग नष्ट करके रख दिया है। इसके आयात मे प्रतिवर्ष वृद्धि स्वदेशी उत्पादनो के लिए हानिकारक है।[13] इसके उपरात 1873 मे भोलानाथ चद्र ने देशवासियो को आयात के सबध मे इस प्रकार सावधान किया कि भारतीय उद्योग और गृहनिर्मित उत्पादनो के विनाश का शिखर पर पहुचाने वाले इन आयातो का वरदान न समझकर अभिशाप ही मानना चाहिए।[14] 1897 मे आर० सी० दत्त ने टिप्पणी की कि भारत मे आयात के मूल्य मे वृद्धि का वास्तविक परिणाम यह निकला है कि भारत के शिल्पकला उद्योग की इग्लड के भाप और मशीनी उद्योग मे असम प्रतियोगिता मे मृत्यु ही हो गई है। 1903 मे गोखले ने घोषणा की कि विदेशी सामग्री का प्राय प्रत्येक आयात देश की क्रयशक्ति मे किसी प्रकार की वृद्धि करने का सूचक होना तो दूर रहा, वह तो उल्टे स्वदेशी उत्पादनो का ही केवल तत्नुरूप अपदस्थ करने का सकेतक है। जी० सी० अय्यर ने इस समस्या का विश्लेषण और अधिक आर्थिक दृष्टिकोण से किया भारत मे अतर्राष्ट्रीय विनिमय शेप पूर्ति तथा गृहविनिमय को सुदृढ नही करता। यह गृहविनिमय का स्थान लेता है अत इस प्रकार यह उसका सवनाश करता है।[15]

जी० वी० जोशी आयात व्यापार के एक अन्य परोक्ष दुष्प्रभाव नगर शिल्प कलाओ के विध्वस को प्रकट करने मे समथ हुए। उनके अनुसार यह एक ओर उपभोग सामग्री के सचार की सीमा का तथा भीतरी मडी के क्षेत्र का विस्तार करता था और दूसरी ओर जनता के एक पूरे वर्ग को बेकार करके अपरिमित सस्ते श्रम का आयोजन करता था। इससे ही विदेशी पूजी देश म घुसन तथा उत्पादक उद्योगो की स्थापना मे समथ हुई है और अब इन उत्पादक उद्योगो से देश के दूरतम भाग म भी हमारे अपने उत्पादक उद्योगो का विध्वस लगभग पूर्ण होने जा रहा है।[16]

भारतीय उत्पादनो के अपदस्थ करने की प्रक्रिया की सुस्पष्ट ढग से रूपरेखा प्रस्तुत करने के लिए भारतीय नेताओ ने कच्ची कपास के निर्यात तथा सूती वस्त्रो के आयात

का प्रायः [illegible] उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया।[47] उन्होंने यह भी सिद्ध किया कि विविध आयातित सामग्री एक व्यापक क्षेत्र लिए हुए थी जिसमें चटाइयाँ, माचिसों से लेकर मिल के सामान और मशीनें तक सम्मिलित थीं, छातों से लेकर बत्तियाँ, पुस्तकें, जूते और खिलौने सम्मिलित थे। यह सब स्पष्ट रूप से सिद्ध करता है कि यह पतन कितना विस्तृत तथा गहरा है।[48]

इस प्रकार वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उत्पादित वस्तुओं के बढ़ते आयातों का [illegible] पर घातक प्रभाव था। उसने विविध और सम्यक रूप से संतुलित राष्ट्र की अर्थव्यवस्था के विध्वंस की स्थिति उत्पन्न कर दी थी।[49] उसने लाखों हस्तशिल्पियों तथा कारीगरों को अपने परंपरागत व्यवसाय को छोड़ने के लिए बाध्य करके उन्हें तथा उनकी [illegible] को न केवल अपनी आजीविका के साधनों से वंचित किया था प्रत्युत आजीविका के लिए एकमात्र अवशिष्ट और अनिश्चित स्रोत कृषि पर निर्भर रहने को भी विवश कर दिया था। इन आयातों का प्रत्यक्ष परिणाम यह था कि अधिक से अधिक लोग कृषि की ओर धकेले जा रहे थे और इस प्रकार देश का ग्रामीकरण किया जा रहा था। इससे कृषि पर उत्तरोत्तर भार बढ़ता जा रहा था। और देश की राष्ट्रीय आय के स्रोत संकुचित होते जा रहे थे तथा देशवासी दरिद्र से दरिद्रतर होते जा रहे थे।[50]

राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों ने विशुद्ध आर्थिक दृष्टिकोण से भी आयातों के परिणाम पर विचार किया। उन्होंने उत्पादित वस्तुओं के आयात और कच्चे माल के निर्यात पर समुदाय रूप में विचार किया और इस निर्णय पर पहुँचे कि दोनों को एक साथ देखने पर [illegible] क्षति स्पष्ट हो जाती है। सामग्री के निर्माण से कृषि संबंधी कच्चे माल के उत्पादन की ओर परिवर्तन की प्रवृत्ति का अर्थ यह हुआ है कि भारत अपेक्षाकृत उच्च [illegible] आर्थिक गतिविधि से नीचे की ओर मुड़ गया है, [illegible] उद्योग की अपेक्षा कम लाभकारी कृषि को अपनाता गया है। कुशल कारीगरों से अप्रशिक्षित मजदूरी की ओर अनिवार्य परिवर्तन से उसका श्रम [illegible] उत्पादक हो गया है और इस सबके फलस्वरूप देश को [illegible] और लाभों में अपरिमित आर्थिक हानि उठानी पड़ी है।[51] यह सत्य है कि [illegible] रूप में अपेक्षाकृत सस्ता और [illegible] भारतीय लाभ में [illegible], परंतु [illegible] और श्रमिक के रूप में दूसरा जो मूल्य उन्हें चुकाना पड़ा है [illegible] रूप में महंगा है।[52] इसके विपरीत यदि इन [illegible] देश में ही किया जाता तो [illegible] भारतीय पूंजी और [illegible] श्रम को [illegible] विकास के अवसर उपलब्ध होते।[53] [illegible] इस विषय पर राष्ट्रवादी स्थिति [illegible] प्रकार [illegible] है :

> [illegible] और [illegible] माल [illegible] में [illegible] माल और [illegible] वस्तुओं के [illegible] और इस प्रकार [illegible] और [illegible] में और पूंजीपतियों के साधनों में [illegible] वृद्धि करता।[54]

इसके पूर्व जी० वी० जोशी महोदय ने 1888 में अपने एक लेख 'दि की वोर्न ट्रेड आफ ब्रिटिश इंडिया' में इस हानि की स्थूल सांख्यिकी संगणना की चेष्टा की और इस परिणाम पर पहुंचे कि एक स्थूल तखमीने के अनुसार हमारी व्यापारिक स्थिति के कारण हम परिश्रमिता और लाभों में प्रतिवर्ष 58 करोड़ रुपए की हानि उठानी पड़ती है। उन्होंने बताया कि सौ वर्ष प्रक्रिया की ब्याज रूप में पूंजीकृत यह राशि 1600 करोड़ रुपए हो जाती थी।[55] उन्होंने यह भी निर्देश किया कि यह प्रक्रिया स्वयं ही समष्टि प्रतिभा को अपक्षय करने और गुणात्मक रूप से प्रगतिशील प्रत्यक्ष समुदाय की रीढ़ मध्यवर्ग को दुर्बल बनाने के रूप में मानवीय प्रभाव डालती है।[56]

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि इस समय के भारतीय लेखकों ने ग्रामीण और नागरिक हस्तशिल्पों, हस्तकलाओं के विनाश की निन्दा तो की परन्तु उनमें से किसी ने भी देश के ग्रामीकरण तथा देश की कृषि के इस व्यवसायीकरण के फलस्वरूप देश की कृषि और उद्योग के घनिष्ठ संबंध के टूटने पर दुःख प्रकट नहीं किया। इसी पुस्तक के द्वितीय अध्याय में हम इसके कारणों का विश्लेषण वस्तुतः पहले ही कर चुके हैं कि भारतीय नेता बढ़ती उपभोगी वस्तुओं के प्रसार के अथवा इस रूप में भीतरी मंडी के विस्तार के विरुद्ध नहीं थे। आधुनिक उद्योगों, जिनका ग्रामीण आत्मनिर्भरता पर विनाशकारी प्रभाव पड़ना अवश्यंभावी था के प्रबल समर्थक होने के कारण वे आंतरिक व्यापार के अथवा व्यापार के तद्रूप विकास के विरुद्ध नहीं थे। वे तो केवल व्यापार के वर्तमान ढांचे के ही विरुद्ध थे। उनकी आपत्ति विदेशी उत्पादकों के ग्रामीण मंडी पर एकांगी अधिकार के विरुद्ध थी जिसने स्वदेशी उद्योग को अपनी ही मंडी से तथा स्वदेशी उद्योगपतियों का अपने लाभों से और उजड़े हुए कारीगरों को नए उद्योगों से आजीविका कमाने के अवसरों से वंचित कर दिया था। फलतः उन्होंने आधुनिक उद्योगीकरण के प्रवर्तन की प्रक्रिया की ओर अधिक ध्यान देते हुए अर्थव्यवस्था की आत्मनिर्भरता को विनाश से बचाने की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया।

अधिकांश राष्ट्रवादी अर्थशास्त्री तो इस दावे को भी स्वीकार नहीं करते थे कि कृषि उत्पादनों के बढ़ते हुए निर्यातों और उनके फलस्वरूप उनके मूल्यों में वृद्धि से कृषिकार्य में संलग्न पुरुषों को ही सही किसी प्रकार का लाभ पहुंचा है। उदाहरणार्थ, 1873 में भोलानाथ चंद्र ने लिखा भले ही उसके (भारतीय खेतिहर) के चारों ओर व्यापार का बहुत विस्तार हुआ है परन्तु अभी तक वह उसी प्रकार दीनहीन, अपमानित तथा अवहेलित है जैसा वह पहले कभी था। वह अभी तक न तो साहूकार के पंजों से मुक्त है और न ही गरीबी असहायता तथा दुर्भाग्य से छुटकारा पा सका है।[57] सर्वप्रथम, कई वर्षों तक कुछ अर्थशास्त्रियों की तो यह धारणा रही कि कृषिसामग्री के मूल्य घट रहे हैं बढ़ नहीं रहे अथवा अधिक से अधिक स्थिर हैं।[58] हां अधिकांशतः मान्य धारणा यह रही कि कृषि-उत्पादनों की ऊंची मांगों और मूल्यों के लाभों का एक बहुत बड़ा भाग वास्तविक कृषक को नहीं मिल पाता क्योंकि उस बेचारे को ऊंचे और आवधिक राजस्वों अथवा मालिक के भुगतान के लिए साहूकार के मूलधन अथवा उसपर ब्याज की मांग की पूर्ति के लिए तथा जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं के संभरण के लिए फसल काटने के समय ही

प्रतिकूल शर्तों पर अपनी उपज को बेचना पडता है। वास्तविक लाभ तो राली ब्रदर्स जैसे विदेशी निर्यात व्यापारी तथा उनके भारतीय बिचौलिये उठाते हैं, जो किसानों की उपज को अपनी मनमानी शर्तों पर खरीदते हैं।[59] लाभों का दूसरा बडा भाग उन ऋणदाता साहूकार व्यापारियों को मिलता है जो किसान की फसल कटने से पहले ही उसे अपने पास गिरवी रख लेते हैं।[60] केवल थोड़े-बहुत समर्थ किसान ही स्वेच्छा से और लाभ पर अपनी उपज को बेच पाते हैं और उनमें भी बहुत सारे वास्तव में छिपे साहूकार ही हैं।[61] इसके अतिरिक्त सरकार और जमींदार भूराजस्व और मालगुजारी में वृद्धि द्वारा लाभ के एक अंश भाग को हड़प लेते हैं।[62] इस प्रकार ग्रामीण जनसंख्या का एक बहुत बडा भाग, कृषि श्रमिक और छोटे किसान जो अपने उत्पादन से अधिक अन्न का उपभोग करता है। अतः वह तो प्रत्येक स्थिति में मूल्यवृद्धि से विशुद्ध रूप से हानि उठाने वाला है।[63] इससे भी बढ़कर जी० वी० जोशी ने हिसाब लगाया है कि यदि यह स्वीकार कर भी लिया जाए कि विदेश व्यापार के फलों का एकमात्र भोक्ता किसान है तो भी यह लाभ कृषि जनता को प्रति व्यक्ति तुच्छ रूप में चार आने बैठता है और वह साधारण लाभ आजीविका, स्वास्थ्य की हानि एवं अनिश्चितता अहितों के मूल्य पर ही मिलता है जैसा कि पहले दिखाया जा चुका है।[64]

राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों ने इस तथ्य की ओर भी ध्यान दिलाया कि विदेश व्यापार में [illegible] चीनी, कॉफी तथा पटसन पदार्थ जैसे मोद विदेशी पूंजी और प्रयत्न के विनियोजन के ही परिणाम थे। अतः विदेशी पूंजीपति ही इनसे लाभ उठाते थे तथा वे [illegible] आयातों तथा उत्पादनों से होने वाले सभी लाभों में से भारतीयों को श्रमशक्ति के रूप में थोड़ा भाग छोड़कर अवशिष्ट सारे लाभ इस देश से अपने देश को ले जाते थे।[65] यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि रानाडे ने समकालीन लगभग सभी राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों द्वारा स्वीकृत तर्क को मानने से इंकार कर दिया तथा इसके फलस्वरूप उन्होंने भारत की कृषि संबंधी पिछड़ेपन से मात्र के उत्पादक देश में बदलने की नीति के विकल्प के रूप में [illegible] इंग्लैंड द्वीप की सांस्कृतिक प्रणाली को आदर्श मानने की एक विचित्र भूल करनी पड़ी।[66] [illegible] यह देखना भूल गए कि [illegible] इंग्लैंड ने [illegible] उपनिवेशों पर पूर्ण विदेशी नियंत्रण और [illegible] उद्योगों का [illegible] अवमूल्यन कर दिया था [illegible] विकास को अवरुद्ध करके वर्ग की जनता की स्थिति भारतीयों की स्थिति से बदतर कर दी थी।

व्यापारिक रूप से मुक्त [illegible] भारतीय [illegible] स्थिति के इस पक्ष पर भी ध्यान दिया और इस परिणाम पर [illegible] कि भारतीय आयातों का बहुत बड़ा भाग था जो भारत में रहने वाले विदेशियों की अथवा थोड़े से अंग्रेजीदाँ स्वदेशी लोगों की [illegible] आवश्यकताओं की पूर्ति के काम आता है अथवा विदेशी उद्यमों और रेलवे के काम आता है अथवा सरकार की आवश्यकताओं की पूर्ति के काम आता है।[67] जनसाधारण द्वारा उपभोग में लाए जाने वाले आयात मात्रा में [illegible] था और उसका मूल्य प्रति व्यक्ति कुछ पैसे ही बैठता था।

[illegible] ने इस बात पर भी जोर दिया कि भारत आने वाले माल का [illegible]

लाभप्रद रूप से देश मे खपत नही हो सकती, नियात नही करता, प्रत्युत निकासी के दवाव के अतगत उसे गेहू, चावल, कपास, जूट तथा तिलहन का निर्यात करना पडता था, और यह स्थिति देश को भयकर रूप से खाद्यान्न से वचित कर रही थी। वदले म उसे सुविधा और विलास की बहुत सारी वस्तुए लेनी पडती हैं, जिनके विना आसानी से निर्वाह किया जा सकता है।[69] वगवासी ने इस दृष्टिकोण को 6 जुलाई 1889 के अक म अत्यत सशक्त ढग स इस प्रकार प्रकट किया

> हमे अपने चेहरे की दमक को वढाने के लिए पाउडर और घुघराले बालो की चमक बढाने के लिए सुगधित क्रीम की आवश्यकता नही है। हम अपने लोगो का आकपक सुगध, घडियो और छडिया से मोहित करने की कोई इच्छा नही है। हम रेशमी और ऊनी वस्त्रो म चमकना नही चाहते। हम आपकी शेरी और शपन से अपनी पापी प्यास नही बुझाना चाहते। हम आपके वस्त्रो द्वारा अपनी लज्जा ढकना नही चाहते। यदि भारतीय जुलाहा की जाति का समूल नाश हो जाए तो हम उस स्थिति म वृक्षो की छालें भी ओढ लेंगे और यदि वृक्ष की छालें भी उपलब्ध न हुईं तो हम नगे ही रह लेंगे परतु आपके वस्त्रा का प्रयाग नही करेंगे। हम आपसे केवल यही प्राथना करते है कि हमे अपन ही हाल पर छोड दीजिए और जीवित तो रहने दीजिए।[70]

राष्ट्रवादियो ने विदशियो द्वारा तथा स्वय देशवासियो द्वारा सचालित व्यापार के बीच आधारभूत अतर को भी स्पष्ट किया। उन्होने इस स्थिति पर शोक प्रकट किया कि भारत का व्यापार अधिकाशत विदेशी तथा बरतानवी व्यापारियो के हाथ मे था जो जी० वी० जोशी के अनुसार उसके लाभो का बहुत बडा 90 प्रतिशत भाग हडप जाते थे तथा इस देश से बाहर ल जात थे।[1] सारे व्यापार तत्र के अतिरिक्त हमारे सारे वाणिज्य का सपूण सचालन विदेशी नियत्रण और निदेशन के अधीन था। रले, जहाजरानी, वक बीमा कपनिया यहा तक कि एक सीमा मे सामान की गाव से समुद्र तट पर पहुचन की आतरिक गतिविधि सभी कुछ विदेशी प्रयत्नो के ही अधीन था।[7] जी० वी० जोशी महोदय के अनुसार भारतीय व्यापार पर विदेशी नियत्रण के फलस्वरूप भारत को प्रतिवप लगभग 26 करोड रुपयो की हानि उठानी पड रही थी। यह राशि गहप्रभारो की उस कुल राशि से अधिक थी जिसकी हम प्राय शिकायत किया करते है।[73] कुछ नेताओ ने इस तथ्य की ओर भी सकेत किया कि सारी हानि को पूण रूप से न सही आशिक रूप से रोकना तो भारतीयो के अपने हाथ मे है ही। विदेशी व्यापार के प्रति उपक्षा वरतन के लिए स्वदशी व्यापारियो की प्रताडना करते हुए तथा उन्ह प्रवोधित करत हुए नेताआ ने कहा कि उन्ह विदेश व्यापार के लाभ के साथ साथ उसके समुचित भार का भी वहन करना चाहिए।[74] जोशी की टिप्पणी थी कि निस्सदेह हमे इस काय मे न तो तकनीकी प्रशिक्षण की आवश्यकता है और न ही पूजी की विशाल राशि की, पुनरपि यह अतत हमारा अपना ही तो काय है।[5] इसके अतिरिक्त ववई के खोजा और पारसी इस क्षेत्र मे अग्रदूत बनकर चीन और पूर्वी अफ्रीका के बाजारो म पहले से ही काय प्रारभ कर चुके हैं। उनका उदाहरण निश्चित रूप से अनुकरणीय है तथा निर्यात-आयात अभिकरणो की स्वदेश मे और

प्रतिकूल शर्तों पर अपनी उपज को बेचना पड़ता है। वास्तविक लाभ का भारी अंश अंग विदेशी निर्यात व्यापारी तथा उनके भारतीय बिचौलिये उठाते हैं, जो किसानों की उपज को अत्यन्त सस्ते दामों पर खरीदते हैं।[59] लाभों का दूसरा बड़ा भाग उन महाजनों या साहूकार व्यापारियों को मिलता है जो किसान की फसल काटने से पहले ही उसे अपने पास गिरवी कर लेते हैं।[60] केवल थोड़े से समृद्ध किसान ही स्वतन्त्र रूप से और लाभ पर अपनी उपज को बेच पाते हैं और उनमें भी बहुत सारे वास्तव में छिपे साहूकार ही हैं।[61] इसके अतिरिक्त सरकार और जमींदार भूराजस्व और मालगुजारी में वृद्धि द्वारा लाभ के एक अंश भाग का हरण करते हैं।[62] इस प्रकार ग्रामीण जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग कृषि श्रमिक और छोटे किसान तो अपने उपार्जन से अधिक अन्न का उपभोग करता है। अतः वह तो प्रत्येक स्थिति में मूल्यवृद्धि से निर्धन रूप में हानि उठाता जाता है।[63] स्वयं जी० वी० जोशी ने हिसाब लगाया है कि यदि यह स्वीकार कर भी लिया जाए कि विदेश व्यापार के फल का एकमात्र भोक्ता किसान है तो भी यह लाभ कृषि जनता को प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति तुच्छ रूप में चार आने बैठता है और वह साधारण लाभ आजीविका, उद्योग की हानि जैसे अपरिमित अहितों के मूल्य पर ही मिलता है जैसा कि पहले दिखाया जा चुका है।[64]

राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों ने इस तथ्य की ओर भी ध्यान दिलाया कि विदेश व्यापार के बहुत से चाय, नील, कॉफी तथा पटसन पदार्थ जैसे मौद्रिक विदेशी पूंजी और प्रयत्न के विनियोजन के ही परिणाम थे। अतः विदेशी पूंजीपति ही इनसे लाभ उठाते थे तथा वे लोग इनके आयातों तथा उत्पादनों से होने वाले सभी लाभों में से भारतीयों की श्रमभूमि के रूप में उनका भाग छोड़कर अवशिष्ट सारा लाभ इस देश से अपने देश को ले जाते थे।[65] यह पर्याप्त रोचक तथ्य है कि रानाडे ने समकालीन लगभग सभी राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों द्वारा स्वीकृत तर्क को मानने से इन्कार कर दिया तथा इसके फलस्वरूप उन्हें भारत को कृषि संबंधी कच्चे माल के उत्पादक देश में बदलने की नीति के विकल्प के रूप में डच ईस्ट इंडीज की सांस्कृतिक प्रणाली का आदर्श मानने की एक विचित्र भूल करनी पड़ी।[66] वे यह देखना भूल गए कि ईस्ट इंडीज के बागानों पर पूर्ण विदेशी नियंत्रण और स्वामित्व ने इंडोनेशिया के लोगों के उद्योगों का न केवल अवमूल्यन कर दिया था प्रत्युत स्वदेशी पूंजीपतिवर्ग के विकास को अवरुद्ध करके वहां की जनता की स्थिति भारतीयों की स्थिति से बदतर कर दी थी।

प्रासंगिक रूप से कुछ भारतीय लेखकों ने स्थिति के इस पक्ष पर भी ध्यान दिया और वे इस परिणाम पर पहुंचे कि भारतीय आयातों का बहुत बड़ा भाग या तो भारत में रहने वाले विदेशियों की अथवा थोड़े बहुत अंगरेजनुमा स्वदेशी लोगों की दिन प्रतिदिन की आवश्यकता की पूर्ति के काम आता है अथवा विदेशी उद्यमों और रेलवे के काम आता है अथवा सरकार की आवश्यकताओं की पूर्ति के काम आता है।[67] सर्वसाधारण द्वारा उपभोग में लाया जाने वाला आयात मात्रा में स्वल्प था और उसका मूल्य प्रति व्यक्ति कुछ पैसे ही बैठता था।[68]

उनमें से कुछ ने इस बात पर भी जोर दिया कि भारत अपने फालतू माल का जिसकी

लाभप्रद रूप से देश मे खपत नही हो सकती, निर्यात नही करता, प्रत्युत निकासी के दबाव के अतगत उसे गेहू चावल, कपास, जूट तथा तिलहन का निर्यात करना पडता था, और यह स्थिति देश को भयकर रूप से खाद्यान्न से वचित कर रही थी। बदले मे उसे सुविधा और विलास की बहुत सारी वस्तुए लेनी पडती हैं, जिनके बिना आसानी से निर्वाह किया जा सकता है।[69] बगवासी ने इस दृष्टिकोण को 6 जुलाई 1889 के अक मे अत्यत सशक्त ढग से इस प्रकार प्रकट किया

> हमे अपने चेहरे की दमक को बढाने के लिए पाउडर और घुघराले बालो की चमक बढाने के लिए सुगधित क्रीम की आवश्यकता नही है। हम अपने लोगो को आकर्षक सुगध, घडियो और छडियो से मोहित करने की कोई इच्छा नही है। हम रेशमी और ऊनी वस्त्रो मे चमकना नही चाहते। हम आपकी शेरी और शपेन से अपनी पापी प्यास नही बुझाना चाहते। हम आपके वस्त्रो द्वारा अपनी लज्जा ढकना नही चाहते। यदि भारतीय जुलाहो की जाति का समूल नाश हो जाए तो हम उस स्थिति मे वृक्षो की छालें भी ओढ लेंगे और यदि वृक्ष की छालें भी उपलब्ध न हुई तो हम नगे ही रह लेंगे परतु आपके वस्त्रो का प्रयोग नही करेंगे। हम आपसे केवल यही प्रार्थना करते है कि हमे अपने ही हाल पर छोड दीजिए और जीवित तो रहने दीजिए।[70]

राष्ट्रवादियो ने विदेशियो द्वारा तथा स्वय देशवासियो द्वारा सचालित व्यापार के बीच आधारभूत अतर को भी स्पष्ट किया। उन्होने इस स्थिति पर शोक प्रकट किया कि भारत का व्यापार अधिकाशत विदेशी तथा बरतानवी व्यापारियो के हाथ मे था जो जी० वी० जोशी के अनुसार उसके लाभो का बहुत बडा, 90 प्रतिशत भाग हडप जाते थे तथा इस देश से बाहर ले जाते थे।[71] सारे व्यापार तत्र के अतिरिक्त हमारे सारे वाणिज्य का सपूर्ण सचालन विदेशी नियत्रण और निदेशन के अधीन था। रेलें, जहाजरानी बैंक बीमा कपनिया यहा तक कि एक सीमा मे सामान की गाव से समुद्र तट पर पहुचने की आतरिक गतिविधि सभी कुछ विदेशी प्रयत्नो के ही अधीन था।[72] जी० वी० जोशी महोदय के अनुसार भारतीय व्यापार पर विदेशी नियत्रण के फलस्वरूप भारत को प्रतिवर्ष लगभग 26 करोड रुपयो की हानि उठानी पड रही थी। यह राशि गृहप्रभारो की उस कुल राशि से अधिक थी जिसकी हम प्राय शिकायत किया करते है।[73] कुछ नेताओ ने इस तथ्य की ओर भी सकेत किया कि सारी हानि को पूर्ण रूप से न सही आशिक रूप से रोकना तो भारतीयो के अपने हाथ मे है ही। विदेशी व्यापार के प्रति उपेक्षा बरतने के लिए स्वदेशी व्यापारियो की प्रताडना करते हुए तथा उन्हें प्रबोधित करते हुए नेताओ ने कहा कि उन्हे विदेश व्यापार के लाभ के साथ साथ उसके समुचित भार को भी वहन करना चाहिए।[74] जोशी की टिप्पणी थी कि निस्सदेह हमे इस कार्य मे न तो तकनीकी प्रशिक्षण की आवश्यकता है और न ही पूजी की विशाल राशि की, पुनरपि यह अतत हमारा अपना ही तो कार्य है।[75] इसके अतिरिक्त बबई के ख्योजा और पारसी इस क्षेत्र मे अग्रदूत बनकर चीन और पूर्वी अफ्रीका के बाजारो मे पहले से ही कार्य प्रारभ कर चुके है। उनका उदाहरण निश्चित रूप से अनुकरणीय है तथा निर्यात-आयात अभिकरणो की स्वदेश मे और

विदेशा म स्थापना करनी चाहिए। इसी प्रकार बबई, मद्रास और कलकत्ता म स्वदेशी स्वामित्व वाली कम स कम तीन पान कपनिया की स्थापना करनी चाहिए।[8] उत्तर-पश्चिमी प्रान्त तथा अवध के प्रमुख भारतीय राष्ट्रवादी समाचारपत्र 'एडवोकेट' न राष्ट्रवादी स्थिति का सक्षेप म इस प्रकार प्रस्तुत किया

> यदि हम अपनी सभ्यता म ही अपना भूयाकन करना है तो हम स्वदेशी पूजी म भारतीय प्रतिभा द्वारा प्रबधित भारतीय वाणिज्य का सचालन करना होगा। यदि सभव हो तो हम भारतीयो के स्वामित्व वाले पोतो पर ब्रिटिश झण्डा फहराते हुए व्यापार करना होगा। यह एक स्वप्न लग सकता है कि निकट भविष्य म हो सकता है परतु भारतीयो की एक राष्ट्र के रूप म प्रगति के लिए इससे कम कुछ भी अपेक्षित नहीं।[77]

अत म हम इस तथ्य को ध्यान म रखना है कि थोडे म राष्ट्रवादी अथशास्त्री अप्रतिहत कानून नियात के उत्पादन की विशेषता के फलस्वरूप भारत के विरुद्ध जाने वाली व्यापार शर्तों के सिद्धात का समर्थन भी करते हो गए। इस सबध म उनका पथ प्रदशन दादाभाई नौरोजी द्वारा 1870 म उद्धत जान स्टुअट मिल की इस उक्ति ने किया विदेशो को नियमित भुगतान करने वाला देश न केवल भुगतान की गई धनराशि को खोता है प्रत्युत कम लाभदायक शर्तों पर विदेशी सामग्री के बदले अपने उत्पादनो के विनिमय की बाध्यता के रूप म और भी बहुत कुछ गवाता है।[78] बाद म कई भारतीयो न मिल के इन वचनो को प्रतिध्वनित अथवा पुन उच्चरित किया। उदाहरणाथ, 1888 म जोशीजी न अत्यत तीव्र स्वर म टिप्पणी की अधिक नियातो के रूप म इग्लैंड को इतने बडे वार्षिक भुगतानो की आवश्यकता हमारे नियातो के बहुत बडे भाग को एक अनिवाय चरित्र प्रदान करती है जिससे मूल्यो म अव्यवस्था की प्रवृत्ति जन्म लेती है।[79] इसी प्रकार डी० ई० वाचा ने निर्णयात्मक स्वर म कहा कजदार देश कम कीमत पर अपना उत्पादन बेचने को बाध्य होता है और इस प्रकार की परिस्थितियो म विस्तृत नियातो का अथ राष्ट्रीय सपत्ति के विस्तृत बलिदान से कम कुछ नहीं।[80] अथशास्त्रियो के अतिरिक्त अन्यो म अमृत बाजार पत्रिका न अपने 17 जुलाई 1892 के अक म इस विषय को बडी विशदता से उजागर किया।

अनाजो का निर्यात

विदेश व्यापार के एक पक्ष अनाजो के नियात पर भारतीय नेताओ न अपेक्षाकृत अधिक विस्तार के साथ छोटे समाचारपत्रो जसे लोकप्रिय माध्यम से विचार प्रचार किया। राजनीतिक दृष्टि स भारत के अत्यधिक जागरूक भाग बगाल मे ही नहीं, द्रुतगति से बढते अनाजो के नियात के प्रमुख स्रोत उत्तर पश्चिमी प्रान्तो, अवध और पजाब म भी इस प्रश्न को अत्यधिक मुखर स्वर प्राप्त हुआ।

माग और पूर्ति के बदलते रहने के कारण वष प्रतिवष अनाजो के विदेश व्यापार की मात्रा और मूल्यो म ता विविधता है, फिर भी निम्नलिखित अको म उसकी सामान्य प्रवृत्ति का निदशन प्रस्तुत है[81]

औसत	हुडरडवेट	रुपये (लाखो मे)
1882-3—1891-2	48,267,117	17,82
1892-3—1901-2	42,268,345	17 89
1904 5	102,021,341	41 11

चावल प्रमुख रूप से बर्मा से, गेहू और दालें भारत से निर्यातित की जाती थी। भारत ने 1869 म 275,481 हुडरडवेट 1873-4 मे 1,755,954 हुडरवेट, 1882-83 मे 14,193,763 हुडरडवेट और 1891-2 मे 32,740 000 हुडरवेट गेहू का नियात किया।[82]

अनाजो के नियात के प्रति राष्ट्रीय दष्टिकोण अनेक कारणो स अत्यत आलोचनात्मक था किंतु प्रमुख कारण यही था कि य निर्यात ही देश म अनाजो की दुलभता, अकाल की स्थितियो और यहा तक कि दरिद्रता के प्रमुख कारणो म अन्यतम थे।[83] उदाहरणाथ, 1891 मे जिस वष अकाल नही पडा था, लखनऊ के व्यग्यकुशल राष्ट्रवादी उर्दू साप्ताहिक अवधपच ने ममवेधी टिप्पणी की

> इस समय देश से निर्यात किया जाने वाला अनाज वास्तव म अनाज न होकर अकालग्रस्त देशवासियो का जीवन-रक्त है। अनाज की बोरिया अनाज से भरी बोरिया न होकर वस्तुत देश के लोगो से भरी बोरिया ह, जिन्ह इग्लड के सुसभ्य नरपिशाच उन्मुक्त व्यापार की तलवार से मारकर अपना भोजन बनाएँगे।[84]

उत्तर भारत मे हिंदी के प्रमुख पत्र 'भारत जीवन' ने अपने 19 जनवरी 1900 के अक मे चेतावनी दी 'यदि ये निर्यात न रोके गए तो समय आने पर भारत ऊजर भूमि बन जाएगा।'[85]

राष्ट्रवादियो का विश्वास था कि अनाज का निर्यात भारत की निधनता और दुर्भिक्ष का कारण था क्योकि भारत केवल अपने फालतू अनाज का ही निर्यात नही करता था प्रत्युत अपनी दिन प्रतिदिन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए निधारित भडार मे स ही यह नियात करता था। अनाजो के इस व्यापार को सभव बनाने के लिए भारतीयो को आधा भूखा रहना पडता था।[86] हितवादी ने अपने 25 जुलाई 1891 के अक मे लिखा था कि विदेशी भारतीयो के मुह का ग्रास छीन रह है और भारतीय कृषक जनता को विदेशियो का पेट भरने के लिए अपने परिवार को भूखा मारना पड रहा है।[87] इसी प्रकार आर० सी० दत्त ने बल देकर कहा कि अनाज व्यापार के मुसकराते चेहरे के भीतर निहित तथ्य यह है कि कृषि उत्पादक देश अपने घर-परिवार और गाव को भूखा नगा रखकर उन्ह मत्यु के कगार पर ला रहा है। यह बात इस तथ्य से भी सिद्ध होती थी कि बडे बडे अकालो मे भी अनाज का निर्यात यथावत तीव्र गति से हो रहा था।[88] अकाल के वर्षों म निर्यात कम कर दिया गया था, ऐसा भारतीयो के अनुभव मे था परतु इस सबध मे भारतीयो का कथन यह था कि सामान्य वर्षो के निर्यात से पहले ही वास्तविक हानि तो पहुचाई जा चुकी थी क्योकि अनाज का फालतू अथवा सुरक्षित भडार जो अकाल के वर्षों मे कृच्छता की स्थिति को बदलने मे सहायक सिद्ध होता, निर्यात द्वारा पहले ही खपाया जा चुका था।[89] भारत जैसे देशो म जो ऋतु की विषमताओ के प्राय ही शिकार रहत है, फालतू अनाज का अनुमान तो खाद्यान्नो के घाटे के वर्षो की न्यूनता की पूर्ति की व्यवस्था

के उपरात ही लगाना चाहिए,[90] यह भारतीयो का तर्क था।

यदि भारतीय जनता के पास वास्तव म फालतू अनाज नहीं है तो वे उत्पादन का विक्रय और निर्यात क्या करते हैं ? वे अपने उत्पादन को दुर्दिन के लिए सुरक्षित क्यो नहीं रखते ? इस सबका पूर्वनिर्दिष्ट उत्तर एक ही था कि भारत का समग्र व्यापार विकासात्मक स्थिति म तथा अस्वाभाविक था। सरकार का तथा साहूकार का नियत अवधि म और नकद रूप म बढ़ हुए भूराजस्व अथवा मालिक का लगान की आवश्यकता किसान को अपना अनाज बचने को विवश कर देती थी। इसके साथ फालतू रिजर्व अनाज रखने के साधन जुड़ी हुई मडी की समस्या देश को विदेशी बाजारो म ही अपना अनाज बचने को बाध्य करती थी।[91]

अनाज का निर्यात एक अन्य दृष्टि म भी हानिप्रद था। इससे लागो की सबसे मूल आवश्यकता की वस्तुओ के मूल्य ऊच चढ़ जाते थ और इसके अपरिहार्य परिणाम थे भुखमरी और मृत्यु।[92] काग्रेस के 1891 के नागपुर अधिवेशन म लाला मुरलीधर न कहा बीस वर्ष पूर्व गहू एक रुपए का डेढ़ मन और दूसरा अनाज एक रुपए का दो मन बिकता था। इसका कारण यह था कि उस समय हमारे अनाज का विदेशो म निर्यात नहीं होता था। अब यह छ गुना महगा हो गया है और उसी अनुपात म किसानो के लिए अपना पेट भरना छ गुना कठिन हो गया है।[93]

इस चिंतन के फलस्वरूप राष्ट्रीय नेतृत्व के एक बहुत बडे वर्ग न अनाजो के स्वतत्र तथा असीमित निर्यात पर सरकार से कुछ प्रतिबध लगाने की सिफारिश की।[94] अन्य कुछ न तो अनाजो के निर्यात पर ऊचे निर्यात शुल्क के आधान की वकालत की।[95] कुछ और लोगो न तो यहा तक माग की कि अनाजो के निर्यात पर ही पूर्ण प्रतिबध लगा देना चाहिए।[96] 1896 98 के अकाल के वर्षों म तो इस माग के समर्थन मे स्वर विशेष रूप से ही मुखरित हो उठा।[97] साथ ही कुछ नेताओ ने इस तथ्य को अनुभव किया कि सरकार अकाल के दिनो म भी अनाज के निर्यातो को रोकने अथवा प्रतिबधित करने की दिशा म कोई पग नहीं उठाती। अतएव उन्होंने यह तक देना प्रारभ किया कि सरकार की नीति ही इग्लैंड के लोगो के लिए सस्ती खाद्यसामग्री जुटाने की दृष्टि से अनाजो के निर्यात को किसी भी मूल्य पर बढ़ाने की ही है।[98] इस प्रकार निर्यात विरोधी वातावरण के युग म अकाल के अतिरिक्त वर्षो म भी अनाज के निर्यात के समर्थक समाचारपत्र मुट्ठीभर ही थे।[99]

आशा के विपरीत न होते हुए भी यह एक पर्याप्त रोचक तथ्य है कि अनाजो के व्यापार म सलग्न भारतीय व्यापारियो का दृष्टिकोण राष्ट्रीय नेतृत्व के दृष्टिकोण से विपरीत था। उन्होंने तो इस व्यापार के विस्तार का समर्थन किया तथा चावल पर लगे निर्यात शुल्क का तीव्र विरोध किया। उदाहरणार्थ इपीरियल लेजिस्लेटिव कौसिल के सदस्य कलकत्ता के प्रसिद्ध व्यापारी दुर्गाचरण लाहा ने चावल पर शुल्क के आधान को आपत्तिजनक बताया और दावा किया कि इसके हटा देने से जनता का अच्छा बाजार मिलने तथा अपने उत्पादनो का अच्छा मूल्य मिलने के रूप म भारी लाभ होगा।[100] इसी प्रकार बगाल वाणिज्य सदन के सचिव न 8 अप्रल 1889 मे सदन के वार्षिक सम्मेलन को

सबोधित करते हुए इस देश से चावल के निर्यात पर लगाए गए ऊचे शुल्का के विरुद्ध जोरदार विरोध प्रकट किया।[101]

निष्कप

निष्कप रूप मे यहा यह उल्लेखनीय है कि भारतीय राष्ट्रवादी नेता भारतीय अथव्यवस्था मे विदेश व्यापार की भूमिका के मूल्याकन म अपने समय से काफी आगे बढे हुए थे। उन्होंने मात्र अतर्राष्ट्रीय श्रमविभाजन के लाभो के प्रचलित सिद्वात को नकारते हुए इसे अपन आप मे लक्ष्य अथवा अपने आप म ही अच्छाई मानने से इकार कर दिया। भले ही इस विषय पर उनकी टिप्पणिया भारतीय अथव्यवस्था के अन्य पक्षा पर प्रस्तुत टिप्पणियो के समान विस्तृत नही थी[10] फिर भी उन्होने भारत के विदेश व्यापार के केंद्रीय स्वरूप को उजागर किया तथा उसे लोकहित पर उसके सामान्य प्रभाव के सदभ म ही देखा। जैसाकि हम पहले ही देख चुके है, भारतीय प्रवक्ताआ न विदेश व्यापार के गुण-दोपा का निणय एकातत राष्ट्रीय आय, राष्ट्रीय उद्योग तथा आजीविका के साथ उसके सबध तथा उनपर उसके प्रभाव के परिप्रेक्ष्य मे ही किया। इसी कारण से उन्हाने मूल रूप अथवा सिद्वात रूप से विदेश व्यापार की उपेक्षा नही की और न ही सब प्रकार के विदेश व्यापार को हानिप्रद माना। वे स्वाभाविक अर्थात देश के उद्योग, देश के हित तथा देश की आवश्यकताओ पर आधारित विदेश व्यापार के विरुद्ध नही थे। उन्होने तो केवल अवाछनीय, औपनिवेशिक स्वरूप तथा बाध्य प्रकृति के भारतीय विदेश व्यापार के विरुद्ध ही आपत्ति की। वे चाहते थे कि औद्योगिक आवश्यकता का ही विदेश व्यापार की सीमा के स्वरूप तथा दिशा के निर्धारण का आधार बनाना चाहिए न कि विदेश व्यापार की आवश्यकता को यह महत्व दना चाहिए। जी० एस० अय्यर ने 1901 के काग्रेस के अधिवेशन मे इस दृष्टिकोण को अत्यत स्पष्टता से इस प्रकार प्रस्तुत किया

> भारत के व्यापार को स्वाभाविक आधार देना ही निकट भविष्य मे भारत के पूण आर्थिक विध्वस की चेतावनी देने वाली विपत्ति से उसके बचाव का एकमात्र उपाय है।[103] स्वाभाविक आधार प्रधानत यह है कि प्रथम, स्वदेशी उद्योगो के उत्पादन का विस्तृत और असीम बाजारू सभरण देश की विशाल जनसख्या के लिए सुरक्षित कर लिया जाए और फिर फालतू बचे हुए सामान का विदेशा म निर्यात किया जाए और विनिमय मे वे पदाथ मगाए जाए जो भारत मे पैदा अथवा निर्मित नही किए जा सकते।

इसी दष्टिकोण की वकालत इससे पूव रानाडे महोदय इन शब्दो मे कर चुके थे

> हम प्रत्यक स्थिति मे सुसगठित सहयाग द्वारा विदेशियो से प्रतियोगिता करना सीखना है। अपनी आवश्यकतानुसार कच्चा माल विदेश से मगाना है, यहा उसे पक्के माल का रूप देना है और अपने कच्चे माल के निर्यात की जगह हमे उसी माना मे भार म कम, किंतु अधिक कीमती ऐस माल का निर्यात करना है जो कलात्मक ढग स ढले हुए ह, और हमारे औद्योगिक वग को व्यवसाय प्रदान करत है।[104]

इस प्रकार भारतीय नताओ की दष्टि मे, उद्योग प्रधान रूप म तथा व्यापार गौण रूप

6 भोलानाथ चन्द्र द्वारा उद्धत, एम एम खड II (1873), पृ० 85

7 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 696 इसस पूर्व उन्होंने चेतावनी दी थी कि इसका व विस्तार जाइ इससे प्रवनन के वास्तविक चरित्र क सबध म मनुष्य का हत्प्रभ हो कर देता है (पृ० 680) और देखिए जी० एस० अय्यर इंडियन पालिटिक्स पृ० 188

8 दत्त ई० एच० II पृ० 536

9 हिंदू 21 अप्रैल 1884 16 जनवरी 1885 मराठा 25 मई 1884 बगवासी, 2 फरवरी (आर० एन० पी० बग 9 फरवरी 1889) नौरोजी स्पीचज पृ० 323 मा० पी० ए० पृ० 164 पर मधोलकर पूर्वोद्धत प० 43 दत्त ई० एच० II पृ० 127 348 534 536 जी० वी० जोशी ने कहा क्या यह असामान्य स्थितियों का स्पष्ट उत्पादन नहीं है (पूर्वोद्धत पृ० 617)

10 देखिए अध्याय II

11 जोशी पूर्वोद्धत प० 641 और देखिए जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 131

12 आर० सी० दत्त न अपना पुस्तक इकानामिक हिस्टरी आफ इंडिया, खड II म विशेष रूप स इस प्रक्रिया का सुनिश्चित लेखा जोखा प्रस्तुत किया है जिसके कारण यह स्थिति और उसके साथ जुड़े परिणाम अस्तित्व म आए विशेषत देखिए प० 101 105 108 161-4 348 529-32 दूसरा के लिए देखिए हिंदू 21 अप्रल 1884 रानाडे एसज पृ० 99-101 183-4 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 620-3 641 एव आग रामगोपाल पूर्वोद्धत, प० 145 पर उद्धत तिलक मधोलकर पूर्वोद्धत पृ० 41 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 126 गोखले स्पीचेज पृ० 52 और देखिए ऊपर अध्याय II

13 देखिए अध्याय I

14 जोशी पूर्वोद्धत प० 651 (तथा पृ० 622 3 652 680), और रानाडे एसेज प० 103 (और पृ 103 एव आग और 119) तथा देखिए दत्त ई एच II प 348 सुधारक 1 अगस्त केसरी 2 अगस्त (आर० एन० पी० बव 6 अगस्त 1898 ने जापान म भारतीय व्यापार की हानि क विरुद्ध विरोध प्रकट किया अध्याय 7 आगे भी देखें

15 जोशी पूर्वोद्धत प० 652 रानाडे एसज पृ० 13 एव आग दत्त ई एच II प० 531 2 दत्त ने विशेष रूप से मशीनों और मिल सामग्री के आयात क धरने पर शोक प्रकट किया

16 जोशी पूर्वोद्धत प० 611 दत्त ई० एच० II प० 348 535 6 जी० एस० अय्यर ई ए 352 और अन्य जिनका यथोचित स्थान पर बाद म निर्देश किया जाएगा

17 कतिपय महानुभावों ने आशिक रूप स यह स्वीकार किया था कि विदेश व्यापार क कुछ लाभ भी हो सकते हैं रानाडे का यह दृष्टिकोण था कि (विदेश व्यापार म) वद्धि को अच्छाई तो माना जा सकता है परतु यह खालिस अच्छाई नहीं (एसेज पृ० 184) तथा देखिए, जोशी पूर्वोद्धत प० 622 और 624 तथा सयानी सी० पी० ए० प० 346

18 मराठा 25 मई 1884 दत्त इग्लड ऐंड इंडिया प० 127 ई० एच० I प० 226 ई० एच० II पृ 132 163 तथा आग

19 मराठा 25 मई 1884

20 इपीरियल गजेटियर (1908) खड III पृ० 298 से गहीत आयातों म सरकारी भडारों और कोश की भी परिगणना है

21 वस्तुत यथार्थ रूप स ऋतग्रस्त राशियों के सबध म भारतीय नेताओं म मतभेद था देखिए भोलानाथ चद्र एम एम खड II (1873) पृ० 89 इंडियन स्पेक्टेटर 18 मई (आर०

एन० पी० बब, 24 मई 1884) मराठा 25 मई 1884 नौरोजी स्पीचेज, पृ० 321 और पावर्टी पृ० 569 70 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 636-8, 683 मधोलकर पूर्वोद्धत प० 40 नदी पूर्वोद्धत पृ० 112, दत्त ई० एच० II, पृ० 528 9 भारतीय नेताओं ने यह भी देखा कि यदि पूजी के आयात और सरकारी ऋण न होते जिनके कारण एक बडी सीमा तक आयातो के मूल्य में वृद्धि हो गई है और निर्यातो की अधिकता क्षीण हो गई है तो आयात निर्यात के मध्य की खाई और भी अधिक गहरी होती यह तथ्य 1857 से पूव के कतिपय वर्षों की अवधि मे भारतीय व्यापार म आयातो की अपेक्षा निर्यातो की अधिकता की सामा य प्रवति के अपवाद का ही सूचक है इन वर्षों म निर्यातो की अपेक्षा आयात अधिक थे इसके कारण थे सरकार द्वारा भारी ऋण लेना और रेलो के निर्माण के लिए बडे पमाने पर विदेशी पूजी का आयात देखिए जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 638 नौरोजी पावर्टी, प० 599 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 336 553

22 नौरोजी एसेज प० 113 और पृ० 112 5

23 नौरोजी पावर्टी पृ० 141

24 वही प० 569 और देखिए पृ० 568 74

25 जोशी पूर्वोद्धत, प० 618, 637 683 राय पावर्टी पृ० 6, लालमोहन घोष, सी० पी० ए० प० 753 मधोलकर पूर्वोद्धत, पृ० 41, नदी पूर्वोद्धत पृ० 112 3 वाचा सी० पी० ए०, पृ० 602 दत्त इग्लड एड इडिया, प० 143 ई० एच० II पृ० 348 528 जी० एस० अय्यर ई० ए०, पृ० 336

26 इडियन स्पेक्टेटर 18 मई (आर० एन० पी० बब 24 मई 1884) मराठा, 25 मई 1884 हिंदू 16 जनवरी 1883 दत्त इग्लड ऐंड इडिया पृ० 145 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 683 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 101 2 नदी पूर्वोद्धत पृ० 113 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स पृ० 188 और ई० ए०, पृ० 353 यदि अमरीका के विदेशी ऋणो के सम्मान पृथक भुगतान का प्रयोजन होता तो इसम मराठा आपत्ति न करता

27 समय 30 जून (आर० एन० पी० बग० 5 जुलाई 1884) एल० एम० घोष सी० पी० ए०, पृ० 753 राय पावर्टी पृ० 6 गोखले वेलवी कमीशन, खड III प्रश्न 18240 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 618 637 8 683 नदी पूर्वोद्धत पृ० 113 दत्त इग्लड ऐंड इडिया पृ० 143 ई० एच० II पृ० 127 और जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 353 1862 से 1888 तक की अवधि के गह प्रभारो की रकमो की अधिक निर्यात की रकमा से तुलना करत हुए जोशी महोदय इस निष्कष पर पहुचे कि वे लगभग एक दूसरे के सतुलन म ही थी (पूर्वोद्धत पृ० 637 8) और एल० एम० घोष पूर्वोद्धत स्थल

28 समय 30 जून (आर० एन० पी० बग० 5 जुलाई 1884) जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 638 683 695 राय पावर्टी पृ० 6 नौरोजी स्पीचेज पृ० 323 नदी पूर्वोद्धत पृ० 113 दत्त ई० एच० II पृ० 536 जी० एस० अय्यर ई० ए०, पृ० 270-1

29 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड III (1874) पृ० 346 नौरोजी एसेज पृ० 115 6 स्पीचेज, पृ० 323 समय 30 जून (आर० एन० पी० बग०, 5 जुलाई 1884) न्यू इडिया, 19 अगस्त 1901 दत्त ई० एच० II पृ० 163 343-4 348 528 9 536

30 नौरोजी स्पीचेज, पृ० 113

31 नौरोजी स्पीचेज पृ० 323 तथा पावर्टी पृ० 182 569

32 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड II, पृ० 89-90 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 639 राय पावर्टी, प० 6-7 मधोलकर पूर्वोद्धत प० 41 46 दत्त ई० एच० II, प० 127 159 528 536 न्यू इडिया 16 सितबर 1901 इडियन पीपुल 28 जुलाई 1903 और एन० एम० घाप सी० पी० ए० प० 750 753 और देखिए ए० बी० पी० 6 फरवरी 1880 17 जुलाई 1892

33 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 639 वस्तुत निकासी की कुल राशि निर्यातों की दृष्टिगोचर अधिकता से बढ़चढ़कर थी क्योकि जसा हम ऊपर निर्देश कर चुके हैं निर्यातों की वास्तविक अधिकता दृष्टि गोचर से कही भिन्न थी और देखिए नौरोजी पावर्टी, पृ० 569 और जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 336

34 जोशी पूर्वोद्धत प० 641 तथा प० 683

35 दत्त ई० एच० II पृ० 127 और देखिए उनकी स्पीचेज II, पृ० 40

36 दत्त ई० एच० II प० 348 9 528

37 ई० एच० I प० 48-9 69 ई० एच० II पृ० 125-7

38 कॅजवादी यह विचार कि यदि ब्रिटन जमनी से क्षतिपूर्तियाँ उगाहना चाहता है तो या तो वह अनिवार्य रूप से जमनी का सामान खरीदे अथवा अपने देशवासियों का जमनी जाकर वहां की मदिरा पीने की अनुमति दे मनत मौलिक नहा था

39 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड II (1873) प० 90 नौरोजी एसेज प० 114 स्पीचेज प० 315 इडियन स्पेक्टेटर, 18 मई (आर० एन० पी० बग 24 मई 1884) मराठा 25 मई 1884 हिंदू 16 जनवरी 1885 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 683 राय पावर्टी प० 6-7 मधोलकर पूर्वोद्धत पृ० 46-7 ए० बी० पी० 11 जनवरी 1896 दत्त ई० एच० II प० 127 एन० एम० घोष सी० पी० ए० पृ० 752 जी० एस० अय्यर ई० ए०, प० 357 8 तथा देखिए आगे अध्याय XIII मे ड्रेन

40 जोशी पूर्वोद्धत पृ 640-1

41 वही पृ० 681

42 मराठा 25 मई 1884 हिंदू 16 जनवरी 1885 सयय, 30 जून (आर० एन० पी० बग० 5 जुलाई 1884) हिंदू रजिका 28 जनवरी (वही 7 फरवरी 1885) जोशी पूर्वोद्धत प० 690-1 696 रानाडे एसेज प० 183 185 राय पावर्टी पृ० 93-4 दत्त ई० एच० II पृ० 101 344-5 जी० एस० अय्यर ई० ए०, प० 355 357 जे० ए० वाडिया रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 176

43 बी० डी० बसु मे उद्धत पूर्वोद्धत पृ० 52

44 एम० एम० खड II (1873) पृ 90

45 दत्त इग्लड ऍड इडिया प० 127 गोखले स्पीचेज, प० 51 (तथा देखिए गोखले रिप० आई० एन० सी० 1904 पृ० 166) जी एस० अय्यर ई० ए० प० 357

46 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 788 9

47 रानाडे एसेज पृ० 184-5 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 643 650 दत्त ई० एच० I प० 293 6 ई० एच० II पृ० 105 स्पीचेज II पृ० 120-1 गोखले स्पीचेज पृ० 51 2 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 355

48 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 644-5 रानाडे एसेज पृ० 185

49 जोशी पूर्वोद्धत प० 680

50 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड II (1873), प० 115 मराठा 25 मई 1884 हिंदू, 16 जनवरी 1885 समय, 22 जून (आर० एन० पी० बग० 27 जून 1885) जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 611, 643, 650-1, 683, 696 रानाडे एसेज पृ० 183 185 राय पावर्टी पृ० 93-6 दत्त ई० एच० I पृ० VIII 276 ई० एच० II, पृ० 103 345, 531 गोखले स्पीचेज, पृ० 52 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 355 हितवादी 16 दिसबर (आर० एन० पी० बग० 31 दिसबर 1904) और अध्याय II पीछे हा राष्ट्रवादियो ने यह अभिस्वीकार किया कि इस शोचनीय स्थिति के लिए आयात एकमात्र उत्तरदायी तत्व नही था और वस्तुत यह देश पर विदेशी सत्ता के विभिन्न प्रभावो से ही उत्पन्न दुष्परिणाम थे

51 जोशी पूर्वोद्धत, क्रमश पृ० 682 611 651 तथा 645 और रानाडे एसेज पृ० 184 दत्त ई० एच० II प० 350 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 125 अखबारे आम 18 फरवरी (आर० एन० पी० पी० 21 फरवरी 1891) दनिक-ओ-समाचार चद्रिका 18 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग, 22 अक्तूबर 1892)

52 जोशी पूर्वोद्धत प० 653 और राय पावर्टी, प० 95-6 दत्त ई० एच० II पृ० 345 350

53 जी० एस० अय्यर ई० ए०, पृ० 85

54 मधोलकर पूर्वोद्धत, प० 43 और देखिए एन० के० आर० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901, प० 138

55 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 645 7 मधोलकर ने 50 से 60 करोड रुपया की रकम का उल्लेख करते हुए स्पष्टत जोशी की सगणना पर ही विश्वास किया

56 वही प० 682 और 651 क्रमश

57 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड II (1873), पृ० 86

58 जोशी पूर्वोद्धत, प० 654 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 101 2 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 191

59 इडियन स्पेक्टेटर ने 18 मई 1884 के अक मे लिखा 'भारतीय खतिहर तो केवल विदेशी निर्यातक का पादचक्की उद्योगवाला दास था (आर० एन० पी० बब० 24 मई 1884) और देखिए, हिंदुस्तानी 13 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 21 अप्रल 1892) वाचा वेलबी आयोग खड III, प्रश्न 17509 10 17516 17524 सी० पी० ए० प० 601, राय इडियन फमिस, पृ० 63 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स, प० 192 दि वायसराय आन दि इकानामिक कडीशन आफ इडिया एच० आर० मई 1901 प० 352 और जून 1901 पृ० 445 रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 101 ई० ए०, प० 225 दत्त ई० एच० II पृ० 348 9

60 वाचा सी० पी० ए०, पृ० 601 और वाचा वेलबी आयोग, खड III प्रश्न 17525 7, 17529 राय इडियन फमिस पृ० 62 3 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 225

61 मराठा 16 नवबर 1902

62 जोशी पूर्वोद्धत प० 658 दत्त ई० एच० II प० 350

63 जोशी पूर्वोद्धत प० 658 राय इडियन फमिस प० 62 3 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 192 ई० ए० पृ० 223-6

64 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 657

65 वही भोलानाथ चद्र एम० एम०, खड II (1873), प० 86 नौरोजी स्पीचेज, प० 596 मधोलकर पूर्वोद्धत प० 42 वाचा सी० पी० ए० प० 603 न्यू इडिया 19 अगस्त जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 353

66 रानाड एसेज प० 65 97 उन्होंने लिखा सांस्कृतिक पद्धति ने नीदरलैंडस ईस्ट इंडिया को उच्चतम स्तर का भौतिक समृद्धि पाने म सहायता का है (पृ० 79) तथा यह स्थिति उपयुक्त नहीं थी क्योंकि उत्पादित सामग्री के ब्रिटिश भारत स निर्यातित कच्चे माल का व्यापार मान स अनुपात चार के मुकाबले एक था यहां नीदरलैंडस इंडिया म यह एक के मुकाबले चार था (प० 85) यहां यह उल्लेखनीय है कि रानाडे सब त एक दृष्टि, विदेशी पूजी की अपेक्षा भारतीय पूजी प्रयोग से सास्कृतिक प्रणाली का उल्लघन किया था (पृ० 92 3)

67 मराठा 25 मई 1884 राय पावर्टी प० 15-16 वाचा सी० पी० ए०, 603 जा० एम० अय्यर ई ए पृ० 353 55 तुलनीय इपीरियल गजटियर खड III प० 278 विदेश व्यापार क लिए भारत म बाजार अत्यत सीमित है और उपयुक्त आयातो का एक सारवान भाग भारत म बढ़ते यूरोपीय लोगो का आवश्यकताओ और आकाक्षाओ की पूर्ति के ही काम आता था

68 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 355 (तथा पृ० 12) और वाचा सा० पी० ए० पृ० 603 गोखले स्पीचेज पृ० 16

69 हिंदू 21 अप्रल 1884 बगवासी 2 फरवरी (आर० एन० पा० बग० 9 फरवरी 1889), हाजल अखबार 4 जनवरी (आर० एन० पा० पी० 10 जनवरी 1801) राय पावर्टी पृ० 13-4 35 दत्त ई० एच० II, प० 348 9 534 536 जी० एस० अय्यर ई ए, पृ० 85

70 आर० एन० पी० बग० 13 जुलाई 1889

71 भोलानाथ चद्र एम एम खड II (1873) प० 82 85 9 खड III (1874) पृ० 310-11 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 611 622 624 5 666 784 788 रानाडे एसेज, प० 66 185-6 हिंदुस्तानी 16 सितबर (आर० एन० पा० एन० 24 सितबर 1801) पसा अखबार 27 अक्तूर (आर० एन० पी० पी० 10 नवबर 1894) नौरोजी स्पीचेज पृ० 341 राय पावर्टी प० 321 3 326 भारत जीवन 4 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 13 जुलाई 1898) मधोलकर पूर्वोद्धत प० 46 नसीम आगरा 15 मई (आर० एन० पी० एन० 18 मई 1901) न्यू इंडिया 19 अगस्त 1901 एडवोकेट 10 जुलाई (आर० एन० पा० एन० 19 जुलाई 1902) दत्त ई० एच० II पृ० 536

72 भोलानाथ चद्र एम एम खड II (1873) प० 88 9 जोशी पूर्वोद्धत प० 631 3 666 783 787 रानाडे एसेज पृ० 185-6 मधोलकर पूर्वोद्धत प० 41 नौरोजी स्पीचेज पृ० 341

73 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 66

74 वही पृ० 625 और प० 633 666 हिंदुस्तानी 16 सितबर (आर० एन पी० एन० 24 सितबर 1891) भारत जीवन 4 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 23 जुलाई 1898)

75 जोशी पूर्वोद्धत प० 634

76 वही प० 806-7

77 एडवोकेट 19 जून (आर० एन० पी० एन०, 21 जून 1902)

78 नौरोजी एसेज प० 101 पर उद्धत

79 जोशी पूर्वोद्धत प० 641

80 वाचा रिप आई० एन० सी० 1898 प 105 और देखिए राय पावर्टी प० 36 वही पूर्वोद्धत प० 125 जी एम० अय्यर ई ए प० 357 8

81 इपीरियल गजटियर (1908) खड III पृ० 284

82 दुर्गाप्रसाद पूर्वोद्धत, 224

83 आफताब ए पंजाब, 9 मई (आर० एन० पी० पी० एन० 19 मई 1883) समय, 27 अक्तूबर सोम प्रकाश, 27 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग० 1 नवबर 1884) ढाका प्रकाश 2 नवबर (वही, 8 नवबर 1884) क़िस्सा-ए अखबार, 3 जून (आर० एन० पी० पी० 9 जून 1888) रोजाना ए पंजाब, 21 जून (वही, 2 फरवरी 1889) बगवासी 2 फरवरी 6 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 9 फरवरी, 13 जुलाई 1889) नवविभाकर साधारणी 27 मई (वही 27 मई 1889), हिंदुस्तानी, 22 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 30 अप्रल 1891) हिंदी प्रदीप माच, याय सुधा 13 मई कानपुर गजट 15 मई न रग 11 मई(वही, 21 मई 1891) भारत जीवन 15 फरवरी (वही 18 फरवरी 1892) आर० एन० पी० पी० 10 24 जनवरी 21 फरवरी 21, 28 माच 4 11 18 25 अप्रल, 2, 23 मई 19 दिसबर 1891 28 जनवरी 21 फरवरी 11 माच, 22 29 अप्रैल 1893 20 जुलाई 1895 26 माच, 28 मई 4 जून 30 जुलाई 1898 28 अक्तूबर 1899 30 जून 1900 म उद्धत पजाब के लगभग सभी पत्र सम्मिलित हैं दनिक-ओ-समाचार चद्रिका, 22 जून (आर० एन० पी० बग० 30 जून 1891) हितवादी 25 जुलाई (आर० एन० पी० बग०, 1 अगस्त 1891) बदवान सजीवनी 28 जुलाई (वही 8 अगस्त 1891) बगाली 23 जनवरी 1892 बगनिवासी, 22 नवबर(आर० एन० पी० बग 23 नवबर 1895) भारत जीवन 18 मई, अंजुमने हिंद, 23 मई (आर० एन० पी० एन० 26 मई 1896) हिंदुस्तान, 13 अक्तूबर (वही 14 अक्तूबर 1896) रहबर 16 फरवरी (वही 24 फरवरी 1897) नज्मउल हिंद 18 अप्रल दबदबा ए-कैसरी 16 अप्रल(वही 20 अप्रल और 27 अप्रल 1898 क्रमश) हिंदुस्तान 20 मई हिंदुस्तानी, 18 मई (वही, 25 मई 1898) काशी वभव, 26 मई अवध अखबार 25 मई (वही, 1 जून 1898) भारत जीवन 27 जून सुदेश प्रवतक, जून (वही 6 जुलाई 1898) भारत जीवन 7 अगस्त, 2 अक्तूबर (वही 16 अगस्त 11 अक्तूबर 1899) नदी पूर्वोद्धत प० 113 जी० एम० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 189 ई ए प० 278 9 285 नसीमे आगरा 15 मई रोजनामचा ए कैसरी 15 मई (आर० एन० पी० एन० 18 मई 1901) इडियन पीपल (24 जुलाई 1903) दत्त ई० एच० II, प० 127 (पादटिप्पणी)

84 अवध पच, 21 मई (आर० एन० पी० एन०, 28 मई 1891)

85 आर० एन० पी० एन० 30 जनवरी 1900

86 बगवासी 2 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 9 फरवरी 1889) दनिक ओ समाचार चद्रिका, 22 जून (वही, 30 जून 1891) नदी पूर्वोद्धत प० 113 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 85 110

87 आर० एन० पी० बग०, 1 अगस्त 1891

88 दत्त ई० एच० II प० 349 और पृ० 536

89 दनिक ओ-समाचार चद्रिका 22 जून 1891 4 सितबर 1895 (आर० एन० पी० बग०, 30 जून 1891 और 7 सितंबर 1895) हितवादी 25 जुलाई (वही 1 अगस्त 1891) बदवान सजीवनी 28 जुलाई (वही 8 अगस्त 1891) भारत जीवन 18 मई, अंजुमन ए हिंद, 23 मई (आर० एन पी० एन० 26 मई 1896) भारत जीवन 2 अक्तूबर(वही, 11 अक्तूबर 1899) वाचा सी० पी० ए० प० 585 6 जी० एस० अय्यर ई ए प० 110-11

90 हितवादी 25 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 1 अगस्त 1891)

91 दत्त ई० एच० II पृ० 348 9, 534-6 और देखिए अध्याय 13

92 बाचा सी० पी० ए० पृ० 587 तथा देखिए जोशी पूर्वोद्धत पृ० 611, 613 रिसाला ए अखबार 3 जून (आर० एन० पी० पी०, 9 जून 1888), अखबार ए आम, 29 जनवरी (वही 2 फरवरी 1889) आफताब ए पंजाब 5 जून (वही, 15 जून 1889), हिन्दुस्तानी 22 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 30 अप्रल 1891) न्याय सुधा 13 मई, कानपुर गजट 15 मई, नरग 11 मई (वही 21 मई 1891) भारत जीवन, 15 फरवरी (वही 18 फर० 1892), सिराज उल अखबार 16 फरवरी (आर० एन० पी० पी०, 21 फरवरी 1891) केसर उल अखबार 18 मार्च (वही 21 मार्च 1891) आफताब ए पंजाब 20 मार्च (वही 28 मार्च 1891) इम्पीरियल पेपर 11 अप्रैल (वही 18 अप्रल 1891), दिल्ली पंच 22 अप्रल (वही 2 मई 1891) खरख्वाह ए आलम 8 मई (वही, 23 1891) अफताब ए हिन्द, 16 मई (वही 6 जून 1891) रहबर ए हिंद 20 जुलाई (वही 1 अगस्त 1891) पैसा अखबार 14 सितंबर कोहिनूर 12 सितंबर (वही 19 सितंबर 1891) पैसा अखबार, 13 मई (वही, 28 मई 1898) अम्बाला गजट 24 मई (वही 8 जून 1898) हितवादी, 25 जुलाई (आर० एन० पी० बंग०, 1 अगस्त 1891) बंगाली, 23 जनवरी 1892. राय पावर्टी, पृ० 174 5 रहबर 16 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 24 फरवरी 1897) नजमुल हिंद 8 अप्रल (वही 20 अप्रल 1898) दबदबा ए कैसरी 16 अप्रल (वही 27 अप्रल 1898), हिंदुस्तानी, 18 मई, हिन्दुस्तान, 20 मई (वही 25 मई 1898), काशी पत्रिका 26 मई अवध अखबार 25 मई (वही, 1 जून 1898) राष्ट्रवादियों के इस दृष्टिकोण कि सामान्य मूल्यवृद्धि जनहित में न होकर उनके लिए हानिप्रद है, की समीक्षा ऊपर की गई है

93 लाला मुरलीधर रिप० आई० एन० सी० 1891, पृ० 21

94 आफताब ए पंजाब 9 मई (आर० एन० पी० पी० एन०, 19 मई 1883), अखबार ए आम, 29 जनवरी (आर० एन० पी० पी०, 2 फरवरी 1889) आफताब ए पंजाब 5 जून (वही, 15 जून 1889) पैसा अखबार 14 दिसंबर (वही 19 दिसंबर 1891) भारत जीवन 15 फरवरी (आर० एन० पी० एन०, 18 फरवरी 1892) सिद्ध सहाय, 11 जनवरी (वही, 21 जनवरी 1893), ताज उल अखबार, 8 अप्रल (वही, 22 अप्रल 1893) भारत जीवन 19 जनवरी (आर० एन० पी० एन० 30 जनवरी 1900) राय इंडियन फमिंस, पृ० 64 बंगाली 28 अप्रल 1901

95 नवविभाकर साधारणी 27 मई (आर० एन० पी० बंग०, 1 जून 1889), हिंदुस्तानी 22 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 20 अप्रल 1891) न्याय सुधा 13 मई कानपुर गजट 15 मई नरग 11 मई (वही 21 मई 1891) रहबर ए हिन्द 20 जुलाई (आर० एन० पी० पी, 1 अगस्त 1891) पैसा अखबार 13 मई 20 जुलाई (वही 28 मई, 30 जुलाई 1898) सदा ए हिंद 16 अक्तूबर (वही 28 अक्तूबर 1899) हिंदी हिंदुस्तान 24 मई (आर० एन० पी० एन०, 1 जून 1901) ए० बा० पा०, 9 जुलाई 1901 जी० एस० अय्यर ई ए, पृ० 111 2 290

96 वेसे ए अखबार, 3 जून (आर० एन० पी० पी० 9 जून 1888) रोजाना ए पंजाब 28 जनवरी (वही 2 फरवरी 1889) दोस्त ए हिंद 3 अप्रल (वही 11 अप्रल 1891) आफताब ए पंजाब 20 मार्च (वही 28 मार्च 1891) दिल्ली पंच 22 अप्रल (वही 2 मई 1891) कोहेनूर 4 फरवरी 8 22 अप्रल (वही 21 फरवरी 22 29 अप्रल 1893) पैसा अखबार 27 फरवरी (वही, 11 मार्च 1893) दैनिक-ओ-समाचार चंद्रिका 12 मई (आर० एन० पी० बंग० 14 मई 1892) और 4 सितंबर (वही 7 सितंबर 1895)

97 ताज उल अखबार 6 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 20 जुलाई 1895), पसा अखबार, 20 मार्च, 20 जुलाई (वही, 10 अप्रल, 30 जुलाई 1897) अंबाला गजट 24 मई (वही, 4 जून 1898) सिविल ऐंड मिलट्री न्यूज 18 अक्तूबर ताज उल अखबार 14 अक्तूबर (वही 28 अक्तूबर 1899) ए कारेसपेंडेंट इन सियालकोट पेपर 1 अप्रल (वही, 7 अप्रल 1900) हमदद ए हिंद, 16 जून, (वही 30 जून 1900) मजुमन ए हिंद, 23 मई (आर० एन० पी० एन०, 26 मई 1896) जमाना, 17 सितबर अनीसे हिंद 16 सित० (वही 23 सित० 1896) हिंदुस्तान, 13 अक्तू० (वही 14 अक्तू० 1896) हितवादी 13 नवबर (आर० एन० पी० बग०, 21 नवबर 1896) सजीवनी 26 दिसबर (वही 2 जनवरी 1897) 13 जनवरी के सप्ताह के सभी उड़िया पत्र (आर० एन० पी० बग०, 6 फरवरी 1897) ए० बी० पी० 22 जनवरी 1897 ज्ञान प्रकाश, 26 मई बबई समाचार 28 मई (आर० एन० पी० बब० 28 मई 1898), भारत जीवन 3 जनवरी (आर० एन० पी० एन०, 5 जनवरी 1898) जमायुल उल्लाम 18 सितबर (वही 9 अक्तूबर 1900)

98 नेटिव ओपीनियन 25 मई 1884 नवविभाकर साधारणी 27 मई (आर० एन० पी० बग०, 1 जून 1889) पसा अखबार 3 अप्रल (आर० एन० पी० पी०, 15 अप्रल 1893) भारत जीवन, 9 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 17 अप्रल 1900) जी० एस० अय्यर ई ए प० 115-7

99 मराठा, 24 फरवरी 1884 विक्टोरिया पेपर 16 दिसबर (आर० एन० पी० पी०, 23 दिस० 1893), 8 नवबर (वही 17 नवबर 1900)

100 एल० सी० पी०, 1882 खड XXI कलकत्ता के अंग्रेज व्यापारियो ने स्वभावत ही इस दृष्टिकोण का समथन किया (ए० बी० इगिलस का भाषण वही, प० 300) डी० सी० लाहा ने 1889 में इस माग को दुहराया (एल० सी० पी० 1880 खड XXVIII पृ० 141)

101 बगाल राष्ट्रीय वाणिज्य सदन का 1888 का प्रतिवेदन प० 5

102 आशिक रूप से यह इस तथ्य के कारण था कि अथशास्त्रियो को छोडकर भारतीय नेताओ ने जिन विशिष्ट आर्थिक विषयो पर तथा विदेश व्यापार पर सामान्य चर्चा की, वे वस्तुत अत्यत व्यापक विषय थे और उन्हें आसानी से सघष का विषय नही बनाया जा सकता था उदाहरणाथ वर्षों तक कांग्रेस के असख्य प्रस्तावो म विदश व्यापार का उल्लेख नही हुआ इसके अतिरिक्त विदेश व्यापार से सबध राष्ट्रवादी मत की स्वल्पता इस प्रश्न पर अपने आप मे उनकी रुचि के अभाव की ही सूचक है

103 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901, पृ० 126

104 रानाडे एसेज पृ० 118 तथा दखिए नौरोजी सी० पी० ए०, प० 164 जोशी पूर्वोद्धृत, पृ० 666-7 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 105 दत्त स्पीचेज II पृ० 127

105 उदाहरणार्थ देखिए भोलानाथ चद्र का निबध आर० सी० दत्त राइटिंग्ज ऐंड स्पीचेज जी० एस० अय्यर सम इकानामिक आस्पेक्टस आफ ब्रिटिश रूल इन इडिया

106 नौरोजी स्पीचेज क्रमश पृ० 601 603 और 604 तथा दखिए नौरोजी वही पृ० 115-6 190 503 सी० पी० ए० पृ० 164

107 दत्त स्पीचेज II पृ० 82 3 और देखिए ई० एच० II पृ० 344 617

108 के० एस० शेलवकर दि प्राब्लम आफ इडिया (लदन, 1940) पृ० 151 3 166-7

रेले

> रेलो के निर्माण द्वारा देश का विकास ही वह उपाय है जिसके द्वारा कृषि पर निभर विशाल जनसख्या की हालत म अत्यत सुनिश्चित रूप मे निरतर सुदृढ सुधार लाया जा सकता है।
>
> —लार्ड डलहौज़ी

> भारतीय जनता अनुभव करती है कि यह निर्माण काम मुख्य रूप से ब्रिटिश व्यापारी तथा धनी वर्गों के हितो की दृष्टि मे ही किया जाता है और यह उन्हे हमारे साधनो के और अधिक शोषण मे सहायता देता है।
>
> —गोपालकृष्ण गोखले

रेलो के निर्माण का भारतीय जनता के जीवन, सस्कृति और अथव्यवस्था पर एक क्राति कारी प्रभाव पडा। रेलो की स्थापना से पूव अग्रेज यथाथ मे न भारतीय जीवन मे प्रवेश पा सके थे, न भारत को विकासशील विश्वमडी के साथ जोड सके थे और न ही भारत का पूजीवादी विकास पथ की दिशा पर डाल सके थे। वस्तुत देश के विदेशी शासको ने समय बीतते बीतते रेलो के निर्माण को देश के सभी आर्थिक रोगो की रामबाण औषधि के रूप मे लिया और अन्य सभी योजनाओ से उसे प्राथमिकता देते हुए उसके विकास पर शक्ति तथा तीव्रता से बल दिया।

निस्सदेह भारतीय रेलो के निर्माण का इतिहास एक सवविदित तथ्य है, फिर भी देश मे रेलो के निर्माण मे उत्पन्न होने वाले विविध प्रश्नो पर प्रारभिक भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ के दृष्टिकोण को सम्यक रूप से समझने के लिए इस विषय का सक्षिप्त विवेचन अनुचित न होगा।

सक्षिप्त ऐतिहासिक रूपरेखा[1]

ऐसा प्रतीत होता है कि सवप्रथम 1831-2 मे मद्रास मे ही रेल के निर्माण की योजना बनाई गई। परतु यह रेलगाडी अपनी गति के लिए पशुओ पर निभर थी। भारत के लिए सवप्रथम भाप रेल गाडियो की योजना 1843 मे इगलैड मे ही तैयार की गई। ईस्ट

इंडिया कंपनी के निदेशक मंडल ने इस योजना के संचालन के बारे में उत्सुकता नहीं दिखाई क्योंकि उसकी दृष्टि में भारत में इस योजना की असफलता पूर्वसिद्ध थी परंतु वह भारत के साथ व्यापाररत इंग्लैंड के वाणिज्य सदनों, धनकुबेरों तथा रेलपथ के उन्नायकों तथा लंकाशायर के वस्त्र उत्पादकों के अपने देश में ही पड़ने वाले प्रबल आर्थिक और राजनीतिक दबाव को दीर्घ काल तक सहन न कर सका। भारत में कंपनी के अपने ही गवर्नर जनरल लार्ड हार्डिंग ने शांतिपूर्वक यह प्रतिवेदित किया कि भारत के सीधे स्थल-मार्ग रेलपथों के निर्माण के लिए उल्लेखनीय सुविधाएं जुटाते हैं और रेलपथों का निर्माण वाणिज्य के लिए, सरकार के लिए और देश पर सैनिक नियंत्रण के लिए बहुत ही उपयोगी होगा।[3] ज्यों ही भारत में रेलों के निर्माण की योजना को स्वीकृति मिली त्यों ही कंपनी के निदेशक मंडल और रेलवे के उन्नायकों में भारतीय रेल के निर्माण में लगने वाली निजी धनराशि के न्यूनतम लाभांश अथवा प्रतिलाभ की शासकीय गारंटी के प्रश्न पर छोटा सा विवाद उत्पन्न हो गया। इस विवाद का निर्णय भी उन्नायकों के पक्ष में गया और 1849 में भारत राज्य सचिव ने ईस्ट इंडिया रेलवे कंपनी तथा ग्रेट इंडिया पेनिंसुला रेलवे कंपनी के साथ प्रथम रेलवे इकरारनामा पर हस्ताक्षर किए। इन अनुबंधों की स्वीकृति की प्रमुख शर्तें निम्नलिखित थीं

1 निजी कंपनियां भारत में रेलों का निर्माण और संचालन करेंगी।

2 निजी कंपनियों द्वारा जुटाई पूंजी पर 99 वर्ष की अवधि के लिए ईस्ट इंडिया कंपनी पांच प्रतिशत प्रतिभूत वार्षिक सूद का भुगतान करेगी।

3 ईस्ट इंडिया कंपनी का निजी कंपनियों को आवश्यकतानुसार 99 वर्ष के पट्टे पर बिना मूल्य के भूमि देने का दायित्व होगा।

4 इन सुविधाओं के प्रतिपादन में कंपनी ने रेलवे के खर्चों और संचालन का नियंत्रण अपने हाथ में रखा।

5 रेलों को डाक बिना प्रभारों के और सैनिकों तथा सैनिक भंडारों को घटी दरों पर ले जाना होगा।

6 जब तक प्रतिभूति के रूप में उगाही अग्रिम राशियों का भुगतान नहीं हो जाता तब तक प्रतिभूति पांच प्रतिशत वार्षिक ब्याज की राशि से अधिक होने वाले अतिरिक्त लाभ को ईस्ट इंडिया कंपनी और रेलवे कंपनियां आपस में बांट लेंगी। अग्रिम राशियां के चुक जाने के उपरांत सारा लाभ रेलवे कंपनियों को मिलेगा।

7 99 वर्षों के उपरांत रेल कंपनियां बिना किसी प्रकार की क्षतिपूर्ति के रेलें सरकार को सौंप देंगी। सरकार केवल मशीनों, संयंत्रों तथा रेलगाड़ी के डिब्बों का मूल्य चुकाएगी।

8 ईस्ट इंडिया कंपनी 99 वर्षों से पूर्व, प्रथम पच्चीस अथवा प्रथम पचास वर्षों के उपरांत पूंजीगत सामान्य हिस्सों और सहभागों का पूरा मूल्य चुकाने पर रेलवे को खरीद सकेगी।

9 उपर्युक्त अनुबंध के अनुरूप रेलवे कंपनियां किसी भी समय छः मास की चेतावनी देने पर रेलवे व्यवसाय को ईस्ट इंडिया कंपनी को सौंप सकेंगी। और उसके उपरांत

निवेशित मूल पूजी की वसूली की माग कर सकेंगी।

ये प्रारभिक अनुबध अगली दो शताब्दियो म हस्ताक्षरित सभी परवर्ती समझौता के लिए आदर्श रूप बन गए। परतु इस समय तक रेल के निर्माण से सबधित सर्वोत्तम नीति, गति तथा सर्वोत्तम उपायो के विषय म विवाद किसी भी रूप म समाप्त नही हो पाया था। कुछ वर्ष तक और इस विवाद म उग्रता तथा क्षुद्रता बनी रही। फिर इग्लैड म समाविष्ट प्रतिभूत कपनियो के माध्यम से ब्रिटिश पूजी के साथ द्रुत निर्माण म इसका अस्थाई रूप से हल हो गया। लार्ड डलहौजी न 1853 म लिखे अपने प्रसिद्ध तथा सर्वांगपूर्ण लेख मे इस नीति का स्पष्ट प्रकाशन किया। इस लेख म उन्होने निर्देश किया कि यदि ब्रिटिश पूजी के निवेश क्षेत्र की सभाव्यता के सदर्भ म तथा सेनाओ की गतिविधि और युद्धकाल म द्रुतगति के लिए रेलो स अधिक लाभ उठाने की दृष्टि स भारत के यातायात के साधनो का एक बार वैज्ञानिक विकास किया जाए तो भारत ब्रिटिश उत्पादकों के माल को खपाने की मडी के रूप मे और कृषि सबधी कच्चे माल के सभरणकर्ता के रूप मे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।[4] उन्होने प्रथम पग के रूप मे चार मुख्य चौमुखे रेल मार्गों की पद्धति का सुझाव दिया। इन रेलमार्गों के अतर्गत अनेक प्रेजिडेंसियों को एक दूसरे से जोडा जाए और प्रत्येक प्रेजिडेंसी का अतरग प्राकृतिक पतन से जुडा हो। चौमुखे रेलमार्ग का देश के कृषिउत्पादनो के निर्यात को सुविधाजनक बनाने के लिए ठोस आधार के रूप मे ही लिया गया।

1969 की समाप्ति तक जब इस नीति म परिवतन किया गया, प्रतिभूत कपनियो द्वारा 4255 मील लबे रेलपथो का निर्माण किया जा चुका था और इस अवधि मे प्रतिभूत ब्याज की दर साढे चार से पाच प्रतिशत रही।

1869 से पूर्व रेलो के निर्माण के मूल्य बहुत अधिक और अलाभकारी रहे। प्रारभ से ही प्रतिभूति के फलस्वरूप सरकार द्वारा कपनियो को ऊचे भुगतान करने पडे। लार्ड डलहौजी ने जहा प्रतिमील रेलपथ के निर्माण का औसत व्यय 8000 पौंड कूता था, वहा बेमोल दी गई भूमि के मूल्य के अतिरिक्त ही वास्तविक व्यय लगभग 18000 पौंड प्रति मील आया।[5] इस अधिक व्यय के अनेक बहुमुखी कारण थे काय का प्रारभिक स्वरूप, कुशल श्रमिकों का अभाव स्थानीय परिस्थितियो की जानकारी का अभाव अनुभवहीनता, चौडे रेलपथो का चुनाव निर्माण का अनावश्यक रूप से ऊचा स्तर अनावश्यक दोहरी पटरिया आदि परतु ऊचे व्ययो के लिए प्रमुख रूप से उत्तरदायी तत्व था, अत्यधिक प्रतिभूति पद्धति जिसने कपनियो के लिए रेलपथो के निर्माण और सचालन मे मित व्यय की प्रेरणा अथवा प्रोत्साहन का कोई अवकाश ही नही छोडा था, इसने उलटे कपनिया को लगभग अनावश्यक व्ययो के लिए ही प्रोत्साहित किया क्योकि जितना ऊचा पूजीगत व्यय होगा उतनी ही अधिक सुरक्षित और प्रतिभूत ब्याज की वसूली होगी।

भारत के एक भूतपूर्व वित्त सदस्य डब्ल्यू० एन० मसी ने 1872 मे अपने साक्ष्य मे कहा 'रेलपथो पर व्यय की जाने वाली सारी धनराशि अगरेज पूजीपतियो से आती थी और जब तक उसे भारत के राजस्व म से पाच प्रतिशत ब्याज की प्रतिभूति प्राप्त थी, तब तक उसकी बला से चाहे उधार दी गई धनराशि हुगली मे फेंकी जाए अथवा ईंट गारा

बनाने के काम मे ली जाए।[6] इस दृष्टिकोण के फलस्वरूप जहा उचित व्यय पर सूद की रकम के भुगतान के लिए पर्याप्त आय होने की सभावना थी, वहा वास्तविक व्यय पर प्रतिभूत सूद के भुगतान के लिए ही आय अपर्याप्त रही और सरकार को स्वय ही घाटा पूरा करना पडा।[7] इस नियमित और बढते हुए घाटे ने राज्य के राजस्व को बुरी तरह से प्रभावित किया[8] और इसका अपरिहाय परिणाम यह निकला कि रेलपथो के निर्माण की गति को मद कर देना पडा। गवनर जनरल जान लारेंस ने जनवरी 1869 मे लिखे अपने विस्तत और सुबद्ध लेख मे यह सुझाव दिया कि वतमान व्यवस्था को, जिसके अतगत सारा लाभ कपनियो को मिलता है और सारा घाटा सरकार को उठाना पडता है,[9] समाप्त कर देना चाहिए। प्रतिभूति के लौटा लेने के फलस्वरूप यदि निजी उद्यम भविष्य मे रुपया लगाने को अग्रसर नही होते तो सरकार प्रतिभूति दर की अपेक्षा अथवा सीधे राजस्वो से रुपया लेने की अपेक्षा स्वय ही सूद की सस्ती दर पर ऋण लेकर रेलो का निर्माण तथा सचालन करे। भारत सचिव ने इस योजना को स्वीकार कर लिया और 1870 80 की अवधि मे स्वय सरकार ने अपने व्यय से ही रेलो का निर्माण किया। कुल 8,494 मील लबे रेलपथो मे से 1880 तक लगभग 2493 मील रेलपथ का निर्माण सरकारी अभिकरणो ने ही किया।

यद्यपि राज्य द्वारा सचालित रेल व्यवस्था प्रतिभूत रेल व्यवस्था की अपेक्षा आर्थिक दष्टि से अपेक्षाकृत सस्ती और अधिक सफल थी तथापि प्रधान रूप से निर्माण की गति को तीव्रता दने मे उसकी असफलता के कारण उसपर शीघ्र ही प्रहार किए जाने लगे।[10] लक्ष्यसिद्धि म राज्य के राजस्व अपर्याप्त सिद्ध हुए। 1880 के अकाल आयोग के सुझाव के अनुसार अकालो से सुरक्षित रहने के लिए देश को 20,000 मील लबे रेलपथ की आवश्यकता थी।[11] अकाल आयोग द्वारा अनुशसित रेलपथा के निर्माण मे द्रुतगति की प्राप्ति के लिए वतमान नीति से प्रत्यावतन की सवप्रथम लाड रिपन के नेतत्व म स्वय भारत सरकार द्वारा ही जबदस्त वकालत की गई। इस प्रश्न पर गभीरतापूवक विचार करने के लिए 1884 मे एक ससदीय प्रवर सीमित नियुक्त की गई। उसने रेला के निर्माण के द्रुतविकास और उसके लिए दोनो, राज्य तथा निजी, अभिकरणो से लाभ उठाने की सिफारिश की। इस उद्देश्य की प्राप्ति मे निजी उद्यम स्वत साहसपूवक आगे नही आ रहे थे अत सरकार को एक बार पुन प्रतिभूति व्यवस्था का सहारा लेना पडा। हा, यह बात अवश्य है कि इस बार शर्तें उतनी दु सह नही थी। राज्य अभिकरण का भी साथ साथ उपयोग चलता रहा। इसके उपरात तो रेलपथो का विस्तार ऐसी तीव्र गति पकड गया जिसे कुछ लोगो के अनुसार चरम गति कहा जा सकता है। 30 जून 1905 तक 359 करोड रुपये (अथवा 240,000 000 पौड) से निर्मित लगभग 28054 मील रेलपथो का यातायात के लिए उद्घाटन हो गया था।

अत मे 1905 तक भारतीय रेलपथ विकास के सक्षिप्त ऐतिहासिक सर्वेक्षण से प्राप्त उसके प्रमुख चार पक्षो को रेखाकित करना अनुचित न होगा

(क) सभी प्रकार की व्यावहारिकता की दृष्टि से भारतीय रेलपथो के निर्माण मे भारतीय पूजी की भूमिका नगण्य ही थी। इस काय की सिद्धि मे ब्रिटिश पूजी का ही

योगदान महत्वपूर्ण है। रेलपथो के निर्माण काय के लिए ब्रिटन से भारत आने वाली पूजी इतनी अधिक थी कि उस 19वी शताब्दी के विदशी निवेश की सबसे बडी एकाकी इकाई कहा जा सकता है।[1]

(ख) भारतीय रेलपथो के सबध मे घाटे के खतरे को उठाने का तैयार वास्तविक निजी उद्यम का लगभग अभाव ही था क्योकि इनके उन्नायक और रुपया लगाने वाले इस उद्यम की सामान्य आशकाओ को ही झेलने के लिए तैयार नही थे। वे या तो सरकारी प्रतिभूति मिलने पर ही काय सचालन को प्राथमिकता दत थे अथवा रेलपथो के निमाण के लिए सरकार द्वारा जारी किए गए ऋणपत्रो मे धन के निवेश के पक्ष मे थे।

(ग) शताब्दी के अत तक तो भारतीय रेलें अपने पर निवेशित पूजी पर देय ब्याज का ही चुकाने के योग्य नही थी। 1900 तक, जब उन्होने प्रथम बार शुद्ध लाभ कमाया, उस समय तक सरकार को प्रतिभूत ब्याज राशि के भुगतान के लिए 76 करोड रुपयो का भारी बोझा उठाना पडा।

(घ) समीक्षाधीन अवधि के अतिम वर्षों के दौरान कुल मिलाकर सरकार के लिए आर्थिक कठिनाइया और जनता के लिए अकाल और प्लेग जैसे रोगो के बावजूद रेलपथो का निर्माण पर्याप्त तीव्र गति से हुआ। जहा 1850 1891 की अवधि म 17308 मील लबे रेलपथो का निर्माण हुआ, वहा 1892-1905 की अपेक्षाकृत स्वल्प अवधि मे 10746 मील लबे रेलपथो का निर्माण हुआ। जैंक के निर्देशानुसार ग्रेट ब्रिटन तक मे रेलपथो का विकास इस तीव्र गति स नही हुआ था और फ्रास ने जिन रेलपथो को अपने यहा लगाया उनके निमाण की गति भारत की अपेक्षा मद थी।[13]

रेल विस्तार का गति विषयक राष्ट्रीय दृष्टिकोण

ज्यो ही कुछ वर्षों मे रेल के निर्माण काय ने वेग पकडा त्योही भारतीय मत के प्रवक्ताओ ने रेलपथो के विस्तार, सगठनात्मक तथा वित्तीय व्यवस्था पर अपने विचार और दृष्टिकोण के निर्धारण और प्रकाशन की आवश्यकता अनुभव की। उन्होने रेल के निमाण की गति विषयक अपने मे अत्यत महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार किया और उसकी आवश्यकता के बारे मे कोई सदेह नही किया।

भारतीय नेताओ ने न तो विशुद्ध सैद्धातिक आधार पर इस प्रश्न का उत्तर दिया और न ही रेलो के गुण दोषो पर उनके शुद्ध रूप मे विचारविमर्श किया। उनका दृष्टिकोण प्रमुखतया वतमान रेलो के भारतीयो के हितो पर और देश के आर्थिक जीवन पर पडने वाले प्रभाव की जानकारी के सदभ मे ही निर्धारित था। जी0 वी0 जोशी महोदय ने अपने लेख, 'दि इकानामिक रिजल्टस आफ फ्री ट्रेड ऐंड रेलवे एक्सटेंशन म इस तथ्य का विस्तत विश्लेषण प्रस्तुत किया। उनका यह लेख पूना सावजनिक सभा के अक्तूबर 1884 के जनरल म प्रकाशित हुआ। इस लेख मे उन्होने भारत के रेलपथो के असीमित प्रसार की माग के सबध म नोकमत को अभिव्यक्ति देने का दावा करते हुए लिखा

जो सज्जन इसकी पूव प्रदर्शित बुराइयो को तथा भविष्य मे और अधिक सपीडक बुराइयो की चेतावनी को भली प्रकार और पूण रूप से सिद्ध मानते है, उनका यह क्तव्य हो जाता है कि वे उन सिद्धातो पर शात चित्त से विचारविमश करें जिनके आधार पर एक पक्षीय विकास की वकालत की जा रही है। वे सज्जन इस सबध मे देश की अथव्यवस्था पर भविष्य मे सम्मानित दुष्परिणामो के सदभ मे स्थिति की समीक्षा करें। इस सबध मे राज्य के विगत काय के देश की आर्थिकता और आय-व्यय स्थिति पर पडे प्रभावो पर गभीर विचार किए बिना इस प्रश्न का उत्तर देना सगत नही होगा।[14]

रेलो का आर्थिक प्रभाव

ब्रिटिश दृष्टिकोण के अनुसार देश पर वतमान रेलो का प्रभाव पूणत सुखद ही पडा है।[15] प्रारभ मे ही रेलो के द्रुत विकास की वकालत करते हुए ब्रिटिश अधिकारियो ने लोकोपकार की अपील की और घोषणा की कि रेलो से दश की दरिद्रता और दुर्भिक्ष के उन्मूलन मे सहायता मिलेगी। 1844 मे भारत मे रेलो के अग्रदूतो मे प्रमुख जान चैपमैन ने निम्नलिखित टिप्पणी मे भारतीय रेलो के उद्देश्य का समथन प्रस्तुत किया 'राजमार्गों का अभाव दरिद्रता का अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट कारण है और रेलें भारतीयो को दरिद्रता से समृद्धि की और लाने का साधन है।'[16] 1884 की ससदीय प्रवर समिति ने इस तक पर रेलो के द्रुत विस्तार का समथन किया कि इसस देश को दुर्भिक्षा से सरक्षण मिलेगा, बाहरी और भीतरी व्यापार को गति मिलेगी, उपजाऊ प्रदेश और कोयले की खानें खुलेंगी और कुल मिलाकर जनता की आर्थिक स्थिति मे सुधार होगा।[17] 1896 मे गवनर जनरल लाड एलगिन ने बडे ही आत्मविश्वास के साथ घाषणा की कि रेलो का निर्माण कृपि पर निमर भारत की बहुसख्यक जनता की भौतिक स्थिति मे एक निश्चित और निरतर सुधार का साधन है।' उसने आशा प्रकट की कि भारत की महान रेल व्यवस्था को देश की जनता की भौतिक सपन्नता, सामाजिक प्रगति और राजनीतिक शाति का एक अत्यत सशक्त अभिकरण बनाया जा सकता है।[18]

दूसरी ओर भारतीय नेताओ का निष्कप सवथा विपरीत था। हा, उन्होने रेलवे के वास्तविक और सभव निम्नलिखित प्रधान लाभो को दृष्टिगोचर अवश्य किया सस्ती और द्रुत परिवहन की व्यवस्था, राष्ट्रीय सद्भाव और सगठन म प्रगति, नई मडी का उद्घाटन, आजीविका के नवीन साधनो की सृष्टि, स्वदेश तथा विदेश व्यापार को प्रोत्साहन, दुर्भिक्षो का निरोध, कृपि फसलो के उत्पादन मे गतिशीलता, उद्योगीकरण की प्रक्रिया पर प्रत्यक्ष प्रभाव इजिनियरिंग उद्योगो और कमशालाओ को प्रत्यक्ष प्रोत्साहन और सामान्य रूप स देश के उद्यम का क्षेत्रविस्तार।[19] परतु उन्होने ब्रिटिश अधिकारियो के समान सभव और यथाथ के अतर को विकृत नही होने दिया। यह सत्य है कि रेल के प्रारभिक वर्षों मे और विरल रूप से कालातर मे भी कुछ भारतीय नेता रेलो द्वारा सपन्न किए जाने वाले कार्यों से चुधिया गए थे तथा रेलो के द्रुत विकास की माग म ब्रिटिश नेताओ का हृदय से साथ देने लगे थे।[20] किंतु, जब उन्होंने वास्तविक लाभो की यथाथ

परीक्षा की तो उन्ह निराशा ही हाथ लगी क्योकि उन्ह लगा कि कुछ लाभो का तो कोई अस्तित्व ही नही था और कुछ रेलो के निर्माण से होने वाली हानियो के परिणामो म ही नामशेष हो गए थे।

1883 मे दादाभाई नौरोजी न शिकायत की कि भारत का दुर्भाग्य यह है कि अन्य प्रत्यक देश जो रेलो से मिलने वाले लाभ इस उपलब्ध नही। 1888 म जोशी महाशय न टिप्पणी की कि राष्ट्र की औद्योगिक गतिविधि के विविध विकास के लिए रेलवे का अथ व्यवस्था पर पडने वाला प्रभाव अत्यत हानिकारक सिद्ध हुआ है। उन्होंने भारत जस देश मे सामान्य गति से स्वस्थ भौतिक विकास की दिशा मे बाधक बनने की रेलवे की प्रवत्ति की निदा की। 1897 म डी० ई० वाचा ने वेलबी आयोग के समक्ष कहा रलवे से अथव्यवस्था तथा प्रबध व्यवस्था की दष्टि स जनता को कुछ हानिया ही पहुची हैं।' 1898 मे जी० एस० अय्यर ने बलपूवक कहा कि वतमान रेलवे नीति देश के लिए 'बहुमुखी रोग' सिद्ध हुई है। आर० सी० दत्त का विश्वास था कि कुल मिलाकर रेलवे के आर्थिक प्रभाव लाभप्रद नही थे। तिलक महोदय ने तो इनके विकास के समय ही अपना विश्वास प्रकट करत हुए कहा था रेल तार और सडक जसे साधनो की भारत के लिए कोई उपयोगिता नही। वे तो एक प्रकार से 'दूसरे की पत्नी को अलकृत करने' के समान हैं। यहा तक कि जस्टिस रानडे का भी यही मत था कि रेलो ने भले ही और कितना लाभ पहुचाए हो परतु उन्होने राष्ट्र की प्रगति को पगु बनाने वाली निधनता रूपी विशेष दुबलता का कोई प्रतिकार नही किया।[2] बहुत सारे भारतीय समाचारपत्रो न इसी प्रकार के परतु अत्यधिक उग्र समीक्षापरक विचार प्रकट किए। उदाहरणाथ, 30 अप्रल 1884 के अक म सहचर ने तीव्रता स लिखा 'लौहपथो के विस्तार का अथ लौहबधन' है। 31 मई, 1891 के अक मे दनिक-ओ-समाचार चद्रिका ने घोषणा की कि 'रेलें देश को दरिद्रता के गत म धकेल रही है। 29 जून 1903 के अक मे 'मदोवत्त' ने अपनी धारणा प्रस्तुत करते हुए लिखा रेलें देश के लिए 'वरदान के स्थान पर अभिशाप' ही सिद्ध हुई है। इदु प्रकाश ने अभियोग लगाते हुए लिखा रेलो ने भारतीय समृद्धि को क्षति पहुचाई है।

राष्ट्रवादियो ने रेलो का घातक प्रभाव सवप्रथम औद्योगिक गतिविधि को पहुची क्षति के रूप म ही देखा भारतीय बडे उद्योग के रूप मे समकालीन औद्योगिक क्राति के अभाव मे परिवहन क्राति ने भारत के वतमान भारवाहक उद्योग को विनष्ट कर दिया था। इग्लड के सस्त मशीनी उत्पादनो ने भारतीय हस्तशिल्प उद्योगो के उत्पादनो की बिक्री को प्रभावित करके इन उद्योगो का गला ही घोट दिया। भारत की अथव्यवस्था को सहारा देने के बदले रेलो ने तो उसे गढे म ही धकेल दिया। भारत का धीरे धीरे ग्रामीकरण होता गया और वह धीरे धीरे ब्रिटेन की अन्न उगाने वाली बस्ती मे बदल गया। 1884 मे जी० वी० जोशी ने लाड डलहौजी और उसके उत्तराधिकारियो की उस रेलनीति पर शोक प्रकट किया जिसने आश्चयजनक रूप से थोडे ही समय मे देशी उद्योगो का सफाया कर दिया था और देश को दिवालियपन और विनाश के कगार पर खडे करके उस चरम पतन की ओर उन्मुख कर दिया था।[3] जस्टिस रानाडे भी वतमान रेलनीति

की निंदा मे पीछे नही थे। उन्होने कहा 'रेलो ने अनेक क्षेत्रो मे भारत की यूरोप के साथ निराशाजनक प्रतियोगिता उत्पन्न कर दी है और यूरोप के सामान को परिवहन की सुविधाए इस हद तक जुटाई है जो किसी भी अन्य साधन से सभव नही थी। कुछ प्रमुख नगरो को छोडकर रेलो ने स्थानीय देशी उद्योगो को नष्टभ्रष्ट ही कर दिया है और एकमात्र अवशिष्ट साधन—कृषि पर लोगा की निभरता बढाकर उन्हे पहले से भी अधिक असहाय बना दिया है है।"[4] जी० एस० अय्यर ने पूणतेजस्विता के साथ उदघोष किया 'इस देश मे रेलपथ के प्रत्येक अतिरिक्त मील का निर्माण देश के किसी न किसी उद्योग के कफन म एक नया कील है। [5] और इसी तेजस्विता के साथ उन्होने लिखा रेलो को भारतीय जनता को उन्हे दुर्भाग्यग्रस्त बनाने वाली निधनता के फैलाव के लिए उत्तर देना ही पडेगा। [6] इसी प्रकार के विचार अन्य लोकनेताओ तथा भारतीय समाचारपत्रो ने भी प्रकट किए।"[7]

जी० वी० जोशी न और गहराई से अनुभव किया कि वस्तुत रेलो पर प्रतिभूत ब्याज के सरकारी व्यय विदेश व्यापारी के लिए एक प्रकार के सहायक का ही काय करत थे। उन्होने विरोध प्रकट करते हुए कहा इस प्रकार तो भारत को विदेशी व्यापारी अथवा उसके देशवासियो को अनुग्रह राशि देने के रूप मे उसे स्वदेशी उत्पादको के साथ प्रतियोगिता की सुविधाए जुटाने के लिए विवश किया जा रहा है।"[8] विदेशियो के साथ पहले से ही प्रतियोगिता मे असमान भारतीय व्यापारी को इस विधि से तो और भी अधिक पगु बनाया जा रहा है।

कुछ भारतीय नेताओ का कथन था कि रेलपथो का निर्माण स्वदेशी उद्योगो के विनाश की एक अपरिहाय प्रक्रिया नही है। इस औद्योगिक और परिवहन क्रांति का यह परिणाम अन्य देशो मे नही हुआ है। रेलो ने सभी देशो मे नए प्रकार की औद्योगिक गतिविधि की प्रतिष्ठा चाहे की हो परतु भारत के विषय मे इस दुखद स्थिति का कारण यह है कि यहा रेलो ने उत्पादक गतिविधियो की रक्तवाहक धमनियो मे रक्त सचार का काय ही नही किया क्योकि उनका प्रधान उद्देश्य इग्लैड मे कायलाखानो मे काम करने वालो, इस्पात और मशीनी निर्माण काय मे सलग्न लोगो को काम जुटाना था न कि भारत म। स्वभावत आतरिक मडी के विस्तार के सारे लाभ ब्रिटिश उत्पादको को ही उपलब्ध हुए, भारतीय उत्पादको को नही।[29] इससे रेलो का विकास भारतीय अथव्यवस्था के अतगत और क्रमिक रूप से समजन करत हुए नही हुआ परतु घातक दुष्प्रभावो की उपेक्षा करते हुए इसे भारत पर थोप दिया गया। इसपर क्षुब्ध होकर जी० एस० अय्यर ने पूछा 'क्या विनाश की प्रक्रिया को मद और क्रमिक नही बनाया जा सकता जिससे लोगो को सास लेन का समय तो प्राप्त हो सके।'[30]

हा, नई पद्धति के कुछ एक उद्योगो, विशेषत बागान उद्योगो, को रेलव से सपन्नता अवश्य मिली परतु उसके अधिकाश लाभ भी विदेशी उद्यमियो न डकार लिए। इस प्रकार का आर्थिक विकास निश्चित रूप से विदेशी पूजी द्वारा देश का शोषण ही था।[31]

रेलो का दूसरा हानिप्रद परिणाम था देश से धन की निकासी म बढोतरी। भारतीय नेताओ का कथन था कि भारत की विचित्र राजनीतिक स्थिति के कारण रेलपथो का

निमाण विदेशी पूजी से किया गया है और उनका प्रमागन भी बहुत से विदेशी कमचारियो के हाथ मे है। इसके फलस्वरूप भारत द्वारा ब्याजा और लाभो के, आयातित सामान के, यूरोपीय कमचारियो की सेवाओ के और इग्लड म प्रबध व्यवस्था पर हान वाले व्यया के भुगतान के रूप म धन की विपुल राशि इगलड को भेजनी पडती है। ब्याजा के भुगतान की राशि भले रेल व्यय का एक स्वल्प भाग थी परतु विदेशी धन से रेलो का निमाण करन वाल सभी देशा को यह राशि सामान्य रूप से ही चुकानी पड रही थी। राजनीतिक दष्टि स स्वतत्र अन्यान्य देशा की अथव्यवस्था पर पडने वाले प्रभाव के मुकाबले भारत की अथव्यवस्था पर पडन वाला प्रभाव नितात और स्पष्ट रूप से भिन था।[3] धन की बढती हुई निकासी ने रेलो के अन्यान्य लाभो को सवथा नष्ट भले ही न किया हो परतु उन्ह धुधला अवश्य कर दिया था। यही कारण था कि दादाभाई नौरोजी ने 1876 म विस्मित होत हुए कहा था यहा रेलो तथा दूसरे लोक कार्यों की व्यवस्था तो होनी चाहिए परतु उनका स्वाभाविक लाभ हम पहुचना चाहिए अन्यथा एक भूखे व्यक्ति के सामने बढिया खाने के आनद की चर्चा करना व्यथ है।[34] जी० एम० अय्यर ने टिप्पणी करते हुए कहा स्वतत्र भारत रेल द्वारा प्रदत्त अन्य लाभो के बदले इस धन की निकासी को भी सहन कर लेता परतु भारत को तो पहले से ही अन्यान्य मदा मे लगभग तीन करोड पौड विदेशो को दना पडता है। अतएव भारत रेलो द्वारा की जा रही धन की अतिरिक्त निकासी को किसी भी प्रकार सहन करने की स्थिति म नही है।[35]

राष्टवादियो द्वारा रेलो की एक अन्य कटु समीक्षा का कारण यह था कि रेलें अनाज के निर्यात को सुविधाजनक बनाकर देश म सामान्य काल म भी अनाज की अपर्याप्तता की स्थिति उत्पन्न कर रही थी तथा देश का अपन सामान्य अतिरिक्त अनाज से शून्य करके उस प्राय आने वाले दुर्भिक्षो का ग्रासान शिकार बना रही थी।[36] इस धारणा ने इतना अधिक व्यापक रूप ल लिया कि अतत लाड कजन को 1901 02 के वित्त प्रतिवेदन के समापन भाषण म इसका उत्तर देन को विवश होना पडा। उसने इन तर्कों का प्रथम स्तर का और सवथा निराधार एक भ्रम बतात हुए इस तथ्य का सवथा नकार दिया कि रेलो से अनाज के नियात म किसी प्रकार की वद्धि हुई है अथवा इस प्रकार की वृद्धि मे रेल किसी प्रकार से कारणभूत है। उनके विचारानुसार तो यह भी सत्य नही था कि भारत के कुल उत्पादन के एक बहुत बडे भाग का निर्यात किया जाता था। उसका कथन था कि सत्य इसके विपरीत है। रेलो ने फालतू अन्न क्षेत्र से अभावग्रस्त क्षेत्र मे अन्न पहुचाने की, विदेशी बाजारो से अन्न के आयात को सभव बनाने की तथा इस प्रकार स दुर्भिक्षो की प्रचडता का मद करने की सामथ्य जुटाई है।[3] इस कथन के विरुद्ध भारतीयो ने तत्काल अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त की, रेलो के प्रधान समथका न ही यह दावा करना छोड दिया है कि रेलें दुर्भिक्षो का रोकने मे समर्थ हैं। उनका कथन था कि आयातो तथा आतरिक पुर्नवितरण रेलो के द्वारा दुर्भिक्षो की तीव्रता को मद करने के दावे को भी 19वी शती म पडे गये दुर्भिक्षो के अनुभव ने झुठलाकर रख दिया है।[39] जी० एस० अय्यर न तक दिया कि इन दुर्भिक्षो के समय बर्मा के सिवाय किसी भी अन्य देश से अनाज का आयात नही किया गया। इतना ही नही प्रत्युत उस अकाल की अवधि मे भी अनाज के द्रुत निर्यातो द्वारा

क्षुद्र आतरिक सभरण को और भी मद कर दिया गया।[39] समस्या का एक अन्य दृष्टिकोण से परखते हुए 'बगाली' ने 28 अप्रल 1901 के अक मे तर्क प्रस्तुत किया रेलो ने वाणिज्य फसलो के निर्यात को उत्तेजित करके अप्रत्यक्ष रूप स देश के खाद्य सभरण को क्षतिग्रस्त किया है क्योकि इसका परिणाम यह हुआ है कि कृषक खाद्य फसलो के स्थान पर नकदी फसलें उपजाने लगे हैं।'

राष्ट्रवादी नेताओ ने इस ओर भी निर्देश किया कि भारतीय रेलें व्यापारिक दृष्टि स भी सफल नही थी क्योकि वे पिछली एक लबी अवधि मे विशेषत 19वी शताब्दी के अत तक आत्मनिर्भर ही नही थी और घाटे की पूर्ति विदेशी निवेशको के बदले भारतीय सरकार के रूप मे भारतीय जनता द्वारा ही की जाती थी। उन्होने बार बार और जोर देकर कहा कि भारतीय जनता की घोर दरिद्रता के सदर्भ मे इन घाटो का बोझ असह्य रूप स भारी था और किसी भी रूप म रेलो से प्राप्त लाभो के समकक्ष नही था।[40] डी० इ० वाचा महोदय ने 1901 मे काग्रेस के सभापतीय अभिभाषण मे रेलो की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए स्पष्ट शब्दो म प्रश्न उठाया कि 'क्या भारत जसे किसी भी दरिद्रतम देश के लिए इन वार्षिक घाटो की विलासिता का जुटा पाना सभव है ?'[41]

कुछेक भारतीय नताओ न यह भी देखा कि प्रचलित रेल नीति न जहा सामान के आयात निर्यात को निरतर प्रोत्साहन दिया है, वहा देश के आतरिक व्यापार और उद्योग के विकास के प्रति उपेक्षा ही नही दिखाई प्रत्युत उसपर प्रहार भी किया है।[4] जी० एस० अय्यर महोदय 1898 म रेलें व्यापार का जीवन ह नाम की सारणी जाच करत हुए इस परिणाम पर पहुचे कि 1891-2 स 1896-7 की अवधि म रेलो तथा नौकाओ द्वारा एक प्रात से दूसरे प्रात मे ढोए गए माल की कुल मात्रा, पत्तनो के लिए ढोए गए सामान को छोडकर, प्रतिवर्ष 130 451 000, से 167, 65, 640 मन के बीच थी, जबकि इसी अवधि म पत्तनो के लिए ढोए गए व्यापारिक माल की मात्रा 165,105,000 से 185, 199,000 मन के बीच थी।[43] उन्होने एक अन्य स्थान पर कहा कि यदि प्रशासन का उद्देश्य आतरिक उद्योग का विकास करना होता तो ग्रामीण क्षेत्रो मे ही परिवहन साधनो की ओर अधिक ध्यान दिया जाता।[44] 1888 म आयात निर्यात को प्रोत्साहन देने वाला दर नीति की प्रवृत्ति पर जी० वी० जोशी ने अत्यत विलक्षण सूक्ष्म बुद्धि से गहरे विचार प्रकट किए। उन्होने इस तथ्य की ओर देखा और इसकी तीखी आलोचना की कि भारतीय रेलपथो पर सामान ढुलाई की दर बहुत ही नीची है यहा तक कि इग्लड के दरो से और कितने ही अन्य यूरोपीय देशो के रेलो की दरो से नीची ह। यही कारण है कि उससे सेवा प्रभार तथा ब्याजो का भुगतान ही नही जुट पाता और प्रतिभूत प्रणाली के अतर्गत सारा घाटा राजस्व से पूरा करना पडता है। उन्होने निष्कर्ष रूप मे कहा, नीची दरो के कारण किए जाने वाले भुगतान विदेशी व्यापार के सवर्धन के लिए ही चालू रखे जा रहे हैं और यह वस्तुत राज्य द्वारा विदेश को उसके व्यापार पर दिए जाने वाला उपहार ही है।[4] इन कुछेक कुशल निरीक्षको को छोडकर अन्य भारतीय नेताओ ने रेल समस्या के इस पक्ष की कुल मिलाकर उपेक्षा ही की।[46] इसका एक प्रधान कारण यह था कि भारतीय उद्योग अभी रेलो की दर नीति को चुनौती देने मे पर्याप्त सशक्त नही था। ... ति

उनका विकास अधिकाश पत्तन नगरा म हो रहा था, जहा के पत्तना के हर मे रेल दरो से सामान रूप स लाभान्वित हो सकत थे। इस प्रकार न ता राष्ट्रीय नेतृत्व के किसी भी वग न किसी भी स्थिति म सामान ढुलाई की दरा का सामान्य रूप म और विदेशा क निर्धारित किए जाने वाले कच्चे माल की ढुलाई की दरा का विशेष रूप से घटाने का आग्रह किया और न ही देश के विकासशील व्यवसायी उद्यमी वग ने इस प्रकार की कोई माग प्रस्तुत की।[47]

भारतीय नेताओ के अनुसार यदि सरकार ने उद्यम के क्षेत्र मे एक सवथा नए उद्योग के रूप मे आविर्भूत रेल उद्योग को समुचित समय पर भारतीयो द्वारा अपने हाथ म सभालने के लिए तथा प्रशासन मे उन्ह अधिकाधिक भागीदार बनाने के लिए समुचित प्रबध किए होते तो भारतीय अथव्यवस्था का विकृत करने वाले तथा पूजी के भार से दबाने वाले रेल उद्योग के धूमिल चित्र म भी आशा की एक रजत किरण दिखाई दती, परतु उनका यह स्पष्ट अनुभव था कि रेला के निमाण का प्रोत्साहन देत समय यह विचार विदेशी शासको के मस्तिष्क मे ही नही था। इसके विपरीत राज्य और रेल कपनियो दोना ने भारतीया को ऊचे पदा और तकनीकी स्थानो म कोसा दूर रखा। इसी का परिणाम था कि आज सरकार के निरतर पच्चीस वर्षों के दिशा निर्देशन क उपरात भी देशवासी रलपथ के निमाण काय का अथवा रेल प्रबध को सभालन म उतन ही अयोग्य थे जितने उस समय थे जब लाड डलहौजी न पहली बार भारत को रेलपथा क जाल से ढकने की योजना का स्वीकृति दी थी।[49]

जी० वी० जोशी और जी० एस० अय्यर महानुभावो के अनुसार रला का एक राज नीतिक प्रभाव भी था जो अत्यत घातक सिद्ध हो सकता था। जाशीजी के अनुसार राष्ट्र के हिता के लिए सवथा हानिकारक जमाखोरा का एक प्रबल विदशी कुलीन तत्र अस्तित्व म आ रहा था। अय्यर महादय के अनुसार विदेशी रेल कपनिया तो भारतीया के हिता को आघात पहुचाने वाले तथा पहल से ही अत्यधिक शक्तिशाली विदेशियो के निहित स्वार्थों म और अधिक वद्धि ही करेंगी।[50]

उस युग के किसी भी महत्वपूण भारतीय विचारक की दष्टि मे न आए हुए रेला के प्रभाव के कुछ पक्षो का यहा अध्ययन रोचक होगा। प्रथम, कृषि म व्यावसायिक क्राति अर्थात नकद उपजा की जोतसीमा म विस्तार तथा स्थानीय उपजा म विशिष्टीकरण पर जो कदाचित पूणतया न सही आशिक रूप से अवश्य ही रेला की ही दन थी, किसी विचारक ने टिप्पणी नही की। दूसरे यद्यपि कभी कभी मूल्या की समानता के तथ्य को अभिलिखित किया गया[51] तथापि रेलो द्वारा सारे देश मे मूल्यो की समानता की कल्पना के अथशास्त्रीय महत्व को भी भुला ही दिया गया। अतिम, रेला द्वारा भारतीय व्यापार और पूजी के भारत के ग्रामो म पहुचन के लिए जुटाए गए अवसरो की ओर भी किसी का ध्यान नही गया और इसलिए इन किसी न अनुकूल विकास के रूप मे स्वीकार नही किया।

यहा यह ध्यान मे रखना आवश्यक है कि जैसाकि अभियोग लगाया गया है सामाजिक रूढिवादिता के साथ साथ स्थिर अप्रगतिशील अथव्यवस्था के आदश की दष्टि स रला

और रेलो के भारत पर प्रभाव की भारतीय नेताओ द्वारा आलोचना नही की गई।[5] रेलो के सभी भारतीय आलोचक न केवल आधुनिक उद्योगा के प्रबल पक्षधर थे प्रत्युत उनमे से अधिकाश प्रगतिशील विचारो के व्यक्ति थे। यह हम पूववर्ती अध्याय मे पहले ही दिखा चुके हैं कि लोकप्रिय समाचारपत्रा तक मे जहा थाडी-बहुत रूढिवादिता छाई हुई थी वतमान समाजव्यवस्था को नष्ट-भ्रष्ट करन वाली के रूप मे, रेलो की मामूली सी ही आलोचना की गई।[53]

वस्तुत भारतीय नेता रेलो के विरुद्ध कदापि न थे। वे तो उस विशेष समय मे उसकी सचालन पद्यति के ही विरोधी थे।[54] भारतीय अथव्यवस्था पर रेलो के वास्तविक प्रभाव की जाच करने पर उन्हे यह विदित हुआ कि अधिकारियो द्वारा पहले से दिलाई गई आशाओं और अपेक्षाओ के विरुद्ध रेलें, पूण वरदान नही थी और भारतीय अथव्यवस्था के सतुलन पर उनका प्रभाव निषेधात्मक था। वे भारतीय अथव्यवस्था के वतमान पिछडेपन को जारी रखन वाली और उसे बढाने वाली ही थी। रेलो से जो कुछ भी लाभ उपलब्ध हुए थे, वे सारे के सारे विदेशी व्यापारियो न ही हडप लिए थे। अतएव उनका यह निष्कष था कि रेलें, जो सशक्त समद्धिप्रद हो सकती थी इस समय एक सकट बनी हुई थी। भारत के राजस्व पर पडने वाले आर्थिक भार के अनुरूप वे कदापि वाछनीय नही थी और जसाकि हम आगे चलकर दिखाएगे, भारतीय नेताओ की उस समय निश्चित धारणा थी कि यदि भारतीय अथव्यवस्था को प्रोत्साहन देना ही उद्देश्य है तो इन आर्थिक साधनो का रेलो के बदले और कही अच्छी प्रकार से उपयोग किया जा सकता है।

ब्रिटिश उद्देश्य

भारतीय राष्ट्रीय नेताओ के इस निष्कष से यह प्रासगिक प्रश्न उत्पन हुआ कि ब्रिटिश अधिकारी और लेखक रेला के द्रुत निर्माण के लिए इतना अधिक दवाब क्यो डाल रहे है? भारत के शासक विशेषत 1884 के उपरात और लाड एलगिन और लाड कजन की वायसरायी की अवधि मे इस काय के लिए असाधारण रुचि और उत्साह क्यो दिखा रहे हैं? अथवा प्रश्न का इस रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है कि रेलो का उद्देश्य किसके हितो की सेवा करना है? ब्रिटेन द्वारा प्रस्तुत यह विश्लेषण सहजता से भारतीयो के गले के नीचे नही उतर पा रहा था कि रेलपथो का निमाण लोकसवा के उद्देश्य से प्रेरित है। उन्हे यह विश्वास ही नही होता था कि उनके शासक भारतीयो के हितसाधन की भावना से ही इस काय मे प्रवत्त हुए है अथवा रेल निर्माण के पीछे भारत के आर्थिक विकास की सच्ची प्रेरणा ही काम कर रही है। वे इस तथ्य को स्वीकार करते थे कि किन्ही मामलो मे रेलो के प्रति उत्साह अज्ञान और यूरोप की स्थितियो के साथ भारत की स्थितिया की गलत तुलना का परिणाम हो सकता है।[55] उनका निश्चित मत था कि ब्रिटेन के उद्देश्य वास्तव मे ही कुल मिलाकर अत्यत निम्नस्तर के कलुषित और स्वाथपूण थे। ये प्रयोजन अपन तात्विक रूप म उन ब्रिटिश व्यापारियो उत्पादको और निवेशको के हितो की पूर्ति करत है जिनके निरतर दबाव के अनगत भारतीय राजस्व के व्यय और खतरे के मूल्य पर

रेलो का निमाण किया गया है और किया जा रहा है। रेलपथो का जाल बिछान का वास्तविक उद्देश्य ब्रिटिश उद्यम ता भारत के प्राकृतिक साधनो के शोषण मे सहायता देना ही है।[5]

भारतीयो के अनुमार भारत मे रेल निमाण को गतिशील बनाने वाला एक महत्वपूर्ण कारण भारत के शासको की यह इच्छा थी कि भारत के आन्तरिक प्रान्तो म एक विस्तृत आर वास्तव मे अब तक न दोही गई एक एमी मडी खाली जाए जो एक आर ब्रिटिश उद्योगो के उत्पादनो को खपाए और दूसरी आर ब्रिटन की भूखी मशीनो और प्राणियो के लिए समग्र कच्चे माल और खाद्यान्नो के नियातो की सुविधाए जुटाए। इस प्रकार भारत को ब्रिटेन के लिए कच्चे माल का सभरण करने वाले कृषि उपनिवेश के रूप म परिवर्तित करना ही भारत के शासको की इच्छा थी।[5]

सरकारी रेल नीति के प्रवतन म विदेशी व्यापार की आधारभूत भूमिका पर प्रकाश डालते हुए बहुत से भारतीय विचारको ने इस नीति की सरचना म उनकी अपनी दृष्टि म उत्तरदायी थ य अनक दबावो और प्रयोजनो की भी चर्चा की। उनम स एक इगलड के इस्पात उद्योग के सामान की खपत मशीनरी लोह की पटरिया, इजिन, डिब्बे और दूसरी मशीनें तथा मयन्त्र के नियातो क द्वारा निकासी की व्यवस्था की आवश्यकता थी।[55] रेल असख्य अगरेजो का निदेशक स लेकर टिकट वसूलने वाले तक के रूप मे लाभप्रद नौकरियो की सुविधाए भी जुटाती थी।[57] कुछ भारतीय नेता सही तौर पर यह समझने म भी सफल हो गए, यह समझ उनकी समकालीन आर्थिक प्रक्रियाओ की गहरी समझ की परिचायक है, कि राज्य के स्वामित्व वाली तथा कपनी के स्वामित्व वाली दोनो रेलें फालतू ब्रिटिश पूजी के सुरक्षित और लाभप्रद निवेश के स्रोत का काय करने का उद्देश्य लिए हुए ह आर इस दिशा म प्रवत्त भी है। इस सबध मे कुछ विचारको की इस समझ की भी झलक मिलती है कि रलें भारत पर विदेशी शासको के राजनीतिक प्रभुत्व को सुदृढ बनाने का ही आधार थी।

सरकारी नीति के उद्देश्यो क प्रति राष्ट्रीय दृष्टिकोण को जी० एस० अय्यर महोदय ने 1898 म बडी सफलतापूवक सक्षेप्त निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया

> इगलड के निवेशक, कपनी के उन्नायक, धनकुबेर, लोहाधिपति, कोयला स्वामी, रेलवे इजीनियर और निदेशक तथा इन सबसे बढचढकर अपनी पेंशन में महत्वपूर्ण वद्धि की इच्छा रखने वाले सेवानिवत्त ऐंग्लो भारतीय कमचारी, सबके सब भारत म रेलो के निर्माण को द्रुतगति देने म रुचि रखते हैं। व यूरोपीय व्यापारी भी जिनके हाथ म भारत का सारा विदेश व्यापार है और जिनका व्यापार अब समुद्र के तटवर्ती नगरो तक सीमित न रहकर भारत के ग्राम प्रान्तो मे फैलता जा रहा है, समान रूप म भारतभूमि म रेलो के जाल के प्रसार के लिए उत्सुक है।[6]

बहुत सार भारतीयो ने अनुभव किया कि यह सारी दुखद स्थिति अत्यत क्षोभप्रद हो जाती थी जब भारतीयो के हितो की बलि चढाकर रेलो के सारे लाभ इगलड उठाता था और उनके भार को भारत उठाता था।[63] इससे यह विचित्र प्रक्रिया देखने मे आई कि "मानव दायित्व के नाम पर ब्रिटिश शासक उस देश की सहायता कर रहे थे जिसे कम स

कम भारत की महान दुर्भाग्यग्रस्त निर्भरता को भी शक्तिहीन करने के मूल्य पर, उसकी आवश्यकता कदापि नहीं थी।[64]

भारतीय कसौटी

भारत सरकार की रेल नीति को ब्रिटेन की आवश्यकताओं से प्रेरित सिद्ध करने के उपरांत कुछ भारतीय नेताओं ने रेल विकास की गति और इस महत कार्य की प्राथमिकता के निर्धारण के लिए अपनी एक कसौटी निश्चित की आवश्यकता अनुभव की। इस समस्या पर उनका विचारविमर्श न केवल उनकी परिवहन नीति पर और उनके विचारानुरूप देश की अर्थव्यवस्था के विकास में उसकी भूमिका पर प्रकाश डालता है, प्रत्युत स्वयं उनके दृष्टिकोण के आर्थिक विकास की रूपरेखा को भी उजागर करता है।

सर्वप्रथम, उनका सर्वथा उपयुक्त और सुदृढ़ तर्क था कि रेलों को भारत की वर्तमान विशिष्ट आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों में देश के आर्थिक विकास में उनके योगदान के संदर्भ में ही देखना चाहिए।[65]

द्वितीय, उनका मंतव्य था कि परिवहन और उद्योग में उद्योग का महत्व प्राथमिक और परिवहन का महत्व गौण है क्योंकि किसी भी उपयुक्त रूप में देखें तो आर्थिक विकास का आधार उद्योगीकरण ही है। जी० वी० जोशी ने 1884 में लिखा औद्योगिक प्रगति अंततः आवश्यक रूप में उत्पादन वृद्धि पर निर्भर है न कि अंतर्राष्ट्रीय विनिमय की सुविधाओं की वृद्धि पर। वस्तुतः उद्योगों का एक सामान्य समन्वय राष्ट्र की समृद्धि का जीवन रक्त है।[66] इसी तथ्य की सबल पुष्टि में बंबई के नेटिव ओपीनियन ने 25 मई 1884 के अंक में रेल प्रवर समिति की कार्यवाही पर टिप्पणी करते हुए लिखा

> हमारी विनम्र सम्मति में भारत में रेल प्रसार के विषय से संबंधित वर्तमान समिति की अपेक्षा विभिन्न उद्योगों के प्रारंभ की योजना की परिकल्पना के लिए एक आयोग की स्थापना अपेक्षाकृत अधिक लाभदायक होगी। इस दिशा में विकास का अर्थ हमारे साधनों का समुचित रूप में विकास नहीं है।

जी० एस० अय्यर ने भी इस विषय पर बल देकर कहा

> सरकारी राजस्व धन संपत्ति के उत्पादन के संवर्धन पर खर्च न होकर केवल सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए खर्च किए जा रहे हैं। यह एक स्पष्ट बात है कि जो थोड़ी सी संपत्ति पहले से ही विद्यमान है उसको इधर-उधर करने की अपेक्षा नई संपत्ति के उत्पादन का लक्ष्य अधिक महत्वपूर्ण है।[67]

इसके अतिरिक्त रेलों की अपने आप में उपयोगिता देश की उत्पादन शक्ति पर निर्भर है[68] अर्थात राष्ट्रीय आर्थिकता और उद्योग द्वारा उनके उपयोग की क्षमता पर आश्रित हैं। जब तक रेलें राष्ट्रीय उद्योगों के अपेक्षाकृत अच्छे संगठन के लिए लाभप्रद अन्य अधिक महत्वपूर्ण साधनों को साथ नहीं ले पातीं तब तक वे अकेले उस देश की प्रबल शक्ति में योग नहीं दे सकतीं, जो अकेले ही उनकी व्यापक महत्ता की सुदृढ़ आधारशिला की व्यवस्था करता है।[69] जब और ज्यों ही देश का उद्योगीकरण हो जाएगा तब अधिकाधिक रेलें भी बनाई जा सकेंगी। परंतु इस समय जबकि देश कृषिप्रधान है, तब

रेलपथो का निर्माण सर्वथा निरर्थक ही है।[0] इसके विपरीत यदि रेलो के साथ साथ भारत के उद्योग और व्यापार का विकास होता तो रेलो का विकास स्वस्थ और लाभप्रद भी होता और जन समर्थन का अधिकारी बनता।[1] उदाहरणार्थ 30 अप्रैल 1884 के अक मे सहचर ने लिखा

> पहले से बनी रेलो के लिए पर्याप्त मात्रा म यातायात को पाना आवश्यक है परतु यह तब तक सभव नही होगा जब तक कि देश के निजी उद्योगो का विकास नही होता। पहले इस देश म कपडे की मिलें लोहे की ढलाई के कारखाने और इस प्रकार अन्य औद्योगिक प्रयत्नो की स्थापना होने दीजिए, तब देखिए रेलें कच्चे माल और पक्के उत्पादनो के वाहन व्यवसाय को किस प्रकार लाभप्रद बनाती हैं।[7]

परतु पर्याप्त विश्वास के साथ आशा किए जाने पर भी वास्तव म ऐसा कुछ न हुआ।[3] भारतीयो ने सोचा कि रेलें अपने आप न तो उद्योगो को जन्म दे सकती हैं और न ही देश की आर्थिकता के विकास को जन्म दे सकती हैं।[74] इसके लिए तो कुछ और परिस्थितिया भी अपेक्षित थी। भारतीय अर्थशास्त्रियो ने यह देखा कि उनका अनुभव अमरीका के अनुभव म सर्वथा भिन्न रहा है। वहा तो औद्योगिक क्राति को आगे ले जाने मे रेलें सहायक रही है।[75] इसके विपरीत भारत म रेलो ने औद्योगिक आदोलन को उदासीन बनाने म भारत के प्राकृतिक ससाधनो के शोषण म तथा विदेशी व्यापार और उद्यम को प्रोत्साहन देने मे सहायता दी है। वाणिज्य की शक्ति ने औद्योगिक नही, केवल व्यावसायिक क्राति का ही प्रवर्तन किया है।[76] रेलो ने यहा तो सामान्य पथो पर स्वस्थ भौतिक प्रगति को अवरुद्ध करके तथा राष्ट्रीय गतिविधि को उसके अपने ही केंद्र मे अस्तव्यस्त करके आधुनिक उद्योग के विकास मे बाधा पहुचाई है।[77]

इस सबका स्पष्ट अभिप्राय यह था कि द्रुत औद्योगिक विकास के बिना रेलो के विकास की चर्चा एक प्रकार से पागलपन के अतिरिक्त और कुछ भी नही थी अथवा जी० वी० जोशी के शब्दो मे इस देश म देश के आर्थिक साधनो के बाहर अमरीका की गति पर रेलो को आगे बढाने की सुस्पष्ट नीति यदि अपने साथ अपेक्षाकृत अधिक महत्व के अन्य आर्थिक उपायो को नही अपनाती तो राष्ट्र की दरिद्रता के रूप मे ही उसका अत होगा।[78]

अतिम, भारतीय नेताओ ने बताया कि भारत के साधन अत्यत सीमित हैं और उनसे अत्यत विस्तृत क्षेत्र मे कार्य नही किया जा सकता और क्षुद्र साधनो के कारण अनेक क्षेत्रो म से हमें चुनाव करना है। भारतीय लोकनायको के मन म सदेह का लेश भी नही था कि औद्योगिक पिछडापन भारतीय अर्थव्यवस्था का विषम पाप है और उद्योग को परिवर्तन पर प्रमुखता अवश्य ही मिलनी चाहिए।[79] उन्होने इसलिए सरकार से फिलहाल रेलो को दी जाने वाली राजकीय सहायता को अधिक उत्पादक प्रयासो, उद्योग और सिंचाई की ओर दिशा परिवर्तन की माग की।[80]

उन्होने औद्योगिक आवश्यकताओ के साथ रेलो के सुसगत समन्वयन के अतिरिक्त कुछ अन्य अभिसधानो को भी प्रस्तुत किया। वे चाहते थे कि रेलो के निर्माण की गति तथा कार्यक्षेत्र के निर्णय म उन अभिसधानो को समुचित महत्व दिया जाए। इस प्रकार

का निर्धारक और सीमक तत्व था भारतीय वित्त की विपन्न अवस्था और करदाता पर पहले से ही भारी बोझ। व्यापक दृष्टि से उनका मतव्य था कि रेलो के निर्माण मे अपनाई जा रही द्रुतगति की दर के औचित्य को सिद्ध करने के लिए न तो भारत पर्याप्त धन सपन्न था, न उसके साधन पर्याप्त विस्तृत थे और न ही उसके वित्त पर्याप्त समृद्ध थे।[81] उनके विश्वासानुसार दूसरी विचारणीय बात यह है कि रेल निर्माण को प्रधानतया उपलब्ध स्वदेशी पूजी पर ही निर्भर रखना चाहिए।[8] रेलो के विस्तार काय के लिए स्टर्लिंग ऋण मे और अधिक वृद्धि किसी भी रूप मे नही होनी चाहिए क्योंकि इससे केवल भारत से धन की निकासी मे ही वृद्धि होगी।[83]

भारतीय नेताओ के अनुसार वर्तमान स्थिति मे शोचनीय तथा सतर्कता की अपेक्षा करने वाला एक अन्य तत्व यह था कि अधिकतर प्रारम्भिक रेलो की पटरिया के लिए भारत को अनुबधित और निश्चित एक शिलिंग दस पेंस के लिए एक रुपया विनिमय दर पर प्रतिभूत ब्याजो के भुगतान के लिए इग्लैंड को रुपया भेजने मे विनिमय पर होने वाला भारी घाटा था तथा रेलो पर लिए गए ऋणो पर ब्याज के पौडो मे भुगतान के लिए राज्य रेलवे ने लदन के वित्त बजार मे उस समय अनुबध किया था जब पौड के मुकाबले भारतीय रुपये की कीमत निरतर घट रही थी।[84]

बहुत सारे भारतीयो का यह भी मत था कि नई रेल लाइनो की स्वीकृति से पूर्व यह सम्यक रूप से देखभाल कर निश्चित कर लेना चाहिए कि वे आर्थिक रूप से कहा तक लाभप्रद हो सकती हैं।[85] उनकी यह युक्तियुक्त धारणा थी कि बहुत सारे रेलपथ आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद नही है। यदि यह सत्य नही है तो फिर ब्रिटिश पूजीपति प्रतिभूति बिना पाए ही क्या नही इन रेलपथो के निर्माण को हाथ मे लेते ?[86]

कुछेक का तो यहा तक मत था कि रेलो की कितनी ही विशेषताए क्यो न हो आर्थिक राजनीतिक, सैनिक तथा अकाल सुरक्षा आदि उद्देश्यो के लिए आवश्यक जितने रेलपथ बनने थे, पहले ही बन चुके है। अब तो सरकार को अपना सारा ध्यान राष्ट्र के पुर्ननिर्माण के अन्यान्य क्षेत्रो की ओर देना चाहिए। नए रेलपथो के निर्माण मे तो तभी हाथ लगाना चाहिए जब उपर्युक्त सभी दूसरे पक्ष अनुकूल हो।[87]

भारतीय राष्ट्रवादी भारतीय वित्त की स्थिति, स्वदेशी पूजी की अप्राप्यता, वर्तमान और निर्माणाधीन रेलो का लाभप्रद न होना, भारतीय उद्योग के साथ रेलो के समन्वय की आवश्यकता और साथ ही विविध आर्थिक पक्षो और शक्तियो के बदलते मह सबधो के कारण रेलपथो के कुछ विस्तार की अपरिहायता की समझ इन सभी पक्षो पर सामूहिक रूप से विचार करने के उपरात 1884 के[88] पश्चात यह अनुभव करने लगे कि यद्यपि रेलो के द्रुत विकास की अथवा उनके अधाधुध विकास की आवश्यकता तो नही है फिर भी आवश्यकता के अनुरूप उचित समय पर रेलें बनाई जा सकती है परतु इस दिशा मे सरकारी तौर पर जिस गति की वकालत की जाती है उसकी अपेक्षा अत्यधिक मद गति ही अपनाने की आवश्यकता है।[89] कइयो ने तो इसमे यह बात भी जोडी कि सरकार रेलपथो के और अधिक विस्तार का दायित्व प्रत्यक्ष अथवा परोक्षरूप से लोक वित्त पर न डाले।[90] सभी भावी पथो का निर्माण विशुद्ध व्यावसायिक दृष्टि से हो

अर्थात राज्य को स्वय न तो किसी प्रकार से भागीदार बनना चाहिए और न ही राज्य के द्वारा किसी प्रकार की प्रतिभूति दी जानी चाहिए। निजी कपनियो ता स्वय ही खतरा उठाकर यह काय करना चाहिए।[91]

इस सदभ मे 1898 म फोलर आयोग के समक्ष अपना साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए आर० सी दत्त महोदय न एक अदभुत सुझाव दिया कि 'नई रेलो की स्वीकृति से पूव लाक प्रति निधियो स परामश कर लेना चाहिए। एक अय स्थल पर उन्होन जोर देकर कहा रल नीति के सबध म सरकार लोकहिता की बलि चढा रही है, इसका कारण यह है कि प्रभाव शाली वर्गों के मुकाबले बचारी जनता को अपना मत अभिव्यक्त करने तथा उस मनवान का सावैधानिक अधिकार ही प्राप्त नही है।[9]

सगठन का स्वरूप

भारतीय राष्ट्रवादी नेताआ न रला के निर्माण की गति के सबध म विस्तृत विवचन के अतिरिक्त रेलो के सगठन के स्वरूप पर भी ध्यान दिया, परतु उन्हान इस सबध म समस्या के केवल एक पक्ष अर्थात रेलो के निमाण और प्रबध के लिए उपयुक्त अभिकरण की ओर ही ध्यान दिया। इस सबध म यह तथ्य ध्यान म रखना चाहिए कि भारतीय नेता विशेषत 1884 के उपरात, रेलो के द्रुत विस्तार के विरुद्ध थे, अत उनका सारा क्रोध इसी एक पक्ष पर केंद्रित रहा। फलत रेल निमाण के अयाय पक्षा पर राष्ट्रवादी दष्टिकोण की अभि व्यक्ति विरल तथा क्षीण ही रही। सभी प्रश्नो का उत्तर वे यह कहकर देत थ कि हम रेला की कोई आवश्यकता नही।

लाड रिपन के वायसराय काल म उस समय भारतीय जनता की दष्टि म रेल के निमाण के लिए प्रत्यक्ष राज्य अभिकरण के और निजी कपनिया के सापक्ष लाभा का प्रश्न सामयिक विवेचन का विषय बन गया, जब वायसराय के वित्त सदस्य इवेलिन बरिंग ने 1881 म निजी निमाण के पक्ष मे सरकारी एकाधिकार के आशिक परित्याग, अर्थात सरकारी सहायता के बिना अथवा किसी भी स्थिति मे इस प्रकार की न्यूनतम सहायता की वकालत की। बाद म 1883 म भारत सरकार ने योजना बनाई कि उत्पादक रेल पथ निजी कपनिया को पट्टे पर द दिए जाए और सामाय सिद्धात के रूप म सरकार व्यावसायिक दृष्टि म अलाभप्रद हाने के कारण से अथवा किन्ही अय कारणा म निजी कपनिया द्वारा न लिए जा सकने वाले रेलपथा का निर्माणकाय ही करे।[9] परवर्ती वर्षों म इस नीति पर व्यापक रूप स अमल किया गया और उत्तराधिकारी राज्यसचिवा गवनर जनरलो तथा रावन्सन जैसे रेल अधिकारिया द्वारा इसका अनुमोदन आर प्रशसन किया गया।

दूसरी आर रेला के विकास से सबधित तथा सभी भारतीयो को समान रूप न मा य प्रश्न था प्रतिभूति प्रथा स भारत का पहुचने वाली हानि। उनकी दष्टि म इसस राष्ट्रीय वित्त पर असह्य भार पडता था, अत भविष्य म इस जारी न रखन की प्रबल और अप रिहाय आवश्यकता थी।[94] भारतीया के मत म इस प्रतिभूति का अत्यत आपत्तिजनक पक्ष यह था कि इसस कपनी को अविवेकपूण और परिणामहीन फिजूलखच न तिए

प्रोत्साहन मिलता था। कंपनी के पास मितव्ययी होने के लिए कोई प्रेरणा ही नहीं थी क्योंकि वह जितना भी व्यय कर ले, सरकार उसपर प्रतिभूत ब्याज राशि देने को प्रस्तुत थी। उल्लेखनीय यह है कि यह उस समय था जबकि ब्याज राशि से अधिक उपार्जन की कोई संभावना ही नहीं थी।[95] जुलाई 1881 में पूना की 'सार्वजनिक सभा' पत्रिका में अज्ञातनाम लेखक के प्रकाशित एक लेख, 'पार्लियामेंटरी कमेटी आन इंडियन पब्लिक वर्क्स' में जस्टिस रानाडे ने रेल प्रतिभूति के विरुद्ध भारतीय चिंतन को बड़े ही रोचक और संक्षिप्त रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया

> ब्याज की प्रतिभूति निर्धारित दर बहुत ऊंची होने के कारण (इंग्लैंड में पूंजी पर मिलने वाले लाभों से बहुत ही ऊंची) यह पाया गया है कि कंपनियां रेलों के निर्माण में अथवा निर्माण के उपरांत उनके प्रबंध में पर्याप्त रूप से मितव्ययी नहीं हैं। उनका हित वस्तुतः इसी में था कि वे यथासंभव व्यय की राशि को अधिक ऊंचा रखें क्योंकि जितना अधिक धन वे लगा पाएंगी, उतनी अधिक ही प्रतिभूति ब्याजराशि को पाने की वे अधिकारी होंगी।[96]

जब एक बार रेलों की प्रतिभूति प्रथा को समाप्त कर दिया गया और यह तथ्य भी स्वीकार कर लिया गया कि कुछ नवीन रेलपथों का निर्माण अपरिहार्य था, तो प्रश्न यह उपस्थित हुआ कि निर्माण कार्य के लिए क्या विकल्प व्यवस्था अपनाई जाए। राष्ट्रवादी इस विषय में एकमत नहीं थे। एक वर्ग की मान्यता थी कि करदाताओं पर और अधिक भार न डालने की दृष्टि से सरकार को रेलपथों पर जन कोशों का व्यय नहीं करना चाहिए तथा नए निर्माण का सारा क्षेत्र वास्तविक अप्रतिभूत निजी उद्यम पर छोड़ देना चाहिए।[97] दूसरा, और कदाचित अधिक मुखर तथा दूसरे पक्ष से भी प्रबंधित वर्ग जिसके अंतर्गत जी० वी० जोशी तथा अन्य महानुभाव सम्मिलित थे। निजी स्वामित्व का विरोधी तथा सरकारी उद्यम का समर्थक था। दूसरे वर्ग के पक्षधरों द्वारा अपने समर्थन में प्रस्तुत कारणों की समीक्षा से पूर्व हम यहां यह बताना चाहेंगे कि प्रथम मत के पक्षधरों ने भी उन्हीं कारणों के आधार पर यह मांग की थी कि सरकार को उपयुक्त समय पर कंपनियों के साथ किए गए समझौतों और निर्धारित शर्तों के अनुरूप प्रतिभूत रेलों को खरीदने के अधिकार अपने हाथ में रखने चाहिए।[98] इसके अतिरिक्त वे सरकार द्वारा निर्मित अथवा अधिकृत रेलों के संचालन के लिए कंपनियों को पट्टे पर दिए जाने के विरुद्ध थे।[99]

राज्य रेलपद्धति के पक्षधर नेताओं का विश्वास था कि इस समय वास्तविक चुनाव यथार्थ निजी उद्यम तथा सरकारी उद्यम का न होकर सरकारी उद्यम और प्रतिभूत कंपनियों की पुरानी प्रथा का है और इन दोनों में सरकारी उद्यम निश्चित रूप से अधिक अच्छा और अधिक मितव्ययी था।[100] उनका तर्क था कि विदेशियों की निजी कंपनियां से देश के सामान्य हितों के संरक्षण के लिए पूर्ण दायित्व तथा उद्देश्य की समग्र एकता से कार्य करने की अपेक्षा ही नहीं की जा सकती क्योंकि कभी कभी तो लोकहितों के लिए निजी हितों की बलि ही चढ़ानी पड़ती है।[101] उनकी मान्यता थी कि वित्तीय दृष्टि से प्रतिभूत रेलप्रथा की अपेक्षा राज्य रेलों से अधिक लाभ थे क्योंकि सरकार को अच्छी साख के कारण अधिक ऋण मिल सकते थे। सरकार सदैव ब्याज की कम दर पर ऋण लेने में समर्थ थी और

अतीत मे कही भी सूद की दर इतनी ऊची नही रही जितनी कि 5 प्रतिशत प्रतिभूत।[102] इसके अतिरिक्त ऋण ली गई पूजी पर ब्याज चुकाने के उपरात राज्य रेल के अवशिष्ट लाभ भी देश म ही रहग न कि निजी उद्यमियो के हाथ म पडकर विदेशो को भेजे जाएग।[103] 3 फरवरी 1884 के अक म मराठा ने तो सुझाव दिया कि राज्य ऋणो पर ब्याज और 5 प्रतिशत प्रतिभूत ब्याज के अतर का उपयोग मूल ऋण को चुकाने म करने पर लाभराशि और ब्याज राशि दोनो को देश म ही रखा जा सकता था।[104]

जी० वी० जोशी महोदय के अनुसार राज्य रेल व्यवस्था केवल निषेधात्मक रूप में ही सही, राजनीतिक दृष्टि से लाभप्रद थी। यह भारतीय हितो के विरोधी सगठित विदेशी निहित स्वार्थों के विकास को अवरुद्ध करेगी।[105] बगला साप्ताहिक 'सहचर' ने अपने 30 अप्रल 1884 के अक म भारतीय रेलवे पर एक विस्तृत समीक्षात्मक लेख के अत मे इस दृष्टिकोण को अत्यत जोरदार ढग म प्रस्तुत किया

> क्या इन तथ्यो की दृष्टि म यह उचित है कि असख्य रेलपथो का निर्माण किया जाए और जनता को रेल कपनियो के हाथ म दास बनने के लिए विवश किया जाए ? क्या सरकार भारत को दूसरा मिस्र बनाना चाहती है ? इसके बाद केवल सरकार को रेलो का निर्माण करना चाहिए।[106]

इस वग क भारतीय नेताओ की निजी उद्यम के विरुद्ध गभीरतम आपत्ति यह थी कि उसका चरित्र विदेशी था और वह इसके फलस्वरूप लाभो का नियात करता था। उनम से बहुतो ने बार बार बल देकर कहा कि यदि विशुद्ध भारतीय कपनिया बनाई जाए तो निजी उद्यम का वाछनीय रूप स स्वागत होगा।[107] सचमुच ही इस पक्ष के नेताओ न तथा प्रथम विचारधारा के समथक अनेकानेक नताओ ने रेल निर्माण के सरकारी और निजी दोनो क्षेत्रो म भारतीय पूजी और उद्यम के विनियोजन के पक्ष म अपना स्वर मुखरित किया।[108] उदाहरणाथ मराठा न 14 जनवरी 1883 के अक मे एक लेख प्रकाशित किया जिसम माग की गइ थी कि अब सरकार की नीति भारत मे स्वदेशी प्रबध, स्वदेशी पूजी, भडार और श्रम साधनों स रेलो के निर्माण की होनी चाहिए। 7 दिसबर 1902 क अक मे पत्र न माग की कि यदि रेलो का निमाण अवश्य करना ही है तो वह यथासभव भारतीय पूजी स ही करना चाहिए। रेलो म स्वदेशी पूजी क लगभग शून्य निवेश पर दु ख प्रकट करते हुए समाचारपत्रो ने भारतीय जनता, विशेष रूप से पूजीपतियो को रेलो के निर्माण के लिए निजी कपनिया चालू करन क हतु धन जुटान को प्रोत्साहित किया।[109] उन्होंने सरकार पर भारतीय पूजी को आकृष्ट न करने का अभियोग लगाते हुए उससे भारतीय कपनियो के प्रति भारतीय पूजी लगान के लिए विशेष व्यवहार करन का अनुरोध किया।[110] यह अत्यत रोचक तथ्य है कि हिंदू ने जहा अपने 10 अगस्त 1887 के अक म प्रतिभूति प्रथा को व्यथ बतात हुए उसकी निंदा की, वहा 3 अगस्त 1887 के अक मे भारतीय उद्यमियो के के लिए प्रतिभूति की माग करन म सकोच नही किया। कुछ नताओ ने यह भी अनुमोदन किया कि विशुद्ध भारतीय पूजी के सामथ्य के अनुरूप ही रेलपथो के निर्माण की गति को मद बनाना चाहिए।[111]

बहुत सारे भारतीय नताओ न यह अनुभव किया कि सर्वोत्कृष्ट इच्छाओ क बावजद

भारत मे रेल निर्माण के लिए पर्याप्त पूजीगत विशाल साधनो वाली निजी कपनियो की स्थापना सभव नही थी, अत उन्होने राज्य एकाधिकार व्यवस्था का ही समथन किया।[11?] अमृत बाजार पत्रिका ने अपने 5 माच 1885 के अक मे लिखा 'भारत जैसे देश म, जहा के लोग इतने अधिक निधन है, इतने अधिक अनुत्साही हैं कि वे अपनी पूजी से रेलो का प्रबध नही सभाल सकते, विदेशियो द्वारा दश को निधन बनाने की अपेक्षा यह अधिक अच्छा है कि सरकार स्वय व्यापारी की भूमिका निभाए तथा लाभ का अजन करे।' सरकार द्वारा रेला के निर्माण और सचालन म एक महत्वपूण सभव आपत्ति यह थी कि उससे अत्यधिक केंद्रीकरण तथा अनियनित अफसरशाही आ जाती है। इस बुराई का जी० वी० जोशी द्वारा सुझाया हुआ उपचार था रेल प्रबधा का विकेंद्रीकरण तथा विभिन प्रातीय और स्थानीय अधिकारियो के हाथ मे रेला के प्रारभ तथा प्रबध के अधिकार सौंपना।[113] 'मराठा' ने 3 फरवरी 1884 के अक मे रेलो के सचालन के लिए लोक-समितिया और न्यासो के सगठन का परामश दिया। 'हिंदुस्तान रिव्यू' और 'कायस्थ समाचार' पत्रा न अपने अपने मई 1903 के अको मे सुझाव दिया कि सरकारी और गैर-सरकारी विशेषज्ञा की एक सयुक्त समिति के रूप मे रेल प्रबध के लिए एक रेल न्यास (रेलवे ट्रस्ट) बनाया जाना चाहिए।

रेले बनाम सिंचाई

इस समय भारतीय नेताओ के सिंचाई के प्रति दृष्टिकोण पर विचार कर लेना चाहिए। यद्यपि इस समय रेलो और सिंचाई का पारस्परिक सबध स्पष्ट नही है परतु विवच्यकाल की अवधि मे दोनो मे अत्यत घनिष्ठ सबध था।[115] भारतीय नेताओं और सरकारी अधिकारियो दोनो ने रेलो और सिंचाई को परस्पर विरोधी तत्व के रूप में ग्रहण किया। दोना ने भारत म पडने वाले अकालो की अत्यत उपयोगी औषधि के रूप म अपने अपने पक्ष (रेल तथा सिंचाई) को प्रस्तुत किया तथा राज्य के सीमित वित्तीय साधना के अपने पक्ष मे विनिधान के लिए मुकाबला किया।

1902 03 के अत तक छोटे बडे सिंचाई कार्यों पर सरकारी राजस्व का कुल व्यय लगभग 43 करोड रुपए था जबकि इसके विरुद्ध राज्य का और कपनियो का रेला पर प्रतिभूत कुल व्यय 30 जून 1905 तक 359 करोड रुपए था।[116] इस तथ्य पर भारतीय नेताओ ने उचित ध्यान दिया और इसकी आलोचना की फिर चाहे इस सबध म राष्ट्रीय आदोलन देर म शुरू हुआ था। परतु उसने प्रचड रूप 1897 के भयकर अकाल की अवधि मे और उसके पश्चात् ही धारण किया। आमतौर पर भारतीय नेताओ ने सिंचाई के मूल्य पर रेला के प्रति अनुचित पक्षपात के लिए सरकार की भत्सना की। उनकी यह स्पष्ट घोषणा थी कि इसे चहेती के रूप म लेते हुए सिंचाई के साथ सौतेली मा वाला बर्ताव किया जा रहा था। 1898 म आर० एम० सायानी न वायसराय की विधान परिषद म यह प्रश्न उठाया और शिकायत की कि जबकि रेला पर सरकारी अनुग्रह के रूप म बहुत सच होता है, वहा अकालो स अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षा दन वाली सिंचाई नहरो पर केवल 75 लाख रुपए की अनुमति दी जाती है। दूसरे शब्दो म रेलो पर व्यय किए जाने

वाली राशि का लगभग तेरहवा भाग प्रतिवर्ष सिचाई पर खर्च किया जाता है।[117] इस विषय पर आर० सी० दत्त सरकार के तीव्रतम आलोचक थे। 1903 म उन्होंने लिखा कि जब हम रेलो से सिंचाई कार्य के विषय की ओर आते हैं तो एक ओर हम मूर्खतापूर्ण फिजूलखर्ची मिलती है और दूसरी ओर उतनी ही मूर्खतापूर्ण कजूसी।[118] इसी प्रकार की समालोचना अन्य अनेक समकालीन जन नेताओं और पत्रकारो ने भी की।[119]

सरकार द्वारा अपनाई जाने वाली नीति के विरुद्ध भारतीय नेताओ का तर्क था कि वास्तविक जनहित की दृष्टि से अधिक रेलो की अपेक्षा सिचाई कार्यों की ही अधिक उपयोगिता है। 'मराठा' ने अपने 17 फरवरी 1884 के अक म बल देते हुए कहा कि जहा वाणिज्य सदन का हित इसी म है कि वह रेलो के झडे के नीचे ही अकाल रेलो के लिए सघर्ष करे, वहा हमारा हित इसी म है कि हम नहरो के लिए सघर्ष करें। केसर ए हिंद ने 23 अगस्त 1903 के अक म चालू एक सवा एक करोड रुपयो की तुच्छ राशि के स्थान पर चार पाच करोड रुपया की राशि सिचाई कार्यों पर खर्च करने की वकालत करते हुए भारतीय दृष्टिकोण को इन शब्दो म प्रखर अभिव्यक्ति दी

> निस्सदेह यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि नए रेल निर्माण पर भारत सरकार को प्रतिवर्ष पाच छ करोड की न्यूनतम राशि खर्च करनी पडती है और इस स्थिति म वह सिचाई कार्यों के लिए बहुत बडी राशि नही जुटा सकती। इस तर्क को स्वीकार करते हुए हमारा कथन यह है कि अब समय की माग यह है कि रेलो के निर्माण की गति मद स्तर पर लानी चाहिए अतत हमने वर्तमान भयकर अकालो की अवधि म जो महगा अनुभव प्राप्त किया है और अतत लाखो मनुष्यों और कृषि पशुओ का जो भयकर विनाश हुआ है, क्या सरकार इन सबको देखते हुए भी स्वार्थी वाणिज्य सदन को प्रसन्न करने के लिए उन लाखो स्वदेशी लोगो के हितो की जो आज भी पूरे पूरे साल अपर्याप्त भोजन पर जीवन निर्वाह को विवश हैं अपेक्षा करते हुए रेल निर्माण के द्रुतविकास की नीति को अपनाएगी और सिचाई की योजना की परिधि को सकुचित करेगी। जबकि यह निश्चित है कि उसने ही देश के सारे असुरक्षित क्षेत्र मे क्रातिकारी परिवर्तन लाया जा सकता है।[121]

कुछेक भारतीय नेताओ ने अनुभव किया कि भारतीय कृषि की आवश्यकताओ और स्थिति की सभावनाओ के परिप्रेक्ष्य म सिचाई की उपलब्ध सुविधाए अपर्याप्त थी।[122] उन्होंने सिचाई की बहुमुखी सुविधाए जुटाने के लिए ब्रिटिश पूर्व शासको और राजाओ की भरपूर प्रशसा की।[123] उन्होंने सिंचाई के द्रुत और व्यापक विकास की माग की क्योंकि उनकी दृष्टि म इन सुविधाओ म ही भारत की व्यावहारिक मुक्ति निहित थी।[124]

भारतीय नेताओ ने रेलो की अपेक्षा सिचाई को महत्व क्यो दिया? इसका कारण यह है कि अधिकाश भारतीयो की दृष्टि म रेलो की अपेक्षा सिचाई अकालो को रोकने के लिए अधिक प्रभावशाली तथा विश्वसनीय उपचार था।[125] रेलें केवल उपशामक थी और इस प्रकार वे जहा अकाल के अत्यत घणित प्रभाव को मद कर सकती थी वहा सिचाई कष्ट की जड तक जाती थी और इस प्रकार अकालो को रोक सकती थी। रेलें देश के विभिन्न भागो म खाद्यान्न की उपलब्ध मात्रा के समान वितरण से अधिक कुछ नहीं कर

अनुमति देना सरकार के प्रशासन का एक ही सचमुच शाचनीय पक्ष है।[131] सामान्यत नरमपथी 'इन्दु प्रकाश' ने अपने 30 नवम्बर 1904 के अक मे लिखा

> भारत जैसे विशुद्ध कृषिप्रधान देश म रेलो के महत्व को अतिरजित करने की सभावना ही दिखाई नही देती परन्तु दुख तो यह है कि देश का प्रशासन जनहिता का गौरव ही नही देता। अगरेजी व्यापारियो को इस देश म मडी के विस्तार के लिए रेलें चाहिए और यह सरकार उनके लाभाथ रेलें जुटा रही है।[13]

प्रारभ मे भारतीय आलोचना का प्रशासन पर कोई विशेष प्रभाव नही पडा, उसने इसे अनदेखा कर दिया।[133] उदाहरणाथ 1901 2 के बजट भाषण म लाड कजन ने इस समस्या का विस्तृत विवेचन करने के उपरात यह निष्कष निकाला कि सिचाई स अकालो से मुक्त सूखाग्रस्त जिलो की सुरक्षा अथवा वहा के विपन्न लोगो की सहायता की अपेक्षा नही की जा सकती। वायसराय का तो इसके विपरीत यहा तक कहना था कि इसस तो समस्या के और अधिक विषम हो जाने की सभावना है क्योकि उनकी मान्यता थी कि वस्तुत मरुस्थल के उपजाऊ बनने के साथ ही जनसख्या भी बढ जाती है और इस रूप मे उपज वद्धन के साथ साथ खाने वाले मुख भी बढ्ते ह। कुल मिलाकर उनका मत था कि सिचाई का क्षेत्र सीमित है क्योकि 4,000 000 एकड भूमि से अधिक भूमि की भविष्य म सिचाई नही की जा सकती। उसने दृढतापूवक कहा कि सत्य यह है कि अकाल के विरुद्ध सरक्षण के रूप म जितना सभव था और जितना शीघ्रता स अपेक्षित था उसमे स बहुत सारा सिचाई काय पहले ही सपन्न किया जा चुका है। जनता द्वारा कभी कभी समर्थित सिचाई कार्यो के सवथा अनिश्चित विस्तार की अब कोई सभावना ही नही है।[134] परतु ऊपर से अतिम निणय के रूप म दिखाई देने वाली यह घोषणा स्थिर रूप न ले सकी, सरकार अतत लोकमत का दबाव का अनुभव करने लगी। इसका स्पष्ट प्रमाण लाड कजन का अगले वष का बजट भाषण है जिसम उन्होने वकालत की 'अच्छी तरह चलते हुए घोडे को चाबुक मारना ठीक नही है। इस सरकार की अपेक्षा कोई भी पहले की भारत सरकार सिचाई को प्रोत्साहन देने के महत्व को सवाधिक प्रधानता का रूप नही दे सकी।' उन्होन आलोचको मे अपनी इच्छाओ की पूण सच्चाई पर विश्वास करने का अनुरोध किया।[135] अपनी इच्छाओ की सच्चाई के प्रमाण मे उसने सिचाई के प्रश्न की सामूहिक समीक्षा और अतर्हित सभावनाओ की परीक्षा के लिए एक आयोग की नियुक्ति कर दी। डी० ई० वाचा ने सत्य की स्वीकृति म विनय के लिए सरकार की भत्सना का अवसर हाथ स जाने जान दिया। 1901 म काग्रस के सभापतीय अभिभाषण म उन्होने अपना मत प्रकट करते हुए कहा 'यह तो स्पष्ट दृष्टिगोचर है कि सरकार प्रबुद्ध लोकमत म गुणात्मक पिछडी रही ह।[136]

सिचाई आयोग ने अप्रैल 1903 म अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसम उसने 20 वर्षो के भीतर 65 लाख एकड धरती पर सिचाई करने के लिए 44 करोड रुपया की अतिरिक्त राशि खच करने की सिफारिश की।[137] लाड कजन ने आयोग द्वारा प्रस्तावित कायक्रम को स्वीकार करते हुए यह टिप्पणी की 'यह मानवीय साधना और शक्तियो की चरम सीमा का कायक्रम है और यह किसी उत्साह या सरकार की सगठित शक्ति का

प्रतीक है।[139] भारतीयो की आयोग के अनुमोदन के प्रति प्रतिक्रिया अनुकूल ही थी।[139] आलोचना का एकमात्र पक्ष यह था कि यह सब कुछ तुच्छ है। वस्तुत आयोग का अत्यधिक ऊची राशि और थोडे समय मे ही काय निपटाने के कायक्रम का अनुमोदन करना चाहिए।[140]

निष्कष

रेलो के प्रति राष्ट्रीय दृष्टिकोण के गहरे विश्लेषण मे यह तथ्य एक बार पुन स्पष्ट हो जाता है कि समीक्षाधीन अवधि के भारतीय राष्ट्रीय नेताआ का आर्थिक चिंतन गहरा था। उन्होंने रेलो की भूमिका को अमूत रूप म न देखकर समग्रत आर्थिक विकास के व्यापक सदभ म ही देखा।

रेलो की वतमान नीति के अध्ययन से वे इस निष्कष पर पहुचे कि इस नीति का निर्धारण भारतीय जनता के हितो के सदभ मे नही हुआ था। यह तो उलटे भारतीय जनता की आवश्यकताआ की बहुत दूर तक उपेक्षा ही करती थी। वस्तुत प्रमुख रूप से ब्रिटेन के आर्थिक और राजनीतिक हितो के परिप्रेक्ष्य म ही यह नीति निर्धारित की गई था। उन्हाने यह भी देखा कि रेलें भारतीय अथव्यवस्था का औपनिवेशिक स्वरूप दन मे महत्वपूण भूमिका निभा रही थी। वे पिछडे देश म रेल विकास के और विकसित महा नगरीय देश मे उदीयमान वित्त शक्ति के सह सबध और उसके फलस्वरूप उत्पन्न होने वाली राजनीतिक जटिलताओ को भी उजागर करने म समथ सिद्ध हुए।

वे रेला स औद्योगिक और कृषि सबधी वद्धि के रूप मे परिलक्षित आर्थिक विकास गतिशील बनाते हुए राष्ट्रीय आर्थिक हितो की सेवा की अपक्षा रखते थे। उनके मत मे उपयुक्त रेल नीति वह है जो भारतीय उद्योग को उन्नत बनाए और उपयुक्त लोक काय नीति वह है जो सिंचाई और कृषि को प्राथमिकता दे।[141] उनकी इच्छा थी कि रल नीति भारतीय वित्त साधनो तथा भारतीय अथव्यवस्था को उचित महत्व दे।

अत म यहा यह उल्लखनीय है कि भारतीयो ने रेल नीति के स्वरूप को इस प्रकार लक्षित किया कि वह व्यापार की आवश्यकताओ को उद्योग की आवश्यकताओ के अधीन बनाए। इसका उद्देश्य भारतीय उद्योग को प्रोत्साहित करना हो न कि व्यापक आयात का उन्नत करना, अधिक खाद्यान्नो के उत्पादन का प्रोत्साहित करना हो न कि उनके व्यापक नियात का। इस प्रकार उनके मत की रेल नीति एक बार पुन विकासशील उस व्यापारी पूजी के हित की समथक नही थी, जिससे रेलें देश के अचलो मे पैर फैलाने ओर अधिकार जमाने मे सहायता प्राप्त कर रही थी और इस कारण जो निश्चित रूप से ही रेलो के द्रुतविकास की समथक बन रही थी। उदाहरणाथ 1888 म बगाल राष्ट्रीय वाणिज्य सदन ने वायसराय लाड लस डोन को भेजी शिकायत म देश और विदेश के व्यापार के हितो मे रेलो और सहायक सडको के द्रुतविकास की वकालत की। इसम पूव सदन ने रेल सम्मेलन को एक आवेदनपत्र भेजा था जिसमे उस समय प्रचलित रेल दरो के विशेषत नियात के लिए निर्धारित वस्तुओ खाद्यान्न बीज और पटसन आदि, पर ऊ रेल दरो के घटाने की वाच्छनीयता पर बल दिया था।[14] इस प्रकार 1899 म लाड ज

का प्रस्तुत मानपत्र म सदा ने इस तथ्य की निंदा की कि भारत मे केवल 21,000 मील लबे रलपथ ह और इसके फलस्वरूप दूर अचल प्रातो मे कितने ही विस्तत प्रदश है जिनका किसी भी वाणिज्य केंद्र से सीधा सपर्क नही है। मागपत्र के अत म यह लिखा गया था हम लोग, जो देश के व्यापार म गहरी रुचि रखत ह, श्रीमान महाशय के रेल विकास के आश्वासन का अत्यधिक स्वागत करेंगे।[113] भारतीय नेताओ के रेलो क द्रुत विकास क विरोध म प्रस्तुत कारण और उद्देश्य तथा रेल विकास की उनके मनानुकूल दिशा आदि के विवेचन से यह सिद्ध हो जाता है कि व्यापारिक हितो की अपेक्षा औद्योगिक हित ही उनकी दृष्टि मे अधिक महत्वपूर्ण थे।

सदभ

1 यह भाग मख्य रूप से डनियल थानर इनवस्टमट इन एपायर (फिलाडेल्फिया 1950) हारेस बल रेलवे पालिसी इन इडिया (लदन 1897) जक्सन पूर्वोद्धत दि इपीरियल गजटियर आफ इडिया खड III पूर्वोद्धत, एन सान्याल डिवलपमेंट आफ इडियन रलवेज (कलकत्ता 1930) और आर० डी० तिवारी रेलवेज इन माडन इडिया (बबई 1941) पर आधारित है

2 इस दबाव के कारण प्रकृति और सीमा तथा प्रयोग की विधिया विस्तार के साथ थानर द्वारा उनक पूर्वोद्धत ग्रथ म निरूपित की गई हैं

3 वही प० 63

4 डब्ल्यू० डब्ल्यू० हटर दि मारक्विस आफ डलहौजी (आक्सफोड 1895) प० 192-4 जिक्स पूर्वोद्धत प० 212

5 अमरीका म कुछ रेलपथो क निर्माण का व्यय भूमि के मूल्य को मिलाकर कवल 2000 स्टर्लिंग पौंड प्रति मील था बुकानन पूर्वोद्धत प० 183

6 जिक्स म उद्धत पूर्वोद्धत प० 221 2 एक अन्य वित्त सदस्य रिटायड आनरेरी एस० लैइग ने 1861 म सरकारी तौर पर एक लेख म यही सवाल उठाया (उद्धत एच० एम० जगतिआनी दि राल आफ दि स्टट इन प्राविजन आफ रलवेज (लदन 1924) प० 931 राज्य सचिव को माच 1869 म प्रेषित अपनी डाक म भारत सरकार न भी विशेष रूप से रेलपथो के निमाण के इस पक्ष की उग्र समालोचना की उद्धत बल पूर्वोद्धत प० 98

7 इपीरियल गजेटियर खड III प० 468

8 28 माच 1869 के सप्रषण म भारत सरकार ने निर्देश किया कि इस समय भारतीय रेलो की औसत आय केवल तीन प्रतिशत है इसका परिणाम यह हो रहा है कि अवशिष्ट प्रतिभूत ब्याज का भुगतान भारत सरकार को ही करना पड़ा रहा है (उद्धत बल पूर्वोद्धत प० 97) 1858 9 से 1869 70 की अवधि म प्रतिभत सूद का राशि का कुल भार (आय से अतिरिक्त सरकार द्वारा देय) लगभग 140 लाख पौंड था जबकि यह राशि 1868-9 मे 650 लाख पौंड थी (तिवारी पूर्वोद्धत प० 56)

9 बल म उद्धत पूर्वोद्धत पृ० 94

10 इस सबध में सामान्य निर्धारित व्यवस्था यह था कि राज्य कोश पर रेलवे का सारा भार

राजस्व म प्रत्यक्ष व्ययों क रूप मे अथवा रेलवे के ऋणों की सेवाओ के रूप म एक निश्चित सीमा से अधिक नही बढ़ना चाहिए यह सीमा स्वय बढाई अवश्य जाती थी परन्तु निर्धारित सीमा का पालन भी अनिवायत किया जाता था

11 ब्रिटिश व्यापारी और उद्योगपति भारतीय विदेश व्यापार के वतमान आयामो से असतुष्ट थे और वे भारतीय मंडी को आंतरिक रूप म और पूरे तौर पर हथियाने के लिए तथा विशेष रूप से ब्रिटन के लिए भारत के दूरस्थ प्रांतो से कच्चा माल लाने के लिए अपेक्षाकृत अच्छी परिवहन सुविधा क लिए चिल्ला रहे थे वस्तुत भारत का समचित आर्थिक शोषण पर्याप्त आधुनिक सहायक सुविधाओं की माग करता था प्रतिभूत रेलवे म निवेश को सुरक्षित मानने वाले निवेशकों की ओर स भी नए सिरे से दबाव पड रहा था

12 थानर पूर्वोद्धत पृ० VIII

13 जैक्स पूर्वोद्धत पृ० 227 इपीरियल गजटियर (पृ० 414) के अनुसार भारत रूस से वगमील म प्रतिशीत रेलवे लाइन के मुताबिक आगे था और जनसख्या के हिसाब से प्रतिशील जापान से।

14 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 685 इडियन स्पक्टटर ने 17 फरवरी 1884 के अक मे और जी० एस० अय्यर, ने 1898 में 'इडियन पालिटिक्स' पृ० 182 म तथा 1903 म ई० ट प० 267 मे इसी प्रकार के विचार प्रकट किए

15 दक्षिण बेल पूर्वोद्धत पृ० 244 5 और इपीरियल गजेटियर खड III प० 365

16 थानर म उद्धत, पूर्वोद्धत, पृ० 9

17 सान्याल पूर्वोद्धत, प० 146 म उद्धत चेसनी न 1894 मे अपनी 'इडियन पालिटी' पुस्तक मे दावा किया कि रेलपथों क वतमान विकास न दुर्भिक्ष स भारत की रक्षा की है

18 आई० सी० पी० 1896 खड XXXV पृ० 345 और देखिए कजन स्पीचेज II प० 280

19 नौरोजी पावर्टी, पृ० 193 एसज प० 122 3 132 एस०एन० बनर्जी स्पीचेज I पृ० 179 सी० पी० ए० पृ० 270 इडियन स्पेक्टटर, 4 सित० (आर० एन० पी० बग 10 सित० 1881) 17 फरवरी 1884 मराठा, 24 फरवरी 2 माच 1884 इदु प्रकाश 21 अप्रल 1884 सोम प्रकाश 16 जून (आर० एन० पी० बग० 21 जून 1884) हिंदू 9 जनवरी 1885 12 मई 1902. डब्ल्यू० सी० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 4 जोशी पूर्वोद्धत प० 671, रानाड एसेज पृ० 87 बगवासी 5 मई (आर० एन० पी० बग० 12 मई 1894) वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 22. जा० एस० अय्यर विलबी आयाग खड III प्रश्न 18963 18984 इडियन पालिटिक्स पृ० 182, 191 पर दत्त इग्लड ऐंड इडिया पृ० 130 स्पीचेज I प० 98 100 101 स्पीचज II, पृ० 76 बगाली, 27 अप्रल 1901, एम० के पटेल, रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 141

20 1853 मे हाउस आफ कामस को ब्रिटिश इडिया एसोसिएशन द्वारा प्रस्तुत स्मारक म लोक कम को उपयोगी बनाने की व्यवस्था न करने वाले तथा देश क साधनों के विकास की तथा वाणिज्य और उत्पादनो म वृद्धि की और उपज मे उन्नति की सगणना न करने वाले 1833 क चाटर एक्ट की आलोचना की गई थी (भोलानाथ चद्र राजा दिगम्बर मित्र खड I प० 74 पर उद्धत) रामगोपाल घोष द्वारकानाथ टगोर तथा बबई के व्यापारियो के प्रारंभिक रेलव उद्यम को दिए गए प्रोत्साहन के लिए देखिए थानर पूर्वोद्धत प० 51 77 97 दादाभाई नौरोजी ने इन्हें भारत जसे देश की ज्वलत आवश्यकताओ म सचार का एक सस्ता साधन बनाया और कहा कि ये एक प्रकार सबरोगनाशक औषधि हैं और इन्ही पर भारत की आर्थिक मुक्ति निभर

है उनका विश्वास था कि पिछले पचास वर्षों के प्रशासन म रेलपथा और नहरा का निर्माण ही एकमात्र अथवा प्रधान शुभ काय था इसक लिए सरकार का दावा सही है और उस इसका भारी श्रय मिलना ही चाहिए भारतीय जनता सचमुच अगरेज जनता के प्रति अपना कृतज्ञता ज्ञापित करती है (एसेज पृ० 123 126 और पृ० 103 106 108 128) तथा देखिए इडियन स्पक्टटर 4 सितबर (आर० एन० पी० बंग 10 सितबर 1881) जामे जमशद 10 जनवरी (वही 15 जनवरी 1881), बाब क्रोनिकल 9 जनवरी (वही) और 20 माच (वही 27 माच 1881) और 16 दिस० (वही, 22 दिसबर 1883) हिंदुस्ताना 2 माच (आर० एन० पी० पी० एन०, 5 माच 1884) हिंदू 9 जनवरी 1885 मराठा ने 24 फरवरा 1884 क अक म लिखा "रेलवे के और अधिक प्रसार क बिना भारत के सदा विकासशील राष्ट्रो की पक्ति म खडे होने की आशा नही की जा सकती 1884 के बाद म यह समथन बिखरता दिखाई देता है इसका कारण कदाचित 1884 की प्रवर समिति के प्रतिवेदन और कायवाही पर विचार विमश का फल था अथवा भारतीय उद्योग रुचि के उदय का परिणाम था जो इस समय व्यापार रुचि पर प्रभुत्व पाने लगी थी

21 नौरोजी पावर्टी पृ० 193 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 701 और 671 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 22 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स पृ० 188 पर दत्त स्पीचेज II पृ० 44. रामगोपाल पूर्वोद्धत पृ० 145 पर उद्धत रानाडे एसेज पृ० 97 क्रमश

22 क्रमश आर० एन० पी० बग० 10 मई 1884 वही, 31 मई 1891 आर० एन० पी० बंग 4 जुलाई 1903 और वही 3 दिसबर 1904

23 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 676-7 और पृ० 687

24 रानाडे एसेज पृ० 86 90 क्रमश

25 22 मई 1901 को मदुरा म मद्रास प्रांतीय परिषद म अभिभाषण स्टेटसमन 31 मई 1901 म उद्धत

26 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स पृ० 193 तथा देखिए उनकी ई ए पृ० 262 271

27 इडियन स्पक्टेटर, 19 अक्तूबर (आर० एन० पी० बंग 25 अक्तू० 1884) हिंदू 23 जनवरी 1885 बगवासी 23 अप्रल (आर० एन० पी० बंग० 30 अप्रल 1887) आयजनप्रियान, 1 माच (आर० एन० पी० एम० 31 माच 1895) दत्त इग्लड एँड इडिया पृ० 81 स्वत्व मित्रन 9 अगस्त (आर० एन० पी एम० 15 अगस्त 1899) बगाली 27 अप्रल 1901 गोखले स्पीचेज पृ० 21 रिप० आई० एन० सी०—1904 पृ० 16९ वाचा सी० पी० ए०, पृ० 624 एम० के० पटेल रिप० आई० एन० सी०—1902 पृ० 141

28 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 687 8 और पृ० 675 684 693 और देखिए जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स, पृ० 193

29 नेटिव आपीनियन 9 सितबर (आर० एन० पी० बंब 15 सित० 1883) शशिलेखा 1 अक्तूबर (आर० एन० पी० एम०, 15 अक्तूबर 1897)

30 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स 193

31 गोखले वित्तकी कमीशन खड III प्रश्न 18140-1 18155-60 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 22

32 नौरोजी पावर्टी पृ 193-5 इदु प्रकाश 13 दिसबर (आर एन० पी० बंब 18 दिसबर 1875) ए० बी पी० 18 अगस्त 1881 मराठा 3 फरवरी 1884 7 दिसबर 1902

इंडियन स्पक्टेटर 17 फरवरी 1884, युनाइटड इंडिया, 11 अगस्त (बी० ओ० आई 31 अगस्त 1884) जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 695, हिंदू 23 जनवरी 1885 29 अक्तूबर 1897 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, पृ० 270, बंगवासी 25 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 2 मई 1896), वाचा स्पीचेज, परिशिष्ट पृ० 23 तिलक रामगोपाल पूर्वोद्धत पृ० 145 पर उद्धत दत्त इग्लड ऐंड इंडिया, पृ० 143 ई एच II, पृ० 605, स्वदेशमित्रन् 30 अक्तू० (आर० एन० पी० एम० 30 नवबर 1897), केसरी 19 नवबर (आर० एन० पी० बब 23 नवबर 1901) मोदवृत्त 29 जून (वही 4 जुलाई 1903), जी० एस० अय्यर विलबी आयोग, खड III प्रश्न 19564 इंडियन पालिटिक्स पृ० 190-2 पर, और ई ए, पृ० 267 70

33 नौरोजी पावर्टी पृ० 193-5 जी० एस० अय्यर ई ए, पृ० 268 270 इंडियन पालिटिक्स पृ० 190 पर

34 नौरोजी पावर्टी पृ० 195 और देखिए जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 268

35 जी० एस० अय्यर विलबी आयोग खड III प्रश्न 19636, 19640-1 19644 इंडियन पालिटिक्स पृ० 190 इसी तथ्य की पुष्टि म उन्होंने 1903 म थानर को उद्धत किया रेलवे उत्तम है सिंचाई अच्छी है परतु धन की निकासी धारा डालने और उसे लगातार विस्तृत बनाने की क्षतिपूर्ति के रूप मे न पहली अच्छी है और न ही दूसरी इस निकासी न भारत के हृदयरक्त को चूस लिया है और उसके जीवन रस की प्रमुख आधारभूत औद्योगिक शक्ति को क्षीण कर दिया है (डब्ल्यू० टी० थानर वेस्ट मिंस्टर रिव्यू 1880 ई ए पृ० 287 पर उद्धत)

36 बगवासी 23 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 30 अप्रल 1887) और 5 मई (वही 12 मई 1894) हितवादी 25 जुलाई (वही 1 अगस्त 1891), ए० बी० पी०, 20 सितबर 1891 आयजनप्रियान, 1 मार्च (आर० एन० पी० एम० 31 मार्च 1895), दनिक ओ समाचार चद्रिका, 6 जनवरी (आर० एन० पी० बग०, 9 जनवरी 1897) बगाली, 27 अप्रल 1901 नेटिव ओपीनियन 8 मई (आर० एन० पी० बब० 11 मई 1901) एन० के० एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 138 मोद वृत्त 29 जून (वही, 4 जुलाई 1903) सूर्योदय प्रकाशिका 18 मई (आर० एन० पी० एम०, 21 मई 1904) जी० एस० अय्यर ई ए प० 110-11 276 बगवासी न 6 जुलाई 1889 के अक म रेलवे के विस्तार के समथकों को लालची श्वेत सिद्ध करके उनकी भत्सना की (आर० एन० पी० बग० 13 जुलाई 1889) इस तथ्य की पुष्टि म वाचा ने 1889 के अकाल आयोग के प्रतिवेदन से कडिका स० 536 को उद्धत किया जो इस प्रकार थी यह सही है कि रेलें सूखे के वर्षों मे अकालग्रस्त होने की आशकावाले प्रदेशो में अनाज लाती हैं परतु साथ ही अधिक उपज के वर्षों मे उन प्रदेशो को अनाज के भडार से वचित भी करती हैं (सी० पी० ए० पृ० 577)

37 वजन स्पीचेज II पृ० 277 9

38 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 276 86 बगवासी 5 मई (आर० एन० पी० बग० 12 मई 1894) दनिक ओ समाचार चद्रिका 6 जनवरी (वही 9 जनवरी 1897) बगाली 27 अप्रल 1901 एन० के एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी०—1901 पृ० 138

39 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 278

40 एस एन० बनर्जी स्पीचेज I पृ० 179 इसी म पृ० 178 पर उद्धत कलकत्ता मे 2 मार्च 1878 को जनसम्मेलन मे प्रस्तुत प्रस्ताव पार्लियामेंटरी कमेटी आन इंडियन पब्लिक वक्स

जे० पी० एस० एस० जुलाई 1881 (स० 1 खड IV), पृ० 8 रास्त गुफ्तार 5 जून (आर० एन० पी० बब 11 जून 1881). जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 218 687 ट्रिब्यून, 25 अप्रल (बी० आ० आई० 15 मई 1884), नव विभाकर 24 मई (आर० एन० पी० बग० 29 माच 1884) ढाका प्रकाश 30 माच बगवासी 29 माच (वही 5 अप्रल 1884) बर्दवान सजीवनी, 22 अप्रल (वही 26 अप्रल 1884) साम प्रकाश 26 अप्रल (वही 3 मई 1884) भारत मिहिर, 13 मई (वही 24 मई 1884) दनिक औ समाचार चन्द्रिका 31 मई (वही, 6 जून 1891) लोकोपकारी 29 अगस्त (आर० एन० पी० एम० 15 सितबर 1897) केसरी 19 नवबर (आर० एन० पी० बब०, 23 नवबर 1901) गोखले स्पीचेज प० 1194 विन्बी कमीशन खड III प्रश्न 18399, 18406 वाचा स्पीचज, परिशिष्ट पृ० 20 22 3 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 578 9 दत्त ई एच I पृ० 212 और स्पीचज II पृ० 44 76-7 ई एच II प० 605 एन० के० एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 138

41 वाचा सी० पी० ए० प० 580

42 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 270 1

43 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स पृ० 188

44 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 260

45 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 630-1 2 फरवरी 1889 के अक म बगवासी ने भी निर्देश किया कि ब्रिटन म भी भारी निर्यातो के लिए रेल दरें घटा दी हैं

46 1916-18 के भारतीय उद्योग आयोग द्वारा यथा निर्दिष्ट दर नीति परवर्ती वर्षों मे भारतीय राजनीति की ज्वलत समस्या बन गई थी (देखिए, प्रतिवेदन अध्याय XIX) और अन्य असख्य अधिकृत विद्वानो तथा लेखको की पुस्तकें परवर्ती वर्षों मे जी० एस० अय्यर तथा जो० वी० जोशी द्वारा निर्दिष्ट पथ पर रेलो की दर नीति की समालोचना रेलवे पर लिखने वाले भारतीयो की सामान्य शली बन गई

47 दखिए रेलवे सम्मेलन में 3 सितबर 1888 को बगाल राष्ट्रीय वाणिज्य सदन द्वारा अपन 1888 के प्रतिवेदन म प्रस्तुत स्मरण-पत्र

48 जोशी पूर्वोद्धत प० 688

49 वही, पृ० 689 और वही प० 801-02 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 191 ई ए प० 266

50 जोशी पूर्वोद्धत प० 689 और जी० एस० अय्यर ई ए प० 265 और सहचर 30 अप्रैल (आर० एन० पी० बग० 10 मई 1884) साथ ही जोशी और अय्यर ने निर्देश किया यह विदेशी राजनीतिक प्रभुत्व था जिसने ऋण ली हुई धनराशि से रेल-पथो का निर्माण किया ये ही अपने आप म रोग थ जबकि स्वतत्र देशो मे रेलें असख्य लाभो की जनक सिद्ध हो रही हैं जोशी पूर्वोद्धत प० 670-1 684 689 जी० एस अय्यर इडियन पालिटिक्स पृ० 189-90 और ई० ए० पृ० 261 268 270

51 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 191 2 और ई ए, पृ० 262, 271 दत्त इग्लैंड ऐंड इडिया पृ० 130 एन० के० एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 138

52 इसका सुझाव वेरा आस्ट द्वारा उनकी पुस्तक दि इकोनामिक डिवलपमट आफ इडिया पृ० 14: म दिया गया है

53 इस प्रकार की आलोचना का अकेला उदाहरण मुझे बगवासी के 5 मई 1894 के निम्न अवतरण

म मिला है रेलो ने वण व्यवस्था को गहरा धक्का पहुचाया है क्योंकि रेलों के डिब्बा म सभी वर्णों के लोगो को बचो पर समान रूप से और समान स्तर पर बठना पडता है (आर० एन० पी० बग०, *12 मई 1894*)

54 उदाहरणाथ 1883 म दादाभाई नौरोजी ने लिखा अतएव लोक कर्मों के सबध म वास्तविक महत्वपूर्ण प्रश्न उन्हे रोकने की विधि सोचने का नहा प्रत्युत उनसे जनता के लाभान्वित होने की विधि सोचने का है इग्लैंड का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण और महान काय भारत म इन लोक कर्मों का विकास है परन्तु साथ ही देखना यह भी है कि वे यहा क लोगो के लिए लाभदायक हो हानिप्रद न हों ऐसा न हो कि उनसे भारतीय दास बन जाए और दूसरे लोग उनको हडप जाए (पावर्टी पृ० 196)

55 जी० एम० अय्यर ई० ए० पृ० 272 और दत्त ई एच II, पृ० 174 और 545

56 राष्ट्रवादी अथशास्त्रियो के मत क लिए देखिए जोशी पूर्वोद्धत पृ० 674-6 684 687 8 693, जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 186 और ई० ए० प० 272 3 गोखल स्पीचेज पृ० 21 1157 1194 और विलबी कमीशन, खड III प्रश्न 18150 18407, 18410-14 पी० ए० चारलु आई० सी० पी० 1900 खड XXXIX पृ० 144 श्रीराम आई० सी० पी० 1904 खड XLIII पृ० 510 दत्त इडियन पालिटिक्स प० 53 ई एच I प० 312 ई एच II, प० 174 357 546 स्पीचेज II पृ० 37 44 60 77 फमिस एड लैंड एससमट इन इडिया (लदन 1900) (इसे आग निर्देश के लिए फमिस इन इडिया से सकेतिक किया जाएगा) पृ० 305 समाचारपत्रो के लिए देखिए नवविभाकर 25 जून (आर० एन० पी० बग०, 30 जून 1883) बगाली 3 मई 1884 रास्त गुफ्तार 2 माच (आर० एन० पी० बग 8 माच 1884) हिंदू, 18 अप्रल 1884 न्याय सुधा 7 मई (आर० एन पी० पी० एन० 12 मई 1884), नवविभाकर 21 अप्रैल वन्वान सजीवनी 22 अप्रल, साधारणी 20 अप्रल (आर०एन०पी० बग०, 26 अप्रैल 1884), समाचार चद्रिका सोम प्रकाश 26 अप्रल (वही, 3 मई 1884), सहचर, 30 अप्रैल (*वही 10 मई 1884*) भारत मिहिर 24 मई (*वही 31 मई 1884*) 25 जनवरी बगवासी 9 अप्रल (वही 16 अप्रल 1887) रहबर, 25 जनवरी (आर० एन० पी० एन०, 30 जनवरी 1895) लोकोपकारी 29 अगस्त (आर० एन० पी० एम० 15 सितबर 1897), शशिलेखा 26 अप्रल (वही 30 अप्रल 1898), जमानुक्लन 13 मई (वही 13 जून 1903) केसर ए हिंद 23 अगस्त (आर० एन० पी० बब० 29 अगस्त 1903) इदर प्रकाश 30 नवबर (वही 3 दिसबर 1904) हली हितवादी 5 अप्रैल (आर० एन० पी० बग० 15 अप्रल 1905) भले ही स्थान का अभाव अधिक उदाहरणो को उद्धत करने की अनुमति न दे फिर भी यह दिखाने के लिए कि *किस प्रबलता से इस दृष्टिकोण का समथन किया गया था हम दो तीन उदाहरणो* को प्रस्तुत करने के लोभ का तो सवरण नही कर पाते

जी० वी० जोशी

भारत मे न केवल अगरेजी राज्य को प्रत्युत अगरेजी वाणिज्य व्यवसाय को भी सुदढ करना लाड डलहौजी का एक स्वप्न था और इस गहरी महत्वाकाक्षा के लिए भारत के स्थाई हितो का गौण रूप दे दिया गया था इग्लड में उन्मुक्त व्यापार सिद्धात के समकालीन उदय ने और इस सिद्धात के अनुयायियो द्वारा लब्ध प्रसिद्धि ने चगुल मे फसाने वाली और नितात स्वार्थपूर्ण इस नीति के लिए आध्यात्मिक आधार का काय किया ब्रिटन राष्ट्र द्वारा भारत की कीमत लकाशायर

उत्पादना को पोषित करने और बढ़ाने के लिए उत्पन्न करने वाले कृषि सबधी कच्चे मान के परिमाण के निर्यात की क्षमता के सम्भ म ही आकी गई भारत को अपनी सारी शक्तियां कच्चे माल का निर्यात बढाने म ही लगानी पडी नहरो रेलों सडका और सुधरे सचार साधनों को हर कीमत पर अधिकाधिक विकसित किया गया ताकि भारत से इग्लड को कच्चे माल के निर्यात और इग्लड से वहा के पक्के उत्पादनो के भारत म आयात को सुविधाजनक बनाया जा सके तुलनात्मक रूप से इस सारी प्रक्रिया म भारत की अपनी जरूरता की ओर कोई ध्यान नहा दिया गया भारतीय साधनो का सयोजन ता सभी प्रकार के सन्हा म और किसी भी त्याग के मूल्य पर पूरा करना ही था (पूर्वोद्धत पृ० 674-5)

जी० एस० अय्यर

ब्रिटिश पूजीपति और राजनीतिज्ञ के मुह से बेईमानी का स्वर ही निकलता है, यह स्मरणीय है कि रेलपथो के निर्माण का प्रत्येक मील अनेक अगरेजा का इतना अधिक लाभ सवधित करता है कि प्रभावशाली व्यक्ति भारतीय अधिकारिया पर प्रतिवष नए काय को हाथ म लेने का निरतर दबाव डालने से कभी नही रुकते (ई० ए० प० 272 3)

गोपालकृष्ण गोखले

भारतीय लोग यह अनुभव करते हैं कि यह निर्माण काय प्रधान रूप से ब्रिटिश व्यापारीवग तथा धनिक समुदाय के हितो के लिए ही किया जा रहा है और यह हमारे ससाधनों के और अधिक शोषण म ही सहायक है (स्पीचेज प० 1194)

पी० ए० चारलू

रेलो का प्रयोजन वास्तविक रूप से उद्यम का वाणिज्य का उत्पादन का रेल सबधो का और महत्वाकाक्षी इजीनियरो का प्रयोजन है इन सबके प्रतिनिधि निश्चित रूप से इस सबध मे अपना प्रलुब्ध स्वर ऊचा करने मे तथा अपनी सुसस्कृत सशक्त प्रतिभा का उपयोग करने म सगठित है (एल० सी० पी० 1900 खड XXXIX, पृ० 144)

नवविभाकर, 21 अप्रैल 1884

रेला की आवश्यकता ब्रिटिश व्यापारियो के लिए है अगरेज व्यापारी ही इग्लड के शासक हैं, ससद उनके नियत्रण म है मत्री उनके सेवक हैं ब्रिटिश व्यापारियो के लिए अनुकूल और प्रसन्नतादायक नीति ही उस राष्ट्र की सर्वोत्तम नीति है (आर० एन० पी० बग० 26 अप्रैल 1884)

57 नवविभाकर 1 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग० 6 अक्तू० 1883) साधारणी 20 अप्रैल नवविभाकर 21 अप्रल (आर० एन० पा० बग 26 अप्रैल 1884) समय 12 मई (वही 17 मई 1884) भारत मिहिर 13 मई (वही 24 मई 1884) बगाली 3 मई 1884 हिंदू 23 जनवरी 1884 बगवासी 9 अप्रल (आर० एन० पा बग० 16 अप्रैल 1887) जोशी पूर्वोद्धत प 670 675-6 689 जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 181 दक्षिण इ एच ओ समाचार चन्द्रिका 21 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 24 अप्रल 1897) दत्त II पृ० 174 546 और स्पीचेज I प० 98 इदु प्रकाश 30 नवबर (आर० एन० पी० बब

3 नवबर 1904) हैली हितवादी 5 अप्रैल (आर० एन० पी० बग 15 अप्रल 1905)

58 सहचर 30 अप्रल(आर० एन० पी० ब० 10 मई 1894) समय 12 मई(वही, 17 मई 1894) बगवासी 3 मई 1894, माड्रदी परम्ल 15 जून (आर० एन० पी० बग 21 जून 1894) केसरी 9 सितबर (वही 13 सितबर 1890) जोशी पूर्वोद्धत पृ० 685 दैनिक औ समाचार चन्द्रिका 21 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 24 अप्रल 1897) जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 181 दत्त स्पीचेज I प० 98.

59 नवविभाकर, 21 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 26 अप्रल 1894) बगवासी 5 मई (वही 12 मई 1894) दैनिक औ समाचार चन्द्रिका 21 अप्रैल (वही 24 अप्रैल 1897) स्वदेशमित्रन 30 अक्तू० (आर० एन० पी० एम० 30 नव० 1897) दत्त स्पीचेज I पृ० 95 जी० एस० अय्यर इ० ए०, प० 263

60 समय, 12 मई (आर० एन० पी० बग०, 17 मई 1894) बगवासी 9 अप्रल (वही 16 अप्रैल 1887), केसरी, 9 सितबर (आर० एन० पी० बब० 9 सितबर 1890) दैनिक औ समाचार चन्द्रिका 21 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 24 अप्रल 1897) जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 181

61 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 674 और नवविभाकर 1 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग०, 6 अक्तूबर 1883)

62. जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 181

63 जोशी पूर्वोद्धत प० 675 688 693 नवविभाकर 24 मार्च (आर० एन० पी० बग० 29 मार्च 1884) बगवासी 29 मार्च ढाका प्रकाश 30 मार्च (वही 5 अप्रैल 1884) साधारणी, नवविभाकर 21 अप्रल (वही 26 अप्रैल 1884) सोम प्रकाश, 26 अप्रैल (वही 3 मई 1884) मुर्शिदाबाद पत्रिका 30 अप्रैल (वही 10 मई 1884) रास्त गुफ्तार 25 मई (आर० एन० पी० बब 31 मई 1884), सहचर 8 सितबर (आर० एन० पी० एन०, 14 सितंबर 1892) लोकोपकारी 29 अगस्त (आर० एन० पी० एम० 15 सितंबर 1897) जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 272 दत्त स्पीचेज I पृ० 102 ई एच II, पृ० 174, गोखले स्पीचेज, पृ० 1194 यह अत्यत उत्सुकतावर्धक तथ्य है कि रेल आविष्कर्ता के कदाचित अपने युग के सर्वाधिक ममज्ञ विचारक हाइड क्लार्क ने अत्यत स्पष्ट शब्दो मे यह लिखा रेलो के प्रवर्तन का वास्तविक लक्ष्य यह है कि हिंदुस्तानी इनका निर्माण करें ताकि इग्लैड के लोग इनसे लाभ का बडा अश पाने म इनसे समर्थ हो सकें उद्धत, जिक्स म पूर्वोद्धत पृ० 226 और देखिए, बल पूर्वोद्धत प० 254 5

64 जोशी पूर्वोद्धत 675

65 जी० एस० अय्यर ने 1903 मे लिखा श्री राबटसन ने अपने सारे विस्तृत प्रतिवेदन म कहीं भी भारत की विशिष्ट स्थिति को ध्यान मे नही रखा वस्तुत विदेशी ब्रिटिश शासन के अतर्गत भारत की एक विशिष्ट अवस्था हो गई है और यह यह माग करती है कि भारत की समृद्धि की समस्या के समाधान के लिए अन्य देशो के ज्ञान और अनुभव को उद्धत करने की कोई आवश्यकता नहीं प्रत्यत अधिक सशक्त विरोधी हितो से निरतर घिरी हुई उसकी अपनी आवश्यकताओ को ही समझने की आवश्यकता है (ई० ए० पृ० 266-67 और पृ० 261, 263) तथा देखिए एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स पृ० 182 192 3 और पाद टिप्पणी 194 और आगे भाइ नौरोजी ने एक भिन्न रूप म ही सही, यही दृष्टिकोण व्यक्त किया लोक कर्मों

वास्तविक समस्या उन्हें समाप्त करने की नही प्रत्युत यह देखने की है कि उनसे देश के जन साधारण को पूरे लाभ किस प्रकार प्राप्त कराए जाए (पावर्टी पृ० 196)

66 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 696 और 676 क्रमश और भी सरकार विदेशी व्यापारियों को ब्याज के बकाया भुगतान के रूप में उपहार अर्पित करने के स्थान पर इस चार करोड की राशि को देश मे ही औद्योगिक सगठन की स्थापना म अथवा स्वदेशी उद्योग को अस्थाई सहारा देकर उसी दिशा म उसे प्रोत्साहन देने म अथवा यहा की जनता की ही जबा म सौ गुना बढ़कर रहने के लिए देश के अन्याय उपयोगी कार्यों म व्यय करती तो सचमुच यह बहुत ही अच्छा होता (पृ० 688) और देखिए पृ० 671 689

67 जी० एस० अय्यर इ ए पृ० 271 और इडियन पालिटिक्स पृ० 182 188 डी० इ० वाचा ने भी राष्ट्रीय काग्रेस के 1901 म हुए सत्रहवें अधिवेशन म सभापतीय अभिभाषण म यह दावा किया यह अब स्वीकार कर लिया गया है कि रेलें केवल एक स्थान से दूसरे स्थान पर खाद्यान्नो के शीघ्र वितरण का साधन मात्र हैं परतु वे देश की सपत्ति म एक रुपये की भी वृद्धि नही करती उन्होने इस बात की शिकायत की कि केंद्रीय अधिकारियो के इस भ्रम को तोडने म अनेक वर्ष लग गए (सा पा ए पृ० 577) और देखिए रानाडे एसेज पृ० 88 और हिंदू 23 जून 1885

68 ए वार्निंग वायस एज रिगार्ड्स रेलवेज इन इंडिया (भारतीय रेलो के प्रति चेतावनी का स्वर) इदु प्रकाश 21 अप्रैल 1884

69 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 671

70 सहचर 30 अप्रैल (आर० एन० पी० बग० 10 मई 1884) जी० एस० अय्यर इ० ए० पृ० 261

71 जी० वी० जोशी ने 1884 में लिखा यदि परिवहन की इन सुविधाओ के साथ साथ राज्य देश म विविध प्रकार के औद्योगिक जीवन के लिए समुचित आर्थिक स्थिति जुटाने की भी व्यवस्था करता केवल तभी परिवहन के लाभो को राष्ट्र के काम लाया जा सकता था (पूर्वोद्धत पृ 696) और अरुणोदय 24 फरवरी (आर० एन० पी० बब 8 मार्च 1884) आयजन प्रियान 1 मार्च (आर० एन० पी० एम० 31 मार्च 1895) क्रिस्तनपत्रिका 15 मई (वही 21 मई 1904)

72 आर० एन पी बग० 10 मई 1884

73 यहा तक कि 1873 म मार्क्स न भी भविष्यवाणी की थी जब एक बार लोहा और कोयलावाले किसी देश के सचलन म मशीनें प्रचलित हो गइ तो उन्हे उनके निर्माण कार्य से हटाना सरल नही होगा एक विशाल देश म भी रेल जाल कायम नही रखा जा सकता जब तक कि रेल सचलन के लिए तात्कालिक और सामयिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अपेक्षित औद्योगिक प्रक्रियाए लागू नहीं की जाती और उनम से रेलो से तात्कालिक रूप मे न जुडी हुई औद्योगिक शाखाओ की मशीनो के प्रयोग का विकास भी आवश्यक रूप से वाछनीय है अत रेल प्रणाली भारत म वास्तव म ही आधुनिक उद्योग की अग्रगति देने वाली होगी (आन कलोनियलिज्म पृ० 79) परतु वास्तव इस रूप म नही हुआ 19वीं शताब्दी की अवधि म रेलो का सारा निर्माण इग्लैड म बने सामान से ही किया गया रेलें अपने निर्माण कार्य के लिए अपेक्षित सामान को तैयार करने के लिए भारत म किसी सशक्त उद्योग को जन्म देने म असमर्थ रहीं (जिक्स पूर्वोद्धत पृ० 227) अतत एक सतर्क भारतीय विचारक ने यह भी अनुभव किया और रेलों के

विस्तार के सन्भ में भारत मे लोहा उद्योग को प्रोत्साहन न देने के लिए सरकार की आलोचना की नेटिव ओपीनियन ने अपने 20 दिसंबर 1885 के अक म लिखा यह आश्चय का विषय है कि कोयला क्षेत्रा म लाहे का बडी बडी परतें मिली हैं हमारी सरकार इनका उपयोग पटरिया बनाने और पुला व शहतीर बनाने क बन्ले विन्शी बाजारो से उनकी खरीद कर रहा है विन्शी लाहे पर खच का गइ धनराशि का यन्ि भारत म उपयोग किया जाता तो हम न कवल अपेक्षाकृत सस्ता और बढिया लोहे का उत्पादन कर सकते बल्कि नए उद्योग का प्रारभ भी कर सकते थे क्या सरकार समस्या के इस पक्ष पर ध्यान न्गी और दूसरों को इस दिशा मे पूजी लगाने को प्रेरित करने क लिए स्वय पहल करगी ?' समीक्षाधीन काल मे राष्ट्रीय नेताआ की रेल भडारा के लिए सरकार द्वारा भारतीय फर्मों से खरीन और उनस अप्राप्यता की स्थिति मे उनके उत्पादकों से खरीद की एक अत्यधिक महत्वपूण आर्थिक माग थी (अध्याय 3 ऊपर) भारतीय इस्पात उद्योग की स्थापना 20वी शता्दी में की जा सकी जबकि रेलो के निर्माण का बहुत काफी काय पहले ही किया जा चुका था वस्तुत भारतीय इस्पात उद्योग का उदय रेलो की तात्कालिक और सामयिक मागों की पूर्ति के सन्भ म ही नहा हुआ था कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि उद्योगीकरण की प्रक्रिया अत्यत मन्द थी और विदेशी पूजी के कठोर नियत्रण म थी

74 दादाभाई नौरोजी ने उन लोगा का आड हाथा लिया जो यह कहते हैं कि क्योकि रेलो ने नई मडी खोल दी है अत देश के उत्पादन अवश्य बढ़ने चाहिए उन्होंने यह दोहराया पदार्थों की माग श्रम की माग नहीं है और निवेश के लिए पूजी के अभाव म बडी मात्रा म उद्योगो का विस्तार नहीं किया जा सकता (पावर्टी पृ० 56)

75 जोशी ने निर्देश किया अमरीका मे उन्मुक्त व्यापार नहीं है और सरक्षण नियम सर्वोच्च हैं वहा रेलें सरकारी प्रतिष्ठान नही वे निजी उद्यमो द्वारा अपने ही दायित्व पर बनाई गई हैं अमरीका म रेलें भौतिक समद्धि का एक भाग हैं वहा सारे देश म कृषि उत्पादन वाणिज्य समृद्धि आदि अन्य पक्षो का भी साथ साथ और समुचित रूप से विकास किया जा रहा है दूसरी ओर 'हमारी स्थिति विचित्र रूप से अमरीका जसी नही है (यहा) रेलो के विकास का राष्ट्र की समद्धि के तत्वो की सामान्य वद्धि के साथ कोइ सबध ही नही (पूर्वोद्धत पृ० 670-1)

76 ऊपर देखिए

77 जोशी पूर्वोद्धत प० 671 और 696

78 ए वानिंग वायस एज रिगाड स रेलवेज इन इडिया (भारत म रेलो के सबध म चेतावनी का स्वर) इन्दु प्रकाश 20 अप्रल 1884 और जोशी पूर्वोद्धत प० 671 क्रमश आर० सी० दत्त ने भी टिप्पणी की रेलो की व्यवस्था देश की तात्कालिक आवश्यकताओ से कही आगे है (ई एच II, प० 450)

79 हिंदू 23 जनवरी 1885 रानाडे एसेज प० 88 91 2 97 जोशी पूर्वोद्धत प० 671

80 उद्योग के लिए देखिए जोशी पूर्वोद्धत प०688 याजदा परस्त 15 जून (आर० एन० पी० बब, 21 जून 1884) नेटिव ओपीनियन 20 दिसबर 1885 रानाडे एसेज पृ 87 9 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 264 272 रेलो के सिंचाई से सबध की चर्चा आगे पथक रूप स की गई है इसी प्रकार गोखले ने 1897 म विलबी आयोग के सामने घोषणा की हम उनके और रेल पथो की आवश्यकता नही हम तो इस समय पहले शिक्षा पर व्यय करना चाहते हैं और तदुपरात

रेलो पर भाप एक ही दिशा मे बढ रहे हैं और इससे अन्य दिशाए उपेक्षित हो रही हैं यह ठीक है कि ये सभी रेलें अनुपयोगी नही हैं परतु प्रश्न यह है कि हमारे लिए कौन सा उपयोगिता अपेक्षाकृत अधिक महत्व का है (विलबी आयोग, खड III प्रश्न 18409 और देखिए प्रश्न 18400)

81 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I प० 170-81 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 55, 671 इडियन स्पक्टटर, 24 फरवरी 1884, नेटिव ओपीनियन 24 फरवरी 1884, इन्दु प्रकाश, 21 अप्रल 1884, बगाली 3 मई और 9 अगस्त 1884 ट्रिब्यून 1 माच (वी० ओ० आई० 15 माच 1884), विहार हेराल्ड 22 और 29 अप्रल (वही 15 मई 1884) अरुणोदय 24 फरवरी (आर० एन० पी० बद 8 माच 1884) रास्त गुफ्तार 2 माच (वही), बगवासी 29 माच और ढाका प्रकाश 30 माच (आर० एन० पी० बग०, 5 अप्रल 1884) सहचर 23 अप्रल (वही 3 मई 1884) भारत मित्र 13 मई (वही 24 मई 1884), हिंदू 6 अप्रैल 1889 जी० एस० अय्यर विलबी आयोग खड III प्रश्न 19609 और इडियन पालिटिक्स, पृ० 182 194 गोखले स्पीचेज प० 1194 और विलबी आयोग खड III प्रश्न 18399, 18406 दत्त इडियन पालिटिक्स 52 3 फर्मिस इन इन्डिया प० 82, 305 और ई एच II प० 174 359-60 546 548 आर० सी० दत्त ने लिखा जब इग्लड की जनता की प्रति व्यक्ति आय 42 पौंड के मुकाबले भारतीय जनता की प्रतिव्यक्ति आय 2 पौंड है तो हम यूरोप भ्रमण की विलासिता के मजे लेने की बात सोच ही कैसे सकते हैं (ई एच II पृ० 548)

82 आगे देखिए

83 इडियन स्पक्टटर 2 माच 1884 इन्दु प्रकाश 21 अप्रल 1884 ट्रिब्यून 25 अप्रल (वी० ओ० आई० 15 मई 1884) युनाइटेड इडिया 11 अगस्त (वही, 31 अगस्त 1884) हिंदू 29 अक्तूबर 1897 मराठा 7 दिसबर 1902 दत्त फमिस इन इडिया पृ० 305

84 इन्दु प्रकाश 21 अप्रैल 1884 हिंदू 18 अप्रल 1884, बगवासी, 9 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 16 अप्रल 1887) वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 20 जी० एस० अय्यर इण्डियन पालिटिक्स पृ० 188 193 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए पृ० 270 माचेस्टर गार्जियन के 5 नवबर 1898 क अक म (इडिया के 11 नवबर 1898 के अक म) दत्त का पत्र रेलो का रुपया भेजने मे निम्न विनिमय दर के प्रभाव स भारत को होने वाले वास्तविक घाटे की समीक्षा क लिए देखिए बेल पूर्वोद्धृत प० 243-4 चिमने पूर्वोद्धृत पृ० 312 और सान्याल पूर्वोद्धृत प० 44 120 1

85 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I प० 180 189 90 इडियन स्पक्टेटर 24 फरवरी 1884 इन्दु प्रकाश 21 अप्रल 1884 इण्डियन नशन 21 अप्रल (वी० ओ० आई० 15 मई 1884) विहार हेराल्ड 22 अप्रल और 29 अप्रैल (वही) जोशी पूर्वोद्धृत प० 687 गोखले स्पीचज प० 1194 दत्त स्पीचेज I प० 102 सायानी एल० सी० पी० 1898 खड XXXVII प 534

86 एस० एन० बनर्जी स्पीचज I प० 190 ट्रिब्यून 22 माच (वी० ओ० आई० 15 अप्रल 1884) इडियन इको 25 अप्रल (वही 15 मई 1884) बगवासी 9 अप्रल (आर० एन पी बग 16 अप्रैल 1887) गोखले स्पीचज प० 1193-4 और विलबी आयोग खड III प्रश्न 18390

87 जोशी पूर्वोद्धृत प० 684 रानाडे एसेज पृ० 89 गोखले स्पीचेज प० 1194 जी० एस०

अय्यर इंडियन पालिटिक्स, पृ० 182 उनका 1898 में मुद्रा आयोग के समक्ष साक्ष्य स्पीचेज I पृ० 98 100 ई एच II, पृ० 358 9 370, 546-8

88 जैसा हम पहले दिखा चुके हैं इस वर्ष तक इस संबंध में राष्ट्रीय दृष्टिकोण विभक्त था 1884 में अथवा उसके उपरांत ही सभी प्रमुख राष्ट्रवादी समाचारपत्रों, हिंदू मराठा इंडियन स्पेक्टेटर ने अपना सारा ध्यान रेलों के प्रश्न पर ही केंद्रित किया

89 1884 के उपरांत रेलों के प्रति यह विशिष्ट दृष्टिकोण लगभग सभी राष्ट्रीय विचारों में अंतःप्रविष्ट हो गया था, अधिकांशतः यह अस्पष्ट था पर कभी कभी स्पष्ट रूप भी ग्रहण कर लेता था, यह तथ्य पूर्वनिर्दिष्ट विवरण को देखने से स्वतः सिद्ध हो जाएगा इस दृष्टिकोण की स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए देखिए इंडियन स्पेक्टेटर, 17 फरवरी 1884 ट्रिब्यून, 1 मार्च (वी० ओ० आई० 15 मार्च 1884) बिहार हेराल्ड 22 और 29 अप्रैल (वही 15 मई 1884) बंगवासी 29 मार्च और सोमप्रकाश, 30 मार्च (आर० एन० पी० बंग० 5 अप्रैल 1884), नवविभाकर, 21 अप्रैल (वही, 26 अप्रैल 1884), सहचर, 30 अप्रैल (वही 10 मई 1884) बंगवासी 9 और 23 अप्रैल (वही 16 और 30 अप्रैल 1884 क्रमशः) पैसा अखबार 29 दिसंबर 1894 (आर० एन० पी० पी०, 5 जनवरी 1895) जोशी पूर्वोद्धत पृ० 684-5 वाचा विलबी आयोग खंड III प्रश्न 17503-04 17546 17613 17616-8 गोखले (वही, प्रश्न 18147 18392 जी० एस० अय्यर वही प्रश्न 18605 18623 6 18630 18963 19011 19560-1 19564 और इंडियन पालिटिक्स पृ० 181 2, पैसा अखबार 5 अगस्त (आर० एन० पी० पी०, 28 अगस्त 1897) हिंदू 29 अक्तूबर 1897 सायानी एल० सी० पी० 1898 खंड XXXVII पृ० 534 दत्त स्पीचेज I पृ० 101 2 स्पीचेज II पृ० 31 केसर ए हिंद 23 अगस्त (आर० एन० पी० बंब, 29 अगस्त 1903)

90 दत्त इंडियन पालिटिक्स पृ० 52 पीछे 81 पाद टिप्पणी में उद्धृत अनेक मतों में यह दृष्टिकोण भी अस्पष्ट है

91 दत्त इंग्लैंड ऐंड इंडिया पृ० 143 स्पीचेज II पृ० 31 फेमिंस इन इंडिया, पृ० 82 305 और ई एच II, पृ० XVII 1778, 375 547 8 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 264 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 687 8 श्रीराम एल० सी० पी० 1904 खंड XLIII पृ० 510

92 दत्त स्पीचेज I पृ० 102 और इंडियन पालिटिक्स पृ० 53 और देखिए दत्त इन्डियन पालिटिक्स, पृ० 52 और ई एच II पृ० 174 177 358 1884 में जी० वी० जोशी ने शिकायत की कि प्रवर समिति ने विषय पर स्पष्ट दृष्टिकोण के लिए स्वदेशी अभिव्यक्ति को गौरव नहीं दिया (पूर्वोद्धत पृ० 669) तथा जी० के० गोखले ने विलबी आयोग के समक्ष अपने साक्ष्य में इस बात पर बल दिया कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अभी तक एक बार भी रेलों के विस्तार की वकालत नहीं की है (विलबी आयोग, खंड III प्रश्न 18415 6)

93 बल पूर्वोद्धत पृ० 31 और 37

94 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I पृ० 189 मराठा 3 फरवरी 1884 बंगाल पब्लिक ओपीनियन 24 अप्रैल (वी० ओ० आई० 15 मई 1884) भारत मिहिर 13 मई (आर० एन० पी० बंग०, 24 मई 1884) सहचर 9 अप्रैल (वही 19 अप्रैल 1890) गुजरात दर्पण 23 मई (आर० एन० पी० बंब 25 मई 1889) गोखले स्पीचेज पृ 1193-4 जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 264-5 दत्त ने इस प्रथा को कलुषित बताया ई एच II पृ० 546

95 नौरोजी एसेज पृ० 108 09 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 691 मराठा, 3 फरवरी 1884 बर्दवान

सजीवनी 22 अप्रल सहचर 23 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 3 मई 1884) हिंदू, 10 अगस्त 1887 दत्त ने थानटन मसे और लाड लारेंस जसे ब्रिटिश अधिकारियो क वक्तव्यों को इसे प्रमाणित करन के लिए पुनरद्धत किया और कहा रेलपथा के निर्माण में अपव्यय हुआ है यात्रियो के सुख की उपेक्षा की गई है यह कदाचित किसी भी देश क रेल उद्यम के इतिहास म अभतपूव घटना है (ई एच II प० 353) और देखिए गोखल विलबी आयोग, खड III प्रश्न 18392

96 1868 म ही दादाभाई नौरोजी ने इस प्रथा क सबध म अपने विचार प्रकट किए थे 'मुझे समझ नही आता कि प्रतिभूति प्राप्त निजी उद्यम का क्या अथ है यह कसा उद्यम है जिसके खतरे और भार तो सरकार के दायित्व हो और कपनी केवल लाभ की ही भागीदार बने (जरनल आफ ईस्ट इडिया एसोसिएशन खड III 1869 स० 1 प० 13) उत्तर-पश्चिमी प्रांतो से निकलने वाली उद् पत्रिका रहबर न प्रतिभूति रेलो को भारतीय करदाताओ की बलि चढाकर अंगरेज पूजीपतिया को धनी बनाने का एक ढग बताया 8 सितबर (आर० एन० पी० एन०, 14 सितबर 1892) और देखिए बगवासी, 9 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 16 अप्रल 1887)

97 पाद टिप्पणी 91 पीछे और 'इडियन स्पक्टेटर 13 फरवरी (आर० एन० पी० बब० 19 फरवरी 1881) बबई समाचार 2 अप्रल (वही 2 अप्रैल 1881) नवविभाकर 21 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 26 जुलाई 1884) बगाली 9 अगस्त 1884 हमारा विचार है कि इस स्थिति का वास्तविक कारण यह था कि उन्हे आशा थी कि प्रतिभूति के अभाव में निजी उद्यमों की सवजन विदित इनकारी से व्यवहार मे नए रेलपथो का निर्माण हो ही नही पाएगा

98 गोखले स्पीचेज प० 1194 दत्त ई एच II प० 549 1886 मे जोशी ने इस माग का एक दूसरा विश्लेषण प्रस्तुत किया पूर्वोद्धत पृ० 107 11 और देखिए वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 103

99 जा० एस० अय्यर ई ए प० 265 और एच० आर० मई 1903 प० 469

100 नौरोजी एसज प० 109 नौरोजी मसानी द्वारा पूर्वोद्धत पृ० 115-6 पर उद्धत जोशी पूर्वोद्धत प० 108 688 693 इण्डियन स्पक्टेटर 23 जन (आर० एन० पी० बब 29 जनवरी 1881) रास्त गुफ्तार 26 माच और बाबे क्रानिकल 26 माच (वही 1 अप्रल 1882) नवविभाकर, 25 जून (आर० एन० पी० बग० 30 जून 1883) मराठा 3 फरवरी 2 माच और 20 जुलाई 1884 नेटिव आपीनियन 24 फरवरी 1884 सहचर 30 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 10 मई 1884) और 18 सितबर (वही 28 सितबर 1889) केसरी 2 सितबर (आर० एन० पी बब 6 सितबर 1884) ए बी० पी० 5 माच 1885 एच आर मई 1903 प० 469

101 जाशी पूर्वोद्धत प० 693 और मराठा 20 जुलाई 1884 क्रमश और जी० एस० अय्यर ई ए, प० 263 265

102 जोशी पूर्वोद्धत प० 693 कसरी 2 सितबर (आर० एन० पी० बब० 6 सित० 1884)

103 जोशी पूर्वोद्धत प० 693 कसरी पूर्वोक्त स्थल रास्त गुफ्तार 26 माच (आर० एन० पी० बब 1 अप्रल 1882) ए० बी० पी० 5 माच 1885 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 23 सहचर न तो 18 सितबर 1889 के अक म यहा तक सुझाव दिया कि रलो के राजस्व से कुछ एक लागू करो का हटाना अथवा कम करना सभव होगा (आर० एन० पी० बग० 28 सितबर 1889) जा एम० अय्यर न राज्य द्वारा निजी कपनियों को पटटे पर दने की नीति क विरोध म यही तक प्रस्तुत किया (ई ए, प० 265)

104 जी० वी० जोशी ने 1886 में इस योजना का समथन किया जिसके मतगत वतमान प्रतिभूत राशियो को सरकारी खाते में सामान्य रेल ऋणो के रूप म बदलने और पुष्ट करने का सुझाव था उन्होंने साथ ही यह टिप्पणी की कि लाभों के बडे बड भागो के अतिरिक्त प्रतिभूत कपनियो की अपेक्षा एकमात्र सरकारी ऋण पत्रो को प्राथमिकता देने स ही हम प्रतिवष 816 000 पौंड का विशुद्ध लाभ हो सकता है (पूर्वोद्धत, पृ० 107 11)

105 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 693

106 आर० एन० पी० बग०, 10 मई 1884 उसी आधार पर जी० एस० अय्यर ने राज्य पथो पर निजी कपनियों पर आपत्ति की 1903 मे उन्होने लिखा कि वे तो पहले ही पर्याप्त सशक्त हैं और प्राय स्वदेशी जनता के विरुद्ध पडने वाले विदेशी निहित स्वार्थों म और भी वद्धि करेंगे (ई ए, पृ० 265)

107 रास्त गुफ्तार 26 मार्च (आर० एन० पी० बब, 1 अप्रल 1882) नवविभाकर, 25 जून (आर० एन० पी० बग०, 30 जून 1883), केसरी 2 सितबर (आर० एन० पी० बब० 6 सितबर 1884), मराठा, 20 जुलाई 1884 ए० बी० पी० 5 माच 1885

108 इडियन स्पैक्टेटर 4 सितबर 1881 प्रत्येक स्थिति म यहूदी धनपतियो (सकेत राथ चाइल्ड की ओर है) को लाने की अपेक्षा स्वय भारतीयो को ही उपयोगी लोक कार्यों म प्रत्यक्ष रुचि लेनी चाहिए यहूदियो का तो एकमात्र उद्दश्य सट्टा बाजार के लेन-देन के लाभो पर एकाधिकार करना है (आर० एन० पी० बब 10 सितंबर 1881) और रानाडे रिव्यू आफ फोमेटस थ्री एसेज आन इडियन फाइनास, (जे० पी० एस० एस०, खड III सख्या 1 जुलाई 1880) प० 80 और पालियामेंटरी कमेटी आन इडियन पब्लिक वक्स ज० पी० एस० एस० खड IV स० I (जुलाई 1881) पृ० 15 रास्त गुफ्तार और गुजराती 11 सितबर (वही, 17 सितबर 1881) ए० बी० पी० 18 अगस्त 1881, आयजन प्रिया 1 माच (आर० एन० पी० एम० 31 माच 1895) जी० एस० अय्यर इडियन पालिटिक्स प० 193 4 और ई ए प० 268 वाचा विलबी आयोग, खड III, प्रश्न 17536-7 17546 गोखले वही प्रश्न 18147 पसा अखबार 5 अगस्त (आर० एन० पी० पी० 28 अगस्त 1897)

109 इडियन स्पक्टेटर, 5 अगस्त (आर० एन० पी० बब 11 अगस्त 1883), मराठा, 14 जनवरी 1883, हिंदू 10 सितबर 1889 सहचर 3 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 13 अप्रल 1895) भारत जीवन 30 मई (आर० एन० पी० एन० 8 जून 1898)

110 मराठा 14 जनवरी 1883 नवविभाकर 25 जून (आर० एन० पी० बग० 30 जून 1883), हिंदू 3 अगस्त 1887 और 20 सितबर 1889 मराठा 7 दिसबर 1902

111 सहचर 23 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 3 मई 1884) वाचा विलबी आयोग खड III, प्रश्न 17546 जी० एस० अय्यर वही पश्न 19564-7 इडियन पालिटिक्स पृ० 194

112 रास्त गुफ्तार 26 माच और बाबे क्रानिकल 26 माच (आर० एन० पी० बब 1 अप्रल 1882), केसरी 2 सितबर (वही 6 सितबर 1884) मराठा 20 जुलाई 10 अगस्त 1884

113 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 694 उन्होने लोकहित के बडे कार्यों के प्रबध म लोगो को सबधित करने की नीति की भी वकालत की (वही प० 826)

114 पृ० 270

115 तुलनीय 1901-02 के बजट भाषण म लाड कजन ने कहा कि भारत मे रेलो के साथ साथ हम सदव सिंचाई के विषय पर भी विचार करते हैं (स्पीचेज II पृ० 281)

116 दि इपीरियल गजटियर आफ इडिया (1908) खड III पृ० 332 और 375-6

117 एल० सी० पा० 1898 खड XXXVII पृ० 534

118 दत्त ई एच II, प० 550 तथा देखिए उनकी ई एच I, पृ० 312 ई एच II पृ० 360 362 स्पीचेज II पृ० 45 77 8

119 केसरी 9 सितबर (आर० एन० पी० बब 13 सितबर 1890) और 19 नव० (वही 23 नवब 1901) हिंदुस्तान 5 अक्तूबर (आर० एन० पी० एन० 13 अक्तू० 1897) पी० ए० चारलू एल० सा० पी० 1900 खड XXXIX प० 144 और एन० सी० पी० 1901 ख XL प० 280 श्रीराम एल० सा० पी० 1904 खड XLIII प० 510 वाचा सा० पी० ए०, प० 576 580 एस० एम० पटल रिप० आई० एन० सी० 1902, प० 229 जा० एस० अय्यर ई ए, पृ० 261 केसर ए हिंद और गुजराती 23 अगस्त (आर० एन० पी० बब 29 अगस्त 1903), इला हितवादी 15 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 15 अप्रल 1905)

120 वाचा स्पीचेज, प० 25 लगभग तथा वाचा विलबी आयोग खड III प्रश्न 17612-9

121 आर० एन० पी० बब० 29 अगस्त 1903 भारतीय मत को और विस्तार से जानने के लिए देखिए जामे जमशद 19 अगस्त (आर० एन० पी० बब, 26 अगस्त 1876) जोशी पूर्वोद्धत प० 678, नेटिव आपीनियन 9 सितबर (आर० एन० पी० बब 15 सितबर 1883), इडियन स्पक्टेटर 27 दिसबर 1891 नेटिव ओपीनियन, 10 जनवरी (आर० एन० पी० बब, 16 जन० 1892) लोकोपकारी 29 अगस्त (आर० एन० पी० एम०, 15 सितबर 1897) हिंद्र 29 अक्तूबर 1897 और 12 मई 1902 सायानी एल० सी० पी० 1898 खड XXXVII प० 534 पसा अखबार 5 अगस्त (आर० एन० पी० पी० 28 अगस्त 1897) एन० के० आर० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 138-9 शशिलेखा 27 सितबर और स्वदेशमित्रन 1 अक्तूबर (आर० एन० पी० एम० 5 अक्तूबर 1901) जनानुकूलन 13 मई (वही 13 जून 1903) विरतना पत्रिका 15 मई (वही 21 मई 1904) गुजराती 23 अगस्त (आर० एन० पी० बब 29 अगस्त 1903) दत्त ई एच II पृ० 178, 270 545 और स्पीचेज II प० 31 49 60

122 नेटिव ओपीनियन, 9 सित० (आर० एन० पी० बब 15 सित० 1883), जोशी पूर्वोद्धत पृ० 336 856 857 866-7 दत्त ई एच II पृ० 171 और स्पीचेज I प० 7

123 रानाडे पार्लियामटरी कमेटी आफ इडियन पब्लिक वक्स जे० पी० पी० एस० जुलाई 1881 (खड IV स० 1) प० 11 नटिव ओपीनियन 9 सितबर (आर० एन० पी० बब 15 सित० 1883) इन्दु प्रकाश 30 नवबर (वही 30 दिसबर 1904) दत्त स्पीचेज II प० 60-78

124 ए० बी० पी० 14 नवबर 1901 और भी जोशी पूर्वोद्धत प० 336 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 25 और सी० पी० ए० प० 575 सायानी एन० सी० पी० 1897 खड XXXVI पृ० 190 पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1900 खड XXXIX पृ० 144 और एल० सी० पी० 1903 खड XLII प० 144-5 दत्त फमिस इन इडिया प० 82, स्पीचेज II प० 60-1 श्रीराम एल० सी० पी० 1904 खड XLIII प० 510 बांबे क्रानिकल 27 मार्च (आर० एन० पी० बब 2 अप्रैल 1881) बाबे समाचार 9 सित० और साम्रा मतमान 9 सित० (वही 10 सितबर 1904) हिंदू 12 मई 1902

125 बांबे समाचार 29 जन० (आर० एन० पी० बब० 28 जन० 1882), जोशी पूर्वोद्धत पृ० 697 शशिलेखा 1 अक्तू० (आर० एन० पी० एम० 15 अक्तूबर 1897) स्वदेशमित्रन

30 अक्तूबर (वही 30 नवबर 1897), पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1901 खड XL प० 280, एन० के० शार० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 139 9 वाचा सी० पी० ए०, प० 576 7 दत्त ई एच II प० 178 366 7 और स्पीचेज II प० 40 60 78 सायानी एल० सी० पी० 1998, खड XXXVII प० 534

126 1898 मे जी० एस० अय्यर ने लिखा वे (रेलें) सपदा का उत्पादन नहा कर सकती, वे तो कवल उसके वितरण म सहायक हो सकती हैं इसके विपरीत सिंचाई काय इस समय केवल एक फसल उगाने वाले किसान को दो फसलें उगाने के योग्य बना सकते हैं (इडियन पालिटिक्स प० 182) 1901 म आर० सी० दत्त ने अगरेजा की एक सभा म कहा रेलें भारत क अन्न सभरण म एक दाने तक की वद्धि नही करती जबकि सिंचाई काय अन्न के उत्पादन को दुगना कर देते है फसलो को बचाते हैं और अकाल रोकते हैं (स्पीचेज II प० 77) और भी इडियन स्पक्टेटर 27 दिसबर 1891, वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 25 तथा सी० पी० ए० पृ० 577, सायानी एल० सी० पी० 1897 खड XXXVI प० 189 हिंदू 12 मई 1902 दत्त ई एच II प० 174 360 इन्दु प्रकाश 30 नवबर (आर० एन० पी० बब 3 दिसबर 1904)

127 नेटिव ओपीनियन, 9 सितबर (आर० एन० पी० बब० 15 सितबर 1883) जोशी पूर्वोद्धत, प० 697 सायानी एल० सी० पी० 1898 खड XXXVII प० 534 कर्णाटक पत्रिका 17 अक्तूबर (आर० एन० पी० एम०, 31 अक्तू० 1898) वाचा सी० पी० ए० प० 578 580, गुजराती 23 अगस्त (आर० एन० पी० बब 29 अगस्त 1903) जी० एस० अय्यर ई ए, प० 267 दत्त ई एच II प० 173 4 हा यह अवश्य है कि यह एकमात्र कसौटी नहीं थी सिंचाई कार्यों के अकालनिरोधक हाने के कारण अलाभप्रद होने पर भी उनका निर्माण करना ही चाहिए दखिए रानाडे पालियामेटरी कमेटी आन इडियन पब्लिक वक्स जे० पी० एस० एस० जुलाई 1881 (खड IV स० 1) प० 26 और दत्त ई एच II प० 369 573 और स्पीचेज II प० 78 इस सबध मे यह भी उल्लेखनीय है कि कतिपय भारतीय लेखको ने बडे परिमाण के लाभदायक सिंचाई कार्यों की आलोचना की और उन्होने उनके स्थान पर छोटे पमाने के कम खचवाले कुओ और तालाबो जसे सिंचाई कार्यों का समथन किया जोशी पूर्वोद्धत, प० 867 8, वाचा स्पीचेज परिशिष्ट, प 25 बगवासी 5 मई (आर० एन० पी० बग० 12 मई 1894)

128 रानाडे पालियामेटरी कमेटी आन इडियन पब्लिक वक्स जे० पी० एस० एस० जुलाई 1881, पृ० 16 25 27, नेटिव ओपीनियन 9 सित० (आर० एन० पी० बब 15 सितबर 1883), शशिलेखा 1 अक्तूबर (आर० एन० पी० एम० 15 अक्तूबर 1897) दत्त ई एच II प० 178 366-7

129 नेटिव ओपीनियन 9 सितबर (आर० एन० पी० बब० 15 सितबर 1883) सायानी एल० सी० पी० 1897 खड XXXVI, शशिलेखा, 1 अक्तूबर(आर० एन० पी० एम० 15 अक्तूबर 1897)

130 दत्त ई एच I पृ० 312 और ई एच II पृ० 545-6 और स्पीचेज II प० 31 60 77

131 आर० एन० पी० बब, 29 अगस्त 1903

132 वही 3 दिसबर 1904 और देखिए, पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1900 खड XXXIX पृ० 144 श्रीराम एल० सी० पी० 1904 खड XLIII पृ० 510 केसरी 9 सितबर (आर०

शन कर दिया गया। परन्तु ब्रिटिश व्यापारियो और कपास उत्पादको के दबाव से शुल्क सुधार और कटौती की प्रक्रिया विशेषत सूती उत्पादनो पर, शीघ्र ही अस्तित्व म आ गई (1861 म सूती गुच्छिया और धागो पर शुल्क घटाकर 5 प्रतिशत और 1862 म घटा कर 3½ प्रतिशत कर दिया गया। 1862 मे सूती टुकडो के सामान पर शुल्क घटाकर 5 प्रतिशत कर दिया गया। 1864 म सामान्य आयात शुल्क घटाकर 6½ प्रतिशत और 1875 मे 5 प्रतिशत कर दिया गया। इन सारे वर्षों मे आयात शुल्क विशुद्ध रूप स राजस्व के उद्देश्यो से ही थोपे गए। इनके पीछे सुरक्षा की इच्छा का लेश मात्र भी नहीं था।

इतने पर भी 1874 के आसपास कपास शुल्क, जो निर्यात शुल्को से प्राप्त होने वाली आय मे मुकाबले कुल राजस्व का आधा भाग बनता था, लकाशायर के कपास उत्पादको की कटु आलोचना का विषय बन गया। 1874 मे माचेस्टर के वाणिज्य सदन ने राज्य सचिव को एक विज्ञापन दिया, जिसमे शिकायत की गई थी कि कपास उत्पादन का सर क्षित व्यापार भारत मे भारत और ग्रेट ब्रिटेन दोनो के लिए अलाभप्रद बनता जा रहा था। उन्होंने साथ ही सूती उत्पादनो पर आयात शुल्को के हटाने की माग की परन्तु नवबर 1874 मे भारत सरकार द्वारा नियुक्त समिति ने इस तर्क का अस्वीकार कर दिया कि शुल्क सरक्षक थे। हा उन्मुक्त व्यापार के लक्ष्य का नए रूढिवादी भारत सचिव लार्ड सेलिसबरी ने बडी प्रबलता के साथ समर्थन दिया और भारत सरकार मे सूती सामान पर आयात शुल्को के हटाने की आवश्यकता पर बराबर और बार बार बल दिया।[3] उसने जोर देकर कहा कि आर्थिक और राजनीतिक दोनो आधारो पर शुल्क का हटाना अत्या वश्यक था। उसने सर्वप्रथम यह तर्क प्रस्तुत किया कि सरक्षण कर ग्रेट ब्रिटेन द्वारा स्वीकृत उन्मुक्त व्यापार की सामान्य नीति के विरुद्ध थे। दूसरे, वे भारत मे निर्यात का प्रतिबाधित करके ब्रिटिश उत्पादको को हानि पहुचाते थे। तीसरे करो की वृद्धि म भारतीयो के जीवनोपयोगी वस्तुओ के मूल्य बढ जाने स वे उनके हितो के विरुद्ध थे। अन्तिम वे पनपते भारतीय उद्योग के सच्चे हितो के विरुद्ध थे। उन्ही के कारण वह कृत्रिम उत्तेजना के अतर्गत कच्ची नीव पर विकसित हो रहा था। इन सबसे बढ चढकर उसने टिप्पणी की कि राजनीतिक कारण भी कपास करो के शीघ्र हटाने म समान रूप म आग्रहपरक थे। वास्तव म इस सबध म उसके द्वारा प्रदर्शित सूक्ष्म चिंतन के कारण हम उसके मतव्य को मूल रूप मे विस्तार से पुनरुदधृत करने के मोह का सवरण नहीं कर पाते

> अगरेजो के हाथ म निकल कर क्रमश भारतीयो के हाथ मे जाने की सभावना वाला भारतीय व्यापार जहा अगरेजो के लिए कटु भावनाओं को जन्म देगा वहीं भारतीयो के लिए अप्रत्याशित सुरक्षा की सफलता मिलने मे उनम तीव्र उत्सुकता उत्पन्न करेगा। अगरेज उत्पादक बढती हुई उत्कठा के साथ अपने लिए हानि कारक करो के हटाने के लिए दबाव डालेंगे और इसके लिए जितनी ही वे जल्द बाजी करेंगे, उतना ही अधिक भारतीयो का उसके महत्व का पता चलेगा इस स्थिति मे भी कुछ क्षोभ अभिव्यक्त होगा और भारतीयो के दावा की उपेक्षा करके अगरेजी हितो को प्राथमिकता देने की नीति को इसका कारण माननेवाले

व्यक्तिया द्वारा और भी अधिक क्षोभ अभिव्यक्त किया जाएगा। यदि इस सबध मे कायवाही मे विलब हुआ तो क्रोध की मात्रा व्यापक रूप मे उभर कर ऊपर आ जाएगी और यदि वहुत अधिक विलब हुआ ता यह निश्चित रूप से एक गभीर सावजनिक खतरा बन जाएगा।[4]

जहा तक लाड सैलिसबरी का सबध था, उसने 31 मई 1876 के सप्रेषण मे इस सारे मतभेद को निष्कप रूप मे इस प्रकार सुलझाया। उसने समग्र प्रश्न की पुन परीक्षा करने के उपरात घोषित किया कि भारतीय हितो की अनिवाय अपेक्षा इन करा को हटाने की है। भारतीयो के अनुसार ये कर सैद्धातिक रूप से एकदम गलत, व्यावहारिक प्रभाव के रूप म घातक तथा प्रवतन मे आत्मघाती है। कपास पर कर हटाने के विरुद्ध एकमात्र तक राजकोप पर पडने वाला हानिप्रद पभाव था। इस सबध मे उसका कथन था कि जहा भारत सरकार इस निर्देश को क्रियान्वित करने म विवेक का परिचय दे, उसे भारतीय करदाता को प्रत्येक प्रकार के करो मे राहत देते समय इन करो के हटाने को ही प्राथमिकता देनी चाहिए।

भारत सरकार और वायसराय लाड नाथब्रुक ने राज्य सचिव के सुझाव को महत्व नही दिया और कपास करा को इस आधार पर हटाना अस्वीकार कर दिया कि वे व्यावहारिक रूप मे सरक्षक नही थे। परतु विरोधियो का मुह बद करने के लिए सरकार ने लबे रेशोवाली रुई के आयात पर पाच प्रतिशत कर लगाने का निश्चय किया।

हा, कपास आयात करो का भाग्य उस समय पूरी तरह निश्चित हो गया जब 1875 मे लाड नाथब्रुक का त्यागपत्र स्वीकार कर लिया गया और लाड लिटन को उसके स्थान पर वायसराय तथा जान स्ट्रैची को वित्त सदस्य नियुक्त किया गया। य दोनो राज्य सचिव की इच्छाओ का पालन करने को अत्यत उत्सुक थे।[5] उस समय (11 जुलाई 1877 म) हाउस आफ कामम ने इस विषय का एक प्रस्ताव पारित किया कि भारत मे आयातित सूती उत्पादना पर इस समय लागू कर अपने स्वरूप मे सरक्षक होने के कारण सुदढ वाणिज्य नीति के विरुद्ध है और ज्यो ही वित्तीय स्थिति अनुकूल हो त्यो ही यथाशीघ्र इन्ह हटा देना चाहिए।[6] हा, अफगान युद्ध, अकालो की प्रवृत्ति तथा चादी के अवमूल्यन से उत्पन्न वित्तीय कठिनाई ने लाड लिटन और उसके वित्त मत्री के उत्साह को किसी सीमा तक दबा दिया। फिर भी 1878 मे कुछ अपेक्षाकृत मोटे प्रकार के सूती सामान पर करो मे और 1879 मे सिवाय 30 रेशोवाले सूत के, अन्य सभी प्रकार के सूती सामान पर कर हटा दिए गए। इसके उपरात अवसर आया जब 1882 म बजट मे 30 लाख पौंड का लाभ दिखाया गया और अधिकाश अन्य वस्तुओ पर करा के साथ कपास पर कर पूण रूप से हटा दिए गए। केवल नमक, शराब, तरल पदार्थों, शस्त्रो तथा गोला-बारूद आदि पर विशेष कर रहन दिए गए।

अगले बारह वर्षों तक भारत मे वास्तव मे किसी प्रकार के सीमा शुल्क नही थे और वह किसी भी अन्य देश की अपेक्षा उन्मुक्त व्यापार के सिद्धात को अधिक निकटता से अपना रहा था। यहा तक कि ब्रिटेन के पतन भी भारत के पत्तनो के समान स्वतन्त्र नही थे। इसके स्वाभाविक परिणाम स्वरूप उत्पादित आयात मे वृद्धि हो

इन आयातो का मूल्य 1878 9 से 1881-2 मे 18 प्रतिशत, 1878-9 से 1884 5 म 45 प्रतिशत बढ गया। इन वर्षों मे मूल्यो म निरतर ह्रास हो रहा था अत इस प्रकार भारत के आयात की परिमाणगत वृद्धि बहुत अधिक थी। निस्सदेह यह सब कुछ अन्य अनेक तत्वो और शक्तियो का भी परिणाम था परतु निर्विवाद रूप मे आशिक रूप से यह आयात करो के हटाने का फल ही था।[7]

२ कपास आयात कर निर्वतन का राष्ट्रवादियो द्वारा विरोध

कपास आयात करो के निवर्तन के आदोलन के प्रारभ से ही भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने एक मत से इतने अधिक रोष और उत्तेजना के साथ उनका विरोध किया कि आक्रमण के प्रमुख निशाने सर जान स्ट्रेची को बाद म वर्षो तक यह शिकायत बनी रही कि भारतीय लोकप्रिय धारणा राजकोशीय सुधारो के प्रश्न के सबध मे बाधक और नासमझ थी।[8]

1874 मे जब माचेस्टर वाणिज्य सदन ने भारत मे कपास करो के हटान की माग की और राज्य सचिव ने इस माग को भारत सरकार के पास भेजा तो बगाल का 'सहचर' इसके विरुद्ध अत्यत प्रचडता से बरस पडा।[9] जनवरी 1875 मे इसी प्रकार का विरोध ईस्ट इडिया एसोसिएशन की बबई शाखा ने किया।[10] समाचारपत्रो ने भी 1875 म लबे रेशेवाली कपास पर 5 प्रतिशत कर लगाकर और सूती वस्त्रो पर आयात कर घटाकर कपास शुल्क के आलोचको को चुप कराने की सरकारी नीति की तीखी आलोचना की।[11] अगले वर्ष लाड सैलिसबरी द्वारा माचेस्टर वाणिज्य सदन को क्रमश कपास कर घटाने के आश्वासन की समाचारपत्रो ने निंदा की।[12]

मार्च 1875 म कुछ मोटे सूती वस्त्रो पर कर हटाने की बहुत सारे समाचारपत्रो ने उग्र भर्त्सना की।[13] और 1879 म भूरी कपास के सभी प्रकार के सामान पर करो की छूट का परिणाम समाचारपत्रो तथा लोक नेताओ द्वारा राष्ट्रव्यापी निंदा के रूप म ही दृष्टिगोचर हुआ।[14] क्रोध से जलते हुए सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने प्रश्न किया क्या अभी बलिदान की और आवश्यकता थी, क्या अभी देशवासियो के हितो का और अधिक प्रबल विनाश अपेक्षित था ?'[15] इसी प्रकार सहचर ने 23 मार्च 1879 के अक म कठोर भाषा म इस कृत्य के लिए लाड लिटन की निंदा की। उसने लिखा 'वास्तव मे हम लाड लिटन के चरित्र का जितना अधिक अध्ययन करते हैं, उतनी अधिक हम उसके प्रति घृणा उत्पन्न होती है।' पत्र ने लाड लिटन की कर हटाने की कहानी को 'मानसिक दुबलता बताया और आश्चर्य प्रकट किया हमारी शोचनीय दशा के समय अपनी जाति के प्रति उसके द्वारा दिखाए गए पक्षपात के उदाहरण को हम कभी नही भूल सकेंगे।'[16]

1880 1 मे कपास पर अवशिष्ट कुछ करो के निवर्तन की बातचीत के समय भारतीय समाचारपत्र और जन सस्थाए एक बार पुन भडक उठे। लाड हार्टिंगटन द्वारा भारतीय बजट पर भाषण करते हुए की गई इस टिप्पणी ने आग म घी का काम किया कि कपास कर को हटाने के लिए भारत सरकार पर दबाव डालने का कोई भी अवसर खोया नही जाएगा और इसस राष्ट्रवादियो का विरोध और तीखा हो उठा।[17] अत म जब 1882 म

मेजर बेयरिंग ने कपास कर के पूर्णनिवर्तन की घोषणा की तो भारतीय लोकमत ने एकमत से इस कार्यवाही से असहमति प्रकट की।[19] कुछ आलोचकों ने तो अपेक्षाकृत कठोर भाषा में अपने को अभिव्यक्त किया। अमृत बाजार पत्रिका ने 6 अप्रल 1882 के अंक मे लिखा आयात कर का निवर्तन एक पाप है और हम फिर बार बार कहते हैं कि इसे यायाचित सिद्ध करने की कोई भी चेष्टा अपने आपको घोर पातक के शिखर पर पहुचाने की चेष्टा के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगी। फिर भी कुल मिलाकर बेयरिंग की कार्यवाही के विरुद्ध राष्ट्रीय समीक्षा अपेक्षाकृत हलकी ही थी। इसका आशिक कारण यह था कि इसकी पूर्व सूचना दी जा चुकी थी। उसका त्वचा विदारण किया जा चुका था और तार-तार करके उसकी आलोचना भी की जा चुकी थी और इसके अतिरिक्त यह किसी भी रूप में वस्तुत भारतीय कपडा उद्योग को प्रभावित ही नहीं करता था क्योंकि इसका सबध बढ़िया स्तर के सूती सामान से था और उस समय भारतीय मिलें उल्लेखनीय परिमाण मे बढ़िया सूती सामान का उत्पादन ही नहीं कर रही थी। भारतीय सयत आक्रमण का एक अन्य प्रमुख कारण कदाचित लार्ड रिपन और मेजर बेयरिंग की भारतीय जनता में व्यापक लोकप्रियता और भारतीयों की उन महानुभावों को राजनीतिक दृष्टि से परेशान न करने की उत्सुकता थी।[0]

कपास कर के निवर्तन का विरोध करते हुए भारतीय नेताओं ने अपने विरोधियों द्वारा प्रस्तुत इस प्रमुख आधार का कि ये कर भारतीय कपडा उद्योग को सरक्षण प्रदान करते हैं खडन किया। एक ओर उनका कथन था कि कपास कर अपने स्वरूप में ही उद्योग के सर्वथा सरक्षक नहीं थे क्योंकि भारत अधिकाशत आयात किये जाने वाले उत्कृष्ट कोटि के सूती वस्त्रों का उत्पादन ही नहीं करता था। भारतीय मिलें तो मोटे कपडे के उत्पादन मे विशेष निपुण हैं और उस मोटे कपडे का आयात नहीं होता था। भारतीय मिलों को मोटे कपडे के आयात की कुछ प्राकृतिक सुविधाएं प्राप्त हैं, जिन्हें कपास करो के निवर्तन से दुर्बल नहीं किया जा सकता।"[1] दूसरी ओर उनका सुदृढ मत था कि विशुद्ध राजस्व के उद्देश्यों की दृष्टि से करों की बडी आवश्यकता थी, वस्तुत भारतीय वित्तों के स्वरूप की दृष्टि से तो ये कर आवश्यक ही थे। उसका तर्क था कि कपास करो के समान अदुखप्रद तथा हानिकारक अन्य कोई राजस्व का स्रोत ही नहीं था। भारत के वित्तों की स्थिति के निराशाजनक और अव्यवस्थित होने के कारण उनका भय था कि कपास करों के निवर्तन से हुए घाटे की पूर्ति जनता से और अधिक ऋण लेने और घिनौने किस्म के कराधान उपाय से ही की जाएगी और वस्तुत की जा रही थी।[23] कुछ भारतीयों ने टिप्पणी की कि नमक कर तथा अनुज्ञप्ति करके अधिनियम ग्रथ मे रहने पर कपास करों का हटाना सर्वथा अन्यायपूर्ण था।[24] यह भी पर्याप्त आश्चर्यजनक है कि बहुत सारे भारतीय नेताओं ने जिस सास मे कपास करो के स्वरूप को असरक्षक माना था, उसी सास मे उन करों के निवर्तन को भारतीय वस्त्र उद्योग पर हानिप्रद प्रभाव डालने वाला भी कह दिया। इस प्रकार से उन्होंने निहितार्थ द्वारा इन करों के सरक्षक स्वरूप को अभि-स्वीकार किया अन्यथा और किसी भी रूप मे उनके निवर्तन से भारतीय उद्योग को वास्तव मे होने वाली क्षति सिद्ध नहीं की जा सकती थी। कुछ ने तो खुले तौर पर मान

लिया कि आयात कर सरक्षक थे और उस रूप म सुरक्षा प्रदान करते थे। जैसा हम आगे के अध्याय मे दिखाएगे, लगभग सभी भारतीय नेताओ ने अध्ययन काल म उद्योगीकरण के उन्नयन के लिए सरक्षण के महत्व और उपयोग की वकालत की।

राजनीतिक अथ

प्रारभिक राष्ट्रवादी नेताओ द्वारा सघष के हेतु लिए गए थोडे से सावजनिक विषयो म स एक था, कपास आयात करो के निवतन का विरोध। वर्षों तक सगठित रूप से बुद्धिमत्ता पूवक तथा सतक होकर इसका अनुसरण किया गया परतु सघष का अतिम परिणाम उन्हे कुठित करने वाला ही निकला। पग-पग पर उनके दृष्टिकोण की उपेक्षा की गई, उस ठुकराया गया और अत में कपास आयात कर पूण रूप से हटा लिए गए। इसका परिणाम शासको के प्रति कटु प्रवृत्ति तथा शत्रुता की भावना के विकास और प्रसार के रूप म ही सामने आया। बहुत सारे उदीयमान भारतीय नेता शनै शनै शासको की सद्भावना म सदेह करने लगे और समुचित राजनीतिक निष्कष निकालने लगे।

स्पष्ट रूप से देश के हितो के विरुद्ध दिखाई देने वाली नीति के प्रवतन ने राष्ट्रवादियो को यह पूछने और इस मन इस प्रश्न का उत्तर ढूढन पर विवश कर दिया कि यह नीति क्या लागू की जा रही है? उनके अनुसार सरकार की कर नीति का मुख्य आधार न तो भारतीय जनता का हितचितन था और न ही उन्मुक्त व्यापार के सिद्धात का वास्तविक परिपालन। वस्तुत इस सबके विपरीत भारतीय वस्त्र उद्योग म द्रुतविकास से लकाशायर के उत्पादको के हृदय मे भडकती हुई ईर्ष्या ही इसका कारण थी। वे यह भी विश्वास करने लगे कि इग्लड के दोनो राजनीतिक दल लकाशायर मे राजनीतिक समथन पाने के इच्छुक थे अत इग्लड म दलगत राजनीति की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए उन्हे कपास करो के आशिक अथवा पूण रूप से हटाने के रूप मे शक्तिशाली लकाशायर के हितो के आगे भारतीयो के हितो की बलि चढानी पड रही थी।[6] उदाहरणाथ, 15 दिसबर 1875 को बोध सुधारक ने अपने, 'मानचेस्टर के स्वार्थी व्यापारी और उनके कतव्यबद्ध सेवक भारत राज्य सचिव' शीषक सपादकीय मे यही दृष्टिकोण प्रकट किया।[7]

यहा तक कि जुलाई 1881 को जस्टिस रानाडे को यह कहना पडा कि अनुदार राजनीतिज्ञो ने अपने कार्यालय मे उन्मुक्त व्यापार के नाम पर भारत के हितो की बलि चढाई है और मानचेस्टर को प्रसन्न करने के लिए 250 000 पौंड भारतीय राजस्व की राशि उसकी सेवा मे भेट की है।[8] इसी प्रकार 1880 म पटना की एक जन सभा म पूना सावजनिक सभा के रूढिवादी अध्यक्ष राव बहादुर के० एल० नुलकर ने क्रुद्ध होकर टिप्पणी की

> इस बात को समझने के लिए कि इग्लड म बठकर भारत के भाग्य पर नियत्रण रखने वाले अपनी नियुक्ति की अवधि को लबा करने के लिए तथा अपने काय की सुरक्षा के लिए किस प्रकार अपनी शक्तियो का दुरुपयोग कर रहे हैं, हमे केवल इस बात पर विचार करना है कि मानचेस्टर का अनुग्रह पाने के लिए ही अभी हाल ही

म कपास आयात करो से प्राप्त होने वाले हमारे राजस्व की बलि चढाई गई है।[9] बगाली ने 11 माच 1882 के अक मे न केवल ग्लैडसन की उदारवादी सरकार की अवशिष्ट कपास आयात करो के हटाने की कायवाही की ही निंदा की, प्रत्युत उसके इस काय को करने के दभी ढग की भी भत्सना की। उसने लिखा करो को हटाने का निणय सवथा निराधार है, इसमे कपट और बनावट की गध आती है। यह हमे रोष दिलाने वाली गलती को व्यापार उत्कप बताने की बहानेबाजी है।

जहा ब्रिटिश प्रशासको ने भारतीयो के तर्को की और उनके प्रचड विरोध की उपेक्षा करना ही ठीक समझा[30], वहा भारतीय नेता कपास करो के निवतन पर लबी खिच गई मुठभेड के राजनीतिक निहिताथ की गहराई मे उतरने लगे। इससे पूव उनके चिंतन का जो ढग था और बहुत सारे मामलो म आगामी वर्षो मे भी जो चिंतन पद्धति उन्ह अपनानी थी वह यह थी कि अब तक वे अपने सभी प्रकार के कुप्रशासनो का दायित्व भारत म स्थित अग्रेज अधिकारिया के कधो पर डालते थ क्योकि भारतीय नेता इन अधिकारिया को शैतान समझकर उनसे घणा करते थ और यह मानते थे कि ये लोग अपने स्वाथ के कारण दयालु रानी, लोकतत्रीय ससद और स्वतत्रता प्रेमी अगरेजो के उदार आदेशो को लागू करने मे असफल रहे है परतु अब शीघ्र ही जनता को कपास करा पर मतभेद से सत्य ज्ञात हो गया कि इस विषय मे नौकरशाही ने जहा न्यूनाधिक रूप से भारतीया का पक्ष लिया था, वहा ब्रिटिश सरकार और ससद ने शैतान की भूमिका निभाई थी।[31] इसने बहुत सारे भारतीयो का इस विषय की परीक्षा करने और कदाचित प्रथम बार इस व्यापक स्तर पर अपने शासको की सद्भावना और भारत मे ब्रिटिश शासन के वास्तविक लक्ष्य और प्रयोजन पर विचार करने को विवश कर दिया। इस चिंतन के फलस्वरूप वे इस दु खद निष्कष पर पहुचे कि भारत पर अगरेजो के शासन का प्रधान उद्देश्य भारतीया के हितो की अपेक्षा ब्रिटिश व्यापारिया और उत्पादको का हित-साधन ही था।

1875 मे बेलगाव समाचार' ने अपना मत अभिव्यक्त किया कि राज्य सचिव द्वारा माचेस्टर वाणिज्य सदन को दिए गए आश्वासन कि अगरेजी वस्त्रो पर आयात कर हटा दिए जाएगे, ब्रिटिश सरकार की मनोवत्ति का ही एक प्रमाण है। सरकार जो भी काम करती है, ढोग तो भारत के हित का करती है पर वास्तव मे वे सब होते शासक जाति के हित मे ही हैं।[3] भोलानाथ चद्र समस्या का निर्भीक और विस्तत विश्लेषण करनेवाले कदाचित प्रथम भारतीय महानुभाव थे। उन्होने 1876 मे लिखते हुए प्रारभ म ही यह स्वीकार किया कि इस सारे मतभेद मे विचारणीय विषय, आयात कर, अपन आप म इतने अधिक महत्वपूण नही थे, क्योकि सत्य यह है कि आयात कर भले ही हटा दिए जाए भारत का वस्त्र उद्योग तो फिर भी अपनी प्राकृतिक अनुकूल स्थितिया के कारण फले फूलेगा। राष्ट्र द्वारा विचारणीय विषय तो यह है कि देश म उसके अपने हितो के अनुकूल शासन चलना है अथवा इग्लड के हितो के अनुकूल। उन्ह यह अत्यत स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि भारतीया ने जो महत्वाकाक्षाए सजो रखी थी कि अब उनके लिए सौभाग्य के सूय का उदय होने वाला है, उसका उत्तर सवथा और पूणत नकारात्मक ही

1858 का वचन मगतृष्णा ही सिद्ध हुआ था और यह विश्वास कि एक व्यापारी कपनी के हाथ मे ताज के हाथ मे प्रशासन के हस्तातरण मे प्रशासन की प्रकृति और उसके उद्देश्या मे परिवतन आ जाएगा, बालू की भीत पर टिका सिद्ध हुआ है। उन्होंने लिखा

> सुधार और एक सुव्यवस्थित शासन और नई भूमिका के स्थान पर निश्चयात्मक रूप स पिछडापन ही मिला है। वही जाति की अपनी जाति के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है। वही भारतीयो के हितो की अनुरूपता मे इगलड के हितो की निरतर स्पष्ट स्वीकृति है, वही लूट-खसोट और छीना झपटी की भावना है और भारत को 1776 मे विद्यार्थी की अवस्था मे रखने का जो सकल्प था, वही 1876 मे भी विद्यमान है।[33]

भोलानाथ चद्र ने व्याख्यान दिया कि सचमुच लोगो को मानचेस्टर की विजय से अमूल्य शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए क्योकि इससे नग्न रूप स पता चलता है कि सारा भारत मिलाकर भी कपास की कताई-बुनाई मे मानचेस्टर के समकक्ष नही है।[34] तीन वर्षों के उपरात एस० एन० बनर्जी ने आलकारिक रूप स देशवासियो के आगे प्रश्न उपस्थित करते हुए उनसे पूछा यदि हमारी अपनी सरकार होती तो क्या वह सरकार लोकमत का इस प्रकार सवथा निरादर करती हुई और देशवासियो के हितो की पूर्ण उपेक्षा करती हुई ऐसा काम करने का साहस करती ?[35] इसी कठोर सत्य की अभिव्यक्ति मराठा ने 18 सितबर 1881 के अक म निम्न टिप्पणी करते समय की कि भारत का स्थान साम्राज्य मे समानता का न होकर एक विजित राष्ट्र का था। उसने इस बात पर विशेष बल दिया कि मानचेस्टर के हितो के लिए भारत के हितो का बलिदान तो प्रत्येक विजित राष्ट्र द्वारा विजेता राष्ट्र को बिना शिकायत किए चुकाए जाने वाले दड का ही रूप था। मराठा ने यह सकेत किया कि वस्तुत दुख का मूल कारण विदेशी शासको का अमुक अथवा अमुक हृदय न होकर देश की यथाथ मौलिक राजनीतिक स्थिति ही थी।

लार्ड रिपन ने 1882 म कपास करो का निवतन भारतीयो के सामान्य हित म होने के निश्चित मतव्य का पुन समथन किया। उसने साथ ही इस बात का भी दावा किया कि वह भारतीयो के लाभ के लिए भारत के हित मे ही भारत पर शासन का इच्छुक है।[36] बगाली ने 11 माच 1882 म अक म तुरत उत्तर दिया 'भारत के लिए ही भारत पर शासन की चर्चा अपने आप म सुदर हो सकती है परतु हमारे शासक यह नही भूल सकते कि वे अगरेज हैं और उन्हे अवश्यमेव एक निश्चित परिमाण मे प्रत्येक मूल्य पर अगरेजो को लाभान्वित करने वाले सिद्धान्तो के अनुसार ही सरकार चलानी चाहिए।' अमृत बाजार पत्रिका ने एक बार फिर अपने 6 अप्रल 1882 के अक म भारत की राजनीतिक दासता की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए उसका उपचार इस प्रकार से सुझाया ब्रिटेन यूरोप के अपने सबधी देशो को उन्मुक्त व्यापार का वरदान प्रदान नही कर सकता और अपने उपनिवेशो मे भी यह उदारता नही दिखा सकता, क्योकि वे अपने शासक आप हैं। परतु भारत एक असहाय देश है उसके सपूत दुबल और शक्तिहीन है।'[37] बहुत वर्षों के बाद कपास करो के निवतन की चर्चा करते हुए आर० सी० दत्त ने लिखा भारत म ब्रिटिश प्रशासको ने बबई के शिशु कपास उद्योग को ईर्ष्या से न देखकर उसके प्रति

संतोष ही प्रकट किया परंतु भारतीय प्रशासन के संबंध मे तो वे बेचारे ब्रिटिश व्यापारी और ब्रिटिश मतदाता के ही दास थे।[39]

इस समालोचना का एक समाहित तत्व यह था कि भारत सरकार को ब्रिटिश व्यापारियो के नियंत्रण से मुक्त कराया जाए ताकि भारत के अनुकूल कर नीति अपनाई जा सके। सहचर के 22 मार्च 1882 के अंक म निर्दिष्ट सरकारी काय का नियनित करने की शक्ति भारतीयो को हस्तातरित करन की माग भी बडे ही स्पष्ट शब्दा मे प्रस्तुत की गई।[39] चार वर्षों के उपरात इसी पत्र न आग्रह किया कि यदि भारतीय आयात करो का पुन लागू करना चाहत हैं तो उन्ह अगरजी उपनिवेशा, कनाडा और आस्ट्रेलिया द्वारा किए गए संघर्ष के समान स्वशासन के लिए संघर्ष का पथ ही अपनाना चाहिए। इसी प्रकार 17 जनवरी 1886 के अंक म मराठा ने घोर निराशा के साथ लिखा कि एक व्यापारी देश के विदेशी शासन मे आयात करो के दोबारा बहाल होने की आशा हम कभी नही कर सकत।[40]

भारतीय नेताओ को इस समय अपने आप सूझा कि भारतीय उद्योग पर कपास करा के निवर्तन स होन वाले हानिप्रद प्रभाव को निष्प्रभावी बनाने का एक अन्य उपाय था, विदेशी वस्त्रा को न खरीद कर स्वदेशी को अपनाने के रूप म स्वेच्छा से अपने उद्योग को संरक्षण प्रदान करना। स्वदेशी का एक बहुत बडा गुण यह था कि राजनीतिक दमन की स्थिति म भी इसे अपनाना सभव था। हमे यहा स्वदेशी के प्रचार के राष्ट्रवादी प्रयत्नो की समीक्षा के लिए रुकने की आवश्यकता नही क्योकि हम पहले ही इसी पुस्तक क ततीय अध्याय म इसका विवेचन कर चुके हैं।

आयात करो का पुन आरोपण

1882 मे आयात करो के पूर्ण निवर्तन के समय लाड रिपन ने यह पवित्र आशा प्रकट की कि अब इस कार्यवाही से भारत और इंग्लैंड की जनता म वर्षा से विद्यमान इस प्रश्न से संबधित अप्रिय मतभेद समाप्त हो जाएगे।[41] परंतु भारत के पक्ष मे बोलने का दावा करने वाले कामल न हो पाए और बाद म उन्होन वर्षों तक, वस्तुत तब तक जब तक कि राष्ट्रीय आदोलन चलता रहा, कपास करा के निवर्तन का राष्ट्रीय कटु समालोचना के प्रहार का प्रिय लक्ष्य बनाए ही रखा। ऊपर परीक्षित सभी पक्षो पर आग्रहपूर्वक कह चुकने के उपरात राष्ट्रीय नेता दोहराते थे कपास करो का परित्याग 'राष्ट्रीय अन्याय का एक उदाहरण है, एक घटिया किस्म का विश्वासघात है, और भारतीय हिता का ब्रिटेन के हितो के अधीन करने का एक प्रमाण और उदाहरण है।[4] इसके अतिरिक्त स्वल्पतम उत्तेजना के अवसर पर और प्राय वित्तीय संकट की प्रत्येक घडी मे नमक कर तथा आय कर जसे अन्य करो को लगाने के समय अथवा अकाल अनुदान को समाप्त करने और राज्य सरकारो की निर्दिष्ट राशि मे कटौती करने जैस लोकहित के खर्चो मे छटनी के समय वे प्राय इस सबके बदले कपास पर आयात कर पुन लगाने की माग प्रस्तुत करत थे।[43]

एक लबे और कटु संघर्ष के बाद भारतीयो को प्राप्त कर नीति संबधी विजय मिली

उत्पादन शुल्क लगा दिया गया। यह उत्पादन शुल्क, किसी भी देश के आर्थिक इतिहास म अविद्यमान चुगीकर, राजस्व के प्रयोजन से नही थोपा गया था प्रत्युत नए आयात करों स भारतीय उद्योग को किसी प्रकार स लकाशायर के हितो के विरुद्ध सरक्षण मिलन का सभावना के तत्व का निमूल करने के लिए ही थापा गया था। वास्तविकता यह है कि यह शुल्क लगान स पूव स्वय भारत सरकार इस कदम के औचित्य से सहमत नही थी। 1878 म म सर जान स्ट्रेची न सीमा शुल्क का 'महगा, दु खदायी, और असुविधाजनक' और 'अधिकाश स्थितिया मे भारत म अव्यावहारिक' होन के कारण अस्वीकार कर दिया था। यहा तक कि 1894 मे वित्त सदस्य जेम्स वेस्टलैंड ने भारत सचिव का भेजे सप्रषण म इस तथ्य की ओर निर्देश किया, 94 प्रतिशत भारतीय उत्पादन तो मानचेस्टर के उत्पादका के साथ प्रतियोगिता की सीमा क्षेत्र के ही बिलकुल बाहर हैं क्योकि वे तो मोट स्तर के वस्त्र (24 नबर और इसस अधिक ऊचे) का उत्पादन करते हैं और मानचेस्टर भारत के समान इस स्तर के वस्त्रा का सस्त म बेचन का दभ नही कर सकता। उसने सलाह दी कि यदि यह दु खदायक शुल्क लगाना ही है तो इसे 24 न० के ऊपर के स्तर के सूती धागा पर लगाना चाहिए। परतु राज्य सचिव का आदेश था जिससे विवश हाकर सरकार को 20 नबर से ऊचे स्तर के सूत पर उत्पादन शुल्क लगाना पडा। इस प्रकार भारतीय मिला के कुछ उत्पादन का 20 प्रतिशत इस शुल्क के क्षेत्राधिकार मे आ गया। कपास शुल्क बिल पर भाषण करत हुए जेम्स वेस्टलेड न क्षमा प्राथना करते हुए स्वीकार किया कि सरकार न अपनी ओर स इसकी विशेषताओ के आधार पर इसका अनुमोदन नही किया प्रत्युत राज्यसचिव से प्राप्त निर्देशो के कारण ही इसे लागू करना पडा है।[6]

जैसी आशा की जाती थी, भारतीय राष्ट्रवादियो ने कपास के उत्पादनो पर आयात शुल्का की बहाली का स्वागत ही किया और इसे लोकप्रिय इच्छा की स्वीकृति का सकेत बताया।[63] इस सबध म हम दृष्टात रूप म डी० ई० वाचा महोदय का उद्धत करते हैं जिन्हान अभिस्वीकार करत हुए कहा 'सरकार ने सचमुच जनता की आवश्यकताओ को स्वर दिया है और उदारतापूवक उसके सच्चे हितो की वकालत की है।[64] इस प्रकार की प्रशसा सामान्य नही थी और आयात शुल्क की अल्पता की आलाचना भी साथ साथ हान लगी थी। उदाहरणाथ मराठा ने 16 दिसबर 1894 के अक में सरकार की इस कार्यवाही के लिए उसका समथन करते हुए यह टिप्पणी जाड दी सरकार ने यह तभी किया है जब इस विषय म उसके लिए और कोई विकल्प नही रह गया और दिवालियापन निश्चित ही था। इसक अतिरिक्त पत्र ने यह भी अनुभव किया कि शुल्क और अधिक ऊचा अथात 10 अथवा 15 प्रतिशत होता। इसम पृथक भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ न विभिन्न रूप से कपास उत्पादन शुल्क की निंदा की। उनके अनुसार यह शुल्क अनुचित अशिष्ट तथा भारतीय जनता के हिता के विपरीत थे।[65]

ब्रिटिश उत्पादक निश्चय ही 1894 के राजकर सबधी प्रबध से सतुष्ट नही थ। उनकी धारणा थी कि 20 नबर स नीच नबरवाल सूत को सीमाशुल्क म मिली छूट भारतीय वस्त्र उद्याग का सरक्षण जुटा रही थी। लकाशायर मोट कपडे के उत्पादन म भारत के साथ प्रतियोगिता कर सकता था और करता था परतु उसने माग की कठिनाई

यह थी कि उत्पादित वस्तुओ पर लगे कर के मुकाबले सूत पर उत्पादन शुल्क व्यवहार मे अधिक हल्का था और वर्मा मे भारत के निर्याता को अनुचित रूप से समथन मिल रहा था।[66] अतत, फरवरी 1896 मे भारत सरकार को राज्य सचिव के माध्यम से डाले गए दबाव के आगे झुकना पडा और दो नए कानून बनाने पडे जिनके अतगत कपास के सूत पर आयात शुल्को तथा उत्पादन शुल्को को हटा दिया गया और साथ ही उसी समय बुने सामान पर आयात कर 5 प्रतिशत से घटाकर 3½ प्रतिशत कर दिए गए और उसी समय भारतीय मिलो द्वारा उत्पादित सभी प्रकार के बुने सामान पर 3½ प्रतिशत अनुरूप उत्पादन शुल्क थोप दिया गया। इस नए विधान का परिणाम यह निकला कि एक ओर आयातित सामान से मिलने वाली 51½ लाख रुपया की राशि अथवा 37 प्रतिशत राशि हाथ से निकल गई और दूसरी ओर भारतीय सामान पर करो म 300 प्रतिशत अथवा 11 लाख रुपयो की वृद्धि हो गई है।[67]

नाममात्र सरक्षण को हटाने के लिए मोटे कपडे तक पर करारोधान की क्रिया ने भारतीय लोकमत पर विस्फोटक प्रभाव डाला। भारतीय लोकमत ने भारतीय उद्योग और भारतीय जनता के हितो के बलिदान के विरुद्ध क्रोध मे उफनते हुए तीखे प्रहार किए।[68] उदाहरणाथ, 9 फरवरी 1896 के अक म गरजते हुए मराठा ने लिखा 'इस देश के प्रशासन के ईस्ट इडिया कपनी से महारानी महोदया के पास हस्तातरित होने स पहले लकाशायर के पक्ष म दोबारा लगाए जाने वाले कपास शुल्क जसे अति नीच और अन्यायपूण पापकम करने का साहस किसी ने भी नही किया'। इसी प्रकार 'समय' ने 31 दिसबर 1896 के अक मे तीखे प्रहार करते हुए लिखा 'इसस स्पष्ट दिखाई देता है कि अगरेज किस प्रकार अपने स्वार्थो मे अधे हो गए है। अपने देशवासियो के हितो की उन्ह इतनी चिंता है कि इसके लिए दूसरो के हितो को क्षति पहुचाने मे भी सकोच नही करते —वे तो छुरा निकाल कर दूसरो का गला काटने को तैयार हैं।[69]

कपास पर लगे उत्पादन शुल्क ने आगामी अनेक वर्षो तक राष्टवादियो को उत्तेजित किए रखा। 1902 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने तीखी भाषा मे निबद्ध एक प्रस्ताव मे उत्पादन शुल्क की निंदा की और इसके निरसन की माग की। यह प्राथना 1904 म दोहराई गई।[70] डी० ई० वाचा ने 1902 मे प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए घोषणा की कि जब तक सरकार इस अनुचित शुल्क को हटा नही लेती, काग्रेस इसके विरुद्ध आन्दोलन पर आदोलन करती ही रहेगी।[71] आर० सी० दत्त ने अपने लेखो, पुस्तको और असख्य भाषणो मे इस पर विस्तृत विचार किया और इस निष्कष पर पहुचे कि 'यह राज कर सबधी अन्याय के एक प्रमाण के तौर पर 1896 का अधिनियम आधुनिक काल मे अपना उदाहरण आप ही था। उन्होने आगे कहा अत्यत सुसभ्य सरकारे विदेशी सामान पर निषेधक शुल्क लगाकर गहउद्योगो की रक्षा करती है उन्मुक्त व्यापार की समग्रत और पूणत समथक सरकारें भी आयातित सामान पर राजस्व के प्रयोजन से साधारण सा सीमाशुल्क लगाती हुई अपने घरेलू उत्पादनो पर शुल्क नही लगाती है। जी० के० खोसले ने लेजिस्लेटिव कौसिल मे अपने भाषणो मे उत्पादन शुल्क के विरुद्ध भारतीय राष्ट्रवादियो द्वारा अनुभूत विक्षोभ को बार बार मुखरित किया।[73] एन० जी० चद्रावरकर तथा

सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने काग्रेस के सभापति पद से उत्पादन शुल्क के निवतन की माग को उठाया[74] और समाचारपत्रो ने भी अपने कालमो मे इस विषय को सजीव बनाए रखा।[75]

1894 6 के वित्तीय परिवतनो पर राष्ट्रवादियो का आक्रमण निम्नलिखित तर्कों पर आधारित था

भारतीय नता निश्चित थे कि कपास पर लगे उत्पादन शुल्क भारत के औद्योगिक विकास को विलबित और प्रतिबधित करने वाल थे।[76] वे इस बात से विशेष रूप से भय भीत थ कि उत्पादन शुल्क भारतीय वस्त्र उद्योग के महीन किस्म के सूत की कताई के माग म बाधक बनेगा और इसी विशेष दिशा मे इस उद्योग के अधिक विस्तार की सभावनाए थी।[7] कुछ नेताओ न यह आशका भी प्रकट की कि उत्पादन शुल्क भारत के वस्त्र नियातो को बुरी तरह स झटका दगा और उसके फलस्वरूप जापान जसे उसके प्रति द्वद्वी एशियाई देशो को अपने उत्पादनो से भारत के उत्पादनो को प्रतियोगिता मे पछाडन म समथ बनाएगा।[78] वस्तुत यह भय निराधार था क्योकि 1894 और 1896 दोनो अधिनियमो मे नियात के लिए निर्धारित उत्पादनो पर शुल्क की पूरी छूट की व्यवस्था थी। इन नताओ ने सभवत या तो अधिनियम की धाराओ को गलत समझा अथवा कदाचित उनको यह विश्वास था कि औद्योगिक उत्पादनक्षमता की सामान्य दुबलता तथा लाभ का ढाचा परोक्ष रूप से विदेशी प्रतिद्वद्वियो मे प्रतियोगिता मे भारत की सामथ्य को प्रतिकूल रूप मे ही प्रभावित करेगा।

भारतीय नताओ ने 1896 के कपास उत्पादन शुल्क अधिनियम पर इस तक से और अधिक प्रहार किया कि इससे जनता के अपेक्षाकृत निधन वग को कठिनता का अनुभव होगा क्योकि यह वग मोटा कपडा खरीदता है और उसपर अब कर लगा दिया गया है।[79] कुछ महानुभावो ने इस तथ्य को भी सामने रखा कि विदेशी वस्त्रो के आयात कर म जो 1½ प्रतिशत की छूट इस राज्य कर के साथ जोड दी गई है, उसका लाभ भारतीय जनता के अपेक्षाकृत धनी वग को ही होगा क्योकि वे ही प्रधान रूप से विदेशी वस्त्रो का उपयोग करते हैं। इस प्रकार इसका अथ यह हुआ कि धनिको को भारमुक्त करने के लिए बचारे गरीबो पर कराधान कर दिया गया है।[80] बगाली न अपने 8 फरवरी 1896 के अक म पूछा सरकार की निधन जनता के प्रति वह सहानुभूति कहा चली गई है जिसकी वह शेखी बघारती रही है?[1]

उनका दूसरा तक यह था कि भारतीय उद्योग और जनता की समद्धि पर इसके हानिप्रद प्रभाव के अतिरिक्त तथाकथित प्रयोजनो की दृष्टि से भी यह उत्पादन शुल्क अनावश्यक, अत अनुचित था। इस तक के समथन म उनकी सवप्रथम युक्ति यह थी कि स्पष्टतया वित्तीय उत्पादकता का इसको लागू करने के कारणो म कोई स्थान नही क्योकि इसकी वसूली मे होने वाली आय वसूली पर होने वाले व्यय के बराबर भी नही हो पाएगी। अत किसी भी रूप म यह आय पर्याप्त नही कहला सकती। डी० ई० वाचा ने इस सबध म एक रोचक तथ्य प्रस्तुत किया। उस समय सरकार को उत्पादन शुल्क के सबध म 17 लाख रुपयो की वसूली हुई थी जो राजस्व का एक तुच्छ अश था जबकि उसने मिल मालिको के लाभो को दुर्भाग्यग्रस्त कर दिया था, यहा तक कि उनके 50 प्रतिशत

लाभ इस गुल्क से दुष्प्रभावित हो गए थे। अपने उपयुक्त कथन के उपपरिणाम मे वाचा महोदय ने कहा कि यह कहना बिलकुल गलत है कि मिलमालिक शुल्क से होन वाली हानि की उपभोक्ताओ से पूर्ति कर सकत थे अथवा कर रहे थे।[82] यह भी एक पर्याप्त रोचक सत्य है कि इस विवाद मे वाचा महोदय ने इस कल्पना को जिम राष्ट्रवादियो ने इससे पूर्व स्पष्ट तर्क के रूप मे प्रस्तुत किया था कि इस उत्पादन शुल्क के थोपने स उपभोक्ता पर ही सारा भार पडेगा—मानने से इनकार कर दिया।[83] द्वितीय, भारतीय नेताओ न इस तर्क को भी ठुकरा दिया कि आयात करो के सरक्षी स्वरूप को अपक्षपाती बनाने के लिए तथा इस प्रकार भारत और ब्रिटेन मे स्वतन्त्र व्यापार को बनाए रखने के लिए उत्पादन शुल्क की अपेक्षा थी। उन्होने पूर्ववत दृढतापूर्वक कहा था कि आयात शुल्क स्थानीय उद्योग के लिए सभी व्यावहारिक दृष्टियो से किसी प्रकार का कोई सरक्षण नही जुटाते क्योकि भारतीय मडी मे भारत और ब्रिटेन के सूती उत्पादनो मे प्रतियोगिता का क्षेत्र अत्यधिक ही सकीर्ण था। ब्रिटेन भारत को थोडे से ही मोटे कपडे का निर्यात करता था और इधर भारत उल्लेखनीय मात्रा मे बढिया भूरे सामान का उत्पादन नही करता था जो भारत मे ब्रिटेन के निर्यात का एक बहुत बडा भाग था।[84] इस तर्क के पथ पर बहुत सारे भारतीयो ने माग की कि यदि उत्पादन शुल्क अवश्य ही लगाना है तो उसे 20 नबर और उससे ऊचे सूत पर न लगाकर 24 नबर और उससे ऊचे सूत पर ही लगाना चाहिए।[85] इस सबध मे फजल भाई विश्राम ने लेजिस्लेटिव कौंसिल मे एक सशोधन प्रस्तुत किया जिसे उपस्थित सातो भारतीय सदस्यो का समर्थन मिला।[86] बाद मे जब ब्रिटिश उत्पादको ने शिकायत करते हुए और रियायतो की इस आधार पर चिल्लाहट की कि 20 नबर के नीचे के भारतीय सूत को दी गई छूट ने उन्मुक्त व्यापार के विरुद्ध युद्ध छेड रखा है तो भारतीय नेताओ ने उनकी मान्यता का बडी तीव्रता से निषेध किया।[87] कुछ ने तो यहा तक कि सुझाव दिया कि यदि भारत सरकार ब्रिटिश उत्पादको को प्रसन्न ही करना चाहती हैं तो उत्पादन शुल्क को बढाने के बदले 20 नबर तक के अगरेजी सूत को आयात कर से मुक्त कर दे।[88]

उत्पादन शुल्क के विरुद्ध राष्ट्रवादियो का प्रचड विरोध और उसकी सार्वजनिक भर्त्सना प्रधान रूप से उसके दुष्परिणामो के विश्लेषण अथवा उसकी निरर्थकता के परिज्ञान से उत्पन्न नही थे, प्रत्युत उत्पादन शुल्क थोपने के मूल कारणो का उनका सही ज्ञान तथा यह विश्वास ही इसका कारण था कि इस सदर्भ मे यह कर न गलत था, न अयथास्थान था और न ही मिथ्या विचारित साधन था, क्योकि इस सबके विपरीत इसके प्रस्तावको का जागरूक प्रयोजन भारत के पनपते वस्त्र उद्योग को क्षति पहुचाना था ताकि मानचेस्टर के फिलस्तीनिया को सात्वना दी जा सके जो इस रूप मे प्रतिद्वद्वी के विकास को प्रतिबाधित करने की आशा रखते थे। 1894 के अधिवेशन मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने इस तथ्य को बडी ही प्रखरता के साथ प्रस्तुत किया। उसने उत्पादन शुल्क को लकाशायर के हितो पर भारतीय हितो की बलि चढाना मानने के अपने दृढ विश्वास को अभिलिखित किया।[90] बगाली ने अपने 8 फरवरी 1896 के अक मे तीखे व्यग्यात्मक स्वर मे टिप्पणी की 'भारतीय जनता तो भारत सरकार को सत्ता मे नही रख सकती मानचेस्टर कर सकता

है और करता है पहले सत्ता फिर कर्तव्य'।

और अधिक गहराई से विचार करने पर कुछ भारतीय नेता इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि इस उत्पादन शुल्क के पीछे तो भारतीय औद्योगिक विकास को ब्रिटिश उद्योग की आवश्यकताओ और आदेशो के अधीन करने के सिद्धात और नीति काम कर रहे हैं। इस भावना को सशक्त अभिव्यक्ति देते हुए फिरोजशाह मेहता ने कौंसिल चैंबर मे घोषणा की वह सिद्धात और वह नीति यह है कि यदि कही अगरेजी उत्पादनो के साथ भारतीय उत्पादनो की प्रतियोगिता के सदेह का लेशमात्र भी दिखाई देता हो तो भारतीय उद्योग का उसके जनमने ही गला घोट देना चाहिए।[91] अपने समय के कदाचित सर्वाधिक कोमल प्रकृति के लोक नेता एन० जी० चद्रावरकर भी 1900 के काग्रेस अधिवेशन मे अपने सभापतीय भाषण मे यह टिप्पणी करने को विवश हो गए कि वतमान नीति मे किसी भारतीय उद्योग को यूरोप की प्रतियोगिता मे विकसित नही होने दिया जाएगा।[9] खासिम-उल अखबार ने अपने 24 दिसबर 1894 के अक मे टिप्पणी की कि आज तक अगरेज भारतीय उद्योग को सहायता देने का फरेब करते आ रहे थे परतु अब इस तथ्य ने उनके चेहरे का नकाब उतार दिया है और यह स्पष्ट हो गया है कि उनकी वास्तविक इच्छा इसके दमन की ही है।[93] मराठा ने 17 मार्च 1895 के अक मे भारत मे ब्रिटेन की मूल आर्थिक नीति के सबध मे तो और अधिक मर्मघाती टिप्पणी की। उसने लिखा यह अकेली घटना यह प्रकट कर देती है कि इग्लड के मशीन उत्पादको की इच्छा है कि भारत कृषिप्रधान देश ही बना रहे अथवा हम भारतीय इग्लड के लिए सदा कच्चे माल के उत्पादक बने रहें और इग्लड सदैव हमारे लिए पक्के माल का निर्माता उत्पादक बना रहे।

राजनीतिक प्रभाव

उत्पादक शुल्क और कर के प्रश्न के अध्ययन के आधार पर बहुत सारे विचारशील भारतीय नेताओ ने भारत मे ब्रिटिश राज्य के लाभप्रद चरित्र और वास्तव मे तो उसके लक्ष्यो और प्रयोजनो को चुनौती देते हुए अधिक व्यापक अनुमान लगाए। वास्तव मे भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास मे कर सबधी दुर्घटना को प्राप्त महान ऐतिहासिक महत्व का प्रधान आधार समस्या का यही पक्ष है। साथ ही भारत मे राष्ट्रीय भावना को पनपाने मे कपास उत्पादन शुल्क तथा विभिन्न कर सशोधनो ने जो महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, उसमे राष्ट्रीय भावना विदेशी शासन के नैतिक आधार के प्रति सदेह पर ही केंद्रित हो गई अथवा दूसरे शब्दो मे भारतीय जनता और उसके नेताओ के मन मे इस शासन के नैतिक आधारो के विषय मे ही शका उत्पन्न हो गयी।[94]

बहुसख्यक भारतीयो ने 1894 और 1896 की अवधि मे चुगीकर तथा उत्पादन शुल्को की कहानी से यह प्रमुख परिणाम निकाला कि भारत का शासन भारतीयो के हित मे न होकर सामान्यत ब्रिटिश जनता के और विशेषत ब्रिटिश व्यापारियो और उत्पादको के हित मे ही है। भारत के हितो का ब्रिटेन के हितो के साथ टकराव की स्थिति मे भारतीयो को ही हानि उठानी पड़ेगी।[95] इस भावना को केसरी के 28 फरवरी 1896 के अक मे तिलक ने बडे ही कडेपन मे इस प्रकार प्रकट किया भारत को विभिन्न

द ताकि वह इस समय गुप्त रूप से प्रयुक्त की जाने वाली अधी शक्ति का खुलकर काम मे ला सके।[101]

थोडे से, विरल उदाहरण ऐसे भी मिलते है जिनमे स्वशासन तक की माग की गई। इस सबध म यह क्रातिकारी विचार इस प्रकार प्रकट किया गया कि भारत तब तक राज करो के सबध मे याय प्राप्त नही कर सकता अथवा उद्योगीकरण की नीति का काय रूप नही दे सकता, जब तक कि वह ब्रिटेन के राजनीतिक नियत्रण स मुक्ति नहा पा लेता तथा आत्मशासित देश नही बन जाता। यह मत खुले तौर पर बगनिवासी ने अपन 9 फरवरी 1896 के अक मे इस प्रकार मे प्रकट किया इग्लड प्रधान रूप से एक उत्पादक और व्यापारी देश है। जब तक इस देश पर अगरेज लोगो का शासन है, तब तक भारत के सपूतो को व्यापार और उत्पादन मे उनकी न्यूनता को सहन करना ही पडेगा।[10] 1896 के उत्पादन शुल्क और कर छूट की चर्चा करते हुए 1898 मे आर० सी० दत्त ने उपयुक्त दष्टिकोण से मिलते जुलत अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए

> जब तक भारत की जनता को सरकार की सहायता करने का, अपने राष्ट्रीय राजस्वो और राष्ट्रीय हितो की रक्षा करन का सावैधानिक अधिकार मिल नही जाता तब तक भारतीय जनता का इग्लैड के ब्रिटिश मतदाताओ के आदेश स काम करने वाली भारत की बरतानवी सरकार द्वारा जानबूझकर और खुल्लमखुल्ला भारतीयो के हितो की बलि चढाने का अपमानित करन वाला दृश्य बार बार देखने को मिलगा।[103]

उत्पादन शुल्क ने गोखले तक को इतना क्षुब्ध कर दिया कि उन्हें यह टिप्पणी करनी पडी कि इस शुल्क मे यह स्पष्ट हो गया है कि जान स्टुअर्ट मिल ने एक देश के लोगो पर अन्य देश के लोगो की सरकार के सबध मे जो कहा है वह सही है।[104]

परतु देश की राजनीतिक मुक्ति का सघष अभी भविष्य के गभ म ही निहित था। उस समय तो कायसूची मे था, राष्ट्रीय भावनाओ को जगाना, इस प्रवृत्ति को पुष्ट करना तथा राजनीतिक आदोलन और सघष के लिए भारतीय जनता को प्रशिक्षित करना। जसा कि हम पहले देख चुके है, इनम से पहला, बुद्धिमत्ता और सफलता के साथ पहला काम ही सपन्न किया गया। दूसरा काय करो के मामले म सारे देश मे चप्पे चप्पे मे जाग्रत राष्ट्रीय भावना के प्रचार के साथ ही निष्पन्न हो गया। उस पीढी के नेताओ म अत्यन्त कुशल राजनीतिज्ञो म सबसे चतुर लोकमान्य तिलक ने इस सबध मे कर के विषय पर आदोलन के महत्व को पूर्ण रूप से अभिस्वीकार किया। राष्ट्रीय एकता का आह्वान करते मे उनके समाचारपत्र मराठा' ने अपने 9 फरवरी 1896 के अक म लिखा

> युवा भारत के कट्टर अगरेज शत्रु सदैव गला फाड फाड कर चिल्लाते रहे हैं कि भारत कभी एक राष्ट नही बन सकता। आइए हम इस भयकर सकट की घडी म एक हो जाए। आइए, हम सारे भारतीय हिंदू, मुसलमान पारसी और भारत म रहने वाले अगरेज एक सामान्य उद्देश्य बना लें। यह समय सदेह और सकोच का नहा। राष्ट्रीय हित म सभी निजी मतभेद भुला देने चाहिए और मूल निवासियो तथा आग्ल भारतीयो का समान शत्रु का सामना करने के लिए एकजुट हो जाना चाहिए।[105]

उत्पादन शुल्क की राष्ट्रीय प्रतिक्रिया ब्रिटिश नीति के अन्य पक्षो के प्रति राष्ट्रीय प्रति-

क्रिया से अपने को उच्चतर स्तर की गुणात्मकता मे पथक करती है। सत्य यह है कि राष्ट्रवादी नेताओ ने भारतीय राष्ट्रीय आदोलन के इतिहास मे प्रथम बार ही आर्थिक अथवा उससे भिन्न कारणो से तीसरा काय सपन्न किया। यद्यपि यह छोटे पमान पर और कदाचित देश के केवल एक ही भाग अर्थात बबई प्रेसीडेंसी म किया गया था यह कोरे आदोलन के स्तर से उठकर वास्तविक कायवाही के क्षेत्र म पहुच गया। इसी समय पर और कपास उत्पादन शुल्क के प्रश्न को लेकर विदेशी सामान का बहिष्कार उल्लेखनीय परिमाण मे काय रूप म परिणत होना दिखाई दिया।[106] विदेशी सामान के बहिष्कार की घोषणा राष्ट्रवादी नेताओ के एक वग ने स्वदेशी उद्योग की सहायता के एकमात्र उपलब्ध साधन के रूप मे की थी क्योकि उनके अनुसार ब्रिटेन की न्यायप्रियता और दयालुता पर किसी प्रकार का विश्वास नही किया जा सकता था। देश के अनेक भागो मे जनसभाए की गई और उनमे स्वदेशी के प्रयाग की शपथ दिलाई गई। महाराष्ट्र मे एक छाटे स्तर के स्वदेशी अभियान का सचालन किया गया। राजनीतिक प्रभाव की दृष्टि से, छाटे स्तर पर विदेशी वस्त्रा के बहिष्कार का यह अभियान उत्पादन शुल्क के विरुद्ध किए गए राजनीतिक आदोलन से कम महत्वपूण नही था क्योकि इसमे लागो के स्वत प्रत्यक्ष कायवाही करने का एक नया रूप उजागर हो गया। यह अपने दुखो की निवत्ति के लिए शासको के आगे गिडगिडाने और उनकी कृपा पर निभर रहने के बदले अपनी सहायता आप ही करने की भावना का प्रतिनिधित्व करता था।[107] सरकार की शुल्क नीति से उत्पन्न होने वाली प्रारभिक स्वदेशी भावना ने भारतीया मे आत्मविश्वास की भावना का जन्म देने म, शहरी लोगा की बहुसख्या को राष्ट्रीय राजनीति के झडे के नीचे सगठित होने मे बीज डालने की भूमिका निभाई।

1899 के चीनी आयात शुल्क

भारतीय नेताओ को राज कर नीति का व्याकुल करने वाला एक और पक्ष यूरोप से अनुग्रह के रूप मे आने वाली चीनी पर उसी मात्रा मे थोपा गया आयात शुल्क था। यह सचमुच एक जटिल विषय था और यह भारतीय नेताओ की आर्थिक पकड की गहराई आर्थिक राष्ट्रवाद की और राजनीतिक कौशल की कसौटी बन गया। समीक्षाधीन अवधि मे यह आदोलन भारतीय नेताआ के बीच गहरे मतभेद के कुछ कारणा म से एक था।

19वी शताब्दी के मध्य तक भारत चीनी का निर्यातक देश रहा था, किंतु इसके बाद जल्दी ही वह अधिकाश रूप मे ब्रिटिश उपनिवेश मारिशस मे बढिया चीनी आयात करने लगा। 19वी शताब्दी के अतिम दशक की अवधि म जमनी और आस्ट्रिया से वहा की सरकारा द्वारा अपनाई गई राज्य अनुग्रह नियात पद्धति के फलस्वरूप चुकदर चीनी के आयात मे अपरिमित वृद्धि हो गई। सस्ती होने के कारण 1898 तक चुकदर चीनी के मारिशस के आयात पर और साथ साथ देश मे उत्पादित चीनी पर छा जाने का सकट उपस्थित हो गया। भारत सरकार न इस प्रवाह को रोकने के लिए 20 माच 1899 को 1894 के भारतीय कर अधिनियम म सशोधन किया। इसके अतगत सरकार ने राज्य अनुग्रहो की मात्रा मे अनुग्रह पोषित चीनी पर सम करने वाले आयात करो के आधान का

अधिकार प्राप्त कर लिया। उन्मुक्त व्यापार की स्पष्ट स्वीकृति नीति से दिखाई देने वाले साहसिक परिवर्तन का प्रधान कारण सरकार ने यह बताया कि सरकार भारत के महान उद्योग और उस पर निर्भर गन्ने की उपज के कृत्रिम रूप से उत्तेजित प्रतियोगिता के हाथों और अधिक क्षय तथा विनाश को रोकने को उत्सुक है। यह आरोप लगाया गया कि पहले ही बहुत अधिक क्षति हो चुकी है। भारत मे रिफाइनरी व्यापार और अबाधित रूप से बंद होती जा रही हैं और गन्ने की उपज का क्षेत्र सिमटकर 13 प्रतिशत रह गया है। सरकार ने यह भी दावा किया कि अनुग्रह पोषित चीनी न केवल भारत मे देश के आधुनिक कारखानों में उत्पादित और शोधित चीनी से प्रतियोगिता करती है प्रत्युत देश की अशोधित अथवा अधूरेपन से शोधित चीनी से भी प्रतियोगिता करती है।[108] इसके साथ ही सरकार ने इस तथ्य को मानने से एकदम इकार कर दिया कि इसके पीछे मारिशस के किसानो और उत्पादकों के हितो की सुरक्षा जैसे शाही चिंता के किसी विषय ने सरकार के इस निर्णय पर पहुचने मे कोई महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सरकार ने तो यह मत प्रकट किया कि इसके विपरीत सत्य यह है कि भारतीय उद्योग के और भारतीय कृषि के हित ही समग्रत पथ प्रदर्शक शक्ति रही है।[109]

यद्यपि लार्ड कर्जन ने अपने इस कदम के देश मे प्रबलतम समर्थन का खुला दावा किया और सार्वजनिक रूप से घोषणा की कि केवल आयात व्यापारियो, बबई और कराची के यूरोपीय वाणिज्य सदनो द्वारा ही असहमति दिखाई गई है[110] तथापि वास्तविकता कुछ और ही थी। भारतीय राष्ट्रीय नेता कभी भी, यहा तक कि प्रारभ मे भी, इस सम करने वाले आयात कर के समर्थन मे एकमत नही थे। समय की गति के साथ तो राष्ट्रीय विरोध और वर्ग पकडता गया। इसके अतिरिक्त जसाकि हम आगे देखेंगे, किसी भी स्थिति मे भारतीय समर्थन बिना शर्त और सरकारी क्षेत्रों द्वारा यह पग उठाते हुए किए गए प्रचार की भावना के अनुरूप नही रहा।

भारत सरकार की कार्यवाही के समर्थक और आलोचक, कम से कम प्रारभ मे तो बराबर सतुलित नही थे। अधिनियम के सशोधन के समय और उससे पूर्व समर्थकों ने आलोचकों को पीछे छोड दिया था। समर्थकों मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्वर जस्टिस एम० जी० रानाडे का था जिनके शब्द तब भी बहुत सारे भारतीयो की दृष्टि मे आर्थिक मामलो मे कानून की सी प्रामाणिकता लिए हुए थे और जिनके विचार मई और जून 1899 के 'टाइम्स आफ इंडिया' मे प्रकाशित तीन लेखो मे अभिव्यक्त हुए थे।[111] दूसरे सक्रिय समर्थक थे पी० आनन्द चारलू और आर० सी० दत्त। चारलू महोदय ने इपीरियल लेजिस्लेटिव कौसिल मे अपने पद से सरकार का प्रबल और मुखर समर्थन किया।[11] लगभग सभी राष्ट्रवादी समाचारपत्र, उदाहरणार्थ दि अमृत बाजार पत्रिका दि बगाली दि हिंदू, दि मराठा, दि इन्दु प्रकाश दि एडवोकेट और दि ट्रिब्यून समर्थक पक्ष मे ही थे।[113] वस्तुत सार्वजनिक रूप से अनुग्रह पोषित चुकदर चीनी के विरुद्ध स्वर मुखरित करने वाला और सरकार से सरक्षक कार्यवाही की माग करने वाला दि अमृत बाजार पत्रिका देश का प्रथम समाचारपत्र था।[114]

राष्ट्रवादियो के एक छोटे परतु मुखरित वर्ग ने प्रबलता और कठोरता के साथ इस

मारिशस की चीनी, से रक्षा नहीं हो पाती ।[126] राय ने लिखा आखिर हमारे लिए इसमे कोई अतर नही पडता, यदि जमनी और आस्ट्रिया के स्थान पर मारिशस चीनी भेजता है। वस्तुत मारिशस ही हमारी आवश्यकता की बढ़िया चीनी का बहुत बडा भाग हमारे पास भेजता है और वही हमारी चीनी उद्योग की हत्या कर रहा है।[127] यदि सरकार इमानदारी से भारत के चीनी उद्योग के उद्धार और प्रोत्साहन की इच्छुक है तो उसे केवल मारिशस की चीनी पर ही प्रतिबध नही लगाना चाहिए प्रत्युत उसके साथ ही साथ स्वदेशी उद्योग को सीधी सहायता और प्रोत्साहन देना चाहिए तथा गन्ने के उत्पादन मे और चीनी उत्पादन के तरीको मे सुधार के प्रयत्न करने चाहिए ।[128]

चीनी शुल्क लगाने के पीछे सरकार के निहित आशय का मूल्याकन करते समय अधिकाश समर्थको की प्रतिक्रिया मई 1899 म इस विषय पर ब्ल्यू बुक के प्रकाशन काल तक सरकार के पक्ष म ही थी ।[129] इस पुस्तक ने प्रकाशित होते ही लोगो के गले के नीचे एक कटु सत्य उतारा। चीनी शुल्क लगाने के समय बहुत सारे समाचारपत्रो और व्यक्तियो का विश्वास था कि यह शुल्क भारत के हित में ही लगाया जा रहा है ।[130] यहा तक कि एक प्रकार का हर्षोल्लास था कि भारत के उद्योग के पुनरुद्धार के लिए लाड कर्जन के रूप मे आर्थिक उद्धारक का अवतार हुआ है ।[131] परतु इस हर्षातिरेक की स्थिति तो महीने भी नही बनी रह सकी जब ब्ल्यू बुक ने आलोचको के बुरे से बुरे सदेहो की पुष्टि कर दी ।[132] इस पुस्तक ने समर्थको तक को यह मानने के लिए सहमत कर लिया कि यह शुल्क एकान्तिक रूप से अथवा सिद्धात रूप से भारत के किसानो और उत्पादको के हितो की रक्षा के लिए नही लगाया गया था, प्रत्युत मारिशस और वेस्ट इडीज के ही किसानो और उत्पादको के हितो की सुरक्षा के लिए था ।[133] यहा तक कि जस्टिस रानाडे को यह टिप्पणी करनी पडी कि नीति म यह परिवतन वेस्ट इडीज के चीनी उद्योग के विनाश के फलस्वरूप हुआ है ।[134] सरकार के इस पग के अत्यधिक उत्साही समर्थक पी० आनद चारलू को 1901 मे यह स्वीकार करना पडा कि इस कानून को पारित करते समय जिस भय की स्वतत्र अभिव्यक्ति की गई थी कि यह अधिनियम कुछ उपनिवेशो के लाभ के लिए है वह भय सर्वथा निराधार प्रतीत नही होता ।[135] इसने चीनी शुल्क अधिनियम के बहुत से समर्थको को यह मानने को विवश कर दिया कि इसके प्रति उनका उत्साह मन्द पड गया है ।[136] इतने पर भी वे इस अधिनियम की निंदा करने को तैयार न हुए । इस सबध में वे आलोचको से फिर अलग हो गए और उन्होने यह कहना जारी रखा कि यह उपाय भारतीय चीनी उद्योग की कुछ समय के उपरात अवश्य रक्षा करेगा अत भारतीयो को इसके समर्थन से कतराना नही चाहिए[137] और मारिशस के किसानो के साथ सामान्य उद्देश्य लेकर चलना चाहिए ।[138] उनका कथन था कि यदि इस शुल्क से भारतीय चीनी के अन्य प्रतिद्वद्वियो को एक को हानि पहुचती है तो यह भी एक विधेयक के लाभ ही हैं ।[139] इसके अतिरिक्त इससे भारतीय चीनी उद्योग को साम लेने का समय भी तो मिलेगा ।[140]

भारतीय नेताओ का यह वर्ग दूसरे वर्ग की इस मान्यता से समान रूप से सम्मत था कि केवल सम करने वाले कर के आधार से ही भारतीय चीनी उद्योग के और उत्पादन मे सफलता नही मिलेगी । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शीघ्रता

प्रयोग करने वाले निर्धन वर्ग पर इसका प्रभाव पडता था और इस पक्ष की अवहेलना नही की जा सकती थी।[159]

मार्च 1894 मे जब कोयला लौह धातुओ, रगो, कच्चे औद्योगिक सामान तथा अन्य औद्योगिक भडारो पर कराधान की योजना वाले 'इण्डियन टैरिफ बिल' को पेश किया गया तो भारतीय नेताओ ने पूर्वापेक्षा अधिक तीव्र प्रतिक्रिया प्रकट की। उन्होने उद्योगो पर परोक्ष कराधान के माध्यम से औद्योगिक विकास को क्षति पहुचाने की सरकारी नीति की जोरदार निंदा की।[160]

19वी शताब्दी के अन्तिम चतुर्थांश मे चादी की चद्दरें एक छोटी सी मद थी जिसका भारत मे इग्लैड को निर्यात किया जाता था। ब्रिटिश सरकार ने एक तो उसपर 30 से 35 प्रतिशत तक आयात शुल्क लगा दिया और दूसरे उसे बोझिल ठप्पा पद्धति का शिकार बना दिया।[161] 1882 के पश्चात भारतीय नेता इस राज्य कर के विरुद्ध तीव्र विरोध प्रकट करते रहे।[16] 1889 मे यह विरोध उस समय अपनी चरम सीमा पर पहुच गया जब भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने चादी की चद्दरो पर शुल्क हटाने की तथा एच्छिक रूप से ठप्पा अकित करने की पद्धति की माग की।[163] इसका अभीष्ट प्रभाव पडा। काग्रेस के इस अधिवेशन मे भाग लेने वाले चार्ल्स ब्राडलाफ ने यह प्रश्न ससद मे उठाया और 1890 मे शुल्क हटा दिया गया।

भारतीय नेताओ ने इन छोटी छोटी बातो को भी इतना महत्त्व केवल इसलिए दिया ताकि ब्रिटिश के स्वतन्त्र उद्योग के सिद्धान्त का खोखलापन दिखाया जा सके। इग्लैड मे चादी चद्दर शुल्क हटाने की माग करते हुए उन्होने बार बार यह प्रश्न पूछा जब भारत मे 1882 मे उन्मुक्त व्यापार के सिद्धात के पालन के बहाने से कपास शुल्क हटाया गया था तो चादी चद्दर शुल्क अभी क्यो बनाया रखा जा रहा है और इग्लैड भारत द्वारा निर्दिष्ट अच्छे उदाहरण का प्रत्यावर्तन क्या नही कर सकता? इग्लैड की शुल्क हटाने से इनकारी केवल भारत के शासको की स्वार्थपरता और उनके दोहरे व्यवहार को ही प्रकट करती है, यह उन्होने घोषित किया।[164] 21 फरवरी 1884 के अक मे ज्ञान प्रकाश ने लिखा इससे बढकर भद्दा मजाक और क्या हो सकता है कि इग्लैड उन्मुक्त व्यापार के प्रचार के मवर मे इस कहावत को चरितार्थ कर रहा है कि कोई दूसरो को तो मनसफा सिखाए और खुद बेवकूफी जमी हरकतें करे।[165] इसी प्रकार अमृत बाजार पत्रिका ने 27 मई 1884 के अक मे क्रुद्ध होकर कहा 'इसे वे उन्मुक्त व्यापार कहते है हम तो इसे धोखा ही कहेगे न कि उन्मुक्त व्यापार। मराठा ने 3 जून 1888 के अक मे टिप्पणी की कि इग्लैड की उन्मुक्त व्यापार की नीति मक्कारी और धोखा धडी है—इग्लैड की सारी स्वार्थपरता की नीति लगी हो गई है और व्यापार के सबध मे इग्लैड की व्यापारिक स्वतन्त्रता की नेकी बकवास साबित हुई है।'

भारतीय नेताओ ने चादी चद्दर शुल्क हटाने के पक्ष मे कुछ और तर्क भी प्रस्तुत किए। उन्होने कहा कि भारत मे लगाए कपास करो के विपरीत चादी की चद्दरो पर इग्लैड मे लगाए शुल्क भी विशुद्ध रूप से सरकार-साधन के रूप मे ही थे क्योकि इनसे होने वाली वार्षिक आय कुछ हजार पौंडो की तुच्छ राशि ही है।[166] उनका तर्क था कि इन करो के

हटने से भारतीय कारीगरी और व्यापार को सहायता मिलेगी। इसके अतिरिक्त चादी की चद्दरो के निर्यात से भारतीय चादी को निकासी की सुविधा उपलब्ध होगी और इससे भारत के रुपये पर दबाव को कम करने और उसके अवमूल्यन को रोकने मे सहायता मिलेगी।[169]

निष्कर्ष

भारत सरकार द्वारा अपनाए गए विभिन्न कर साधनो के प्रति भारतीय राष्ट्रीय नेतृत्व के दृष्टिकोण के उपर्युक्त अध्ययन के बाद कर नीति के चार प्रमुख तत्व स्पष्ट होते हैं प्रथम, अधाधुध न सही, यह विवेकपूर्ण ढग से भारतीय उद्योग को सरक्षण प्रदान करने की सुस्पष्ट नीति है। द्वितीय, भारतीय नेताओ के आधुनिक उद्योग के प्रति प्रबल और पूर्ण लगाव का यह एक अन्य निदर्शन है। एक बार पुन व्यापार के हितो की अपेक्षा उद्योग के हितो को प्राथमिकता दी गई। इसके साथ ही भारतीय नेताओ ने जानबूझकर विदेशी वस्त्रो और शोधित चीनी के उपभोक्ता मध्यवर्गीय समाज के रूप म अपने हितो को देश के उद्योगीकरण के व्यापक हितो के अधीन ही कर दिया। दूसरे शब्दो म उन्होने भारतीय उपभोक्ता के हितो की अपेक्षा भारतीय उत्पादक के हितो को अधिक महत्व दिया। यह रोचक तथ्य है कि जब कभी उनके विचार मे भारतीय उद्योग पर कोई आच नही आती थी, जैसाकि पेट्रोलियम और किन्ही किन्ही के मत मे चीनी के बारे म, तब भारतीय नेता निस्सकोच और अबाध रूप से उपभोक्ताओ के हितो की सुरक्षा म अग्रसर होते थे। तृतीय, वे इस धारणा पर पूर्ण विश्वास करने लगे थे और इसी पर उन्होने दृढतापूर्वक आचरण भी किया और इसी का प्रचार प्रसार भी किया कि भारत सरकार की कर नीति भारतीय उद्योग के विकास को क्षतिग्रस्त कर रही है। इसके पीछे विदेशी शासको का उद्देश्य कदाचित ब्रिटिश उत्पादको के हितो की सुरक्षा करना है। भारत सरकार ब्रिटिश उद्योगो के उत्पादित माल की खपत के लिए भारत म यथासभव मडी बनाए रखने के लिए कृतसकल्प है और इसी के सदर्भ मे भारत के ग्रामो की आर्थिक स्वायत्तता और स्वदेशी कलाकौशल का द्रुतगति से विनाश किया जा रहा है। चतुर्थ, सरकार की कर नीति ने राष्ट्रीय भावना को न केवल जगाया प्रत्युत राजनीतिक वास्तविकता को अधिक स्पष्टता से देखना भी सिखाया। इसने नेताओ को भारतीयो म राष्ट्रीय भावना को फूकने, उन्हे राजनीतिक शिक्षा देने तथा उनमे पनपती राष्ट्रीयता को सुदृढ करने, सारे देश के विभिन्न भागो के लोगो को इकट्ठा होने यहा तक कि उन्हे राजनीतिक सघर्ष और आदोलन की कला सिखाने का अवसर जुटाया। वस्तुत समीक्षाधीन अवधि मे करनीति उन विषयो म से एक थी, जिन्हे भारतीयो म सरकार विरोधी भावनाए तथा सघर्षशील राष्ट्रवाद को जगाने का श्रेय प्राप्त है।

सदर्भ

1 सपूण समीक्षाधीन अवधि मे भारतीय कर नीति के इतिहास के लिए देखिए सी० जे० हैमिल्टन दि ट्रेड रिलेशस बिटवीन इग्लड ऐंड इडिया (1600-1806) (कलकत्ता 1919) प्रमथनाथ बनर्जी फिस्कल पालिसी इन इडिया (कलकत्ता 1922) सी० एन० वकील फाइनशल डेवलपमेट इन माडन इडिया (बबई 1924) अध्याय 15 और दत्त ईं एच II

2 दि इपीरियल गजटियर (1908) खड IV पृ० 262

3 राज्य सचिव के सप्रषण देखिए (सेपरेट रेवेन्यू) स० 6 15 जुलाई 1875 और उसका सप्रषण (लेजिस्लेटिव) 11 नवबर 1875 (स० 53) और 31 मई 1876 (स० 25)

4 *राज्य सचिव की डाक 15 जुलाई 1875 पूर्वोक्त स्थल 11 नवबर 1875 की अपनी डाक म उसने* दोबारा बल देते हुए लिखा सूती सामान पर कर दो उत्पादक वर्गों को जिनपर राज की सपन्नता और कमद निभर है एक दूसरे के प्रतियोगी ही नहीं बनाते प्रत्युत राजनीतिक विरोधी भी बनाते हैं यदि इस कर को स्थगित कर दिया जाए तो यह वतमान म प्रतियोगिता रत वर्गों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली और कटु बने हितो मे मतभेद का विषय बन जाएगा पूर्वोक्त स्थल

5 लिटन के दष्टिकोण के लिए देखिए लेडी बटटी बेलफोर दि हिस्टरी आफ लाड लिटन्स ऐडमिनिस्ट्रेशन 1876 ट 1880 (लदन 1899) पृ० 462 477 स्ट्रची के लिए देखिए उसका 1877 का वित्ताय वक्तव्य

स्ट्रची ने अपने दष्टिकोण को निम्नलिखित अधिक सुस्पष्ट शब्दा म इस प्रकार अभिव्यक्ति दी मैं इस सबध मे भारतीय और अगरेजी हिता में किसी प्रकार के मतभेद म विश्वास नहीं करता यदि एसा किया जाता तो स्थिति भिन्न होती—मैं इस प्रकार की कल्पना म विश्वास नहीं रखता मैं इस मौके पर एक बात अवश्य कहना चाहता हू कहा कहा जाता है कि भारत सरकार का कतव्य केवल भारत के हित की चिता करना है और यदि इससे लकाशायर के हित को आघात पहुचता है तो हमें इससे कुछ लेना देना नहीं परतु जहा तक मेरा सबध है मैं इस सिद्धात को अस्वीकार करता हू भारत म अपने जीवन का अधिक समय व्यतीत करने से और भारत सरकार के सदस्य बनने का अथ यह नहीं कि अगरेज ही नहीं रहा मानचेस्टर के हित जिनपर कुछ लोग नाक सिकोडते हैं न केवल कपास के उद्योग से प्रत्यक्ष रूप से सबद्ध बुद्धिमान और महान लोगों के हित हैं प्रत्युत लाखो अगरेजो के भी हित हैं मुझ यह कहने म कोई सकोच नहीं कि जहा मानवता के नाते मैं आशा करता हू और अनुभव करता हू कि इस देश के प्रति मेरे कुछ कतव्य हैं वहा मैं यह भी अनुभव करता हू कि मेरी कल्पना म अपने देश के प्रति कतव्य से बढ़कर कुछ भी नहीं तथा देखिए उनका 1878 और 1879 के वित्तीय भाषण

6 लाड सैलिसबरी ने भारत सरकार के पास प्रस्ताव भेजते हुए यह निर्देश किया कि 5 और मिलें *अपना काय आरभ करने जा रही हैं तथा 1878 के अत तक 1 231 284 धुरियो का भारत में* नियोजन हो जाएगा (1878 के वित्तीय भाषण का परिशिष्ट डी)

7 जे० स्ट्रची इडिया (1903) पृ० 181 2 तथा बर्थरिंग पार्लमेन्टरी स्टेटमेंट्स 1883 कडिकाए 75-78 परिमल राय पूर्वोक्त पृ० 50 और जोशी पूर्वोक्त पृ० 628-9 हैमिल्टन ने विरोधी दष्टिकोण का प्रतिपादन किया कर के निवारण से न तो कपास के परकर सामान के आयात व्यापार को ही पतन की अपेक्षा अधिक द्रुतगति मिली है और न ही भारत के द्रुतगति से बढ़त

कपास उद्योग के विस्तार म किसी प्रकार की बाधा उपस्थित हुई है (पूर्वोद्धत, पृ० 247)

8 स्ट्रैची इडिया (1903) प० 178

9 17 दिसबर 1874 के प्रक म नेटिव ओपीनियन द्वारा पुनरुद्धत ए० बी० पी० का एक विदेशी सस्करण, तथा देखिए आर० एन० पी० बग०, 2, 9 जनवरी 6 27 फरवरी 1875 म उद्धत समाचारपत्र

10 ईस्ट इडिया एसोसिएशन, बबई शाखा की प्रबध समिति का 15 जनवरी 1875 का ज्ञापन, जरनल आफ दि ईस्ट इडिया एसोसिएशन खड IX 1875

11 दखिए आर० एन० पी० बब 14 21 28 अगस्त 4 11 सित० 1875, आर० एन० पी० बग० 14 21 28 अगस्त 1875 आर० एन० पी० एन० 28 अगस्त 1875 आर० एन० पी० एम० सितबर अक्तूबर 1875

12 देखिए आर० एन० पी० बब 4 11 18, 25 माच 1 8 अप्रैल 1876 आर० एन० पी० बग० 18, 25 माच 15 22, 29 अप्रल 1876 परवर्ती विरोध के लिए देखिए भोलानाथ चद्र एम० एम० खड V जनवरी-जून 1876 पृ० 3 58 63 याजक्षा परस्त 1 अप्रल बबई समाचार 31 माच (आर० एन० पी० बब 7 अप्रल 1877), इदु प्रकाश 23 अप्रल (वही 28 अप्रल, 1877) एजुकेशन गजट 20 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 28 जुलाई 1877) सहचर 23 जुलाई (वही 4 अगस्त 1877)

13 देखिए आर० एन० पी० बब०, 23 30 माच 6 13 अप्रल 1878 और देखिए आर० एन० पी० बब 11 18 जनवरी 8 15 22 फरवरी 1 15 माच 1879 आर० एन० पी० बग० 22 फरवरी 1 माच 1879 आर० एन० पी० एन० 22 फरवरी 1 माच 1879 ब्रह्म पब्लिक ओपीनियन 13 फरवरी 1879

14 देखिए *आर० एन० पी० बब 22 29 माच 5 26 अप्रल 10 मई 1879* आर० पी० एन० बग० 22 29 माच 5 12 अप्रैल 1879 आर० एन० पी०पी० एन० 5 12 अप्रल 1979 3 मई 1879 को पार्लियामेंट के सामने भारत सरकार की कायवाही के प्रति विरोध प्रकट करने के लिए एक *जन सभा हुई इदु प्रकाश 5 मई (आर० एन० पी० बब 10 मई 1879* इसी प्रकार की एक सभा का आयोजन कलकत्ता मे 27 माच 1879 को किया गया इसमे लगभग 300 लोग सम्मिलित हुए(बागल पूर्वोद्धत प० 41)और देखिए एस० एन० बनर्जी स्पीचज I प० 201 03 *के० टी० तलग सिलेक्ट राइटिंग्ज एड स्पीचेज (बबई 1916) प० 185-6 लालमोहन* घोष स्पीचेज आफ लालमोहन घोष आशुतोष बनर्जी द्वारा सपादित (कलकत्ता 1883 और 1884) भाग 1 प० 9

15 एस० एन० *बनर्जी स्पीचेज I* प० 202

16 आर० एन० पी० बग० 5 अप्रल 1879

17 भारत मिहिर 19 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 28 फरवरी 1880), बगाली 29 जनवरी 1881 ए० बी० पी० 24 फरवरी 1881 आर० एन० पी० बग० 1 8 15 जनवरी 19 फरवरी 5 माच 1881 मे उल्लिखित समाचारपत्र आर० एन० पी० बब 29 जनवरी 5 26 फरवरी 1881 16 मई 1880 को पूना मे पूना सावजनिक सभा द्वारा आयोजित एक जनसभा ज० पी० एस० एस० खड III सख्या 1 (जुलाई 1880) पृ० 9 (और देखिए पृ० 3)

18 मराठा 28 अगस्त 18 सितबर 1881 नेटिव ओपीनियन 28 अगस्त 4 सितबर 18 सितबर 1881 और आर० एन० पी० बब 3 10 24 सितबर 1881 और आर० एन० पी० बग०

24 31 दिसबर 1881 मे उल्लिखित समाचारपत्र

19 ए० बी० पी० 16 23 30 माच 6 अप्रल 1882, बगाली 11 माच 1882 मराठा, 26 माच 1882 नटिव ओपीनियन, 12 मार्च 1882 आर० एन० पी० बब 11, 18 माच, 1 अप्रल 1882 आर० एन० पी० बग० 25 माच 1 अप्रल 1882, आर० एन० पी० पी० एन० 22 29 माच 5 12 अप्रल 1882 म उल्लिखित समाचारपत्र यहा तक कि परम प्रतापी महाराज जतीद्र मोहन टगोर ने चबर कौंसिल की अपनी सीट से कपास आयात के निवतन की निन्दा की (ए० सी० पी० 1882 खड XXI प० 304)

20 यह शासन पहल ही देशी भाषा प्रस कानून तथा स्वशासन के विस्तार को वापस ले चुका है अपराध प्रक्रिया सहिता सुधार बिल दूर की कोडी था भारतीय नेताओ को अब भी किसी अय वस्तु का अपशा अगरेजो म स उदारवादियो और उग्रवादियो पर दढ विश्वास था

21 उदाहरणाथ देखिए ईस्ट इडिया एसोसिएशन की बबई शाखा का स्मरणपत्र जरनल आफ ईस्ट इडिया एसोसिएशन खड IX (1875) प० 99 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड V (जनवरी जून 1876)पृ० 51 58 9 आर० एन० पी० बब 22 29 माच, 5 12 26 अप्रल, 3 मई 1879 म उल्लिखित समाचारपत्र तलग राइटिंग्ज प० 186 ए० एम० घोष स्पीचेज खड I प० 9 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I प० 202 वायसरायल्टी आफ लाड लिटन ज० पी० एस० एस० खड III स० 1 (जुलाई 1880) प० 68 9 मराठा 26 माच 1882 सर जान स्ट्रेची ने निम्नलिखित आश्चर्योत्पादक परतु उदघाटक शब्दो म भारतीय दष्टिकोण को उलट रूप म इस प्रकार प्रस्तुत किया भारत म करो की सूची म शामिल अथवा शामिल किया जा सकने वाला प्रत्यक उत्पादन या तो भारत म उत्पादित होता है या किया जा सकता है अत यह सिद्ध है कि कपास आयात शुल्क वास्तव म अथवा सामथ्य म सरक्षक हैं (वित्तीय प्रतिवेदन 1878 कडिका 55)

22 उदाहरण के लिए देखिए ईस्ट इडिया एसोसिएशन की बबई शाखा का अनुस्मारक पूर्वोक्त स्थल भोलानाथ चद्र पूर्वोक्त स्थल तलग राइटिंग्ज प० 185 एस० एन० बनर्जी स्पीचज I, प० 200-02 वायसरायल्टी आफ लाड लिटन पूर्वोक्त स्थल तथा बहुत सारे समाचारपत्र पीछ पाद टिप्पणी 13 14 म उद्धत

23 ईस्ट इण्डिया एसोसिएशन की बबई शाखा का अनुस्मारक पूर्वोक्त स्थल सहचर 23 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 4 अगस्त 1877) ए० एम० घोष स्पीचज भाग I प० 193 200-02 रानाडे ज० पी० एस० एस खड IV सख्या 1 (जुलाई 1881) पृ० 50 बहुत वर्षों क उपरात आर० सी० दत्त न व्यथित होकर कहा उस समय यह कर हटाए गए हैं जबकि दक्षिणी भारत अभी 1877 क भयानक अकाल से सभल नहीं पाया जबकि उत्तरी भारत अभी 1877 के अकाल स सतप्त है जबकि भूराजस्व म करो की अभी अभी बढोत्तरी की गई है जबकि विशेष करो की उगाही स बनाया गया अकाल बीमा कोष अदश्य हो गया है और जबकि अफगानिस्तान क सकट और विशाल खर्चों न बलात् विभाग का माग हा अवरुद्ध कर दिया है (ई एच II प० 416)

24 बबई समाचार जाम जमशेद और अखबार सौदागर 21 मार्च (आर० एन० पी० बब 23 माच 1878) इडियन स्पेक्टेटर 28 अगस्त (बग 3 सितबर 1881) बगाली 11 मार्च 1882 इडियन स्पेक्टेटर नेटिव ओपीनियन गुजरात मित्र 12 माच (आर एन पी० बब 18 माच 1882) वस्तुत 1882 म जितन भी समाचारपत्रों ने आयात करों के निवतन पर टिप्पणी की इस तथ्य को प्रस्तुत किया

25 आर० एन० पी० बंब 7, 21 28 अप्रल 1877 और 22 29 मार्च 5 अप्रल 1879 में उल्लिखित समाचारपत्र भारत मिहिर 29 मार्च (आर० एन० पी० बंग० 5 अप्रल 1879) हिंदी प्रदीप अप्रैल (आर० एन० पी० पी० एन० 12 अप्रल 1879) मिरात उल हिंद 15 फरवरी (वही, 19 फरवरी 1880) बदवान सजीवनी 3 जनवरी (आर० एन० पी० बंग० 14 जनवरी 1882) सहचर 29 मार्च (वही, 8 अप्रल 1882)

26 सहचर 17 दिसबर ए० बी० पी० के बिन्शी सस्करण म बलगाव समाचार, 2 मार्च (आर० एन० पी० बंब 6 मार्च 1875) आंध्रभाषासजीवनी तिथि रहित (आर० एन० पी० एम० सितबर अक्तूबर 1875) सदाप्श 23 अगस्त (आर० एन० पी० पी० एन० 28 अगस्त 1875) आर० एन० पी० बंग० 2 9 जनवरी 6 27 फरवरी 13 मार्च 14 21 28 अगस्त 1875 और आर० एन० पी० बंब, 14 21 28 अगस्त 4 11 सितबर 1875 4 11 25 मार्च 1 8 अप्रल 1876, आर० एन० पी० बंग० 18 मार्च 15 22 अप्रल 1876 21 28 जुलाई 4 18 अगस्त 1877 आर० एन० पी० बंब 23 मार्च 1878 म उल्लिखित समाचारपत्र भोलानाथ चद्र एम० एम० खड V (जनवरी-जून 1876) पृ० 48 58-63, एल० एम० घोष जरनल आफ ईस्ट इंडिया एसोसिएशन खड XIII भाग 2 पृ० 65 और स्पीचेज भाग 1 पृ० 9, एस० एन० बनर्जी स्पीचज I, पृ० 220 आर० एन० पी० बंब 22 29 मार्च 5, 19 26 अप्रल 1879 आर० एन० पी० बंग० 22 फरवरी 22 29 मार्च, 5, 12 अप्रल 1879 आर० एन० पी० पी० एन० 5 12 अप्रल 1879 म उल्लिखित समाचारपत्र दि ग्रीवन्स प्लेज ऐंड इटस क्लासिकेसिज ज० पी० एस० एस०, खड III सख्या 1 (जुलाई 1879) पृ० 44 वायसरायल्टी आफ लाड लिटन जे० पी० एस० एम० खड III सख्या 1 (जुलाई 1880) पृ० 34 63 68 मिरात उल हिंद 15 फरवरी (आर० एन० पी० पी० एन० 19 फरवरी 1880), सहचर 20 दिसबर 1880 (आर० एन० पी० बंग० 1 जनवरी 1881) साधारणी 2 जनवरी (वही 8 जनवरी 1881) सुलभ समाचार, 8 जनवरी (वही 15 जनवरी 1881), आनन्द बाजार पत्रिका 21 फरवरी (वही 5 मार्च 1881), केसरी 20 सितबर (आर० एन० पी० बंब 24 सितबर 1881), मराठा 18 सितबर 1881 26 मार्च 1882, ए० बी० पी० 16 मार्च 1882, आर० एन० पी० बंब 18 25 मार्च 1 8 अप्रल 1882, आर० एन० पी० बंग० 24 31 दिसबर 1881, 7 जनवरी 25 मार्च 1 अप्रल 1882, आर० एन० पी० पी० एन० 22 29 मार्च 1882 म उल्लिखित समाचारपत्र

27 आर० एन० पी० बंब 25 दिसबर 1875

28 रानाडे रिव्यू आफ फ्री ट्रेड ऐंड इगलिश कामर्स अगस्तस मोग्रडियन द्वारा, जे० पी० एस० *एस०, खड IV सख्या 1, पृ० 50 यह समीक्षा अज्ञातनाम प्रकाशित हुई हमारे पास जी० ए०* मानकर द्वारा जस्टिस रानाडे को इसका लेखक मानने का प्रमाण उपलब्ध है (मानकर पूर्वोद्धृत पृ० 214-5 खड I)

29 जे० पी० एस० एस०, खड III सख्या 1 (जुलाई 1880) पृ० 11

30 उनके दृष्टिकोण का सोदाहरण विश्लेषण जान स्ट्रैची की अगली टिप्पणी म किया गया है भारतीयो द्वारा ब्रिटिश सरकार पर लकाशायर का पक्षपात करने का अभियोग मूर्खतापूर्ण आरोप है जिसका उत्तर देने की न अपेक्षा थी और न है (इंडिया 1903 पृ० 178) तथा देखिए स्ट्रैची फाइनेंशनल स्टटमेन्टस कडिका 77 यहा यह उल्लेखनीय है कि उस समय उच्च ब्रिटिश

अधिकारियो ने राष्ट्रीय आपत्तियो की सम्यक जानकारी तो प्राप्त की परतु उन्हे स्थिति के परपरागत रूप मे लेते हुए टाल दिया

31 पुनीय वकील पूर्वोद्धत पृ० 408-24

32 1 मार्च (आर० एन० पी० बब 6 मार्च 1875) इसी प्रकार 23 अगस्त 1875 के अक में सदादश को नये रेशवाली कपास पर आयात कर लगाने पर विचार करते समय यह टिप्पणी करने को विवश होना पडा यह देखने के पश्चात कौन इनकार करेगा कि हमारे शासकों की यह वास्तविक चिता उत्तेजित कर रही है कि भारत का एक बहुत बडे उत्पादक देश के रूप में ही विकास हो ? (आर० एन० पी० पी० एन०, 28 अगस्त 1875) और देखिए साधारणी, 29 अगस्त (आर० एन० पी० बग०, 11 सितबर 1875)

33 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड V (जनवरी जून 1876) पृ० 58 60 अतएव उन्होने कहा कि स्वामिभक्ति के लिए युवराज के भारत पधारने का कोई महत्व नहीं इग्लड की शासिका महारानी का भारत की सम्राज्ञी की उपाधि ग्रहण करना व्यर्थ है वस्तुत देवता नहीं प्रत्युत पिशाच ही सच्चे अर्थों म शासक शक्ति हैं मानचेस्टर ही सच्चे अर्थों म भारत के भाग्य का निर्णायक है (वही पृ० 63)

34 वही पृ० 62 तथा देखिए साधारणी 23 मार्च (आर० एन० पी० बग०, 29 मार्च 1879)

35 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I पृ० 202

36 एल० सी० पी० 1882 खड XXI पृ० 328 9

37 और देखिए सहचर 29 मार्च (आर० एन० पी० बग०, 8 अप्रल 1882)

38 दत्त ई० एच० II पृ० 339

39 आर० एन० पी० बग० 1 अप्रल 1882 तथा समय 15 मार्च (वही 20 मार्च 1886)

40 सहचर 13 जन० (वही 23 जन० 1886)

41 एल० सी० पी० 1882 खड XXI पृ० 328

42 उदाहरण के लिए देखिए बी० ओ० आर्० 15 अप्रल 1884 बगाली 22 मार्च 1884 एस० ए० स्वामी नाथ अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1885 पृ० 69 केसरी 24 जनवरी बाघ सुधाकर 25 जनवरी (आर० एन० पी० बब 28 जनवरी 1888) दत्त ई एच II पृ० VIII, 120 339 41 401 02 411, 416 518 537 स्पीचेज II पृ० 126

43 उदाहरणार्थ देखिए, आई० एन० सी० 1885 1887 और 1889 के क्रमश प्रस्ताव VI VI और III केसरी 3 अप्रल (आर० एन० पी० बब 7 अप्रल 1883) जे० यू० याज्ञिक रिप० आई० एन० सी० 1885 पृ० 66 एस० ए० स्वामीनाथ अय्यर वही पृ० 69 बगाली 9 जनवरी 1886 आर० एन० पी० बग० 2 9 16 23 30 जनवरी 6 फरवरी 18 25 सितबर 2 9 अक्तूबर 1886 आर० एन० पी० बब, 18 सितबर 1886 म उल्लिखित समाचार पत्र ट्रिब्यून 18 सितबर, इडियन स्पेक्टेटर 19 सितबर, बिहार हेराल्ड और इडियन मिरर 21 सितबर पीपुल्स फ्रेंड 25 सितबर ज्ञान प्रकाश 30 सितबर (बी०ओ आई० खड IV सख्या 10 अक्तूबर 1886) हिंदूजनसस्कारिणी सख्या 3 (आर० एन० पी० एम० अक्तूबर 1886) जोशी पूर्वोद्धत पृ० 100-01 142 160 मार्डनिक पूर्वोद्धत पृ० 651 659-60 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III पृ० 8 गुरु प्रसाद सेन रिप० आर्० एन० सी० 1887 पृ० 132, मराठा 29 जनवरी 1888 बगाली 28 जनवरी 1888 ए० बी० पी० 26 जनवरी 1888 बी० ओ० आई० फरवरी और मार्च 1888 म उल्लिखित समाचारपत्र आर० एन० पी० बब 28 जनवरी

4 फरवरी 1888 आर० एन० पी० बग०, 28 जनवरी 4 फरवरी 1888, आर० एन० पी० एम 31 जनवरी 29 फरवरी 1888 आर० एन० पी० पी० एन० 31 जनवरी 7 14 फरवरी 1888, नौरोजी सी० पी० ए०, पृ० 177 ज्ञान प्रकाश और सुधारक 19 फरवरी सुबोध पत्रिका, 18 फरवरी (आर० एन० पी० बब 24 फरवरी 1894)

44 भारत सरकार तो नए कर अधिनियम म सूती सामान को सम्मिलित करने के लिए अत्यत उत्सुक दिखाई देती थी परतु महारानी की सरकार के आदेश से उसे अपने निश्चय को रद्द करना पड़ा देखिए भारतीय कर अधिनियम पर मार्च 1849 म वित्त सदस्य का भाषण, एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII और देखिए वकील पूर्वोद्धत पृ० 426 पी० बनर्जी फिस्कल पालिसी इन इंडिया पृ० 89-90

45 देखिए एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII पृ० 155

46 पूना सावजनिक सभा का स्मरणपत्र दिनांक 6 मार्च 1894 जे० पी० एस० एस० खड XVI स० 4 (अप्रल 1894) इंडियन एसोसिएशन का स्मरणपत्र, दिनांक 8 मार्च 1894 रिपोर्ट आफ दि इंडियन एसोसिएशन फ्राम 1892 3 टू 1895-6 बबई प्रेसीडेंसी एसोसिएशन द्वारा 2 मार्च 1894 को विरोध स्वरूप भेजा गया तार, पी० पी० (हाऊस आफ कामस), 1895 खड 72 स० 202, बबई के 2 नवबर 1894 को हुए सातवें प्रातीय सम्मेलन म अध्यक्षीय अभिभाषण जे० पी० एस० एस० खड XVII सख्या 3 (जनवरी 1895) पृ० 5 6 18 मार्च 1894 को पूना मे हुए सम्मेलन में प्रस्तुत याचिका के लिए देखिए मराठा 18 मार्च 1894 20 मार्च 1894, को मद्रास मे हुए सम्मेलन म पारित प्रस्ताव के लिए देखिए मराठा, 25 मार्च 1894 कलकत्ता मे 8 मार्च बबई म 14 मार्च, अमतसर म 7 मार्च और लखनऊ म 9 मार्च 1894 को हुए जन-सम्मेलनो मे पारित प्रस्तावो के लिए देखिए, पी० पी० (हाउस आफ कामस) 1895 खड 72 सख्या 202

47 ए० बी० पी० 3 मार्च 1894 मराठा, 4 मार्च 1894 बगाली 10 17 मार्च 1894 इदु प्रकाश 12 मार्च 1894 इंडियन स्पेक्टेटर 11 मार्च 1894 एडवोकेट 9 मार्च (आई० एस० बी० ओ० आई० 25 मार्च 1894) ट्रिब्यून 14 मार्च (वही 15 मार्च 1894) आर० एन० पी० बब, 10 मार्च आर० एन० पी० बग० 10 17, 31 मार्च 1894, आर० एन० पी० एम० 15, 31 मार्च 1894 आर० एन० पी० एन०, 14 21 28 मार्च 1894 आर० एन० पी० पी० 7 21 अगस्त 1894 म उल्लिखित समाचारपत्र

48 पूना सावजनिक सभा का स्मरणपत्र 1894 पूर्वोक्त स्थल इंडियन एसोसिएशन का स्मरणपत्र, पूर्वोक्त स्थल बबई प्रेसीडेंसी एसोसिएशन का विरोध पूर्वोक्त स्थल जी० आर० एम० चितनवीस एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII प० 157 रास बिहारी घोष स्पीचेज पृ० 151 2.

49 रास बिहारी घोष स्पीचेज प० 150 आग चौन्हवें अध्याय मे राष्ट्रवादियो की कर नीति के इस पक्ष की विस्तत समीक्षा प्रस्तुत की गई है

50 पूना सावजनिक सभा का 1894 का स्मरणपत्र पूर्वोक्त स्थल तथा पीछे सदभ 45 6 म उद्धत लगभग सभी भारतीय नेता

51 आई० एस० बी० ओ० आई० 29 अप्रल 1894

52 ज्ञान प्रकाश 5 मार्च (आर० एन० पी० बब, 10 मार्च 1894)

53 बहुत सारे राष्ट्रवादी नेताओं ने धीमे स्वर मे और अप्रत्यक्ष ढग से राजनीतिक धमकी भी दी और इन प्रार्थियों ने तो अपने शासको से राजनीतिक नतिकता की अपेक्षा करते हुए उन्हें यहा

तक चेतावनी दे दी कि उसके इस कदम से महारानी की आज्ञाकारी भारतीय जनता की वफादारी को एक ऐसा गहरा धक्का लगेगा जिसकी क्षतिपूर्ति कभी हो ही नहीं सकेगा (देखिए, मराठा 18 मार्च 1894)

54 11 मार्च (आर० एन० पी० बम्ब० 17 मार्च 1894)

55 आर० एन० पी० बग० 31 मार्च 1894 इसी प्रकार बगाली ने 17 मार्च 1894 के अक में पूछा कि भारतीयों का इंग्लैंड के न्याय से विश्वास हिल गया है

56 आर० एन० पी० बम्ब० 24 मार्च 1894

57 एल० सी० पी० खड XXXIII पृ० 46

58 वही पृ० 383 384

59 वित्तीय प्रतिवेदन 1878 कडिका 55

60 वकील पूर्वोद्धृत पृ० 427 में उद्धृत और देखिए वेस्टलैंड एल० सी० पी०—1894 खड XXXIII पृ० 393 4

61 वकील पूर्वोद्धृत पृ० 427 429 हैमिल्टन—पूर्वोद्धृत पृ० 249-51

62 एल० सी० पी०—1894 खड XXXIII पृ० 381 2

63 मराठा 16 दिसबर 1894 इडियन स्पेक्टेटर 23 दिसबर 1894 इन्दुप्रकाश 24 दिसबर 1894 ए० बा० पी० 22 दिस० 1894 बगाली 22 दिस० 1894 हिन्दू 27 दिस० 1894 कसरे-हिन्द 16 दिस० गुजरात प्रकाश 19 दिस० सुबोध पत्रिका 16 दिस० दक्षिण मित्र 20 दिस० (आर० एन० पी० बम्ब० 22 दिस० 1894) इकॉनॉमिस्ट 21 दिस० 1894 वाकिम उल अखबार 24 दिस० 1894 तथा अन्य भारतीय समाचारपत्र (आर० एन० पी० एन० 15 जनवरी 1895) मद्रास स्टैंडर्ड 24 दिस० 1894 (आई० एन० बी० ओ० आर० 13 जनवरी 1895) हिन्दुस्तानी 26 दिस० 1894 (आर० एन० पी० एन०, 2 जनवरी 1895) एस० एन० बनर्जी सा० पी० ए० प० 259 61 आगा पूर्वोद्धृत 191 2 केवल एक प्रधान समाचारपत्र एडवोकेट ने कपास पर आयात शुल्क के विरुद्ध इस आधार पर आपत्ति की कि इससे इस प्रकार की वस्तुओं के दाम बढ़ जाएंगे और इसका परिणाम उत्पादन शुल्क लगाना हो सकता है। इसके स्थान पर पत्र का सुझाव था कि मानचेस्टर के उत्पादों तक से सबध जोड़ना चाहिए

64 वाचा स्पि० आई० एन० सी० 1894 पृ० 31

65 आई० एन० सी० 1894 का प्रस्ताव I वाचा स्पि० आई० एन० सी०—1894 प० 31 2 मराठा 16 दिसबर 1894 ए० बी० पी० 22 29 दिसबर 1894 बगाली 22 दिसबर 1894 हिन्दू 27 दिस० 1894 इडियन स्पेक्टेटर 23 दिसबर 1894 इंदुप्रकाश 24 31 दिस 1894 आर० एन० पी० बब 22 दिस० 1894 5 जनवरी 1895 आर० एन० पी० बग० 22 29 दिसबर 1894 5 12 जनवरी 1895 आर० एन० पी० एम० 15 जनवरी 1895 आर० एन० पी० एन० 9 16 23 जन० 1895 आर० एन० पी० 12 जनवरी 9 फरवरी 1895 में उल्लिखित समाचारपत्र यहां यह निर्देश करना उचित है कि बहुत सारे भारतीय नेताओं ने उस समय भी जब सीमा शुल्क के लगाने की सभावनाओं पर विचार किया जा रहा था इसका प्रबल विरोध किया था इस सबध मे देखिए, इन्डियन स्पेक्टेटर 1 जुलाई 1894 हिंदू 11 जुलाई 1894 गुजराती 1 जुलाई सुधारक 2 जुलाई (आर० एन० पी० बब 7 जुलाई 1894) केसरी 24 जुलाई (वही 28 जुलाई 1894) ट्रिब्यून 18 जुलाई एडवोकेट 20 जुलाई

(आई० एस० बी० ओ० आई० 26 अगस्त 1894)

66 हैमिल्टन पूर्वोद्धृत पृ० 252 3 दत्त ई एच II पृ० 539-40 वकील पूर्वोद्धृत पृ० 430-2

67 वकील पूर्वोद्धृत पृ० 431

68 मराठा, 26 जनवरी 9 फरवरी 1896 ए० बा० पी० 29 जन० 1896, बंगाली 1 8 फरवरी 1896, हिंदू, 27 जनवरी 1896 इंडियन स्पेक्टेटर 26 जनवरी 1896, मद्रास स्टैंडर्ड 27 जनवरी इंडियन मिरर 27 जनवरी (आई० एस० बी० ओ० आई० 15 मार्च 1896) एडवोकेट 28 जनवरी ट्रिब्यून 29 जन० इंडियन मिरर 30 जनवरी (वही 22 मार्च 1896) बिहार हेराल्ड, 8 फरवरी (वही 5 अप्रैल 1896) आर० एन० पी० बंब 25 जन० 1 फरवरी 1896, आर० एन० पी० बंग० 1 8 15 फरवरी 1896 ए० एन० पी० एम० 15 29 फरवरी 1896 आर० एन० पी० एम० 5 12, 19 फरवरी 1896 आर० एन० पी० पी० 8 15 22 फरवरी 1896 में उल्लिखित समाचारपत्र बंबई प्रेसीडेंसी एसोसिएशन की ओर से 27 जनवरी 1896 को भेजा गया तार इंडियन टैरिफ एक्ट 1896 और काटन ड्यूटी एक्ट 1896 से संबंधित 1896 के कागजात-सी 8078 (हाउस आफ कामन्स) पृ० 163 28 जनवरी 1896 में बंबई की एक जनसभा में पारित प्रस्ताव वही पृ० 166 29 जनवरी 1896 का अध्यक्ष पूना सार्वजनिक सभा द्वारा प्रेषित तार वही पृ० 171 2 फरवरी 1896 में मद्रास में हुई जनसभा द्वारा अभिव्यक्त विरोध वही पृ० 192 7 फरवरी 1896 को थोरसाड जिला थाना बंबई में हुई जनसभा द्वारा अभिव्यक्त विरोध वही पृ० 193 विधान परिषद में बा० आर० मुधोलकर, पी आनंद चारलू और मोहिनी मोहन राय के सरकारी प्रस्ताव के विरुद्ध भाषण (एल० सी० पी० 1896 खंड XXXV पृ० 66 7 78 87 92 95)

69 आर० एन० पी० बंग० 8 फरवरी 1896

70 क्रमश प्रस्ताव XVI और प्रस्ताव VIII

71 रिप० आई० एन० सी०—1902 पृ० 143

72 दत्त ई एच II पृ० 543 और वही पृ० 597, 612 स्पीचेज II पृ० 45-6 80 126-7

73 गोखले स्पीचेज, पृ० 10, 41 2 और 77 अपने 1903 के बजट भाषण में उन्होंने आर० सी० दत्त को प्रतिध्वनित किया उन्होंने दृढ़तापूर्वक स्वीकार किया गृह उद्योग पर सरकारी कराधान की विदेश प्रतियोगिता के लाभ का साधन बनाने वाली ऐसी व्यवस्था किसी भी अन्य देश में संभव नहीं थी भले ही वहां की सरकार विनाश के कगार पर खड़ी हुई गिरने की स्थिति में ही क्यों न हो (वही, पृ० 42) और देखिए, श्रीराम—एल० सी० पी०—1903, खंड VIII पृ० 104 5

74 सी० पी० ए०, क्रमश पृ० 527 और 696

75 उदाहरणार्थ मराठा 10 मई 1896 नेटिव ओपीनियन, 1 अप्रैल कसरी 31 मार्च (आर० एन० पी० बंब 4 अप्रैल 1903) इंडियन पीपुल, 19 जनवरी 1905

76 आई० एन० सी० 1894 का प्रस्ताव I, हिंदू 11 जुलाई 1894 ट्रिब्यून, 18 जुलाई (आई० एस० बी० ओ० आई० 26 अगस्त 1894), थाथा रिप० आई० एन० सी० 1894 प० 32, मराठा 16 दिस० 1894 ए० बा० पा०, 29 दिस० 1894 इंदु प्रकाश 24 दिस० 1894, बंगवासी 22 दिसंबर संजीवनी 22 दिस०, दैनिक ओ समाचार चंद्रिका 24 दिस० (आर० एन० पी० बंग०, 29 दिस० 1894) मद्रास स्टैंडर्ड, 24 दिस० 1894 ट्रिब्यून 26 दिसंबर 1894 (आई० एस० बी० ओ० आई० 13 जनवरी 1895) ज्ञान प्रकाश 27 दिस० 1894 बिहार

हेराल्ड 29 दिस॰ 1894 इंडियन मिरर 30 दिस॰ 1894 (वही 20 जनवरी 1895) हिंदुस्तान 4 जनवरी (आर॰ एन॰ पी॰ एन॰ 9 जनवरी 1895), टाइम्स 8 जनवरी (वही 16 जन॰ 1895) पता अखबार 26 जनवरी (आर॰ एन॰ पी॰ पी॰, 9 फरवरी 1895), पी॰ ए॰ पारलु एम॰ सी॰ पी॰ 1896 खंड XXXV प॰ 83-4 और पूर्वोक्त पृ॰ 91 पार्श्विपणी, एडवोकेट 28 जनवरी (आई॰ एन॰ पी॰ ओ॰ आई॰ 22 माच 1896) समय 31 जनवरी बंगवासी 1 फरवरी (आर॰ एन॰ पी॰ बग॰ 8 फरवरी 1896), कर्नाटक-प्रकाशिका 3 फरवरी केरल पत्रिका 8 फरवरी शालिम उल अखबार 3 फरवरी (आर॰ एन॰ पी॰ एम॰, 15 फरवरी 1896) कुछ वर्षों के उपरान्त आर॰ पी॰ दत्त ने पुष्टि की कि सामा शुल्क के परिणामस्वरूप भारतीय वस्त्र उद्योग का भाग्य इग्लैण्ड के धनिक वर्गों के अधीन हो गया था (ई एच II पृ॰ 544) तथा देखिए वही पृ॰ IX और उसका स्पीचेज II, पृ॰ 46 80 127 1904 मे गोखले ने भी इसी प्रकार का मत अभिव्यक्त किया था देखिए, स्पीचेज पृ॰ 77 और देखिए श्रीराम एम॰ सी॰ पी॰ खंड XLII पृ॰ 104-05 और इंडियन पेपुल 19 जनवरी 1905

77 वाचा रिप॰ आई॰ एन॰ सी॰—1894 पृ॰ 32 ए॰ बी॰ पी॰ 29 दिसबर 1894 बगवासी 22 दिसबर (आर॰ एन॰ पी॰ बग॰ 29 दिस॰ 1894) भारत प्रकाश 27 दिसबर 1894 बिहार हेराल्ड 29 दिसबर 1894 (आई॰ एन॰ पी॰ खो आई॰ 20 जनवरी 1895)

78 हिंदू 11 जुलाई 1894 ट्रिब्यून 18 जुलाई (आई॰ एन॰ पी॰ ओ॰ आई॰ 26 अगस्त 1894) वाचा रिप॰ आई॰ एन॰ सी॰—1894 पृ॰ 32 स्पीचेज पृ॰432. ए॰ एम॰ मुदालियर वही प॰ 33 पता अखबार 26 जनवरी (आर॰ एन॰ पी॰ पी॰ 9 फरवरी 1895) वी॰ एन॰ आप्टे रिप आई॰ एन॰ सी॰—1895 पृ॰ 160 धार मिहिर 3 फरवरी (आर॰ एन॰ पी॰ बग॰ 15 फरवरी 1896) दत्त स्पीचेज II प॰ 46 80 एम॰ एन॰ बनर्जी सी॰ पी॰ ए॰ पृ॰ 694

79 मराठा 26 जनवरी 1896 हिंदू 27 जन॰ 1896 इंडियन स्पेक्टेटर 26 जन॰ 1896 बगाली 1 फरवरी 1896 इंडियन नेशन 27 जनवरी एडवोकेट 28 जनवरी इंडियन मिरर 30 जनवरी (आई॰ एन॰ पी॰ ओ॰ आई॰, 22 माच 1896) बिहार हेराल्ड 8 फरवरी (वही 5 अप्रल 1896) 1 फरवरी को समाप्त होने वाले सप्ताह मे बबई के प्राय सभी समाचारपत्र आर॰ एन॰ पी॰ बब 1 फरवरी 1896 समय 31 जनवरी सजीवनी 1 फरवरी (आर॰ एन॰ पी॰ बग॰ 8 फरवरी 1896) कर्नाटक प्रकाशिका 3 फरवरी और केरल पत्रिका 1 फरवरी (आर॰ एन॰ पी॰ एम॰ 15 फरवरी 1896) हिंदुस्तानी 29 जनवरी (आर॰ एन॰ पी॰ एन॰, 5 फरवरी 1896) पूना सावजनिक सभा के अध्यक्ष का तार, पी॰ पी॰ (एच॰ आफ॰ सी॰) सी 8078 आफ 1896 प॰ 171 बोरसाद जिला केरा बबई मे हुई जन सभा द्वारा अभिव्यक्त विरोध वही पृ॰ 193 पी॰ ए॰ चारलु एल॰ सी॰ पी॰—1896 खड XXXV प॰ 86 आई॰ एन॰ सी॰ —1902 का प्रस्ताव XVI गोखले स्पीचेज पृ॰ 10 77

80 बगाली 8 फरवरी 1896 समय 31 जनवरी सजीवनी 1 फरवरी दशक 2 फरवरी (आर॰ एन॰ पी॰ बग॰ 8 फरवरी 1896) आर्यजनप्रियाल 1 फर (आर॰ एन॰ पी॰ एम॰ 15 फरवरी 1896) बबई प्रेसीडेंसी एसोसिएशन के प्रधान का तार. पी॰ पी (हाउस आफ कामस) 1896 सी 8078 प॰ 163 बबई की जनसभा मे पारित प्रस्ताव वही प॰ 166

81 वाचा रिप॰ आई॰ एन॰ सी॰—1894 पृ॰31 मराठा 16 दिस॰ 1894 दक्षिण की समाचार

चन्द्रिका, 19 दिसबर (आर० एन० पी० बग० 22 दिसबर 1894) सजीवनी 22 दिसबर (वही, 29 दिसबर 1894 (आई० एस० बी० ओ० आई० 13 जनवरी 1895) ज्ञान प्रकाश 27 दिस० 1894 बिहार हेराल्ड, 29 दिस० 1894 इडियन मिरर 30 दिस० 1894 (वही 20 जनवरी 1895) इस तथ्य पर विशेष बल नहीं दिया गया जसाकि वित्त सदस्य ने स्वय लजिस्लेटिव कौंसिल म कहा 'हमने इससे मिलने वाले राजस्व के वतमान साधन के रूप म इसका प्रस्ताव नही किया है' (एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII प० 384) इसके अतिरिक्त भारतीय नेताओ को यह तथ्य स्वत साक्षी के रूप म प्रतीत हुआ 1904 म वित्त सदस्य की इस टिप्पणी कि, आयात शुल्क से केवल 20½ लाख रुपयो के राजस्व की ही प्राप्ति होती है पर गोखले ने तिरस्कारयुक्त कड़ा उत्तर दिया यदि मेरे माननीय मित्र सचमुच यह विश्वास करते हैं कि सीमा शुल्क इसलिए लगाए गए हैं कि इनसे राजस्व की आय होती है जिन्हें सरकार नही छोड सकती तो कदाचित भारत म अथवा इग्लैंड म एसा सोचन वाले वे अकेले व्यक्ति होंगे (स्पीचेज पृ० 78) तथा थाराम एल० सी० पी०—1903 खड XLII पृ० 104-05

82 वाचा रिप० आई० एन० सी०—1902 पृ० 142 3

83 1904 म इस कल्पना को गोखले ने उस समय स्पष्ट अभिव्यक्ति दी जब उन्होंने दृढ़तापूवक स्वीकार किया कि अब इसम कोई सदेह नही कि यह शुल्क वास्तव म ही उपभोक्ताओ द्वारा उपभोक्ताओ से अभिप्राय अधिकाश निधन समुदायों, द्वारा ही चुकाया जाता है (स्पीचेज पृ० 77) इससे पूव 1902 म उस समय वे और भी अधिक सतक थे जब उन्होने कहा था कि भार का एक भाग सतत गरीबों के ऊपर ही पडता है (वही पृ० 10)

84 हिंदू 11 जुलाई 1894 ट्रिब्यून, 18 जुलाई (आई० एस० बी० ओ० आई० 26 अगस्त 1894) वाचा रिप० आई० एन० सी० 1894 पृ० 32 इदु प्रकाश 31 दिसबर 1894 ट्रिब्यून 26 दिस० 1894 (आई० एस० बी० ओ० आई० 13 जन० 1895) ज्ञान प्रकाश 27 दिस० 1894 बिहार हेराल्ड 29 दिस० 1894, इडियन मिरर 30 दिस० 1894 (वही 20 जन० 1895) वाचा स्पीचेज प० 430 और रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 157 8 दत्त ई एच II प० 540 गोखले स्पीचेज पृ० 41 2

85 आई एन० सी०—1894 का प्रस्ताव I ए० एस० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1894 पृ० 33 मराठा 16 दिस० 1894 इडियन स्पेक्टेटर 30 दिस० 1894 हितवादी 28 दिस० 1894 (आर० एन० पी० बग० 5 जनवरी 1895) केसर-ए हिंद, 30 दिसबर 1894 (आर० एन० पी० बब 5 जनवरी 1895) ताज उल अखबार 5 जनवरी (आर० एन० पी० पी० 12 जनवरी 1895) पसा अखबार 26 जनवरी (वहा 9 फरवरी 1895)

86 एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII पृ० 402-03 420 450

87 आई० एन० सी० 1895 का प्रस्ताव XXI एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 259 61 वाचा रिप० आई० एन० सी०—1895 प० 157 8 पी० ए० चारलू एल० सी० पी०—1896 खड XXXV प० 80 82

88 वाचा रिप० आई० एन० सी०, 1895 प० 158 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, प० 295 पी० ए० चारलू पूर्वोक्त स्थल पृ० 80

89 उदाहरणाथ दनिक औ समाचार चन्द्रिका 5 फरवरी 1896 क अक म लिखा हमारे कुछ समकालीन इतने आशावादी हैं कि वे यह विश्वास सहज म ही कर लेत हैं कि यह विरोध भविष्य म फल लाएगा—अपनी सरकार को होश म लाएगा वस्तुत यह सोचना एक गलती

है कि अपना सरकार हाथ में रहा उत्तर अथवा अनुत्तर किसी सरकार के पास इतनी शक्ति अवश्य (होती) है कि वह उसे दूसरों को दे सकती है यह जानबूझकर सौदागरों का प्रयत्न करने के लिए भारत के प्रति बड़ा भारी अन्याय कर रहा है परन्तु प्रश्न यह है कि सरकार कर ही क्या सकता है? उत्तर हो अथवा अनुत्तर सौदागरों के रोष को त्यागा तो कोई भी दल नहीं कर सकता (आर० एन० पी० बम० 9 फरवरी 1896)

90 प्रस्ताव I तथा बाबा रिप० आई० एन० सी० 1894 पृ० 31 3 सी० ए० चारलू एन० सी० पी० 1896 खण्ड XXXV प० 81 मालवीय स्पीचेज पृ० 37 8 आगा पूर्वोद्धृत, प० 192 गोखले स्पीचेज पृ० 5 41 एस० एन० बनर्जी—सी० पी० ए० प० 674 इन ई एच II प० IX 531 534 स्पीचेज II, प० 126 तथा 65 और 68 सन्दर्भों में उल्लिखित प्राय सभी समाचारपत्र

91 पी० मेहता स्पीचेज प० 390 इसी प्रकार बंगवासी ने अपने 9 फरवरी 1896 के अंक में लिखा भारतीयों को अब समझ आ गई है कि सरकार भारतीयों को उस उद्योग का विकास करने का इच्छुक है अथवा जिससे उनके हितों व भारतीयों के हितों के साथ टकराव की संभावना है के सफलतापूर्वक संचालन की अनुमति कभी नहीं देगी (आर० एन० पी० बंग० 15 फरवरी 1896)

92 सी० पी० ए० म प० 527

93 आर० एन० पी० एम० 15 जनवरी 1895 इसी प्रकार 30 दिसंबर 1894 के अंक में अमृतोदय ने यह विश्वास प्रकट किया कि कपास आयात शुल्क के अधिनियम को पारित करके सरकार ने यह सिद्ध कर दिया है कि वह भारतीय मिलों का विकास और उनकी समृद्धि नहीं चाहती (आर० एन० पी० बम० 5 जनवरी 1895) वस्तुत नेटिव प्रेस के बंबई संवाददाता ने लिखा इस सप्ताह के अन्य अनेक भारतीय समाचारपत्रों ने कपास शुल्क बिल के पास होने पर उसकी अस्वीकृति सरकार की भारत में औद्योगिक प्रवृत्ति के हितों के प्रति उदासीनता से अपनी अपने दिल की भड़ास और निराशा को प्रकट करने वाली भाषा प्रकट में की है (वही)

94 उदाहरणार्थ 2 फरवरी 1896 के अंक में स्पेक्टेटर ने सरकार को चेतावनी दी इस पथभ्रष्ट नीति के निरंतर अनुसरण से भारतीय जनता का ब्रिटिश शासन के न्याय और सच्चाई पर से विश्वास उठने लगा है इससे पूर्व 1894 में रासबिहारी घोष शासकों को सचेत कर चुके थे कि चुंगी कर के द्वारा छल-कपट करने से इंग्लैंड की न्यायपूर्ण व्यवहार के लिए प्रसिद्धि, जो किसी भी मूल्य पर रक्षणीय और स्पर्धा योग्य है दांव पर है इंग्लैंड ने इतने दीर्घकाल से आज तक तीरों-तलवार से भी अधिक सशक्त जो प्रभाव अपनी प्रजा पर डाला है जिसके कारण प्रजा इस विशाल साम्राज्य की वफादार है उस प्रभाव के विनष्ट होने का खतरा उत्पन्न हो गया है (स्पीचेज, प० 152 3) केवल भारतीयों ने खतरे की चेतावनी नहीं दी थी जनरल जो० किसनी ने भी बराबर जोर देकर 1894 में भविष्यवाणी की थी कि यदि समुचित पग उठाने में देर की गई तो भारत सरकार की सद्भावनाओं और चरित्र को ऐसी क्षति पहुंचेगी जिसके परिणाम भयंकर हो सकते हैं और होंगे (पूर्वोद्धृत पृ० 347) तथा देखिए पृ० 290 इसी प्रकार 1894 में कपास के आयात पर शुल्क की छूट का विरोध करने वाले इंडियन कौंसिल के छः सदस्यों में से एक सर ए० एरगुयनार ने अपने असहमति भाषण में चेतावनी दी ब्रिटिश राज्य के नाम से जाने जाने वाले जटिल यंत्र के लिए यह निश्चित है कि भारत के हितों में और ग्रेट ब्रिटेन के हितों में आवश्यक दृढ़ बंधन हो ऐसा कोई पग नहीं उठाना चाहिए जिससे महिमामयी महारानी की भारतीय प्रजा में असंतोष उत्पन्न होता हो अथवा जिससे ब्रिटिश शासन पर उनके विश्वास को

धक्का लगता हो ऐसा कोई भी पग राज्य के हित का विरोधी ही माना जाएगा (वकील पूर्वोद्धत, पृ० 427)

95 मूल पाठ में उद्धत लेखको के अतिरिक्त देखिए 'स्वदेशमित्रन, 21 दिसबर 1894 कर्णाटक प्रकाशिका 14 जनवरी 1895 (आर० एन० पी० एम० 15 जनवरी 1895) सजीवनी 22 दिस० (आर० एन० पी० बग० 29 दिस० 1894) बगाली 22 दिस० 1894 आर० एन० पी० एन०, 23 जनवरी 1895, ताज उल अखबार 5 जनवरी (आर० एन० पी० 12 जनवरी 1895), इडियन स्पेक्टटर 26 जून 1896 समय 31 जनवरी, दशक, 2 फरवरी सजीवनी 1 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 8 फरवरी 1896) बबई के लगभग सभी समाचारपत्र विशेषत नेटिव ओपीनियन 26 जनवरी इदु प्रकाश 27 जनवरी और गुजराती 26 जनवरी (आर० एन० पी० बब, 1 फरवरी 1896), स्वदेशमित्रन 11 फरवरी (आर० एन० पी० एम० 29 फरवरी 1896), बगाली 8 फरवरी 1896 वाचा स्पीचेज, पृ० 431 दत्त स्पीचेज II पृ० 127 बांबे प्रेसीडेंसी एसोसिएशन का स्मरणपत्र पी० पी० (हाउस आफ कामस) 1896 सी 8078 पृ० 163 तथा वही पृ० 193

96 आर० एन० पी० बब 1 फरवरी 1896 दो सप्ताह बाद 11 फरवरी 1896 के अक म केसरी ने फिर लिखा गत सोमवार से पहले अनुचित कपास शुल्क स्वीकृत करके भारत सरकार ने सारे ससार के सामने यह स्पष्ट कर दिया है कि वे इस देश के लोगो के हितो के लिए भारत पर शासन नही करते प्रत्युत इस शासन का उद्देश्य थोडे से अगरेज व्यापारियो के हितो की ही रक्षा करना है

97 एल० सी० पी०—1896 खड XXXV प० 85

98 मालवीय स्पीचेज प० 34-5 तथा केसरी, 11 फरवरी (आर० एन० पी० बब 15 फरवरी 1896) दनिक औ समाचार चद्रिका (आर० एन० पी० बग० 8 फरवरी 1896) दत्त ई एच II प० 542 3

99 मालवीय स्पीचज, प० 37 8

100 वही, प० 26 और वाचा रिप० आई० एन० सी० 1894 प० 33 दनिक औ समाचार चद्रिका ने 5 फरवरी 1896 के अक म घोषणा की कि ब्रिटिश मत्रिमडल लकाशायर का दास है और यहा की सरकार ब्रिटिश मत्रिमडल की दास है (आर० एन० पी० बग० 8 फरवरी 1996) अरुणोदय ने पहले ही 30 दिसबर 1894 के अक म घोषणा की थी मानचेस्टर के उत्पादक ही हमारे असली शासक हैं और भारत राज्य सचिव का वचन हो असल मे हमारे लिए कानून है (आर० एन० पी० बब 5 जनवरी 1895) इस परवर्ती दृष्टिकोण को 'भारत जीवन ने 10 फरवरी के अक मे (आर० एन० पी एन 12 फरवरी 1896) अखबार ए आम ने 14 फरवरी के अक में (आर० एन० पी० पी 22 फरवरी 1896) और स्वदेशमित्रन ने 11 फरवरी के अक म (आर० एन० पी एम 29 फरवरी 1896) में प्रतिध्वनित किया

101 वाचा रिप० आई० एन० सी०—1894 पृ० 33 इदु प्रकाश 31 दिसबर 1894 और सुबोध पत्रिका 30 दिसबर 1894 (आर० एन० पी० बब 5 जनवरी 1895)

102 आर० एन पी० बग० 15 फरवरी 1896

103 दत्त इडियन पालिटिक्स प० 53 इसी प्रकार 3 फरवरी 1896 के अक म कर्णाटक पत्रिका ने यह राय प्रकट की आवश्यकता यह है कि भारत मे भारतीयो की ही सरकार हो लोगो को और अधिक विस्तृत कौंसिल को पाने की चेष्टा करनी चाहिए और साथ ही देखना चाहिए कि

वही पृ० 175

120 रानाडे एसो पार प्राव्यान पृ० 10 12 13

121 न्त इंडिया 11 मार्च 1899 ए० बा० पा० 22 माच 1899, हिन्दू 18 मार्च 1899 दक्षिण ओ समाचार पत्रिका 22 माच (आर० एन० पी० बग० 25 मार्च 1899) गिरानी 24 मार्च (वही 1 अप्रैल 1899) भारत जावन 27 माच (आर० एन० पा० एन०, 28 मार्च 1899) हिन्दुस्तान 14 अप्रैल (वही 19 अप्रैल 1899)

122 रानाड एसा पार प्राव्यान पृ० 6

123 राय इंडियन शुगर ड्यूटीज प० 6 7 गुजरात 19 26 मार्च (आर० एन० पा० बर 25 मार्च 1 अप्रल 1899) प्रतिवाग्ता 17 अप्रैल (आर० एन० पी० बग०, 22 अप्रल 1899)

124 रानाडे एसो पार प्राव्यान प० 3 ए० बी० पी० 18 नवबर 1898 22 माच 1899 पी० ए० पारनू एन० सी० पी० 1899 खड XXXVIII पृ० 176 समय 24 माच (आर० एन० पी० बग० 1 अप्रल 1899)

125 पी० ए० पारनू एन० सी० पी० 1899 खड XXXVIII पृ० 127 तथा इन इंडिया 31 माच 1899 हिन्दू 21 माच 1899 हिन्दुस्तान 14 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 19 अप्रैल 1899) भारत जावन 1 मई (वहा 3 मई 1899)

126 राय इंडियन शगर ड्यूटीज पृ० 2-4 6-7 24 तथा गजराती 19 माच (आर० एन० पी० बर 25 माच 1899) 14 मई (वही 20 मई 1899)

127 राय इंडियन शुगर ड्यूटीज प० 12

128 वही प० 22 3

129 1899 की पी० पी० (हाउस आफ कामस) खड-66 सा 9287 ड्यू क न इस तथ्य का उद्घाटन किया कि भारत सरकार न अपन सप्रेषण म दृढ़तापूर्वक स्वीकार किया कि आयातित चीनी न सार्थक दृष्टि से भारत मे गन्ना उत्पादन को प्रभावित नहीं किया अत सरकार ने चीना पर सम करने वाले शुल्क को लगाने से इनकार कर दिया इसपर राज्य सचिव ने दो बार, एक बार अपन 25 अगस्त 1898 के सप्रेषण म और दूसरी बार 26 जनवरी 1899 के सप्रेषण में मारिशस के किसानो से प्राप्त आवेदनपत्र भेजे जिनम अनुग्रह पोषित चीनी क विरुद्ध भारत में सरक्षण साधन बरतन की माग की गई था साथ हा सचिव न भारत सरकार पर बड़े शिष्ट ढग से दबाव डाला कि वह इस माग को स्वीकार कर ले

130 ए० बी० पी० 24 माच 1899 यह बहुत लोगो का दृष्टिकोण प्रतीत होता है यह दूसरी बात है कि नेटिव प्रस के बहुत सारे सवाददाताओ ने दुर्भाग्यवश इंडियन प्रस क साप्ताहिक सार-सक्षेपों मे इस दृष्टिकोण क उल्लेख को आवश्यक नहा समझा उनका मतव्य कदाचित यह था कि सरकार की कायवाही के समथन मे ही उपयुक्त दृष्टिकोण समाविष्ट है सरकारी कायवाही के अन्यथा विरोधी गुजराती ने अपने 14 मई 1899 क अक म भारतीय प्रेस म सरकारी इरादों का जिस विश्वास के साथ वणन किया था उसका पुरा ही उल्लेख किया (आर० एन० पी० बब 20 मई 1899) वाचा ने भी 1906 में इस धारणा पर अपने विचार प्रकट किए (स्पीचेज पृ० 173)

131 वाचा स्पीचेज पृ० 173 समय के 24 मार्च (आर० एन० पी० बग० अप्रल 1899) क निम्न लिखित अवतरण म यह भावना चित्रित है लाड कजन ने इस बिल को पास करने के रूप में भारतीय जनता क प्रति जो उच्चाशयता और सहानुभूति तथा इससे भी बढ़कर कतव्य परायणता

का परिचय दिया है उससे प्रत्येक भारतीय पर म उनके प्रति आदर की भावना दृढ़ होगी, और देखिए भारत जीवन 3 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 4 अप्रल 1899)

132. गुजराती ने अपने 14 मई 1899 के अंक मे लिखा कि भारत सरकार और भारत सचिव के बीच हुए सारे पत्र व्यवहार से स्पष्ट होता है कि कुशल चंदरसेन (उपनिवेश राज्य सचिव) ने अपने नकली शस्त्रों से विजय प्राप्त की है और उसने सचमुच ही सारी भारतीय जनता के छोटे से बडे तक सभी व्यक्तियों को मुग्ध बनाया है (आर० एन० पी० बंब 20 मई 1899)
133 ए० बी० पी०, 1 जून 1899 हिंदू 12 मई 1899 (हालांकि यह द्विविधाग्रस्त था), ट्रिब्यून, 30 मई इडियन मिरर 12 मई मद्रास स्टडड 11 मई (आई० एस० बी० ओ० आई० 21 मई 1899), सजीवनी, 11 मई (आर० एन० पी० बग० 20 मई 1899) सत्य विजय, 17 मई केसरी 16 मई हितेच्छु 18 मई (आर० एन० पी० बंब 20 मई 1899)
134 रानाडे प्ली फार प्रोटेक्शन, पृ० 2
135 एल० सी० पी०, 1901 खंड XL पृ० 281 तथा दत्त ई एच II, पृ० 523
136 ए० बी० पी०, 20 मई 1899, इडियन मिरर, 12 मई मद्रास स्टडड 11 मई (आई० एस० बी० ओ० आई० 21 मई 1899)
137 ए० बी० पी० 20 मई और 1 जून 1899 हिंदू 21 मई 1899 मद्रास स्टडड 11 मई (आई० एस० बी० ओ० आई०, 21 मई 1899) एडवाकेट 19 मई (वही 28 मई 1899)
138 रानाडे प्ली फार प्रोटेक्शन पृ० 6
139 ए० बी० पी० 20 मई 1899
140 रानाडे प्ली फार प्रोटेक्शन पृ० 6
141 ए० बी० पी०, 20 मई 1899 सजीवनी, 11 मई (आर० एन० पी० बग० 20 मई 1899)
142 रानाडे प्ली फार प्रोटेक्शन पृ० 6
143 वही पृ० 17 21
144 देखिए आगे अध्याय 11
145 जे० एफ० फिनले एल० सी० पी० 1902 खंड XLI प० 216 कर्जन स्पीचेज III पृ०20, दत्त ई एच II, पृ० 523
146 लोवाट फ्रेजर पूर्वोद्धत प० 342 परिमल राय पूर्वोद्धत प० 84
147 कर्जन स्पीचेज III पृ० 5 तथा देखिए इपीरियल गजटियर आफ इडिया (1908) खड III पृ० 288-90
148 पी० ए० धारलू एल० सी० पी० 1899 खड XXXVIII प० 134
149 वही पृ० 178 9 मराठा 26 माच 2 अप्रल 1899 हिंदू 18 21 माच 12 मई 1899 बगाली 18 माच 1899 इडियन मिरर 23 माच (आई० एस० बी० ओ० आई०, 2 अप्रल 1899) सत्य विजय, 17 मई (आर० एन० पी० बंब 20 मई 1899), बगवासी 25 माच 1 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 1 8 अप्रल 1899) उडिया और नवसवाद 29 माच (वही 17 जून 1899) 21 अप्रैल 1902 के न्यू इडिया मे विपिनचद्र पाल ने स्पष्टता स स्वीकार किया कि उन्होंने 1899 मे यह जानते हुए कि यह चीनी आयात शुल्क भारतीयो के हितो म न होकर ब्रिटिश पूजीपतियो और मारिशस क हितो क लिए ही सुरक्षापरक है उसका समथन इसलिए किया था कि इसे मैंने एक नए सिद्धात के रूप म देखा था, यह सडे-गले स्वतत्र व्यापार के सिद्धात से स्वस्थ निवतन था भारत सरकार के मन में भी इसे लागू करते समय यही भावना

काम कर रही थी जैसा वेस्टमड ने घोषित किया था मैं अपनी राज करनीति में एक सबसे नए अध्याय का उद्घाटन करने जा रहा हूँ' (एम० गा० पी० 1899 खड XXXVIII पृ० 124) इस बिल का समर्थन करते हुए लार्ड कर्जन औद्योगिक रूप से पिछड़े देश की औद्योगिक आवश्यकताओं के सम्बन्ध में सरकार सिद्धांत का शानदार ढंग से बचाव करते हुए प्रतीत होते हैं (स्पीचेज I पृ० 63-4)

150 रानाडे का प्ला पार प्रोटेक्शन में वी० जी० काले की भूमिका पृ० IV और V

151 जे० एन० टिनले एम० गा० पी० 1902 खड XLI पृ० 215-7 कर्जन स्पीचेज III पृ० 1 2

152. कर्जन स्पीचेज III पृ० 6

153 ए० बी० पी० 25 26 अप्रल 1902 न्यू इंडिया 21 अप्रैल 12 जून 1902 मराठा 15 जून 1902 कसर ए हिन्द 1 जून केसरी 3 जून इंदु प्रकाश 2 जून (आर० एन० पी० बब 7 जून 1902) वायस आफ इंडिया 21 जून 1902 प्रतिवासी 26 मई (आर० एन० पी० बग०, 31 मई 1902) हितवादी 30 मई (वही 7 जून 1902) सजीवनी 12 जून इंडियन मिरर 8 जून (वही 21 जून 1902) पायर ऐंड गाडियन 1 जून (पी० आ० आई० 28 जून 1902)

154 न्यू इंडिया 12 जून 1902 कैसर ए हिंद (आर० एन० पी० बब 14 जून 1902) प्रतिवासी 26 मई (आर एन० पी० बग० 31 मई 1902) हितवादी 30 मई (वही 7 जून 1902)

155 14 जून (आर० एन० पी० बंग० 21 जून 1902) ट्रिब्यून ने भी 27 मई 1902 के अक में बिल का विरोध करने से इनकार कर दिया (पी० ओ० आई०, 28 जून 1902)

156 मराठा 25 मई 8 जून 1902 ए० बा० पी० 21 अप्रैल 1902 केसरी 3 जून इंदु प्रकाश 2 जन (आर० एन० पी० बब 7 जून 1902) साथ ही केसरी ने अपने पाठकों को चेतावनी दी कि मानचेस्टर के लिए भारतीय चीनी उद्योग को पगु बनाने वाली सरकार से भारतीय उद्योगों के प्रोत्साहन की आशा करना समुद्र के खारे पानी से चीनी निकालने की चेष्टा करना है

157 न्यू इंडिया 21 अप्रल 1902 सजीवनी 12 जून (आर० एन० पी० बग० 21 जून 1902)

158 स्ट्रेची इंडिया (1903) पृ० 182

159 बगाली 4 फरवरी 1888 इंडियन मिरर 3 फरवरी गुजरात मित्र 5 फरवरी इंदु प्रकाश 5 फरवरी (पी० ओ० आई० मार्च 1888) बांबे समाचार 11 फरवरी गुजरात गजट 9 फरवरी रास्त गुफ्तार 5 फरवरी तथा अन्य अनेक समाचारपत्र (आर० एन० पी० बब 11 फरवरी 1888) समय 3 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 11 फरवरी 1888) हिंदुस्तान 12 फरवरी सत्तधारा 9 फरवरी (आर० एन० पी० पी० एन० 14 फरवरी 1888) पूना सावजनिक सभा का स्मरणपत्र दिनांक 6 माघ 1894 जे० पी० एस० एस० खड XVI स० 4 (अप्रल 1894) प० 137 इंडियन एसोसिएशन का स्मरणपत्र दिनांक 8 मार्च 1894 रिपोर्ट आफ दि इंडियन एसोसिएशन फार 1892 3 टू 1895-6 प० 43 सुप्रीम लेजिस्लेटिव कौंसिल की ववर्ष प्रोसीडिंग्स का विरोध पी० पी० (हाउस आफ कामस) 1895 परचा 202 इंदु प्रकाश 12 मार्च 1894 इंडियन स्पेक्टेटर 11 मार्च 1894 कसर ए हिन्द 4 मार्च ज्ञान प्रकाश 5 मार्च सुधारक 5 मार्च गुजराती 4 मार्च (आर० एन० पी० बब 10 मार्च 1894) आजाद 9 मार्च (आर० एन० पी एम० 14 मार्च 1894) कर्णाटक प्रकाशिका 12 मार्च (आर० एन० पी० एम० 15 मार्च 1894) स्वदेशमित्रन 16 मार्च मनोरमा 19 मार्च केरल पत्रिका 17 मार्च, खासिम उल अखबार 15 मार्च (वही 31 मार्च 1894) जी० आर० एम० चितनवीस एल०

मुद्रा और विनिमय

> भारत म लोकमत निर्णायक उपायो को अपनाने के लिए सर्वथा परिपक्व है और चादी के सिक्को की ढलाई पर रोक को सामान्यतया स्वीकृति ही मिलेगी।
>
> —भारत सरकार का 1892 म सप्रेषण

> इग्लैड के निर्धनो की बचतो को इस प्रकार प्रभावित करने वाले किसी सुझाव पर एक क्षण के लिए भी विचार नही किया जाएगा। यह अनुमान भी लगाया जा सकता है कि यदि ऐसी योजना यूरोप के इटली जैसे निर्धन देश मे लागू की जाती तो वहा प्रायद्वीप के एक छोर से दूसरे छोर तक जनता मे विद्रोह भडक उठता।
>
> —आर सी दत्त

समीक्षाधीन अवधि मे भारत सरकार की अर्थनीति से सबधित एक अत्यत महत्वपूर्ण मत-भेद वाला विषय था 'मुद्रा परिवर्तन'। 1893 म चादी के सिक्को की टकसाल बद होने तथा सिक्को की खुली ढलाई करने पर यह विषय अस्तित्व मे आया था। आधुनिक भारत के आर्थिक इतिहास में निर्दयतापूर्वक अनावश्यक रूप से मुद्रा और विनिमय को परस्पर सबद्ध कर दिया गया। वस्तुत मुद्रा सबधी परिवर्तन रुपये के मुद्रापरक कार्य सपन्न करने मे किसी प्रकार की असफलता अपर्याप्तता अथवा व्यर्थता से प्रभावित नही था, प्रत्युत इसका कारण पौड-स्टर्लिंग के सदर्भ म उसके विनिमय मूल्य म आया हुआ ह्रास था। भारत सरकार ने केवल इसी एक रोग का उपचार करने की चेष्टा की, उसने देश की आतरिक अर्थव्यवस्था पर मुद्रा परिवर्तनो के सभावित प्रभावों की पूर्ण रूप म उपेक्षा ही कर दी।

मुद्रा अपने आप मे सचमुच एक व्यापक विषय है, इतना अधिक व्यापक कि उसका समग्र विवेचन सभव ही नही। विनिमय भी एक विषम विषय है। सौभाग्य स हमारा सबध यहा इन दोनो विषयो की समग्रता से नहीं है। हमारा सबध तो देश के विदेश व्यापार, उद्योग वित्त और समाज कल्याण पर भारतीय मुद्रा और विनिमय के परिवर्तन स उत्पन्न प्रभाव से है। यह प्रभाव ही भारत सरकार और राष्ट्रीय नेताओं के बीच मत-

नेटिव ओपीनियन 3 जून इंडियन नेशन 4 जून, ट्रिब्यून, 6 जून मदुरा मेल, 11 जून (व० ओ० आई०, जुलाई 1888) गुजरात दर्पण, 21 अप्रैल, बिहार हेराल्ड, 27 अप्रैल गुजराती *28 अप्रैल इंदु प्रकाश 29 अप्रैल, ट्रिब्यून 15 मई (वा० ओ० आई० जून 1889)*

167 मराठा 23 जनवरी 1884, बाम्बे रिप० आई० एन० सा० 1889 पृ० 56

168 मराठा 13 जनवरी 1884 रिप० आई० एन० सा० 1889 पृ० 56, आई० एन० सी० 1889 का प्रस्ताव VIII

मुद्रा और विनिमय

भारत मे लोकमत निर्णायक उपायो को अपनाने के लिए सवथा परिपक्व है और चादी के सिक्को की ढलाई पर रोक को सामा यतया स्वीकृति ही मिलेगी।

—भारत सरकार का 1892 मे सप्रेषण

इग्लड के निधनो की बचतो को इस प्रकार प्रभावित करने वाले किसी सुझाव पर एक क्षण के लिए भी विचार नही किया जाएगा। यह अनुमान भी लगाया जा सकता है कि यदि ऐसी योजना यूरोप के इटली जैसे निधन देश मे लागू की जाती तो वहा प्रायद्वीप के एक छोर से दूसरे छोर तक जनता मे विद्रोह भडक उठता।

—आर सी दत्त

समीक्षाधीन अवधि मे भारत सरकार की अथनीति से सबधित एक अत्यत महत्वपूण मत-भेद वाला विषय था 'मुद्रा परिवतन'। 1893 मे चादी के सिक्को की टकसाल बद होने तथा सिक्को की खुली ढलाई करने पर यह विषय अस्तित्व मे आया था। आधुनिक भारत के आर्थिक इतिहास म निदयतापूवक अनावश्यक रूप से मुद्रा और विनिमय को परस्पर सबद्ध कर दिया गया। वस्तुत मुद्रा सबधी परिवतन रुपये के मुद्रापरक काय सपन्न करने मे किसी प्रकार की असफलता अपयाप्तता अथवा व्यथता से प्रभावित नही था, प्रत्युत इसका कारण पौंड-स्टर्लिंग के सदभ म उसके विनिमय मूल्य मे आया हुआ ह्रास था। भारत सरकार न केवल इसी एक रोग का उपचार करने की चेष्टा की, उसने देश की आतरिक अथव्यवस्था पर मुद्रा परिवतनो के सभावित प्रभावो की पूण रूप से उपेक्षा ही कर दी।

मुद्रा अपने आप मे सचमुच एक व्यापक विषय है, इतना अधिक व्यापक कि उसका समग्र विवेचन सभव ही नही। विनिमय भी एक विषम विषय है। सौभाग्य से हमारा सबध यहा इन दोनो विषयो की समग्रता से नही है। हमारा सबध तो देश के विदेश व्यापार, उद्योग, वित्त और समाज कल्याण पर भारतीय मुद्रा और विनिमय के परिवतन से उत्पन्न प्रभाव से है। यह प्रभाव ही भारत सरकार और राष्ट्रीय नेताओ के बीच मत-

भेद का विषय बन गया और इसने ही भारतीय समाज के नेतावर्ग में प्रखर राष्ट्र भावना तथा विद्रोही प्रवृत्ति को जन्म दिया। फलतः इस अध्याय में हमारी चर्चा का विषय दो परस्पर संबंधित विषयों मुद्रा और विनिमय के इस विशेष प्रभाव तक ही सीमित है।

सरकारी मुद्रा नीति

19वीं शताब्दी के अंतिम चरण की अवधि में भारत सरकार की मुद्रा नीति का उपयुक्त और विस्तृत विवेचन 1893 की इण्डियन करेंसी कमेटी के प्रतिवेदन में, 1898 की इंडियन करेंसी कमेटी के प्रतिवेदन में तथा इस विषय पर लिखित अन्य अनेक श्रेष्ठ ग्रंथों में किया गया है।[1] अतः यहां समीक्षाधीन अवधि में भारतीय मुद्रा और विनिमय के क्षेत्र में घटित घटनाओं और परिवर्तनों का अत्यंत संक्षिप्त विवरण देना ही पर्याप्त होगा।

1835 के 17वें अधिनियम के अनुसार भारतीय मुद्रा को रजत मान पर लाया गया और 1870 के सिक्का ढलाई अधिनियम के अनुसार सरकार को यह आदेश दिया गया कि विनिमय के निजी खाते में चांदी की धातु के विनिमय में ही रुपए बनाए। इसने भारतीय मुद्रा को स्वाभाविकता प्रदान की। दूसरे शब्दों में रुपये का मूल्य बाजार में चांदी के मूल्य के संदर्भ में और उसका विनिमय मूल्य स्वर्ण मान वाले देशों में चांदी से उपलब्ध होने वाले स्वर्ण के संदर्भ में ही निर्धारित किया जाता था। चांदी का मूल्य 1873 तक न्यूनाधिक रूप से स्थिर ही रहा अतः इस अवधि में रुपये का मूल्य भी 2 शिलिंग के आसपास ही स्थिर रहा। परन्तु 1873 में जब सारे विश्व में कुछ कारणों से, जिनका संबंध भारत से नहीं, अतः उनकी यहां चर्चा करने की आवश्यकता नहीं, चांदी से प्राप्त होने वाले सोने के मूल्य में ह्रास आ गया तो स्थिति में भारी परिवर्तन का आना स्वाभाविक ही था। इसके फलस्वरूप जिस रुपये को चांदी के विनिमय के लिए स्वतंत्रता से ढाला लिया जाता था, स्वर्ण पर आश्रित मुद्राओं के संदर्भ में उस चांदी के रुपये के मूल्य में ह्रास आने लगा। दूसरे शब्दों में स्वर्ण मानवाले देशों के साथ भारत का विनिमय (इंग्लैंड उस समय स्वर्ण मान वाला देश था) गिरने लगा। इस प्रकार जहां 1873 में भारतीय रुपये का मूल्य लगभग 2 शिलिंग था, वहां उसका विनिमय मूल्य 1893 94 में 14 54 पेंस रह गया।

भारतीय विनिमय के ऐतिहासिक पतन को अनेक स्थानों से मर्मभेदी प्रहार सहन करने पड़े। सर्वप्रथम भारतीय विदेश व्यापार विशेषतः आयात व्यापार को बुरी तरह से बाधित और पीड़ित करने के लिए इसकी भर्त्सना की गई। विदेश व्यापार में संलग्न व्यापारियों ने अनुभव किया कि रुपये के स्टर्लिंग मूल्य को लग रहे भयंकर झटके इंग्लैंड और भारत के व्यापार संबंधों पर विशेष हानिकारक प्रभाव डाल रहे थे। इसके अतिरिक्त उनकी शिकायत यह थी कि विनिमय की अनिश्चितता ने विदेश व्यापार को जुए और सट्टेबाजी का स्वरूप प्रदान कर दिया था। पतनशील विनिमय के विरुद्ध दूसरा अभियोग भारत सरकार द्वारा नियुक्त अंगरेज सिविल और मिलिट्री अफसरों ने लगाया और बाद में उन्होंने उस अभियोग को सुदृढ़ता से उभारा। उनकी शिकायत यह थी कि उन्हें वेतन तो मिलता है रुपयों में जबकि उन्हें अपने वेतन का एक बहुत बड़ा भाग अपने परिवार के पालन-पोषण के लिए बच्चों की शिक्षा के लिए स्टर्लिंग के रूप में व्यय करना

होता है। इससे उन्हें अवांछित हानि होती है और क्लेशदायक आर्थिक क्षति उठानी पडती है। इसका कारण यह था कि उन्हें उसी संख्या में विनिमय में पौंड लेने के लिए अपेक्षाकृत अधिक संख्या में रुपये अपने घरो को भेजने पडते थे।[3] रुपये के स्टर्लिंग मूल्य में गिरावट के साथ एक प्रधान पाप यह जुड गया कि इससे ब्रिटिश पूजी का भारत में प्रवाह निरुत्साहित और मदगति हो गया। पूजी के व्याज और लाभ के साथ साथ स्वय पूजी के स्वर्ण मूल्य के ह्रास अथवा कम से कम अनिश्चितता ने इस प्रवाह को विलबित कर दिया। यह घोषित किया गया कि ब्रिटिश पूजी के अत प्रवाह पर इस प्रतिबध ने, विशेष रूप से देश में त्वरित आवश्यकता वाले प्रतिबध ने रेलो के विस्तार में बाधा पहुचाई।[4]

गिरते विनिमय से सबधित सर्वाधिक महत्वपूर्ण आपत्ति भारत सरकार की थी, जिसके वित्त सचमुच ही इसके कारण विपन्न हो गए थे। इस सबध में भारत सरकार की स्थिति सर्वथा विचित्र थी। जहा सरकार राजस्व की वसूली चादी के रुपया में करती थी, वहा उसे अपने गृह व्यय का इंग्लैंड में भुगतान सोने में करना पडता था। 1873 98 की अवधि में चादी की स्वर्ण क्रय शक्ति अबाध रूप से घटती गई। भारत सरकार को अपने स्टर्लिंग दायित्व के भुगतान के लिए प्रतिवर्ष अधिक से अधिक संख्या में रुपये चुकाने पडे। अधिक शोचनीय बात यह हुई कि दायित्व और अधिक बढते गए। इस प्रकार विनिमय से भयकर घाटा हुआ। दूसरे शब्दों में भारत सरकार को किसी भी वर्ष विशेष में जितने रुपया का भुगतान करना पडा और विनिमय की दर के सुविधाजनक रूप से 2 शिलिंग प्रति रुपया रहने पर जितने रुपयो का भुगतान करना पडता, उन दोनो के मध्य का अतर भारत सरकार को विनिमय से होने वाला घाटा ही था। उदाहरणार्थ, 1894 5 में गृह प्रभारों के भुगतान के लिए 15 77 करोड स्टर्लिंग पौंड के बदले 28 9 करोड रुपये चुकाने पडे। यदि विनिमय दर 1872-3 वाली ही बनी रहती, तो स्टर्लिंग पौंड की उसी राशि के विनिमय के लिए 16 6 करोड रुपये चुकाने पडते। इस प्रकार 12 3 करोड रुपये के अतरवाली राशि को विनिमय से होने वाला घाटा ही कहा जाएगा। स्थिति की गभीरता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि उस वर्ष घाटे की रकम भारत सरकार द्वारा उगाहे गए कुल भू राजस्व के आधे भाग से भी अधिक थी।[5]

विनिमय में गिरावट से 1875 98 की अवधि में होने वाला घाटा 154 करोड रुपये के लगभग था। 1894 में घाटे की राशि चरम शिखर पर पहुच गई।[6] इस घाटे की पूर्ति के लिए सरकार को प्रतिवर्ष छटनी तक का सहारा लेना पडा। प्रथम साधन तो अव्यावहारिक सिद्ध हुआ। वस्तुत इस अवधि में सरकार का खर्च उल्लेखनीय गति से बढता गया। इस प्रकार से सरकार को व्यापक रूप से अलोकप्रिय साधनो अथवा करो, नमक कर, आय कर भू राजस्व में वृद्धि का सहारा लेने पर विवश होना पडा। परतु भारत जैसे निर्धन कृषिप्रधान देश में करो में वृद्धि का क्षेत्र भी स्पष्ट रूप से सीमित था। किसानो पर किसी प्रकार के अनुचित करभार के साथ अत्यत गभीर स्थिति का राजनीतिक खतरा भी जुडा हुआ था। विशेषत इसका भय यह था कि इसे देश पर अधिकार जमाने वाले विदेशी शासन का दुष्परिणाम समझा जाएगा और माना जाएगा कि वह देश के बाहर बढे हुए खर्च की पूर्ति के लिए ही यह सब कुछ कर रहा है।[7]

इसके अतिरिक्त विनिमय में अचानक उतार-चढ़ाव का परिणाम यह हुआ कि भारत सरकार को बहुत बड़ी सीमा में वित्तीय अनिश्चितता और कठिनाई का सामना करना पड़ा। उसका वित्तीय हिसाब और व्यवस्थाएं अस्त-व्यस्त हो गई और उसका बजट 'विनिमय की दृष्टि से एक जुआ सरीखा' सिद्ध हुआ।[8] इस प्रकार रुपये के स्वर्ण मूल्य में गिरावट से लगभग शताब्दी के एक चरण (चतुर्थांश) तक भारतीय धातुमुद्रा की नींव हराम रही। वे अत्यंत व्याकुल होकर बजट के संतुलन के लिए उपाय और साधन ढूंढ़ने लगे। उनके विचार में सरकार के सामने दो ही मार्ग थे या तो वह विनिमय में गिरावट को रोके अथवा अतिरिक्त करों का अलोकप्रिय मार्ग ग्रहण करे। उनकी निश्चित धारणा थी कि इन दो मार्गों को छोड़कर कोई अन्य मार्ग नहीं था।[9]

निराश होकर भारत सरकार ने विनिमय में गिरावट रोकने के लिए उपयोगी साधनों की खोज प्रारंभ की। कई वर्षों तक यह अंतर्राष्ट्रीय द्वि धातुओं वाले इकरारनामे पर भारी आशा सजोए रही। भारत सरकार का विचार था कि यह सोने और चांदी का साधारण मूल्य निर्धारित करेगा परंतु जब इस इकरारनामे का उपसंहार होते होते सारी आशाएं टूट गई, 1892 के ब्रुसेल्स सम्मेलन की असफलता नवीनतम असफलता थी—तब सरकार अपने मुद्रा मान को चांदी के स्थान पर सोने पर आधारित करने की योजना पर विचार करने लगी। इस योजना को अपनाने के लिए व्यापारीवर्ग ने भी, जो वाणिज्य मंडल और नवनिर्मित भारतीय मुद्रा समिति के रूप में संगठित था, इस समय सरकार पर दबाव डाला।[10] सारे के सारे मुद्रा संबंधी प्रश्न को तथा भारत सरकार की योजना को उस समय लार्ड चांसलर लार्ड हरशल की अध्यक्षता में बनी समिति को सौंप दिया गया। इस समिति की सिफारिशों के फलस्वरूप भारत सरकार ने 26 जून 1893 को 1893 के अधिनियम सं० 8 को लागू किया, इसके अनुसार निजी खाते में चांदी के अप्रतिबाधित सिक्के को ढालने वाली टकसाल को बंद कर दिया। सरकार ने यह अधिसूचना जारी की जिसके अंतर्गत रुपये का मूल्य 1 शिलिंग 4 पेंस निर्धारित किया गया और कहा गया कि इसी दर पर सरकारी करों के भुगतान के लिए जनता से सोने के सिक्के, चांदी के सिक्के, पौंड और आधे पौंड लिए जाएंगे तथा विनिमय में रुपया अथवा नोटों की आपूर्ति की जाएगी। ये सारे उपाय देश में स्वर्ण मान को अपरिहार्य रूप में लागू करने के पथ में प्रथम पग ही थे।

1893 की कार्यवाही का मुख्य उद्देश्य रुपये की प्रचलित मात्रा को घटाकर उसके स्वर्ण मूल्य को 1 शिलिंग 4 पेंस तक बढ़ाना था। इस प्रकार रुपया चांदी से विच्छिन्न हो गया तथा उसमें निहित चांदी के मूल्य से उसका मूल्य बढ़ गया। यह रुपये का प्राकृतिक और यथार्थ स्थिति को छोड़ कर एक नकली और बड़े मूल्यवाली स्थिति को ग्रहण करना था। इसका परिणाम यह निकला कि रुपये की क्रयशक्ति बढ़ गई अथवा दूसरे शब्दों में आतरिक मुद्रा के संकुचन के फलस्वरूप आतरिक कीमतें गिर गई।

संक्रमण काल की अवधि, जिसमें रुपये का मूल्य और अधिक गिरता गया और 1894 में यह 4 शिलिंग 3 पेंस तक पहुंच गया, के पश्चात सरकार की मुद्रानीति को वांछित उद्देश्यों में सफलता मिली और रुपये का मूल्य धीरे धीरे बढ़ने लगा। यहां तक कि जब 1898 9 की अवधि में चांदी का मूल्य घट रहा था, रुपये का मूल्य 1 शिलिंग 4 पेंस के

लगभग था। इस समय भारत सरकार ने सोचा कि 1893 की नीति के तर्क पर आधारित निष्कर्ष निकालने का उपयुक्त समय आ गया है। अत सारे प्रश्न पर विचार के लिए उसने सर हेनरी फाउलर की अध्यक्षता म एक अन्य समिति की नियुक्ति की। समिति ने स्वण मुद्रा के साथ स्वणमान की स्थापना की सिफारिश की तथा आवश्यक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अन्य अनेक उपाय सुझाए। फलत 1899 म (अधिनियम स० XXII द्वारा) रुपये का मूल्य 1 शिलिंग 4 पेंस निश्चित किया गया और इस समय इसी दर पर अशरफी और आधी अशरफी के सिक्के को भी कानूनी सिक्के की मान्यता दे दी गई। अत रुपया नाममात्र का सिक्का बन गया हालांकि यह असीमित सरकारी सिक्का बना रहा। भारतीय मुद्रा के क्षेत्र में इस परवर्ती विकास से हमारा कोई सबंध नहीं अत हम इस विवरण को यहीं समाप्त करते हैं। इस सबंध मे केवल दो रोचक बातो का उल्लेख आवश्यक समझते हैं। प्रथम, भारत मे जो यथार्थ म छाया रहा, वह स्वण मुद्रा के साथ स्वणमान नहीं था प्रत्युत उसे 'स्वण विनिमय मान' ही कहा जाता है।[11] द्वितीय, भारत के वित्तीय इतिहास में विनिमय की स्थिरता के तथा लाभ बजट के नए युग का प्रारंभ होने लगा था परतु यह न तो टकसाल बद होने का परिणाम था और न रुपये की अत्यधिकता की सापेक्ष निवृति का। वस्तुत रुपये का टकन तो थोडे ही समय के बाद उल्लेखनीय परिमाण म होने लगा था।[12] तभी तो जे० एम० कॅम ने टिप्पणी की कि सरकार उद्वेगजनक वेग से सिक्के बनाने मे जुटी है।[13] और भारतीय नेता शीघ्र ही रुपये की बहुलता की शिकायत करने लगे हैं।[14] सत्य यह था कि रुपये का स्वण मूल्य स्थिर बना रहा और यह सब एकातत प्रशासनिक उपायो का परिणाम था और इन उपायो को सरकार ने किसी विवशता अथवा अनिवार्यता के कारण नहीं अपनाया था।[15]

भारतीय नेतृत्व की प्रारंभिक प्रतिक्रिया

रुपये के निरतर गिरते स्वणमूल्य से उत्पन्न समस्याओ के प्रति भारतीय राष्ट्रवादियो की प्रतिक्रिया मे निरतरता न थी और उसकी अभिव्यक्ति और मदगति से हुई। बहुत से राष्ट्रवादी नताओ ने विनिमय मे गिरावट की आलोचना की और इसे भारी दुर्भाग्य बताया, विशेषत इसलिए क्योंकि विनिमय मे होने वाले घाटे के फलस्वरूप नए कर लगाए गए थे।[16] यह बात अवश्य है कि बहुत सारे नेता तो बहुत समय तक इस प्रश्न की समग्र जटिलता को ही न समझ पाए और न ही उसका विस्तृत विश्लेषण कर पाए। हा, इस सामान्य तद्रा के कुछ एक राष्ट्रवादी अपवाद भी थे।[17] परवर्ती आलोचकों के दृष्टिकोण के साथ इन अपवाद वाले नेताओ के दृष्टिकोण को सक्षिप्त रूप से ही प्रस्तुत किया गया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि ये नेता अपने युग से आगे बढ़े हुए ही थे। परतु प्रारंभिक वर्षों मे, 1892 तक की इस विषय की गतिविधि को सक्षेप मे कहना चाहें तो यही कहा जा सकता है कि अधिकांश भारतीय नेताओ की अत्यत अस्पष्ट टिप्पणियां केवल निम्नलिखित सुझाव देने तक ही सीमित रहीं (क) गृह प्रभारो म कटौती,[18] (ख) स्वण दायित्व का रजत दायित्व मे रूपातरण,[19] (ग) अतर्राष्ट्रीय द्विधातु प्रणाली का अपनाना।[20] थोडे से नेताओ ने तो यहा तक भी सुझाव दिया कि सोने की

मुद्रा जारी की जाए। [1] और निजी गटटराजो के लिए स्वतत्र टकन बद कर दना चाहिए।" जस्टिस रानाडे ने व्यावहारिक नीति की वकालत की और घोषणा की कि मुद्रा मे हेरफेर का विरोध इसे विश्वासघात मानकर किया जाए क्योकि इससे चादी के मूल्य का ह्रास और विनिमय दर म वृद्धि होती है। [3]

राष्ट्रवादियो द्वारा मुद्रा परिवर्तन का विरोध

1892 के आस पास जब ब्रिटिश व्यापारियो और अधिकारियो न आदोलन जारी कर मुद्रा और विनिमय के प्रश्न को अपने समय का ज्वलत प्रश्न बना लिया तो उसके सबध मे भारतीय नेताओ की उदासीनता भी जाती रही। भारतीय नेताओ ने इसके पूर महत्व को स्वीकार किया। इसकी पुष्टि 1892 की भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस से पूर्व भारतीय राष्ट्रीयतावाद के मुख्य प्रवक्ता डी० ई० वाचा की उस विषय पर जिसे 'उनका अपना विषय कहा जा सकता है' निम्नाक्त सुदृढ स्वीकृति म होती है 'हमारे जस विशिष्ट स्थितिवाले देश का निकट भविष्य म आर्थिक उद्धार पूर्णरूप स मुद्रा प्रश्न के सही समाधान म ही निहित है।' [4]

इस स्थिति म भारतीय नेताओ न रुपये के नीचे तथा घटते हुए स्वर्ण मूल्य के बचाव और सघर्ष का दृष्टिकोण ही अपनाया। यहा तक कि वे 1893 और 1899 क मुद्रा अधिनियम पारित हो जाने के बाद भी निम्न विनिमय की प्रशसा करते रहे और उसके लिए दबाव डालते रहे। वस्तुत मुद्रा प्रश्न पर 1893 के मुद्रा अधिनियम अपना लिए जाने के पहले और बाद मे वर्षों तक राष्ट्रीय नीति की उल्लेखनीय निरतरता के कारण इस पुस्तक म इस विषय का एक पृथक विषय के रूप मे ही एक ही स्थान पर समग्र विवेचन किया गया है।

राष्ट्रीय दृष्टिकोण का प्रारभिक पक्ष यह विश्वास था कि इस विषय का केंद्र विनिमय की स्थिरता न होकर सोने से विनियमित होने वाले रुपये का अनुपात था। भारतीय नेताओं का विचार था कि विनिमय की ऊची दर की वकालत करने वाले विविध पक्ष अपने स्वार्थों के कारण ही ऐसा करते थे। सरकार विनिमय मे गिरावट के फलस्वरूप स्टर्लिंग के भुगतान में होने वाले घाटे की उपेक्षा करना चाहती थी ताकि सरकारी कर्मचारी इग्लड मे अपनी अधिकाधिक धनराशि भेज सकें और यूरोपीय सामान के आयातकर्ता आयात कर सकें, अन्यथा उन्हें भारतीय उत्पादनो मे प्रतियोगिता के लिए बाध्य किया जा रहा था और इस प्रकार उन्ह अपेक्षाकृत कम मात्रा मे लाभ अर्जन करने के लिए विवश होना पड रहा था। इन्ही कारणो से ये लोग स्वार्थपूर्ण तथा निरर्थक आदोलन चला रहे थे। [5] भारतीय नेताओ ने दृढतापूर्वक कहा कि देश के हितो के साथ विदेशी व्यापारियो, विदेशी पूजी और विदेशी कर्मचारियो के हितो को न तो रखा जाना चाहिए और न ही रखा जा सकता है। भारत के सबध मे यद्यपि इस देश की जनता के और इस देश की सरकार के हित परस्पर सबधित नहीं हैं परतु सक्षेपत वाछनीय यह है कि भारतीय जनता के हितो को ही प्राथमिकता मिलनी चाहिए और इस प्रश्न पर किसी भी प्रकार से विचार करते समय भारतीयो के हितो को ही प्रामाणिक कसौटी मानना चाहिए। [6] राष्ट्रवादी नेताओ

ने इसी सिद्धात को व्यवहार मे लाते हुए रुपये की कृत्रिम मूल्यवृद्धि करने के लिए रजत मान का परित्याग करके टकसालो को बद करने तथा स्वणमान को अपनाने के लिए इडियन करेंसी एसोसिएशन द्वारा सचालित तथा भारत सरकार द्वारा उत्साहपूर्वक समर्थित आदोलन का विरोध किया।[27] भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के 1892 के अधिवेशन म भी इस आदोलन का मृदु भाषा म निबद्ध प्रस्ताव मे विरोध किया गया।[28] मजेदार बात यह है कि भारत मे सरकारी अधिकारियो ने उपहास के रूप मे अथवा जाने अन-जाने रूप मे मुद्रा प्रश्न पर राष्ट्रीय दृष्टिकोण की उपेक्षा की और उसका गलत अर्थ निकाला। उन्होंने 21 जून 1892 को भारत राज्य सचिव को यह प्रतिवेदित किया कि भारतीय जनमत निर्णीत उपायो को स्वीकार करने की स्थिति मे है और चादी के सिक्के बनाने की समाप्ति को जनता सामान्यत स्वीकार करेगी।[29]

सरकारी अधिकारियो का भारतीय जनमत सबधी मिथ्या ज्ञान उस समय उघड गया जब 1893 मे भारतीय टकसालो के बद होते ही राष्ट्रवादी समाचारपत्रो ने न्यूनाधिक रूप स एक स्वर से इस पग का विरोध किया और इसे भारतीय जनता के विशेषत उत्पादक और कृषक वग के हितो के प्रतिकूल बताकर उसकी भर्त्सना की।[30] बाद म उसी वर्ष भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने सरकार की कार्यवाही की निंदा करते हुए प्रस्ताव पास किया।[31] प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए डी० ई० वाचा ने 1893 के करेंसी एक्ट की इन शब्दो म भर्त्सना की 'अधेरे मे गहरी छलाग' और 'एक भारी अक्षम्य भूल'।[32] जब सरकार ने रुपये का मूल्य 1 शिलिंग 4 पेंस निर्धारित करते हुए स्वणमान की व्यवस्था की योजना बनाई तो इसे, '1893 के अपराध की 1898 मे पुनरावृत्ति'[33] बताते हुए वाचा ने सरकार की भर्त्सना सावजनिक रूप से की।[34] दादाभाई नौराजी ने टकसाल बद करने की निंदा इन शब्दो मे की 'यह एक अवैध, असम्माननीय और निरकुश कृत्य है।' उन्होने स्वणमान के परित्याग की माग की।[35] आर० सी० दत्त ने भी कृत्रिम रूप से रुपये के मूल्य बढ़ाने के सरकार के प्रयत्नो की निंदा 'अप्राकृतिक, निराशाजनक और भयकर' कहकर की।[36] उन्होने सरकार को स्वणमान लागू करने के विरुद्ध चेतावनी दी।[37] भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने भी एक बार फिर विनिमय से हुए घाटे की पूर्ति के लिए महगी कीमत पर मुद्रा मे तबदीली करने अथवा आतरिक मुद्रा के समेटने जसे कृत्रिम उपाय अपनाने के प्रति अपनी असहमति प्रकट की।[38] डी० ई० वाचा न पूर्ववत बडी ही उग्रता से यह विचार प्रकट किया कि सामान्य रूप से सवसाधारण द्वारा तथा विशेष रूप से बको और व्यापारीवर्ग द्वारा उस दिन से भोगे हुए और भोगे जा रहे दु खो के कारणरूप सभी आर्थिक बुराइयो की जड 1893 का करेंसी एक्ट है।[39] उलटे नौराजी, दत्त तथा अन्य भारतीय नेताओ ने दबाव डाला कि टकसालें खोल भी जाए और रुपये को चादी के धातु मूल्य तक नीचे जाने दिया जाए।[40] भारतीय नेताओ न फाउलर कमेटी मे भारतीय हितो के सरक्षक एक भी प्रतिनिधि को सम्मिलित न करने का बहुत ही बुरा माना।[41] इस कमेटी की सिफारिशो की तथा उनके फलस्वरूप प्रस्तुत 1899 के करेंसी एक्ट की भारतीय नेताओ ने पुन आलोचना की परतु अब की बार पहले जैसा उत्साह दृष्टिगोचर नही हुआ। इसका कारण कदाचित यह था कि इस समय तक मुद्रा भ्राति एव व्यवस्थित तथ्य

व्यापार विरोधी पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण के अनुरूप यह नकारने की थी कि कच्चे सामान के निर्यात को प्रोत्साहन देना एक अच्छी बात है।[52] इससे इस दृष्टिकोण को बल मिलता है कि भारतीय नेताओ को अवमूल्यित रुपये की रक्षा के लिए न तो मुख्य रूप से व्यापारीवग के प्रति सहानुभूति थी और न ही विदेशी व्यापार मे रुचि थी। उन्होने इस बात से इनकार किया कि किसान को रुपये के अवमूल्यन से अपने उत्पादनो से अधिक रुपयो के मिलने के रूप मे कोई लाभ पहुचा है। उन्होने निर्देश किया कि वस्तुत बहुत सारे कृषि उत्पादनो के मूल्य म कोई वद्धि नही हुई है, बहुत सारे उत्पादनो के मूल्य तो घट ही गए है।[53]

भारतीय वित्त मे विनिमय की भूमिका

मुद्रा परिवतन के विरुद्ध भारतीय नेताओ की आपत्ति का दूसरा आधार उनकी यह धारणा थी कि रुपये की स्वण मूल्य मे गिरावट भारत सरकार की आर्थिक कठिनाइयो का मूल कारण नही। उन्होने विनिमय से भारत के कोष को होने वाले घाटे को देखा ही नही, अपितु उसके प्रति चिंता भी प्रकट की क्योकि आखिरकार इस घाटे का भार बेचारे भारतीय करदाता के कधे पर ही तो पडना था। उन्होने इसकी पूण समाप्ति की इच्छा की।[54] उदाहरणाथ 1886 मे दादाभाई नौरोजी ने विनिमय से होने वाले घाटे को ब्रिटिश भारत के लिए दुर्भाग्यपूर्ण और भारतीय जनता पर दुखद भार बताया। उन्होने लिखा 'दुर्भाग्यग्रस्त निधन भारतीय को गृह प्रभारो के लिए 14 करोड रुपये के मूल्य के उत्पादन को 2 शिलिंग प्रति रुपया की दर से बेचने के बदले 1 शिलिंग 4 पेंस की दर से बेचने से रुपये के विनिमय मे आई गिरावट से हुए घाटे को पूरा करने के लिए 7 करोड रुपये के मूल्य का और उत्पादन बेचना पडता है।[55] भारतीय नेताओ और सरकार के मध्य समझौते का क्षेत्र इस जगह खत्म हो गया क्योकि उनमे इस बुराई के लिए उत्तरदायी तत्वो और उनके उपचार की प्रकृति के बारे म मतभेद था। भारतीय नेता यह मानने को तैयार नही थे कि यह विनिमय का घाटा रुपये के स्वण मूल्य मे गिरावट का परिणाम है। उनका कथन था कि रोग का स्रोत कही अन्यत्र है। भारतीय नेताओ मे मुद्रा प्रश्न के इस पक्ष मे उल्लेखनीय एकता तथा सुसगति थी। रोग की यथाथ प्रकृति की पहचान और प्रयोज्य उपचार ने उनकी समग्र मुद्रानीति मे विशिष्ट स्थिति बनाए रखी। रोग की पहचान को सार रूप मे निम्न विधि से प्रस्तुत किया जा सकता है

इस सारी समस्या की जड विनिमय की दर न होकर भारत के इग्लड के साथ आर्थिक और राजनीतिक सबध हैं। सरकार के विनिमय सबधी घाटे के लिए निम्न विनिमय के बदले गृह प्रभार ही उत्तरदायी हैं। यदि भारत से इग्लड म स्वण के रूप म अनिवाय धन न भेजा जाता तो रुपये के स्वण मूल्य मे गिरावट मे सभवत भारत सरकार के वित्त अथवा भारत के लोग प्रभावित ही न होते। दूसरी ओर जब तक गृह प्रभार बने हुए हैं, केवल मुद्रा परिवतन से कोई बहुत बडा लाभ नही होगा।[56]

इस सबध मे अनेक भारतीय प्रवक्ताओ ने अतराष्ट्रीय व्यापार के क्लासिकी मौद्रिक सिद्धात पर दृढ विश्वास प्रकट किया जिसके अनुसार—मुद्रा पद्धति इस विधि से प्रवर्तित

बन चुकी थी।[4] फिर भी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस परवर्ती अनेक वर्षों म इस प्रश्न को महत्व देती रही। अपने 17वें अधिवेशन म कांग्रेस ने नवनी तौर पर रुपये की 30 प्रति शत कीमत बढ़ाने वाले 1893 के करेंसी कानून के प्रति अपने विरोध की दोबारा पुष्टि की।[43] 18वें अधिवेशन म पुन इस प्रकार का प्रस्ताव पारित किया गया।[44] अनेक जनताता वर्षों तक रुपये की नकली मूल्यवृद्धि और नाकिहि पर उसके दुष्प्रभाव की आलोचना करते रहे।[45]

भारत सरकार की मुद्रानीति की राष्ट्रवादी अस्वीकृति के तीन मुख्य आधार थे 1 ह्रासोन्मुख रुपये का लाभकारी चरित्र 2 मुद्रा के सरकार अथवा जनता की आर्थिक कठिनाइयों के मूल कारण होने के प्रमाण का अभाव, 3 जनता की आर्थिक स्थिति पर रुपये के बढ़ते मूल्य का हानिकारक प्रभाव। इन आधारों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है क्योंकि इनसे समीक्षाधीन अवधि म भारतीय राष्ट्रीय नेताओ के आर्थिक दृष्टिकोण सबधी मौलिक सिद्धातों पर भली प्रकार प्रकाश पड़ता है।

निम्न विनिमय के लाभ

बहुत सारे भारतीय नेताओं का यह विश्वास था कि 1873 से भारत के व्यापार और उद्योग ने जो प्रगति की है उसमे गिरते रुपये वाले रजत मान ने भारतीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं की सतोषजनक रूप मे पूर्ति की है और इस प्रकार भारत द्वारा अपनाया जा सकने वाला यह कदाचित सर्वोत्तम मुद्रा मान था।[46] उनके अनुसार निम्न विनिमय की मुख्य उपयोगिता थी विनिमय मे गिरावट की सीमा तक अत्यधिक महगे बन गए आयातो म भारतीय उत्पादनो, विशेषत सूती वस्त्रो को परोक्ष सरक्षण देने के रूप मे प्रोत्साहन जुटाना। 'मराठा' ने अपने 25 सितबर 1892 के अक म लिखा "विनिमय कटौती सभी प्रकार के अगरजी सामान पर आयात शुल्क के रूप मे काम करती है। यहा विनिमय ने फिर वही काम किया है जो करने से सरकार निरतर इनकार करती रही है।"[47] हिंदू तो 4 सितबर 1889 के अक म यह देख पाने मे सफल हो गया कि निम्न विनिमय के कारण ही भारत इग्लैंड के सूती वस्त्र उत्पादको से चीन और जापान के बाजार हथियाने मे सफल हो सका है।[48] पी० सी० राय ने इस स्थिति म एक और उपयोगिता देखी। उन्होने कहा कि निम्न विनिमय ने अगरेजी पूजी के लिए भारत को एक अनाकर्षक प्रदेश बनाकर भारतीय पूजीपतियो के लिए उद्यम के अवसर उत्पन्न किए हैं।[49]

यह आश्चर्यजनक तथ्य है कि राष्ट्रवादियो ने चादी के रुपये के समर्थन मे स्वीकृत तर्क को उसी समय आगे नही बढ़ाया। वह तर्क यह था कि विनिमय की निम्न दर विश्व के बाजारो म मूल्य को नीचे गिराकर निर्यात को प्रोत्साहन देती है। वास्तव म कुछ भारतीय नेताओ ने (आर० सी० दत्त को छोड कर जिन्होने थोडी बहुत अस्पष्टता के साथ यह स्वीकार किया कि चादी के अवमूल्यन से भारत के विदेश व्यापार को हानि की अपेक्षा लाभ ही पहुचा है[50]) सर्वथा अस्वीकार कर दिया कि रुपये के अवमूल्यन ने भारतीय निर्यात को प्रोत्साहन दिया है।[51] जो भी हो, उनमे सर्वाधिक व्यापक प्रवृत्ति, उनके विदेश

व्यापार विरोधी पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण के अनुरूप यह नकारने की थी कि कच्चे सामान के निर्यात को प्रोत्साहन देना एक अच्छी बात है।[5] इससे इस दृष्टिकोण को बल मिलता है कि भारतीय नेताओ को अवमूल्यित रुपये की रक्षा के लिए न तो मुख्य रूप से व्यापारीवर्ग के प्रति सहानुभूति थी और न ही विदेशी व्यापार मे रुचि थी। उन्होने इस बात से इनकार किया कि किसान को रुपये के अवमूल्यन से अपने उत्पादनो से अधिक रुपयो के मिलने के रूप मे कोई लाभ पहुचा है। उन्होने निर्देश किया कि वस्तुत बहुत सारे कृषि उत्पादनो के मूल्य मे कोई वृद्धि नही हुई है, बहुत सारे उत्पादनो के मूल्य तो घट ही गए हैं।[53]

भारतीय वित्त मे विनिमय की भूमिका

मुद्रा परिवर्तन के विरुद्ध भारतीय नेताओ की आपत्ति का दूसरा आधार उनकी यह धारणा थी कि रुपये की स्वर्ण मूल्य मे गिरावट भारत सरकार की आर्थिक कठिनाइयो का मूल कारण नही। उन्होने विनिमय से भारत के कोष को होने वाले घाटे को देखा ही नही, अपितु उसके प्रति चिंता भी प्रकट की क्योकि आखिरकार इस घाटे का भार बेचारे भारतीय करदाता के कधे पर ही तो पडना था। उन्होने इसकी पूर्ण समाप्ति की इच्छा की।[54] उदाहरणार्थ 1886 मे दादाभाई नौरोजी ने विनिमय से होने वाले घाटे को ब्रिटिश भारत के लिए दुर्भाग्यपूर्ण और भारतीय जनता पर दुखद भार बताया। उन्होने लिखा 'दुर्भाग्यग्रस्त निर्धन भारतीय को गृह प्रभारो के लिए 14 करोड रुपये के मूल्य के उत्पादन को 2 शिलिंग प्रति रुपया की दर से बेचने के बदले 1 शिलिंग 4 पेंस की दर से बेचने से रुपये के विनिमय मे आई गिरावट से हुए घाटे को पूरा करने के लिए 7 करोड रुपये के मूल्य का और उत्पादन बेचना पडता है।'[55] भारतीय नेताओ और सरकार के मध्य सम-झौते का क्षेत्र इस जगह खत्म हो गया क्योकि उनमे इस बुराई के लिए उत्तरदायी तत्वो और उनके उपचार की प्रकृति के बारे मे मतभेद था। भारतीय नेता यह मानने को तैयार नही थे कि यह विनिमय का घाटा रुपये के स्वर्ण मूल्य मे गिरावट का परिणाम है। उनका कथन था कि रोग का स्रोत कही अन्यत्र है। भारतीय नेताओ मे मुद्रा प्रश्न के इस पक्ष मे उल्लेखनीय एकता तथा सुसगति थी। रोग की यथार्थ प्रकृति की पहचान और प्रयोज्य उपचार ने उनकी समग्र मुद्रानीति मे विशिष्ट स्थिति बनाए रखी। रोग की पहचान को सार रूप मे निम्न विधि से प्रस्तुत किया जा सकता है

इस सारी समस्या की जड विनिमय की दर न होकर भारत के इंग्लैड के साथ आर्थिक और राजनीतिक सबध हैं। सरकार के विनिमय सबधी घाटे के लिए निम्न विनिमय के बदले गृह प्रभार ही उत्तरदायी हैं। यदि भारत से इंग्लैड मे स्वर्ण के रूप मे अनिवार्य धन न भेजा जाता तो रुपये के स्वर्ण मूल्य मे गिरावट से सभवत भारत सरकार के वित्त अथवा भारत के लोग प्रभावित ही न होते। दूसरी ओर जब तक गृह प्रभार बने हुए हैं, केवल मुद्रा परिवर्तन से कोई बहुत बडा लाभ नही होगा।[56]

इस सबध मे अनेक भारतीय प्रवक्ताओ ने अतराष्ट्रीय व्यापार के क्लासिकी मौद्रिक सिद्धात पर दृढ विश्वास प्रकट किया जिसके अनुसार—मुद्रा पद्धति इस विधि से प्रवर्तित

होती है कि किसी देश के भुगतानो का सतुलन अपने आप ही तुल्य स्थिति की ओर चला जाता है।[57] उन्होंने आत्मनिपूर्वक बल देकर कहा कि गृह प्रभारो के भुगतान मे हान बार घाटे का छाड कर विनिमय की गिरावट अपने आप मे भारत के विदेश व्यापार को प्रभावित नही करेगी क्योकि कीमतो के उतार-चढाव द्वारा विदेश व्यापार विनिमय की आवश्यकता के अनुरूप अपने आपको स्वत ही व्यवस्थित कर लेगा।[*] कुछ अन्य भारतीय नेताओ ने भी निर्देश किया कि एक लबे समय तक निरतर विदेशो को अनिवार्य भुगतान की आवश्यकता ने सरकार को किसी भी मूल्य पर पौंड खरीदने के लिए विवश कर दिया है। उसी का अप्रतिहाय दुष्प्रभाव चादी के मूल्य मे ह्रास स उत्पन्न विनिमय की दुर्दशा है।[59] भारतीय रुपये के रजत मान म हटने पर इस तर्क को बहुत बल मिला। 1899 म वाचा ने बबई के मिल मालिको को बताया कि विनिमय के विक्षोभ का कारण विदेशो म किए जाने वाले भुगतानो के फलस्वरूप भारत के विदेश व्यापार के सतुलन मे आई अव्यवस्था है। उन्होने स्पष्ट शब्दो मे अपना मत प्रकट किया आपकी मुद्रा सोने की हो अथवा चादी की रुई की अथवा गेहू की, जब तक यह प्रभार बढते और बढते ही रहेंगे तब तक यह तथाकथित विनिमय कठिनाई बनी ही रहेगी वस्तुत समस्या तो गहप्रभारो की ही है।[60] उन्होने तथा उनके साथ जी० एम० अय्यर महोदय ने भी यह अनुभव किया कि 1872 तक और यहा तक कि उसके बाद भी इन गहप्रभारो के दबाव पर ध्यान इस लिए नहा गया क्योकि इस अवधि म रेलो तथा अन्य प्रयोजनो के लिए बहुत बडी बडी रकमो के ऋण लिए गए हैं।[61]

राष्ट्रवादी नेताओं न अपने उपयुक्त विश्लेषण के आधार पर अधिकारियो के इस दृष्टिकोण की तीव्र भर्त्सना की कि विनिमय से होने वाला घाटा उनके नियत्रण से बाहर था और इसका उपाय या तो करो म वद्धि द्वारा इसे सहन करना था, अथवा रुपये का मूल्य बढाकर इसे निष्फल करना था उनके अनुसार इसका एक अन्य उपाय भी था और उसका पता रोग की जाच पडताल से लग जाता है। प्रथम, उनका कथन था सरकार को विनिमय स होने वाले घाटे का मूल कारण यदि विनिमय म गिरावट नही तो स्पष्ट है कि सरकार द्वारा प्रस्तावित मुद्रा पद्धति सबधी परिवतन से स्थिति मे कोई बहुत बडा सुधार होने वाला नही।[6] द्वितीय, क्योकि मूल दोष गह प्रभारो का ही है अत इस रोग का प्रभावी इलाज भारत के स्टर्लिंग दायित्वो मे निरतर वृद्धि करने वाली वतमान नीति मं आमूल चूल परिवतन लाना ही है। अतएव प्रमुख एकमात्र स्वाभाविक और उपयुक्त उपचार है गह प्रभारो की समाप्ति अथवा उनमे कटौती अथवा इग्लड की सपत्ति की निकासी की समाप्ति या कटौती अथवा कम से कम स्टर्लिंग के बडे भाग का दायित्व रुपयो की देनदारी मे परिवतन ताकि उतनी रकम के बराबर भुगतान के लिए काफी कम रुपये देने पडे। यह भारतीय कोष भडारो के लिए एक बहुत बडी मुक्ति होगी।[63] इस उद्देश्य की प्राप्ति के निश्चिततम उपायो म भारतीय नेताओं के विचार मे एक था, देश का प्रशासन देश के सपूतो द्वारा ही पूर्ण योग्यता के साथ चलाया जाना, क्योंकि उस स्थिति म उनके वेतन और पेंशन राशि का भुगतान सोने मे नही करना पडेगा।[64] दूसरा सुझाया हुआ उपाय यह था कि देश के भीतर ही सरकारी भडारो के अपेक्षाकृत अधिक

बडी सख्या मे अश खरीदना।[65] एक अन्य उपाय यह भी था कि इग्लड भारत सरकार के इग्लड मे होने वाले व्यय के उचित अश का भुगतान करे।[66] वस्तुत कुछ नेताओ ने तो रुपये के मूल्य में ह्रास का और विनिमय मे घाटे का स्वागत ही किया क्योकि उन्हे आशा थी कि यह स्थिति धन की निकासी की समस्या की ओर सरकार का और भारतीय जनता का ध्यान खीचेगी और जनता सरकार को सही पग उठाने के लिए विवश कर देगी।[67] बगाली ने 3 सितबर 1892 के अक मे इस दृष्टिकोण का अत्यत स्पष्टता से विश्लेषण किया

> यदि वतमान स्थिति और अधिक समय तक चलती रही तो इसके कारण भारतीयो के लिए अत्यत लाभप्रद परिवतन अवश्य होगे। गृह प्रभारो को घटाना आवश्यक है और आवश्यकता की वस्तुओ को देश मे ही पाने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि भारतीय बाजार मे सरकार ही खरीदार बन जाए तो भारतीय व्यापार को कितना प्रबल प्रोत्साहन मिलेगा। (यह) भारतीय उद्योग को भी प्रोत्साहित करेगा।

इसके अतिरिक्त यह भी अनुभव किया गया कि विनिमय मे गिरावट अगरेजो की बहुत बडी सख्या को अपने देश मे ही रहने और भारत मे हथियाई हुई नौकरियो को भारतीयो के लिए ही छोडने को बाध्य करेगी।[68]

भारतीय नेताओ ने इस बात से इनकार किया कि रुपये की मूल्यवद्धि का प्रयोजन बढे हुए कराधान और आर्थिक सकट से भारत को मुक्ति दिलाना है। उनका तक था कि यदि गृह प्रभारो मे भारी कटौती न भी की जाए और विनिमय से होने वाला घाटा भी चलता रहे तो भी इनकी पूर्ति बिना किसी प्रकार के नए कराधान के वतमान आर्थिक ससाधनो मे तथा उनमे होने वाली सामान्य बढोत्तरी से ही की जा सकती है।[69] उनकी धारणा थी कि निस्सदेह विनिमय एक पीडाजनक तत्व है परतु इसे भारतीय वित्त का कृत्रिम समाधान नही मानना चाहिए। भारतीय वित्तो के असतुलन का दायित्व प्रमुख रूप से विनिमय के घाटे पर न देकर सरकार के सिविल और मिलिट्री के खर्चों के विषम विकास पर ही देना चाहिए, क्योकि इनके ही कारण भारत की स्टर्लिंग देनदारी मे बढोतरी होती है।[70] अत स्थिति का सही उपचार मुद्रा पद्धति मे परिवतन न होकर खर्चो विशेषत मिलिट्री के खर्चो, मे कटौती करना है।[71] डी० ई० वाचा ने तो विशेष रूप से दृढतापूवक इस धारणा का समथन किया और आकडो की सहायता मे सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि 1884 85 से लेकर इस अवधि तक मिलिट्री के खर्चों ने सारे नए कर हजम कर लिए हैं और यदि मिलिट्री के इन व्ययो मे कटौती कर दी जाए तो भारत विनिमय की बैसाखी के बिना ही अपने पाव पर खडा होने योग्य बन जाएगा।[7]

कुछ भारतीय नेताओ का एक अन्य सुझाव था कि यदि वतमान सभी स्थितियो को अपरिवतनीय ही मान लिया जाए तो भी विनिमय की कठिनता का सामना भारत मे उत्पादित न की जाने वाली अथवा भारत की बहुसख्या के काम मे न आने वाली अथवा देश के विकास से सबध न रखने वाली विदेशो से आयात की जाने वाली वस्तुओ पर थोडे से आयात शुल्क को लगा कर किया जा सकता है।[73] यह विवरण कपास शुल्को के सवथा अनुरूप था।[74]

प्रत्येक स्थिति म भारतीय नेताओ ने इस कथन पर तीव्र आपत्ति की कि टकसाला के बद करने से अथवा रुपये की मूल्यवृद्धि म सरकार भारतीय जनता को नए कराधान की आवश्यकता की समाप्ति के रूप म किसी प्रकार का कोई गुण दे सकती है। उनका विचार था कि यह तक आर्थिक तथ्यो के साथ छल के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। मुद्रा म परिवतन म सभवत किसी प्रकार की अभीष्ट सिद्धि नहीं होगी। इसके विपरीत 1893 और 1898 के मुद्रा कानूनो म भारतीय जनता को रुपये के बड़े मूल्य की सीमा तक भार रूप और अनिश्चित प्रकृति वाले परोक्ष करो का और अधिक शिकार बनाया गया है[75] क्योकि अब पुराने कर भी कृत्रिम रूप स बढ़े हुए मूल्य वाले रुपयो के रूप म उगाहे जा रहे हैं।[76] दादाभाई नौरोजी ने 1898 मे लिखा टकसाल बद करने म और उसके साथ रुपये के इस समय 11 पेंस के लगभग यथाथ स्वण मूल्य को 16 पेंस के कृत्रिम स्वण मूल्य म बदलना भारतीय करदाताओ पर कुल मिलाकर गुप्त रूप से करो म 45 प्रतिशत की विशुद्ध वृद्धि का भार लादना है।[77]

भारतीय नेताओ के मत म सरकार के मुद्रा सबधी प्रश्न को हल करने के ढग स उसकी चालाक राजनीतिक छल-कपट की नीति का पता चलता है जिसके तहत भोली भाली तथा भटकी हुई भारतीय जनता पर जो कर भार मे किसी प्रकार की प्रत्यक्ष वृद्धि से विक्षुब्ध हो उठती गुप्त तथा परोक्ष कराधान के द्वारा उद्देश्य की पूर्ति की गई है।[78] इसके विपरीत कई राष्ट्रवादी नेताओ ने तो करो मे प्रत्यक्ष और परोक्ष वृद्धि रूप दोनो बुराइयो मे प्रत्यक्ष वृद्धि को अपेक्षाकृत छोटी बुराई मानते हुए उसका ही समर्थन किया, क्योकि उनके विचार म इससे बेचारे करदाता को देश के करो मे प्रच्छन्न रूप से अपार बढ़ोतरी के स्थान पर केवल विनिमय म प्राकृतिक गिरावट से हुए घाटे की पूर्ति के लिए आवश्यक अतिरिक्त करो का ही भुगतान करना पड़ता।[79]

बाद म जब 1901 के बाद लाभ का बजट आना प्रारभ हो गया तो राष्ट्रवादी नेताओं ने एक बार फिर यह दावा किया कि ये लाभ 1893 और 1898 मे थोपे गए मुद्रा विधान के अतगत परोक्ष कराधान के ही परिणाम हैं।[80] साथ ही उन्होंने अभिस्वीकार किया कि मुद्रा नीति से पीछे हटना व्यावहारिक राजनीति की सीमा के अतगत दिखाई नहीं देता। नेताओ की माग थी कि इन अधिशेषो का उपयोग मुद्रा विधान के आघात से पीडित बेचारे करदाता को करो म छूट के रूप मे ही करना चाहिए।[81] इस सबध में जी० के० गोखले ने एक विशिष्ट प्रश्न पूछा कि यदि

> रुपये के विनिमय मूल्य मे वृद्धि से देश के कराधान मे किसी प्रकार की परोक्षवृद्धि की असभव सभावना को नकारा जा सकता है तब भारत सरकार के माग म कौन सी बाधा है कि वह रुपये का मूल्य और अधिक ऊचा 1 शिलिंग 6 पेंस अथवा 1 शिलिंग 9 पेंस अथवा 2 शिलिंग नहीं कर देती ? उस स्थिति मे तो लाभ इस समय के लाभ से भी बढ़ चढकर होगा। जब लार्ड जाज हैमल्टन यह मानते हैं कि इस कृत्रिम वृद्धि से किसी भारतीय को कोई हानि नहीं हुई तो फिर सरकार इस आश्चर्य-जनक सरल और सीधे उपाय स अपने ससाधनो मे वृद्धि क्यों नहीं करती ?[82]

कुछ अधिक सचेत राष्ट्रवादी अथशास्त्रियो के अनुसार रुपये की मूल्यवृद्धि स देश द्वारा

यूरोपीय अथवा भारतीय सरकारी कर्मचारियो को बढे हुए रुपया मे वेतनो का भुगतान करना पडेगा। इसका अर्थ होगा कि कोटि कोटि सपदा उत्पादको तथा भारत को समृद्ध बनाने वाले श्रमिको के श्रम से अर्जित सपत्ति उनके हाथ से छीन कर भद्रको के हाथ में सौंपना।[90]

डी० ई० वाचा ने एक अन्य परोक्ष परतु हानिप्रद प्रभाव की ओर ध्यान दिलाया भारत स्वर्णमानवाले देशो के साथ नकारात्मक व्यापार-सतुलन रख सकता था क्योंकि चीन तथा अन्य रजत प्रयोक्ता देशो के साथ उसका सकारात्मक व्यापार सतुलन था। नया मुद्रा अधिनियम दूर के पूर्वी देशो म भारत के निर्यात को घटाकर इग्लैंड को भेजी जाने वाली रकम को भेजने का काम अधिक कठिन बना देगा।[91]

रुपये की मूल्यवृद्धि के हानिप्रद प्रभाव

भारतीय नेताओ ने भारत सरकार के मुद्रा अधिनियम की व्यर्थता को सिद्ध करने के अतिरिक्त उसके द्वारा भारतीय जनता विशेषत उत्पादक वर्ग के आर्थिक हितो को पहुचाई जा रही वास्तविक अथवा सभावित निश्चित हानि की ओर ध्यान दिलाया।

सर्वप्रथम, उन्होने दावा किया कि रुपये की मूल्यवृद्धि भारत के देशी उत्पादको के प्रति पक्षपातपूर्ण रही है।[92] उद्यमो का तो मत था कि मुद्रा मे परिवर्तन ने देश के विदेश व्यापार पर घातक प्रभाव डालकर देश पर व्यापारिक अनुपयोगिता थोप दी है।[93] व्यापार के सबध मे उनकी चिता प्राय दिखावटी ही थी। वास्तव मे वे उद्योग से ही घनिष्ठ रूप से सबधित थे। वे रुपये की मूल्य वृद्धि के कुल मिलाकर भारत के विदेश व्यापार पर अथवा यहा तक कि निर्यात व्यापार की समग्रता पर उसके दुष्प्रभाव से वास्तव म ही चिंतित नही थे। उनके क्रोध के भडकने का मुख्य कारण यह था कि भारत से चीन और जापान को किए जा रहे सूत के निर्यात का भविष्य दुर्दशाग्रस्त हो गया था क्योकि भारत की इन दोनो देशो के उत्पादको से प्रतियोगिता थी और इन दोनो देशो ने या तो रजत मान अपनाए रखा था अथवा चादी और सोने के बीच विनिमय का निम्न अनुपात बनाए रखा था। इसके फलस्वरूप इन देशो के उत्पादको ने मूल्य के सदर्भ म भारतीय उत्पादको को पिछाड दिया।[94] सक्षेपत भारतीय नेता व्यापक रूप से सूती वस्त्र उद्योग के भविष्य के प्रति ही अधिक चिंतित थे जिस पर उस समय तक पूर्वी व्यापार सशक्त रूप से छा गया था।[95] उन्होने शीघ्र ही उच्च स्वर से आर्त्त क्रदन करते हुए कहना प्रारभ कर दिया कि रुपये की मूल्यवृद्धि के फलस्वरूप भारतीय सूती वस्त्र उद्योग पगु और अस्तव्यस्त हो गया है।[96] उदाहरणार्थ, जी० के० गोखले ने 1902 मे यह आरोप लगाया कि सरकार के मुद्रा कानून के फलस्वरूप भारत के सूती वस्त्र उद्योग मे बडे पैमाने पर भयकर मदी आई है।[97] और अम्बालाल साकरलाल देसाई ने 1904 की भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस को सूचित किया कि पिछले कुछ वर्षो मे चीन के साथ विनिमय म गिरावट (वृद्धि) के कारण बबई की बीस मिलो का दिवाला पिट गया है।[98] इस सबध मे राष्ट्रीय दृष्टिकोण को भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के 18वें अधिवेशन मे स्वय एक सूती कपडा मिल के मालिक वी० डी० ठाकरसी ने अत्यत सरलता और सक्षेप से प्रस्तुत किया। उन्होंने दृढतापूर्वक कहा

"वर्तमान मे हुए मुद्रा परिवर्तन के कारण देश के कताई उद्योग को पिछले कई वर्षों से भयकर सकट की स्थिति से गुजरना पड रहा है।' उन्होंने अपनी धारणा को प्रकट करते हुए कहा "रुपये की मूल्यवद्धि ने रजत प्रयोक्ता चीन के साथ विनिमय म गभीर वद्धि ला दी है और इससे भारतीय उद्योग को चीन के बाजार मे हानि पहुची है। इसके विपरीत जापानी वस्त्र उद्योग को जिसे किसी भी इस प्रकार की बाधा का शिकार नही होना पडा—परोक्ष रूप से लाभ ही पहुचा है। फलत जापान चीन की एक तिहाई से अधिक माग की पूर्ति करने मे समथ हो गया है।' उन्होंने दुखित स्वर म कहा 'मुझे इसम कुछ भी विस्मय नही होगा, यदि एक दिन जापान सारे बाजार पर उसी प्रकार कब्जा जमा लेगा, जिस प्रकार कभी भारत का था।' हमारे प्रतियोगियो का दूर पूव मे 20 रुपये प्रति गाठ का उपहार ही है, जिसने हमारे कताई बुनाई उद्योग को आर्थिक दृष्टि से विनाश के कगार पर लाकर खडा कर दिया है।'[99]

राष्ट्रवादी दृष्टिकोण सही था अथवा नही इसकी जाच म न पडते हुए हम इतना ही कहना चाहेंगे कि व्यापार को सूत व्यापार की अत्यत सकीर्ण दृष्टि से देखने का उनका विशिष्ट ढग तथा चिंतन रुपये के अवमूल्यन स विदेश व्यापार को पहुची हानि अथवा सरकारी मुद्रानीति से विदेश व्यापार को पहुचे लाभ पर आधृत था। उसकी समीक्षा उसे सवथा अप्रासगिक ही सिद्ध करती है। एक बार यह स्वीकार कर लेने पर, जसा उनके बहुत सारे समीक्षको ने किया है कि रुपये की मूल्यवद्धि से (भले ही कितना आशिक क्या न हो) भारत के चीन और जापान को होने वाले सूत के निर्यात पर बुरा प्रभाव पडा है[100] तो भारतीय पक्ष भारी हो जाता है। वस्तुत भारतीय राष्ट्रवादी नेता स्वय ही अपनी एकपक्षीय मान्यता पर कि सूती उद्योग म गिरावट एकातत मुद्रा परिवर्तन का परिणाम थी पुनर्विचार करने लगे। उदाहरणाथ डी० ई० वाचा ने 1901 म स्वीकार किया कि गिरावट लाने मे अन्यान्य कारण जसे उत्पादन मे बहुत अधिक वद्धि, अकुशल प्रबध व्यवस्था, प्लेग, अकाल का भी थोडा बहुत योगदान है। उन्होंने पुन इस बात को दोहराया कि सरकार की मुद्रा नीति के विरुद्ध शिकायत करने वालो द्वारा अतिरजित रूप म प्रस्तुत हानियो की सीमा तक सभवत न सही परतु वह निश्चित रूप से हानिप्रद अवश्य रही है।[101]

भारतीय नेताओ ने वस्त्र उद्योग के सबध म प्रस्तुत आधारो के सदृश ही निम्न विनिमय की आवश्यकता रखने वाले चाय तथा अन्य बागान उद्योगो की भी उन्ही आधारो पर वकालत की।[10-] वे इन उद्योगो से सबधित सघप के प्रति विशेष उत्साही नही थे। उन्होंने कागडा की तराई म चाय बागान मालिक कैप्टन ए० बैनन जस कुछ अग्रज चाय बागान मालिको का समथन पाने के लिए ही इस विषय को उठाया था।[103]

यह पर्याप्त रोचक तथ्य है कि मुद्रा समस्या के दोनो राष्ट्रवादी विशेषज्ञो, दादाभाई नौरोजी और डी० ई० वाचा, ने भारत सरकार पर आरोप लगाया कि वह मुद्रा प्रश्न पर विचार करते समय विदेश व्यापार की आवश्यकताओ पर ही केवल ध्यान देती है और मुद्रा की कठोरता की अपेक्षा उसकी अधिकता चाहने वाले अधिक महत्वपूर्ण आतरिक व्यापार की आवश्यकताओ की उपेक्षा करती है।[104]

म रुपये की सुधरी स्थिति यह प्रमाणित नही करती कि टकसालो का बद करना एक उचित नीति थी तथा न ही यह सिद्ध होता है कि रुपय की सुधरी विनिमय स्थिति म इस नीति का कोई योगदान है। वस्तुत यह सुधार तो बाजार मे कौंसिल बिल को लौटा लने का और राज्य सचिव के निरतर ऋण लेन का परिणाम था। 1893 के अधिनियम क प्राकृतिक प्रवतन स ये बातें सवथा भिन्न थी।[1-1]

राष्ट्रवादियो के दष्टिकोण का सर्वाधिक सुदृढ समथन दादाभाई नौरोजी स मिला। उनकी सफाई का मुख्य आधार देखन मे ही सरल था। उन्होंने दढतापूवक कहा कि मूल्य गिरें या बढें, वास्तव म राष्ट्रीय दष्टिकोण के लिए इसका कोई विशेष महत्व नही। उन्होंने निर्देश किया कि मूल्यो के उतार-चढाव तो कई तत्वो का सम्मिलित प्रभाव होता है अत मूल्य क सदभ म किसी एक तत्व को महत्व देना अथवा उसे उत्तरदायी ठहराना सवथा भ्रम है। सही आर्थिक विश्लेषण के लिए टकसालो के बद होने के वास्तविक तथा पूण प्रभाव को अन्य पक्षो से अलग करके उसकी अपनी ही समग्रता मे उसकी जाच करनी चाहिए। समस्या का इस ढग स देखते हुए नौरोजी का निश्चित मत था कि इस मान्यता का कि रुपये के सोन और चादीगत मूल्य मे वृद्धि के फलस्वरूप किसान को सरकार को राजस्व की अपेक्षाकृत ऊची रकम चुकानी पडती है वस्तुओ के वास्तविक पर्लक्षित मूल्य के सदभ म एक नितात स्वतत्र रूप था। यदि किन्ही अन्य तत्वो के प्रवतन से वस्तुओ के वास्तविक मूल्य म गिरावट नही आती तो इसका अथ केवल यह है कि मुद्रा परिवतन यदि न होता और अन्य तत्वो का प्रवतन जारी रहता तो वस्तुओं के मूल्य और अधिक बढ जाते तथा किसान को उसी मात्रा म लाभ होता। इस प्रकार सरकार ने टकसालो का बद करन के कपटपूण उपाय द्वारा किसान को अन्य लाभप्रद तत्वो के लाभो से वचित कर दिया है। उन्होने अपनी इस चितन पद्धति को एक अन्य रूप मे भी अभिव्यक्ति दी। उनके अनुसार पुरान रुपये और नए रुपय के रजतमूल्य मे अतर आ गया है, पुराने रुपय का मूल्य 184 ग्रेन चादी था और नए का मूल्य 269 ग्रेन हो गया है, इसस विशिष्ट बाजार म और विशिष्ट समय म वास्तविक मूल्य स्तर से सवथा भिन्न चादी के इन दो भिन्न परिमाणो से नियत्रित उपभोग वस्तुओ के मूल्य के मध्य एक अतर तो सदा बना रहेगा और रुपये की मूल्य वृद्धि से किसी भी घडी मे मूल्य मे आन वाला अतर किसान को होने वाला घाटा ही कहलाएगा।[1-2]

राजनीतिक आशय

राष्ट्रवादियो के सद्धातिक दष्टिकोण का कि भारत सरकार की मौद्रिक कठिनाइयो का मूल कारण गहृ प्रभार थे एक उपपरिणाम यह विश्वास था कि यदि भारत राजनीतिक दष्टि से स्वतत्र होता तो मुद्रा समस्या उत्पन्न ही न होती।[1-3] अब, जब समस्या उत्पन्न हो गई है, इससे निपटने के लिए सरकार को भारतीय जनता और उसके प्रतिनिधियो से परामश करना चाहिए।[1-4]

जब राष्ट्रीय विरोध के बावजूद 1893 मे निजी तौर पर सिक्के ढालने के लिए टकसालें बद कर दी गईं और बाद म भारत मे स्वणमान को लागू करने की कायवाही की

रुपय की रियायती विनिमय दर पर 1000 पौड प्रति वष की अधिकतम सीमा तक अपना आधा वतन यूरोप को भेज सकता था। इग्लैंड को धन भेजा गया है अथवा नही, यह देखे बिना ही यह भत्ता द दिया जाता था।[18] इसस इन सरकारी अधिकारियो के वतन म वास्तविक वद्धि हो गई। इस बढे हुए धन की राशि 1893 98 की अवधि मे लगभग 5 करोड रुपय थी। 1895 6 म जब यह अधिकतम सीमा तक पहुच गई, तब यह रकम लगभग 1 33 करोड रुपय थी।[19]

जब ब्रिटिश अधिकारियो न प्रारभ म विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ते की माग रखी तो भारतीय नेताओ ने उसका तीव्र विरोध किया। बाद म जब सरकार ने इस माग को स्वीकार कर लिया तो सरकार की इस कायवाही के विरुद्ध विरोध का तूफान उठ खडा हुआ जो बाद म वर्षों तक चलता रहा। इस भत्ते की निंदा करते समय राष्ट्रवादियो ने बडी ही कठोर और चुभती भाषा का प्रयोग किया। उन्होने यूरोपीय अधिकारियो के विरुद्ध घृणा की भावना को भडकाया। इस कायवाही से उत्पन्न देशवासियो की घृणा के स्वरूप, परिमाण, यहा तक कि उसके स्तर को, अपनी नर्मी के लिए विख्यात नेताओ द्वारा प्रदर्शित निर्भीकता को 'कैसर हिंद' के 27 अगस्त 1893 के अक की टिप्पणी के निम्नलिखित अवतरण म बडे ही सुदर रूप से प्रदर्शित किया गया है

> जब कभी निष्पक्ष इतिहास 19वी शताब्दी के अत की अवधि के ब्रिटिश प्रशासन के व्यवहार पर अनश्वर निर्णय को अभिलिखित करेगा तो उसके किसी भी भाग मे विदेशी शासको की, प्राचीन अथवा आधुनिक काल के इतिहास म अनुपलब्ध, फिजूलखर्ची के रूप म सहानुभूतिहीनता के लिए और शासनतत्र की व्यवस्था हेतु इस महान देश के असहाय और बेजबान लोगो पर कमरतोड तथा निर्दयतापूर्ण बोझा डालने म बरती जाने वाली बेहिसाब क्रूरता के लिए अति कठोर निंदा के अतिरिक्त और क्या होगा? हेस्टिंग्स से लसडौन के दिनो तक भारत सरकार की वित्तीय भूलो और निर्दय लूट की एक दुखद और विशाल सूची रही है परतु उनकी बुद्धि म कदाचित यह सूची न अधिक भारी होगी और न ही अधिक विस्तृत। उन्होंने पिछले अन्यायो और पिछली गलतियो के ढेर को वतमान के अपेक्षाकृत अधिक बडे अन्यायो और गलतियो से पीछे धकेल दिया है। यह असम्मानप्रद तथा अशोभन काय लाड लसडौन के लिए ही सुरक्षित था और कौन कहेगा कि उसने निलज्जतापूर्ण धृष्टता और विवेकहीन उत्तरदायित्व मे अपना काय नही किया। ऐसा अनुमान है कि इस साहस और उत्तरदायित्व के लिए तो उन्हे ब्रिटिश अभिजातवग म उच्चतम पद पर प्रतिष्ठित करने के रूप म पुरस्कृत ही किया जाएगा। लसडौन की उच्च पदवी न परमादरणीया महारानी की भारतीय प्रजा के लाखो लोगो का बहुत ही अहित किया है। इसम सदेह नही कि महारानी महोदया उसकी लार्डशिप को और अधिक उन्नत करेंगी और इसम सदेह नही कि उसे ड्यूक के पद स अलकृत करेंगी। सशोधित मुद्रा अधिनियम तथा विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ते के लेखक होने के नाते उसके सम्मान असम्मान की कौन शिकायत करेगा। इस अधिनियम तथा भत्ते के द्वारा विदेशी करभक्षी दैत्यो के लिए भूखो मरते भारतीय करदाताओ के मूल्य पर गुलछर्रे उडाना

> संभव हो गया है। इस प्रकार लार्ड लैंसडोन ने अपनी शासन सत्ता को स्मरणीय बना दिया है। उसने लार्ड लिटन द्वारा प्रारंभ किए गए और लार्ड डफरिन द्वारा जारी रखे गए अवर्णनीय लालच के क्षेत्रीय तथा वित्तीय चक्र के प्रचलन को पूरा कर दिया है। क्या यह कहने की आवश्यकता है कि देश के प्रशासन द्वारा गन्दी अन्याय लूट और छीना झपटी के दिन दहाड़े किए जाने वाले कार्यों पर हम शर्म से जल रहे हैं। हम यह देखने के इच्छुक हैं कि इन गैरईसाई काम करने वालों के साथ न्याय हो। इस विषय पर और अधिक कहने की हममें हिम्मत नहीं है। ऐसा बिल्कुल नंगा लूटपाट का काम सर्वथा अदृष्टपूर्व ही है। कोई जनता की थोड़ी सी भलाई करने वाली सरकार ऐसे काम से शर्मिंदा हो उठती। परंतु यह मानना शायद गलत नहीं कि ब्रिटिश सरकार ईसाई तथा ईमानदार सरकार है अतः उसे एक के आनंद के लिए दूसरे को लूटने-खसूटने का पूरा पूरा अधिकार प्राप्त है।[130]

अन्य समाचारपत्रों ने भी बड़ी तीव्र प्रतिक्रिया अभिव्यक्त की तथा विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ते की स्वीकृति को इन शब्दों में वर्णित किया 'लूट', 'क्रूर कृत्य', 'डाका'।[131] कलकत्ता की इंडियन एसोसिएशन और पूना की सार्वजनिक सभा ने इस कार्यवाही के विरुद्ध भारत सरकार के पास विरोधपत्र भेजे।[132] 1893 में हुए अपने अधिवेशन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस भत्ते के विरुद्ध तीव्र विरोध अभिलिखित किया।[133] फलतः अगले 10 वर्षों तक कांग्रेस के कार्यक्रमों में, जारी भत्ते को समाप्त करने की मांग के प्रस्ताव पास होते रहे।[134] सरकार की इस कार्यवाही की निंदा में सभी सार्वजनिक नेता एकजुट हो गए। उदाहरणार्थ सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने इस कार्यवाही को एक पाप कृत्य और पाप से भी निकृष्ट कृत्य तथा 'परले दरजे का लज्जाजनक कृत्य' बतलाया। उन्होंने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा कि ऐसी कार्यवाही करने वाली सरकार को भी क्या सभ्य, ईसाई तथा सही आचरण करने वाली सरकार कहा जा सकता है?[135] दादाभाई नौरोजी ने इस कार्यवाही को निर्धन भारत से हृदयहीन, मनमानी और क्रूर छीना झपटी कहा और इस [illegible] के [illegible] से भी बुरा बताया क्योंकि उसने शर्त के अनुसार मांस का पौंड मांगा था परंतु यह सरकार तो भारतीयों का खून भी साथ ही चूस रही है।[136]

भारतीय नेताओं ने विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ते के अन्याय का बड़ी [illegible] और [illegible] के साथ इसलिए अनुभव किया कि भारत सरकार के बजट पर यह अतिरिक्त भार उस समय लादा गया था जब पहले ही वह जटिल कठिनाइयों में फंसा था। नई [illegible] लगाए जा रहे थे और [illegible] थी और [illegible] उत्पन्न हो गया था [illegible] ।[137] वस्तुतः भारतीय नेताओं को ऐसा प्रतीत हुआ कि [illegible] विनिमय [illegible] सरकारी अधिकारियों के [illegible] । भारतीय नेताओं के [illegible] कार्यवाही [illegible] [illegible] पर भी [illegible] अतिरिक्त [illegible] [illegible] अधिकारियों [illegible] [illegible] ।[138] 1893 के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की

संबोधित करते हुए सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने इस समस्या का चित्रमय विवरण प्रस्तुत किया। उन्होंने टिप्पणी करते हुए कहा 'उच्च वेतनभागी सरकारी अधिकारियों द्वारा सामान्यत प्रयुक्त मास-मदिरा जुटाने के लिए अब अभावग्रस्त भारतीय को अपने गेहू, चावल और नमक की मात्रा को परिमित करना पड़ेगा।[1 9] एक अन्य अत्यन्त क्रुद्ध समीक्षक नायवस्ट प्राविस और अवध के जमी उल उलुम ने लिखा 'भारत तो इन अधिकारियों के लिए वेतन भी कठिनता से जुटा पाता है जबकि ये डाकू इससे भी अधिक कुछ और की माग करते हैं।[139 A]

राष्ट्रीय नेताओं का यह निश्चित मत था कि विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ता न केवल भार रूप था प्रत्युत अनुचित और अनावश्यक भी था। उन्होंने यह तर्क दिया सर्वप्रथम तो रुपये के स्वणमूल्य म गिरावट स भारत स्थित यूरोपीय अधिकारियों को वास्तव म कोई उल्लेखनीय क्षति नही पहुची क्योंकि इंग्लैण्ड म भेजी जाने वाली रकम का घाटा वहा उप भोग वस्तुओं के स्वण मूल्य म गिरावट आ जाने से पूरा हो गया है अथवा दूसरे शब्दों म दादाभाई नौरोजी न इस 1886 म इस प्रकार स्पष्ट किया यद्यपि यूरोपीय अधिकारियों को इग्लैड भेजे गए रुपयो स पहले की अपेक्षा थोडा सोना मिलता है परन्तु उस सोने की क्रयशक्ति पूर्वापेक्षा अधिक है।[1 0] द्वितीय, भारतीय नेताओं के अनुसार भारत स्थित सरकारी अधिकारियों के वतन बहुत ही ऊचे थे, विशेषत इग्लैड और भारत के मध्य सचार साधनो और सुविधाओं म आए परिवतनो के मद्देनजर म तो विनिमय मे आई गिरा वट के बावजूद वे बहुत ही ऊचे थ।[111] ततीय, कमचारियों को यह रियायत पाने का कोई अधिकार ही नही था क्योंकि व तो केवल रुपयों मे ही वेतन पाने के लिए अनुबंधित थे। अत विनिमय के अनुपात को बीच मे घसीटना सवथा अनुपयुक्त है। जब रुपये का मूल्य अतीत मे ऊचा था और भविष्य म जिसके 2 शिलिंग तक बढ जाने की सभावना थी, इन कमचारियों ने अनुबधित वेतन लेने से न तो भूतकाल म इनकार किया और न भविष्य म ही वे इनकार करेंगे।[112] इसके साथ ही गोखले महोदय ने टिप्पणी की सरकार रेल कपनियों को अब भी 5 प्रतिशत की दर से सूद का भुगतान कर रही है जबकि अब वह 2½ प्रतिशत की दर से ऋण ले सकती है। उनका स्पष्ट कथन था यदि वतमान अनुबधों को भारत के बजट के पक्ष मे नही छेडा जा सकता तो उन्हे उसके विपक्ष मे क्यों छेडा जाए।[113]

भारतीय नेताओं का यह भी निश्चित मत था कि इस भत्ते के निणय मे वस्तुत सरकार न्यायप्रिय तथा निष्पक्ष ही नही रह सकी है।[114] प्रथम, यह भत्ता वेतन के आधे भाग (चाहे विदेश भेजा गया हो अथवा नही) पर न देकर वास्तविक रूप से भेजी गई रकम पर ही देना चाहिए था। द्वितीय यह भत्ता केवल उन्ही अधिकारियों को देना चाहिए था जिनके सेवा मे आ जाने के उपरात रुपये के मूल्य म गिरावट आई है न कि उन लोगों को जिन्होंने जानबूझकर रुपयों म वेतन लेना स्वीकार किया है।[115] ततीय भारत सरकार ने अपने सबधियों को उनकी शिक्षा के लिए विदेशों म रुपया भेजने वाले भारतीय अधिकारियों को इस भत्ते के देने से इनकार करके रगभेद की नीति अपनाई है।[116]

भारतीय राष्ट्रीय नेताओं ने इस सारे काड से राजनीतिक परिणामों पर पहुचने मे

चूक नही की विशेषत भारत मे ब्रिटिश शासन के प्रयोजन को उन्होने शीघ्र ही जान लिया। उन्होने भारत सरकार पर आरोप लगाया कि उसने भारतीय जनता के हितो के साथ खिलवाड किया है और उनकी रक्षा के स्वीकृत दायित्व को नही निभाया है।[147] उन्होंने शिकायत की कि जहा सरकार ने भारत की अत्यत अनिवार्य आवश्यकताओ, सफाई, समाज सुधार और प्रशासनिक सुधार, को आर्थिक तगी के आधार पर पूरा नही किया है, वहा उसने विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ते की स्वीकृति के रूप म भारतीय वित्तो पर अनुचित और अनावश्यक भार डालने म जरा भी सकोच नही किया।[148] 22 अगस्त 1893 म अमृत बाजार पत्रिका ने क्रुद्ध होकर लिखा दिनो मे लोगो की जान बचाने के लिए तो पैसा नही था, परतु भारतीय किसान के भाग्य पर पहले से माटे हो रहे, भयकर रूप से ऊचे वेतनभोगी सरकारी कर्मचारियो को और अधिक मोटा करने के लिए पसा है ?' जी० के० गोखले ने भी इसी प्रकार की शिकायत की

जनता की शिक्षा पर नगण्य और शोचनीय सरकारी खर्चे मे पिछले पाच साल से इस आधार पर वद्धि नही हुई कि सरकार के पास खच करने के लिए और अधिक पैसा है ही नहा और इधर सरकार ने कलम की एक चोट से ही शिक्षा पर होने वाले सारे खच से भी अधिक बडी धनराशि यूरोपीय अधिकारियो को भेट कर दी है।[149]

भारतीय नेताआ ने इस बात की भी शिकायत की कि जहा उच्च वेतनभोगी ब्रिटिश अधिकारियो के वेतन म परोक्ष वद्धि हो गई है, वहा सरकारी कार्यालयो मे क्लक अथवा प्रबध अधिकारी के रूप मे नियुक्त भारतीयो के वेतन म किसी प्रकार की बढोतरी नही हुई।[150]

इस सबने इस तथ्य की पुष्टि कर दी कि भारत पर एकातत इग्लड के हितो की दृष्टि से शासन किया जा रहा था। वस्तुत इस विषय पर चितन न पर्याप्त सीमा तक कटुता उत्पन्न की। सामान्यतया आशावादी दादाभाई नौरोजी ने निराश होकर लिखा कि 'परतु, देखा यह गया है कि जब यूरोपीय हितो की बात सामने आती है तो कानून और दिल, दोनो हवा हो जाते हैं और वस्तुत मात्र निरकुशता और शक्ति ही कानून और तक रह जाते है।[151] सुरद्रनाथ बैनर्जी न कटु व्यग्य करते हुए टिप्पणी की

यह विनिमय प्रस्ताव एक मूर्तिमान सिद्धात है जिसका भारत सरकार निरतर अनुसरण करती रही है। वह सिद्धात क्या है ? हम इस धरती के सपूत है हम इस धरती के दास हैं—लकडी काटने वाले, पानी खीचने वाले सेवक है। हमारा अस्तित्व तो इस नौकरशाही रूपी भगवान की सेवा के लिए ही है।[15]

'गुजरात दपण' ने 31 अगस्त 1893 के अक मे अपने क्रोध और कुठा को निम्नलिखित शब्दा म वाणी दी

हमारे देश की जनता के तथाकथित सरक्षको की स्मति स भी भगवान बचाए जिन्होने इस देश के तीस करोड लोगो को, जिनकी वे पैत्रक स्नेह के साथ रक्षा का दावा करते हैं वास्तव मे नरक मे धकेल दिया है। जब हमे यह ध्यान आता है कि हमारा देश विनाश के गत म धकेला जा रहा है तो हमारे लिए सयम सभव नही हो पाता। इस देश मे बतखो की सेना म राजहस इसलिए भेजे गए हैं कि इस देश के वासियो की रक्षा करें, उन्हे सुसभ्य बनाए, उन्ह सुधारें, उन पर शासन करें, उन पर पाव की ठोकर

मारें तथा आवश्यकता पड़ने पर उन्हें मौत के घाट उतारें। भगवान, हमें हमारे इन दोस्तों से बचाओ।[153]

बहुत सारे अन्य भारतीय नेताओं ने विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ते द्वारा प्रदर्शित ब्रिटिश शासन की प्रकृति तथा भारत में ब्रिटिश कर्मचारियों की भूमिका पर इसी प्रकार की तीखी, आलोचनापरक टिप्पणियां कीं।[154]

निष्कर्ष

पूर्वगामी समीक्षा से यह निष्कर्ष पुष्ट होता है कि भारतीय नेताओं ने रुपये के गिरते विनिमय के प्रति अपना दृष्टिकोण या निर्धारित करने में एक ओर स्पष्टतः विकासशील सूती वस्त्र उद्योग के और कृषकों के हितों को प्राथमिकता दी और दूसरी ओर कुछ अन्य वर्गों और समुदायों के हितों की उपेक्षा ही नहीं, उनका विरोध तक किया।

एक ऐसा समुदाय वेतनभोगी भारतीयों का था जिनमें अधिकांश सरकार द्वारा नियुक्त थे। इनमें अपेक्षाकृत उच्च वेतनभोगी बड़े पैमाने पर आयातित सामान के उपभोक्ता थे, वे एक निश्चित आय ही प्राप्त करते थे टकसालों के बंद होने के फलस्वरूप भारत में मूल्यों में आई गिरावट से यह वर्ग लाभ में था। राष्ट्रीय नेताओं द्वारा इनके हितों का विरोध प्रच्छन्न और मौन ही नहीं था प्रत्युत कभी कभी प्रत्यक्ष और स्पष्ट रूप भी ग्रहण करता था।[155] इसी प्रकार रुपये की मूल्यवृद्धि से ऋणकर्ता साहूकार भी स्पष्टतः लाभ में था। राष्ट्रीय नेताओं ने यहां भी सूदखोर के प्रति किसी प्रकार का पक्षपात न दिखाया प्रत्युत भारत सरकार की मुद्रानीति के विरुद्ध सूदखोर के मुद्रापरिवर्तन से लाभान्वित होने की संभावना का एक प्रमुख तर्क के रूप में ही प्रयोग किया। ऋणकर्ताओं तथा वेतनभोगी कर्मचारियों पर पड़े करेंसी लैजिस्लेशन प्रभाव के प्रति राष्ट्रवादियों का दृष्टिकोण डी०ई० वाचा के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नवम अधिवेशन में किए गए भाषण के निम्नलिखित अवतरण में अपने संक्षिप्त रूप में इस प्रकार है कठोर श्रम करने वाले श्रमिकों तथा करों के भार से लदे किसानों को इसलिए दरिद्र बनाया जा रहा है ताकि उनके मूल्य पर सरकारी कर्मचारी और सूदखोर मोटे हो सकें।[156] इसके अतिरिक्त उन्होंने दैनिक वेतनभोगी मजदूरों, जिनकी मजदूरी का मूल्यवृद्धि की दशा में पिछड़ जाना और दूसरी ओर मूल्यों में गिरावट आने पर लाभ में आ जाना स्वाभाविक था—के हितों की भी उसी कारण से कोई चिंता नहीं की। यह भी कम आश्चर्यप्रद नहीं कि स्वयं भारतीय नेताओं ने एक भिन्न संदर्भ में ही सही निर्धन श्रमिकों, कृषकों के और मूल्य के बीच सह संबंध को उच्च स्तर में स्वीकार किया और उस पर दृढ़ विश्वास प्रकट किया।[157] हां, मुद्रा समस्याओं पर विचार करते समय यह विषय उनकी संगणनाओं से छूट गया।[158]

मुद्रानीति के निर्धारण में राष्ट्रीय नेताओं द्वारा सर्वाधिक उपेक्षित और यहां तक कि विरोध का शिकार व्यापारी वर्ग विशेषतः सामग्री के आयात व्यापार में संलग्न व्यापारी वर्ग था। निम्नलिखित तथ्यों से इस कथन की सुस्पष्ट और समुचित पुष्टि हो जाती है

(क) प्रथम, जैसाकि पहले निर्देश किया जा चुका है, भारतीय नेताओं ने देश के लिए सही मुद्रानीति के प्रश्न पर निर्णय लेते हुए विदेश व्यापार की समृद्धि को एक

विचारणीय विषय नहीं बनाया ।[159]

(ख) द्वितीय, भारतीय नेताओं द्वारा अभिलषित मुद्रानीति विदेश व्यापार में संलग्न व्यापारियों के बहुत बड़े समुदाय तथा उनके प्रवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत मांग के विपरीत थी। उदाहरणार्थ, 1892 में बंगाल के राष्ट्रीय वाणिज्य सदन की पांचवी वार्षिक बैठक में अध्यक्षीय भाषण करते हुए रायबहादुर धनपतसिंह ने निम्नलिखित चेतावनी दी 'वर्तमान विनिमय दर व्यापार पर घातक प्रहार है और यदि रजत मूल्य में वृद्धि के तत्काल उपाय न किए गए तो वह दिन दूर नहीं जब व्यापार का बड़ा भाग ठप हो जाएगा और कलकत्ता की अनेक प्रतिष्ठित कंपनियां बंद होने पर विवश हो जाएंगी ।[160] जब 1892 में इंडियन करेंसी एसोसिएशन ने टकसाल बंद करने और स्वर्णमान अपनाने का प्रबल आंदोलन प्रारंभ किया तो भारतीय व्यापारियों का एक बहुत बड़ा समुदाय सक्रिय समर्थक के रूप में इस आंदोलन में सम्मिलित हो गया ।[161] जून 1892 में कराची के 77 प्रमुख व्यापारियों ने और अक्तूबर 1892 में बंबई के 674 व्यापारियों ने सरकार को मानपत्र दिया, जिसमें रुपये के मूल्य को स्थिर करने का अनुरोध किया गया था और इसके लिए तर्क यह दिया गया था कि रुपये के मूल्य में उतार-चढ़ाव से उनके सुरक्षित व्यापार के न्यायोचित लेन देना में विशुद्ध रूप से अनिश्चितता और जुएबाजी की सी स्थिति उत्पन्न हो जाती है ।[16] बंबई के अग्रणी व्यापारी तथा महाजन सर शापुरजी भरूचा ने टकसालों के बंद होने के उपाय की तथा रुपये के स्वर्णमान अपनाने की प्रबल वकालत की। उनके मंतव्य का आधार था कि रुपये के गिरते मूल्य ने भारत के विदेश व्यापार को बुरी तरह क्षतिग्रस्त किया है तथा विदेशी पूंजी के भारत में प्रवाह को बाधा पहुंचाई है ।[163] इसी प्रकार 1898 में बंगाल के प्रतिष्ठित व्यापारी जयगोविन्द ला ने सरकार पर विनिमय की व्यावहारिक स्थिरता को प्राथमिकता देने के लिए दबाव डाला ।[164]

(ग) अंत में, कुछ भारतीय नेता तो विदेश व्यापार में संलग्न व्यापारियों (जिनमें से अधिकांश सभी प्रकार से विदेशी ही थे) के प्रति सार्वजनिक रूप से शत्रुता प्रकट करने लगे और उन्हें परामर्श देने लगे कि उन्हें अवसर के अनुकूल बदलना चाहिए, बड़बड़ाने की आवश्यकता नहीं ।[165] दादाभाई नौरोजी के निम्नलिखित आवेगपूर्ण शब्दों में इस विरोध की अभिव्यक्ति स्पष्ट है

> सबसे ऊपर स्वर्ण मुद्रा के लिए संघर्ष करता हुआ व्यापारी बैठा हुआ है जो यह चाहता है कि किसानों की बलि चढ़ाकर उसे उसके व्यापारिक खतरों से बचाया जाए। व्यापार के लाभ तो इस व्यापारी की अपनी ही जेबों में जाएं और व्यापारिक उथल-पुथल के खतरे बेचारा किसान उठाए। गरीबी में जकड़ा किसान इन खाते पीते व्यापारियों को बचाए। भगवान, भारत की रक्षा करो ।[166]

विदेश व्यापार में संलग्न व्यापारियों और उनकी मांगों के प्रति तथा सूती कपड़ा उत्पादकों के प्रति राष्ट्रीय दृष्टिकोण में एक रोचक अंतर स्पष्ट रूप में मिलता है। भारतीय राष्ट्रीय नेताओं का मुद्रानीति के प्रति न केवल दृष्टिकोण ही प्रत्युत उस दृष्टिकोण के निर्धारक कारण भी बंबई के सूती वस्त्र मिलमालिकों द्वारा प्रस्तुत कारणों से मिलते जुलते है। यह तथ्य बंबई मिल ओनर्स एसोसिएशन के 1893 1898, 1899 1900 और 1901 के

का घटाना, इस रूप में कि सर्वप्रथम सरकार भारत में ही भंडारों की खरीद करे और अधिक से अधिक भारतीयों की ही सेवाओं में नियुक्ति करे। कुल मिलाकर निम्न विनिमय ने गृह प्रभार की समस्या को उजागर किया। यह दोनों रूपों में महंगा उपचार था और सामान्य स्थिति में इसे अपनाने का परामर्श ही न दिया जाता, परंतु भारतीय नेताओं ने कदाचित अनुभव किया कि भारत जैसे एक असामान्य स्थितिवाले देश के लिए यही एकमात्र उपलब्ध उपचार था।

संदर्भ

1 उदाहरणार्थ हमने भारतीय मुद्रा इतिहास के संक्षिप्त विवरण के लिए निम्नलिखित ग्रंथों का आश्रय लिया है *जे० एम० कोयाजी दि इंडियन करेंसी सिस्टम 1835 1926 (मद्रास 1930)*, एच० एल० चाबलानी स्टडीज इन इन्डियन करेंसी ऐंड एक्सचेंज (बंबई 1931), सी० एन० वकील तथा एस० के० मुरंजन करेंसी ऐंड प्राइसेस इन इंडिया (बंबई 1927) डा० के० मल्होत्रा हिस्टरी ऐंड प्राब्लम्स आफ इंडियन करेंसी—1835 1945 (लाहौर, 1945 तृतीय संस्करण) जे० एम० कास इन्डियन करेंसी ऐंड फाइनेंस (लंदन 1913 1924 में पुन मुद्रित) परिमल राय पूर्वोद्धत

2 इंग्लैंड और भारत में कुछ लोगों ने सोचा कि विनिमय की गिरती दर 1873 के परवर्ती 20 वर्षों की अवधि में भारत के विदेश व्यापार के द्रुतविकास लगभग दुगना करने के लिए उत्तरदायी है परंतु इस धारणा पर किसी भी स्थिति में विश्वास न किया गया था और न ही विश्वास किया जाता है व्यापारी वर्ग को इस बात का ध्यान था कि गिरती विनिमय दर का उसके व्यापार पर विपरीत प्रभाव पड रहा है तथा देखिए दि रिपोर्ट आफ दि इंडियन करेंसी कमेटी—1893 कडिका 25 6 और फाइनेंशल स्टेटमेंट—1886-87, कडिका 2 और 1891 2 (कडिका 36)

3 विभिन्न सेवाओं नागरिक धर्मोपदेश नौसेना तथा स्थल सेना में लगे यूरोपीय अधिकारियों के शिष्टमंडल द्वारा 31 जनवरी 1893 को गवर्नर जनरल तथा इंडियन करेंसी कमेटी को प्रस्तुत प्रतिवेदन साक्ष्य के विवरण तथा परिशिष्ट 1893 सी-7060 II अनुमानत 1 से एक्नोजर 39

4 भारत के तीन उत्तराधिकारी वायसरायों ने इस विषय पर बल दिया लैंसडौन स्पीचेज खंड II पृ 621 एल्गिन, स्पीचेज पृ० 489 कर्जन स्पीचेज खंड II पृ० 276 तथा देखिए, रिपोर्ट आफ दि इंडिया करेंसी कमेटी 1893 कडिका 28

5 इंपीरियल गजेटियर आफ इंडिया (1908) खंड IV पृ० 195

6 वकील और मुरंजन पूर्वोद्धत पृ० 40

7 भारत राज्य सचिव का खजाने को लिखा गया पत्र दिनांक 26 जनवरी 1886 भारत राज्य सचिव की ओर से भारत सरकार को सम्प्रेषण के साथ संलग्न सं० 6 दिनांक 28 जनवरी 1886 तथा देखिए, रिपोर्ट आफ दि इंडियन करेंसी कमेटी 1893 कडिका 34

8 उदाहरणार्थ देखिए फाइनेंशल स्टेटमेंट्स 1883-4(कडिका 136), 1886-7(कडिका 1, 2 123) और 1893-4 (कडिका 28 30 31)

9 लैंसडौन एल० सी० पी० 1893 खंड XXXII पृ० 282 3

10 जी० डब्ल्यू०फारेस्ट ऐडमिनिस्ट्रेशन आफ दि मारक्विस आफ लैंसडौन एज वायसराय ऐंड गवर्नर

जनरल आफ इडिया, 1888 1894 पृ० 35 6 इडियन करसी एसोसिएशन के विस्तत दष्टिकोण के लिए देखिए, प्रोसीडिंग्स आफ दि पब्लिक मीटिंग आफ दि इडियन करसी एसोसिएशन, 13 जुलाई 1892 और लसडौन स्पीचेज खड II पृ० 518 20 भारतीय व्यापारियो की धारणा के लिए देखिए बगाल नेशनल चबर आफ कामस के पाचवे वार्षिक अधिवेशन म मडल के अध्यक्ष का भाषण ए० वी० पी० 29 मई 1892 और एस० बी० भारुचा स्पीचेज आन इडियन इकोनामिक्स (बबई तिथिरहित) प० 2-9

11 सुवण विनिमय मान का अस्तित्व देश म उस समय तक कहा जा सकता है जबकि उसका प्रचलन उल्लेखनीय परिमाण मे न हो जब स्थानीय मुद्रा स्वण म आवश्यक रूप स बदलने के योग्य न हो और जब केवल सरकार अथवा सामान्य बक ही विदेशो म रुपये के प्रपण का व्यवस्था स्थानीय मुद्रा क सदभ म साने के न्यूनतम निर्धारित मूल्य पर करत हो विदेशा मे उल्लेखनीय परिमाण मे सुरक्षित भडार इन धन प्रेषणा की आवश्यक व्यवस्था करते हो (केन्स पूर्वोद्धत प० 30-1)

12 प्रथम विश्वयुद्ध तक इन वर्षों मे बडे पमाने पर टकन हुआ 1899 1902 1903 1904 1905 1906 1911 और 1912 इन वर्षों म टकित रुपय का विशुद्ध परिमाण क्रमश इस प्रकार था 16 9 करोड 11 1 करोड 7 8 करोड 16 9 करोड 23 4 करोड 15 7 करोड 12 4 करोड और 16 3 करोड (वकील और मुराजन-पूर्वोद्धत प० 408)

13 केन्स पूर्वोद्धत प० 133, उन्होंने व्यग्यपूवक कहा वे (भारत सरकार) अपनी नीति इस प्रकार की बनात हैं जिसे इस प्रकार कहा जा सकता है कि एक समुदाय न उसी बन्ती भूख के साथ मुद्रा का उपभोग किया जिस प्रकार कुछ समुदाय बीयर का उपभोग करते हैं —(प० 134)

14 उदाहरण क लिए दखिए 1908-09 क बजट पर गोखले का भाषण स्पीचज प 177 80

15 केन्स पूर्वोद्धत पृ० 6

16 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I प० 198 इन्दु प्रकाश 7 अगस्त (आर० एन० पी० बब 12 अगस्त 1876) बाबे समाचार 5 मई 1879 और 9 नवबर 1880 (वही 10 मई 1879 और 13 नव 1880 क्रमश) बगाली 11 जून 1881 ब्रह्मा पब्लिक ओपीनियन 23 जून 1881, हिंदू 10 अप्रल 1885 मराठा 23 मई 1886, रीम ऐंड रयत 29 मई लिबरल 30 मई (वी० ओ० आई० जून 1886) इडियन स्पक्टेटर 18 जुलाई(वही अगस्त 1886), भारतवासी 23 जून (आर० एन० पी० बग० 30 जनवरी 1886), समय 8 माच (वही 13 माच 1886) साधारणी 4 अप्रल (वही 10 अप्रल 1886) सहचर 9 जून नवविभाकर 14 जून (वही 19 जून 1886) नौरोजी एसेज प० 374 हिंदुस्तान 22 जून (आर० एन० पी० पी० एन० 26 जून 1888) यह आश्चयजनक है कि जी० वी० जोशी चादी के सोन का श्रय करन मूल्य म गिरावट से असतुष्ट नहा थ उनका विचार था कि शीघ्र ही माग और पूर्ति का नियम सतुलन ला देगा और कदाचित चान्दी के पक्ष म ऊचे मूल्य की प्रवत्ति ही ला देगा (पूर्वोद्धत प० 118 128 9)

17 बगाली 11 जून 1881 ब्रह्मो पब्लिक आपीनियन 23 जून 1881 नौरोजी एसेज पृ० 514-20 इडियन स्पेक्टेटर 18 जुलाई (वी० ओ० आई० अगस्त 1886)

18 इडियन स्पेक्टेटर 17 जनवरी (आर० एन० पी० बब 23 जनवरी 1886) मराठा 4 अप्रल 1886 इडियन स्पेक्टटर 18 जुलाई (वी० ओ० आई० अगस्त 1886) हिंदू 8 11 15 जून 4 सितबर 1886 अगस्त 1886 के 'वायस आफ इडिया' के अनुसार उस समय के भारतीय समाचारपत्र इस पर सामान्य रूप से एकमत थे

19 इदु प्रकाश 7 अगस्त (आर० एन० पी० बब 12 अगस्त 1876), इडियन स्पेक्टेटर 17 जनवरी (वही 23 जनवरी 1886) समय, 17 मार्च (आर० एन० पी० बग०, 22 मार्च 1884), इडियन स्पेक्टेटर 18 जुलाई (वा० वो० आई० अगस्त 1886) समय, 22 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग० 23 अक्तू० 1986) जी० वा० जोशी इस सबध म फिर अपवाद रूप मे उन्होंने रुपयो के ऋण के स्थान पर स्टर्लिंग ऋण की नीति पत्तन का परामश दिया क्योंकि स्टर्लिंग की ब्याज दर कम थी उनका विश्वास था कि विनिमय की गिरावट के लिए अपेक्षाकृत सस्ते धन के लाभ को निष्प्रभावित करना लगभग असभव ही होगा (पूर्वोद्धत पृ० 118 128)

20 बाबे समाचार 3 सितबर 1880 31 मार्च 1882 (आर० एन० पी० बब, 4 सितबर 1880 1 अप्रैल 1882 क्रमश), बगाली 11 जून 1881, ब्रह्मो पब्लिक ओपीनियन 23 जून 1881 नवविभाकर 5 अप्रैल (आर० एन० पी० बग० 10 अप्रल 1886), सहचर, 9 जून (वही 19 जून 1886)

21 इदु प्रकाश 7 अगस्त (आर० एन० पी० बब 12 अगस्त 1876) न्याय प्रकाश 6 सित० (वही 11 सित० 1880) नवविभाकर 12 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 22 मई 1886) हिंदुस्तान 22 जून (आर० एन० पी० पी० एन० 22 जून 1888) सहचर, 8 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 18 अप्रैल 1891)

22 इदु प्रकाश 7 अगस्त (आर० एन० पी० बब 12 अगस्त 1876) ब्रह्मो पब्लिक ओपीनियन, 23 जून 1881 मराठा 16 मार्च 1884

23 मिस्टर फासेट के एसेज आन इडियन फाइनास, जे० पी० एस० एस० खड III सख्या 1 (जुलाई 1880) पृ० 80

24 वाचा स्पीचेज, पृ० 375

25 वाचा स्पीचेज पृ० 379 मराठा 4 सितबर 1892 ज्ञान प्रकाश 1 सितबर हितेच्छु 1 सित० (आर० एन० पी० बब 3 सितबर 1892), गुजरात दपण 22 सितबर (वही 24 सितबर 1892) बगाल पत्रिका 13 अक्तूबर (आर० एन० पी० एम० 15 अक्तूबर 1892) हिंदुस्तानी 22 जून (आर० एन० पी० एन० 29 जून 1892) रहबर 8 जुलाई (वही 27 जुलाई 1892)

26 एम० एच० वकील दि करेंसी प्राब्लम इन इडिया ऐंड सर डविड बारबर, दि ऐंग्लो इडियन ऐंड दि रूपी (बबई 1892) पृ० 2 (एक भारतीय लेखक द्वारा मुद्रा समस्या का कदाचित यह प्रथम विस्तृत समीक्षात्मक विश्लेषण था) मराठा 4 सितबर 1892 गुजरात दपण 22 सितबर (आर० एन० पी० बब 24 सित० 1892) आर० सी० दत्त इडियन पालिटिक्स पृ० 51 2

27 मराठा 4 सितबर 1892 12 मार्च 1893 ए० बी० पा० 31 जुलाई 1892 8 फरवरी 1893 बगाली 4 फरवरी 1893 एम० एच० वकील पूर्वोद्धत पृ० 2 वाचा स्पीचेज पृ० 376-8 387 90 नौरोजी 1893 की करेंसी कमेटी मे नौरोजी का वक्तव्य पावर्टी पृ० 560 तथा हाउस आफ कामस म दिया गया भाषण हसाड चतुथ माला खड IX कालम 655 7 बदवान सजीवनी 14 जून (आर० एन० पी० बग० 25 जून 1892) दनिक ओ समाचार चन्द्रिका 13 जुलाई (वही 16 जुलाई 1892), ज्ञान प्रकाश 1 सित० (आर० एन० पी० बब 3 सितबर 1892) गुजरात दपण 22 सितबर (वही 22 सितबर 1892) बाब समाचार, 28 अक्तूबर (वही 29 अक्तूबर 1892) एडवोकेट 10 जून (वा० ओ० आई० 19 जून 1892) बगाल पत्रिका 13 अक्तूबर (आर० एन० पी० एम० 15 अक्तूबर 1892) हिंदुस्तानी 22 जून (आर० एन० पी० एन० 29 जून 1892) रहबर 8 जुलाई (वही 27 जुलाई 1892) बगाली के 18 फरवरी

1893 के ग्रक म प्रस्तुत इंडियन एसोसिएशन द्वारा 1892 म हाउस आफ कामस को दिया गया ज्ञापन बगनिवासी 17 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 25 फरवरी 1893) बगवासी, 18 25 फरवरी (वही 25 फरवरी 4 माच 1893) हिमालय 10 माच (आर० एन० पी० पी० 18 माच 1893) आफताब पजाब 29 मई (वही 10 जून 1899) यही दृष्टिकोण नौरोजी 1896 म पहले ही अपने निबंधो म प्रस्तुत कर चुके हैं एसेज पृ० 518 और आग हिंदू ने भी 4 सित० 1889 के ग्रक म यही विचार प्रकट किया था

28 प्रस्ताव IV

29 भारत सरकार का भारत राज्य सचिव को सप्रेषण सख्या 160 तिथि 21 जून 1892 लाड एलगिन द्वारा सरकारी मुद्रानीति के जनसमथन का पक्का दावा भी बराबर झूठ आधारो पर किया गया स्पीचेज पृ० 51 और लाड कजन स्पीचज I, प० 118 हाल म परसीवल स्पीयर ने भी यह गलत धारणा व्यक्त की कि (काग्रेस के) वाणिज्य से सबधित पश्चिमी भारतीय सदस्यो ने रुपये के विनिमय मूल्य म गिरावट को रोक न पान के लिए सरकार की आलोचना की है इंडिया, ए माडन हिस्टरी (एन आबर 1961 प० 312)

30 ए० बी० पी०, 29 जून, 5 6 जुलाई 1893 बगाली 1 जुलाई 1893 मराठा 2 जुलाई 1893 इदु प्रकाश 3 जुलाई 1893 हिंदू 10 अगस्त 12 सितबर 1893 गुजराती 2 जलाई बाबे समाचार 3 और 4 जुलाई कसरे हिंद 2 जुलाई 9 जुलाई 20 जुलाई (आर० एन० पी० बब 8 15 22 जुलाई 1893 क्रमश) आय जन प्रियान 8 जुलाई केरल पत्रिका 8 जुलाई (आर० एन० पी० एम०, 15 जुलाई 1893। वत्तात पत्रिका 7 सित० (वही 15 सितबर 1893) हिंदुस्तानी 5 जुलाई (आर० एन० पा० एन० 11 जुलाई 1893) हितवादी 29 जून दनिक औ समाचार चद्रिका 2 5 जुलाई (आर० एन० पी० बग०, 8 जुलाई 1893) बगवासी 8 जुलाई वही 15 जुलाई 1893) हिमालय 14 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 29 जुलाई 1893) कोहेनूर 29 जुलाई ताज उल अखबार 29 जुलाई (वही 12 अगस्त 1893) अपवाद रूप केवल सहचर 28 जून (आर० एन० पी० बग० 8 जुलाई 1893) बग निवासी 7 जुलाई (वही 15 जुलाई 1893) हिंदुस्तान 8 जुलाई (आर० एन० पी० एन०, 11 जुलाई 1893) के

31 आई० एन० सी० 1893 का प्रस्ताव XIV इस प्रस्ताव का विरोध करने वाले और बदल म स्वणमान को समथन देने वाले एकमात्र प्रतिनिधि हिंदुस्तान समाचारपत्र के मालिक राजा रामपाल सिंह थ (रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 133)

32 रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 128 130 1

33 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 98

34 कसरे हिंद 8 मई इंडियन स्पेक्टेटर 8 मई ज्ञान प्रकाश 9 मई (आर०एन०पी०बब 14 मई 1898, कसरे हिंद 15 मई गुजराती 15 मई (वही 21 मई 1898) तोहफा ए हिंद 13 माच (आर० एन० पी० एन० 23 माच 1898) हिंदी प्रदीप मई और जून (वही 13 जुलाई 1898) इसका अपवाद था—अखबार ए आम 24 जून (आर० एन० पी० पी० 9 जलाई 1898)

35 नौरोजी पावर्टी पृ० 532 545 और इंडिया 20 मई 1898 प० 317 और 8 जुलाई 1898 प० 11

36 आर० सी० दत्त का 1898 की करेंसी कमेटी के समक्ष साक्ष्य दत्त स्पीचेज I पृ० 93

37 वही प० 76 82 91 3 104 तथा इंडिया में 11 नव 1893 को पुन मुद्रित मानचेस्टर गार्जियन को लिखे उनके पत्र

13 फरवरी 1894 29 सित० 1898 मराठा 31 जुलाई, 9 अक्तू०, 4 दिस० 1892, 12 मार्च 1893 बगाली 4 फरवरी 1893, 28 जून 1898 हिंदू 10 अप्रैल 1885, 8, 15 जून 1886 22 अगस्त 1893 5 8 जुलाई 1895, इंडियन स्पेक्टेटर 18 जुलाई (वी० ओ० आई० अगस्त 1886) बिहार हेराल्ड 18 फरवरी (वही 18 मार्च 1894) पत्ता अखबार 6 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 16 जुलाई 1898) एम० एन० बनर्जी ने 1879 और 1881 म ही (यद्यपि थोड़ा अस्पष्ट रूप से) यह विश्लेषण प्रस्तुत किया था देखिए, एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I पृ० 198 और बगाली 11 जून 1881 अपने तर्क की पुष्टि म दादाभाई नौरोजी ने 1893 म इंडियन करेंसी कमेटी को भेज गए प्रतिवेदन म राज्य सचिव द्वारा 26 जनवरी 1886 को कोषागार को लिखा पत्र उद्धृत किया यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भारत सरकार को इग्लैंड को स्वर्ण मुद्रा के रूप म जो अनिवार्य भुगतान करने पड़ते हैं उनके फलस्वरूप ही रुपये के विनिमय मूल्य म आई गिरावट से सरकारी वित्त प्रभावित हो रहे हैं (पावर्टी पृ० 543)

57 लायड ए० मिटजलर, दि थ्योरी आफ इंटरनेशनल ट्रेड, इ गर्वे आफ कांटेंपररी इकोनामिक्स, हावर्ड एस० एलिस द्वारा सपादित (फिलिपाइल, 1948) प० 221

58 नौरोजी पावर्टी प० 529 531 554 55 एसेज, प०512 516-7 और इंडिया 20 मई 1888, पृ० 317 ए० बी० पी०, 1 अप्रैल 1886 10 जुलाई 1892 हिंदू 11 जून 1889 5 जुलाई 1895 इस सबध मे अमृत बाजार पत्रिका ने 17 जुलाई 1892 के अक मे कम हो साफ-सुथरा तथ्य प्रस्तुत किया उसने लिखा रुपये के अवमूल्यन का परिणाम सामान्यतया निर्यात म वृद्धि होनी और उसके फलस्वरूप चादी के आयात बढ़ जाते इसका परिणाम यह होता कि भारत म चादी के मूल्य और ऊचे बढ़ जाते ताकि चादी के मूल्य में भारत म और बाहर के देशो मे समान रूप स अवमूल्यन हो जाता परतु यहा यह आर्थिक तथ्य और शृखला विच्छिन्न हो गई है इसका कारण यह है कि धन की निकासी ने भारत के अतिरिक्त आयात को निगल लिया है और इसका परिणाम यह हुआ है कि भारत के निर्यातो क मूल्य गिर गए हैं और इससे देश को हानि पहुची है

59 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I प० 198 ब्रह्मो पब्लिक ओपीनियन 23 जून 1881 वाचा स्पीचेज प० 381, ए० बी० पी० 8 फरवरी 1893

60 बबई मिल ओनर्स एसोसिएशन 1898 की रपट पृ० 90

61 वाचा स्पीचेज प० 381 जी० एस० अय्यर, ई ए, पृ० 357

62 नौरोजी एसेज पृ० 517 और पावर्टी प० 543-4, मराठा 31 जुलाई 1892 बगाली 28 जून 1898 कसरे हिंद 15 मई (आर० एन० पी० बब, 21 मई 1898)

63 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 101 02 तथा नौरोजी एसेज, प० 516-7 और पावर्टी पृ० 545 6 576 बबई प्रसीडेंसी एसोसिएशन का स्मरणपत्र तिथि 27 अगस्त 1886 पूर्वोक्त स्थान वाचा रिप० आई० एन० सी० 1892 प० 84 और रिप० आई० एन० सी०- 1898 प० 101-04 दत्त स्पीचेज I पृ० 93 97 8 इंडिया, 11 नवबर 4 दिस० 1898 प० 262 ई एच II पृ० 582, 585 ब्रह्मो पब्लिक ओपीनियन, 23 जून 1881 मराठा 31 जुलाई 28 अगस्त 4 सितबर और 9 अक्तू० 1892 तथा 12 मार्च 1893 ए० बी० पी 27 मार्च 1892 8 फरवरी 1893 13 फरवरी 10 मार्च 1894 29 सित० 1899 हिंदू 21 मई 1894 8 जुलाई 1895 इंडियन एसोसिएशन की हाउस आफ कामन्स को याचिका 25 फरवरी 1893 के बगाली में इंडियन स्पेक्टेटर 18 जुलाई (वी० ओ० आई०, अगस्त 1886 प० 392)

हिंदुस्तानी, 22 जून (आर० एन० पी० एन०, 29 जून 1892) बिहार हेराल्ड, 18 फरवरी (वी० ओ० आई०, 18 माच 1894 पृ० 216), ज्ञान प्रकाश, 9 मई (आर० एन० पी० बब 14 मई 1898) कसरे हिंद, 15 मई (वही 21 मई 1898)

64 दत्त स्पीचेज I प० 93 तथा नौरोजी पावर्टी प० 545 575 6 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 104 हिंदुस्तानी 24 अगस्त 1892, 8 फरवरी 1893 (आर० एन० पी० एन० 31 अगस्त 1892 15 फरवरी 1893 क्रमश) 1893 म इडियन एसासिएशन की हाउस आफ कामस को याचिका 25 फरवरी 1893 के बगाली मे ए० बी० पी० 13 फरवरी 1894 ज्ञान प्रकाश 9 मई (आर० एन० पी० बब, 14 मई 1898) कसरे हिंद 16 जुलाई (वही, 22 जुलाई 1899) दत्त, इडिया, 11 नवबर 1898 पृ० 262

65 ज्ञान प्रकाश 1 सितबर हितेच्छु 1 सित० (आर० एन० पी० बब 3 सितबर 1892), 1893 मे इडियन एसोसिएशन का हाउस आफ कामस को ज्ञापन 25 फरवरी 1893 के बगाली मे, ज्ञान प्रकाश 9 मई (आर एन० पी० बब 14 मई 1898) तोहफा ए हिंद, 13 माच (आर० एन० पी० एन 23 माच 1898)

66 आई० एन० सी 1898 का प्रस्ताव XIII नौरोजी पावर्टी प० 575

67 अमत बाजार पत्रिका म 17 जुलाई 1892 के अक म लिखा विनिमय की कठिनता एक प्राकृतिक चेष्टा है भारत को प्राकृतिक स्वस्थ स्थिति म लाना भले ही कठिन हो यह सपत्ति की अप्राकृतिक निकासी के, प्रति विरोध है जिसका शिकार भारत को बनाया जा रहा है तथा देखिए ए० बी० पी० 1 अप्रल 1886 हिंदुस्तानी, 24 अगस्त (आर० एन० पी० एन० 31 अगस्त 1892) बगाली 4 फरवरी 1893 नौरोजी सी० पी० ए० पृ० 177

68 ए० बी० पी० 17 जुलाई 1892, बगाली 3 सितबर 1892

69 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 31 42 सी० पी० ए० प० 617 दत्त स्पीचेज I प० 71 5 103 ई एच II प० 578

70 ए० बी० पी 9 अप्रल 1893 15 माच 1894 कसरे हिंद इडियन स्पेक्टेटर 11 माच, इदु प्रकाश 12 माच (आर० एन० पी० बब 17 माच 1894) पी० मेहता, स्पीचेज प 445 6 पावर्टी पृ० 281 2 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 243 5 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 6 16-19 रिप० आई० एन० सी० 1892 पृ० 84 रिप० आई० एन० सी० 1898, प० 101-02 सी० पी० ए०, प० 617 नदी इडियन पालिटिक्स पृ० 128 30 दत्त स्पीचेज I प० 103 ई एच II प० 583 तथा आई० एन० सी०-1895 का प्रस्ताव III

71 हितेच्छु 1 सित० (आर० एन० पी० बब 3 सित० 1892) इडियन एसासिएशन का हाउस आफ कामस को 1893 में प्रस्तुत याचिका बगाली के 25 फरवरी 1893 के अक मे प्रकाशित, ए० बी० पी० 9 अप्रल 1893 29 सितबर 1898 बगाली 1 जुलाई 1893 बिहार हेराल्ड 18 फरवरी (वी० ओ० आई० 18 माच 1894) नौरोजी पावर्टी प० 539-40 544 दत्त स्पीचेज I प० 93, 103 104 कसरे हिंद 15 मई 1898 16 जुलाई 1899 (आर० एन० पी० बब 21 मई 1898 22 जुलाई 1899 क्रमश)

72 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 102-04 तथा रिप० आई० एन० सी० 1894 प० 132 3 स्पीचेज परिशिष्ट प० 9 31 41 43 सी० पी० ए०-पृ० 617

73 1893 मे हाउस आफ कामस को इडियन एसोसिएशन द्वारा प्रस्तुत याचिका, बगाली के 25 फरवरी 1893 के अक म प्रकाशित

74 नौरोजी सी० पी० ए० पृ० 177

75 आई० एन० सी० 1893 का प्रस्ताव XIV तथा आई० एन० सी० 1901 का प्रस्ताव XVII

76 एम० एच० वकील पूर्वोद्धत पृ० 4 19 मराठा, 9 अक्तूबर 1892 2 जुलाई 1893 कसरे हिंद 9 जुलाई (आर० एन० पी० बब, 15 जुलाई 1893), ए० बी० पी० 29 सितबर 1898 वाचा स्पीचेज पृ० 389 90 सी० पी० ए०, पृ० 611, 614 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 362 574-5 604 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 106-07, एच० आर० जून 1901 पृ० 441, ई ए पृ० 120-1 रिप० आई० एन० सी० 1904, पृ० 175 दत्त स्पीचेज I, पृ० 70 76-7 ई एच II, पृ० 458 579 80 596 598 इडिया, 11 नव० 1898 ज० ए० वाडिया पूर्वोद्धत पृ० 95 129, गोखले स्पीचेज पृ० 14 75 77, डी० डी० ठाकरसी रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 99, केसरी 31 मार्च (आर० एन० पी० बब 4 अप्रल 1903) वस्तुत 1893 की मुद्रा समिति न इस तक की सार्थकता को स्वीकार किया था और लिखा था हम यह मानकर चल रहे हैं कि वतमान अनुपात अथवा अनपात वर का कुछ अतर बना रहेगा ऐसा मानने के मुताबिक रुपये के मूल्य क वतमान स्तर मे एकदम स कोई परिवतन नहीं आएगा

77 नौरोजी पावर्टी 531 तथा वही, पृ० 529 533-6 545 561 2, इडिया, 20 मई 1898 पृ० 317 और इडिया 8 जुलाई 1898 पृ० 11

78 नौरोजी पावर्टी प० 535 537 543 557 8 ए० बी० पी० 29 सित० 1898 ज० ए० वाडिया, रिप० आई० एन० सी० 1901, प० 176 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1902 प० 100 और रिप० आई० एन० सी० 1904 पृ० 175, और ई ए पृ० 10 दत्त ई एच II पृ० 585-6 तुलनीय रिपोर्ट आफ दि इडियन करेंसी कमेटी 1893 कण्डिका 112

79 नौरोजी पावर्टी पृ० 545 तथा एम० एच० वकील, पूर्वोद्धत, प० 5-6, मराठा, 9 अक्तूबर 1892

80 वाचा सी० पी० ए० पृ० 610

81 आई० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव VIII दत्त ई एच II प० 596 गोखले स्पीचेज प० 75 77 रिप० आई० एन० सी० 1904 प० 164-5 168, पी० मेहता स्पीचेज प० 604, जी० एस० अय्यर, ई ए, पृ० 41 3

82 गोखले, स्पीचेज, पृ० 76 1902 क कांग्रेस अधिवेशन म इसी प्रकार का प्रश्न डी० डी० ठाकरसी न उठाया (रिप० आई० एन० सी० 1902 प० 99)

83 नौरोजी पावर्टी प० 530

84 एम० एच० वकील पूर्वोद्धत पृ० 19 नौरोजी, पावर्टी प० 529 531 560-2 सी० पी० ए० प० 176, इडिया, 20 मई 1898 पृ० 317 मराठा 4 सितबर 9 अक्तू० 1892 वाचा, सी० पी० ए०, प० 610 स्पीचेज प० 382 जे० ए० वाडिया पूर्वोद्धत पृ० 65 डी० डी० ठाकरसी रिप० आई० एन० सी० 1902 प० 99 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1904 पृ० 175

85 इडियन करेंसी कमेटी मिनटस आफ एविडेंस ऐंड एपेंडिक्स 1893 सी 7060 II प्रश्न 2353-4

86 वही प्रश्न 2371

87 वही प्रश्न 2355-9

88 वही प्रश्न 2391

89 मराठा, 9 अक्तूबर 1892, एम० एच० वकील, पूर्वोद्धत, पृ० 4 नौरोजी पावर्टी, पृ० 536, दत्त स्पीचेज I पृ० 88 90 इडिया 11 नवबर 1898, पृ० 262 ई एच II, पृ० 581

90 वाचा सी० पी० ए०, पृ० 614 मराठा, 9 अक्तूबर 1892 वाचा स्पीचेज पृ० 390 नौरोजी पावर्टी, पृ० 561 3, एम० एच० वकील, पूर्वोद्धत पृ० 4-7

91 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 131

92 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव IV तथा आई० एन० सी० 1893 और 1899 के प्रस्ताव क्रमश XIV और XVII

93 1893 मे इडियन एसोसिएशन द्वारा हाउस आफ कामस म प्रस्तुत याचिका बगाली के 18 फरवरी 1893 म प्रकाशित बगवासी 26 अगस्त (आर० एन० पी० बग०, 2 सितबर 1893), इडियन स्पेक्टेटर 8 मई 1898 क सरे हिंद 15 मई (आर० एन० पी० बब, 21 मई 1898) आई० एन० सी० 1898 का प्रस्ताव XIII वाचा ने शिकायत की कि भारत का व्यापार भी सामान्यत अस्त व्यस्त हो गया है (रिप० आई० एन० सी० 1893, पृ० 131)

94 बबई समाचार, 27 जून 3 4 जुलाई (आर० एन० पी० बब 1 जुलाई 8 जुलाई 1893), जामे जमशद 27 29 जून 1 जुलाई (वही 1 जुलाई 1893) कसरे हिंद, 2 जुलाई इदु प्रकाश 3 जुलाई (वही 8 जुलाई 1893) गुजरात दपण 12 अक्तूबर (वहा, 14 अक्तूबर 1893) 1893 म इडियन एसोसिएशन द्वारा हाउस आफ कामस को प्रस्तुत याचिका, बगाली के 18 फरवरी 1893 के अक में प्रकाशित ए० बी० पी० 23 जुलाई 1893, मराठा 2 जुलाई 1893, हिंदुस्तानी, 5 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 11 जुलाई 1893) दनिक ओ समाचार चन्द्रिका 2 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 8 जुलाई 1893) बगबासी 26 अगस्त (वही 2 सितबर 1893), बगाली, 3 फरवरी 1894 28 जून 1898 वाचा रिप० आई० एन० सी, 1893 पृ० 130 सी० पी० ए० पृ० 612, राय, पावर्टी प० 11 जे० यू० यानिक प्रसिडेंशियल ऐड्रेस ऐट दि सवथ प्राविशल कार्फेस (सातवें प्रातीय सम्मेलन मे अध्यक्षीय भाषण) ज० पी० एस० एस० जनवरी 1895 (खड VIII स० 3) पृ० 5 दत्त स्पीचेज I, प० 91 जे० ए० वाडिया रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 177

95 वाचा ने निर्देश किया कि भारतीय सूती वस्त्र उद्योग के उत्पादन के अधिकाश का उपभोग चीन और जापान द्वारा किया जाता है (रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 130)

96 पी० महता स्पीचेज पृ० 362 बबई समाचार 4 जुलाई (आर० एन० पी० बब 8 जुलाई 1893) हिंदुस्तानी 5 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 11 जुलाई 1893) बगाली 3 फरवरी 1894 28 जून 1898 राय पावर्टी पृ० 11, याज्ञिक, अध्यक्षीय भाषण, पूर्वोक्त स्थल प० 4 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 130-1 रिप० आई० एन० सी 1898 पृ० 98 सी० पी० ए०, प० 612-4

97 गोखले स्पीचेज पृ० 10 तथा देखिए पृ० 11

98 रिप० आई० एन० सी० 1904 पृ० 174

99 रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 99 अहमदाबाद के एक अन्य मिल-अभिकर्ता सोराबजी कडाका ने उनका समथन करते हुए दढतापूवक कहा कि मुद्रा कानून ने देश के कारखाना उद्योग की अगरश हत्या की है (वही पृ० 101)

100 देखिए परिमल राय पूर्वोद्धत, पष्ठ 177 208 राय तथा कुछ दूसरा जसे एलगिन (स्पीचेज, प० 489 90) और कर्जन (स्पीचेज III पृ० 135) ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि

भारत का 80 प्रतिशत अथवा उससे भी अधिक व्यापार स्वणमान वाले देशो के साथ था और रुपये के स्वणमान से स्थिर सबध होने पर भारत का लाभ पहुचना निश्चित था। जसा हम बार बार दोहरा चुके हैं भारतीय नेता तो समग्र विश्व व्यापार की चिंता अथवा उससे सबध ही नहीं रखते थे उन्होंने तो अपने दृष्टिकोण को एक सीमित क्षेत्र तक ही सकुचित कर लिया जिसके अनुसार उनके प्रयत्नों का प्रयोग सबध देश के उद्योगीकरण से ही था

101 वाचा सी० पी० ए० पृ० 613-4 तथा देखिए मराठा, 12 जुलाई 1903

102 1893 मे इडियन एसोसिएशन द्वारा हाउस आफ कामस को प्रस्तुत ज्ञापन बगाली के 18 फरवरी 1893 के अक म प्रकाशित बगाली 3 फरवरी 1894, आई० एन० सी० 1901 का प्रस्ताव XVII वाचा सी० पी० ए० पृ० 612

103 काग्रेस के आठवे अधिवेशन म कप्टन बनन ने मुद्रा प्रस्ताव का समथन किया (रिप० आई० एन० सी० 1892 प० 64)

104 नौरोजी पावर्टी, पृ० 562 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 100-01

105 मराठा, 4 सितबर 1892 और 2 जुलाई 1893 इडस्ट्रियल एसोसिएशन आफ वेस्टन इंडिया द्वारा 1892 म प्रस्तुत स्मरणपत्र पूर्वोक्त स्थल, बबई समाचार 27 जून (आर० एन० पी० बब 1 जुलाई 1893) वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 101-02 आर० पी० करदीकर रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 132 3 नौरोजी इडिया 20 मई 1898 प० 317, दत्त इडिया 11 नवबर 1898 प० 261 2 सी० पी० ए० पृ० 490, पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1898 खड XXXIV प० 502-03 आई० एन० सी० 1899 और 1901 के प्रस्ताव IV और XVII क्रमश गोखले स्पीचेज प० 14-5 75 111 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 685 वी० डी० ठाकरसी रिप० आई० एन० सी० 1902 प० 98 बगाली 10 फरवरी 1903

106 1893 म इडियन एसोसिएशन द्वारा हाउस आफ कामस को प्रस्तुत याचिका बगाली के 18 फरवरी 1893 के अक म प्रकाशित मराठा 2 जुलाई 1893 ए० बी० पी०, 5 6 जुलाई 1893 19 सितबर 1898 हितवादी 29 जून दनिक ओ समाचार चद्रिका, 5 जुलाई (आर एन० पी० बग० 8 जुलाई 1893), हिंदुस्तानी, 5 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 11 जुलाई 1893) तोहफा ए हिंद 13 माच (वही, 23 माच 1898), हिंदी प्रदीप मई-जून (वही 13 जुलाई 1898) अखबारे आम के 17, 24 अगस्त के अक म एक पत्र (आर० एन० पी० पी०, 11 सितबर 1897) पसा अखबार, 30 अप्रैल, 2 मई (वही 14 मई 1898), इडियन स्पेक्टेटर 8 अक्तूबर (आर० एन० पी० बब 14 अक्तू० 1899), दत्त स्पीचेज I प० 85 8 इडिया 11 नवबर 1898 प० 261 इन्डियन पालिटिक्स प० 52 सी० पी० ए० प० 490 हिंदू 12 जुलाई 1899 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव IV, वाचा सी० पी० ए०, पृ० 615 जी० एस० अय्यर नि कायमगाय आन दि इकोनामिक कडीशन आफ इडिया एच० आर० जून 1901 पृ० 441 गोखले स्पीचेज प० 14 111 रिप० आई० एन० सी० 1904 प० 163-4 ए० एस० देसाई रिप० आइ० एन० सी० 1904 प० 174

107 दत्त स्पीचेज I पृ० 86

108 गोखले स्पीचज पृ० 14

109 ए० बी० पी० 19 सित० 1898 तथा वही, 6 जुलाई 1893 मराठा, 2 जुलाई 1893

110 स्पीचेज I पृ० 81 तथा इन्डस्ट्रियल एसोसिएशन आफ वेस्टन इडिया का स्मरणपत्र पूर्वोक्त

स्थल इंडियन एसोसिएशन द्वारा 1893 में हाउस आफ कामन्स को प्रस्तुत याचिका, बंगाली के 18 फरवरी 1893 के अंक में प्रकाशित मराठा 12 मार्च 1893, हिंदू 28 जून 1893, 12 जुलाई 1899 ए० बा० पी०, 26 जुलाई 1893, नौरोजी पावर्टी, पृ० 531 2 दत्त स्पीचेज I पृ० 81 5, इंडिया 11 नवंबर 1898 पृ० 261 2 सी० पी० ए० पृ० 490 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 107 एच० आर०, जून 1901 पृ० 441 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव IV वाचा स्पीचेज पृ० 390 रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 60-1 सा० पी० ए० पृ० 614 गोखले स्पीचेज पृ० 14 111 ए० एस० देसाई रिप० आई० एन० सी० 1904 पृ० 174

111 नौरोजी, पावर्टी प० 520 इंडिया 20 मई 1898 पृ० 317, 8 जुलाई 1898 पृ० 11 1893 में इंडियन एसोसिएशन द्वारा हाउस आफ कामन्स को प्रस्तुत याचिका बंगाली के 18 फरवरी 1893 के अंक में प्रकाशित मराठा 12 मार्च 2 जुलाई 1893 ए० बी० पी० 23 जुलाई 1893 19 29 सितंबर 1898 केसरी हि० 9 जुलाई (आर० एन० पी० बंब० 15 जुलाई 1893), हिंदुस्तानी 5 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 11 जुलाई 1893), बंगवासी, 8 जुलाई (आर० एन० पी० बंग० 15 जुलाई 1893) आर० पी० करंदीकर, रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 132 3 दत्त, स्पीचेज I पृ० 77 9 85 बंगवासी, 29 जनवरी (आर० एन० पी० बंग० 5 फरवरी 1898) जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 107 हिंदू 12 जुलाई 1899 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव IV वाचा रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 60 सी० पी० ए० प० 614 स्पीचेज, पृ० 389, गोखले स्पीचेज प० 14 75 111, वी० डी० ठाकरसी रिप० आई० एन० सी० 1904 पृ० 174

112 वाचा, स्पीचेज पृ० 389 1893 में इंडियन एसोसिएशन द्वारा हाउस आफ कामन्स को प्रस्तुत याचिका बंगाली के 18 फरवरी 1893 के अंक में प्रकाशित ए० बी० पी०, 23 जुलाई 1893 हिंदुस्तानी 5 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 11 जुलाई 1893) दत्त, स्पीचेज I पृ० 80 'इंडिया' 11 नवंबर 1898 पृ० 261 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव IV

113 बंबई समाचार 27 जून (आर० एन० पी० बंब 1 जुलाई 1893) मराठा 2 जुलाई 1893, रहबर 8 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 27 जुलाई 1892) हिंदुस्तानी 5 जुलाई (वही 11 जुलाई 1893) हिमालय 14 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 29 जुलाई 1893) नौरोजी, पावर्टी प० 534 इंडिया 20 मई 1898 पृ० 317 हिंदी प्रदीप मई जून (आर० एन० पी० एन० 13 जुलाई 1898) वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 101 हिंदू, 12 जुलाई 1899 बंगाली 19 फरवरी 1903

114 जी० एस० अय्यर, ई ए पृ० 121 तथा एम० एच० वकील पूर्वोद्धत, प० 6 7, वाचा स्पीचेज पृ० 390 रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 130 रिप० आई० एन० सी० 1898 प० 101 रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 56 हिंदुस्तानी 22 जून (आर० एन० पी० एन०, 29 जून 1892) 1893 में इंडियन एसोसिएशन द्वारा हाउस आफ कामन्स को प्रस्तुत याचिका, बंगाली के 25 फरवरी 1893 के अंक में प्रकाशित ए० बी० पी० 29 जून 1893 मराठा 2 जुलाई 1893 आयजनप्रियन 8 जुलाई केरल पत्रिका 8 जुलाई (आर० एन० पी० एम०, 15 जुलाई 1893) नौरोजी पावर्टी पृ० 534 561 इंडिया 20 मई 1898, प० 317, जे० ए० वाडिया पूर्वोद्धत पृ० 96 दत्त स्पीचेज I पृ० 89 90

115 केसरी हि० 27 अगस्त (आर० एन० पी० बंब०, 2 सितंबर 1893) तथा नौरोजी, पावर्टी

पृ० 534 547, 561, बगवासी 8 जुलाई (आर० एन० पी० बग०, 15 जुलाई 1893), दत्त इडियन पालिटिक्स पृ० 52 जा० एस० अय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 107 ई ए पृ० 120 वाचा, रिप० आई० एन० सा० 1899, पृ० 56 बगाली 19 फरवरी 1903

116 जा० एस० अय्यर ई ए पृ० 120 1 हिंदू, 12 जुलाई 1899 वाचा, रिप० आई० एन० सा० 1899 पृ० 58-9 बगाली, 19 फरवरी, 1903

117 वकील और मुराजन पूर्वोद्धत, पृ० 321 3 और परिमल राय पूर्वोद्धत पृ० 203

118 दत्त स्पीचज I पृ० 79 80 89 90

119 गोखले स्पीचेज पृ० 14 तथा पृ० 75 कुछ वर्षों के उपरात 1908 में गोखले ने इस समस्या पर विस्तार से विचार किया सच कहा जाए तो सरकार के मुद्रा कानून स रुपये का नकली वृद्धि का परिणाम तभी निकलगा जब नए आधार पर वस्तुए व्यवस्थित हो जाएगी तब देश म कीमतो मे सामान्य गिरावट आएगी चान्दी के सिक्के गढन वाला टकसाला के बद होने के बाद के प्रथम कई वर्षों मे उसका परिणाम अकालो का निरतरता म अभाव की स्थिति की व्यापकता स और कदाचित जोडे हुए रुपया के परिचलन स नकारात्मक हो गया है इसके अतिरिक्त सारे विश्व म उपभोग वस्तुओ के स्वण मूल्य म वृद्धि की सामान्य प्रवृत्ति ने भी निस्सदेह भारत में मूल्यवृद्धि म सहायता दी है हमारे सिक्का विशेषज्ञ ने परीक्षा करके इस समस्या पर कुछ प्रकाश डाला है विशपज्ञ मिस्टर हरीसन के अनुसार 1898 स पहले कुल रुपया का भडार 130 करोड के लगभग का है इस दस वष की अवधि म सरकार न विशुद्ध रूप स इस भडार में 100 करोड रुपयो की वृद्धि की है मेरा विचार है कि देश की मुद्रा के इतने आकस्मिक प्रसार का परिणाम मूल्या म सामान्य वृद्धि ही है (स्पीचज, पृ० 177 9)

120 वाचा, सी० पी० ए , पृ० 615-6

121 यदि हम फौलर कमीशन द्वारा (भले ही) सकोचपूवक अभिव्यक्त विरोधी मान्यता को दखें तो यह अकालप्रौढ़ता वस्तुत विस्मयजनक हो लगती है देखिए इडियन करेंसी कमटी 1898 का प्रतिवेदन कडिका 58 बगाली द्वारा प्रस्तुत दृष्टिकोण को कालातर म ज० एम० कैंस न पुष्ट किया (पूर्वोद्धत पृ० 6) एक अन्य भारतीय लेखक रणछोड लाल छोटलाल न जो हालाकि महत्वपूर्ण राष्ट्रीय नेता नही थे (वह अहमदाबाद की एक मिल के स्वामी थ और बबई विधानपरिषद क सदस्य थे) 1894 म सरकार से अपने आप रुपया गढ़ने की अपील इस आधार पर की कि जब एक बार भारत रजतमान स हट गया तो रुपया मुद्रा का सकेत मात्र बनकर रह जाता है उस स्थिति म भारत और इग्लड के बीच विनिमय दर की ऊच नीच पर रुपए की अधिकता और अभाव का कोई प्रभाव ही नहा पडता अत इग्लड के लिए भारत के व्यापार सतुलन पर निभरता की दृष्टि से कोई चिंता की बात नही इसके विपरीत इन स्थितिया म रुपये की कमी उद्योगो और कृषि को और उसके फलस्वरूप देश के निर्यात को क्षति पहुचाती हुई रुपये के मूल्य को और भी नीचे की ओर ले जाएगी (लैटस आन करेंसी, बबई *1895*)

122 नौरोजी पावर्टी पृ० 532-4 और इडिया' 8 जुलाई 1898 पृ० 10-11

123 नौरोजी सी० पी० ए० पृ० 177 पावर्टी पृ० 560 इडियन करेंसी कमटी *साक्ष्य की* कार्यवाही और परिशिष्ट—1893 सी 7060 II प्रश्न 2346-7, बगाली 11 जून 1881 हिंदू 22 अगस्त 1893

124 आई० एन० सी० 1892 का प्रस्ताव IV, दत्त इडियन पालिटिक्स, पृ० 51 2 स्पीचज I, पृ 91

125 1893 के मुद्रा अधिनियम के कानून बन जाने पर मराठा ने 2 जुलाई 1893 के अक में पुन बल पूर्वक कहा कि इस देश की जनता के हितो पर ध्यान दिए बिना ही बिल पास कर दिया गया है विश्व के किसी भी देश म मुद्रा सबधी यह द्रुत परिवतन और वह भी इतनी आसानी से लागू करना कदाचित असभव ही होता

126 दत्त, इडियन पालिटिक्स पृ० 52 तथा देखिए उनकी स्पीचेज I, पृ० 86

127 नौरोजी पावर्टी पृ० 542 और 547

128 होम (पब्लिक) नव० 1893 प्राग 315 (ए) कडिका 1

129 फाइनेंशियल स्टेटमट 1896 7 कडिका 104, ववील पूर्वोद्धत पृ० 33

130 आर० एन० पी० बब 2 सितबर 1893

131 ए० बी० पी०, 22 अगस्त 1893 हिंदू 25 अगस्त 1893, 18 अप्रल 1894 16 जून 1899 बगाली 18 नवबर 1893 10 फरवरी 10 माच, 7 अप्रल 1894, मराठा 27 अगस्त 1893 21 जनवरी 1894, इडियन स्पक्टेटर, 27 अगस्त 1893, इदु प्रकाश 25 सितबर 1893 आर० एन० पी० बब 2 सितबर, 30 सित० 1893 म उद्धत समाचारपत्र आर० एन० पी० बग० 2 9 23 सितबर 1893 तथा आर० एन० पी० एम० 15 सित० 1893 म उद्धत समाचारपत्र

132 रिपोट आफ दि इडियन एसोसिएशन 1829 3 से 1895-6 प० 34 और ज० पी० एस० एस०, जनवरी 1894 (खड XVI स० 3) पृ० 60

133 आई० एन० सी० 1893 का प्रस्ताव XV

134 प्रस्ताव XVI (1894), XVI (1895) XI (1896) IV(1897), XX 1898) XIV (1899) X (1900), XIX (1901) XIX (1902) और XIII (1903)

135 रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 133 5

136 नौरोजी स्पीचेज पृ० 344 और पृ० 143 462 सी० पी० ए० प० 176 देखिए ए० सी० मजूमदार रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 143 जोशी, पूर्वोद्धत प० 200 219 वाचा, स्पीचेज-परिशिष्ट प० 17 31 गोखले स्पीचेज पृ० 1190 दत्त ई एच II, पृ० 578

137 आई० एन० सी० के 1893 और 1894 के प्रस्ताव क्रमश XV और XVI 1893 म इडियन एसोसिएशन द्वारा प्रस्तुत स्मरणपत्र पूर्वोक्त स्थल, पृ० 35 1893 मे पूना सावजनिक सभा द्वारा प्रस्तुत स्मरणपत्र, जे० पी० एस० एस० जनवरी 1894 (खड XVI स० 3) प० 60 इन्डियन स्पक्टेटर, 27 अगस्त 1893 मराठा 27 अगस्त 1893 कसरे हिंद 2 जून (आर० एन० पी० बब 8 जून 1895) *वाचा स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 17 30 एस० एन० बनर्जी* सी० पी० ए० प० 262 701 02 ए० सी० मजूमदार रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 140 1

138 जी० वी० जोशी पूर्वोद्धत प० 200 तथा देखिए वही प० 199 219 नौरोजी एसेज पृ० 517 स्पीचेज प० 144 गुजरात दपण 31 अगस्त (आर० एन० पी० बब 2 सितबर 1893) पूना सावजनिक सभा द्वारा 1893 में प्रस्तुत स्मरणपत्र—पूर्वोक्त स्थल प० 63-4 ए० बी० पी 22 अगस्त 1893 बगाली 81 नवबर 1893 स्वदेशमित्रन 25 अगस्त आर० एन पी० एम० 15 सितबर 1893), वाचा रिप० आई० एन० सी 1893 प 129 ए० सी० मजूमदार रिप० आई० एन० सी—1895 प० 143 गोखले स्पीचेज प० 1190 जमी उल उलुम 28 मई

(आर० एन० पी० एन० 2 जून 1897), जी० एम० अय्यर, विनवी आयोग, खड III प्र० 19027

139 रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 135 1895 के कांग्रेस अधिवेशन म बगाल स आए एक अन्य प्रतिनिधि पुरश चद्र राय ने भी इसी प्रकार के भाव प्रकट किए (रिप० आई० एन० सी०—1895 प० 145)

139 A 28 मई 1897 (आर० एन० पी० एन० 2 जून 1897)

140 नौरोजी एसज प० 516 एम० एच० वकील, पूर्वोद्धत प० 12, 312, मराठा, 25 सितबर 1892 12 फरवरी 1893 गुजरात दपण 22 सितबर (आर० एन० पी० बव 24 सित० 1892) 1893 म प्रस्तुत इन्डियन एसोसिएशन की याचिका, बगाली के 25 फरवरी 1893 के अक म प्रकाशित वाचा रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 137 स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 11, 30 कसरे हिंद 2 जून (आर० एन० पी० बव 8 जून 1895) एम० एच० वकील (प०32-6) कसरे हिंद का विचार था कि यदि सावधानी से हिसाब लगाया जाए तो कदाचित सरकारी अधिकारी लाभ म हो रहे हैं

141 गोखल, स्पीचेज प० 1190 तथा जोशी पूर्वोद्धत पृ० 219 ए० बी० पी०, 27 मार्च 1892 11 फरवरी और 22 अगस्त 1893 मराठा 25 सित० 1892, 1893 म इंडियन एसोसिएशन द्वारा हाउस आफ कामस को प्रस्तुत याचिका बगाली के 25 फरवरी 1893 के अक में प्रकाशित, पी० एस० एम० का स्मरणपत्र ज० पी० एस० एस० जनवरी 1894 (खड XVI स० 3) प० 64, गुजरात दपण 31 अगस्त (आर० एन० पी० बव 2 सित० 1893) हितवादी 25 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 2 सित० 1893) वाचा, रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 130 स्पीचेज परिशिष्ट प० 30 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 263, पी० सी० राय वही प० 145 ए० सी० मजूमदार रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 141 जी० एस० अय्यर विलवी आयोग खड III प्रश्न 19027 जमी उल उलूम 28 मई (आर० एन० पी० एन० 2 जून 1893) अगरेज अधिकारियो द्वारा अपनाए गए रुख से यह दृष्टिकोण कितना भिन्न था इन अधिकारियो की दुष्प्रवृत्ति क सजाव तथा सचित्र रूप को निम्नलिखित मे से किसी एक के द्वारा देखा जा सकता है जनरल चिमनी ने 1894 म अपनी 'इंडियन पालिटी' (प० 336-9) म लिखा यदि मनुष्य केवल चावल पर जीवित रहता और सादा सा कपडा पहनता तो रुपये की गिरावट के घाटे को वह सह सकता था परिणाम यह है कि भारत के वरिष्ठ मिलिट्री अथवा सिविल कमचारी को रुपये क मूल्य म गिरावट क फलस्वरूप निधनता तथा अभाव का जीवन बिताना पडता है (प० 337 8) उसने चेतावनी दी कि यदि विनिमय की सुधारने के लिए कुछ नही किया जाता तो अगरेज अधिकारी बहुत सारे प्रलोभनो का मोह न छोड पाएग

142 नौरोजी एसज पृ० 517 स्पीचेज पृ० 143 462 मराठा, 25 सित० 1892 इंडियन एसोसिएशन का स्मरणपत्र 29 सित० 1893 पूर्वोक्त स्थान प० 34 एस एन० बनर्जी रिप० आई० एन० सी० 1893 प 134 एस० ऐंड डब्ल्यू परिशिष्ट पृ० 47 गोखले स्पीचेज प० 1190 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 30 जी० एम० अय्यर विलवी आयोग, खड III प्रश्न 18638

143 गोखल स्पीचेज पृ० 1190

144 भारत प्रकाश 31 अगस्त (आर एन० पी० बव, 2 सित० 1893), 29 सितबर 1893 का

इंडियन एसोसिएशन का ज्ञापन, पूर्वोक्त स्थल पृ० 37 1893 का पू० सा० स० का स्मरणपत्र, जे० पी० एस० एस० जनवरी 1894 (खंड XVI सं० 3) पृ० 65 बंगाली 10 फरवरी 1894 नौरोजी, स्पीचेज पृ० 143 एस० एन० बनर्जी रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 134 सी० पी० ए० पृ० 262 और एस० ऐंड डब्ल्यू परिशिष्ट पृ० 47 8 ए० सी० मजूमदार रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 143 गोखले स्पीचेज पृ० 1192 हिंदू 27 मार्च 1899

145 गोखले स्पीचेज पृ० 1192 तथा एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, पृ० 262 एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट पृ० 48 ए० सी० मजूमदार रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 143

146 इंडियन एसोसिएशन का ज्ञापन 29 सितंबर 1893 पूर्वोक्त स्थल, पृ० 37 नौरोजी स्पीचेज, पृ० 144, एस० एन० बनर्जी एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 47 8 दत्त इंग्लैंड ऐंड इंडिया प० 165

147 एस० एन० बैनर्जी, रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 134

148 इंडियन एसोसिएशन का ज्ञापन, 29 सितंबर 1893 पूर्वोक्त स्थल प० 35, बंगाली 13 नव० 1893, हितवादी 25 अगस्त साम प्रकाश 28 अगस्त (आर० एन० पी० बंग० 2 सितंबर 1893), सहचर 30 अगस्त (वही, 9 सित० 1893) समय 15 सितंबर (वही 25 सितंबर 1893) एस० एन० बनर्जी रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 135 एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट पृ० 48, ए० सी० मजूमदार रिप० आई० एन० सी० 1895 प०, 141 ए० सा० पी० नायडू, वही पृ० 143

149 स्पीचेज पृ० 1192

150 ज्ञान प्रकाश, 31 अगस्त (आर० एन० पी० बंब 2 सितंबर 1893) अखबारे आम, 30 सितंबर (आर० एन० पी० पी० 14 अक्तूबर 1893), एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 263, दत्त इंग्लैंड ऐंड इंडिया पृ० 165 और ई एच II प० 578

151 स्पीचेज, प० 462

152 उन्होंने आगे कहा बंबई के महान व्यक्तियो पंजाब के महान व्यक्तियो उत्तरी भारत के महान व्यक्तियो बंगाल के महान व्यक्तियो ! आओ हम एकजुट हो जाएं आओ हम सुदृढ पग उठाएं आओ हम निश्चय करें कि तब तक चैन नहीं लेंगे जब तक इस अन्याय के देवा को सीधे रास्ते पर नहीं ला देते और तब तक आराम से नहीं बैठेंगे जब तक कि उनकी आंखों से भ्रम के इस आवरण को हटा नहीं देते जिसे बनाए रखने की वे व्यर्थ चेष्टा करते हैं कि यह देश उनका है हमारा नहीं (रिप० आई० एन० सी 1893 प० 135)

153 आर० एन० पी० बंब 2 सितंबर 1893

154 ए० बी० पी० 22 अगस्त 1893 मराठा 27 अगस्त 1893 गुजराती 27 अगस्त, (आर० एन० पी० बंब 2 सितंबर 1893) बंगवासी 26 अगस्त (आर० एन० पी० बंग० 2 सितंबर 1893) बंगाली 18 नवंबर 1893 गोखले स्पीचेज पृ० 1192 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 200 दत्त इंग्लैंड ऐंड इंडिया, पृ० 165

155 नौरोजी पावर्टी पृ० 562, जे० ए० वाडिया पूर्वोद्धत, पृ० 96 दत्त स्पीचेज I प० 90 तथा देखिए पीछे पाद टिप्पणी 90

156 रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 128

157 देखिए अध्याय 1 और अध्याय 4

158 स्वर्ण विनिमय के पक्षधर एस० बी० मल्वा ने निम्न विनिमय के समर्थकों की उनकी

लिए भत्सना की उन्होने व्यग्य करते हुए टिप्पणी की चरखा मिलों के ये दलाल रुपये को रजत मूल्य 6 पस तक लाने का इच्छा क्या करते हैं ? यह तो मजदूरो को ठगना है क्या इन लोगों को सभ्य प्राणी कहा जा सकता है, जो एक ओर मजदूरो को लूटने पर आमादा हैं और दूसरी ओर किसानो के हितो की वकालत करते हैं (स्पीचज, आन इडियन इकोनामिक्स, पृ० 26)

159 बगाल का सहचर एकमात्र अपवाद था जिसने स्वर्णमान का निरतर समर्थन किया और निम्न तथा घटते बढते विनिमय का विरोध किया उसने व्यापारियो और विदेश व्यापार की सफलता को अपना सद्धांतिक विषय बनाया उदाहरणार्थ देखिए 15 जून 1892 का अक (आर० एन० पी० बग०, 22 जुलाई 1892,, 28 जून 1893 (वही, 8 जुलाई 1893), 21 फरवरी 1894 (वही 3 मार्च 1894) अखबारे आम 24 जून (आर० एन० पी० पी०, 9 जुलाई 1898)

160 ए० बी०पी० 29 मई 1892 दुर्भाग्यवश मुझे सदन की 1893 1894 की रपट प्राप्त नहा हो सकी परतु 1897 8 की रपट से सदन के चितन की प्रवृत्ति का दखा जा सकता है इस रपट म विनिमय की अनिश्चितता पर चिता प्रकट की गई और बाजार म पर्याप्त धन की और इस विनिमय के अनुपात को सुनिश्चित करने की माग की गई थी

161 पेपस रिलेटिंग टु चेंजस इन इडियन करेंसी सिस्टम (भारत सरकार, 1893), पृ० 60-4 84-90

162 वही प० 25 7 73 4 तथा देखिए वही, पृ० 89-90

163 एस० वी० भरूचा पूर्वोद्धत प० 2 9 11 5 22 32

164 एल० सी० पा० 1898 खड XXXVII प० 513

165 मराठा 25 सितबर 1892 तथा बगाली 19 फरवरी 1903

166 नौरोजी, पावर्टी प० 561 तथा पृ० 547 इडियन करेंसी कमेटी (1893) द्वारा जांच के समय भी उन्होने इसी प्रकार के विचार प्रकट किए इडियन करेंसी कमेटी साक्ष्य की कार्यवाही तथा परिशिष्ट, सी 7060 II प्रश्न 2393-7 इसी प्रकार जे० ए० वाडिया ने 1901 मे स्पष्ट रूप म कहा कि वे किसानो के प्रति निरतर अत्याचार की अपेक्षा व्यापारियो पर पडने वाले अस्थाई घाटे को ही ठीक समझेंग (पूर्वोद्धत पृ० 126) तथा मराठा 4 सितबर 1892

167 देखिए रिप० आई० एन० सी० 1901 1902 और 1904

168 1898 मे करेंसी कमेटी क समक्ष प्रश्न किए जाने पर आर० सी० दत्त को यह स्वीकार करन पर बाध्य होना पडा था दखिए दत्त स्पीचेज I पृ० 76-89

169 वकील और बोस पूर्वोद्धत प० 128 परिमल राय पूर्वोद्धत प० 179 193-4

170 स्टेटिस्टिकल ऐब्स्ट्रक्ट रिलेटिंग टु ब्रिटिश इडिया फ्राम 1891 92 टु 1900-01 सारणी 129 और 200 हमने 1895 6 वष को लिया है क्योकि स्टेटिस्टिकल एबस्ट्रक्ट म उपलब्ध होने वाली सांख्यिकी का यह प्रथम वष है

171 इडियन करेंसी कमेटी साक्ष्य का कार्यवाही और परिशिष्ट 1893 सी 7060 II परिशिष्ट II प० 244 और गाडगिल पूर्वोद्धत प० 71 2

172 चान्दी और रुपये के अवमूल्यन की अवधि म जहां पूव के दूर देशों म भारतीय सूती वस्त्रों के निर्यात कई गुना बढ गए, वहा इग्लड के सूती वस्त्रो के निर्यात म कोई वृद्धि नहीं हुई (इडियन करेंसी कमेटी साक्ष्य की कार्यवाही और परिशिष्ट 1893 सी 7060 II परिशिष्ट II पृ० 244)

173 डी० बारबूर एल० सी० पी० 1893 खड XXXII प० 274 5 वेस्टलैंड, एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII पृ० 181

174 एल० सी० पी०, 1893 खड XXXII पृ० 27५

175 वही

176 दादाभाई नौरोजी ने इसे 'शासन की विदेशीयता' कहा (इंडियन करेंसी कमेटी साक्ष्य की कार्यवाही और परिशिष्ट 1893 सी 706 II, प्रश्न 2346)

श्रम

इस पनपत उद्योग के दम तोडने की अपेक्षा इसके सचालक श्रमिकों की अपेक्षाकृत ऊची मृत्यु दर ही हमे रुचिकर है। एक बार हमारे उत्पादकों का भली प्रकार व्यवस्थित हो जाने दीजिए, उसके उपरात हम अपने श्रमिको की सुरक्षा अपने आप कर लगे।

—अमत बाजार पत्रिका 25 सितबर, 1875

हम इन अभागे वर्गों की निधनता, गदगी और निम्न स्थिति को देखने के इतन आदी हो गए है कि अब हमारा मन कठोर हो गया है। हमारी और हमारे शासकों की आत्मा उनकी दशा देखकर उद्विग्न ही नही होती। वस्तुत उनकी यह दुदशा शताब्दियों से राज्य और समाज के उच्च वर्गों द्वारा किए जा रहे उनके तिरस्कार और दमन का ही फल है।

—जी० सुब्रमण्य अय्यर

आधुनिक उद्योगो, खानो, परिवहन और बागान के विकास न 19वी शताब्दी के उत्तराध मे भारतीय समाज मे औद्योगिक श्रमिकवग के रूप मे एक सवथा नवीन वग को जन्म दिया। 1880 81 तक इनका आकार साधारण था। उस वष सूती कपडा मिलो मे 47,955 पटसन मिलो मे 35,235 और कोयला खानो मे 11,969 कमचारी कायरत थ। 1905 06 तक इस नए वग का स्वतत्र रूप मे उल्लेखनीय विस्तार हो गया था। उस वष सूती कपडा मिलो मे 212 720, पटसन मिलो मे 144,879 और कोयला खानो म 89, 995 कमचारी नियुक्त थे। इस प्रकार अकेले यत्रशक्ति से सचालित आधुनिक कारखानो म ही 700 000 कमचारी नियुक्त थे।[1]

आधुनिक औद्योगिकता और उसके साथ जुडी पूजीपति व्यवस्था के आने के साथ ही वे सब बुराइया आ पहुची जिन्होने पहले अगरेज श्रमिकों की पीढियो का जीवन विकृत किया था। आधुनिक उद्योगो म लगे हुए श्रमिको पुरुष, स्त्री और बच्चो की प्रारभिक पीढियो को भी आधुनिक मनुष्य के नान, क्रूर तथा घृणित शोषण का शिकार बनना पडा था। भारत मे फैक्टरी के जीवन का निकृष्टतम पक्ष यह था कि कमचारी को कारखानो म बहुत अधिक घटे काम करना पडता था क्योकि कारखानो मे काम करने के समय की कोई सीमा निश्चित नही थी। आरभ मे एक औसतन बारहमासी कारखाने मे शीत ऋतु

म दिन भर अर्थात 11½ घटे प्रतिदिन अथवा 80½ घटे प्रति सप्ताह काम होता था और ग्रीष्म ऋतु मे 14 घटे प्रतिदिन अथवा 98 घटे प्रति सप्ताह काम चलता था। लगभग 1887 के बाद जब कारखानो म बिजली की रोशनी प्रचलित हो गई तो बेचारे कारीगरो के प्रतिदिन काम के घटे बढकर विभिन्न इलाको म 12½ से 16 के बीच हो गए। इस सबध मे सबसे अधिक दुष्प्रभावित कलकत्ता के पटसन कारखानो के बुनकर थे, जिन बेचारो को 15 16 घटे प्रतिदिन काम करना पडता था।[3] इतने अधिक घटे काम करने के अतिरिक्त बेचारे श्रमिको को मिल मे आने और वहा से घर जाने मे ही दो तीन घटे लग जाते थे, इस तथ्य को ध्यान मे रखने पर उन गरीबा की शारीरिक दुदशा का सही अनुमान लगाया जा सकता है।

एक अन्य बात यह है कि काम के इन लबे घटा की थकावट और बारियत को दूर करने के लिए अवकाश काल की कोई नियमित और उपयोगी प्रणाली नही थी। कुछ मिलमालिक अवकाश की व्यवस्था करते थे परतु यह समय 15 30 मिनट का होने के कारण सवथा अपर्याप्त होता था। अन्य कारखान तो छुटटी करते ही नही थे। वे तो यह आशा करते थे कि कमचारी खाना खाते समय भी मशीनो की चौकसी करें।[4] नियमित विश्राम अथवा अवकाश के दिनो की भी कोई व्यवस्था नही थी, जिससे वे बेचारे निरतर कष्ट से निवृत्ति पा सकते। 1885 के बाबे फैक्टरी लेबर कमीशन ने टिप्पणी की कि भारत के कारखानो मे सारे वष मे दी जाने वाली छुटटिया औसतन पद्रह हैं जबकि इग्लड मे 10 अवकाश के अतिरिक्त 52 रविवारो को पूरी छुटटी और 52 शनिवारो की आधी छुटटी रहती है। इस प्रकार कुल मिलाकर वहा 88 दिनो का अवकाश रहता है।[5] इसका परिणाम यह हुआ कि श्रमिका की शारीरिक शक्ति पूर्णत क्षीण हो गई। वे बेचारे कभी कभी मशीनो से हटते ही और अपने साथिया के कारखाने के दरवाजे से बाहर निकल पाने से पहले ही फश पर गहरी नीद सो जाते थे।[6]

इससे भी बदतर बात यह थी कि 1891 तक महिलाओ को भी पुरषो के समान उतने ही लब घटो तक काम करना पडता था जबकि उनके लिए काम के लिए 11 घटे का अधिकतम समय निश्चित किया गया था। प्रारभिक भारतीय कारखानो मे काम करने वाले बच्चा के साथ भी कोई अच्छा व्यवहार नही किया जाता था। 1881 तक बच्चो को भी उतने अधिक घटो तक काम करना पडता था जितने घटे वयस्क व्यक्ति काम करते थे। इसका परिणाम यह होता था कि वे बेचारे थकावट स चूर चूर हाकर मशीनो के बीच गिर जाते थे।[7] 1881 के फक्टरी ऐक्ट ने बच्चो के लिए काम के घटा की अधिकतम सीमा 9 घटे प्रतिदिन निधारित की और बच्चे की न्यूनतम परिभाषा 7 और 12 वष के बीच की आयु से की। फिर भी बहुत सारे कारखानो मे बच्चे वयस्का के समान लबे घटा तक काम करते रह।[8] 1891 के फैक्टरी ऐक्ट ने बच्चो के काम के घटो म और अधिक कटौती करके उसकी अधिकतम सीमा 7 घटे प्रतिदिन निश्चित की और बच्चे की न्यूनतम और अधिकतम आयु सीमा भी 7 12 के स्थान पर क्रमश 9 14 तक बढा दी। परतु व्यवहार मे इन दोना प्रावधानो का प्राय उल्लघन किया जाता था।[9]

रई पीजन-दबाने जैसे छोटे और मौसमी कारखानो की स्थिति तो आरभ से

हृदयद्रावक तथा भयावह थी। 1885 के बारे फैक्टरी लेबर कमीशन ने निर्देश किया कि खानदेश के जिन और सपीडन राय मे अधिकाशत स्त्रिया और बच्चे ही लगे हुए थे और उनके काम के घटे सामान्य रूप से सवेरे 4 अथवा 5 बजे से साय 7, 8 अथवा 9 बजे तक होते थे और जब काम का दबाव बढ जाता था तो उन्हे 8 8 दिना तक निरतर दिन रात तब तक काम करते रहना पडता था जब तक कि उनके हाथ थककर और स्वास्थ्य बिगड कर काम करने से इनकार नही कर देते थे।[10] यह तथ्य प्रस्तुत एक साक्ष्य के लबे अवतरण मे उदधृत है, जिसमे इन उद्योगा मे प्रचलित स्थितियों का दुखद वर्णन किया गया है और साथ ही एक ओर भारी अभावा की दुखद कथा पर तथा दूसरी ओर क्रूर लोभवृति पर प्रकाश डाला गया है।[11] एक गवाह ने स्वीकार किया कि उसने अपनी आखो से देखा है कि ऊघती हुए मजदूर महिलाए यत्र की तरह जिनौने यत्र म रुई लिए जा रही है। एक मिनट व मजदूर महिलाए छाती से चिपके बच्चे को स्तन चुसवाती हैं और दूसरे ही मिनट मशीन मे रुई डालने लगती हैं।[1]

यह स्थिति इस रूप मे तो और भी *अधिक असह्य थी, इतने अधिक अमानवीय* और कमरतोड लबे घटा की मेहनत स मिलने वाली मजदूरी तुच्छ और किसी भी मानदड से पूर्णत अपर्याप्त थी। इस अवधि के अधिकाश वर्षों मे बबई के कपडा कारखानो मे काम करने वाले पुरुषा और स्त्रियो को मिलने वाला मासिक वेतन सात रुपये से बीस रुपये के बीच था।[13] रुई पीजन और सपीडन करने वाले छोटे कारखानो मे लगभग 18 घटे के दैनिक श्रम का पारिश्रमिक 3 4 आना था।[14] इसके अतिरिक्त, और यह तथ्य समान रूप स महत्वपूर्ण है, उद्योगा के विकास के और श्रम की उत्पादकता वृद्धि के बावजूद श्रमिको के वास्तविक वतन म कोई अतर नही आया।[15] श्रमिका के वेतन म उस समय भी कोई वृद्धि नही की गई जब उद्योग अतिशय सपन्न स्थिति मे थे, इतने अधिक सपन्न कि कई एक कारखान तो चार वर्षों म ही अपनी लागत पूजी चुकाने मे समर्थ हो गए थे।[16]

भारतीय राष्ट्रीय नेताओ ने, सामान्य रूप से भारतीय जनता के दुर्भाग्य से द्रवित आधुनिक औद्योगिक पूजीवाद की बहुमुखी बुराइया क प्रति तथा समाज के नए पनपते इस वर्ग के शोषण तथा विषम आर्थिक कष्टा के प्रति क्या दृष्टिकोण अपनाया? यह प्रश्न एक विशेष महत्त्व रखता है क्योकि इसके साथ दो विरोधी हित जुडे हुए हैं और वे दोना आशिक रूप से भारतीय होने के कारण राष्ट्रीय हैं। यह एक व्यापक परिमाण म निर्धनता का प्रत्यक्ष निदर्शन था जो पर्याप्त सीमा तक स्वय भारतीया के ही एक वर्ग की लोभ लालसा की उपज थी। उदीयमान राष्ट्रीय नेताओ की श्रम नीति के विस्तत विश्लेषण से पूर्व तीन महत्वपूर्ण तत्वो पर ध्यान देना आवश्यक है। प्रथम 19वी शताब्दी के अत तक भारतीय नेताओ की किसी स्वतत्र श्रमनीति का विकास नही हुआ था, वह अधिकाशत भारत सरकार द्वारा श्रमिको की कार्यस्थितिया के नियमन अथवा सुधार के लिए किए गए प्रयत्नो की प्रतिक्रिया के रूप मे ही प्रकट होती थी। द्वितीय, नेताओ के दृष्टिकोण के विश्लेषण के लिए कुछेक नेताओ मे श्रम समस्याओ के प्रति विचार-अभिव्यक्ति का अभाव इतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि सीधी व खुली टिप्पणी। अतिम, अधिकाश रूप मे आशिक अथवा पूर्णत भारतीय पूजीपतियो के स्वामित्ववाले आधुनिक

फुल्की हलचल स्वय श्रमिक वर्ग मे भी उभरती दिखाई दी। उदाहरणार्थ, राघव मनाराम ने, जो स्वय एक श्रमिक था और डी० चमनलाल के अनुसार प्रथम श्रमिक नेता के रूप में उदित हुआ था, फक्टरी कर्मचारियो की एक बैठक का आयोजन किया तथा उसने 578 श्रमिको द्वारा हस्ताक्षरित एक ज्ञापन सरकार को भेजा जिसम काम के दिन 9 घटे करने और सप्ताह म एक दिन के अवकाश की व्यवस्था की माग की गई थी।[5] बाद मे बानाजी रामचद्र फाकडे ने 634 श्रमिको द्वारा हस्ताक्षरित एक अन्य ज्ञापन प्रस्तुत किया था।[6]

भारत और इग्लैड म आदोलन के फलस्वरूप और उसी समय भारत म पूजीपति हितो द्वारा किए गए प्रबल विरोध को देखते हुए भारत सरकार ने 7 नवबर 1879 को भारत के गवनर जनरल की परिषद् म एक नरम प्रकृति का बिल प्रस्तुत किया। बहुत सारे परिवर्तनो द्वारा शक्ति क्षीण किए जाने के उपरात यह बिल 'इडियन फक्टरी एक्ट —1881' के रूप मे कानून बन गया। कानून का प्रमुख सबध श्रमिक बच्चो की समस्या से था। इसके अनुसार बच्चो को श्रमिक रूप मे रखने की न्यूनतम आयु सात वर्ष की निर्धारित की गई थी और 7-12 वर्ष के बच्चो को 9 घटे प्रतिदिन से अधिक समय काम करने की अनुमति नही थी। उन्हे प्रतिदिन इन 9 घटो से अलग एक घटे का अवकाश देने की तथा महीने मे चार दिनो के अवकाश देने की इस कानून मे व्यवस्था थी। एक्ट मे खतरनाक मशीनो के लिए समुचित बाडा बनाने और सबधित स्थानीय सरकार को दुर्घटनाओ की शीघ्र ही रपट करने की भी व्यवस्था थी। ये सारी बातें केवल उन कारखानो पर लागू होती थी जो मशीनी शक्ति का प्रयोग करते थे, सौ अथवा इससे अधिक श्रमिको को नियुक्त करते थे और वर्ष मे चार महीनों से अधिक समय तक चालू रहते थे। नील के कारखानो चाय और काफी बागानो को विशेष रूप से इस कानून की सीमा से बाहर रखा गया था।[7] इसके अतिरिक्त पुरुषों और महिलाओ के काम के घटों को भी नियमित नही किया गया था।

इस प्रकार 1881 का इडियन फैक्टरी ऐक्ट सवथा प्रारभिक और सभी व्यावहारिक दृष्टियो से साधारण ही था। इस तथ्य को स्वय सरकार ने अनेक शब्दो मे स्वीकार किया। स्थानापन्न सचिव ने स्थानीय सरकारो का एक परिपत्र जारी करते हुए लिखा इस एक्ट को बनाते समय मिलमालिको के, व्यापारिक सगठनो के तथा अन्य सस्थाओ के प्रतिनिधित्व को बडी ही सावधानी से महत्व देते हुए उनका ध्यान रखा गया है। इस उद्देश्य को लगातार ध्यान म रखकर इससे अधिक हलका कानून बनाना सभव ही नही था।[8]

फैक्टरी कानून बनाने के लिए प्रारभिक सघर्ष के प्रति और उसके फलस्वरूप 1881 का इडियन फक्टरी ऐक्ट बन जाने के प्रति राष्ट्रवादियो की प्रतिक्रिया लगभग पूर्ण रूप से बबई प्रात तक ही सीमित थी। इसे अनुचित भी नही माना जा सकता क्योंकि इस विषय से जुडा सारा मतभेद प्रमुख रूप से बबई के कपडा मिला से ही सबधित था तथा कुल मिलाकर कारखानो के कर्मचारियो की कार्यस्थिति म सुधार की दिशा म किए जा रहे प्रयत्नो की उपेक्षा करने वाला अथवा विरोधी था। उदाहरणार्थ यह उल्लेखनीय है कि बबई प्रान्त के अधिकाश राष्ट्रवादी नेता, दादाभाई नौरोजी, एम० जी० रानाडे

के० टी० तेलग और फिरोजशाह मेहता, तथा अन्य प्राता के राष्ट्रीय नेताओ ने उस समय अस्तित्व म आ रहे निम्नस्तरीय श्रमिक वग के सबध म अपने विचार प्रकट नही किए। बबई के अग्रणी जननेता वी० एन० मान्लिक ने, जो 1875 के बाबे फैक्टरी कमीशन के एक सदस्य भी थे, श्रमिको के हित मे कानून बनाने के विरुद्ध बहुमत के साथ अपना मत दिया। यदि बबई के 'मराठा' और 'इदु प्रकाश' और बगाल के 'बगाली' और 'अमृत बाजार पत्रिका' सपादकीय टिप्पणियो को उनके निजी विचार माना जाए अथवा इस प्रकार की टिप्पणियो के अभाव को ही उनके विचार के रूप मे देखा जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि इन पत्रो के ये सपादक क्रमश बबई के युवक नेता तिलक अगरकर और चदावरकर तथा बगाल के एस० एन०बैनर्जी तथा घोष बधु, एस० के० घोष तथा मोतीलाल घोष, श्रमिको के हिता के प्रति उदासीन ही नही थे अपितु विरोधी थे।

जहा तक भारतीय समाचारपत्रो का सबध है, केवल थोडे से ही, सही गिनती के तौर पर बबई के केवल चार, समाचारपत्रो ने ही श्रमिक हितो का समथन किया। इन पत्रो ने 1874 के ब्रिटिश फैक्टरी ऐक्ट के समानातर इडियन ऐक्ट बनाने की वकालत की। 'अखबारे सौदागर' ने 24 नवबर 1874 के अक मे लिखा मिलमालिक निधन श्रमिको की निधनता का दुरुपयोग करते है और उनसे निदयतापूवक काम लेते हैं। श्रमिकों को सप्ताह मे कम से कम एक दिन का अवकाश मिलना चाहिए और उनके काम के घटे प्रात 7 बजे से साय $5\frac{1}{2}$ बजे तक होने चाहिए।[9] 'लोकमित्र' ने 29 दिसबर 1878 के अक मे मिलमालिको की उसकी स्वार्थाधता के लिए निदा की और सरकार से श्रम के घटो मे समुचित कटौती करने का अनुरोध किया।[30] रास्त गोफ्तार ने 29 दिसबर 1878 के अक मे और 19 जनवरी के अक मे एस० एम० बगाली के बिल के प्रारूप को पूरा समथन दिया।[31] इस पत्र ने 7 दिसबर 1879 के तथा 7 नवबर 1880 के अका मे, 7 नवबर 1880 के इडियन स्पैक्टेटर के अक और 22 माच 1881 के अखबारे सौदागर के अक के साथ सरकार द्वारा प्रस्तुत फैक्टरी बिल का समथन किया।[32] परतु दया और मानवता के भावा से ही द्रवित इन थोडे से समाचारपत्रा मे भी थोडे समय के बाद शीघ्र इस क्षेत्र को छोडने की प्रवृत्ति दिखाई दी। 1879 मे ही लोकमित्र लेबर कानून का विरोधी बन बैठा।[33] इडियन स्पैक्टेटर 7 नवबर 1880 के अक मे पहले ही इन शब्दा मे विरोध प्रकट कर चुका था 'वयस्क श्रम के मामले म अनुचित हस्तक्षेप मिला की आतरिक आर्थिकता मे अनुचित हस्तक्षेप।[34] यहा तक कि अगले वष सरकारी बिल का समथन करते करते यह पत्र विरोधी खेमे मे चला गया।[35] 'अखबारे सौदागर' भी फैक्टरी कानून के समथन मे कभी कभी भटक जाता था।[36] केवल 'रास्त गोफ्तार' अत तक श्रमिका के उद्देश्य के प्रति सच्चा और ईमानदार बना रहा।[37] बगाल मे केवल एक समाचारपत्र 'सोमप्रकाश' ने 1881 के फैक्टरी ऐक्ट बनने का समथन किया।[38] सार्वजनिक सस्थाओ म पूना सावजनिक सभा अकेला सगठन था, जिसने मान्चेस्टर अवरोग लागू करने की तथा वयस्को के काम के घटे सीमित करने की वकालत की। यह दूसरी बात है कि इस सस्था ने भी 1879 के बिल के प्रारूप की उस समय आलोचना की।[39]

इसके विपरीत दूसरी ओर भारतीय समाचारपत्रो की प्रबल बहुसख्या न किसी

फैक्टरी कानून की आवश्यकता को बडी ही प्रचडता से नकार दिया और कानून की पुस्तक म इस विषय पर अवाछनीय किसी कानून को सम्मिलित करने की चेष्टा का चिल्लाकर विरोध किया तथा उसकी भर्त्सना की। 1875 म 'जामे जमशेद', बबई समाचार' और 'अरुणोदय' ने कावे फैक्टरी कमीशन की नियुक्ति का इस आधार पर विरोध किया कि इसकी कोई आवश्यकता ही न थी।[10] जब एस० एस० बगाली ने 1878 म फक्टरी बिल का प्रारूप सामने रखा तो बबई तथा अन्य प्रान्तो के राष्ट्रवादी समाचार पत्रो ने इस पत्र से असहमति प्रकट की।[11] ब्राह्मो समाज के क्रातिकारी और सुधारक वग के प्रवक्ता बगाल के 'ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन पत्र न भी 27 फरवरी 1879 का यही दृष्टिकोण प्रकट किया कि कारखाना कमचारियो के लिए सरक्षक कानून की सवथा ही कोई आवश्यकता नही है। अमत बाजार पत्रिका ने अपन 16 माच 1880 के अक म अपनी सामान्य उग्रता से बगाली के प्रयासो की खिल्ली उडाई।

नवबर 1879 मे विधान परिषद मे सरकारी फैक्टरी बिल के प्रस्तुत होने का, तद नुसार उस पर प्रवर समिति और परिषद के विचार विमश का और उसके फलस्वरूप 1881 म फक्टरी ऐक्ट के कानूनी रूप लेने का भारतीय प्रेस न चीख चिल्लाहट द्वारा अपनी असहमति लिखाकर विरोध ही किया। चोटी के राष्ट्रवादी तथा समाजसुधार के समथक पत्रो इदु प्रकाश' (22 माच 1880, 21 माच 1881 और 4 अगस्त 1884), गुजराती' (28 नवबर 1880 और 27 माच 1881), 'इडियन स्पैक्टेटर' (20 माच 1881) नेटिव ओपीनियन' (27 माच और 19 जून 1881) और ज्ञान प्रकाश (30 जून 1881) ने इसके प्रति विरोध प्रकट किया।[12] पूना सावजनिक सभा की सामायत सयमी त्रमासिक पत्रिका ने, जो उस समय बबई के देशभक्तो की अभिव्यक्ति का मच बनी हुई थी, घोषणा की 'फक्टरी श्रम को नियमित करने के लिए कानूनी कायवाही का लेशमात्र भी औचित्य नही।[13] उस समय बाल गगाधर तिलक द्वारा सपादित 'मराठा' ने 13 माच 1881 के अक मे इस कानून के विरुद्ध प्रचड विरोध प्रकट किया। बगाल के दो अग्रणी राष्ट्रवादी समाचारपत्रो अमत बाजार पत्रिका' और 'बगाली', न ब्राह्मो पब्लिक आपीनियन के समान इस कानून की भर्त्सना की।[14] इलाहाबाद के 'हिंदी प्रदीप' ने भी इसी प्रकार के भाव प्रकट किए।[15] कुल मिलाकर बबई और बगाल के अयान्य असख्य समाचारपत्र इस बिल और उसके अतिम रूप 1881 के इडियन फैक्टरी एक्ट, के विरुद्ध सामूहिक राग अलापन म उत्सुकतापूवक सम्मिलित हो गए।[16]

उस समय के आलोचको न फक्टरी कानून के विरुद्ध ऐसे एसे मजेदार और अनोखे तक प्रस्तुत किए कि जो अपने निष्कष मे आज के पाठक को सुनने म भले जगली और घृणित नही तो भद्दे अवश्य प्रतीत होंगे। उदाहरणाथ, फक्टरी कानून की अनावश्यकता को सिद्ध करन क लिए उनके द्वारा प्रस्तुत एक तक था स्वय श्रमिको की ओर से न तो कोई माग पश की गई है और न ही उनकी ओर से किसी प्रकार की शिकायत प्राप्त है। इन आलोचको के अनुसार श्रमिक तो नितात स्वच्छा से ही लबे समय तक काय करने को सहमत ह।[17] अमृत बाजार पत्रिका न 12 नवबर 1880 के अक म इस दृष्टिकोण को सक्षेप म इस प्रकार प्रस्तुत किया 'यदि श्रमिको पर कारखाना मे भारी अत्याचार

माता पिता पर भाररूप हो जाएग ।[56] जहा तक बच्चो का सबध था, इन आलोचकों के अनुसार इस ऐक्ट का निकृष्टतम परिणाम यह होगा कि बाल अपराधो की सख्या म तजी से वृद्धि हो जाएगी क्योकि फैक्टरी की नौकरी से हटाए हुए लडके या तो भीग मागने पर, या उधार मागन पर या चोरी करने पर मजबूर हो जाएगे ।[5]

फैक्टरी कानून के विरुद्ध राष्ट्रवादियो की प्रबलतम आपत्ति का आधार यह विश्वास था कि यह कानून लकाशायर के कारखानो के मुकाबले भारत के पनपते सूती वस्त्र उद्योग के उत्पादन व्यय मे वद्धि और उसके फलस्वरूप उसकी प्रतियोगिक सामर्थ्य मे ह्रास करके इस उद्योग के विकास को बाधित करेगा ।[58] कुछ राष्ट्रवादियो ने तो इसे विनाश के दैत्य का दरजा दे डाला । 13 मार्च 1881 के अक म 'मराठा' ने विलाप करते हुए लिखा 'भारत का शिशु उद्योग डूब गया है । कुछ एक भारतीय नेताओ ने तो खुले तौर पर दढता से यह स्वीकार किया कि औद्योगिक विकास की बडी भारी आवश्यकता दष्टिगोचर करते हुए कारखानो के मजदूरो के हितो का बलिदान भी करना पडे तो उसम किसी प्रकार का सकोच नही करना चाहिए । उदाहरणाथ, 'अमृत बाजार पत्रिका ने 2 सितबर 1875 के अक मे अपना मत प्रकट करते हुए लिखा इस पनपते उद्योग का गला घोटने की अपेक्षा कारखाने के कमचारियो की अपेक्षाकृत बढी हुई मृत्यु दर ही वाछनीय है । जब एक बार हमारे उत्पादन व्यवस्थित हो जाएगे तो हम इन श्रमिको की सुरक्षा का उपाय भी ढढ लेंगे ।[59] इसके साथ साथ यह भी कहा गया कि कमचारिया के दृष्टिकोण से भी यह कानून हानिप्रद है क्योकि इसका परिणाम साने का अडा दने वाली मुर्गी का मारना हागा । सूती वस्त्र उद्योग के विकास पर लगी किसी भी प्रकार की पाबदी का बदले मे यह फल होगा कि स्वय कमचारियो की आय के और उनकी आजीविका के साधन प्रभावित हागे ।[60]

कई एक भारतीय लेखको ने शातिपूवक चल रह निजी औद्योगिक उद्यम मे खतरे से भरे हुए राज्य के हस्तक्षेप की प्रवत्ति पर आपत्ति की ।[61] उनके अनुसार उपयुक्त ढग यह था कि स्वामी और सेवको के झगडो को आपसी सौहाद से ही सुलझा लिया जाए ।[6] भारतीय नेताओ ने दढतापूवक कहा कि यदि सरकार किसी भी स्थिति मे इस सबध मे कानून बनाने पर तुली हुई ही है तो यह कानन सारे ब्रिटिश भारत मे लागू होना चाहिए ताकि बबई प्रात के भारतीयो के स्वामित्ववाले उद्योगो के विरुद्ध अन्यान्य प्रातो के अगरेजो के स्वामित्ववाले उद्योगो को किसी प्रकार का लाभ न पहुच सके और दोनो मे किसी प्रकार का भेदभाव न हो ।[63] इसी प्रकार यूरोपियो के स्वामित्ववाले चाय और काफी बागान नील के कारखाना तथा इग्लड का कच्चे माल के निर्यात का सबधन करने वाले, कपास पीजने और धुनने वाले छोटे कारखानो को इस कानून की सीमा से बाहर रखने पर भी आपत्ति की गई । यह भेदभाव उस स्थिति म और भी अधिक अरुचिकर था जबकि रुई पिजने धुनने वाले छोटे कारखानो मे तथा चाय और नील के क्षेत्र मे काम करने वाला की स्थिति बबई के आधुनिक कपडा मिलो की कमचारियो की स्थिति से अधिक विषम थी । फलत यह कहा गया कि लोकसेवा पर तुली हुई सरकार को सहायता की अपेक्षा रखने वाले भारतीय उद्योगो की सावधानी के साथ देखभाल करनी चाहिए ।[64]

असतुष्ट थे ही, फिर यह एक्ट लकाशायर के उत्पादको को भी सतुष्ट न कर पाया क्योकि व भारत मे बढते हुए सूती वस्त्र उत्पादन तथा भारत मे ब्रिटिश वस्त्र के निरतर गिरते आयात के कारण घबराए हुए थे।

1882 मे बबई सरकार ने अगरेजी कारखाना के इस्पक्टर मीडे किग को बबई प्रात म कारखाना की कायप्रणाली की जाच पडताल के लिए निमत्रित किया। उसन कारखाना म बहुत सारी गलत बाता को प्रचलित पाया और वतमान कानून को अपर्याप्त घोषित किया।[69] उसने स्थिति मे सुधार के लिए कुछ सुझाव भी दिए। 23 मई 1884 को बबई सरकार ने सुझावो की व्यावहारिता के अध्ययन के लिए और समस्त विषय पर पूण विचार क लिए एक अन्य आयोग की नियुक्ति की। आयुक्तो ने, जिनम चार मिल मालिको के प्रतिनिधि थे — मूल कानून म सशोधन की सिफारिश की। उन्होने निम्न लिखित व्यवस्थाए जोडन का सुझाव दिया बच्चा के और स्त्रिया के काम के घटो की अधिकतम सीमा क्रमश 9½ और 11½ घट निर्धारित हो। उन्ह महीने म चार दिनो का अवकाश मिले। बच्चो की न्यूनतम और अधिकतम आयु क्रमश 9 और 14 वर्षों तक बढाई जाए।[70] भारत सरकार को आयोग का प्रतिवेदन कायवाही करने के लिए भजा गया परतु वह वतमान कानून म सामान्य सशोधन से सहमत नही थी अत उसने उस समय इस सबध मे आगे और कोई भी कायवाही नही की।[71]

परतु मामला यही रुक नही गया। एक बार फिर इग्लड म एक तीव्र आदोलन उठ खडा हुआ जिसकी माग थी कि भारत म कठोर इग्लिश फक्टरी कानून लागू किया जाए। ससद सदस्यो ने बार बार हाउस आफ कामस म और उसके बाहर इस विषय को दोहराया। वाणिज्य मडल को यह तथ्य जानकर भारी निराशा हुई थी कि भारत म कपास कर हटान पर भी भारत के सूती वस्त्र उद्योग के विकास म किसी प्रकार की कोई बाधा उपस्थित नही हुई। अत उन्होने राज्य सचिव स अनवरत रूप स माग की और उसके बदले मे राज्य सचिव ने भारत सरकार पर इस सबध म कायवाही करने के लिए निरतर दबाव डाला।

इस समय इस स्थिति म एक नया तत्व देखने म आया। इस समय न्याय और अधिकार के स्थान पर उपकार और मानवता की दुहाई देत हुए नितात दब स्वर म श्रमिक धीरे धीरे स्वय ही अपनी मागें पेश करने लगे। इसके साथ ही इन मागो का रूप सरकार स आगे आने और श्रमिको की सहायता करने की विनीत विनतियो का था। मजदूरो द्वारा अथवा मजदूरो की ओर स सचालित आदोलना के प्रेरणा स्रात एन० एम० लोखडे थे। उन्होने 1880 म 'दीन बधु' नाम से एक ऐंग्लो मराठी साप्ताहिक पत्र चलाया और कारखान क कमचारियो के हितो को ही उस पत्र का उद्देश्य बना दिया।[3] उन्हान नवबर 1884 म बबई के कपडा कारखानो के कमचारियो के दो सम्मेलनो का आयाजन किया जिनम कमचारियो न सवसम्मति स निम्नलिखित मागो के प्रस्ताव स्वीकार किए सभी कारखाना कमचारियो के लिए रविवार का अवकाश रहना चाहिए। सभी कम चारियो क काम क घटो की सीमा प्रात 6½ बजे स सूर्यास्त तक रहनी चाहिए। दोपहर को आधे घटे के अवकाश की व्यवस्था रहनी चाहिए। [illegible] श्रम का उपार्जित

वेतन अगले महीने की 15 तारीख को मिल जाना चाहिए। औद्योगिक दुर्घटनाओं की क्षतिपूर्ति की व्यवस्था होनी चाहिए। इन मांगों को 5500 श्रमिकों द्वारा हस्ताक्षरित एक ज्ञापन में सम्मिलित किया गया था और उस ज्ञापन को उस समय अपने को श्रमिक संघ के अध्यक्ष होने का दावा करने वाले लोखंडे ने अक्तूबर 1884 में बंबई फैक्टरी आयोग को भेजा था।[78] परवर्ती सात वर्षों में लोखंडे तथा अन्य महानुभाव सम्मेलनों और ज्ञापनों के द्वारा श्रमिकों की मांगों पर कानून बनाने के लिए सरकार पर बराबर दबाव डालते रहे।[5] लोखंडे के प्रयास को भारत में प्रबल श्रम आंदोलन का प्रारंभिक रूप मानना भ्रांतिमूलक होगा क्योंकि वास्तव में यह आंदोलन कदापि न था।[6] जैसा कि उनकी पत्रिका के शीर्षक के शब्दार्थ से ही घोषित है लोखंडे महोदय श्रमिकों के संगठक नेता नहीं थे, वह तो केवल श्रमिकों के हितैषी मित्र थे।[7] अत लोखंडे को न तो क्रांतिकारी नेता माना गया और न ही उन्हें किसी प्रकार सरकार द्वारा दंडित किया गया। जबकि नील उद्योग से संबंधित आंदोलन के आयोजकों तथा सहायकों को दंडित किया गया था उन्हें 1890 के फैक्टरी कमीशन का स्थानीय सदस्य नियुक्त कर दिया गया।

इस संबंध में यहां यह भी उल्लेखनीय है कि जब कभी भारत में फैक्टरी कानून जारी करने के लिए इंग्लैंड में आंदोलन छिड़ा भारतीय और ब्रिटिश उत्पादकों ने भारत में राज्य के हस्तक्षेप के विरुद्ध तत्काल प्रबल जवाबी आंदोलन छेड़ दिया। उनके द्वारा प्रस्थापित तर्क थे भारतीय श्रमिकों को किसी प्रकार के कानूनी संरक्षण की अपेक्षा नहीं। किसी भी प्रकार के नए कानून से देश के शिशु उद्योगों के क्षतिग्रस्त होने की ही संभावना है। अत इस प्रकार के नाजुक मामले में बाहरी लोगों को हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं।[78]

इस ओर से एक दबाव और उस ओर से दूसरे दबाव से आकुल-व्याकुल भारत सरकार ने अंतत 1881 के फैक्टरी ऐक्ट में संशोधन के लिए 31 जनवरी 1890 में लेजिस्लेटिव कौंसिल में एक बिल पेश किया।[79] संशोधन की व्यवस्थाएं इंडियन फैक्टरी कानून को इंग्लिश फैक्टरी कानूनों के समकक्ष बनाने में पर्याप्त नहीं थीं। इस अंतर ने एक बार पुन इंग्लैंड के दबाव डालने वालों को असंतुष्ट कर दिया और वे अधिक सख्त प्रावधानों के लिए पुन सघर्षरत हो गए।[80] मार्च 1890 में बर्लिन में हुए अंतर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलनों के निर्णयों से उनके आंदोलन को और प्रोत्साहन मिला।[81] फलत राज्य सचिव ने जिन्होंने पहले बिल के प्रारूप को स्वीकृति दी थी अब अपेक्षाकृत अधिक कठोर पग उठाने के लिए और एक अन्य आयोग को नियुक्त करने के लिए दबाव डाला।[82] भारत सरकार ने बंबई बंगाल उत्तर पश्चिमी प्रांतों और अवध के कारखानों में नियुक्त श्रमिकों की स्थितियों की जांच पड़ताल के लिए सितंबर 1890 में एक अन्य आयोग की नियुक्ति की।

कमीशन की सिफारिशें इस प्रकार थीं एक महिला श्रमिकों के दैनिक कार्यकाल की सीमा 11 घंटे निर्धारित की जाए। बच्चों के काम के समय की सीमा [illegible] घंटे प्रतिदिन कर दी जाए। सभी कर्मचारियों के लिए, [illegible] लिन किया गया था, एक दिन के साप्ताहिक अवकाश की [illegible]

उन रूई पीजने धुनने कातने के कारखाना म भी नही, जिनके बारे मे उन्होंने दबी जबान से स्वीकार किया कि वहा काम कभी कभी कठोर होता था।[100]

राष्ट्रवादी नताओ का यह वग तो विशेष रूप से ही वयस्क पुरुष श्रमिका के काम के घटो का सीमित करने के विरुद्ध था। इस वग ने यह मानने से ही इनकार कर दिया कि भारतीय श्रमिक काम से त्रस्त हुए है अथवा उन्हें अधिक लबे और कठोर घटो तक काम करना पडता है। इन नेताओ के अनुसार सतही तौर पर जो दिखाई देता है, व्यवहार म वास्तविक सत्य वह नहीं है। मराठा ने 20 दिसबर 1888 के अक मे लिखा कि विचारणीय तथ्य यह है कि भारतीय श्रमिक का मौज मजे मे काम करने का एक अपना ढग है। आप उस घटो लगातार काम पर लगाए रखिए फिर भी आपको यही देखने को मिलेगा कि वह अपने को काम म दबा अनुभव नही कर रहा। वह बीच बीच मे काम छोडकर बाहर जाने और आराम करने का अवसर निकाल ही लेगा।[101] 18 जनवरी 1889 के 'सुलभ समाचार' और 'कुशदाह' पत्रा के अनुसार तो भारतीय कारखाना के काम के घटे उष्णकटिबधीय देश के अनुकूल हैं और विदेशी साथी की अपेक्षा अधिक कठोर श्रमशील और सहनशील भारतीय श्रमिक की प्रकृति के भी सवथा अनुकूल है।[102] इसके अतिरिक्त जोर देकर यह कहा गया कि काम के अपेक्षाकृत थोडे घटे स्वय श्रमिका के ही हित म नही होग क्योकि इसे अपनाने का अथ उनके वेतन को नीचे लाना होगा।[103]

एक दिन के साप्ताहिक अवकाश की व्यवस्था का बहुत ही कम विरोध हुआ। इसका प्रमुख कारण, जैसाकि पहले बता चुके है, यह था कि मालिक लोग पहले ही जून 1890 मे इसे मान्यता दे चुके थे।[104]

महिला श्रमिको की नियुक्ति सबधी व्यवस्था के विरुद्ध राष्ट्रवादियो की आपत्ति सचमुच अत्यत आश्चयजनक थी। समाज सुधार, स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह तथा एज आफ कानसेंट बिल की आयु के प्रबल तथा उत्साही समथक 'इदु प्रकाश' ने इस सबध मे इस प्रकार अपना विचार प्रकट किया 'यह दुख की बात है कि सरकार ने भारतीय कारखाना मे महिलाओ की नियुक्ति के मामले म हस्तक्षेप करना उपयुक्त समझा। नई व्यवस्था के अनुसार उन्हे रात को काम देने पर प्रतिबध लगा दिया गया है तथा अनुमत काम के 11 घटा म उन्हे एक बहुत लबे समय तक विश्राम के लिए अनिवाय रूप से अवकाश की व्यवस्था की गई है।'[105] अधिक रूढिवादी 'मराठा' भी इन समाज सुधारको से पीछे नही रहा। उसने अपना मत प्रकट करते हुए 7 दिसबर 1890 को लिखा 'आयुक्ता ने अपने प्रतिवेदन मे यह कही भी नही लिखा कि काम के अप्रतिबाधित घटो के कारण भारतीय कारखाना म काम करने वाली महिला श्रमिका के स्वास्थ्य को किसी प्रकार की हानि पहुचती है अत हमारे विचार म सरकार को इस मामले मे हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था।' बाद मे जब माच 1892 मे यह समाचार मिला कि अहमदाबाद म महिला श्रमिका की छटनी की जा रही है तो राष्ट्रवादी समाचारपत्रो ने यह माग की कि फक्टरी ऐक्ट की महिलाओ के काम के घटो को सीमित करने वाली धारा को महिलाओ के हित की दृष्टि से स्थगित कर देना चाहिए।[106] परतु उनम से किसी एक भी समाचारपत्र ने मालिका को इस स्वाथपूण कायवाही को करने से निवृत्त होने के लिए

उनकी आलोचना करने अथवा उन्हे सलाह देने के रूप मे एक शब्द भी नही लिखा।

इसी प्रकार कारखानो मे नियुक्त किए जाने वाले बच्चो की न्यूनतम आयु बढाने और उनके काम के घटे घटाने की व्यवस्थाओ का भी विरोध इस आधार पर किया गया कि इसका परिणाम निर्धन श्रमिको की पारिवारिक आय म कटौती होगा।[107] 'सुरभि ओ पताका' ने 10 अप्रल 1891 के अक म शाब्दाकुल भाषा म लिखा कि इस व्यवस्था के पश्चात स्वस्थ लडकी लडके अपने विकलाग माता पिता की सहायता नही कर पाएगे।[108] एक बहुत पुराना तर्क, काम न करने वाले बच्चे अपराधी बन जाते ह, भी इस समय पुन दोहराया गया। भारत म समाज सुधार म अग्रणी हिंदू ने 16 सितबर 1891 के अक म लिखा 'हमारी कल की आशाए, श्रमिक बच्चे, या तो अपने माता पिता की सहायता के लिए श्रमकार्य म सलग्न रहगे, अथवा अपने खाली समय मे पुलिस और अपराध शाखा के अधिकारियो के लिए नए नए आविष्कार करेंगे। कारखाने तो अधिकाशत इन बच्चो को इस हानिप्रद मार्ग स बचाते हैं।[109]

राष्ट्रवादी नेताओ के उस वर्ग की यह निश्चित धारणा थी कि नए फक्टरी कानून का अतिम परिणाम श्रमिको की स्थिति मे किसी प्रकार का सुधार नही होगा प्रत्युत इसस भारत के विकासशील वस्त्र उद्योग का विनाश ही होगा।[110] यह भी एक मजे की बात है कि काग्रेस के मच स श्रमिक पक्ष की बात केवल एक बार उस समय उठाई गई जब 1895 म अपने अध्यक्षीय भाषण मे सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने काम के घटो पर प्रतिबध लगाने वाले और उत्पादन व्यय म वद्धि करने वाले फक्टरी कानून के प्रयोग के विरुद्ध चेतावनी दी। उन्होने यह भी निर्देश किया कि यहा तक कि इग्लड के अतिरिक्त जापान भी वस्त्र उद्योग के क्षेत्र म भारत का प्रबल प्रतिद्वद्वी है।[111] इसके अतिरिक्त राष्ट्रवादियो ने अनुभव किया कि यदि भारतीय उद्योग पगु हो गया तो इसस श्रमिक ही सबस अधिक घाटे मे रहगे क्योकि वे बेचारे आजीविका का एक महत्वपूर्ण साधन खो बैठेंगे। 10 जनवरी 1900 के अक म 'अमत बाजार पत्रिका' ने इस दृष्टिकोण को सक्षिप्त रूप म इस प्रकार प्रस्तुत किया 'कृपापूर्वक, निरपेक्ष भाव से श्रमिको के काम के घटे घटाने और उन्हे एक दिन का साप्ताहिक अवकाश देने की वकालत करने वाले परोपकारी लोग क्या मिलो के बद हो जाने पर इन श्रमिको का अपनी जेब से पालन पोषण करेंगे ?' भारत की आवश्यकता है अनाज की पर्याप्तता और उसके लिए भारतीय कुछ भी करेंगे। 16 घटे प्रतिदिन कार्य करना भी अधिक नही है।[112]

1881 के फैक्टरी कानून के समान ही 1891 मे फक्टरी कानून के लिए आदोलन की राष्ट्रवादियो द्वारा अस्वीकृति के पीछे उनका यह विश्वास काम कर रहा था कि यह सब कुचले हुए भारतीय श्रमिको की शुभकामना की भावना से प्रेरित न होकर लकाशायर की अपने प्रतिद्वद्वी भारत का गला घोटने की भावना से ही प्रेरित था।[113] बगाली ने अपने 27 अप्रल, 1889 के अक मे इस सचित्र रूप म प्रस्तुत करते हुए लिखा कि वस्तुत लकाशायर के उत्पादक और परोपकारी लोग भारत के प्रति ठीक उसी प्रकार की हितकामना की भावना रखते है जैसी एक जगली पशु मे अपने शिकार के प्रति होती है। वस्तुत श्रम कानून उस नीति की परपरा मे है जिसके अतर्गत पहले ही कपास पर

तक यह नहीं हो जाता, तब तक कानून की इस धारा को अस्थाई रूप से स्थगित रखा जाए।[134]

भारतीय नेताओं ने पहले की ही तरह यह भय प्रकट किया कि खान कानून खान उद्योग के विशेषत भारतीयों के स्वामित्ववाले भाग के विकास को नुकसान पहुचाएगा।[135] उन्होंने खुले तौर पर अपना मत प्रकट करते हुए कहा कि इसकी संरचना इग्लैंड के कायला उद्योग की सहायता के लिए की गई है।[136] सत्य यह है कि इस मामले मे इस दोष के लिए कोई ठोस आधार नहीं था।

राष्ट्रवादी नीति का आधार

अब तक हमने श्रमिकों के पक्ष मे कानूनी हस्तक्षेप के सदर्भ मे भारतीय कारखाना और खान उद्योगो मे नियुक्त श्रमिकों की अपनी समस्याओं के किसी न किसी पक्ष पर अपने विचार प्रकट करने वाले भारतीय राष्ट्रीय नेताओं के बहुत बड़े वर्ग के विरोधी रुख की समीक्षा की है। इसके साथ ही हमने यह भी देखा है कि श्रमिकों की साधारण मागो के प्रति भी थोड़े से राष्ट्रवादियो ने ही अपना समर्थन प्रकट किया है। हमने यह देखा कि यह विरोध न तो प्रचड था और न ही व्यापक। लकाशायर की भूमिका का उल्लेख आने पर ही उग्रता और व्यापकता आ जाती थी। अन्यथा यह विरोध एक प्रकार से उत्साहरहित ही था। इसी प्रकार श्रमिकों की मागो के प्रति समर्थन भी टूटे दिल से था और परिणाम-स्वरूप महत्वशून्य था। इन दोनो तथ्यो की पुष्टि भारत सरकार की गतिविधियो की मालिको के प्रति पक्षपातपूर्ण प्रवृत्ति मे तथा भारत सरकार द्वारा लाए गए बिलो अथवा कानूनो की मालिको की दृष्टि मे साधारण प्रवृत्ति से हो जाती है। बबई मिलमालिक सघ के 1891 के वर्ष के प्रतिवेदन से इस सत्य का समर्थन होता है। 1891 के फैक्टरी एक्ट का उद्धृत करते हुए प्रतिवेदन मे कहा गया है ये परिवर्तन सघ के सदस्यो द्वारा पहले से ही समर्थित दृष्टिकोणो के बाहर नहीं जाते। अत बिल पर विचार विमर्श करते समय किसी प्रकार का शत्रुतापूर्ण दृष्टिकोण ग्रहण करने की कोई आवश्यकता नहीं।[137] सुझाए गए अथवा कानून का रूप दिए गए अधिकाश उपायो की मालिको द्वारा स्वीकृति के तथ्य को समकालीन कई समाचारपत्रो ने भी अनुभव किया।[138] 1885 के बाद फैक्टरी कमीशन के जाच परिणामो के 1890 के फैक्टरी कमीशन की सिफारिशो के और 1890 के फैक्टरी अधिनियम के मालिको द्वारा किए गए अधिकृत समर्थन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि राष्ट्रवादियो द्वारा किया गया विरोध मालिको के प्रति वफादारी का एक विचित्र रूप है।[139]

भारतीय नेताओ द्वारा प्रस्तावित अथवा वास्तविक श्रम कानून का जो समर्थन अथवा विरोध हुआ उसमे कहकर अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि कारखानो तथा खानो के कर्मचारियो के अत्यत दलित वर्ग के प्रति इन नेताओ मे सक्रिय सहानुभूति का लगभग पूर्ण अभाव था। राष्ट्रवादी आर्थिक चिंतन के समर्थक किसी भी महानुभाव ने इस विषय मे लगभग कुछ भी नहीं कहा। भारतीय राजनीति मे न्यायमूर्ति के रूप मे विख्यात तथा समाजसुधारको मे अग्रगण्य रानाडे श्रमिक वर्ग के ... पूर्णत मौन थे।[140] भारतीयो

सबमे उन्हे निर्दोष नही ठहराया जा सकता । उनकी इस उपेक्षा का कारण यह भी हो सकता है कि उन्होने फैक्टरी कानून की प्रत्येक चेष्टा के पीछे या तो मान्चेस्टर का हाथ देखा, जो बहुत ही खुले तौर पर नजर नही आता था अथवा विदेशी प्रतियोगिता के खतरे को देखा । उन्होंने विकासशील श्रमिक वर्ग की वस्तुगत आवश्यकताओ और हितो की ओर ध्यान नही दिया । इस प्रकार वे औद्योगिक पूजीपति वर्ग के मुखिया बन गए अथवा कम से कम उनके हाथ म खेलते रहे । इसके अतिरिक्त यहा तक कि औद्योगिकता की समस्या को भी उन्होने पूर्णत और समग्रत मालिको की आख से ही देखा । भारतीय उद्योगो की प्रतियोगी स्थिति विदेशी प्रतियोगिता मे सुधार का भारतीय मालिको द्वारा कल्पना दृष्टि तथा अधिकाश भारतीय नेताओ द्वारा समर्थित उपाय था, उत्पादन व्यय को बनाए रखना और इसके लिए अपनाए जाने वाले साधन थे, थोडा वेतन और काम के लबे घटे आदि अथवा सक्षेप मे श्रमिको से कमरतोड काम लेना । वस्तुत भारतीय नेताओ ने अनकहे और परोक्षरूप से लकाशायर के इस आरोप को स्वीकार ही कर लिया कि श्रमिको का अत्यधिक शोषण भारतीय उद्योग का परोक्ष सरक्षण दे रहा था । भारतीय नेताओ को न तो यह सूझा कि लाभाश को घटाने से भारतीय उद्योग की प्रतियोगी स्थिति सुधर सकती है और न ही यह सूझा कि श्रमिको को प्रोत्साहन देने म अथवा अन्य किसी इस प्रकार के उपायो को अपनाने से औद्योगिक उत्पादकता सुधर सकती हैं।[114] वस्तुत इस अवधि मे भारतीय श्रमिक की उत्पादकता म वृद्धि इतनी द्रुत थी और भारतीय कारखाना को होने वाले लाभ इतने ऊचे थे[115] कि अगरेज प्रतिद्वद्वियो के साथ भारतीय उद्योग की प्रतियोगी स्थिति का थोडी सी सीमा म भी दुबल बनाए बिना ही श्रमिको की स्थिति म आसानी से सुधार किया जा सकता था । परतु कालावधि म तो भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने आधुनिक उद्योग के हितो के रूप में समग्रत पूजीपतियो के हितो पर ही ध्यान दिया ।

निस्सदेह हम यह नही कहना चाहते कि उस विशिष्ट एतिहासिक घडी मे और तत्कालीन राजनीतिक तथा आर्थिक परिस्थितियो मे भारतीय नेता कोई ऐसा पग उठाते अथवा उन्हे उठाना चाहिए था जो भारतीय समाज के उभरते दो नए वर्गों के बीच वर्ग सघर्ष पनपाता । अन्य किसी प्रयोजन से न सही, राजनीतिक उद्देश्य से तो निश्चित ही देश की राजनीतिक और आर्थिक मुक्ति के सघर्ष के लिए सभीदेशवासियो को सगठित करना न केवल लाभप्रद प्रत्युत आवश्यक भी था । यह एक स्वत सिद्ध सत्य है कि उस समय भारतीयो द्वारा अपनाया गया आदोलन सर्वाधिक महत्वपूर्ण काय था और किन्ही भी अन्य आधारो पर लोगों को विभाजित करना कदापि वाछनीय नही था । भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के दूसरे ही अधिवेशन मे दादाभाई नौरोजी ने इस सिद्धात की प्रस्थापना की कि काग्रेस, सभी देशवासियो के समान रूप से प्रत्यक्ष हित के विषयो तक ही अपने को सीमित रखे और समाजसुधारो की व्यवस्था तथा अन्य वर्गीय प्रश्नो को वर्गीय सस्थाओ के लिए छोड दे ।[116] परतु राष्ट्रीय सगठन के भीतर ही भीतर मतभेद, हितो म सघर्ष तथा यहा तक कि विवाद उठ सकते थे और उठे भी । उन विवादो को हटाने और सुलझाने म ही राष्ट्रवादी नेताओ द्वारा किए गए प्रयत्नो म उनका पक्षपात उभरा । मालिको और श्रमिको के

बीच विवाद खड़े होने पर राष्ट्रवादी नेताओं ने दोनो विवादाधीन दलो मे आपनी लेन-देन के आधार पर दोनो मे समझौते का कोई भी नुस्खा नही बनाया। वे या तो मौन रहे जिसका अर्थ अपेक्षाकृत अधिक सशक्त पक्ष की स्थिति का स्वीकृति के रूप मे समर्थन था अथवा उन्होंने व्यापक राष्ट्रीय हितो की वकालत की जिसका स्पष्ट अर्थ कारखाना और खाना के श्रमिकों के हितो की पूर्ण उपेक्षा था। औद्योगिक क्षेत्र म राष्ट्रीय आकाक्षाओ की पूर्ति अर्थात भारतीय उद्योग के विकास और उसकी सपन्नता का दृष्टिकोण अपनाने के फलस्वरूप श्रमिक वर्ग के हितो की बलि चढा दी गई। यहा यह उल्लेखनीय है कि भारतीय नेताओ ने श्रमिकहितो के विरुद्ध अन्यान्य विषयो मे अभिशाप माने जाने वाले ब्रिटिश पूजीपतियो और नौकरशाही के साथ सामान्य उद्देश्य अपनाने मे भी सकोच नही किया।

प्लाँटेशन लेबर ऐंड दि इनलैंड एमिग्रेशन ऐक्ट, 1882
(1882 का बागान श्रम तथा अतर्देशीय उत्प्रवास अधिनियम)

जहा तक ब्रिटिश स्वामित्ववाले बागानो मे नियुक्त भारतीय श्रमिको का सबध था, भारतीय राष्ट्रीय नेताओ का दृष्टिकोण ठीक विपरीत था। नेताओ की स्थिति म यह पूरी की पूरी तब्दीली चाय बागान मे नियुक्त सामान्यत असम कुली कहे जाने वाले हजारो श्रमिको के काय और जीवन के प्रति अपनाए गए उनके दृष्टिकोण मे जितनी स्पष्ट है, उतनी अन्यत्र कही नहीं। बागान श्रमिको की दुदशा की ओर भारतीय नेताओ ने हार्दिक सहानुभूति और पूरी तत्परता के साथ ध्यान दिया। उन्होंने क्रूर विदेशी पूजीपतियो की भर्त्सना की। असुरक्षित और बेजबान श्रमिको के दुर्भाग्य पर आसू बहाए और उत्सुकतापूर्वक उनके मामले की वकालत की। इस मामले म उन्होने राष्ट्रीय भावना का अच्छा प्रदर्शन किया तथा सामूहिक राष्ट्रीय अपमान के तथा क्षत विक्षत राष्ट्रीय गर्व के सुप्त भावो को जगाने के लिए तथा असख्य हृदयो मे राष्ट्रीयता की ज्योति जगाने के लिए कुलियो द्वारा अनुभूत दुर्भाग्य और लज्जाजनक अवहेलनाओ का सही उपयोग किया। स्थिति मे यह प्रत्यावर्तन पूरी सावधानी से उठाया गया पग था क्योकि इस मामले मे मालिक विदेशी थे। 1891 मे काग्रेस के सभापति पी० आनद चारलु ने 1901 मे लैजिस्लेटिव कौंसिल मे असम लेबर ऐंड इमिग्रेशन बिल पर अपने भाषण मे इस दृष्टिकोण को बडे ही विशद और सक्षिप्त रूप म इस प्रकार प्रकट किया है

> यदि मालिक और नौकर एक ही राष्ट्र के आवश्यक अग हो तो कदाचित इस प्रकार के कानून के लिए आग्रह की आवश्यकता नही क्योकि इस प्रकार की स्थिति मे भेद-भाव का अवकाश थोडा होता है और पारस्परिक भ्रातृत्व की भावना अपेक्षाकृत अधिक होती है। परतु जहा इस प्रकार के पारस्परिक सदभाव का [illegible] आदान प्रदान का वातावरण न हो, इतना ही नही प्रत्युत स्थिति सर्वथा [illegible] वहा एकपक्षीय प्रमादजन्य अन्यायपूर्ण प्रवृत्तियो के निवारण के लिए तथा समझौतो के लिए इस प्रकार के कानून की एक प्रकार से अनिवार्य [illegible] जाती है।[147]

राष्ट्रीय नेताओं के निर्णय को प्रभावित करने वाला दूसरा तत्व यह था कि असम के चाय बागान में श्रमिक इकरारनामे द्वारा अनुबंधित थे और चाय की स्थिति सर्वथा अहितकर थी।

चाय उद्योग का भारत में वास्तविक प्रारंभ 1851 में कहा जा सकता है। इसके उपरांत इसने तीव्र गति से विकास किया। हमारे अध्ययन की अवधि में अधिकांश चाय बागान असम में स्थित थे। 1903 में इस उद्योग में 479,000 स्थाई और 93,000 अस्थाई श्रमिक कार्यरत थे।[148] असम की जनसंख्या विरल होने के कारण और चाय बागान के प्राय निर्जन पहाड़ी ढलानों पर अवस्थित होने के कारण बंगाल तथा अन्यान्य प्रांतों में अत्यधिक आवश्यकता के अनुरूप विपुल संख्या में लोगों को मंगाना पड़ता था परंतु प्रति वर्ष हजारों श्रमिकों को अपने घरों से बहुत दूर अस्वस्थ वातावरणवाली तथा विचित्र रोगों से दूषित धरती पर लाना आर्थिक और अन्यान्य प्रलोभनों की व्यवस्था की अपेक्षा करता था और असम के चाय बागान के मालिक यह सब करने को प्रस्तुत नहीं थे। इसके बदले उन्होंने छल-कपट और जोर-जबरदस्ती का मार्ग ग्रहण किया। उन्होंने सरकार को दंडनीय कानून पास करके इस अपवित्र पाप कर्म में उनकी सहायता और सेवा करने के लिए मना लिया।[149] बस यहीं से असम के चाय बागान श्रमिकों के दुखों और दुर्भाग्य की कहानी आरंभ होती है। उन्हें यह जानकर घोर दुख हुआ कि विदेशी पूंजीपतियों द्वारा देश के आर्थिक विकास का परिणाम यह निकल रहा है कि उनको आजीविका के नए साधनों की सृष्टि उन्हें परंपरागत ग्रामीण दरिद्रता की अवस्था से निकाल कर इकरारनामे से अनुबंधित रूप में शोषण और दुर्भाग्य की स्थिति में डाल रही है।

बंगाल के 1863 के और 1865, 1870 और 1873 में संशोधित 'ट्रांसपोर्ट आफ नेटिव लेबरर्स ऐक्ट' (संख्या 3) की व्यवस्थाओं के अंतर्गत असम के चाय बागान के लिए श्रमिकों की भरती वर्षों तक अधिकांशतः ठेकेदारों द्वारा की जाती रही। यद्यपि कानून से अनुबंधित श्रमिकों के संरक्षण की अपेक्षा की गई थी क्योंकि इसमें लायसेंसधारी भरती की व्यवस्था थी परंतु 1865 में यथा संशोधित अधिनियम से वास्तव में मालिकों को ही लाभ पहुंचा। इसने श्रमिकों के न केवल काम छोड़ने प्रत्युत काम करने में सुस्ती को भी दंडनीय अपराध बना दिया और साथ ही साथ मालिकों को नियुक्तिवाले क्षेत्र के जिले की सीमाओं के अंतर्गत भगोड़े नौकरों को गिरफ्तार करने का अधिकार दे दिया। नौकरों को सीधे और संकरे मार्ग पर चलते रहने के लिए मालिकों ने पहले से बने अधिनियम अर्थात 1859 के अधिनियम संख्या XIII का भी उपयोग किया जिसके अनुसार काम करने के आश्वासन पर अग्रिम रुपया नि[illegible] श्रमिक द्वारा अनुबंध भंग काम करने से इनकार के लिए [illegible] करना, [illegible] दंडनीय अपराध और अर्थदंड का विषय था। मा[illegible] दंड [illegible] अधिनियम XLV [illegible] की धारा 490 और 492 [illegible] श्रमिक का [illegible] सर्व पर कार्यस्थल पर [illegible] पहुंच कर अनुबंध [illegible] [illegible] नों की

कानूनों के अपर्याप्त सिद्ध हो जाने पर भारत सरकार ने 1881 में अखिल भारतीय स्तर पर सारे प्रश्न की जांच के लिए एक आयोग नियुक्त किया। कमीशन ने प्रतिवेदन में कहा कि वर्तमान कानूनों में श्रमिकों की सुस्ती और कामचोरी को रोकने की पर्याप्त व्यवस्था नहीं है। यहां तक कि इन कानूनों से अनुबंध का पालन कराना ही कठिन हो रहा है और बागान के सरदारों ने श्रमिकों की भरती पर अनावश्यक पाबंदियां लगा रखी हैं।[150] इन सिफारिशों के अनुसार ही 1882 का 'इनलैंड एमिग्रेशन एक्ट' पास किया गया जिसने पूर्ववर्ती सभी कानूनों को पीछे छोड़ दिया। यहां यह उल्लेखनीय है कि इसने 1859 के अधिनियम XIII को रद्द नहीं किया। 1882 के इस अधिनियम ने भरती करने वाले अभिकर्ताओं को कानूनी मान्यता दे दी और अनुबंध लेखन को अत्यंत सरल बना दिया। इसने प्रथम तीन वर्षों में पुरुषों और स्त्रियों का न्यूनतम मासिक वेतन क्रमशः 5 रुपये और 4 रुपये तथा चौथे और पांचवें वर्ष में क्रमशः 6 रुपये और 5 रुपये निर्धारित किया। इसमें मालिक या दंडाधिकारी के निवास स्थान से पांच मील की सीमा के भीतर जहां मजिस्ट्रेट न हो, पकड़े गए अनुबंधित भगोड़े कर्मचारी को गिरफ्तारी के आदेशपत्र के बिना ही गिरफ्तार करने का अधिकार देने की व्यवस्था थी।[151]

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं विशेषतः बंगालियों ने असम के कुलियों की सचमुच शोचनीय स्थिति और सरकार के अनुबंधित श्रम पद्धति को कानूनी मान्यता और समर्थन देने के प्रयास के विरुद्ध अपनी तीखी प्रतिक्रिया प्रकट की। इस पद्धति के दोषों पर बंगाली आदि भाषाओं के समाचारपत्र पहले से ही, 1870 से लिखते आ रहे थे। इसके साथ ही असम के श्रमिकों के साथ किए जाने वाले निंदनीय व्यवहार की लोमहर्षक कहानियां लिखकर ये पत्र पाठकों के हृदय में सुप्त राष्ट्रीयता को जगा रहे थे।[152] लगभग 1880 के आसपास ब्रह्म समाज के साधारण प्रचारक रामकुमार विद्यारत्न ने 'कुली कहानी' नामक एक पुस्तक लिखी। इसमें असम के कुलियों की दयनीय दशा पर प्रकाश डाला गया था। पुस्तक शीघ्र ही लोकप्रिय बन गई।[153]

जब 1881 में इंडियन एमिग्रेशन बिल प्रस्तुत किया गया और 1882 में पारित किया गया, उस समय भारतीय समाचारपत्रों ने कुली को बागान मालिक का गुलाम बनाने के लिए तथा उसे पूर्णतः मालिक की दया पर छोड़ने के लिए बड़े ही आवेशपूर्वक भर्त्सना की।[154] उदाहरण के लिए 17 दिसंबर 1881 के अंक में *'बंगाली'* ने लिखा कि इस बिल के द्वारा मानवीय स्वतंत्रता के पवित्र अधिकार का उल्लंघन होता है। पत्र ने घोषणा की कि यह कानून अपनी मूल प्रकृति में दास कानून कहा जा सकता है। ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन ने अपने 29 दिसंबर 1881 के अंक में अपना मत प्रकट करते हुए लिखा कि कुली की स्थिति चल संपत्ति से किसी भी रूप में बेहतर नहीं है और यह कानून उनके प्रति ऐसा ही व्यवहार करता है। दूर प्रदेश बंबई से 'इंडियन स्पेक्टेटर' ने इस कानून की निंदा करते हुए लिखा कि इस कानून में बंगाल के दुखी कुली को कानूनी तौर पर गुलाम बनाने से कम कुछ भी तो नहीं। इस पत्र ने टिप्पणी करते हुए लिखा 'आज तक कभी श्रम को पूर्णतः पूंजी की दयादृष्टि का अधीन नहीं बनाया गया।[155] बंगाल के युवा राष्ट्रवादियों की उदीयमान पीढ़ी के प्रवक्ता भारतीय संघ (इंडियन एसोसिएशन) ने भारत सरकार

को एक विस्तत ज्ञापन प्रस्तुत किया जिसमे बिल की कुछ धाराओ, विशेषत धारा सख्या 170 और 172 की आलोचना की गई। ज्ञापन म अनुरोध किया गया कि इस प्रकार स विवश करने के बदले माग और पूर्ति के सिद्धात को काम करन दिया जाए।[156] अधिकाश आलोचको ने यह भी आरोप लगाया कि यह कानून एकातत बागान मालिको क हितो के लिए और उनके दबाव मे ही बनाया जा रहा है।[15]

अगले कुछ वर्षो मे कानून के अमल म आने पर आलोचको के गभीरतम भय तथा उनकी अत्यत अधकारमय भविष्यवाणिया सत्य सिद्ध हुइ। अगले दस वर्षो म राष्ट्रीय नेताओ ने इस कानून की निरतर और तीखी आलोचना की तथा असम के चाय बागान के श्रमिको की दयनीय दशा पर देश भर मे आसू बहाए। सारे देश भर म 'एमिग्रेशन एक्ट' की प्रसिद्धि 'दास कानून' के रूप मे ही हुई।[158] भारतीय समाचारपत्रो द्वारा प्राय प्रकाशित प्रलोभन देन, गुप्त रूप से भागने, पीडा देने, बलात्कार और यहा तक कि हत्या करने आदि की लोमहषक कहानिया सुन सुनकर भारत के लोगो के और विशेषकर बगाल के लोगो के हृदय बहुत ही व्याकुल हो गए थे।

चाय बागान के श्रमिको के भाग्य मे सदैव गहरी रुचि लेने वाली इडियन एसासिएशन ने 1886 मे एक बार पुन इस विषय को उठाया। उस समय इस सस्था ने अपने सहायक सचिव द्वारकानाथ गागुली को मौके पर जाच पडताल के लिए प्रतिनियुक्त किया। गागुली महादय ने 'बगाली' और 'सजीवनी' के पृष्ठो मे श्रमिको की लगभग गुलामी की स्थिति और उन्हे सताने की गुप्त तथा मर्मांतक कथाओ के रूप मे अपने अनुभवो का वणन किया।[159] यह सस्था असम के कुलियो की स्थिति की ओर ध्यान देने के लिए वायसराय स पहल ही 1886 मे अनुरोध कर चुकी थी। अब सस्था ने अपने सहायक सचिव के अनुभवो और न्यायालयो द्वारा दिए गए कितने ही निणयो को उद्धत करते हुए एक विस्तत ज्ञापन 5 मई 1888 का भारत सरकार के पास भेजा।[160] परवर्ती वर्षों मे एसोसिएशन इस मामल म रुचि लेती रही और भारत मे तथा इग्लड म सबधित अधिकारियो के पास ज्ञापन भेजता रही।[161]

समय के साथ साथ असम के कुलियो के मामले को भी भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने उठाया परतु आश्चयजनक बात यह है कि काग्रेस म इस प्रश्न को उठाने के प्रारभिक प्रयत्न निष्फल सिद्ध हुए। 1887 की मद्रास काग्रेस म जब बगाल के प्रतिनिधियो न काग्रेस क नताओ से असम के कुलियो के प्रति अमानवीय व्यवहार को कानूनी मान्यता देने वाल एक्ट की निंदा करने का अनुरोध किया तो उनकी प्राथना को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि किसी आदेश विशेष के किसी विषय पर अखिल भारतीय काग्रेस म विचार विमर्श नही किया जा सकता।[16] अगले वष इलाहाबाद के अधिवेशन मे किया गया प्रयास पुन निरथक सिद्ध हुआ।[163] परतु यह लोकप्रिय भावना सारे ही देश म क्रमश बडा ही व्यापक रूप ग्रहण करती जा रही थी अत रूढिवादी काग्रेसी नताओ को देर सबर इसके आगे झुकना ही पडा। काग्रस न 1896 म 'उत्प्रवास अधिनियम' हटान की वकालत करते हुए इस विषय का एक प्रस्ताव पारित करके चाय बागान के श्रमिको के साथ सबध जोड लिया।[164] प्रस्ताव के प्रस्तोता जागेंद्रचद्र घोष और समथक विपिनचद्र पाल, दोा

ने चाय बागान में व्याप्त लगभग गुलामी जैसी दुर्दशा की ओर प्रतिनिधियों का ध्यान आकृष्ट किया।[165] कांग्रेस के आगामी चार अधिवेशनों में प्रस्ताव के महत्व को दोहराया गया।[166]

इस अवधि में 1887 के कांग्रेस अधिवेशन में अपने अनुभवों से ही कुंठित बंगाल के नेताओं ने 25 अक्तूबर 1888 को प्रथम बंगाल प्रांतीय सम्मेलन का आयोजन किया। इसका प्रमुख उद्देश्य असम के कुलियों के प्रश्न पर उग्र विचार प्रकट करना था। प्रांतीय सम्मेलन अत्यंत सफल हुआ और संयोजकों ने इसे वार्षिक आयोजन का रूप दे दिया। इसने सदैव असम के कुलियों की समस्याओं के प्रति उत्कट और सक्रिय रुचि दिखाई।[167]

आर० सी० दत्त ने अपनी पुस्तक 'इकानामिक हिस्ट्री आफ इण्डिया' के माध्यम से इस भारतीय चाय उद्योग पर अमिट कलंक बताते हुए उसकी सामान्य निंदा में अपना सशक्त स्वर मुखरित किया तथा अधम दासता की इस प्रणाली को समाप्त करने की मांग की।[168]

हां, यह अवश्य है कि एमिग्रेशन एक्ट तथा चाय बागों में व्याप्त भयंकर दुर्व्यवहारों के विरुद्ध आंदोलन में प्रमुख भूमिका राष्ट्रवादी प्रेस ने ही निभाई। भारतीय समाचार-पत्रों ने कुलियों के साथ पूरी सहानुभूति तथा समान मुखरता दिखाते हुए वर्षों तक उनकी दुर्दशा के विरुद्ध अपनी प्रतिक्रिया में अपने ज्ञान के [illegible] का पूरा प्रयोग करते हुए तथा अपने क्रोध और दुःख की अभिव्यक्ति देते हुए विरोध प्रकट किया। उदाहरणार्थ, इंडियन एसोसिएशन ने 1888 में भारत सरकार को जो ज्ञापन दिया, [illegible] सभी समाचारपत्रों ने उसका पूर्ण रूप में समर्थन किया।[169] इस संदर्भ में यह [illegible] है कि इस विषय में विशेष रुचि लेने वाले पत्र थे, सुरेंद्रनाथ बैनर्जी द्वारा संपादित 'बंगाली' और कृष्णकुमार मित्र द्वारा संपादित 'संजीवनी'।[170]

राष्ट्रवादी समाचारपत्रों तथा लेखकों ने सरकारी और परिवहन व्यवस्था को अपने प्रहार का विशेष लक्ष्य बनाया। उन्होंने विस्तार में इस बात का विवरण प्रस्तुत किया कि किस प्रकार कानून का उल्लंघन करके [illegible] और भोले भाले मनुष्यों को [illegible] विवश किया जा रहा है और उनका अपहरण किया जा रहा है तथा किस प्रकार धूर्त और सिद्धांतहीन भर्ती करने वालों द्वारा [illegible] और [illegible] प्रतिज्ञाओं द्वारा उन्हें छलकर और फुसलाकर उनकी स्वतंत्रता का अपहरण किया जा रहा है।[171] [illegible] की शिकायत थी कि एक बार जब कुली चाय बाग में पहुंच जाता था [illegible] घिनौना व्यवहार करता था और उस वस्तु की [illegible] में माना जाता था।[172] उसे बलपूर्वक और गैरकानूनी ढंग से बागों में रखा जाता था और यदि वह बचाव का उपाय करता था तो उसे गिरफ्तार कर लिया जाता था और [illegible] के अंतर्गत दंड दिया जाता था।[173] द्वारकानाथ गांगुली ने 1886 में प्रतिवेदन किया कि उन्होंने [illegible] कोठरियों में असम्मत श्रमिकों को गैरकानूनी ढंग से बंद करके रखे हुए देखा है। [illegible] यह भी पाया कि चाय बागों में शारीरिक यंत्रणा एक [illegible]।[174] भारतीय राजनेताओं ने कुलियों के प्रति हृदयद्रावक [illegible] वर्णन किया।[175] राष्ट्रवादी समाचारपत्रों तथा [illegible]

चढाकर इन लाभो की उपलब्धि वाछनीय नही थी।[184] अन्य, अपेक्षाकृत अधिक उग्र तथा क्षुब्ध वर्ग ने तो अनुभव किया कि इस प्रकार का आर्थिक विकास सर्वथा अवाछनीय है। उन्होने स्पष्ट शब्दो म कहा कि वे कुलियो का दासा के रूप मे बचने की शोचनीय प्रथा को बनाए रखने के बदले चाय उद्योग का नष्ट-भ्रष्ट होना तथा असम का जगली पशुओ का निवास बनना ही पसद करेंगे।[185]

उपाय

यह शोचनीय स्थिति अधिक समय तक नही चलन दी जा सकती थी यहा तक कि अन्यथा भी यह स्थिति एक लबे समय तक जारी नही रह सकती थी। 1887 मे ही सजीवनी ने चेतावनी की घटी बजा दी

> भारत के अगरेज शासको! यह भयकर दमन बद करो। अगरेज व्यापारियो! धन के लोभ मे मानव पर किए जा रहे अत्याचार की ओर से अपनी आखें बन्द मत करो। क्योंकि इस तरह की स्थिति का लबे समय तक चलत रहना असभव है। तुम्हारे जैसे अनेक शक्तिशाली राष्ट्रो को भगवान के न्याय ने दबोचा और दबाया है। अपनी यह उन्मादी प्रकृति को छोड दो क्योकि तुम्हे निश्चित रूप से अपनी करनी का हिसाब देना पडेगा। इस देश से अपनी इस पैशाचिक प्रथा के प्रत्येक चिह्न को मिटाने की चेष्टा करो।[186]

भारतीय नेताओ ने इस सबध मे सर्वप्रथम उपाय के रूप मे इस बात पर बल दिया कि भारत सरकार कुलियो की वास्तविक स्थिति को, 1859 के श्रमिक अनुबध भग अधिनियम (वर्कमेंस ब्रीच आफ कान्ट्रैक्ट ऐक्ट) के प्रवतन के यातनाप्रद प्रभावो का, और 1882 के अतर्देशीय उत्प्रवास अधिनियम (इनलैड एमिग्रेशन ऐक्ट) के प्रवतन के दुष्परिणामो को अनुभव करे और इसके लिए उन्हान भारत सरकार पर जाच पडताल करने के लिए एक स्वतन्त्र आयोग की नियुक्ति हेतु दबाव डाला।[187] द्वितीय उनका सुझाव यह था कि शक्तिशाली और समृद्ध बागान मालिका के मुकाबले श्रमिक निरीह तथा असहाय है अत इस तथ्य को देखते हुए सरकार को स्वय उन्हे यातनाओ से मुक्ति दिलाने के उपाय करने चाहिए।[188] इस प्रकार का एक उपाय यह होना चाहिए कि अपने श्रमिका के साथ दुर्व्यवहार करने वाले चाय बागान के प्रबधको को तत्काल और तदनुरूप समुचित दड दिया जाए।[189] परतु भारतीयो की सर्वाधिक सर्वमान्य और लोकप्रिय माग दडनीय कानूना के निवर्तन की[190] और स्वतन्त्र उत्प्रवास को लागू करने की थी ताकि चाय बागान का भारत के बहुत बडे श्रम बाजार से माग और पूर्ति के सामान्य सिद्धात के आधार पर श्रमिक मिल सकें।[191]

भारतीय नेता सरकार से असम के कुलिया को इस दुर्भाग्य से मुक्त करने की अनुनय विनय करते समय यह तथ्य नही भूले कि एक विदेशी सरकार द्वारा यूरोपीय बागान मालिको के विरुद्ध कोई पग उठाए जाने की सभावना नही थी।[19] इस विवेक एव सतर्कता के कारण ही असम कुलिया के प्रगाढ मित्र 'सजीवनी' ने अपनी सहायता आप ही करने का आह्वान किया। इस पत्र ने 14 अगस्त 1886 के सपादकीय मे भारतीया की मर्दानगी को

बलात्कार और पुरुषो की हत्याओ की कहानिया जनता मे प्रचारित की। उन्होने कुलियो अथवा कुलियो के शुभचिंतको द्वारा न्यायालयो मे मालिको के विरुद्ध मामला ले जाने पर न्यायालयो द्वारा मालिको के पक्ष मे विशुद्ध रूप मे और अधिकाशत न्याय का गला घोटने की कहानिया भी प्रकाशित की।[176]

भारतीय नेताओ का तर्कसगत कथन था कि चाय बागो मे मृत्यु की ऊची दर सचमुच वहा की वास्तविक स्थिति का सूचक तत्व है।[177] उनकी एक शिकायत यह थी कि काम की स्थितियो और प्रकृति के अरुचिकर होने पर भी चाय बागान के श्रमिकों का वेतन बहुत कम था।[178] उन्होने घोषित किया कि दडनीय कानून बनाने का मुख्य प्रयोजन वस्तुत कुलियो का वेतन कम रखना और इन नीचे वेतनो पर कुलियो को काम करने के लिए विवश करना था। यह निश्चित है कि सामान्यत वे इतने कम वेतन पर काम करने को प्रस्तुत नही होते। इस प्रकार दूसरे शब्दो मे इस कानून का उद्देश्य कुलियो को ठगना था।[179] कुछ भारतीयो ने यह भी निर्देश किया कि भारत मे अथवा असम मे श्रमिको की कमी वास्तविक समस्या नही थी। ऊचे वेतनो मे आवश्यकता के अनुरूप श्रमिक उपलब्ध हो सकते थे।[180] राष्ट्रवादियो ने इस मान्यता का जोरदार खडन किया कि भारतीय श्रमिको मे काम से जी चुराने की जन्मजात प्रवृत्ति है। वह अपनी धरती पर भूखा मर जाता है परतु दूसरी धरती पर जाकर जीने के लिए भी कठोर श्रम नही करता। इस प्रवृत्ति पर काबू पाने के लिए ही दडनीय कानूनो की अपेक्षा है। राष्ट्रवादियो के अनुसार सत्य यह था कि यूरोपीय उपनिवेशवादी भारतीयो से अपने दासो के रूप से काम लेना चाहते है और यदि भारतीय काम करने से इनकार करते है तो उन्हे सुस्त और निकम्मा कहकर गालिया दी जाती है, उन्हे 'श्रम की महत्ता' से अपरिचित बताया जाता है तथा अनेक साधनो के प्रयोग द्वारा उन्हे काम करने के लिए विवश किया जाता है।[181]

भारतीय नेताओ ने यह निश्चयपूर्वक कहा कि वस्तुत असम मे कुली श्रम की सारी पद्धति दासता के रूप से भिन्न नही थी क्योकि वहा भारतीय कुली का जीवन प्राचीन काल के दासो अथवा आधुनिक काल के हब्शी दासो के जीवन से किसी भी रूप मे बेहतर नही था।[182] इस सबध मे बी० सी० पाल ने बताया कि 1880 के आसपास के वर्षों मे बगाल की शिक्षित जनता 'अकल टाम्स केबिन' पुस्तक की किस प्रकार प्रशसा करती थी और फिर तत्काल असम के चाय बागान के कुलियो की दशा की तुलना अमरीका के हब्शियो की मुक्ति से पूर्व की दशा के साथ करती थी।[183] इसी लेखक ने वर्षोपरात 'न्यू इडिया' के 26 अगस्त 1901 के अक मे लिखा 'दडनीय श्रमपद्धति दासता का सशोधित तथा आधुनिक रूप है।'

विचारणीय यह है कि इस गुप्त समाधन के विकास से और उसके फलस्वरूप राष्ट्रीय उत्पादन मे वृद्धि से कुल मिलाकर देश को क्या लाभ हुआ तथा आजीविका और नौकरी के रूप मे श्रमिक को क्या प्राप्त हुआ ? कुछ भारतीय लेखको ने समस्या के इस पक्ष की ओर भी ध्यान दिया। उनमे से सर्वाधिक सयत लेखको ने इन लाभो को खुले तौर पर स्वीकार करते हुए भी विचार प्रकट किया कि महारानी महोदया की दरिद्रतम, अत्यत निरीह और सर्वथा असहाय प्रजा के बहुत बड़े वर्ग के जीवन और स्वतत्रता की बलि

चढाकर इन लाभो की उपलब्धि वाछनीय नही थी।[184] अन्य, अपेक्षाकृत अधिक उग्र तथा क्षुब्ध वर्ग ने तो अनुभव किया कि इस प्रकार का आर्थिक विकास सर्वथा अवाछनीय है। उन्होने स्पष्ट शब्दो मे कहा कि वे कुलियो का दासो के रूप मे बेचने की शोचनीय प्रथा को बनाए रखने के बदले चाय उद्योग का नष्ट भ्रष्ट होना तथा असम का जगली पशुओ का निवास बनना ही पसद करेंगे।[185]

उपाय

यह शोचनीय स्थिति अधिक समय तक नही चलने दी जा सकती थी, यहा तक कि अन्यथा भी यह स्थिति एक लब समय तक जारी नही रह सकती थी। 1887 मे ही सजीवनी ने चेतावनी की घटी बजा दी

> भारत के अगरेज शासको ! यह भयकर दमन बद करो। अगरेज व्यापारियो ! धन के लोभ मे मानव पर किए जा रहे अत्याचार की ओर से अपनी आखें बन्द मत करो। क्योकि, इस तरह की स्थिति का लबे समय तक चलते रहना असभव है। तुम्हारे जैसे अनेक शक्तिशाली राष्ट्रो का भगवान के न्याय ने दबोचा और दबाया है। अपनी यह उन्मादी प्रवृत्ति को छोड दो क्योकि तुम्हे निश्चित रूप से अपनी करनी का हिसाब देना पडेगा। इस देश से अपनी इस पशाचिक प्रथा के प्रत्यक्ष चिह्न को मिटाने की चेष्टा करो।[186]

भारतीय नेताओ ने इस सबध मे सर्वप्रथम उपाय के रूप मे इस बात पर बल दिया कि भारत सरकार कुलियो की वास्तविक स्थिति को, 1859 के श्रमिक अनुबध भग अधिनियम (वर्कमेंस ब्रीच ग्राफ कान्ट्रैक्ट ऐक्ट) के प्रवर्तन के यातनाप्रद प्रभावो को, और 1882 के अतर्देशीय उत्प्रवास अधिनियम (इनलड एमिग्रेशन एक्ट) के प्रवर्तन के दुष्परिणामो को अनुभव करे और इसके लिए उन्होने भारत सरकार पर जाच पडताल करने के लिए एक स्वतत्र आयोग की नियुक्ति हेतु दबाव डाला।[187] द्वितीय, उनका सुझाव यह था कि शक्तिशाली और समृद्ध बागान मालिको के मुकाबले श्रमिक निरीह तथा असहाय हैं, अत इस तथ्य को देखते हुए सरकार को स्वय उन्हे यातनाओ से मुक्ति दिलाने के उपाय करने चाहिए।[188] इस प्रकार का एक उपाय यह होना चाहिए कि अपने श्रमिको के साथ दुर्व्यवहार करने वाले चाय बागान के प्रबधको को तत्काल और तदनुरूप समुचित दड दिया जाए।[189] परतु भारतीयो की सर्वाधिक सर्वमान्य और लोकप्रिय माग दडनीय कानूनो के निवर्तन की[190] और स्वतत्र उत्प्रवास को लागू करने की थी ताकि चाय बागान को भारत के बहुत बडे श्रम बाजार से माग और पूर्ति के सामान्य सिद्धात के आधार पर श्रमिक मिल सकें।[191]

भारतीय नेता सरकार से असम के कुलियो को इस दुर्भाग्य से मुक्त करने की अनुनय विनय करते समय यह तथ्य नही भूले कि एक विदेशी सरकार द्वारा यूरोपीय बागान मालिको के विरुद्ध कोई पग उठाए जाने की सभावना नही थी।[192] इस विवेक एव सतर्कता के कारण ही असम कुलियो के प्रगाढ मित्र 'सजीवनी' ने अपनी सहायता आप ही करने का आह्वान किया। इस पत्र ने 14 अगस्त 1886 के सपादकीय म भारतीयो की मर्दानगी को

ललकारते हुए लिखा कि यदि उनकी सपूण शक्ति और साहस नष्ट नही हो गए तो उन्हें देश मे क्रोध की ऐसी प्रचड ज्वाला प्रज्वलित करनी चाहिए कि उसम कुली ऐक्ट जलकर राख हो जाए।[193] इस पत्र ने भारतीयो से कुलियो को अथवा कुली बनने के इच्छुको को कानूनी तथा अन्य इस प्रकार की सहायता देने के लिए तथा मालिको की गतिविधि पर निगरानी रखने के लिए एक समिति के गठन का अनुरोध किया।[194] इस पत्र के एक सवाददाता ने यह सुझाव दिया कि शिक्षित भारतीयो को चाय पीना बद कर देना चाहिए क्योकि यह चाय पीना गरीब प्रपीडित कुलियो का खून पीने के अतिरिक्त और कुछ नही।[195] आश्चयजनक न होने पर भी यह पर्याप्त रोचक तथ्य है कि उस समय भारत म किसी ने भी चाय बागान के श्रमिको को श्रमिक सघ बनाने आदि के रूप म अपनी सहायता आप करने का सुझाव नही दिया। हा, कुलियो ने स्वय ही आक्रमण और झगड फसाद के रूप म आत्मसहायता का माग अपनाया[196] परतु राष्ट्रीय नेताओ से उन्हें समुचित दिशानिर्देशन नही मिला।

असम श्रम और उत्प्रवास अधिनियम, 1901

भारतीयो द्वारा निरतर आदोलन तथा असम के उदार तथा साहसी मुख्य आयुक्त हैनरी काटन के सतत प्रयासो के फलस्वरूप जब भारत सरकार ने इस विषय पर नए कानून बनाने का निश्चय किया तो उस समय बीसवी शताब्दी के प्रारभ मे चाय बागान के श्रमिको का प्रश्न पुन एक बार भारतीय राजनीति का प्रमुख विषय बन गया। 13 अक्तूबर 1899 को विधानपरिषद मे असम श्रम और उत्प्रवास बिल' लाया गया और 8 माच 1901 मे इस कानून का रूप दे दिया गया। जहा एक ओर इस नए बिल ने चाहे बेमन से ही सही भरती की पद्धति को सुधारने का प्रयत्न किया[197] वहा दूसरी ओर कुल मिला कर पहले की तरह ही विषम दुव्यवहार चलते रहने मे इसका प्रयोजन ही असफल हो गया था।[198] इसके एक प्रावधान ने, जो सारे अधिनियम के प्रयोजन और प्रभाव के अपेक्षाकृत व्यापक सदभ मे अत्यधिक महत्वपूण नही थी, मतभेद की स्थिति उत्पन्न कर दी और राष्ट्रीय आदोलन का लक्ष्य बन गई। 1899 मे अपने मूल रूप मे प्रस्तावित बिल म 1882 के अधिनियम के अतगत अनुबधित श्रमिको के निश्चित न्यूनतम वेतन मे एक रुपया प्रति मास की वृद्धि की व्यवस्था थी। बाद म इस व्यवस्था म प्रवर समिति ने इस प्रकार से सुधार किया कि प्रथम वष म पुरुष श्रमिक और महिला श्रमिक का मासिक वेतन क्रमश 5 और 4 रुपये, द्वितीय और तृतीय वष म क्रमश 5½ और 4½ रुपय और चतुथ वष म क्रमश 6 और 5 रुपये कर दिया गया। इस प्रकार प्रथम और चतुथ वष मे श्रमिको के वेतन उतने ही बने रहे, जितने पहले के अधिनियम मे निर्धारित थे।[199] यद्यपि राष्ट्रवादियो ने इस बिल को इसके मूल रूप म बागानमालिको के हितो की सुरक्षा मे गढा हुआ तथा बलपूवक श्रम को जारी रखने वाला एक साधन मात्र माना[200] और इस वेतनवृद्धि को बहुत थोडा माना तथापि इन असहाय प्राणियो को इस विलबित न्याय का एक अश देने वाली इस धारा का समथन भी किया।[201]

सरकार द्वारा चाय बागानमालिको की ओर से जे० बकिघम द्वारा अधिनियम की

वेतनवालीधाराओ के प्रवतन को दो वर्षो तक स्थगित रखने के सुझाव की सशोधन के रूप मे स्वीकृति ने एक बार फिर आग मे घी का काम किया।[0] वस्तुत लाड कजन ने पहले ही विवाद मे हस्तक्षेप करते हुए बागानमालिका को इस प्रकार की रियायत मागने का निमत्रण प्रत्यक्ष रूप मे दे दिया था।[03] असम के मुख्यायुक्त ने जब इस सशोधन का इस आधार पर विरोध किया कि इसमे तो कुलियो के लिए पहले ही अपयाप्त और अभी अभी विजित रियायत का कोई अथ ही नही रह पाएगा तो वायसराय न इस लोकप्रिय मुख्यायुक्त की सावजनिक रूप से अवमानना और[04] भत्सना की। इस बात ने कोढ मे खजली का काम किया।[05] विदेशी बागानमालिका के सामन लाड कजन द्वारा हथियार डाल दिए जाने के विरुद्ध सारे भारतीय समाचारपत्र और लोकनेता एकजुट होकर खडे हो गए।[06] उन्होने स्पष्ट देखा कि भारतीय लोगा के मूल्य पर यूरोपीय पूजीपतिया के हितो की सावधानी के साथ रक्षा करने का यह एक अय निंदनीय निदशन था।[07] 'बगाली' ने 10 माच 1891 के अक मे लिखा भारत मे ब्रिटिश शासन का मुख्य उद्देश्य यूरोपीय पूंजीपतियो और व्यापारियो को लाभ पहुचाना है चाहे इसके लिए याय और मानवता का गला ही क्यो न घोटना पडे। राष्ट्रवादियो ने भारत सरकार की निंदा करते हुए कुलियो के हिता की वकालत करने मे उनकी यायप्रियता तथा वीरता के लिए हेनरी काटन की भरपूर प्रशसा की।[08]

मद्रास बागान श्रम अधिनियम, 1903

1903 म जब मद्रास सरकार ने 'मद्रास बागान श्रम अधिनियम' को कानून का रूप दिया तो राष्ट्रवादियो की विदेशी सरकार के विरुद्ध क्षोभ की और बागान श्रमिका के प्रति सहानुभूति की भावना एक बार फिर भडक उठी। प्रमुख रूप से 1901 के 'असम श्रम और उत्प्रवास अधिनियम' पर आधृत मद्रास अधिनियम म भी भाग जाने वाला के लिए गिरफ्तारी और सजा की तथा अनुपस्थित रहने वालो और सुस्ती बरतन वाला अर्थात काम से जी चुराने वालो के लिए अथदड और जेल की व्यवस्था थी। भारतीय नेताआ न असम अधिनियम के समान मद्रास अधिनियम को भी पैशाचिक, ईश्वरविराधी, अमानवीय, घृणित तथा अयायपूण बताकर उसकी भत्सना की तथा कुलियो की स्वतत्रता नष्ट करन के लिए और दक्षिणी क्षेत्र के बागान मे दासता को कानूनी रूप देन के लिए उसकी आलोचना की।[09] उहाने सरकार पर बागानमालिका और विदेशी पूजीपतियो का सदा उपकृत करने को प्रस्तुत रहने के लिए उनके हाथ मे एक खिलौना बनने का आरोप लगाया।[10]

व्यापक सबध

बागान श्रमिका की समस्याओ पर विचार विमश से उभरे कुछ सबधित व्यापक राज नीतिक तथा आर्थिक प्रश्नो पर भी कई भारतीय राष्ट्रवादी नताआ न गहरा विचार किया और उन प्रश्ना तथा सरकार के बागानश्रमिका के प्रति दृष्टिकोण मे व्यापक सबध सिद्ध करने का प्रयास किया। प्रथम, भारतीय नेताआ ने भारतीय राष्ट्रीय

भारतीय समाचारपत्रो तथा विधानपरिषद के भारतीय सदस्यो के विरोध की उपेक्षा करके बागानमालिको के अनुकूल कानून बनाने की सरकार की तत्परता से यही निष्कर्ष निकाला कि यह सरकार भारतीय लोकमत का कोई महत्व ही नही देती।[11] उन्होने यह भी अनुभव किया कि सशोधित विधानपरिषद पूर्णत अनुपयोगी सिद्ध हुई है और सरकार न भारतीय सदस्यो की इच्छाओ की अवहेलना की है।[12] जी० एस० अय्यर को इस स्थिति म यह मत प्रकट करना पडा कि 'आज की भारतीय पद्धति से अधिक हास्यजनक कानूनी पद्धति कही भी पहले नही रही।'[13] वस्तुत विदेशी शासको की न्यायप्रियता तथा प्रगतिशीलता पर कामल और उदार चितनवालो तक का विश्वास हिल गया। 'मद्रास बागान श्रम अधिनियम' के कानून बनने पर लोगो के विश्वास भग को 'कैसरे हिंद' ने अपने 8 मार्च 1903 के अक मे सुदर अभिव्यक्ति दी है

> यदि ये निष्पक्ष विधायक हैं तो हम उनके लिए किसी कटु विशेषण का प्रयोग न करते हुए पूछते है कि जिन बेजबान और बेसहारा लोगो के वे पिता के समान रक्षक बनते है, उन्हे वे क्यो एव अयत स्वार्थी वर्ग के ही आदेश से दास बना देते हैं ? इस बात से कौन इनकार करेगा कि न केवल ब्रिटिश नीतियो के प्रत्युत ब्रिटिश सदाचार के विनाश का भी यह एक अन्य सुदृढ प्रमाण है। निस्सदेह सारे विशाल ब्रिटिश राज्य म चारो ओर विनाश के अपशकुन और सकेत दिखाई दे रहे है जो परिणाम म सुखद नही कहे जा सकते। भगवान ही ब्रिटिश राज्य को भावी विपत्तियो से बचाए।[14]

केसरी ने भी 10 मार्च 1903 के अक म इस समग्र समस्या को विश्वव्यापी पैमाने पर आर्थिक साम्राज्यवाद के विस्तृत परिप्रेक्ष्य म देखने का प्रयास किया। यह लिखने के उपरात कि आज के भयकर प्रतियोगिता के युग म यूरोपीय राष्ट्र भौतिक समृद्धि के लिए कडा परिश्रम कर रहे है और सभ्यता का वरदान लाने के बहाने अपने अधीनस्थ अविकसित राष्ट्रो के वस्तुगत और खनिज पदार्थगत साधनो का शोषण कर रहे हैं, इस पत्र ने शिकायत के स्वर म लिखा कि यूरोपीय व्यापार के उद्देश्य से अथवा उपनिवेश स्थापित करने के उद्देश्य स जहा कही भी जाते हैं, उन देशो की जनता को ये लोग दास बनाकर ही उससे काम लेते हैं। दक्षिणी अफ्रीका मे काफिरो के प्रति और असम मे चायबागान कुलियो के प्रति इनका व्यवहार इसका प्रत्यक्ष और स्पष्ट प्रमाण है। निष्कर्ष रूप म इस पत्र ने इस विचारधारा पर दुख प्रकट करते हुए लिखा कि मनुष्यो का एक वर्ग तो धन से खेले और उसके शेष बधुओ को उस वर्ग के ऐशो आराम के लिए खटने पर विवश किया जाए।[15]

कुछ भारतीय नेता बागान श्रमिको की समस्या को श्रमिको और पूजीपतियो के बीच सबधो की व्यापक समस्या के अग के रूप म देखने को प्रेरित हुए। इन नेताओ ने श्रमिको का ही पक्ष लिया। उदाहरणार्थ, जी० एस० अय्यर का विचार था कि वस्तुत भारत सरकार की बागान श्रमिको के प्रति नीति का तथ्य इस सत्य म निहित है कि वह चाय उद्योग म केवल पूजीपतियो के हितो ... है।[16] आर० सी० दत्त का भी अनुभव था कि मा ... इतना प्रबल और ...

उपदेश दिया और दूसरी ओर इसके केवल एक वर्ष उपरांत ही असम कुलियों के वेतन में वृद्धि का प्रस्ताव पारित किया।[1]

इस तरह के विरोधाभासपूर्ण रवैये का एक और नाटकीय उदाहरण 3 मार्च 1903 के हिंदू के संपादकीय में मिला। जैसा हम पहले दिखा चुके हैं, 'हिंदू' बागान मालिकों के हितों में लाए जाने वाले सभी कानूनों का प्रबलतम निंदक और विरोधी रहा है। उसने उन सभी कानूनों को 'दास बनाने वाले कानून' कहकर उनकी भर्त्सना की। इस पत्र ने मद्रास प्लांटर्स बिल के विरुद्ध लगातार निंदा का स्वर मुखरित किया था। 3 मार्च 1903 के संपादकीय में भी उसने यही विरोध प्रकट किया। परंतु इसी संपादकीय में उसने आश्चर्यजनक ढंग से यह मांग प्रस्तुत की कि इस प्रकार का कानून श्रमिकों को नियुक्त करने वाले उन सभी मालिकों के लिए समान रूप से बनाना चाहिए 'जिन्हें श्रमिकों को पाने में ही न केवल कठिनता का अनुभव होता है प्रत्युत उन्हें अनुबंध को निभाने के लिए श्रमिकों को विवश करने में कठिनाई का अनुभव होता है'। उसके अनुसार ऐसे कानून की दक्षिण भारत के भूमिपतियों को विशेष आवश्यकता है। ये भूमिपति तो 'पेनल लेबर ला' (दंडनीय श्रम कानून) को अत्यंत लाभप्रद और उपयोगी पाएंगे। अपने तर्क की पुष्टि में 'हिंदू' ने राष्ट्रवाद के नाम पर आग्रह किया भारतीय कुलियों के संबंध में वर्गीय कानून की कोई आवश्यकता नहीं। यदि वे यूरोपियों के दास बनाए जा सकते हैं तो उन्हें भारतीय जमींदारों के दास बनाने में कोई अनौचित्य नहीं होना चाहिए। भारतीय कुलियों का एक वर्गविशेष का ही दास नहीं बनाना चाहिए। इस तर्क पर टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं। 'हिंदू' द्वारा विकल्प रूप में प्रस्तुत मांग से उसकी अचेत विडंबना का तथा इस प्रश्न के बारे में उसकी पाखंडपूर्ण पवित्रता का पता चलता है।

जिस प्रकार अनुचित रूप से पर्वतीय प्रदेशों में कुलियों का चाय बागानमालिकों की दया पर उनके हाथों में सौंपने को उचित नहीं माना जा सकता, उसी प्रकार भारतीय जमींदारों के हाथों में दंडनीय अपराध के अंतर्गत कुलियों को सौंपने से इनकार करने को किसी प्रकार न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता। हिंदू द्वारा इस प्रकार का व्यवहार अपनाना सर्वथा अविश्वसनीय नहीं लगता क्योंकि इससे दो महीने बाद ही तमिल पत्रकारिता के अग्रदूत एक अन्य राष्ट्रवादी समाचारपत्र 'स्वदेशमित्रन' ने इसी प्रकार की मांग पेश की।

जी० आई० पी० रेलवे सिगनलवालों की हड़ताल

भारतीयों से इतर स्वामित्व वाले उद्यमों में नियुक्त श्रमिकों के प्रति भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं के दृष्टिकोण की रोचक विडंबना 1899 में हुई जी० आई० पी० की हड़ताल के संदर्भ में देखने को मिलती है। जब रेल कंपनियों के प्रबंधक मंडल ने वेतनों में कटौती न करने, उन्नतियों को व्यवस्थित रूप देने, काम के घंटे सीमित करने तथा नियमित अवकाश की व्यवस्था करने की मांगें अस्वीकृत कर दीं तो 1899 में ही मई के प्रथम सप्ताह में 800 सिगनल कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी।[3] समाचारपत्रों की सूचना के अनुसार हड़ताल ने रेलवे को बुरी तरह से प्रभावित किया। आमतौर पर माल की आवाजाही

ने हडतालियो से नौकरी छूट जाने पर भी डटे रहने का निरतर अनुरोध किया और हडताल छोडकर काम पर जाने वालो को गद्दार कहकर उनकी निंदा की।[3]

भारतीय समाचारपत्रो ने रेलवे के प्रबधकमडल द्वारा कर्मचारियो के प्रति किए जा रहे व्यवहार दृष्टिकोण तथा कार्यवाही आदि की तीव्र निंदा की।[33] उन्होने सार्वजनिक उपयोगिता के विभागो मे अनुशासन के तर्क को प्रबधको का वाकछल कहकर ठुकरा दिया तथा जनता को हो रही असुविधा का सारा दायित्व प्रबधको पर डाल दिया।[34] उन्होने रेल कपनियो पर हडतालियो की न्यायसगत शिकायतें दूर करके तथा विवाद को निपटाने के लिए मध्यस्थ को सौंपने की हडतालियो द्वारा पहले से ही सहमति प्राप्त बात मानकर हडतालियो से समझौता करने के लिए दबाव डाला।[35]

राष्ट्रवादी समाचारपत्रो ने सरकार से विवाद मे हस्तक्षेप करने और प्रबधक मडल को सिगनलमनो की उचित मागें मानने के लिए विवश करने का अनुरोध किया।[36] उनका उपयुक्त तर्क यह था कि मानवता के दृष्टिकोण को छोड दिया जाए तो भी सरकार हस्तक्षेप करने के लिए कर्तव्यबद्ध है क्योकि जी० आई० पी० रेलवे प्रतिभूत सस्था है और इस प्रकार हडताल के कारण होने वाली हानि सरकार को और अतत करदाता को ही भुगतनी पडेगी।[37] 'मराठा' ने 28 मई 1899 के अक मे लिखा कि अपने ही लोगो को जिनके प्रति हमारी गहरी सहानुभूति है, निराश और पराजित करने के लिए अपेक्षित दाम हमसे ही मागना कहा का न्याय है? राष्ट्रवादी समाचारपत्रो ने यह भी लिखा कि सरकार का हडताल मे हस्तक्षेप करना नैतिक अधिकार के साथ साथ कर्तव्य भी है क्योकि रेलवे जनोपयोगी सस्था है, इसमे किसी प्रकार की अव्यवस्था अथवा कुप्रबध से न केवल व्यापार जन सुख और सुविधाओ को हानि पहुचती है प्रत्युत यात्रियो की सुरक्षा भी खतरे मे पड जाती है।[38] समाचारपत्रो ने यह अनुभव किया और देखा कि सरकार न केवल हस्तक्षेप करने से इनकार करती है अथवा तटस्थ रहती है प्रत्युत प्रबधको को समर्थन तथा सक्रिय सहायता भी दे रही है, सरकार के इस आचरण की समाचारपत्रो ने तीव्र भर्त्सना की।[39]

सिगनलरो के प्रति व्यापक सार्वजनिक सहानुभूति शाब्दिक प्रदर्शन तक सीमित न रहकर उससे आगे निकल गई। समाचारपत्रो ने जनता और जन सस्थाओ से हडताली सिगनलरो की सहायता के लिए पैसे जुटाने का अनुरोध किया।[40] बहुत से लोग अपने आप सहायता के लिए आगे आए। उनकी सहायतार्थ कोष सग्रह के लिए बबई प्रात के विभिन्न क्षेत्रो अहमदाबाद, अमरावती, धुलिया और नागपुर मे सार्वजनिक सभाओ का आयोजन किया गया।[41] बबई मे 19 मई को गण्यमान्य भारतीय नागरिको और प्रतिष्ठित व्यापारियों की एक बैठक फिरोजशाह एम० मेहता के भवन मे हुई, इसमे हडतालियो के उपयोग के लिए एक कोष जारी करने का सकल्प किया गया। तत्काल मौके पर 2500 रुपयो की राशि इकट्ठी हो गई और अगले ही दिन 2500 रु० और देने का वचन दिया गया।[42] इस कोष के लिए बगाल मे सुरेंद्रनाथ टगोर ने और बगाली मासिक 'भारती' की सपादिका कुमारी घोषाल ने भी धन इकट्ठा किया।[43] हडताल के असफल होने तथा लगभग 700 सिगनलरो के हटाए जाने पर बबई मे उनके लिए एक सार्वजनिक कोष

जारी किया गया जिसके कार्याध्यक्ष मे एक डी० ई० वाचा थे।"[14] 'मराठा' ने अपने 16 जुलाई 1899 के अक मे इन प्रयत्नो का समर्थन तथा सराहना की। कलकत्ता के 'अमृत बाजार पत्रिका' ने अपने 4 जुलाई 1899 के अक मे जमीदारो और व्यापारिक प्रतिष्ठानो से नौकरी से बर्खास्त किए गए सिगनलरो को नौकरी देने का अनुरोध किया। [15]

भारतीय नेताओ के उग्र रूप से हडताल समर्थक दृष्टिकोण को समझने की कुजी सक्षेपत उनके राष्ट्रवाद मे निहित है। हडताली सिगनलर भारतीय थे जबकि उन्हे नियुक्त करने वाली रेलवे कपनी का स्वामित्व और प्रशासन अगरेजो के हाथ म था, यही अकेला तथ्य दोनो के मध्य के विवाद को भारतीय राष्ट्रवाद के मुख्य प्रवाह की ओर तथा राष्ट्रीय स्तर पर लाने के लिए पर्याप्त था। किन्ही मामलो मे तो विवाद के बारे मे यह विशिष्ट जानकारी स्पष्ट करने का आयोजन किया गया तथा इस स्पष्ट अभिव्यक्ति दी गई। 'मराठा' ने शिकायत की कि रेल कपनी सिगनलरो को जीवन निर्वाह के लिए उपयुक्त वेतन देने से इसलिए इनकार कर रही है क्योकि वे भारतीय हैं। उसन 21 मई 1899 के अक मे अपक्षाकृत गहराई स लिखा

> मनेजर ने कदाचित यह अनुभव किया कि काले गुलामो को खाली जीवित रहने के लिए अपेक्षित से अधिक की आवश्यकता नही और इतना उसे दे दिया जाएगा ताकि वह जीवित रह और गोरे आदमी की सेवा का भार वहन करता रहे। भगवान द्वारा सौंपे ससार को सभ्य बनाने के काम को ही बेचारा गोरा आदमी निभा रहा है और इसके अतगत अपनी चातुरी से उष्णकटिबधीय देशो का इस प्रकार शोषण कर रहा है कि सारे लाभो को वह स्वय हडप जाता है और खून पसीना बहाने वाले काले गुलाम के लिए अपने (मालिक के) लाभ की दृष्टि से चद टुकडे छोड देता है।

'अमृत बाजार पत्रिका' के भी विचार से इस सारे विवाद के पीछे जातीय भेदभाव की भावना काम कर रही थी। 22 जून 1899 के अक मे इस पत्र ने अपने सपादकीय मे लिखा 'बबई सरकार अब इस अशोभनीय स्थिति से बच नही सकती है' कि उसने रेलवे कपनी की सहायता की है और सिगनलरो का दमन किया है। इसका एकमात्र कारण यह है कि सिगनलर हिंदुस्तानी हैं जबकि कपनी के प्रबधक शासक जाति के हैं। 14 मई के अक मे 'गुजराती' ने और 16 मई के अक मे 'जामे जमशेद' ने इस सबध म स्मरण कराया कि दो वर्ष पूर्व जब इसी रेल कपनी के यूरोपीय गार्डों ने हडताल की थी, उस समय रेल कपनी और सरकार दोनो ने सर्वथा भिन्न दृष्टिकोण अपनाया था और वस्तुत उनकी मागें मान ली गई थी। [16] 'मराठा' ने 16 जुलाई 1899 के अक मे निष्कप रूप मे लिखा कि वास्तव मे सिगनलर राष्ट्रीय सम्मान के लिए लड रहे हैं क्योकि वे तो 'अपनी और अपने समाज की मान प्रतिष्ठा की रक्षा के उद्देश्य से ही प्रेरित हैं।'

भारतीय नेतृत्व का सिगनलरो की हडताल के प्रति दृष्टिकोण का राष्ट्रवादी अभिप्रेरण एक भिन्न सदर्भ मे पता चलता है। 1897 98 मे बबई की कपडा मिलों मे कितनी ही हडतालें हुई थी। [17] प्रमुख राष्ट्रवादी समाचारपत्रो मे से किसी ने भी उधर नही दिया था और न ही उनका समर्थन किया था। जिस 'अमृत बाजार पत्रिका' फाडकर सिगनलरो की वेतनवृद्धि के लिए की गई हडताल का समर्थन किया था

कुछ महीनो के ही उपरात बबई की कपडा मिलो के कर्मचारियो के वेतन मे कटौती के विरुद्ध की गई हडताल का विरोध करने मे सकोच नही किया। 10 जनवरी 1900 के अक में इस पत्र ने वकालत करते हुए लिखा कि मालिक इसमे अधिक देने की सामर्थ्य ही नही रखते और उन्हे इस विषय मे बाध्य करने की चेष्टा का अर्थ होगा भारतीय उद्योग को हानि पहुचाना और इसका अतिम परिणाम यह होगा कि अत मे श्रमिक को भी 'भूखो मरना पडेगा'।

नए दृष्टिकोण का प्रारभ

भारतीय श्रमिक वर्ग के उदय तथा श्रम और पूजी मे सघर्ष का धीरे धीरे उदय होने से भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ के मन मे इस नए वर्ग की सामाजिक भूमिका के सबध मे नए विचार तथा इसके अधिकारो और दायित्वो के प्रति नए दृष्टिकोण ने जन्म लेना प्रारभ कर दिया। यहा यह बात भली प्रकार समझ लेनी चाहिए कि ये नए विचार कुछ ही भारतीय नेताओ तक सीमित थे। इन विचारो ने सभी को समान रूप से समान परिमाण मे प्रभावित नही किया था। यह काफी आश्चर्यजनक है कि इस नए दृष्टिकोण का विवेचन सर्वप्रथम मार्च 1899 मे 'बबई मिल ओनर्स एसोसिएशन' की बैठक मे उस समय किया गया जब स्वय एक मिल मालिक डी० ई० वाचा ने यह विचार प्रस्तुत किया कि वस्त्र उद्योग का उत्पादन व्यय दो तरीको से घटाया जा सकता है प्रथम, प्रयोग की जाने वाली कच्ची कपास के स्तर को सुधार कर और द्वितीय, कर्मचारियो के स्वास्थ्य और स्वच्छता की स्थिति सुधार कर। उन्होंने दृढतापूर्वक कहा कि काम के लबे घटो, थोडे वेतन तथा जनता के खाद्य पदार्थों पर करो ने सदैव औद्योगिक विकास को पगु ही बनाया है। दूसरी ओर काम के अपेक्षाकृत कम घटे, अपेक्षाकृत ऊचे वेतन, सस्ते खाद्य पदार्थों की व्यवस्था और आवास सुविधा आदि ने निश्चित रूप से ही विकास को पुष्ट और सशक्त बनाया है।[18] वाचा महाशय ने अपनी इस सलाह को अप्रैल 1905 मे फिर दोहराया और उन्होने दस घटा के कार्य दिवस की वकालत की, उन्होंने मिलमालिको को चेतावनी दी कि वे सोने का अडा देने वाली मुर्गी की हत्या करने की नीति पर चलने से और अपने लोभ लालच से बाज आए। उन्होने चुनौती के स्वर में कहा कि श्रमिको का प्रश्न भविष्य मे मिलमालिक के लिए एक जटिल समस्या का रूप ग्रहण करने जा रहा है। अत मिलमालिको की अपनी भलाई इसी में है कि श्रमिको की ओर से सरकार अथवा किसी अन्य पक्ष द्वारा हस्तक्षेप करने से पूर्व स्वय वे (मिलमालिक) ही इस समस्या को सुलझाना प्रारभ कर दें।[19]

भारतीय रगमच पर उभरते हुए श्रमिक वर्ग के महत्व को उस समय पहचानने वाले विपिनचद्र पाल दूसरे नेता थे। दुर्भाग्यवश उनके इस अवधि (1901 05) के अधिकाश लेख नष्ट हो गए हैं अथवा कम से कम मुझे तो उपलब्ध नही हो सके हैं। 1901 मे उनके द्वारा प्रकाशित किए जाने वाले साप्ताहिक पत्र न्यू इडिया की दो चार प्रतिया इस शताब्दी के मानवानिक पुस्तकालयो मे मिल पाई हैं। इसके अध्ययन से यह प्रकट हो जाता है कि पाल महोदय निश्चित रूप से श्रम समस्या पर प्रगतिशील

मे वे बेचारे अपनी दैनिक अनिवार्य आवश्यकताओं के दास ही थे। उनके सामने तो दो ही विकल्प थे भूखो मरना अथवा किसी भी मूल्य पर अपने श्रम को बेचना।"[57] वस्तुत प्रतियोगिता का अथवा पूर्ति और माग का यह नियम सर्वथा क्रूर था, जिसके अन्तर्गत धनी अधिक धनी और गरीब और अधिक गरीब बनता है। इस सिद्धात ने तो भारतीय श्रमिक को विवशता की स्थिति पर ला खड़ा किया है।[58] फिर इस ताटस्थ्य सिद्धात का विकल्प क्या था ? जी० एस० अय्यर की मान्यता थी कि मालिको के मन मे अपने असहाय, दरिद्र कर्मचारियो के प्रति उदारता और दयालुता की सहज भावना को पनपाना चाहिए परतु उन्हें अपने सुझाव की व्यावहारिकता मे सदेह था क्योकि इस प्रकार की भावना का विकास अनिश्चित तथा अनिर्णीत था और उसका प्रवर्तन सकोचशील तथा अस्थिर था। इससे एक ही मार्ग शेष रहा। राज्य ही एकमात्र ऐसा अभिकरण था जो व्यग्य उपहास के रूप मे स्वतत्र कहे जाने वाले इस दुर्बल वर्ग को असीम और वस्तुत असमान प्रतियोगिता से बचाने का दायित्व ले सकता है, निभा सकता है और जिसे यह दायित्व उठाना और निभाना ही चाहिए।[59]

जी० एस० अय्यर ने साथ ही साथ यह भी अनुभव किया कि मालिको द्वारा अपने अधिकार दबाए जाने के विरुद्ध अपनी रक्षा के लिए श्रमिको को अवश्यमेव एकजुट होना चाहिए तथा अपने सगठन बनाने चाहिए।[60] इस समय यदि एक श्रमिक अपने मालिक के किसी दुर्व्यवहार के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप मे नौकरी छोडता है तो दूसरा श्रमिक कम वेतन पर ही काम करने को सहर्ष तैयार हो जाता है। श्रमिको मे एकता न होने के कारण 'ऐसा करने वाले श्रमिक को उसके समुदाय द्वारा किसी प्रकार का कोई दड नही दिया जाता'। इसके विपरीत दूसरे देशो मे श्रमिक वेतन का सामान्य स्तर से नीचे गिरना सहन ही नही कर सकते। इसके स्थान पर तो वे काम ही बद कर देते हैं।[61] वस्तुत उन्होंने अनुभव किया कि जब अगरेज श्रमिको ने सगठित होना सीखा, और 1824 मे सगठित होने के अधिकार को प्राप्त कर लिया तभी उनकी प्रगति प्रारभ हुई, पश्चिमी सभ्यता मे श्रमिक वर्ग को इतने सशक्त तत्व के रूप मे प्रतिष्ठित करने का कारण मात्र उनका सगठित होना है।[62] उन्होंने श्रमिको को सघ मे सगठित होने और अपने अधिकारो के लिए मालिको से सघर्ष करने के लिए कहा।[63] उन्होंने जनता से भी इस बात की अपील की कि अपने को सगठित करने के काम मे जनता मजदूरो को हर तरह की सहायता दे।[64]

जी० एस० अय्यर अपनी पूर्वनिर्दिष्ट महत्वपूर्ण पुस्तक मे कृषि श्रमिको की समस्याओ का अध्ययन करने वाले प्रथम और एकमात्र राष्ट्रवादी अर्थशास्त्री थे। उन्होंने एक पूरे अध्याय मे इसी विषय का विवेचन किया। कृषि श्रमिको की अत्यत विषम दुर्दशा पर विचार प्रकट करते हुए उन्होने श्रमिको के हितो के लिए घातक जमीदारो के दबाव के आगे झुकने के विरुद्ध सरकार को चेतावनी दी।[65]

श्रमिक समस्या के प्रति जागरूकता दिखाने वाले दूसरे भारतीय लेखक 'डान' के सपादक सतीशचद्र मुखर्जी थे। इस विषय पर उनके विचार अगस्त 1898 के 'डान' मे प्रकाशित लेख, 'आसपेक्ट्स आफ इकानामिक लाइफ इन इग्लैड ऐंड इडिया' तथा 'डान'

के माच, अप्रैल, मई और जून 1100 के अको मे प्रकाशित, 'दि इडियन इकोनामिक प्राब्लम' म देखे जा सकते हैं। पश्चिम की औद्योगिक प्रणाली की सचालन विधि की जानकारी मुकर्जी को अपने समकालीन किसी भी अय भारतीय की अपेक्षा अधिक अच्छी थी। इसके अतिरिक्त उनका दावा था कि वे विशुद्ध रूप से प्रधानतया किसानो और श्रमिको की हितकामना से ही प्रेरित थे। [66] परतु उनके श्रमिक समस्या के विश्लेषण को एक अय कारण से भी महत्ता प्राप्त है। यह उन छोटे माटे बुजुआओ, बुद्धिजीवियो, व्यावसायिको, क्लर्कों तथा कमचारियो के उदीयमान वर्गो की प्रथम सयुक्त छवि थी जो पूजीपतिया के विकासशील वग के विरुद्ध ता थे परतु वे अभी तक नए मजदूर वग के साथ अपने को जोड नही पाए थे। यह एक सयोग की बात नही है कि यह सवाल सवप्रथम बगाल म उठा जहा शिक्षित कमचारिया और व्यावसायिको का वग उठ खडा हुआ था और स्वदशी पूजीपति बहुत कम थे।

मुखर्जी प्रस्तावना रूप म यह मान कर चले कि भारतीय आर्थिक ससाधना का पूरा पूरा विकास करना ही होगा। [67] परतु उनका तक था कि यही पयाप्त नही होगा। इस स्थिति म एक उपयुक्त प्रश्न उत्पन हुआ कि साधनो का विकास कौन करेगा और उन पर नियत्रण कौन रखेगा।"[68] ब्रिटिश उद्योगो के विकास के इतिहास का अध्ययन प्रस्तुत करत हुए उन्होने कहा कि अब तक ता उद्योगीकरण के सारे लाभ पूजीपतियो को मिलते रह ह। आधुनिक उद्योग के आगमन और विकास की परिणामगत स्थिति यही रही है

> श्रमिकवग जो पिछली कई शताब्दिया तक बडे बडे जमीदारो के आधिपत्य की बुराइया का शिकार रहता था वह अब समान रूप से अत्याचारी पूजीपतिया के हाथो मे पड गया है। यद्यपि वे कहने को (राजनीतिक दृष्टि से) मुक्त हैं परतु वस्तुत आर्थिक दृष्टि से वे अपन पूजीपति मालिको के पूर्वपिक्षा अधिक ही अधीन हैं। [69]

मुखर्जी न फ्रेडरिक ऐंगल्स की प्रसिद्ध पुस्तक, 'वकिंग क्लासेज इन इगलड इन 1844' से तथ्य उद्धृत करत हुए ब्रिटिश श्रमिको की दरिद्रता और निकृष्ट स्थिति का विवरण प्रस्तुत किया। [70] उन्होंने सिद्ध किया कि आधुनिक कानून भी उन बुराइया को मिटाने म असफल रहा था क्योंकि उन बुराइयो की जड जितनी प्रतीत होती है उससे कही गहरी थी। [71] फलत यदि पश्चिम की औद्योगिक पद्धति को ही भारत म लागू किया गया है तो इसका एक और अनिवाय परिणाम है छोटे से अल्पमतीय सुगठित पूजीपतिवग का उदय, यह वग विदेशी हो अथवा स्वदेशी। इस वग की शक्ति और प्रभाव का अथ जनता की सुख-समृद्धि म उन्नति कदापि नही। [72] दूसरी ओर श्रमिकवग एकमात्र मशीन बनकर रह जाएगा। वे श्रमिक दूसरो के लिए कमरतोड काम करन वाले बन जाएगे। उनका आत्मसम्मान समाप्त हो जाएगा और वे असहाय बन जाएग और उस स्थिति म अपन मालिको के अधीन हो जाएग।"[73] इस दुदशा से बचन के लिए श्रमिको का एकजुट होकर विशाल पैमाने पर श्रमिक सघो का सगठन करना पडेगा। उन्हें सुगठित पूजीपतीय शक्तियो के विरुद्ध श्रमिक कल्याण सघो की व्यवस्था के रूप म अपनी सहायता आप

करने का मार्ग ग्रहण करना होगा। यही मार्ग उन्हें 'शान्ति और व्यवस्था' के लिए एक धमकी और सचमुच ही 'स्थाई रूप से राजनीतिक और सामाजिक खतरा' बना देगा।[4]

मुखर्जी ने अनुभव किया कि पूंजीपतीय औद्योगिकता का यह द्विमुखी परिणाम समाज को निश्चित रूप से एक गहरी विडम्बना में डाल देगा। श्रमसंघों के अस्तित्व से जहां समाज की स्थिरता को खतरा सिद्ध होगा वहां इनका अभाव इससे भी भयंकर खतरा उत्पन्न करेगा। भली प्रकार संगठित पूंजीपतिवर्ग के अबाध विकास का अन्तिम परिणाम होगा, औद्योगिक अर्धदासता।[5] यह भयंकर स्थिति लोगों को रुकने और विश्लेषण करने के लिए विवश करेगी कि क्या इस स्थिति, जिसमें निश्चित रूप से अच्छाई को बुराई और बुराई को अच्छाई में मिलाने वाली सभी दूषित विचारों और प्रवृत्तियों वाली संस्थाएं शामिल हैं के अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा उपाय नहीं है कि जिससे भारत की औद्योगिक समस्याओं का समाधान ढूंढा जा सके।[76]

मुखर्जी द्वारा समस्या का सुझाया उपाय द्विमुखी था, प्रथम नैतिक तथा द्वितीय भौतिक। सारे आर्थिक जीवन को इस प्रकार पुनर्गठित करना चाहिए कि प्रतियोगिता का सिद्धांत नैतिक सिद्धांत पर आधारित हो जाए और वह नैतिकता की महत्ता स्वीकार करे।[77] आर्थिक समस्या को व्यापक नैतिक जीवन से सबद्ध रूप में ग्रहण करना चाहिए।[78] वस्तुतः समाज की इस नई व्यवस्था में भौतिक सम्पन्नता को प्रोत्साहन तो दिया जाएगा परंतु जनता इस भौतिक सम्पन्नता को अनिवार्यतः प्रथम स्थान कदापि नहीं देगी। दूसरे शब्दों में आध्यात्मिक विकास ही उन्नति का स्वरूप बन जाएगा।[79] भौतिक स्तर पर आधुनिक पूंजीपतीय औद्योगिकता के दोषों का यथासंभव निवारण प्रथमतः स्वयं औद्योगिक संगठनों द्वारा ही किया जाएगा। इसके अतिरिक्त औद्योगिक पारिवारिक संघ के रूप में उत्पादन-प्रणाली की व्यवस्था की जाएगी जिसका आधार यह होगा कि कर्मचारी, कारीगर और कृषक सब एक ही परिवार के अंग माने जाएंगे और समान लाभांश के अधिकारी होंगे। ये पारिवारिक संघ व्ययसाध्य मशीनों और पूंजी की विपुल राशि की अपेक्षा रखने वाले बड़े पैमाने के पूंजीगत उद्यमों, इंजीनियरी योजनाएं, खानें, रासायनिक तथा धातु शोधन उद्योग, की स्थापना करेंगे। इन उद्योगों के सफल प्रबन्ध से व्यक्तिगत तथा सामूहिक संस्कृति के विकास में किसी प्रकार की बाधा के बदले सहायता ही मिलेगी।[80] मुखर्जी ने दावा किया कि आर्थिक संगठन की यह व्यक्तिनिष्ठ प्रणाली श्रमिकों के स्वाभिमानी और स्वतन्त्र वर्ग को जन्म देगी। इस प्रणाली के अंतर्गत श्रमिक के एक एक दिन के श्रम का विशेष महत्व होगा।[81] अपनी पद्धति के नैतिक और आर्थिक तत्वों को जोड़ते हुए मुखर्जी ने 1900 में प्रधान रूप से छोटे पैमाने के उद्योगों के निजी गठन पर आधृत सामूहिक समाज की संस्थापना की सिफारिश इन शब्दों में की:

> मेरा विचार यह है कि राष्ट्रीय विकास का कार्य इस रूप में सम्पन्न किया जा सकता है कि कार्य और गतिविधि के आध्यात्मिक, बुद्धिजीवी, सैनिक, व्यापारिक, तथा वेतनभोगी सभी क्षेत्रों के कर्मचारियों के समक्ष एक उच्च सांस्कृतिक आदर्श हो। सामाजिक संगठन में सभी के लिए एक सर्वसम्मत निजी और सम्मानित स्थान हो। सभी इस प्रकार पारस्परिक समन्वय और सहयोग से कार्य करें जिससे बिना किसी भेद

भाव के सारे भारतीय समाज की समान रूप से आध्यात्मिक और भौतिक उन्नति हो।"[8]

सदभ

1 थियोडोर मोरिसन दि इकोनामिक ट्राजिशन इन इडिया (लन्न 1916) पृ० 174 75

2 रिपोट आफ दि बाबे फक्टरी लेबर कमीशन आफ 1885 पृ० 5

3 आर० क० दास फक्टरी लबर इन इडिया (बर्लिन 1923) पृ० 56 बुकानन पूर्वोद्धत, पृ० 307 08 भारतीय कारखाना के काम के लब घटा न रूढ़िवादी समाचारपत्र टाइम्स आफ इडिया को भी इतना उत्तेजित किया कि उसन अपने 16 सितबर 1905 के अक म इस कृत्य की इन शब्दो मे निंदा की मालिक श्रमिको को सवेरे से शाम तक काम करने को विवश कर रहे हैं। नीच मालिक अपने लाभो की अतृप्त तष्णा के लिए बेचारे श्रमिको का जीवन रक्त पी रहे हैं—अहमद मुख्तार की पुस्तक फक्टरी लेबर इन इडिया मद्रास 1930 मे पृ० 31 पर उद्धत

4 बुकानन पूर्वोद्धत पृ० 312

5 रिपोट आफ दि बाबे फक्टरी लेबर कमीशन आफ 1885 पृ० 8

6 फक्टरी इसपक्टर की रपट—1888 बुकानन पूर्वोद्धत पृ० 310

7 मारक्विस आफ स लिसबरी का बाबे सरकार को सप्रेषण ए० जी० क्लो इडियन फक्टरी लजिस्लेशन ए हिस्टोरिकल सर्वे (कलकत्ता 1926) (इडियन इडस्ट्रीज और लेबर की एक रेडियो वार्ता स० 37) म उद्धत पृ० 2

8 दास फक्टरी लेबर इन इडिया पृ० 59

9 दास फक्टरी लेबर इन इडिया, पृ० 59 60 बुकानन पूर्वोद्धत, पृ० 308 311 क्लो पूर्वोद्धत पृ० 29 30

10 रिपोट, पृ० 10

11 वही पृ० 13

12 वही पृ० 12 तथा दखिए वही पृ० 11 3

13 दास फक्टरी लबर इन इडिया पृ० 139 बुकानन पूर्वोद्धत पृ० 329

14 रिपोट आफ दि बाब फक्टरी लेबर कमीशन आफ 1885 पृ० 12 3

15 बुकानन पूर्वोद्धत पृ० 332 और 349-51, दास फक्टरी लबर इन इडिया, पृ० 145 6 152 3 वाडिया और मर्चेंट न ए शाट हिस्टरी आफ लेबर कडीशस ऐंड दि एपायर (लेखक कुजिस्की) (लन्न 1942) से एक तालिका प्रस्तुत की है जिसमे यह दिखाया गया है कि 1880 1919 तक भारतीय कारखानो के श्रमिको के वास्तविक वेतन म निरतर गिरावट आई है। उन्होने यह निष्कष निकाला है कि प्रथम विश्वयुद्ध तक की अवधि म धन वेतनो म वद्धि की प्रवृत्ति म पर्याप्त एकरूपता रही है इसके विपरीत दूसरी ओर वास्तविक वेतनो म ह्रास की प्रवृत्ति के दशन होते हैं (पूर्वोद्धत पृ० 372)

16 जम्स नोस फक्टरी इसपक्टर की रिपोट क्लो पूर्वोद्धत पृ० 17

17 देखिए दास फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया (बर्लिन 1923) पृ० 5-11

18 जे० सी० किड ए हिस्टरी आफ फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया (कलकत्ता 1920) पृ० 45 क्लो पूर्वोद्धत प० 45

19 किड पूर्वोद्धत प० 9 क्ला पूर्वोद्धत प० 4

20 दास फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया प० 15, किड पूर्वोद्धत पृ० 5

21 दास फैक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया प० 16 सरकार ने इसके बदले एक अय स्थिति ग्रहण की कि स्वय पीडितो द्वारा अपन आप अथवा उनके प्रतिनिधियो द्वारा मिलमालिका द्वारा किए गए किसो अत्याचार के विरुद्ध सरकार को कोई शिकायत ही नही मिला है। (क्ला द्वारा उद्धत पूर्वोद्धत प० 6)

22 दास फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया, प० 18 20

23 वही, प० 16-7

24 उदाहरणाथ इसका 15 जनवरी 1880 का अक देखिए (आर० एन० पा० बब०, 17 जनवरा 1880)

25 डॉ० चमनलाल कुली (लाहौर 1932) खड II पृ० 78 और क्लो पूर्वोद्धत, पृ० 9

26 क्लो पूर्वोद्धत प० 11

27 1881 के ऐक्ट की सख्या, 15

28 किड—पूर्वोद्धत प० 21 पर उद्धत

29 आर० एन० पी० बब० 28 नवबर 1874

30 वही, 4 जनवरी 1879

31 वही, 4 जनवरी 1879 तथा 25 जनवरी 1879 क्रमश

32 वही 13 दिसबर 1879 13 नवबर 1880 2 अप्रैल 1881 क्रमश

33 26 जनवरी (वही 1 फरवरा 1879) और 23 नवबर (वही, 29 नवबर 1879)

34 वही, 13 नवबर 1880

35 वही 26 माच 1881

36 वही 22 नवबर 1879

37 इसका कारण कदाचित यह तथ्य था कि एस० एस० बगाली उनके स्वामियो म एक थे

38 28 मार्च (आर० एन० पी० बम०, 2 अप्रल 1881)

39 क्लो पूर्वोद्धत पृ० 9

40 आर० एन० पा० बब० 27 माच 22 मई 2 अक्तूबर 1875 तथा देखिए ए० बी० पी० 2 सित० 1875 बा० बी० मजूमदार द्वारा पूर्वोद्धत पृ० 353 पर उद्धत

41 नेटिव ओपीनियन 29 दिसबर 1878 19 जनवरी 1879 गुजरात मित्र 29 दिसबर 1878 12 जनवरी 1879 जाम जमशद 8 जनवरी 1879, जलगांव समाचार 19 जनवरी 1879 बबई समाचार 23 जनवरी 1879 खानदेश व मव 13 जनवरी 1879, राजदान परस्त 26 जनवरा 1879 अरुणादय 26 जनवरा 1879 लोकमित्र 26 जनवरी 1879 और सत्य सन्त 15 फरवरी 1879 (देखिए आर० एन० पा० बब० सप्ताहात 4 11 18 और 25 जनवरी तथा 1 15 22 फरवरी 1879) ग्वयाल ए हिंदुस्तान 28 दिस० 1878 (आर० एन० पा० पा० एन० 4 जनवरी 1879) अखबारे आम 8 जनवरी (वहा 11 जन० 1879) नसीमे आगरा 30 जनवरी (वहा 1 फरवरा 1879) भारत मिहिर 29 जनवरी (आर० एन० पा० बग० 8 फरवरा 1879) सहचर 10 माच (वहा 15 मार्च 1879)

42 देखिए, आर० एन० पी० बब० के सबधित भ्रक

43 फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया, जे० पी० एस०, जुलाई 1881 खड IV स० 1, प० 39

44 17 माच 26 माच और 24 माच 1881 क्रमश

45 जनवरी (आर० एन० पी० पी० एन० 8 जनवरी 1880)

46 बबई के लिए देखिए, जामे जमशद, 28 नव० 1879 और 14 माच 1881, बबई समाचार 8 दिसबर 1879 और 22 दिस० 1880 हितेच्छु 11 दिस० 1879 सूर्यप्रकाश 13 दिस० 1879 और 19 माच 1881 शमशेर बहादुर 17 दिस० 1879, सूर्योदय, 29 नव० 1880 बाबे क्रानिकल, 14 माच 1881 राजदान परस्त 13 माच 1881 खानदेश वमव 18 माच 1881 गुजरात मित्र 20 माच 1881, गगा लहरी, 25 माच 1881 शुभसूचक 25 माच 1881 शिवाजी, 25 माच 1881 न्याय प्रकाश 28 माच 1881 आर्यावत तथा नासिक वत्त 9 अप्रल 1881 (देखिए आर० एन० पी० बब० के सबधित भ्रक) बगाल के लिए देखिए सहचर 14 माच (आर० एन० पी० बग० 26 माच 1881) नवविभाकर 21 माच साधारणी 27 माच (वही 2 अप्रल 1881), भारत मिहिर, 29 माच (वही 9 अप्रल 1881) आनद बाजार पत्रिका 4 अप्रल (वही, 16 अप्रल 1881)

47 नेटिव ओपीनियन 19 जनवरी (आर० एन० पी० बब० 25 जनवरी 1879) गगा लहरी, 25 माच (वही, 2 अप्रल 1881), बगाली 26 मार्च 1881 और दि फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया पूर्वोक्त स्थल पृ० 48 9 मजदार बात यह है कि यह तक उस समय बिना किसी हिचकिचाहट या परेशानी के ताक पर रख दिया गया जब राष्ट्रवादी नताओ ने बागान मजदूरो अथवा किसानो का मामला उठाया उस समय उन्होने अचानक इन मूक प्राणियो की वाणी की भूमिका अपना ली

48 जामे जमशेद 25 माच (आर० एन० पी० बब०, 27 माच 1875) गुजराती 28 नवबर (वही 4 दिस० 1880), सहचर 14 माच (आर० एन० पी० बग० 26 माच 1881) दि ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन ने 27 फरवरी 1879 के भ्रक म लिखा कमचारियो और मालिको के आपसी सबध पूणत स्वस्थ हैं। कमचारियो से कभी उनकी इच्छा के विरुद्ध काम नही लिया जाता। उनके वतन निश्चित हैं और वे पूण उदारता के साथ तथा नियत समय पर दिए जात हैं इसके लिए अगरेजी और देशी कारखान सचमुच प्रशसा के पात्र हैं। कतिपय अपवादो को छोडकर सभी कारखाने प्राय एसे स्थानो पर बनाए गए हैं जो स्वास्थ्य और स्वच्छता की दृष्टि से सवथा उपयुक्त हैं जब कोई कमचारी कारखाने मे बीमार पड जाता है तो मालिक उसके स्वास्थ्य की भलीभाति देखभाल करते हैं

49 बबई समाचार, 2 मई (आर० एन० पी० बब० 3 मई 1879) और 2 दिसबर (वही 4 दिस० 1880) जामे जमशेद 28 नवबर (वही 29 नव० 1879) सहचर 14 माच (आर० एन० पी० बग० 26 माच 1881)

50 फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया, पूर्वोक्त स्थल पृ० 49

51 जामे जमशेद 17 मई (आर० एन० पी० बब० 22 मई 1875) फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया, पूर्वोक्त स्थल पृ० 35 6 और 41, ए० बी० पी० 17 माच 1881

52 गुजरात मित्र 12 जन० (आर० एन० पी० बब० 18 जन० 1879) फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया पूर्वोक्त स्थल प० 37 40 और49 इनमे से परवर्ती म निम्नलिखित भवतरण प्रकाशित हुआ था "इस कथन में कोई अतिरजना नही कि जहा तक नियमानुसार कारखानो म काम

(वही 13 दिस० 1890) गुजराती 7 दिस० (वही), मराठा 14 दिसबर 1890 समय, 17 दिसबर (आर० एन० पी० बग० 20 दिसबर 1890)

95 1890 क बिल और 1891 के टैक्स पर समाचारपत्रा की टिप्पणियो में कमी का एक अन्य कारण यह था कि समाचारपत्र पहले ही एज आफ कानसेंट बिल (सहमति बिल) म व्यस्त थे

96 जामे जमशद 8 माच (आर० एन० पी० बब० 4 माच 1891) तथा इदु प्रकाश 11 अप्रल 1891 मराठा 5 अप्रल 1891 सुरभि ओ पताका 10 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 18 अप्रल 1891) सहचर 9 सितबर (वही 19 सितबर 1891)

97 मराठा 16 फरवरी 1890 और 5 अप्रल 1891 सुरभि ओ पताका 13 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 22 फरवरी 1890) दनिक ओ समाचार चद्रिका, 5 माच (वही 8 माच 1890) के० एल० नुलकर एल० सी० पी० 1891 खड XXX, प० 177 179

98 हिंदू ने 10 दिसबर 1890 के अक म अपेक्षाकृत और अधिक आशा प्रकट की उसके सपादक न यह कहते हुए कि— श्रमिका की स्थिति अच्छी है और व काफी प्रसन्न हैं लिखा कि उसन स्वय अपनी आखो से देखा है कि किस प्रकार उनक पारिश्रमिक बढ गए हैं किस अच्छी प्रकार से उनकी देखभाल की जाती है और कितना सुखद भविष्य उनके सामने है सहचर, 11 माच (आर० एन० पी० बग० 21 माच 1891)

99 आर० एन० पी० बब० 17 मई 1890 तथा सहचर 9 सितबर (आर० एन० पी० बग०, 19 सितबर 1891) यह द्रष्टव्य है कि सरकारी प्रवक्ताओ न भारत म निधनता की स्थिति को नकारने के लिए आय और आवश्यकताओ की सापेक्षिकता का तक पेश किया तो राष्ट्रवादी नेताओ ने इसे अवज्ञानिक, क्रूर तथा हृदयहीन' बताकर अस्वीकृत कर दिया देखिए, अध्याय 1

100 दास फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया प० 90-1 तथा हिंदुस्तान 1 जून (आर० एन० पी० एन० 5 जून 1889)

101 मराठा 3 जून 1889 गुजरात दपण 30 मई (आर० एन० पी० बब० 1 जून 1889) भारत जीवन 1 दिसबर (आर० एन० पी० एन० 9 दिस० 1890) दास के फक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया प० 90 पर उद्धत के० एन० बहादुरजी, सहचर 9 सितबर (आर० एन० पी० बग०, 19 सितबर 1891)

102 आर० एन० पी० बग० 26 जनवरी 1889

103 हिंदू 17 मई 1889 समय 28 दिसबर 1888 (आर० एन० पी० बग० 5 जनवरी 1889) सुलभ समाचार और कुशदह 18 जन (वही 26 जनवरी 1889) मराठा 14 दिस० 1890 समय 14 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 22 फरवरी 1890) नेटिव ओपीनियन 6 फरवरी (आर० एन० पी० बब० 8 फरवरी 1890)

104 कतिपय समाचारपत्रा ने इस प्रस्ताव का भी विरोध किया परन्तु केवल जून 1890 से पहले तक ही देखिए, समय 24 मई (आर० एन० पी० बग० 1 जून 1889), हिंदुस्तान 22 मई (आर० एन० पी० एन० 29 मई 1889) और 23 अप्रैल (वही 28 अप्रैल 1890) भारत जीवन 1 दिस० (वही 9 दिस० 1890) नेटिव ओपीनियन 6 फरवरी (आर० एन० पी० बब० 8 फरवरी 1890) इस सदभ म 22 फरवरी 1889 के अक म हिंदुस्तान न इस तक को आगे बढाते हुए लिखा कि इस कदम से मिलमालिक अपने लाभ के सप्तमांश से वचित हो जाएगे यह भी मजेदार बात है कि उस समय हिंदुस्तान का सपादक कोई और नहीं मदनमोहन मालवीय थ और मालिक थ राजा रामपालसिंह जो उन दिनों कांग्रेस के मच के एक प्रखर

साहसी बाधा के लिए दि इंडियन नेशन बिल्डर्स (मद्रास, तिथि रहित तृतीय संस्करण) भाग 1 पृ० 146

105 6 अप्रैल 1891 इस बात का श्रेय उसे अवश्य मिलना चाहिए कि इस विचित्र रवैये का प्रयोजन भी उसने उसी संपादकीय में स्पष्ट कर दिया है परंतु श्रमिकों के हितों से अलग हटकर यह पूछना उपयुक्त होगा कि क्या सरकार पर पूंजीपतियों इस प्रकार के कानून से जिनके उत्पादक उद्यम बुरी तरह से अस्त व्यस्त हो गए हैं के हितों की देखभाल का दायित्व नहीं है स्पष्ट है कि इंदु प्रकाश के लिए उन्नीयमान औद्योगिक पूंजीवाद की शक्तियों के विरोध की अपेक्षा हिंदू रूढ़िवादिता को क्षीण करने वाली शक्तियों का विरोध करना सरल ही था

106. मराठा 13 मार्च 1892 संजीवनी 5 सितंबर (आर० एन० पी० बंग० 12 सितंबर 1891) नेटिव ओपीनियन 10 मार्च गुजरात दर्पण 10 मार्च बंबई समाचार 7 मार्च (आर० एन० पी० बंब०, 12 मार्च 1892) और देखिए बंगवासी 9 अप्रैल (आर० एन० पी० बंग० 16 (अप्रैल 1892)

107 हिंदुस्तान 23 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 28 अप्रैल 1890) भारत जीवन 1 सितंबर (वही 9 सितंबर 1890) मराठा 7 सित० 1890 हिंदू 16 सित० 1891

108 आर० एन० पी० बंग० 18 अप्रैल 1891

109 और देखिए बंबई समाचार 4 सितंबर (आर० एन० पी० बंब० 6 सितंबर 1890)

110 ए० बी० पी० 7 फरवरी 1889, हिंदू 17 मई 1889 कोहेनूर 28 मई (आर० एन० पी० पी० 8 जून 1889) समय 14 फरवरी (आर० एन० पी० बंग०, 22 फरवरी 1890) भारत जीवन, 1 सितम्बर (आर०एन०पी०एन०) 9 सितम्बर 189०) दनिक ओ समाचार चन्द्रिका 5 मार्च (वही 8 मार्च 1890) सुरभि ओ पताका 10 अप्रैल (वही 18 अप्रैल 1890) सहचर, 9 सितंबर (वही 19 सितंबर 1891) इंदु प्रकाश 11 अप्रैल 1891

111 सी० बी० ए० पृ० 264-5 बनर्जी ने बंगाल के विदेशी स्वामित्ववाले पटसन उद्योग को भी अपने संरक्षण में लिया जा हुको के प्रहार का शिकार था

112 और देखिए मराठा 23 सितंबर 1888 समय 28 दिसंबर (आर० एन० पी० बंग० 5 जनवरी 1889) सुरभि ओ पताका 10 अप्रैल (वही 18 अप्रैल 1891), गम क्वारे हिंद 21 मार्च (आर० एन० पी० पी० 28 मार्च 1891)

113 मराठा 23 सित० 1888 ए० बी० पी० 8 फरवरी 1889, हिंदू 14 और 17 मई 1889 और 10 दिस० 1890 ज्ञान प्रकाश 16 मई और ट्रिब्यून 22 मई (वी० ओ० आई० जून 1889) सुलभ समाचार और कुशदाह 18 जनवरी (आर० एन० पी० बंग० 26 जनवरी 1889), सुरभि ओ पताका 31 जनवरी (वही 9 फरवरी 1889) सहचर 7 फरवरी (वही 16 फरवरी 1889) प्रतिकार 7 जून (वही, 15 जून 1889) हिंदी प्रदीप (आर० एन० पी० एन० 26 जून 1889) गुजरात दर्पण 30 मई और शिवाजी 24 मई (आर० एन० पी० बंब० 1 जून 1889), कोहेनूर 28 मई (आर० एन० पी० पी० 8 जून 1889) संजीवनी 8 फरवरी (आर० एन० पी० बंग० 15 फरवरी 1890) समय 14 फरवरी (वही 22 फरवरी 1890) दनिक ओ समाचार चन्द्रिका 5 मार्च (वही 8 मार्च 1890) कासिम उल अखबार 10 फरवरी (आर० एन० पी० एम० 28 फरवरी 1890) भारत जीवन 1 दिस० (आर० एन० पी० एन० 9 दिस० 1890) ट्रिब्यून 11 मार्च (आई एस० वी० ओ० आई०, 29 मार्च 1891 पृ० 257), नेटिव ओपीनियन 26 मार्च (वही 19 अप्रैल 1891 पृ० 316) सहचर 11 मार्च (आर० एन० पी०

जाती रही मेरा विचार है कि हम मिल अभिकर्ताओ के लिए इस सबध म (1891 का फक्टरी ऐक्ट) शिकायत करने की कोई बात नही इसके विपरीत हमें तो यह पग उठाने के लिए सरकार का ध यवाद करना चाहिए (वही, प० 211) तथा दखिए ज० एल० माका)एल० सा० पी० 1891 खड XXX प० 162) मेरे विचार मे सरकार ने शूरता और साथ ही साथ विवक क साथ युद्ध लडा है

138 बबई समाचार 3 और 5 फरवरी (आर० एन० पी० बब 8 फरवरी 1890), मराठा 22 जून 1890 जाम जमशेद 8 माच (आर० एन० पी० बब 14 माच 1891)

139 हिंदी मुहावरे मुद्दई सुस्त और गवाह चुस्त का भाव ही यहा अधिक उपयुक्त है

140 अपनी पुस्तक रानाड प्राफट आफ लिबरेटड इडिया मे डी० जी० कर्वे लिखते हैं कि रानाड राज्य के हस्तक्षेप को इस रूप म चाहत थ कि जिसस औद्योगिक प्रगति का पथ इस रूप मे निष्कंटक हो जाए कि थोडी सी परिहाय कठिनाई न हो (प० 118) परतु हम रानाड के भारतीय अथशास्त्र पर लिख निबधो मे अथवा उनके अन्य किसी प्रसिद्ध निबध म इस प्रकार का कोई उद्धरण ढूढ पाने मे असफल रहे हैं दुर्भाग्यवश कर्वे ने सदभ निर्देश नही दिया दूसरी ओर भगतोष भवतोष दत्त का धारणा है रानाडे के समग्र लेखन मे वर्गों के प्रति न्याय की आवश्यकता के सबध मे चन्द लोगो के हाथो मे पूजी के केंद्रित हो जाने के दुष्प्रभाव के सबध मे श्रमिक सघो की आवश्यकता के सबध म अथवा मिल मालिको के विरुद्ध श्रमिको क हितो के सरक्षक प्रभावी उपायो के सबध म किसी उद्धरण को ढूढना निरथक चेष्टा ही है दि बकग्राउड आफ रानाडेज इकानामिक्स इडियन जरनल आफ इकानामिक्स', जनवरी 1942 खड XXII स० 3 प० 262 3

141 इसके विपरीत उन्होंने 1911 मे 1911 क इडियन फक्टरी बिल की व्यवस्था जिसम कपडा कारखाना म वयस्क श्रमिक के काम के घटो को प्रतिदिन बारह तक सीमित करने का विधान था के विरुद्ध मतदान किया

142 सी० पी० ए० 264-5

143 रानाडे एमेज प० 60

144 वान्चिया और मर्चेंट पूर्वोद्धत प० 373

145 1887 म फक्टरी इसपेक्टर जम्स जास न रपट दी कि बबई वस्त्र उद्योग अत्यत समद्ध है और कई कारखाना न चार वर्षों म ही अपनी लागत पूजी वापस चुकता कर दी है (कला पूर्वोद्धत पृ० 17 पर उद्धत) 1905-06 मे भारतीय वस्त्र उद्योग का औसत विशुद्ध लाभ 227 लाख रुपये था जबकि इन दो वर्षों म वेतन के रूप में वार्षिक भुगतान की राशि थी कवल 209 लाख रुपये एस० डी० महता दि इण्डियन काटन टक्सटाइल इन्डस्ट्री (बबई 1953) पृ० 203

146 सा० पी० ए० म पृ० 12

147 एन० सी० पी० 1901 खड XL प० 132.

148 इपीरियल गजेटियर आफ इडिया (1908) खड III पृ० 56-7

149 तुलनाय कजन स्पीचेज II पृ० 238-9 असम म श्रम व्यवस्था अनिवायत इकरारनामे क ढग की थी जिसके मुताबिक श्रमिको को निश्चित वर्षों का अनुबध करके असम जाना होता था यदि श्रमिक अनुबध की पूर्ति नहीं करते थे तो सरकार दड विधान के प्रयोग की योजना द्वारा बागान मालिको की सहायता करती थी भारतीय परिस्थितियों क अनुसार इकरारनामा पद्धति एक बार असम पहुचे श्रमिको को पूर्णत मालिको क अधीन और उनकी दया पर निर्भर बना देता था

की कि देश के किसी भी कानून म इससे अधिक बदर व्यवस्थाए मिलना सभव नहीं' (वही पृ० 169)

166 1897 1898 1899 1900 और 1901 के प्रस्ताव क्रमश IV, XX, XIV X तथा XIII

167 बागल पूर्वोद्धत पृ० 105-07

168 खड II पृ० 352 522 तथा देखिए इग्लड ऐंड इडिया पृ० 131

169 बगाली 12 मई 1888, बगाल के समाचारपत्रो के लिए देखिए, आर० एन० पी० बग०, 26 मई 2 9 16 और 23 जून 1888 वायस आफ इडिया, जुलाई 1888 (खड VI, स० 7), इन्डियन स्पेक्टेटर 3 जून (वही) आफ्ताबे हिंद 15 जून (आर० एन० पी० पी०, 23 जून 1888), इपीरियल पेपर 23 जून (वही 7 जुलाई 1888)

170 विशेष रूप से देखिए उनके 1886 के अक जब प्रेस ने कुली अधिनियम के विरुद्ध एक सशक्त अभियान छेड दिया था सजीवनी के अक्तूबर नवबर और दिसबर म प्रकाशित अको म इस विषय पर सुदर और प्रामाणिक लेखमाला उपलब्ध है

171 ए० बी० पी० 19 अगस्त 1886, सजीवनी 20 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 27 अगस्त 1887) 1888 का मेमोरियल आफ दि इडियन एसोसिएशन बागल पूर्वोद्धत परिशिष्ट ई पीछे 169 पादटिप्पणी म उल्लिखित समाचारपत्र ए० बी० पी० 24 मई 1888 हिंदू 30 मई 1888 इन्दु प्रकाश 11 जून 1888 नेटिव ओपीनियन 3 जून 1888 ए० एम० भीमजी रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 160, रहबर 14 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 18 फरवरी 1892) 1893 म इडियन एसोसिएशन द्वारा राज्य सचिव को प्रस्तुत विरोधपत्र 1893 से 1895 6 तक के वर्षो की रिपोर्ट आफ दि इडियन एसोसिएशन पृ० 82 जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 165 6 दत्त इग्लड ऐंड इडिया पृ० 131 और ई० एच० II पृ० 352 उदाहरणार्थ जे० सी० घोष ने 1896 म काग्रेस के प्रतिनिधियो को बताया मैंने गरीब आदमी और औरतो को मौत से भी बदतर भाग्य से बचने के लिए जहाज से ब्रह्मपुत्र के गहरे पानी म छलाग लगाते देखा है उसी काग्रेस के सामने आर० के० सरकार ने विवरण देते हुए कहा अनजान और असावधान जनता पर एक फौज सी खुली छोड दी गई है और मैं आपको विश्वास दिला सकता हू कि देश के दूरस्थ प्रत प्रदेशो म इनके अतीत के पडारियों के आतक से भी बदतर है रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 165 और 170 क्रमश

172 प्रभाती 4 जून (आर० एन० पी० बग० 7 जून 1884) सन्चर 4 जून (वही 14 जून 1884) सजीवनी 22 नवबर (वही 29 नव० 1884) पताका 25 सित० और नवविभाकर, 28 सित० (वही, 3 अक्तूबर 1885) दि रिपोर्ट आफ नेटिव प्रेस फार बगाल 1886 सोम प्रकाश 19 जुलाई और आनद बाजार पत्रिका 19 जुलाई (वही 24 जुलाई 1886) सजीवनी, 7 अगस्त (वही 14 अगस्त 1886) भारत मिहिर 19 अगस्त (वही 28 अगस्त 1886) अक्तूबर नवबर और दिसबर की सजीवनी (वही अक्तू० नव० और दिस० 1886) ए० बी० पी० 19 अगस्त 1886 हिंदू 24 जून 1887 मराठा 12 फरवरी और 27 मई 1888 1888 का इडियन एसोसिएशन का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल पीछे 169 की पादटिप्पणी म उल्लिखित समाचारपत्र ए० बी० पी० 24 मई 1888 वायस आफ इन्डिया जुलाई 1888 (खड VI स०7) इडियन स्पेक्टेटर ट्रिब्यून 23 मई 1888 3 जून 1888 (वही) रहबर 14 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 18 फरवरी 1892) बगाली 4 फरवरी 1893 दत्त ई एच II पृ० 522 कैसरे हिंद 8 मार्च (आर० एन० पी० बम० 14 मार्च 1903) जी० एस० अय्यर ई प पृ० 185

173 ए० बी० पी० 24 मई 1888, इन्डियन एसोसिएशन का 1888 का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल दत्त इग्लड ऐंड इडिया प० 131 ई एच II प० 352

174 बागल पूर्वोद्धत प० 103 तथा इडियन एसोसिएशन का 1888 का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल

175 जे० सी० घोष ने 1896 मे काग्रेस क अधिवेशन मे एकत्रित प्रतिनिधियो को एक घटना बताई जहा बडी सख्या म औरतो और मरदो पर सामूहिक रूप से कोड बरसाए गए चीफ कमिश्नर की 1887 की श्रमिको के प्रसग म उत्प्रवास सबधी रिपोर्ट को उद्धत करते हुए उन्होने एक घटना का विवरण दिया कि किस प्रकार मनेजर क घर के बराडे के एक खभे के साथ स्त्रियो को बाध दिया गया उनके कपडे कमर तक उठा दिए गए और उनके नगे चूतडो पर चमडे क चाबुक से पिटाई की गई (रिप० आई० एन० सी 1896 पृ० 167)

176 रिपोर्ट आन आ दि नेटिव प्रेस बगाल 1886 सोम प्रकाश 19 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 24 जुलाई 1886) ए० बी० पी० 24 मई और 19 जुलाई 1888 मराठा 12 फरवरी 27 मई 1888 ट्रिब्यून 23 मई (वी० ओ० आई० जुलाई 1888) इडियन एसोसिएशन का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 167 दत्त ई एच II पृ० 352, कसरे हिंद, 8 माच (आर० एन० पी० बब 14 माच 1903)

177 इडियन एसोसिएशन 1888 का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल, ट्रिब्यून 23 मई (वी आ० आई० जलाई 1888), बगाली 4 फरवरी 1893 जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1896 प० 167 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 185 तुलनीय कजन स्पीचेज I पृ० 243 असम मे स्वतत्र श्रमिको की अपेक्षा अनुबधित श्रमिको की मृत्यु दर भयकर रूप से ऊची थी

178 इडियन एसोसिएशन द्वारा 1893 म राज्य सचिव को प्रेषित याचिका रिपोर्ट आफ दि इडियन एसोसिएशन फार 1892 3 टु 1895-6 प० 82 बगाली 21 जनवरी 1893 जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1896 प० 167 सी० वाई० चितामणि इडिया ऐंड लाड कजन पूर्वोक्त स्थल प० 243 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 180 5

179 जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1896 प० 167 तथा बी० सी० पाल वही प० 168 बगाली 4 फरवरी 1893 हितवादी 23 माच (आर० एन० पी० बग० 31 माच 1900) इडियन एसोसिएशन ने 10 माच 1893 के ज्ञापन मे उल्लेख किया कि यदि कुलियो का अस्वास्थ्य के लिए हानिकर बागो म काम करना पडता है अथवा यदि उन्ह अपने घरो स बहुत दूर आना पडता है तो उन्ह अपेक्षित त्याग के अनुरूप ही उपयुक्त वेतन मिलना चाहिए (रिपोर्ट आफ दि इडियन एसोसिएशन 1892 3 टु 1895-6 पृ० 22)

180 जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1896 प० 167 हितवादी 23 माच (आर० एन० पी० बग० 31 माच 1900) जी० एस० अय्यर ई ए पृ० 182

181 केसरी 10 माच (आर० एन० पी० बब 14 माच 1903) और देखिए जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1896 प० 165 जी० एस अय्यर ई ए प० 181

182 सोम प्रकाश 19 जुलाई आनद बाजार पत्रिका 19 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 24 जुलाइ 1886) ए बी० पी० 19 मई 1886 सजीवनी 20 अगस्त (आर० एन० पी० बग 27 अगस्त 1887) प्रतिकार 26 मई (वही 2 जून 1888) परिदशक 11 जून (वही 23 जून 1888) ए० बी० पी० 24 मई 1888 मराठा 27 मई 1888 हिंदू 30 मई 1888 1888 का इडियन एसोसिएशन का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल बी० सी० पाल रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 159 बगाली 4 जून 1892 रिपोर्ट आफ दि इडियन एसोसिएशन 1892 3 टु 1895-6

को वि देश के किसी भी कानून मे इससे अधिक बबर व्यवस्थाए मिलना सभव नहीं (वही, पृ० 169)

166 1897 1898 189) 1900 और 1901 के प्रस्ताव क्रमश IV XX, XIV X तथा XIII

167 बागल पूर्वोद्धत पृ० 105-07

168 खड II पृ० 352 522 तथा देखिए इग्लड ऐंड इडिया, पृ० 131

169 बगाली 12 मई 1888, बगाल के समाचारपत्रो के लिए देखिए, आर० एन० पी० बग० 26 मई, 2 9 16 और 23 जून 1888 वायस आफ इडिया जुलाई 1888 (खड VI स० 7) इडियन स्पेक्टेटर 3 जून (वही) आफ्तावे हिंद 15 जून (आर० एन० पी० पी० 23 जून 1888) इपीरियल पेपर 23 जून (वही 7 जुलाई 1888)

170 विशेष रूप से देखिए उनके 1886 के अक जब प्रेस ने कुली अधिनियम के विरुद्ध एक सघन अभियान छेड दिया था सजीवनी के अक्तूबर नवबर और दिसबर म प्रकाशित अको मे इस विषय पर सुदर और प्रामाणिक लेखमाला उपलब्ध है

171 ए० बी० पी० 19 अगस्त 1886, सजीवनी 20 अगस्त (आर० एन० पी० बग०, 27 अगस्त 1887) 1888 का मेमोरियल आफ दि इडियन एसोसिएशन बागल पूर्वोद्धत परिशिष्ट ई पीछे 169 पादटिप्पणी मे उल्लिखित समाचारपत्र ए० बा० पी० 24 मई 1888 हिंदू 10 मई 1888 इदु प्रकाश 11 जून 1888 नेटिव ओपीनियन 3 जून 1888 ए० एम० भीमजी रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 160 रहबर 14 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 18 फरवरी 1892) 1893 मे इडियन एसोसिएशन द्वारा राज्य सचिव को प्रस्तुत विरोधपत्र 1892 3 से 1895 6 तक के वर्षों की रिपोर्ट आफ दि इडियन एसोसिएशन पृ० 82 जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 165 6 दत्त इग्लड ऐंड इडिया पृ० 131 और ई० एव० II पृ० 352 उदाहरणार्थ जे० सी० घोष ने 1896 मे काग्रेस के प्रतिनिधियो को बताया मैंने गरीब आदमी और औरतो को मौत से भी बदतर भाग्य से बचने के लिए जहाज से ब्रह्मपुत्र के पानी म छलाग लगाते देखा है उसी काग्रेस के सामने आर० के० सरकार ने विवरण दे वहा अनजान और असावधान जनता पर एक फौज सी खुली छोड दी गई है और मैं विश्वास दिला सकता हू कि देश के दूरस्थ प्रात प्रदेशो म इनके अतीत के पडारियो से भी बदतर है रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 165 और 170 क्रमश

भाग में उत्प्रवासियो की घरती पर प्रतिबध लगाने का अधिकार दिया गया था दडनीय कानून न्यूनाधिक रूप से अपरिवर्तित ही रहा दखिए अधिनियम का अध्याय IX

198 दास हिस्टरी आफ इडियन लेबर लजिस्लेशन प० 23 और चमनलाल पूर्वोद्धत खड II, प० 6 7 चालू दुर्व्यवहारा के प्रति श्रमिको के असतोष की अभिव्यक्ति 1903 मे बडे पमाने पर असम के चाय बागाना मे हुए उपद्रवो के रूप मे हुई देखिए दास प्लाटेशन लेबर इन इडिया प० 34

199 कजन स्पीचेज II प० 245

200 हिंदू 3 नवबर 1899 ए० बी० पी० 26 28 फरवरी 1901 कसरी 19 माच (आर० एन० पी० बव 23 माच 1901), हितवादा 15 माच (आर० एन० पी० बग० 23 माच 1901) बगाली 19 माच 1901

201 सजीवनी 2 नव० (आर० एन० पी० वग० 11 नवबर 1899) बगवासी 11 नव० (वही 18 नवबर 1899) आर० एन० पी० बग० 9 माच 1901 मे उल्लिखित बगाल के समाचारपत्र सजीवनी 28 फरवरी हितवादी 1 माच इडियन मिरर 1 2 माच 1901 (वही 9 माच 1901) बगाली, 17, 22 24 फरवरी 1901 ए० बी० पी० 26 28 फरवरी 1901 हिंदू 13 माच 1901 मद्रास स्टडड 10 माच (आर० एन० पी० एम० 16 माच 1901), एडवोकट, 1 माच (आर० एन० पी० एन०, 2 माच 1901) श्रीराम एल० सी० पी० 1901 खड XL पृ० 86 पी० आनद चारलु वही प० 131 2 जब क० बकिघम न परिषद म प्रथम तीन वर्षों मे पुरुषा और स्त्रियो क वतन क्रमश 5 और 4 रुपये तथा चतुथ वष म क्रमश 6 और 5 रुपये निर्धारित करने का सशाधन पेश किया तो परिषद के सभी भारतीय सदस्यो ने उसके विरुद्ध मतदान किया (वही प० 146)

202 एल० सी० पी० 1901 खड XL प० 147

203 कजन स्पीचेज II, पृ० 236

204 वही प० 246-7 तथा देखिए प० 234-5

205 एल० सी० पी० 1901 खड XL प० 150

206 बगाली 10 माच और 19 माच 1901 हिंदू 13 माच 1901, ए० बी० पी० 11 माच 1901 बगाल के समाचारपत्रा के लिए देखिए आर० एन० पी० बग० 16 23 30 माच 1901 मद्रास स्टडड 10 माच और स्वदेशमित्रन 11 माच (आर० एन० पी० एम० 16 माच 1901), इदु प्रकाश 28 माच (आर० एन पी० बब 30 माच 1901) अवध टाइम्स 7 माच (आर० एन० पी० एन० 9 माच 1901) दत्त ई एच I प० XIV और ई एच II प० 522 आइ० एन सी० 1901 का प्रस्ताव XIII पी० आनद चारलु श्रीराम तथा विपिन कृष्ण बोस न सर हेनरी काटन के स्वर के साथ स्वर मिलाया और बकिघम के सशोधन क विरुद्ध मत दिया एल० सी० पी० 1901 खड XL पृ० 158

207 मराठा 17 माच 1901 तथा इडियन मिरर 10 माच प्रतिवासी 11 माच (आर० एन० पी० बग० 16 माच 1901) बगवासी 16 माच बसुमती 21 माच (वही 23 माच 1901) प्रभाती 20 माच (वही 30 माच 1901) दत्त ई एच I प० 14-15 ई एच II प० 352 और 522 दत्त ने एक अन्य उदाहरण देकर सरकार के मजदूरा क प्रति और बागान मालिका के प्रति व्यवहार मे अतर दिखाया कि जब 1903 म बागानमालिका ने उस निर्यातित चाय पर कर लगाने की माग की जिसकी आय का उपयोग भारत में चाय की खपत पर होना था तब भारत

प० 22 7, जे० सी० घाप रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 167 केसरी, 19 माच (आर० एन० पी० बब०, 23 माच 1901) कसरे हिंद 8 माच (वहा 14 माच 1903), दत्त ई एच II पृ० 352

183 वी० सी० पाल मेमोरीज, खड II प० 54

184 बगाली, 11 माच 1893, ए० बी० पी०, 28 फरवरी 1901 दत्त ई एच II पृ० 351 2

185 सजीवनी 19 नवबर (आर० एन० पी० बग०, 26 नव० 1887) तथा ए० बी० पी०, 19 जुलाई 1888

186 20 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 27 अगस्त 1887)

187 मई 1888 का इडियन एसोसिएशन का भाषण, पूर्वोक्त स्थल, बागल पूर्वोद्धत पृ० 105-0० बी० सी० पाल रिप० आई० एन० सी० 1888, पृ० 158 162 ए० बी० पी० 19 अगस्त 1886 बगाली 12 मई 1888 मराठा 27 मई 1888, हिंदू 30 मई 1888, नेटिव ओपीनियन 3 जून 1888 इदु प्रकाश 11 जून 1888, वायस आफ इडिया जुलाई 1888 (खड VI स०7) ट्रियून 23 मई और इडियन स्पेक्टेटर 3 जून (वही) बगाल के समाचारपत्रों के लिए देखिए, आर० एन० पी० बग० 26 मई 2 9 23 जून 1888 इडियन एसोसिएशन का 1893 का ज्ञापन रिपाट आफ दि इडियन एसोसिएशन 1892 3 टु 1895 6 प० 83-8

188 सजीवनी 29 नवबर (आर० एन० पी० बग० 29 नव० 1884) मराठा 27 मई 1888, ए० बी० पी० 24 मई 1888

189 इण्डियन एसोसिएशन का 1893 म दिया गया भाषण पूर्वोक्त स्थल पृ० 23-7, बगाली 11 माच 1893

190 हिंदू 30 मई 1888, बगाली 5 दिसबर 1891 इडियन एसोसिएशन द्वारा 1893 म प्रस्तुत भाषण रिपोट आफ दि इडियन एसोसिएशन 1892 3 टु 1895 6 प० 21 इडियन एसोसिएशन द्वारा 1896 म प्रस्तुत भाषण वही प० 92 बगाली 6 जून और 15 अगस्त 1896 आई० एन० सी०, 1896 1897 1898 1899 1900 और 1901 के प्रस्ताव सख्या XV IV XX XIV X और XIII क्रमश हिंदू 3 8 नव० 1899 न्यू इडिया 26 अगस्त 1901 सी० वाइ० चितामणि इण्डिया ऐंड लाड कजन एच० आर० अप्रल 1901 प० 244 जे० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 166 दत्त ई एच II प० 352

191 दत्त ई एच II पृ० 352 तथा 1893 का इडियन एसोसिएशन का भाषण पूर्वोक्त स्थल पृ० 22 बगाली 15 अगस्त 1896 हितवादी 23 माच (आर० एन० पी० बग० 31 माच 1900) ए० बी० पी० 26 फरवरी 1901 हिंदू 13 माच 1901

192 सजीवनी 28 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 4 सितबर 1886), भारत मिहिर 2 सितबर (वही 11 सितबर 1886), सी० वाई० चितामणि इडिया ऐंड लाड कजन एच० आर० अप्रैल 1901 पृ० 244 दत्त ई एच I प० XIL ई एच II प० 352 522.

193 आर० एन० पी० बग० 21 अगस्त 1886

194 28 अगस्त (वही 4 सितबर 1886) तथा भारत मिहिर 2 सितबर (वही 11 सितबर 1886)

195 3 सितबर (वही 10 सितबर 1887)

196 देखिए दास प्लाटेशन लेबर इन इडिया (कलकत्ता 1931) पृ० 34 94 5

197 असम लेबर ऐंड इमिग्रेशन एक्ट—1901 (1901 का एक्ट न० VI) अध्याय I VII विशेष रूप से धारा 3 देखिए जिसमे स्थानीय सरकारों को किसी भी क्षेत्र जिस म अथवा उसके किसी

भाग मे उत्प्रवासियो की धरती पर प्रतिबंध लगाने का अधिकार दिया गया था दडनीय कानून न्यूनाधिक रूप से अपरिवर्तित ही रहा देखिए अधिनियम का अध्याय IX

198 दास हिस्टरी आफ इडियन लेबर लजिस्लेशन प० 23 और चमनलाल पूर्वोद्धत खड II, प० 6 7 चालू दुर्व्यवहारा के प्रति श्रमिको के असतोप की अभिव्यक्ति 1903 म बडे पमाने पर असम के चाय बागाना मे हुए उपद्रवो के रूप म हुई देखिए दास प्लाटेशन लेबर इन इडिया पृ० 34

199 कजन स्पीचेज II, पृ० 245

200 हिंदू 3 नवबर 1899 ए० बी० पी०, 26 28 फरवरी 1901 केसरी 19 माच (आर० एन० पी० वव 23 माच 1901) हितवादी 15 माच (आर० एन० पा० बग०, 23 माच 1901) बगाली 19 माच 1901

201 सजीवना, 2 नव० (आर० एन० पी० बग० 11 नवबर 1899) बगवासी 11 नव० (वही 18 नवबर 1899), आर० एन० पी० बग० 9 माच 1901 मे उल्लिखित बगाल के समाचारपत्र सजीवनी 28 फरवरी हितवादी 1 माच इडियन मिरर 1 2 माच 1901 (वही 9 माच 1901) बगाली 17 22 24 फरवरी 1901 ए० बी० पी० 26 28 फरवरी 1901, हिंदू 13 माच 1901 मद्रास स्टडड 10 माच (आर० एन० पी० एम० 16 माच 1901), एडवोकेट 1 माच (आर० एन० पी० एन० 2 माच 1901) श्रीराम एल० सी० पी० 1901 खड XL पृ० 86 पी० आनद चारलु वही पृ० 131 2 जब क० बकिंघम ने परिषद म प्रथम तीन वर्षों मे पुरुषो और स्त्रियो के वेतन क्रमश 5 और 4 रुपये तथा चतुथ वष म क्रमश 6 और 5 रुपये निर्धारित करने का सशोधन पेश किया तो परिषद के सभी भारतीय सदस्यो ने उसके विरुद्ध मतदान किया (वही प० 146)

202 एन० सी० पी० 1901 खड XL प० 147

203 कजन स्पीचेज II प० 236

204 वहा प० 246-7 तथा देखिए प० 234-5

205 एल० सा० पी० 1901 खड XL प० 150

206 बगाली 10 माच और 19 माच 1901 हिंदू 13 माच 1901, ए० बी० पी० 11 माच 1901 बगाल के समाचारपत्रा के लिए देखिए आर० एन० पी० बग० 16 23 30 माच 1901 मद्रास स्टडड 10 माच और स्वदेशमित्रन 11 माच (आर० एन० पी० एम० 16 माच 1901) इदु प्रकाश 28 माच (आर० एन० पी० बब 30 माच 1901), अवध टाइम्स 7 माच (आर० एन० पी० एन० 9 माच 1901) दत्त ई एच I प० XIV और ई एच II प० 522 आई० एन० सी० 1901 का प्रस्ताव XIII पी० आनद चारलु श्रीराम तथा विपिन कृष्ण बास ने सर हेनरी काटन के स्वर के साथ स्वर मिलाया और बकिंघम के सशोधन के विरुद्ध मत दिया एल० सी० पी० 1901 खड XL पृ० 158

207 मराठा 17 माच 1901 तथा इडियन मिरर 10 माच प्रतिवासी 11 माच (आर० एन० पी० बग० 16 माच 1901) बगवासी 16 माच वसुमती 21 माच (वही 23 माच 1901) प्रभाती 20 माच (वही 30 माच 1901) दत्त ई एच I प० 14-15 ई एच II प० 352 और 522 दत्त ने एक अन्य उदाहरण देकर सरकार के मजदूरो के प्रति और बागान मालिका के प्रति व्यवहार म अंतर दिखाया कि जब 1903 म बागानमालिका ने उस निर्यातित चाय पर कर लगाने की मांग की जिसकी आय का उपयोग भारत में चाय की खपत पर होना था तब भारत

सरकार ने अपने सम्मान को ताव पर रखकर इस माग को स्वीकार कर लिया और सिद्ध कर दिया कि वह चाय बागानमालिका की चाय बेचने वाला एजेंट ही है (ई एच II प० 522 3)

208 ए० बी० पी० 11 माच 1901 बगाल के समाचारपत्रा के लिए देखिए आर० एन० पी० बग०, 16 23 30 माच 1901 केसरी, 19 माच (आर० एन० पी० बब, 23 माच 1901) ज० सी० घोष रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 165

209 बगाली 15 फरवरी 1903 हिंदू 28 फरवरी 2 3, माच 1903 इडियन पीपुल 13 माच 1903 युनाइटिड इडिया 3 माच (वी० ओ० आई० 21 माच 1903) इडियन रिव्यू फरवरी 1903 आर० एन० पी० एम० 7 फरवरी 7 14 माच 1903 और आर० एन० पी० बब 14 माच 1903 मे उल्लिखित मद्रास और बबई के लगभग सभी महत्वपूण समाचारपत्र जी० *एस० अय्यर ई ए प० 183 मद्रास विधान परिषद म मद्रास बागान श्रम बिल का अधिकाश* भारतीय सदस्यो द्वारा तीव्र विरोध किया गया था देखिए प्रोसीडिंग्स आफ मद्रास लजिस्लेटिव कासिल 1902 खड XXX प० 211 6 और 1903 के लिए खड XXXI प० 93-7

210 बगाली, 15 फरवरी 1903 हिंदू 3 माच 1903 इडियन पीपुल 13 माच 1903 युनाइटिड इडिया 3 माच (वी० ओ० आई० 21 माच 1903) स्वदशमित्रन, 5 फरवरी (आर० एन० पी० एम० 7 फरवरी 1903) कसरे हिन्द 8 माच (आर० एन० पी० बब 14 माच 1903)

211 सुधारक 9 माच (आर० एन० पी० बब 14 माच 1903) इसके बदले जी० एस० अय्यर ने अनुभव किया कि सरकार ने सावजनिक सगठन के रूप मे एकमात्र वाणिज्य सदन और निजी व्यक्तियों क रूप मे इस सदन के शीषस्थ प्रतिनिधियो से ही परामश किया था (ई ए प० 184)

212 *केसरी 10 माच सुधारक 9 माच (आर० एन० पी० बब 14 माच 1903)* जी० एस० अय्यर ई ए प० 183 5

213 जी० एस० अय्यर ई ए प० 185

214 आर० एन० पी० बब 14 माच 1903

215 वही

216 जी० एस० अय्यर ई ए, प० 180 और अवर लेबर प्राब्लम एच० आर०, अगस्त 1901 प० 117 8

217 दत्त ई एच I प० XIV XV प० 352 522

218 14 माच (आर० एन० पी० बग० 23 माच 1901)

219 रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 168

220 एल० सी० पी 1901 खड XL प० 131 और 153

221 आई० एन० सी० 1901 का प्रस्ताव XIII और आई० एन० सी० 1900 का प्रस्ताव XXIV

222 25 मई (आर० एन० पी० एम० 30 मई 1903)

223 मराठा 7 21 मई 1899

224 मराठा 14 मई 1899 सुधारक 15 मई (आर० एन० पी० बब 20 मई 1899)

225 जहा तक हमारी जानकारी है भारत म श्रम आन्दोलन के इतिहास लेखको ने इस तथ्य की पूण उपेक्षा की है यह आश्चय का विषय है कि वे इस हडताल तक का उल्लेख नहीं करते इससे पूववर्ती इसी रेलवे के ऐंग्लो इडियन गार्डो की हडताल का वणन किया जाता है परन्तु उस हडताल म भारतीय श्रमिको का योगदान तो माना ही नहीं जा सकता वस्तुत 1899 म पूव बबई और कलकत्ता की कितनी ही कपडामिलों म हडतालें हुई वे तात्कालिक तथा प्रगतिशील अधिक

से अधिक अधसगठित थी

26 केसरी 16 मई (आर० एन० पी० बब 20 मई 1899)

27 14 मई 1899 के कसरे हिन्द ने यह स्पष्ट देखा था उसने यह निर्देश किया कि यदि यह सफल हुआ तो यह अन्य दो श्रमिकों के लिए अनिष्टकारी उदाहरण सिद्ध होगा (आर० एन० पी० बब 20 मई 1899)

28 कसर हिंद अपवाद था शीपस्थ समथका मे है, मराठा केसरा इडियन स्पेक्टटर इदु प्रकाश सुधारक नटिव ओपीनियन ज्ञान प्रकाश, सुबोध पत्रिका और मोद वत्त

29 मराठा 7 14 21 28 मई 4 जून 16 जुलाई 1899 बबई के समाचारपत्रो के लिए देखिए आर० एन० पी० बब 13, 20 मई 1899 ए० बी० पी०, 24 मई 1899 हितवादी 26 मई (आर० एन० पी० बग० 3 जून 1899) हिंदू 8 मई 1899 वत्तात पत्रिका 17 मई (आर० एन० पी० एम० 31 मई 1899) हिंदुस्तानी 17 मई (आर० एन० पी० एन० 31 मई 1899) जाम उल उलुम 7 जून अलमोडा अखबार 10 जून हिंदुस्तानी 7 जून (वही 14 जून 1899) शहाना ए हिंद 24 जून और 1 जुलाई (वही 5 जून 1899) अमत बाजार पत्रिका न तो समस्या का सामान्यीकरण तक कर दिया ये हडतालें कुचले हुए लागो के जीने का अधिकार मागने के प्रयत्न हैं जब कही जहा कही हडताल होती है समझ लीजिए कि वहा शिकायता की इतनी अधिक प्रबलता और व्यापकता है कि उसने हडतालिया को अपने अन्नदाताओ के विरोध मे खडा होने के लिए विवश कर दिया है (24 मई 1899

30 केसरी 16 30 मई (आर० एन० पी० बब 27 मई 3 जून 1899) नेटिव ओपीनियन 25 मई (वही 27 मई 1899), ए० बी० पी० 2 जून 1899 हिंदुस्तानी 17 31 मई (आर० एन० पी० एन० 31 मई 7 जून 1899) मराठा 28 मई 1899

31 आर० एन० पी० एन० 14 जून 1899

32 केसरी 23 मई नेटिव ओपीनियन 25 मई (आर० एन० पी० बब०, 27 मई 1899) केसरी 30 मई (वही 3 जून 1899)

33 मराठा 7 14 21 माच 1899 नेटिव ओपीनियन 11 मई श्री सयाजी विजय 6 मई ज्ञान प्रकाश 11 मई(आर० एन० पी० बब० 13 मई 1899), इदु प्रकाश 18 मई सुधारक 15 मई नेटिव ओपीनियन 18 मई, केसरी 16 मई गुजराती 14 मई (वही 20 मई 1899) नेटिव ओपीनियन 25 मई (वही 27 मई 1899) पसा अखबार 17 जून (आर० एन० पी० पी० 1 जुलाई 1899) हिंदुस्तानी 17 मई (आर० एन० पी० एन० 31 मई 1899)

34 मराठा 21 मई 1899 केसरी, 16 मई (आर० एन० पी० बब 20 मई 1899)

35 मराठा 14 मई 1899 इदु प्रकाश 18 मई इडियन स्पेक्टेटर 14 मई सुबोध पत्रिका 14 मई नेटिव ओपीनियन 18 मई गुजराती, 14 मई(आर० एन० पी० बब० 20 मई 1899) 14 मई 1899 के इडियन स्पेक्टेटर ने सारे मामले को मर्मीपूर्ण ढग से इस प्रकार प्रस्तुत किया अच्छा हो या बुरा हम अब इस देश म बडी बडी सस्थाओ के रूप मे श्रमिको को सगठित करना है हम इसे छोड नही सकत श्रमिको को सगठित करके यह सिद्ध करना है कि उनम कितनी शक्ति है श्रम और पूजी के बीच शत्रुता की भावना के विकास को रोकने का उपाय यह है कि श्रमिकों और पूजीपतियो को समय समय पर उठने वाले विवादो को निपटाने के लिए सार्वजनिक योजनाए बनानी चाहिए (वही)

36 मराठा, 7 मई 1899 सुधारक 15 मई केसरी 16 मई इदु प्रकाश 18 मई जाम जमशेद

[illegible] भारत मे आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्भव और विकास

था [illegible] यह देश न [illegible] धार्मिक तथा दार्शनिक दृष्टि से उच्च जीवन को महत्व देने वाला देश है न कि उच्च भौतिक स्तर को (वही पृष्ठ 291)

[illegible] वही पृष्ठ [illegible]

[illegible] वही पृष्ठ [illegible]

[illegible] वही पृष्ठ [illegible]

कृषि I

जमीदारो के हितो के साथ घनिष्ठ रूप से जुडा हुआ काग्रेस का आदोलन (सरकार को विवश करने की नीति लिए हुए), खेतिहरो पर ही अधिकाशतया खर्च किए जाने वाले जमीदारो पर लगे करो की उनसे वसूली के परित्याग का पक्षधर है।

जे० डी० रीस

भारत की आत्मा रूप किसान के ऊपर मडराते हुए जडता और उदासीनता के बादलो को हटाने पर ही देश का उद्धार किया जा सकता है। हमे अवश्यमेव उन बादलो को हटाना होगा और उसके लिए हमे अपने आपको किसान के साथ जोडना होगा और यह अनुभव करना होगा कि किसान हमारा है और हम किसान के है।

बाल गगाधर तिलक

कदाचित भूमि सबधी समस्या 19वी शताब्दी के समाप्ति काल म भारत के लिए निरन्द बनने वाली सवाधिक महत्वपूण समस्या थी। खेतीबाडी भारतीयो का प्रमुख आर्थिक आधार थी। लगभग 80 प्रतिशत लोग अपनी आजीविका के लिए इस पर निभर थे। 19वी शताब्दी की अवधि मे ब्रिटिश सर्वोच्चता के प्राथमिक प्रभाव के अतगत देश के निरतर ग्रामीकरण ने भारतीयो की कृषि पर परपरागत निभरता को, और अधिक बढा दिया था। फलत आर० सी० दत्त के शब्दो म स्थिति यह हो गई थी कि खेतीबाडी के फलने फूलन का अथ था भारतीयो की खुशहाली और फसलो के बिगड जान का अथ था देश मे अकाल की स्थिति।[1]

इसके अतिरिक्त भारतीय कृषि अत्यत पिछडी हुई थी और यहा के खेतिहर बहुत गरीब थे। भारत मे उस समय तक ज्ञात अकालो मे सवाधिक भयकर 1876 8 के भयकर अकाल तथा 1896-1901 तक देश को अपनी जकड म रखने वाले भीषण अकालो न यह तथ्य नाटकीय ढग से उजागर कर दिया। खेतिहरो की निराशापूण स्थिति का एक अन्य सकेत 19वी शताब्दी के उत्तराध मे पनपता असतोष था जिसकी अभिव्यक्ति बगाल म 1873 को पबना दगो मे, 1875 मे दक्षिण के खेतिहरो के दगो म, बबई म 1878 9 म फडके के विद्रोह मे तथा 1894 मे असम कृषि दगो मे देखन को मिली। भयकर

योगदान 23 99 करोड था।[7] जैसाकि ये अंक सूचित करते है इन वर्षो मे भूराजस्व की वसूली मे क्रमिक वद्धि हो रही थी।[8] इसके लिए सरकारी विश्लेषण यह था कि यह वद्धि 'मुख्य रूप से कृषि भूमि के विस्तार तथा मूल्यो मे वद्धि का परिणाम थी।[9]

राष्ट्रवादी नेताओ ने भारतीय कृषि सबधी समस्त समस्याओ मे कर निधारण पद्धति तथा भूराजस्व की मात्रा को सर्वाधिक महत्व दिया। उन्होने भारत सरकार की भूराजस्व नीति को किसानो के दुर्भाग्य और दरिद्रता का तथा कृषि के पिछडेपन का मुख्य कारण घोषित किया। समीक्षाधीन अवधि के प्रारभ मे राष्ट्रवादियो द्वारा सरकारी नीति पर दोषारोपण की शुरुआत भारतीय कृषि समस्याओ पर 'जरनल आफ दि पूना सार्वजनिक सभा' म प्रकाशित जस्टिस रानाडे की लेखमाला न हुआ।[10] इस प्रकार 1879 मे एग्रेरियन प्राब्लम ऐड इटस सोल्यूशन' शीर्षक अपने लेख म जस्टिस रानाडे न एक कटु सत्य का उल्लेख किया बबई राजस्व विभाग की कार्यवाहियो न देश को कगाल बना दिया है'।[11] 1881 म प्रकाशित अपने लेख लैड ला रिफार्म ऐंड ऐग्रीकल्चरल बक्स म उन्होने अपना मत अभिव्यक्त किया कि जब तक वर्तमान कर निर्धारण पद्धति के अतगत भूराजस्व के दबाव को कम नही किया जाता, तब तक कृषि मे किसी भी प्रकार का सुधार सबधी प्रयत्न स्थाई लाभप्रद परिणाम उत्पन्न नही कर सकता। उन्होने आरोप लगाते हुए कहा कि हमारी भौतिक समृद्धि के विकास के मार्ग मे भूमि पर एकाधिकार तथा अपनी ही मरजी से भूमि के करो मे वद्धि का अधिकार दोनो मुख्य बाधाए है।[1]

सरकार की भूराजस्व नीति के विरुद्ध अन्य कई भारतीय नेताओ न भी यथासमय विचार प्रकट किए। 1891 मे नागपुर म हुए अधिवेशन म भारतीय राष्ट्रीय काग्रस न इस प्रसग की चर्चा करते हुए निर्णयात्मक स्वर मे घोषणा की कि भूराजस्व प्रशासन की अविवेकपूर्ण पद्धति देश मे दरिद्रता और भुखमरी की व्यापकता के कई कारणो म स एक था। इस सुधार के चलते देश की 90 प्रतिशत जनसख्या की आजीविका का साधन कृषि का सुधार न केवल असभव हो गया है प्रत्युत उस कृषि का क्रमिक ह्रास भी निश्चित हो गया है।[13] 1888 से 1903 तक की अवधि मे एक भी वर्ष ऐसा नही बीता जबकि भूराजस्व प्रशासन के किसी न किसी पक्ष पर काग्रेस ने प्रस्ताव पारित न किया हो। बीसवी शताब्दी के शुरू होते ही और देश के विनाशकारी अकालो के पजे म फसते ही आर० सी० दत्त न राष्ट्रवादियो की भूमिकर सबधी आलोचना को एक तीव्र आदोलन का रूप द दिया। अपनी लेखमाला और भाषणो के जो बाद मे ओपन लेटर्स टु लार्ड कर्जन नाम स छप, तथा भूमि राजस्व की ही व्यापक विवेचना करने वाले, इकानामिक हिस्टरी आफ इडिया ग्रथ के (दो खडो म) प्रकाशन के माध्यम से दत्त ने बार बार भूराजस्व प्रणाली पर कृषि को पगु बनाने का भारतीयो को दरिद्र बनाने का तथा अकालो के परिमाण और प्रभाव को गहरा करने का अभियोग लगाया।[14] दत्त को अपने इस धर्मयुद्ध मे जी० वी० जोशी म मूल्यवान समर्थन मिला। जोशी ने 1900 01 मे टाइम्स आफ इडिया मे ज नाम स प्रकाशित पत्रमाला मे बबई के भूराजस्व प्रशासन पर चोट की।[15] गुजरात म भूमिकर निधारण की प्रभावी निदा करने वाले गोकुलदास के० पारीख न भी दत्त का समर्थन किया।[16] बहुत सारे अन्य लोक नेताओ तथा समाचारपत्रो न भूराजस्व प्रशासन को ही कृषि के ह्रास का

विनाशकारी अकालो तथा कृषक असतोष ने सरकार तथा भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ का ध्यान भारतीय किसानो की समस्याओ और निधनता की ओर खीचा।

भारतीय नेताओ के कृषि सबधी विभिन्न पक्षो के प्रति दृष्टिकोण का, सरकार की कृषि सबधी नीतियो का तथा खेतिहरा की दरिद्रता के कारणो का विवेचन निम्नलिखित पाच शीर्षको के अतगत किया गया है 1 भूराजस्व अथवा कृषक और राज्य 2 कृषक और भूमिपति 3 कृषक और साहूकार 4 पूजीवादी खेतीबाडी 5 कृषि और उद्योग।

भूराजस्व अथवा कृषक और राज्य

अनेकानेक एतिहासिक तत्वो के परिणामस्वरूप 19वी शताब्दी के मध्य तक भारत म भूमि की पटटेदारी और भूराजस्व प्रणालिया का मिला जुला रूप विकसित हुआ। यहा सक्षेप मे भी इन दोनो पद्धतियो की समीक्षा करना सभव नही अत हमे यहा केवल अपेक्षित सार सक्षेपो से ही सतोष करना पडेगा। निस्सदेह इनसे स्थिति का पूर्ण ज्ञान तो नही हो सकता, हा, उचित अनुमान अवश्य हो जाएगा। बगाल मे और उत्तरी मद्रास मे जमीदारो ने स्थाई बदोबस्त पद्धति के अतगत धरती अपने कब्जे मे कर रखी थी। इस पद्धति के अनुसार वे सरकार को स्थाई तौर पर निर्धारित राजस्व का भुगतान करते थे। उत्तरी भारत म जमीदारो अथवा ग्राम समुदायो ने धरती पर कब्जा कर रखा था और वे भूमि कर चुकाते थे। यह कर समय समय पर राजस्व के नए समझौतो के अनुसार बदला जाता था। बबई और मद्रास मे प्रचलित रैयतवाडी पद्धति के अतगत धरती पर किसान मालिको का ही कब्जा था जो सीधे राज्य सरकार का कर चुकाते थे। प्रत्येक पृथक जोत पर पृथक पृथक तौर पर राजस्व कूता जाता था और प्रत्येक नए समझौते मे इसे नियमित रूप से बदला जाता था।[2] ईस्ट इडिया कपनी के शासनकाल म समय और स्थान के अनुसार राजस्व की मात्रा निर्धारण का सिद्धात बदलता रहता था परतु 19वी शताब्दी के मध्य तक स्थाई बदोबस्त मे न आए देश के सभी भागो म न्यूनाधिक रूप म, कम से कम सिद्धात रूप म ही, एकरूपता का आधार अपनाया गया। इसका सामान्य आधार अथवा नियम यह था कि जमीदारो और ग्राम समुदायो के कब्जा की जोतो पर वास्तविक अथवा अनुमानित प्रतियोगिक किराए का आधा भाग तथा रैयतवाडी म आर्थिक किराए का अथवा निवल (नेट) सपत्ति से प्राप्त अथवा निवल उत्पादन पूजी का आधा भाग[3] सरकार द्वारा भूराजस्व के रूप मे वसूल किया जाएगा।[4] व्यवहार म इस सिद्धात पर कठोरता से अमल नही किया गया, चालू राजस्व का कूता जाना जारी रहने, धरती की उत्पादकता का तत्कालीन लागो की सामान्य आर्थिक स्थिति और भूमि के क्रय मूल्य आदि अन्य तत्वो पर भी समुचित ध्यान दिया जाता रहा।[5] चालू करो म वृद्धि का आधार विशुद्ध रूप से केवल उपज की ओर यह एक अनिश्चित ढग था। इस वृद्धि के पीछे अनेक अन्य विचारणीय विषय भी जुडे रहते थे।[6]

समीक्षाधीन अवधि म भूराजस्व सरकारी आय का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन था। 1871 2 म सरकार की कुल निवल राजस्व 46 86 करोड म से भूराजस्व की वसूली 19 67 करोड थी। 1901-02 म सरकार की कुल वसूली 60 79 करोड म भूराजस्व का

योगदान 23 99 करोड था।[7] जैसाकि ये अक सूचित करते है, इन वर्षों मे भूराजस्व की वसूली म क्रमिक वृद्धि हो रही थी।[8] इसके लिए सरकारी विश्लेषण यह था कि यह वद्धि 'मुग्य रूप से कृषि भूमि के विस्तार तथा मूल्यो मे वृद्धि का परिणाम' थी।[9]

राष्ट्रवादी नताओ ने भारतीय कृषि सबधी समस्त समस्याओ मे कर निधारण पद्धति तथा भूराजस्व की मात्रा को सर्वाधिक महत्व दिया। उन्होने भारत सरकार की भूराजस्व नीति को किसानो के दुर्भाग्य और दरिद्रता का तथा कृषि के पिछडेपन का मुख्य कारण घोषित किया। समीक्षाधीन अवधि के प्रारभ मे राष्ट्रवादियो द्वारा सरकारी नीति पर दोषारोपण की शुरुआत भारतीय कृषि समस्याओ पर 'जरनल आफ दि पूना सावजनिक सभा' म प्रकाशित जस्टिस रानाडे की लेखमाला से हुआ।[10] इस प्रकार 1879 मे एग्रेरियन प्राब्लम ऐंड इटस सोल्यूशन' शीपक अपने लेख मे जस्टिस रानाडे न एक कटु सत्य का उल्लेख किया 'बबई राजस्व विभाग की कायवाहियो न देश को कगाल बना दिया है'।[11] 1881 म प्रकाशित अपन लेख लड ला रिफाम ऐंड एग्रीकल्चरल बक्स' म उन्होन अपना मत अभिव्यक्त किया कि जब तक वतमान कर निर्धारण पद्धति के अतगत भूराजस्व के दबाव को कम नही किया जाता, तब तक कृषि म किसी भी प्रकार का सुधार सबधी प्रयत्न स्थाई लाभप्रद परिणाम उत्पन्न नही कर सकता। उन्होने आरोप लगाते हुए कहा कि हमारी भौतिक समृद्धि के विकास के माग म भूमि पर एकाधिकार तथा अपनी ही मरजी स भूमि के करो मे वद्धि का अधिकार दोनो मुग्य बाधाए हैं।[1]

सरकार की भूराजस्व नीति के विरुद्ध अन्य कई भारतीय नताओ न भी यथासमय विचार प्रकट किए। 1891 मे नागपुर म हुए अधिवशन मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस न इस प्रसग की चचा करते हुए निणयात्मक स्वर म घोषणा की कि भूराजस्व प्रशासन की अविवेकपूण पद्धति देश मे दरिद्रता और भुखमरी की व्यापकता के कई कारणो म स एक था। इस सुधार के चलते देश की 90 प्रतिशत जनसख्या की आजीविका का साधन कृषि का सुधार न केवल असभव हो गया है प्रत्युत उस कृषि का क्रमिक ह्रास भी निश्चित हो गया है।[13] 1888 से 1903 तक की अवधि म एक भी वप ऐसा नही बीता जबकि भूराजस्व प्रशासन के किसी न किसी पक्ष पर काग्रेस न प्रस्ताव पारित न किया हो। बीसवी शताब्दी के शुरु होते ही और देश के विनाशकारी अकालो के पजे मे फसते ही आर० सी० दत्त ने राष्ट्रवादियो की भूमिकर सबधी आलोचना को एक तीव्र आदोलन का रूप दे दिया। अपनी लेखमाला और भाषणो के जो बाद मे आपन लेटस टु लाड कजन, नाम से छप, तथा भूमि राजस्व की ही व्यापक विवेचना करने वाले, 'इकानामिक हिस्टरी आफ इडिया', ग्रथ के (दो खडो मे) प्रकाशन के माध्यम से दत्त न बार बार भूराजस्व प्रणाली पर कृषि का पगु बनान का, भारतीयो को दरिद्र बनान का तथा अकालो के परिमाण और प्रभाव का गहरा करने का अभियोग लगाया।[14] दत्त को अपने इस धमयुद्ध मे जी० वी० जोशी स मूल्यवान समथन मिला। जोशी ने 1900 01 मे 'टाइम्स आफ इडिया म ज नाम म प्रकाशित पत्रमाला मे बबई के भूराजस्व प्रशासन पर चोट की।[15] गुजरात म भूमिकर निर्धारण की प्रभावी निंदा करने वाले गोकुलदास के० पारीख ने भी दत्त को समथन दिया।[16] बहुत सारे अन्य लोक नेताओ तथा समाचारपत्रो ने भूराजस्व प्रशासन को ही कृषि के ह्रास का

तथा कृपको की दरिद्रता का मूल कारण ठहराया ।[17] इस सबध मे यहा यह उल्लेखनीय है कि यह आलोचना अधिकाशतया बबई, मद्रास और केंद्रीय प्रातो की भूमिकर निर्धारण पद्धति तक ही सीमित थी। स्थाई बदोबस्तवाले बगाल मे यह पद्धति स्पष्टतया शिकायत का कारण नही बन सकती थी। प्रमुखतया 'सहारनपुर कानून' के लागू होने के कारण उत्तर पश्चिमी प्रातो, अवध तथा पजाब म कर की मात्रा कुल मिलाकर सतोषप्रद समझी जाती थी।[18]

वस्तुत भूराजस्व नीति उन विषयो मे से एक थी जिस पर राष्ट्रीय नेताओ का सारा का सारा वर्ग और मागो की सारी विचारधारा सुदृढतापूर्वक सुगठित थी। भूराजस्व सबधी सरकारी नीति की राष्ट्रवादियो द्वारा समीक्षा का व्यापक ज्ञान आर० सी० दत्त के लेखो मे होता है। अत हम इस अध्ययन म इसके कुछ पक्षो की परीक्षा करेंगे। इस सबध म देश मे व्यापक परिमाण म हुई समीक्षा के विवरण को न देकर, हम यहा केवल राष्ट्रवादियो द्वारा की गई समीक्षा की सक्षिप्त रूपरेखा ही प्रस्तुत करेंगे।

बुराइया

भारतीय नेताओ के अनुसार भारतीय भूराजस्व पद्धति का प्रथम बडा भारी दोष यह था कि कर निर्धारण अत्यत कठोरतापूर्वक ऊची दर पर था और इस होने वाले प्रत्येक बदोबस्त म खेतिहर के भुगतान की उच्चतम सामर्थ्य सीमा तक निरतर ऊचे तौर पर बढाया जाता था। इस प्रकार यह राजस्व वास्तव म बहुत अधिक लगान के रूप म बदल जाता था तथा खेतिहर वर्ग को निर्धन बनाता एव कुचल देता था।[19] बहुतो का यह दावा था कि देश के बहुत भागो म भूराजस्व की वास्तविक माग आधे निवल किराए अथवा निवल उपज की अपेक्षा बहुत ऊची है। सरकार ने इसे अपनी माग की अतिम सीमा के रूप म स्वीकार किया है और यह प्राय सकल (ग्राम) उपज के बीस प्रतिशत से अधिक बढता है।[20] बबई और मद्रास म कभी कभी कर निर्धारण की मात्रा इतनी ऊची होती कि सारा का सारा आर्थिक किराया इसी मे निपट जाता था।[21] इसके अतिरिक्त घटिया जमीनो, केवल गुजारेवाली तथा अलाभप्रद जोतो के सबध म सरकारी माग खेतिहर का वेतन और उसकी पूजी के लाभ को ही हडप लेती थी। जस्टिस रानाडे न 1879 मे इस स्थिति का विश्लेषण इस प्रकार किया

> सरकार भूमिवान सभी खेतो म जुताई के दाम तथा किसान क वेतन इस सीमा तक पहुच जाते हैं कि सारी फसल म उनकी पूर्ति ही मुश्किल मे हो पाती है। उस ऐसी धरती स कोई लाभ नही मिलता है। वह अपने खेत मे श्रम करने क बदले केवल रोटी कमा पाता है। अत इस प्रकार के खेतो पर कोई आर्थिक किराया नहीं हो सकता। किसान बेचारा जो भी लगान चुकाता है वह या तो ऋण लेकर चुकाता है अथवा किसी अन्य साधन स प्राप्त आय स चुकाता है। भूमि स प्राप्त आय स यह सभव ही नही।[22]

इस भारी लगान का कभी कभी परिणाम यह निकलता है कि उस दशा म स्थित निजी सपत्ति का राज्य द्वारा बलपूर्वक अधिग्रहण कर लिया जाता है और बेचारा किसान

वास्तव में राज्य का खेत जोतने वाला दास बन कर रह जाता है।[3]

राष्ट्रवादी नेताओं ने अपने सभी लेखों और भाषणों में आकड़ोंसहित प्रमाण उद्धत किए। कई एक भारतीय नेताओं ने इस ओर भी निर्देश किया कि भुगतान न कर पाने वाले खेतिहरों पर लगान का भुगतान करने के लिए अनुचित और भारी दबाव डालना, धरती के लगान की उगाही के लिए बडी संख्या में उनके जोतों का बिक जाना, जोतों को मजबूरी में सस्ते दामों पर बेचना व रेहन रखना आदि मामले धरती के लगान की ऊंची दर के ही सूचक प्रमाण हैं।[4] इनके अतिरिक्त देश में अकाल, भुखमरी और मौत की बढ़ती संख्या भी इसी तथ्य की पुष्टि करती है।[5] राष्ट्रवादियों ने सारे देश में धरती के निरंतर बढ़ते दामों तथा किरायों में निरंतर हो रही बढ़ोतरी को लगान के निम्नस्तरीय होने का प्रमाण और परिणाम मानने में सर्वथा इन्कार कर दिया। इसके विपरीत उनका तर्क यह था कि यह तो देश की बढ़ती जनसंख्या के उद्योगों में खपत न पाने से बेचारे खेतिहरों में धरती को पाने के लिए बढ़ती हुई प्रतियोगिता का तथा देश के बढ़ते हुए ग्रामीकरण का ही दुष्प्रभाव था।[6] उन्होंने यह भी निर्देश किया कि पूंजीनिवेश के निकायों की कमी से भी इस वृद्धि को समझने में सहायता ली जा सकती है।[7] वस्तुतः बंदोबस्त अधिकारियों के विरुद्ध निजी सुधारों पर कर न लगाने की सरकारी प्रतिभूति खेतिहरों द्वारा किए गए सुधार को व्यवहार में करमुक्त नहीं करती। यह प्रायः या तो परोक्ष रूप से धरती के पुनर्वर्गीकरण के वेश में लिया जाता है अथवा सरकार द्वारा किए गए सुधारों से हुए सुधार कहकर किसानों को बहकाया जाता है अथवा निजी सुधारों के फलस्वरूप तथा अंशतः प्राकृतिक अथवा अन्य कारणों से हुई आय को 'अनुपार्जित आय' घोषित करके किया जाता है।[8]

राष्ट्रवादी नेताओं के अनुसार धरती की लगान पद्धति का एक दूसरा महत्त्वपूर्ण दोष यह था कि आवर्तिक संशोधनों के फलस्वरूप सरकार की धरती से मांग अनिश्चित और अपने प्रभाव में उतार चढ़ाववाली थी। इसके साथ ही बढ़ोतरी के कोई निश्चित अथवा विशिष्ट नियम नहीं थे। यह लगान अज्ञात, अस्पष्ट, अनिश्चित, भ्रामक और अवास्तविक, अस्थिर और अपर्याप्त आधारों पर बढ़ाया जा सकता था और बढ़ाया जाता था। किसान बेचारा इन आधारों को न तो समझता था और न ही समझ सकता था। राजस्व अधिकारियों को दोबारा बंदोबस्त के समय अपनी स्वेच्छाचारी शक्ति का सोत्साह दुरुपयोग करने का अवसर मिल जाता था। मजेदार बात यह थी कि उन अधिकारियों पर किसी प्रकार का न्यायिक अथवा विभागीय प्रतिबंध नहीं था।[9]

तृतीय भारतीय नेताओं ने भूराजस्व पद्धति की कठोरता की भी निंदा की। उन्होंने घोषित किया कि धरती का लगान सख्ती के साथ, दृढ़तापूर्वक तथा कसकर वसूला जाता था। इसके उगाहने का ढंग और समय असुविधाजनक, दुखदायक तथा भारतीय कृषि की परिस्थितियों के प्रतिकूल था।[30] उनका कथन था कि सरकार फसलों के बिगड़ जाने और अकालों की ओर कोई ध्यान ही नहीं देती। इस प्रकार के प्राकृतिक संकट के समय जब बेचारा किसान आर्थिक दृष्टि से भारी कष्ट झेल रहा होता है, उस समय भी उसे भारी हिस्से का सरकारी लगान चुकाने को कहा जाता है।[31]

कुछ भारतीयों ने विभिन्न प्रदेशों और वर्गों में भूमि लगान के भार के

प्रश्न पर भी विचार किया और अपना मत प्रकट करते हुए कहा कि विभिन्न प्रातो म इस बोझ का रूप भिन्न भिन्न था। बगाल का योगदान अपने हिस्से की तुलना मे बहुत कम था।[3] इसके अतिरिक्त समाज के अन्य वर्गों की अपेक्षा किसान को काफी अधिक भार उठाना पडता था।[33] कई नेताओ न तो स्पष्ट अनुभव किया कि ब्रिटिश भारत म प्रचलित भूमि लगान पद्धति म जो भी दोष वतमान हैं, उनका कारण भारत सरकार द्वारा रिकार्डियन सिद्धात मे विश्वास और उसका अनुसरण करने मे है और इसके साथ यह धारणा काम कर रही थी कि भारत मे राज्य ही वास्तविक रूप से भूमिपति अथवा म स्वामी था। फलत सरकारी भूराजस्व नीति के पीछे विद्यमान मान्यता पर प्रहार का अभियान चलाया। इस प्रहार का विवेचन 'इडियन पालिटिकल इकोनमी' अध्याय म भी किया गया है। भारतीय नेताओ के अनुसार भूराजस्व पद्धति के कृषि पर पडने वाले घातक और क्षतिकारक प्रभाव निम्नलिखित थे

प्रथम, ऊचे परिमाण मे भूमि लगान किसान की सभावित बचत का एक बहुत बडा भाग हडप कर ग्रामो को धनशून्य बना देता है, भूमि को धन निवेश से वचित कर देता है और सामान्य रूप से कृषि सबधी सुधारो पर होने वाला खच रोक देता है।[34] द्वितीय, भारी लगान देहातो म साधनहीनता बढाकर अकालो की व्यापकता और विस्तार बढा देते है। किसान अच्छे वर्षों म बुरी फसलवाले वर्षों के लिए कुछ नही बचा पाता फलत वह आसानी से अकाल और मृत्यु का शिकार बन जाता है। यह उसकी बचत शक्ति का अभाव ही था जो सूखे को अकाल का रूप दे देती थी।[35] आजीविका वाली जोतो पर तो भारी और उच्च लगान सामान्य वर्षो मे भी भुखमरी की स्थिति ला देते हैं।[36] तृतीय लगानो म निरतर सशोधन, अल्पकालीन बदोबस्त, लगान वृद्धि के अनिश्चित आधार प्रत्येक व्यक्ति के भूभाग का नया मूल्याकन और उसके फलस्वरूप जोतने वाले के सुधारो पर नए लगान लगाना आदि, ये सब किराया का आधार अनिश्चित बना देते हैं। अनिश्चित किराया के साथ जुडे ऊचे लगान, किसान के सारे बचत के लक्ष्य को, तथा उसकी धरती के स्थाई सुधार की तथा कृषि सबधी उत्पादन म वृद्धि की प्रवृत्ति को ही नष्ट कर देते हैं। किराया की असुरक्षितता तथा लगानो मे ऊची बढोतरी किसान को असमजस म डाल देते हैं कि वह कठोर श्रम कर कि आराम का जीवन बिताए, क्योकि उसे तो यह भी विश्वास नही होता कि वह अपने कठोर श्रम का फल भी पाएगा कि नहा। भूराजस्व पद्धति के साथ जुडी हुई यही असुविधाजनक स्थिति थी जिसने भारतीय किसान को आलसी, फिजूलखर्च बना दिया था। देहातो म उद्यम और उत्साह की भावना के अभाव के लिए यही उत्तरदायी है। इसका परिणाम यह निकला है कि कृषि मे गतिहीनता तथा ह्रास आ गया है और भारतीय ग्रामो म निधनता का साम्राज्य स्थापित हो गया है।[37] भारतीय नेताओ ने इस धारणा का बडी तीव्रता तथा उग्रता के साथ खडन किया कि भारतीय किसान का शक्तिहीन, अकमण्य तथा अदूरदर्शी स्वभाव और चरित्र ही उसकी आर्थिक कठिनाइयो के लिए उत्तरदायी था उसके ये तथाकथित चारित्रिक विशेषताए तो काफी हद तक वस्तुत भूराजस्व पद्धति का ही परिणाम थी अन्यथा भारतीय कृषक तो स्वभाव से ही मितव्ययी परिश्रमी तथा दूरदर्शी हैं।[38] ... का उद्भव

परिमाण और उसके साथ जुडी अनिश्चितता भूमि पर निजी पूजी के निवेश को बाधित ही नही प्रत्युत असभव बना देती है और इस प्रकार भूमि सुधारो को और पूजीनिष्ठ कृषि के विकास को नकार देती है।[39] पचम, सरकारी लगानो म वद्धि बडे बडे जमीदारा और बडी बडी जोतो के मालिको को किराया बढान का बहाना जुटा देती है और व वास्तविक मे भी बहुत अधिक किराया बढा देते ह जिसके फनस्वरूप वास्तविक जमीन जोतने वाला पर भारी बोझ पडता है।[40] आर० सी० दत्त ने बताया कि जहा जोतो पर लगान किराए के एक भाग के रूप मे होता था वहा लगान कमचारी उन जमीदारो पर, जा सामान्यतया किराया बढाने के पति उदार हा सकते थे, किराया बढाने के लिए जोर देत थे ताकि सरकार अधिक लगान लगा सके।[41] छठे कृषि उत्पादनो मे ऊचे परिमाण म किसी प्रकार की बढोतरी न होने पर, लगान की ऊची दर और उसके साथ सबद्ध भूमि लगान पद्धति की कठोरता तथा उग्रता धरती को बचाने के लिए इच्छुक और लगान की माग की पूर्ति म असमथ बेचारे परेशान किसान को निदयतापूवक साहूकार के क्रूर पजो मे डाल दती है, जहा एक बार फसा वह गरीब कभी मुक्त नही हो पाता।[4] भूमि के लगाना के सग्रह की कठोरता और असुविधा से भी किसान को अपनी उपज बचने के लिए विवश होना पडता था और बाजार मे एकदम उपज का तूफान सा आ जाता था जिससे हिता के विरुद्ध मूल्यो मे नकली गिरावट आ जाती थी जा उन बेचारे किसानो के लिए हानिकर थी।[4]

कुछ भारतीय नेताओ न भूमि लगान की समस्या को धन की निकासी के साथ भी जोडा और कहा कि ऊचे लगान के दोष उस स्थिति म और भी तीव्र हो जात है जब इस लगान की राशि का भूमि को उपजाऊ बनाने म उपयाग न करके उसके बहुत बडे भाग की देश स बाहर निकासी की जाती है।[44]

उपचार

राष्ट्रवादिया द्वारा का गई भूराजस्व प्रशासन की आलाचना के उपयुक्त सक्षिप्त विश्लेषण स यह स्पष्ट हा जाता है कि भारतीय नेताओ का विश्वास था कि कृषि सबधी सभी समस्याओ और दोषो की आधारभूत भूराजस्व पद्धति मे उपयुक्त सुधार किए बिना किसी भी समस्या का समाधान असभव है। उनके इस दष्टिकोण को जस्टिस रानाडे के शब्दो म निम्नलिखित रूप स सक्षिप्त रूप मे रखा जा सकता है

> उनकी (खेतिहरा की) एक ही माग है कि उन्हे, सामाजिक स्तर पर अपने का बेहतर बनाने के निरथक सघष म उनकी शक्तियो को नष्ट करने वाले, उनकी योग्यताओ को अपगु करने वाल, अत्यत कष्टदायक तथा असह्य भार रूप, लगान के बदोबस्ता से मुक्त किया जाए। इस भारी दबाव को थोडा हलका कीजिए, गतिविधि तथा लचीली शक्ति को भीतर स ही उमडन दीजिए, उनकी स्वत ही भौतिक सपन्नता की ओर गति होगी और इससे उनके सारे पुराने घाव भर जाएगे ।[45]

परतु अब प्रश्न यह था कि इस भारी भार को हलका बनाया किस प्रकार जाए? राष्ट्रवादियो का उत्तर यह था कि भारतीय भूराजस्व पद्धति के अनिवाय दोषपूण तत्व य थे कि एक ओर काश्तकारी असुरक्षित थी, दूसरी ओर लगान की खाई बडी गहरी थी और

तीसरी ओर लगान वृद्धि अनिश्चित आधार लिए हुए थी। उपचार मे केंद्रीय उपाय यह होते थे कि काश्तकारी को सुरक्षित बनाया जाए ताकि भूमि जोतने वाले अपने को स्वतंत्र मालिक समझें ही नहीं, प्रत्युत यथार्थ मे वास्तविक और स्वतंत्र रूप मे मालिक बन भी जाए। जैसा कि जस्टिस रानाडे ने बार बार बल दिया, भारत मे तो संपत्ति के जादू की ही आवश्यकता थी।[16] 1890 मे इस विषय पर लिखते हुए जी० वी० जोशी ने इस दृष्टिकोण को स्पष्ट शब्दों मे अभिव्यक्ति दी

> स्वत्वाधिकार एक ऐसी प्रभावी और मानव को गतिशील बनाने वाली शक्ति है जिससे विश्व भर मे सुधारों को स्वतः प्रेरणा और गति मिलती है। तथाकथित आलसियों, परोपकारियों और संसार को मिथ्या मानने वाले वेदांतियों के इस देश मे भी स्वत्वाधिकार का प्रभाव स्वतः मान्य है। वस्तुतः मानव प्रकृति का और मानव श्रम का नियम भारत, फ्रांस अथवा नार्वे कहीं भी, बदला नहीं जा सकता। किसी भी व्यक्ति को आप एक काली चट्टान का ही सुरक्षित स्वामित्व दे दीजिए वह उस पथरीली धरती को लहलहाते बाग मे बदल देगा, किसान की वर्तमान उपेक्षावृत्ति को बदलने का इसके अतिरिक्त अन्य कोई समर्थ साधन हमे दिखाई नहीं देता कि उसकी रुचि उत्पन्न करने के लिए उसको जोत का उस सुरक्षित अधिकार दिया जाए तथा उसे अपने श्रम का फल पाने का पूरा आश्वासन दिया जाए।[17]

भारतीय नेताओं द्वारा सुझाए गए उपचारमूलक साधनों को आर० सी० दत्त ने 1900 में लार्ड कर्जन को लिखे अपने पाचवें और अंतिम 'ओपन लेटर टु कर्जन' मे बड़ी सफाई के साथ संक्षिप्त रूप दिया।[19] उन्होंने लार्ड कर्जन के भूमि प्रस्ताव के द्वितीय प्रत्युत्तर 'सर रिचर्ड टु लार्ड कर्जन्स लैंड रिजाल्यूशन' मे इसे तत्व रूप मे इस प्रकार मे प्रस्तुत किया एक कृषिप्रधान देश की संपन्नता और प्रसन्नता व्यापक रूप से भूमि लगान पर कुछ स्पष्ट, निश्चित समझ आ सकने वाली तथा व्यावहारिक सीमा लगान पर ही निर्भर करती है।[18] सर्वाधिक महत्वपूर्ण सीमाओं का विवेचन निम्नलिखित रूप मे है

भूमि लगान का भार इस स्तर तक कम किया जाना चाहिए जिससे किसान के पास आजीविका के लिए समुचित बचत रह जाए खराब मौसमो के लिए व्यवस्था संभव हो सके, तथा पूंजी के निवेश द्वारा भूमिसुधार किया जा सके। दोबारा बंदोबस्त करते समय भी लगान वृद्धि पर इस प्रकार से एक सीमा निर्धारित करनी चाहिए जिससे किसान इस विश्वास के साथ स्वेच्छापूर्वक सुधार कर सके कि उसे उसके श्रम और त्याग का फल अवश्य मिलेगा।[30] कुछ भारतीय नेताओं का यह भी कथन था कि भारत की अपनी स्थितियों मे भूमि लगान के निर्धारण का उचित मानक आधार यह होगा कि निवल उपज का अथवा किराए से आय का, अथवा आर्थिक किराए का आधा भाग उगाहना होगा। इसका अर्थ यह होगी कि इसका निर्धारण सही सही और ईमानदारी से किया जाए। इस आधार पर लगाया गया लगान होगा तो कष्टदायक और असुविधाजनक ही परंतु भारतीय स्थिति मे इसे उचित माना जा सकता है।[31] भारत सरकार की भूमि लगान नीति के विरुद्ध युद्ध की तीव्रता मे आर० सी० दत्त ने कुल उत्पादन के 1/5 भाग के अधिक तक लगान सीमा निर्धारित करने की अतिरिक्त मांग प्रस्तुत की।[32] सजेस्टर वाइट ट्

पर उत्तेजित तिलक ने चालू 'अकाल सहायता कोड' के अतगत अपने अधिकार मागने के लिए लोगो को सुशिक्षित और सगठित करने का बीडा उठाया। 'केसरी' पुस्तिकाओ, जनसभाओ प्रचार दौरा तथा अभी अभी अपने नियत्रण मे आई 'पूना सावजनिक सभा' के अभिकरणो के माध्यम से तिलक दक्षिण के किसानो को यह समझाने म जुट गए कि अकाल की अवधि मे उनके बचाव और सहायता के लिए कानूनी व्यवस्था थी, सरकार उनके जीवन की रक्षा के लिए नैतिक रूप मे बाध्य थी। सरकारी अधिकारी अकाल सहिता के अनुसार उनकी सहायता के लिए वचनबद्ध थे। उस सहिता का पालन करने के लिए किसान भाई सरकारी अधिकारियो पर दृढतापूवक और उच्च स्वर से दबाव डालें, करो के भुगतान करने की स्थिति मे न होने पर भुगतान करने से इनकार करने पर किसान भाई न केवल कानूनी दृष्टि स बिल्कुल न्याय पर होंगे प्रत्युत वस्तुत वे कानून पालन कराने मे सहायक भी सिद्ध होंगे।[64] यह लगान मनाही आदोलन के एक प्रारभिक रूप से अलग कुछ न था।[65] तिलक के सरकार विरोधी न होने के दृढ कथना के बावजूद सरकार ने स्थिति को भली प्रकार समझ लिया था और उसने पूना सावजनिक सभा के अभिकर्ताओ के विरुद्ध कठोर कायवाही की सभा के विरुद्ध और अत मे स्वय लोकमान्य के विरुद्ध कठोर पग उठाया।[66] तिलक पर 1897 मे राजद्रोह का अभियोग लगाकर उन्हे गिरफ्तार किए जाने और उन्हे 18 महीने कारावास का दड दिए जाने से यह स्पष्ट हो जाता है कि 1896 की शीत ऋतु म दक्षिण के किसानो मे उसके आदोलन की क्रातिकारी शक्तियो को दूरदर्शी ब्रिटिश अधिकारी न केवल भाप गए थे परयुत उसके प्रति सावधान भी हो गए थे। इसके साथ ही स्वय तिलक ने भी अपने इस काय के गहरे राजनीतिक परिणाम निकाले तथा उनसे उपयुक्त सबक लिया। जब अन्य राजनीतिक कायकर्ताओ न उनके नेतृत्व का अनुसरण न किया और 1896 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस भी अकालपीडितो की सहायता के लिए प्रभावी पग उठाने मे पिछड गई तो लोकमान्य न काग्रेस की उसके निकम्मेपन के लिए भत्सना की तथा केसरी के 12 जनवरी 1897 के अक मे लिखा

> पिछले बारह वर्षों से हम गला फाडफाडकर इस इच्छा से चिल्लाते आ रहे हैं कि सरकार हमारी बात सुने परतु अब तक सरकार के कान पर जू तक नही रेंगी और हमारी आवाज नक्कारखाने मे तूती की आवाज बनकर रह गई है। हमारे शासक हमारे वक्तव्यो पर विश्वास नही करते अथवा विश्वास न करने का दावा करते है। आइए, अब हम सुदृढ सावैधानिक उपायो स सरकार को अपनी शिकायतें सुनने के लिए विवश कर दें। हम अशिक्षित ग्रामीणो को यथासभव सर्वोत्तम राजनीतिक शिक्षा दे। उनके साथ समता के स्तर पर व्यवहार करें। उन्हे उनके अधिकार बताए तथा उन्हे सिखाए कि सावैधानिक तरीको म व अधिकार कैसे पाए जाते है। तभी, केवल तभी सरकार इस बात को समझेगी कि काग्रेस के तिरस्कार का अथ भारत राष्ट्र का तिरस्कार है। तभी काग्रेसी नेताओ के प्रयास सफल होंगे। इस महान अनुष्ठान के लिए योग्य और दृढ निश्चयवाले व्यक्तियो के एक विशाल दल की अपेक्षा है, जिनके लिए राजनीति अवकाश और मनोरजन का साधन न होकर

प्रथा लाना चाहते थे। इस मान्यता को अंगीकार करते हुए उनमे से कितनो ने व्यक्त अथवा अव्यक्त रूप से भारतीय नेताओ पर विशेषाधिकार सपन्न जमीदारो के प्रवक्ता होने तथा अधिकारहीन और कुचले हुए कृषको के हितो की उपेक्षा ही नही प्रत्युत उनका विरोध करने का आरोप लगाया। राजस्व के स्थाई बदोबस्त की निरतर वकालत करने के कारण *आर० सी० दत्त को तो जमीदारो का पिट्ठू होने की उपाधि दी गई।* वस्तुत आर० सी० दत्त तथा अन्य नेताओ पर राजस्व के स्थाई बदोबस्त के सबध म लगाए गए आरोप सवथा निराधार थे। विषय के इस पक्ष का विस्तृत विवेचन अनुचित न होगा।

निस्सदेह इस भ्रम की जडे बहुत पुरानी थी यहा तक कि उस युग के भारतीय नेताओ के मन म भी यह भ्राति व्याप्त थी परन्तु परवर्ती लेखको को सर्वाधिक प्रभावित करने वाला तत्व भारत सरकार की भूमि लगान नीति के सबध म 1902 मे भारत सरकार द्वारा पारित प्रस्ताव है। यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता है कि कर्जन ने प्रस्ताव का प्रारूप तैयार करते समय जानबूझकर ऐसी विधि अपनाई जिससे वह सरकारी भूराजस्व नीति के समीक्षको के विरुद्ध भारतीयो के मन मे भ्रम का बीज बोकर बहस म विजय प्राप्त कर सके। कुछ भी हो उसने पहले उस प्रसिद्ध प्रस्ताव म राजस्व के स्थाई बदोबस्त का बगाल के 1793 के स्थाई बदोबस्त के साथ जोडा और उसके पश्चात पराङ्मुख होकर कहा कि भारत सरकार के वतमान विरोधियो, पूववर्ती विचार परपरा के प्रतिनिधियो ने इससे पहले ही सारे भारतवर्ष म स्थाई बन्दोबस्त की वकालत की है।[75] उसने आगे चलकर यह सिद्ध करने की चेष्टा की कि स्थाई बदोबस्त बगाल को अकाल से नही बचा सका है। यह विश्वास करने का भी कोई आधार नही कि बगाल का किसान भारत के अन्य प्राती के किसान की अपेक्षा अधिक समृद्ध है। स्थाई बदोबस्त होने के कारण जमीदार का किराएदार बना हुआ बगाल का किसान वास्तव म सुखी नही है अपितु विपरीत स्थिति यह है कि वह किराए से दबा पडा है कगाल है और दलित पीडित है। जमीदारी प्रथा के अभाव से उत्पन्न *सहानुभूतिशून्य अभिकर्ताओ द्वारा प्रदेश का प्रबंध* सचालन, जमीदार और किराएदार के बीच विकृत सबध और बिचौलियो का बहुमुखी हस्तक्षेप आदि बुराइया बढती जा रही हैं। अतिम सत्य यह है कि यदि इन सबके बावजूद बगाल का किसान सुरक्षित और सपन्न है तो इसका कारण स्थाई बदोबस्त न होकर *सरकार द्वारा उसकी रक्षा के लिए पारित काश्तकारी कानून हैं।*[76] इस प्रकार कर्जन ने डके की चोट पर कहा कि किसानो के हितो का ध्यान म रखते हुए सरकार किसी भी सभ्य देश के लाभ आदश के रूप म सहायक होने के अनुभव से शून्य कृषि 'किराया पद्धति' के प्रस्ताव का जानबूझकर समर्थन नही कर सकती।[77] बस, यही कथन का आधार बन गया। कर्जन ने जानबूझकर अथवा अनजाने सरकार विरोधियो की स्थाई बन्दोबस्त की *माग को बगाल मे प्रचलित कृषि किराया पद्धति* के साथ जोड दिया। उसने आलोचको पर परोक्ष रूप से और बडी ही सफाई तथा चतुरता म जमीदार समर्थक होने का बिल्ला लगाने की भी चेष्टा की। उसने जमीदारों के विरुद्ध काश्तकार की स्थिति का सुधारने और सुरक्षित करने के सरकारी प्रयत्नो म सहयोग न देने के लिए उन नेताओ पर ताने कसे और उन्हे आडे हाथो लिया।[8]

इम सबध म कजन द्वारा प्रदर्शित माग का परवर्ती अनेक लेखको न अनुसरण किया और समय बीतने के साथ भ्रमजाल और कसता गया। इसी क्रम म जे० डी० रीस न 1908 मे लिखा कि जमीदारो के हितो के साथ घनिष्ठता से जुडा काग्रेस का आदोलन सरकार को उन करो की वसूली बद करने के लिए विवश करने पर तुला हुआ है जो सरकार बडे बडे जमीदारो स उगाहती है और बडे पैमाने पर छोटे छोटे किसानो पर खच करती है।[79] भारत म कजन के प्रशासन के भाट जीवनीकार लोवेट फ्रेजर ने 1911 म अपने लेख मे आर० सी० दत्त पर अभियोग लगाते हुए लिखा कि वह प्रमुख रूप से समद्ध वग के हितो की ही देखभाल कर रहे है।' फ्रेजर ने राष्ट्रवादियो की गतिविधियो पर साफ तौर पर लिखा 'अखिल भारतीय राजनीतिक आदोलन का एक विचित्र पहलू यह है कि अत्यत दरिद्र वग का सरकार के सिवाय अन्य कोई प्रवक्ता और सरक्षक ही नही है।'[80] 1921 म प्रकाशित के० टी० शाह के सिक्स्टी इयस आफ इडियन फाइनास के निम्नलिखित अवतरण से फ्रेजर की राष्ट्रवादियो की स्थिति के प्रति गलत धारणा के अत्यत भ्रष्ट रूप को देखा जा सकता है

> यदि स्वर्गीय श्री आर० सी० दत्त के लेखो को इस सबध मे गत शताब्दी के लोकमत का सूचक स्वीकार कर लिया जाए तो यह मानना पडेगा कि बगाल के स्थाई बदो बस्त को दूसरे प्रातो मे लागू करने का भारतीय लोकनेताओ की व्यापक स्वीकृति प्राप्त थी और इसका उद्देश्य अगरजी ढग के जमीदारो के हाथ म पूरे तौर पर जमीन का आधिपत्य सौपना था।[81]

अतीत मे राष्ट्रवादियो के दष्टिकोण के सबध मे तीन अन्य प्रमुख भारतीय अथशास्त्रियो, पी० जे० थामस, पी० एस० लोकनाथन तथा बी० आर० मिश्र ने भी गलतफहमी पैदा की।[8] भारतीय राष्ट्रीय आदोलन के दो भारतीय इतिहासकारो, पनसी छाया घोष तथा बी० बी० मिश्र ने काफी हाल म और सभवत इसके लिए उनके पास कोई कारण न था इसी गलती को दुहराया है। डाक्टरेट की उपाधि के लिए लिखे अपने शोध प्रबध, 'दि डेवलपमेट आफ इडियन नेशनल काग्रेस 1892-1909', मे श्रीमती घोष न काग्रेस की स्थाई बदोबस्त की माग को बगाल टाइप के स्थाई बदोबस्त का विस्तार मान लिया ह।[83] श्रीमती घोष ने तो यहा तक लिख डाला है कि 1899 के भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अधिवेशन मे अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए आर० सी० दत्त ने सरकार से भारत के दूसरे भागो मे बगाल पद्धति को लागू करने की प्रायना की थी।[84] बी० बी० मिश्र अपन हाल के ग्रथ 'दि इडियन मिडल क्लासेज दयर ग्रोथ इन माडन टाइम्स' मे लिखत ह कि काग्रेस न 1888 मे सरकार पर देश के सभी भागो मे बगाल के ढग के स्थाई बदोबस्त को जिसन काश्तकारो को बहुत दुख पहुचाया था और इस प्रकार जो सवथा अनुपयोगी था, यह हम पहले ही दिखा चुके है, लागू करने के लिए दबाव डाला था।[85] इस मुद्दे मान्यता की स्थापना पुस्तक के 'मिडल क्लास अपोजीशन टु टनेट राइटस' शीषक उप विभाग म की गई है। इसम लेखक का तक है कि 1880 के वर्षों मे लजिस्लटिव कौसिल के विस्तार के लिए सरकार की आनाकानी का एक कारण यह भय था कि उसका विस्तार और भारतीयकरण काश्तकारी मे सुधार जैसे प्रगतिवादी कानूनो के माग म आडे आएगा।

भारत सरकार के मन में यह भय न केवल कौंसिल के भारतीय सदस्यों की काश्तकार विरोधी भूमिका से उत्पन्न हुआ प्रत्युत शिक्षित वर्गों के राजनीतिक सगठन, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा उठाई गई मांगों की प्रकृति से भी उत्पन्न हुआ।[86] हाल में एक अन्य लेखक परसिवल स्पीयर यह स्वीकार करते हुए भी कि पश्चिम तथा दक्षिण प्रदेशों के कांग्रेसी सदस्यों का जमींदारों से कोई विशेष सरोकार नहीं था दृढतापूर्वक कहते हैं कि बगाली सदस्य सामान्यतया जमींदारों से सबधित थे और उन्होंने सारे भारत में स्थाई बन्दोबस्त लागू न करने से उत्पन्न अनेक बुराइयों के लिए सरकार को दोषी ठहराया था।[87]

वास्तव में, समीक्षाधीन अवधि के प्रारभ से उसकी समाप्ति तक भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं के प्रबल बहुमत को जमीन पर स्थाई बदोबस्त की सरकारी माग और बगाल के स्थाई बदोबस्त के बीच अतर की स्पष्ट जानकारी थी। उन्होंने यथासभव स्पष्ट तथा निर्व्याज भाषा में और बार बार इस तथ्य को उजागर किया कि स्थाई बदोबस्त की चर्चा का अर्थ देश के अन्य भागों में बगाल पद्धति के दोहराने की माग अथवा 1793 के जमींदारी लगान के विस्तार की माग कदापि नहीं था, इसका अभिप्राय केवल भूमि के लगान की माग की निरतरता को स्थिर करने की माग थी। उन्हें यह ज्ञात था कि उन्हें गलत समझा जा सकता है और उनके मन्तव्य का गलत अर्थ निकाला जा सकता है अत उन्होंने स्पष्ट रूप से यह कहने में कोई सकोच नहीं किया कि जमींदारी तथा रैयतवाड़ी पट्टे के सापेक्षिक गुण दोषों के सबध में उनके निजी विचार कुछ भी क्यों न हों परन्तु स्थाई बदोबस्त की माग करते समय उनका न पट्टेदारी प्रथा से कोई वास्ता था और न ही लगान वसूली से। उन्हें तो एकमात्र लगान की विविधता अथवा पट्टेदारी प्रथा के अलग कराधान के सिद्धान्तों से ही प्रयोजन था।

स्थान की कमी के कारण यहा भारतीय नेताओं द्वारा इस सबध में दिए गए सभी विश्लेषण सर्वथा स्पष्ट तथा पूर्ण रूप से उद्धृत करना सभव नहीं अत अध्ययनकाल की सारी अवधि में फैले हुए कुछ उद्धरण नीचे पुन उद्धृत किए जा रहे हैं। बगाल के इस सबध में सर्वाधिक बदनाम नेताओं के अवतरणों पर बल दिया गया है। 1879 में एक प्रमुख बगाली नेता उल्लेखनीय है कि अपनी पीढ़ी के कदाचित सर्वप्रमुख नेता, लालमोहन घोष ने लिखा

> मेरे विचार में बगाल में प्रचलित पद्धति के सशोधित रूप निरतरतावाले बदोबस्त को सारे देश में व्यापक रूप देने से बढ़कर देश के लिए अन्य कोई वरदान नहीं हो सकता। हम तो चाहेंगे कि स्वय कृषक वर्ग अपने आप ही बदोबस्त की कार्यवाही करें न कि यह कार्य बगाल के जमींदारों जैसे बिचौलियों के द्वारा किया जाए। हम तो भारत में स्विटजरलैंड तथा यूरोप महाद्वीप के अन्य भागों में प्रचलित पद्धति जैसी ही कोई पद्धति चाहते हैं।[88]

1880 में जस्टिस रानाडे ने कहा 'भूमि द्वारा उत्पादित अनाज के अनुरूप निर्धारित स्थाई रयतवाड़ी बदोबस्त इस कृषि समस्या का एकमात्र समाधान बन सकता है।[89] चार वर्षों के बाद उन्होंने यह अधिकृत घोषणा की

यहां हम यह कहना चाहेंगे कि समय समय पर इस पत्र म तथा अयाय पत्रो मे प्रकाशित हमारे विचारो को प्राय गलत समभा गया है। हमने रैयतवाडी पटटेदारी को नष्ट करने की माग कभी नही की अथवा इसके साथ जमीदारी बदोवस्त की व्यवस्था के लिए कभी नहीं सोचा रैयतवाडी प्रथा तो इस प्रात मे चिरकाल मे प्रचलित है और यह एकमात्र पद्धति है जो हमारे ग्रामीण समाज की लोकतत्रीय व्यवस्था के सवथा अनुकूल है। हमने तो इस प्रात म किसाना की जोतो पर लगान के स्थाई निर्धारण के लिए आदोलन किया है।[90]

इदु प्रकाश ने स्थाई बदोबस्त की वकालत करते हुए 7 माच 1881 के अक मे दढतापूवक लिखा

भारत के इस प्रात के किसी भी वग म जमीदारी लागू करन की वकालत नही की और यदि इदु प्रकाश न बगाल की कृषिसबधी सपन्नता की जय जयकार की है तो इसका श्रेय बगाल म लगान के स्थाई निधारण का ही है परतु इसका अथ यह कदापि नही कि हम जमीदारा द्वारा किसाना को अपदस्थ करना चाहते है। हमारी स्थिति को इस रूप म देखना इस सारे प्रश्न को समझने मे शोचनीय रूप से अपने अज्ञान का ही प्रदशन करना है।[91]

मराठा न 17 फरवरी 1884 के अक म इस प्रश्न पर जिस स्पष्टता और दो टूक निणयात्मकता के साथ प्रकाश डाला, वह सचमुच ही विशेष रूप से ध्यान देने योग्य तथा उल्लेखनीय है

यदि स्थाई बन्दोबस्त उचित है तो सरकार को कुछ त्याग अवश्य करना पडेगा। उसे बिचौलिया अथवा जमीदारो पर निभर न रहकर किसाना के पास जाना होगा। सरकार उद्योगो और शिल्पो को प्रोत्साहन देने के बदले बचारे किसानो को जमीदारो की दया पर ही निभर रहने को विवश कर रही है। बगाल की जमीदारी अथशास्त्रियो की दृष्टि मे खुदकाश्त कृषि नही है। खुदकाश्तवाली पद्धति ही स्थाई रैयतवाडी पद्धति होगी। यह वह पद्धति है जिसके लिए हम सघष करते रहे हैं।[92]

1888 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अधिवेशन म स्थाई बदोबस्त के सबध म प्रस्तावित प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए शेख राजा हुसैन खा ने स्पष्ट उद्घोष किया कि वह सरकारी भाग की स्थिरता तथा निश्चितता चाहते है न कि आवश्यक रूप से बगाल मे प्रचलित पद्धति जैसी किसी स्थाई बदोबस्त की पद्धति। उ होने बल देकर कहा कि सारे देश मे जमीन की पटटेदारी विविधता लिए हुए है, उसके अनुसार प्रत्यक स्थान पर स्थाई बदोबस्त का रूप भी भिन्न भिन्न होगा।[93] हिंदू ने भी 13 सितबर 1889 के अक म इस बात से इनकार किया कि राष्ट्रवादियो की माग जमीदारी पद्धति लागू करने की है। उसने दावा किया कि स्थाई बदोबस्त का कोई भी समझदार समथक इस पद्धति का पक्षधर कतई नही है। 2 जनवरी 1891 के अक मे तो हिंदू इस बार और भी अधिक स्पष्ट तथा सबल प्रवक्ता था

स्थाई बदोबस्त की वकालत करने वाले आज के नेता जमीदारो के किसी बडे वग

की सृष्टि नही करना चाहते। वे तो धरती की उपज मे सरकार के भाग को उन लोगो द्वारा हड़प लेना नही देखना चाहते जो न श्रम करते है और न कष्ट उठाते हैं। वे तो एक ऐसी पद्धति चाहते हैं जिसमे बगाल की पद्धति के दोषो का अभाव हो और इस प्रकार किसान को सभी लाभ प्राप्त हो।

अपने समय के बगाल के उच्चतम नेता सुरेंद्रनाथ बनर्जी द्वारा सपादित 'बगाली' पत्र ने न केवल जोतने वालो की सलाह से ही स्थाई बदोबस्त का समर्थन किया प्रत्युत उसने 1793 के बदोबस्त की निन्दा भी की। उसने 28 जून 1890 के अपने अक मे लिखा कि जमीदारी पटटदारी का परिणाम यह हुआ कि जमीदारो और असली खेतिहरो के बीच बिचौलिया की एक लबी शृखला अस्तित्व मे आ गई है। उसने घोषित किया

हम स्थाई बदोबस्त के सिद्धात को पूर्ण रूप से स्वीकार करते है, परतु इस सबध मे हम यह कहना चाहते है कि देश के लिए यह परम सौभाग्य होता यदि यह सीधा किसानो से किया जाता। लार्ड कार्नवालिस द्वारा जमीदारो के परिप्रेक्ष्य म इस विषय का देखना एक भारी और दुखद गलती है देश के किसी भाग मे भी नए सिरे से इस समय 1793 के बदोबस्त के विस्तार की किसी भी योजना के विरुद्ध हम अवश्य अपना विरोध प्रकट करना चाहिए। धरती के बदोबस्त का राज्य द्वारा अपनाया जाने वाला सही सिद्धात यह होना चाहिए कि धरती को रखने वाले, जोतने वाले और सुधारने वाले श्रमिक को श्रम का फल पाने म किसी प्रकार की असुविधा, परेशानी तथा बचैनी न हो और उस भूस्वामी के रूप मे राज्य को केवल निश्चित और उचित किराए का ही भुगतान करना पडे।[94]

1893 के अखिल भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अधिवेशन मे स्थाई बदोबस्त के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए बाल गगाधर तिलक ने स्पष्ट रूप से कहा कि वह जमीदारो के लिए नही प्रत्युत किसानों के लिए ही बोल रहे है। उन्होने स्पष्ट निर्देश किया कि इस प्रस्ताव मे सरकारी लगान के अथवा बदोबस्त के कृतन के किसी उपाय का कोई उल्लेख ही नही है। इसमे तो केवल भूमि लगान की माग का नियमित और निश्चित करने को कहा गया है।[95] एक अन्य मराठी नेता बी० आर० नातु ने 1894 म काग्रेस के अगले अधिवेशन म इसी तथ्य को दोहराया तथा विदेशियो को यह भ्रात धारणा बनाने स बचने के लिए सावधान किया कि देश की बहुसख्या स्थाई बदोबस्त के रूप म बगाल मे प्रचलित पद्धति चाहती है।[96] 1901 मे लिखी अपनी पुस्तिका, दि इडियन फर्मिस म पी० सी० राय ने बगाल के जमीदारो की सभी प्रकार से भर्त्सना करने के उपरात माग की कि अवश्यभावी स्थाई बदोबस्त भविष्य म सीधे राज्य और खेतिहर के बीच होना चाहिए। उसमे किसी भी प्रकार के बिचौलिया जमीदारो तालुकेदारो तथा मालगुजारो को बीच मे नही लाना चाहिए। उन्होने सरकार और जनता से अपील की कि वे दमन का ऐसा दुश्चक्र कदापि न चलने दें जो बेचारे किसान के लिए दबाव अथवा मृत्यु का फदा बन जाए।[97] लार्ड कर्जन द्वारा 1902 के प्रस्ताव म प्रस्तुत भारतीयो की माग का गलत विश्लेषण जी० सुब्रह्मण्य अय्यर की आखो से छिप न सका। उन्होंने फरवरी 1892 म प्रकाशित अपने एक लेख 'लार्ड कर्जन रिजाल्यूशन आन लैंड रैवेन्यू' म प्रखर स्वर म लिखा कि प्रस्ताव ने यह

अनुमान लगाने मे गलती की है कि

> भूराजस्व नीति के आलोचक स्थाई बदोबस्त की माग के रूप म जमीदारी पद्धति की भी माग कर रहे हैं। श्री दत्त तथा दूसरा ने अपने को राज्य और किसान के बीच जमीदारा, बिचौलियो की सष्टि की वकालत करने वाले समझे जाने के विरुद्ध बचाव की बार बार चेष्टा की है। उनकी योजना थी स्थाई बदोबस्त सीधे सरकार और किसान के बीच हो स्थाई बदोबस्त के लिए जमीदार पद्धति कोई आवश्यक पक्ष नही और हमारा सुझाव है कि सीधा बदोबस्त सरकार और किसानो के बीच होना चाहिए। दुख देनेवाला यह जमीदारा का तत्व तो वतमान विवेचन के अतगत आता ही नही।[98]

अतिम रूप मे हम यह दिखाना चाहग कि आर० सी० दत्त इस तथ्य को निरतर अपनी आखो के सामन रखने वाले तथा भली प्रकार इस समझन वाले किसी भी अय भारतीय नेता स किसी भी प्रकार पीछे नही थे कि बगाल की जमीदाराना पटटदारी मे तथा भूमि लगान के स्थाई बदोबस्त म बडा भारी अतर था। 1874 म ही एक युवक अधिकारी के रूप म उन्होंने बगाल के स्थाई बदोबस्त पर सशक्त प्रहार किया और इसे कानवालिस की जबरदस्त गलती कहा।[99] इसके साथ यह भी दशनीय है कि सरकारी अधिकारी के रूप मे जमीदारा और उनके स्थाई बदोबस्त के लिए स्थाई घणा के कारण उह जमीदारा से सदैव अपयश और तिरस्कार ही मिला।[100]

इसमे सदेह नही कि समय के बीतने के साथ साथ बगाल के स्थाई बदोबस्त के प्रति उनकी अरुचि नम पडती गई और यहा तक कि बाद मे एक प्रकार से मर्यादित प्रशसा के रूप मे बदल गई, फिर भी उनके दिमाग मे यह बात स्पष्ट थी कि देश के अय भागा म बगाल पद्धति के विस्तार की चचा करना निरथक ही नही गलत भी था। इस प्रकार 1897 म उहाने कहा कि यदि प्रत्येक प्रदेश की विभिन परिस्थितियो के अनुसार भूमि लगान के स्थाई बदोबस्त के सिद्धात का प्रयोग किया जाए तो उससे सबधित सभी प्रश्न अपन आप ही समाप्त हो जाएग।[101] 1899 के भारतीय राष्टीय काग्रेस के जिस अधिवेशन म पी० सी० घोप ने देश के अय भागो म बगाल पद्धति के विस्तार की माग महसूस की, दत्त महोदय ने इस माग को आगे तो नही ही बढाया साथ ही खुले तौर पर इस बात की घोपणा की कि वे भारत के विभिन भागा म प्रचलित विभिन पद्धतिया, बगाल की जमीदारी पद्धति, अवध की ताल्लुकेदारी पद्धति उत्तर पश्चिम की महलवाडी पद्धति, मध्य भारत की मालगुजारी पद्धति और दक्षिण भारत की रयतबाडी पद्धति के गुणा का विवेचन ही नही करना चाहते। उहान बडी ही सुस्पष्ट भापा म जोर देकर कहा किसान किस पद्धति अथवा बदोबस्त के अतगत रह रहा है इसकी चिता करना बेकार है। उसे केवल अपनी भूमि की उपज का उचित भाग मिलने का विश्वास होना चाहिए इसी मे उसकी रक्षा है और इसी मे देश की रक्षा है।[10] लाड कजन का लिखे अपने चतुथ पत्र म उहोने इस मामले म अपनी स्थिति एकदम साफ कर दी

> देश के अयाय भागो मे बगाल पद्धति के विस्तार की माग मै इस समय नही करता। आपको लिखे अपने प्रथम तीन पत्रो म मैंने ऐसा कोई सुझाव नही दिया।

> प्रत्येक प्रात म अपनी भूमि पद्धति है जिसके अतगत वहा के लोग पीढियो से रहते आ रहे हैं। श्री म महोदय । मैंने तो केवल यह माग की है कि जिस भी पद्धति के अतगत किसान रहता आ रहा है उसम उसे सरक्षण प्रदान किया जाए।[103]

यहा यह भी उल्लेखनीय है कि भारतीय नेताओ ने और विशेषत भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने स्थाई बदोबस्त की माग करते समय सदैव भूमि लगान के स्थाई बदोबस्त शब्द का तथा भूमि पर सरकारी माग की स्थिरता और स्थायित्व शब्द का ही प्रयोग किया। इस रूप मे उन्होने इस सबध मे सदेह के लिए कोई अवकाश ही नही छोडा कि उनकी वास्तविक इच्छा क्या थी।[104] इसी प्रकार अतीत मे सरकारी क्षेत्रो म इस प्रश्न पर हुए विवाद के इतिहास मे उनका व्यवहार 9 जुलाई 1862 और 24 माच 1865 मे राज्य सचिव का सप्रेषित अपने पत्रो म उनके विशेष उल्लेख और इन सप्रेषणो को पूरे तौर पर लागू करने म भारतीयो के पूणतया सतुष्ट होने के उनके उदघाव इस तथ्य को उजागर करते है कि स्थाई बदोबस्त की माग करते समय उनके मन म बगाल की जमीदारी पट्टा पद्धति कदापि नही थी। इसके विपरीत व धरती पर सरकारी माग को स्थाई रूप से सीमित करना चाहते थ।[105] यहा यह भी उल्लेखनीय है कि भारत की विभिन्न लगान पद्धतियो के विकास का एतिहासिक विश्लेषण करते हुए आर० सी० दत्त ने रैयतवाडी पद्धति म न केवल पटटेदारी अथवा किसानो के स्वत्वाधिकार म प्रत्युत भूमि के अस्थाई लगान निधारण क रूप मे भी अनेक भयकर दोष देखे क्योकि रैयतवाडी पद्धति के व्यवस्थापक थामस मानरो ने रैयतवाडी क्षेत्रो मे लगान के स्थाई बदोबस्त का समथन किया था, दत्त महोदय ने उसकी प्रशसा की।[106]

स्थाई बदोबस्त की माग के सबध मे राष्ट्रवादियो के दृष्टिकोण के सबध मे यदि अन्य प्रमाण अपेक्षित है तो वह समझौते और यथाथवादिता की भावना से उनकी इस योजना की स्वीकृति और सहमति म देखे जा सकते हैं जिसके अतगत इस व्यवस्था की माग की गई कि लगान का एक स्थाई बदोबस्त होगा जिसम भूमि लगान को निरतरता का रूप देते हुए निश्चित किया जाएगा परतु उसमे मूल्यो म परिवतन की सीमा तक परिवतन नही किया जा सकेगा।[107] इस सदभ मे राष्ट्रवादी नेताओ ने लाड रिपन द्वारा सुझाए गए समझौते का समथन किया।[108] अक्तूबर 1882 और मई 1883 के सप्रेषणो म यह कहा गया कि तब तक भूमि का कोई नया सर्वेक्षण नही किया जाएगा तथा लगान को ऊचा नही बढाया जाएगा जब तक कि (क) जोत का क्षेत्र बढ नही जाता, (ख) कीमतें बढ नही जाती, (ग) राज्य के कोष द्वारा किए गए सुधारो के फलस्वरूप उपज बढ नही जाती।[109] इसके अतिरिक्त इस आपत्ति को कि लगान के स्थाई बदोबस्त से उन क्षेत्रों म जहा बडे बडे जोतने योग्य भूभाग जोते नही गए हैं, जमीन के मालिको को अनुपार्जित आय की अपरिमित राशि मिलने लगेगी दूर करने के लिए भारतीय नेताओ ने अपनी सहमति प्रकट करते हुए यह माग की कि सरकार अपनी इस माग को अपने ही मापदड मे पूरे से ही पूणतया विकसित क्षेत्रो तक ही सीमित रखे।[110] इन सब बातो पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि सशोधित राष्ट्रवादी माग के अतगत भूमि लगान की राशि को मूल्यो के साथ जोड दिया जाए तो वास्तविक माग मे पट्टेदारी

पद्धति का नही प्रत्युत कर निर्धारण के सिद्धान्त का ही सकेत मिलता है।

अब रोचक प्रश्न यह उठता है कि उपयुक्त तथ्यो के सदर्भ मे जब राष्ट्रवादियो की स्थाई बदोबस्त की माग के सबध में स्थिति नितात स्पष्ट और निश्चित थी तब फिर यह मतिभ्रम कैसे उत्पन्न हो गया? इसके उत्तर म हमारे इस कथन मे कुछ हद तक सत्य है कि कम से कम आशिक रूप से ही सही, यह घपला जानबूझकर पैदा किया गया था ताकि भूमि लगान पद्धति पर राष्ट्रवादियो के प्रहार को कोई श्रेय न मिल सके। राष्ट्रवादियो की स्थिति को जानबूझकर गलत ढग मे प्रस्तुत किया गया ताकि भारतीयो द्वारा उठाए गए प्रमुख विषयो पर स विशेषतया भूमि पर भारी लगान से इग्लड और भारत की जनता का ध्यान हटाया जा सके। यह अस्वीकार नही किया जा सकता कि इसके पीछे एक भ्रष्ट तथा पाखडपूर्ण प्रवत्ति काम कर रही थी जिसके अतगत इग्लड का सपूर्ण व्यवस्था, उपाधिकारी महानुभाव, वशानुगत लार्ड आयरिश काश्तकार की सहायता तथा रक्षा के किसी भी प्रयास का विरोध करने वाले तथा अपनी तीव्र प्रतिक्रिया प्रकट करने वाले आयरलड के बडे बडे भूमडलो के स्वामी मालिक टोरी पार्टी के पथप्रदशक, इग्लड मे भूमि के राष्टीयकरण के विरोधी तथा विश्व मे सर्वोच्च वतनभोगी सिविल सर्विस के सदस्य, सब के सब भारतीय किसान के उद्धारक बन गए और भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ पर जमीदारो के पिटठू हाने का आरोप लगाने लगे। वस्तुत स्थिति की यह विडबना भारतीयो से छिपी नही थी। उदाहरणाथ कर्जन के इस दृढ मत पर कि स्थाई बदोबस्त किसी भी सभ्य देश मे सफल नही हुआ है, खडन करते हुए आर० सी० दत्त न 1902 मे टिप्पणी की इग्लड के व जमीदार जो 1798 के पिटस एक्ट के अतगत हुए स्थाई बदोबस्त के लाभो का उपभोग कर रहे हैं और उन्हे गौरव दे रहे हैं, भारत आने पर यह शिक्षा ग्रहण करते है कि जो उनके लिए अच्छा है, वह भारतीयो के लिए अच्छा नही है।[110] ए

हा यह अवश्य है कि यह व्यापक गलतफहमी केवल तथ्यो को गलत ढग से प्रस्तुत करने का ही परिणाम न थी। वस्तुत कुछ भारतीय नेताओ की भूमि नीति के कुछ पक्षो और लगान के स्थाई बदोबस्त पर तर्क प्रस्तुत करने का उनका ढग कुछ इस प्रकार का अवश्य था कि उससे कभी कभार इस ओर ध्यान देने वाले को भ्रान्ति अवश्य हो सकती थी। प्रथम कभी कभी भारतीय नेताओ ने और विशेषतया भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने परवर्ती कुछ वर्षों मे अपनी माग प्रस्तुत करते हुए केवल 'स्थाई बदोबस्त' शब्दो का प्रयोग किया। वे 'भूमि लगान' शब्द जोडना भूल गए।[111] वस्तुत यह सब भाषा सबधी भूल अथवा आलस्य के अतिरिक्त अन्य कोई विशेष महत्व नही रखती थी और जिसने भी कांग्रेस के पूववर्ती प्रस्तावो को और अनेकानेक राष्ट्रवादियो के इस विषय पर लेखो और जनभाषणो को, जिनमे से कुछ को हम पहले ही ऊपर उद्धृत कर चुके हैं, ध्यान से पढा है वह इन शब्दों के छूट जाने से भ्रम नही खाता।

द्वितीय, यह कदाचित सर्वाधिक महत्वपूर्ण था, भूमि लगान के स्थाई बदोबस्त के बहुत से समथको ने विशेषत आर० सी० दत्त ने बगाल के किसानो की स्थिति के भिन्न सीचा और बगाल को ही स्थाई बदोबस्त की व्यावहारिक उपलब्धि

के रूप म प्रस्तुत किया। उन्होंने यह भी घोषणा की कि बगाल के किसानो को अकाल से विशेष कष्ट नही पहुचा, इसका कारण उनके अनुसार यह था कि स्थाई बदोबस्त ने उन्हे इस योग्य बना दिया है कि वह अकालो के विरुद्ध उच्च स्तर पर आर्थिक प्रतिरोध अपना सके। उन्होंने यह भी कहा कि बगाल का किसान देश के अन्य भाग के किसानो की अपेक्षा भौतिक साधनो की दृष्टि से अधिक सपन्न है।[11] इस भावना को कभी कभी आर० सी० दत्त महोदय बहुत ही अतिरजित रूप दे देते थे और इस सीमा तक कह डालते थे कि स्थाई बदोबस्त ने बगाल की जनता को समृद्ध और सुखी बना दिया है।[113] दत्त बार बार यह भी घोषित करते रहे कि बगाल के जमीदार उचित तथा न्यायसगत किराया वसूल करते है और इस किराए की रकम कुल उपज के 1/5 भाग से अधिक नही होती।[114] बगाल के तथा देश के अन्य भागो के बहुत सारे और नेता भी थे जिन्होंने बगाल के किसानो को जमीदारो की कृपा का पात्र बनाने वाले बगाल के स्थाई बन्दोबस्त की आलोचना की। उदाहरणार्थ पी० सी० राय ने बगाल बदोबस्त की निम्न शब्दो मे निंदा की

> *जनता के एक अत्यत सीमित और विशिष्ट स्वार्थी वर्ग जो जमीदार वर्ग कहलाता है के सिवाय इस पद्धति ने न तो राज्य का और न ही किसानो को कोई लाभ पहुचाया है। बगाल के किसान अत्यत शोचनीय अवस्था म है और भारत के किसी भी प्रदेश के कृषि क्षेत्रो से बेहतर अवस्था मे नही है। यदि बगाल का किसान थोडा बहुत खाता पीता और समृद्ध दिखाई देता है तो इसमे जमीदारो का कोई भी सहयोग नही, यह तो उसका अपना श्रम है। बगाल का औसत जमीदार विशेषत अपने क्षेत्र से अनुपस्थित रहने वाला, उतना ही क्रूर और अत्याचारी है जितने कि बनिया, साहूकार तथा महाजन आदि विभिन्न नामो वाले किसान के शत्रु हृदयहीन है।[11]*

यहा यह उल्लेखनीय है कि आर० सी० दत्त ने स्वय कभी इस विषय पर कोई चर्चा नही की कि 1793 के स्थाई बदोबस्त ने बगाल के किसान को समृद्ध बनाया है। उन्होंने तो सदैव उसके लाभो को 1859 और 1885 के पट्टेदारी कानूनो के लाभो मे जोडने की ओर ध्यान दिया। उनकी दृष्टि मे 1793 का विनियम तथा 1859 और 1885 के कानून परस्पर सहयोगी ही नही प्रत्युत एक ही पहलू के दो पक्ष थे। कानूनो के इन दोनो वर्गों के सम्मिलित प्रवतन से ही बगाल के किसान की स्थिति सुधर सकी थी तथा भारत के अन्य प्रातो के किसानो की अपेक्षा अच्छी बन सकी थी। जिस तरह उन्होंने 1793 के स्थाई बदोबस्त की प्रशसा की उसी तरह उसी ऊचे स्वर म, उस ढग से और उसी उत्साह से उन्होंने 1859 और 1885 के अधिनियमो का स्वागत किया।[116] जब कर्जन ने 1902 के प्रस्ताव म अनुदारतापूर्वक उनपर तथा अन्य नेताओ पर अपने वादलेखो पर जमीदारी की माग के सीमा निर्धारण की आवश्यकता पर समुचित ध्यान न देने का आरोप लगाया[11], तो दत्त को आघात पहुचा और उन्होंने मदुता के साथ कर्जन को उत्तर दिया कि उन्होंने सदव इस अभिस्वीकार ही नही किया कि 'बगाल के रट ऐक्ट ने स्थाई बदोबस्त द्वारा किए अच्छे काय को पूर्णता तक पहुचाया है प्रत्युत 1885 के 'रट

एक्ट' की रूपरेखा तयार करने मे भी पयाप्त योगदान दिया है।[118] दत्त को इस समय वास्तव मे यह भी कहना चाहिए था कि उन्होने 1874 मे ही जमीदारो और किसानो के बीच स्थाई बदोबस्त के लिए दबाव डाला था, उन्हे इस बात की भी वकालत करनी चाहिए थी कि विस्तत सर्वेक्षण के उपरात भुगतान किए जाने वाले किराए की दर साव-धानी से निश्चित कर इसे सदा के लिए स्थिर घोषित कर दिया जाए।[119]

ततीय, अधिकाश भारतीय नेताओ न जमीदारी की पटटेदारी के उन्मूलन की माग नही की। उनकी दृष्टि म जहा तक किसाना के हितो का सबध था, जमीदारी पट्टेदारी और रैयतबाडी पटटेदारी के बीच कोई अतर न था। उनके इस उपेक्षा भाव का अथ जमीदारी के प्रति उनका अनुराग कदापि नही था अपितु उन्हे यही विश्वास था कि जहा तक जमीदारी प्रथा के दोषा का सबध था दोना वास्तव मे जमीदारी पद्धति के दो भिन्न भिन्न रूप थे—एक निजी जमीदारी का रूप था और दूसरा राजकीय जमीदारी का। जहा प्रथम म किराए का निर्धारण निजी स्वामी करते थे वहा दूसरे मे सरकार आगे बढकर इस काम को सपन्न करती थी। व्यवहार मे किसान के लिए इन दोनो मे चुनाव की कोई बात ही नही थी।[120] आर० सी० दत्त का इस विषय मे कथन था कि ईस्ट इडिया कपनी ने रैयतवाडी पद्धति का सगठन किसान को जमीदारी के चगुल से बचाने के लिए नही, अपितु बिचौलियो द्वारा प्राप्त किए जाने वाले लाभो को हथियाने और अपने राजस्व का अधिकतम बढाने की इच्छा से ही किया है।[121] कपनी जमीदारो के लाभो के प्रति ईष्यालु रही है और किसानो के हितो के प्रति उत्सुक नही रही। इस पद्धति के अतगत कपनी का किसानो पर इतना अधिक कडा नियत्रण हो गया है जितना किसी दासो के स्वामी का अपने दासा पर होता है, जो उनकी जीवन की आवश्यकता के लिए अपक्षित से अतिरिक्त और सब कुछ छीन लेता है।[1] कई नेताओ ने तो यह भी कहा कि जमीदारी प्रथा रैयतबाडी प्रथा स दो बाता मे तो बेहतर ही है। प्रथम जहा सरकार किसान का धरती के अनुचित लगान बढाने तथा अन्य इस प्रकार के दूसरे दबावो से बचाने के लिए जमीदार के विरुद्ध कानून बना सकती है और बनाती है, वहा भूराजस्व को बढाने की अपनी शक्तिया पर, तथा अन्य कई प्रकार से किसान के साथ सबधो को कटु बनाने की प्रक्रियाओ पर कानूनी अथवा अन्य किसी प्रकार के प्रतिबध लगान से इनकार करती है। यदि एक बार लगान का स्थाई बदोबस्त स्वीकार कर लिया जाए तो जमीदारो अथवा अन्य बडे बडे मालिको के किराया बढान पर प्रतिबध लगाकर किसाना तक इसके लाभो का विस्तार किया जा सकता है और किया जाना चाहिए। वस्तुत यह काय तो सरकार अब भी सम्मानपूवक कर सकती है। जमीदारो को किराया बढाने की अनुमति देने, प्रोत्साहन देने यहा तक कि कभी कभी विवश करने की वतमान नीति को छोडकर उसके स्थान पर सरकार एक आदश प्रस्तुत कर सकती है।[123] कुछ भारतीय नेताओ के अनुसार रैयतबाडी पटटेदारी से जमीदारी को बेहतर बनाने वाला दूसरा महत्वपूण पक्ष निकासी का था। उनका तक था कि जमीदारी पद्धति मे यदि किसान को ऊचा किराया देना पडता है तो इसमे एक अच्छाई तो है कि यह किराया भारतीय मालिक को जाता है जो उस धन को भारत मे ही खच करता है। इसके विपरीत विदेशी चरित्र

वाली सरकार को लिए जाने वाले किराए की देश से बाहर निकासी हो जाती है।[14]

चतुर्थ कुछ गलतफहमी इस तथ्य से भी उत्पन्न हुई कि कुछ भारतीय नेता इस बात से व्याकुल थे कि जिस ढग से अपनी प्रतिभा के उपयोग के अभाव म भारतीय लोगो का सारा सामाजिक जीवन समान रूप से निम्न स्तर पर पहुच गया था, उस समय इन नेताओ ने उत्सुकता के साथ यह अनुभव किया कि जमीदार उस वग स सबध रखता है जिसे सामाजिक स्तर और बौद्धिक उत्कर्ष को किसी रूप म बनाए रखने म सफलता मिली है अत वह सपूर्ण भारतीय जनता को अधकारपूर्ण तथा गवार अस्तित्व म पहुचने से बचाने मे सहायक और उद्धारक सिद्ध हो सकता है।[15] इसके अतिरिक्त भारतीय नेताओ के एक वग का यह भी विश्वास था कि लोगो को नेताओ और बिचौलियो की आवश्यकता है और जमीदार अच्छे बिचौलिए सिद्ध हो सकते है तथा वे ग्रामीण क्षेत्रो के प्राकृतिक नेता है।[16] इस सबध म अमृत बाजार पत्रिका द्वारा 20 जनवरी 1871 के अक मे 1793 के स्थाई बदोबस्त की रक्षा म प्रस्तुत लब सपादकीय विश्लेषण का अध्ययन रोचक होगा। यह उद्धरण दर्शनीय है क्योकि इसम बगाल के नेताओ के एक महत्वपूर्ण वग के और सभवत भारत के ही राष्ट्रवादी नेताओ की वैचारिक प्रक्रिया की सूक्ष्म दृष्टि देखने को मिलती है। यह बात और है कि इस उद्धरण का सबध अध्ययन-काल से दस वर्ष पूर्व से है, फिर भी यह अवतरण ध्यान देने योग्य है

> यह सर्वविदित और विश्वमान्य सत्य है कि वग के रूप म जमीदार देशवासियो के सदव्यवहार के पात्र नही। उनकी एक बहुत बडी सख्या अनुत्साहिया, निकम्मा, दुबलो, अज्ञानियो, शोषको और स्वार्थियो की है। हम यह भी भली प्रकार जानते हैं कि वे ओछेपन और धूर्ततापूर्ण कार्यों म प्रतिवर्ष बहुत बडी धनराशि, जिसपर वास्तव में किसानो का ही नैतिक अधिकार है, हडप जाते है। हम यह भी जानते हैं कि इन जमीदारो मे कुछ के विनाश से ही लाखो किसानो को अधदासता के बधन मे मुक्ति मिलेगी। हम यह सब जानते है और जमीदार की अपेक्षा किसान से ही अधिक प्यार और उसका ही अधिक आदर करते है। इतने पर भी हम जमीदारो का समर्थन करते हैं। यह हमारी क्रूर आवश्यकता है। निस्सदेह यह क्रूर है परतु है हमारी आवश्यकता ही।

सपादकीय म आगे कहा गया है कि यह आवश्यकता दो रूपो म है, प्रथम, जनता के आदोलन के लिए भारतीयो को पैसा चाहिए और वह पैसा केवल जमीदारो के पास है, व्यापारी तो पहले ही नष्ट हो चुके हैं। मद्रास म जहा जमीदार नही हैं, धन और दानियो के अभाव मे वहा जन आदोलनो को गहरा धक्का लगा है। द्वितीय, अगरेजो ने पहले ही सपत्ति उत्पादन के सभी साधनो, व्यापार, उद्योग तथा लोक नियुक्तियो को हथिया रखा है। भूमि ही बची हुई है। यदि जमीदारो को हटा दिया जाए तो सपदा के इस स्रोत पर भी अगरेज अधिकार जमा लेंगे और इससे किसानो के लाभ की दृष्टि से कोई अतर नही पडेगा। अत जमीदारो को ही चलने देना चाहिए जो किसानो के श्रम के फल को हडपने के कारण बुरे अवश्य हैं परतु यूरोपीयो से अधिक बुरे तो नही। सपादकीय ने इस विषय का विस्तृत विवेचन इस प्रकार प्रस्तुत किया है

जमीदारो की कीमत पर किसान की समृद्धि ठीक उसी प्रकार सदैव उचित है जिस प्रकार किसानो और जमीदारा की कीमत पर यूरोपीयो की समद्धि अनुचित परतु हम इस बात का कोई भरोसा नही कि सरकार किसाना के हित मे ही बदोबस्त को नष्ट करना चाहती है। इसके विपरीत हमे तो यह आशका है कि धरती पर बढाया हुआ लगान हमार लाभ के लिए नही प्रत्युत अगरेज जाति के लाभ पर ही खच होगा।

सपादकीय ने इस साहसिक घोषणा के साथ यह निष्कष निकाला 'पहले हम अपने देश के वित्ता पर नियत्रण करन दीजिए फिर हम दिल और दिमाग से बदोबस्त का विरोध करेंगे परतु इस समय तो हम उसका समथन करने को ही विवश है।'

उपर्युक्त सभी तथ्या से यह अधिक से अधिक सिद्ध होता है कि बहुत सारे भारतीय नेता जमीदारी और जमीदारा द्वारा किसानो के शोषण के प्रश्न की उपेक्षा करना चाहते थे परतु इन पक्षो मे यह तथ्य धुधलाया नही जा सकता कि स्थाई बदोबस्त की माग करते समय भारतीय नेता जमीदारी पटटेदारी के लागू करने का षडयत्र नही कर रहे थे।

सदर्भ

1 दत्त स्पीचेज II, प० 90

2 दत्त ई एच II पृ० 97

3 सकल (ग्रास) उपज के मूल्य तथा श्रमिको के वेतन और लाभ की औसत दर पर कृषि में विनियोजित पूजी के लाभ आदि की सगणना क उपरात उत्पादन के अनुमानित व्यय का अतर निवल (नेट) प्राप्ति अथवा उपज थी

4 दत्त ई एच II पृ० 98 इपीरियल गजेटियर आफ इडिया (1908) खड IV, प० 217 9

5 इपीरियल गजेटियर आफ इडिया (1908) खड IV पृ० 222 3

6 वित्त सदस्य ए० कोलविन द्वारा 1884 म सामान्य रूप से सरकार द्वारा करवद्धि के लिए अपनाए जाने वाले सिद्धात का प्रस्तुत सक्षेप इस प्रकार से है पहला मूल्याकन करते समय जमीदार अथवा किराएदार द्वारा किए गए सभी प्रकार के सुधारो पर छूट दी जाती थी दूसरा पहले से ही वर्गीकृत धरती के पुन वर्गीकरण की अथवा पुन मूल्याकन की अनुमति किसा भी रूप में नही दी जानी थी तीसरा चालू मूल्यो को ही सशोधन का आधार माना जाता था तथा किसी प्रकार का परिवतन केवल सावधानी से निर्धारित दो या तीन आधारो पर ही किया जाता था ये आधार थ, भारत सरकार जोत को स्थिर कर सकती थी नियत्रित कर सकती थी तथा उसमें बढोतरी कर सकती थी वद्धि का आधार राज्य द्वारा किए गए सुधारों से उपज म बद्धि और मूल्यो म वद्धि थी वित्त सदस्य (फाइनेंस मवर) ने इस बात का सकेत दिया कि नियम कठोर नहा थे और उनकी प्रयोगशीलता का विचार प्रत्येक मामल मे पृथक पृथक रूप से ही सावधानी के साथ किया जाता था (फाइनैंशल स्टेटमेट 1884-5 कडिका 75) कुछ का कहना था कि वास्तविक कर निर्धारण तो और भी अधिक व्यावहारिक था देखिए बी एच० बोडन पावेल

ए शाट एमाउट आफ दि लैंड रवेन्यू ऐंड इटस ऐडमिनिस्ट्रेशन इन ब्रिटिश इडिया (आक्सफाड, 1894) पृ० 48

7 इपीरियल गजटियर आफ इडिया (1908) खड IV, पृ० 201

8 1856-7 और 1901 2 की अवधि मे भूराजस्व लगभग 58 6 प्रतिशत बढ़ गया दूसरी सगणना 1888 9 और 1905-6 के फाइनैशल स्टेटमेट म दिए गए प्रको से की गई है

9 इपीरियल गजेटियर आफ इडिया (1908) खड IV प० 239, और देखिए स्ट्रची इडिया (1903) प० 125

10 मनवर पूर्वोद्धत म इन लेखो के साथ रानाडे का नाम जुडा हुआ है प० 213-6

11 जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II, स० 1) प० 2 और दखिए प० 19 21

12 वही अक्तू० 1881 (खड IV स० 2) पृ० 53 और देखिए वही, पृ० 55 57 8, दि डक्न एग्रीक्लचरिस्ट रिलीफ बिल, वही, प्रक्तूबर 1879 (खड II, स० 2), दि ला आफ लड सेल इन ब्रिटिश इडिया वहीं अक्तूबर 1880 (खड II स० 2) सट्रल प्रोविंसेज लैंड रवेन्यू ऐंड टनसी बिल्स, वही, अप्रल 1881 (खड II, स० 4) 'एमैंसिपेशन आफ सफ म इन एशिया वही अक्तूबर 1882 (खड V, स० 2) *प्रशियन लड लजिस्लेशन ऐंड दि बगाल टनेंसी बिल वही,* अक्तूबर 1883 (खड VI स० 2) 'प्रपोज्ड रिफाम्स इन दि रिसटलमेंट आफ लड एसेसमेंटस' वही जनवरी 1884 (खड VI स० 3) और प्रोटेस्ट ऐंड वानिग्स अगेंस्ट दि न्यू डिपाचर इन दि लड ऐसममेट पालिसी वही अप्रैल 1884 (खड VI सख्या 4)

13 *प्रस्ताव III*

14 दत्त द्वारा ईस्ट इडिया कपनी प्रशासन की भूराजस्व नीति पर लगाए गए आरोपों क लिए विशेष रूप से देखिए ई एच I प० 79, 189-90 194 231 245, 362 372 3 *और* ओपेन लेटस टु लाड कजन (लाड कजन के नाम खुले पत्र 1900 में लिखित) (इसे आगे सदभ के लिए *'ओपन लेटस' से सकेतित किया जाएगा*), परवर्ती काल के लिए *विशेष रूप से देखिए,* दत्त *'इग्लड ऐंड इडिया* प० 134 सी० पी० ए० प० 481 90, स्पीचेज I, प० 27 40 158 60 ओपेन लेटस स्पीचेज II प० 30 38, ई एच II, प० XIII फमिन ऐंड लड एसेसमट इन इडिया (लदन 1900), पृ० XI XII

15 *जोशी पूर्वोद्धत म पुन मुद्रित प० 392 574 उन्होंने इसी प्रकार के विचार 1884 म (पृ०696)* तथा 1890 में अपने निबध दि इकोनामिक सिच्युएशन इन इडिया—ऐग्रीकल्चर (देखिए विशेषतया प० 672 886 904-05) मे भी इसी प्रकार के विचार प्रकट किए थे

16 दखिए नटसन ऐंड कपनी (मद्रास 1902) द्वारा प्रकाशित उनकी पुस्तक लैंड प्राब्लम्स इन *इडिया म एक लेख दि बावे लड रवेन्यू सिस्टम' मई 1900 मे बंबई मे हुए प्रातीय सम्मेलन में* दिए गए उनके अध्यक्षीय भाषण के उद्धरण, जो बगाली के 22 मई 1900 के अक म पुन मुद्रित हुए थे और डिग्बी पूर्वोद्धत प० 624-8 और रिप० आई० एन० सी०—1902 पृ० 81 एव आग

17 पूना सावजनिक सभा के सचिव का पत्र *जे० पी० एस० एस० जनवरी 1879(खड I सख्या 3)* प० 37-43 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1891 पृ० 22 सी० पी० ए० प० *561 574-5* राय पावर्टी पृ० 180-1 इडियन फमिन पृ० 50, पी० मेहता स्पीचेज प० 607 जी वेंकटरमन रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 131 ए० नदी इडियन पालिटिक्स पृ० 130 जी० एस० अय्यर, विल्बी कमीशन, खड III प्रश्न *18716* रिप० आई० एन० *सी० 1901, पृ० 87,*

बारहवें बंबई प्रांतीय सम्मेलन द्वारा पारित प्रस्ताव, मराठा 16 नव० 1902, गोखले, स्पीचेज, पृ० 80-82, 110-2 1017, एल० एम० घोष सी० पी० ए०, प० 743 757 एल० ए० जी० अय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1903 पृ० 52 आर० एन० मधोलकर दि इकोनामिक कंडीशन इन इंडिया एच० आर० अगस्त 1904 समाचारपत्रों में उदाहरण रूप में देखिए इंदु प्रकाश, 25 अक्तूबर (आर० एन० पी० बंब० 30 अक्तूबर 1880), मराठा, 31 जुलाई 1881, 1 जनवरी 1882 ए० बी० पी० 5 अक्तूबर 1882 18 मार्च 1901 हिंदू 18 जनवरी 5 सितंबर 1884 4 जून 1900 इंडियन स्पेक्टेटर, 7 जनवरी (आर० एन० पी० बंब० 13 जनवरी 1883), (इंडियन स्पेक्टेटर ने अपने 8 मार्च 1884 के अंक में टिप्पणी की कि भूमि पुत्रों के साथ ब्रिटिश भारतीय अधिकारियों ने सभी प्रकार के संबंधों में लुटेरों की भूमिका ही निभाई है) स्वदेशमित्रन, 27 जुलाई (आर० एन० पी० एम० अगस्त 1885) स्वदेशमित्रन 13 नवंबर (वही 30 नवंबर 1889) हिंदुस्तान 3 मार्च (आर० एन० पी० एन० 10 मार्च 1891) बंगाली 13 फरवरी 1892, स्वदेशमित्रन 17 मार्च, 28 अप्रल 12 दिस० (आर० एन० पी० एम०, 31 मार्च 30 अप्रैल, 15 दिस० 1900 क्रमश) केसरी 25 दिस० (आर० एन० पी० बंब० 29 दिस० 1900) न्यू इंडिया 19 मई 1902

18 उदाहरण के लिए देखिए दत्त ओपेन लेटर्स, प० 71, 74-5

19 उदाहरण के लिए देखिए पूना सार्वजनिक सभा के सचिव का एक पत्र जे० पी० एस० एस० जनवरी 1879 (खंड III स० 1) प० 37 9 रानाडे एग्रेरियन प्राब्लम ऐंड इट्स सोल्यूशन जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879(खंड II, स० 1)प० 5 9 लंड ला रिफार्म एंड ऐग्रीकल्चरल बैंक्स, जे० पी० एस० एस० अक्तूबर 1881 (खंड IV स० 2) पृ० 37 54 16 मई 1880 को पूना सार्वजनिक सभा द्वारा आयोजित पूना की एक सार्वजनिक सभा में स्वीकृत याचिका जे० पी० एस० एस०, जुलाई 1880 (खंड III स० 1) पृ० 5 'ए प्ली फार स्पालिएशन आफ इंडिया जे० पी० एस० एस० जनवरी 1885 (खंड VII स० 3) प० 7 15, तलंग स्पीचेज, पृ० 16, आई० एन० सी० 1896 1897 1901, 1902 1903 और 1904 के प्रस्ताव क्रमश XII IX, VIII(a) III III III राय पावर्टी, प० 180-1 184 9 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 334 392 536 (विशेष रूप से देखिए पृ० 452 3 457 61 466-81 494 5 508 10), 890-902 पी० मेहता स्पीचेज प० 450, ए० नदी इंडियन पोलिटिक्स प० 130-3 पी० पी० पिल्लई रिप० आई० एन० सी० 1892 पृ० 99 तिलक रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 132 दत्त स्पीचेज I प० 21, 40 180 सी० पी० ए० प० 480-9 ओपेन लेटर्स प० 18 9 तथा पांच पत्र स्पीचेज II प० 30 57 179 80 ई० एच० I प० IX पाद टिप्पणी 370 ई एच० II पृ० XIII 483 490 1 496 7 535 दसवें बंबई प्रांतीय सम्मेलन में पारित प्रस्ताव (प्रस्तोता तिलक), मराठा 27 मई 1900 जी० के० पारिख 10वें बंबई प्रांतीय सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण बंगाली 22 मई 1900 (तथा डिगबी पूर्वोद्धत प० 624-8) प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवर्नर आफ बाब, 1901 खंड XXXIX प० 227 36 लंड प्राब्लम इन इंडिया प० 124 34 रिप० आई० एन० सी० 1903 प० 59 वी० आर नाबियार, रिप० आई० एन० सी 1900 पृ 101 वाचा सी० पी० ए० पृ० 561 564, स्पीचेज प० 436 गोखले प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवर्नर आफ बाब, 1900 खंड XXXVIII वही प० 92 3 वही 1901 खंड XXXIX पृ० 244 स्पीचेज प० 80-2, 110 12 आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1901, पृ० 86-7,

जी० एस० अय्यर, वही प० 93 ई ए पृ० 48, डी० ए० खरे का तेरहवें बबई प्रांतीय सम्मेलन मे अध्यक्षीय भाषण मराठा 26 अप्रल 1903 एल० एम० घाष, सी० पी० ए०, पृ० 757 9 समाचारपत्रा के लिए देखिए उदाहरणाथ, इदु प्रकाश, 25 अक्तू० और 29 नवबर (आर० एन० पी० बब० 30 अक्तूबर और 4 दिस० 1880 क्रमश) मराठा, 1 जनवरी 1882 इण्डियन स्पेक्टेटर 7 जनवरी (आर० एन० पी० बब० 13 जनवरी 1883) हिंदू 18 जनवरी, 7 फरवरी 5 सितबर 1884, 4 जून 1900 स्वदेशमित्रन, 27 जुलाई (आर० एन० पी० एम०, अगस्त 1885) 13 नव० (वही 30 नव० 1889) स्वदशमित्रन, 8 मई शशिलेखा 15 मई (वही 31 मई 1896), तमिल प्रतिनिधि, 10 अक्तू० (वही 31 अक्तू० 1900), स्वदेशमित्रन 12 दिस० (वहा 15 दिस० 1900) 4 अगस्त के पसा अखबार म महबूब आलम का पत्र (आर० एन० पी० पी० 18 अगस्त 1900), कसरी, 25 दिस० (आर० एन० पी० बब० 29 दिस० 1900), 12 माच (वही 16 माच 1901) ए० बी० पी० 17 23 जनवरा 18 माच 1901 न्यू इंडिया 19 मई 1902

20 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) प० 11 और अक्तूबर 1881 (खड IV, स० 2) पृ० 55 ए प्ली फार स्पोलिएशन आफ इंडिया वहा जनवरी 1885 (खड VII, स० 3) प० 16 जाशी पूर्वोद्धत प० 890-1 दत्त, सी० पी० ए० पृ० 488 फमिन इन इंडिया पृ० XI ओपेन लेटर्स प० 19 39 पाद टिप्पणी 51 स्पीचेज II प० 73 179-80 ई० एच० II प० XIII 08 306 320 489 499 502 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 47 तथा आगे

21 दत्त स्पीचेज II पृ० 57 74 177 202 ई० एच० I प० X 169-70 ई० एच० II प० 98 335 492, 499 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 50-1

22 जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) प० 9 और देखिए रिपोर्ट आफ दि सबकमेटी आफ पूना सावजनिक सभा (पूना 1873) प० 32 53, तिलक प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1895 खड XXXVIII पृ० 91 ए० नरो इंडियन पालि टिक्स प० 111 132 जोशी, पूर्वोद्धत प० 476, 479 80 497 499 500 गोखले प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1900 खड XXXVIII पृ० 94 जी० के० पारिख लैंड प्राब्लम इन इंडिया, प० 147 दत्त ई० एच० II पृ० 493 पाद टिप्पणी, जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 50 79 80 और देखिए ए० बी० पी०, 18 अक्तूबर 1900 और 12 फरवरी 1902, पी० पी० पिल्लई रिप० आई० एन० सी० 1903 प० 60 रानाडे ने भी वकालत की कि राजस्व अधिकारियो को इस तथ्य को ध्यान म रखत हुए तथा थोकी बहुत छूट देते हुए चलना चाहिए कि धरती को निरतर बढती हुई आबादी का पालन-पोषण करना पडता है जे० पी एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) पृ० 3

23 पूना सावजनिक सभा के सचिव का पत्र जे० पी० एस० एस जनवरी 1879 (खड I, स० 3) प० 37, रानाडे जे० पी० एस० एस०, अक्तूबर 1881 (खड IV स० 2) प० 54 56-7 जाशी, पूर्वोद्धत पृ० 347 869 904-05 डी ए० खरे रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 117 पी० महता स्पीचेज, प० 625-6 वाचा, सा० पा० ए० प० 568

24 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II, स० 1) पृ० 7 8, राय पावर्टी पृ० 186-7 जी० के० पारिख लैंड प्राब्लम इन इंडिया, प० 124 34 तथा डिगबी पूर्वोद्धत म उद्धत पृ० 625 दत्त स्पीचेज I पृ० 22 सर फिलिप फांसिस मिनट्स आन दि सब्जेक्ट आफ द

परमानेंट सेटलमेंट फार बंगाल, बिहार ऐंड उड़ीसा विद ए प्रिफेस बाइ आर० सी० दत्त (कलकत्ता 1901) पृ० XII एल० एम० घोष सो० पी० ए० पृ० 758 760-1 पी० पी० पिल्लई, रिप० आई० एन० सी० 1903 पृ० 61

25 दत्त स्पीचज I प० 22 स्पीचेज II, प० 170 ए० बी० पी० 18 अक्तू० 1900 और 12 फरवरी 1902

26 तलग स्पीचेज प० 17, जोशी, पूर्वोद्धत पृ० 654, 658 900 जी० के० पारिख डिगबी पूर्वोद्धत, प० 627 उद्धत, और रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 82 गोखले, प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1901, खंड XXXIX पृ० 244 और दखिए, डी० ए० खरे का तरहवें बबई प्रातीय सम्मेलन म अध्यक्षीय भाषण, मराठा 26 अप्रल 1903

27 तेरहवें बबई प्रांतीय सम्मेलन म डी० ए० खरे का अध्यक्षीय भाषण, मराठा, 26 अप्रल 1903

28 माडलिक स्पीचेज पृ० 541 पूना सावजनिक सभा के सचिव क पत्र, जे० पा० एस० एस० जनवरी 1879 (खड I स० 3) और जुलाई 1886 (खड IX स० 1) पृ० 2 5, रानाड ज० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II, स० 1) प० 3 जनवरी 1884 (खड VI स० 3) पृ० 6 9 तलग स्पीचज प० 10-1 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 497, 902-04 मराठा 25 जुलाई 1886 पी० पी० पिल्लई रिप० आई० एन० सी० 1892 पृ० 117 जी० वेंकटरमन रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 132 पी० मेहता स्पीचेज, पृ० 450 जी० क० पारिख डिगबी, पूर्वोद्धत प० 627 पर एन० एम० चरियार रिप० आई० एन० सी० 1903 पृ० 64 दत्त, ई० एच० II पृ० 465 7 50।

29 पूना सावजनिक सभा के सचिव का पत्र, जे० पी० एस० एम० जनवरी 1879 (खड I स० 3) पृ० 37, रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1), पृ० 3 जनवरी 1884 (खड VI स० 3) पृ० 5 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 497, आर० एन मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1890 प० 48 9 पी० मेहता पूर्वोद्धत पृ० 606 दत्त ओपेन लेटर्स प० 47 52, स्पीचेज II पृ० 39 186 198 ई० एच० II प० IX XI 152 169 171 370 पाद टिप्पणी 380 382 ई० एच० II, प० XII XIII 335 491 2 499 505 515-6 जी० क० पारिख डिगबी पूर्वोद्धत पृ० 626 8 पर रिप० आई० एन० सा० 1903 पृ० 56 7 वाचा सी० पा० ए० पृ० 564 आर० एन० मधोलकर दि इकोनामिक कडीशन आफ इडिया एच० आर० अगस्त 1904 पृ० 259

30 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II, स० 1) पृ० 9 नेटिव आपीनियन 7 नवबर (आर० एन० पी० बब०, 13 नवबर 1880) सुबोध पत्रिका 14 नव० खानदेश वभव 12 नव० लोकमित्र 14 नव० (वही 20 नव० 1880) ज्ञान प्रकाश 13 दिस० (वही 18 दिस० 1880) सूर्योदय 20 दिस० कल्पतरु 19 दिस० (वही 25 दिसबर 1880) नव विभाकर 6 नवबर (आर० एन० पी० बग०, 11 नव० 1882) इडियन स्पेक्टेटर 7 जन० (आर० एन० पी० बब० 13 जन० 1883) अखबारे आम 12 दिस० (आर० एन० पी० पी० एन० 19 दिस० 1883) हिंदू 5 सित० 1884 वाचा रिप० आई एन० सी० 1891 प० 22 तथा सी० पी० ए०, पृ० 561 पी० पी० पिल्लई रिप० आई० एन० सी० 1892 पृ० 99 100 पी० मेहता स्पीचेज प० 394-5 451 575 6 622 आर० एम० सयानी सी० पी० ए० पृ० 364 आर० एन० मधोलकर इडियन पालिटिक्स प० 39 एन० जी० चदावरकर सा० पी० ए० प० 509 10 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 453 जी० एस० अय्यर रिप० आई एन० सी०

1901 पृ० 92 3, ई० ए० प० 52 4, राय इंडियन फैमिन प० 58 न्यू इंडिया, 19 मई 1907 डी० ए० खरे का 13व बंबई प्रातीय सम्मेलन म अध्यक्षीय भाषण मराठा, 26 अप्रल 1903 एल० एम० घाप सी० पा० ए० प० 759 दत ई० एच० II प० 487

31 16 मई 1880 का पूना म हुई सावजनिक सभा म स्वीकृत याचिका ज० पी० एस० एस०, जुलाई 1880 (खड III, स० 1), प० 5 6 पी० मेहता स्पीचेज प० 575 674 जोशी पूर्वोद्धत प० 404-05 408-10, 415 418 508 10, गोखले प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1900 खड XXXVIII पृ० 88 92 और स्पीचेज, प० 6 जी० व० पारिख प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1900 खड XXXVIII प० 118 और आग, वही 1901 खड XXXIX, पृ० 236 7 आर० एन० मघोलकर रिप० आई० एन० सी० 1901, पृ० 87 जी० एस० अय्यर, ई० ए० पृ० 52, एन० एम० घोष, सी० पी० ए०, पृ० 760

32 इंडियन स्पेक्टटर, 11 और 18 सितबर (आर० एन० पी० बब० 17 और 24 सितबर 1881) जोशी, पूर्वोद्धत, प० 466

33 रानाडे ज० पी० एस० एस०, अक्तूबर 1881 (खड IV, स० 2) पृ० 57 नौरोजी स्पीचेज प० 177 जी० एस० अय्यर ई० ए०, प० 80 और आग अध्याय 11

34 रानाड जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1), प० 19 और वही अक्तूबर 1881 (खड IV स० 2) पृ० 56-7 राय पावर्टी प० 180-4 187 8 जी० एस० अय्यर विलबी आयोग खड III प्रश्न 18737 जी० के० पारिख डिग्री पूर्वोद्धत पृ० 628 पर दत्त इंगलड ऐंड इंडिया, पृ० 69, ई० एच० I प० XI स्पीचेज II प० 75

35 पी० मेहता स्पीचेज प० 607 दत्त, स्पीचेज I प० 22 37 40 180 सी० पी० ए० मे प० 490 1 485 487 ओपन लटस, पृ० 18 9 स्पीचेज II प० 57 ई० एच० I प० XI 94 171, केसरी, 25 दिस० (आर० एन० पी० बब० 29 दिस० 1900) आर० एन० मघोलकर रिप० आई० एन० सी० 1904 पृ० 259

36 जोशी पूर्वोद्धत, प० 480 497 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 50

37 पूना सावजनिक सभा क सचिव का पत्र जे० पी० एस० एस० जनवरी 1879 (खड I स० 3) पृ० 43 रानाडे, जे० पी० एस एस०, जनवरी 1884 (खड VI स० 3) प० 5-6 हुसन खान रिप० आई० एन० सी० 1888, पृ० 176 एम० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1889 प० 50 इंदु प्रकाश 28 जुलाई 1890 आर० एन० मघोलकर रिप आई० एन० सी० 1890 पृ० 48 ज० राम वही पृ० 52 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 696 7, 824 969-71 886 तथा आगे 894 904-05 डा० ए० खरे, रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 117, एन० जी० चन्दावरकर, सी० पी० ए० प० 521 2 जी० एस० अय्यर विलबी आयोग खड I प्रश्न 18737, दत्त ओपन लटम प० 52, स्पीचेज II प० 30 39 41 75 105 184 186, 188 198 लैंड प्राब्लम्स आफ इंडिया प० 17 8, ई० एच० I पृ० XI 94 171 ई० एच० II पृ० XII, 467 501 516

38 रानाडे ज० पी० एस० एस० अक्तू० 1881 (खड IV, स० 2) पृ० 55 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 347, 453 870-1 904-05 अखबारे आम 21 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 30 जुलाई 1898) एन० जी० चदावरकर सी० पी० ए०, पृ० 521 दत्त सी० पी० ए०, पृ० 478 480 स्पीचज II, पृ० 91 तथा आग ई० एच० II पृ० XIII

39 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 2) पृ० 48, 57 ज्ञान प्रकाश 8 फरवरी (*आर० एन० पी० बव०, 10 फरवरी 1883*), *बी० एन० सेन रिप० आई० एन० सी०* 1889 पृ० 49, जे० एन० बोस, रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 50 आई० एन० सी० 1891 और 92 के प्रस्ताव क्रमश III और IX डी० ए० खरे रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 117 आर० एन० मधोलकर इडियन पालिटिक्स प० 45 स्वदेशमित्रन 17 माच (आर० एन० पी० एम० 31 माच 1900) एल० ए० जी० अय्यर रिप० आई० एन० सी० *1903 प० 55 रानाडे ने 1879 में ही निर्देश किया था कि कृषि म इस समय जितनी भी पूजी* नियोजित है वह सारा की सारी वयक्तिक तथा अनुत्पादक उद्देश्य लिए हुए है अत उसकी प्रकृति सूदखोर पूजी की है न कि निवेश पूजी की जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) प० 16-7

40 बगाली 21 अक्तूबर 1882, जी० एस० खरपड रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 118

41 दत्त, ई० एच० II पृ० *269*, 306, 463 480-3

42 इदु प्रकाश, 25 अक्तूबर (आर० एन० पी० बब०, 30 अक्तू० 1880) सुबोध पत्रिका, 14 नव० (वही, 20 नव० 1880), इदु प्रकाश 5 सित० (वही 10 सित० 1881) दि वायसरायल्टी आफ लाड लिटन जे० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खड III स० 1) प० *61* रानाडे, जे० पी० एस० एस० जन० 1881 (खड III स० 3) प० *18* और अक्तू० *1881* (खड IV स० 2) पृ० 37 अखबारे आम 12 दिस० (आर० एन० पी० पी० 19 दिसबर 1883) हिंदू 18 जन० 1884 पी० पी० पिल्लई रिप० आई० एन० सी० 1892 प० 98 पी० मेहता, स्पीचेज प० 450 575 605, 622 आई० एन० सी० 1895 का प्रस्ताव X आर० एन० मधोलकर, इडियन पालिटिक्स पृ० 39 ए० नदा इडियन पालिटिक्स प० 131 2 दत्त सी० *पी० ए० प० 480 स्पीचेज II पृ० 57 8 193-4 ई० एच० II प० 487 516 जी० के०* पारिख का दसव बबई प्रातीय सम्मेलन म अध्यक्षीय भाषण बगाली 22 मई 1900 दसवें बबई प्रातीय सम्मेलन मे तिलक द्वारा प्रस्तुत और सम्मलन द्वारा पारित प्रस्ताव मराठा 27 मई 1900, राय इडियन फमिस प० 50 58 जोशी पूर्वोद्धत प० 410 414 421 426 435 गोखले, स्पीचज पृ० 82 1017 वाचा सी० पी० ए० पृ० 561 2 585 न्यू इडिया, 19 मई *1902 तथा देखिए अध्याय 10 आगे*

43 गोखले प्रोसीडिग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1901 खड XXXIX पृ० *247* जी० एम० अय्यर रिप० आई० एन० सी० *1901 प० 92 3* दत्त ई० एच० *II* प० 487 तथा देखिए अध्याय 4 का 72 सख्या की पादटिप्पणी

44 देखिए आगे अध्याय 12 और 13

45 *जे० पी० एस० एस० अक्तूबर 1881 (खड IV स० 2) पृ० 58 और देखिए रानाडे जे०* पी० एस० एस० जनवरी 1884 (खड VI स० 3) पृ० 4 वाचा सी० पी० ए० पृ० *574 5*

46 रानाडे, जे० पी० एस० एस० अक्तू० *1881* (खड IV, स० 2) पृ० *57* एसेज पृ० *256-7*

47 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 870 और देखिए पृ० 347

48 दत्त ओपेन लेटस पृ० 79-80 तथा देखिए वही पृ० 81 3 फमिस इन इडिया, पृ० XIV XVI

49 उन्होने तो और दकर यहा तक कह डाला कि भारत में भूमि समस्या का कभी समाधान नहीं हो पाएगा और भारत धन से तब तक नहा बठगा जब तक यह नहीं किया जाना

एच० II, प० 485 495 501, 595 612, एल० ए० जी० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1903 प० 55

56 तेलग स्पीचेज पृ० 4 6-7 20 रानाडे, जे० पा० एस० एस० जनवरी 1884 (खड VI स० 3), पृ० 8 11 और वहा, अप्रल 1884 (खड VI स० 4) पृ० 48 9 मराठा, 30 माच 1884 25 जुलाई 1886 ज्ञान प्रकाश, 3 अप्रल इदु प्रकाश 31 माच (आर० एन० पी० बब 5 अप्रल 1884) इडियन स्पेक्टेटर, 20 अप्रल (वही 26 अप्रल 1884) इदु प्रकाश 12 जुलाई (वही, 17 जुलाई 1886), पूना सावजनिक सभा के सचिवा क पत्र दिनांक 4 जून 1884 जे० पी० एस० एस० जुलाई 1886(खड IX, स० 1), प० 3 5 6 जाशी पूर्वोद्धत प० 824 दत्त, ई० एच० II प० 465 7

57 एल० एम० घोष स्पीचेज, पृ० 28, एस० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1889 पृ० 50, आई० एन० सी 1894 1896 1898 1901 और 1903 के प्रस्ताव क्रमश II (बी) XVII VI III और III, जोशी, पूर्वोद्धत पृ० 497 दत्त ओपेन लेटस प० 53 65 6 79 83 एस० एन० बनर्जी, सी० पी० ए० पृ० 698 9

58 *वी० महता स्पीचेज प० 395 622-4 दत्त ओपेन लेटस प० 49 51 54 80 फमिस इन* इडिया पृ० XVI स्पीचेज II प० 12 41 ई० एच० II पृ० 467 9 612 आई० एन० सी० 1902 1903 और 1904 को प्रस्ताव क्रमश III III (ए) III (बी), डी० ए० खरे का तेरहवें बबई प्रातीय सम्मेलन मे अध्यक्षीय भाषण मराठा, 26 अप्रल 1903

59 आई० एन० सी० 1895 का प्रस्ताव स० X एन० जी० चदावरकर सी० पी० ए प० 520

60 गोखले प्रोसीडिंग्स आफ दि कौसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1901, खड XXXIX पृ० 247, जी० एम० अय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 93 और ई० ए० पृ० 54-5

61 1876 77 और 1896-1901 क अकालो के दौरान भारतवष म सावदेशिक स्तर पर माग उठाई गई और देखिए रानाडे जे० पी० एस० एस० अक्तूबर 1879 खड II स० 2) प० 66 पी० *पा० पिल्लई रिप० आई० एन० सी० 1892 प० 99 100 मराठा 17 जन० 1897 जी० के०* पारिख प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1900 खड XXXVIII प० 118 और आगे जोशी पूर्वोद्धत, प० 404 413 4 420 511 555 8 हिंदू० 18 अगस्त 1902 दत्त स्पीचेज II प० 59 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 55 7 गोखले स्पीचेज प० 82 3

62 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई *1879 (खड II स० 1) पृ० 10 13-4* और अप्रल 1884 (खड II स० 4) पृ० 55, बबई समाचार 22 नव० (आर० एन० पी० बब 27 नव० 1880) पूना सावजनिक सभा द्वारा प्रस्तुत स्मरणपत्र ज० पी० एस० एस० जुलाई 1881 खड IV स० 1) प० 9 ए० बी० पी० 26 जून 1884 और 19 जून 1892 मराठा का एक स्तभ लेखक 7 फरवरी 1892 राय इडियन फमिस प० 58 दत्त ई० एच० II पृ० 493 पाद टिप्पणी आर० एम सयानी एल० सी० पी० 1897 खड XXXVI पृ० 191

63 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) प० 13-4 दत्त ई० एच० II प० 493 पादटिप्पणी

64 केसरी 15 और दिस० (आर० एन० पी० बब 19 और 26 दिस० 1896) आर० एन० पी० बब 2 9 16 23 और 30 जनवरी और 6 13 और 27 फरवरी 1897 मे यथाप्रतिवेदित विभिन्न समाचारपत्रो मे प्रकाशित रिपोट मराठा 3 10 17 जनवरी 1897 रामगोपाल

50 नौरोजी, स्पीचेज, परिशिष्ट, पृ० 173, 176, रानाडे, जे० पी० एस० एम०, अक्तू० 1879 (खंड II स० 2) पृ० 66 जन० 1881 (खंड III स० 3), पृ० 17 और अक्तू० 1881 (खंड IV, सं० 2) पृ० 42 45 6, एल० एम० घोष, स्पीचेज, प० 28 मराठा 31 जुलाई 1881, स्वदेशमित्रन 8 मई शक्तिलेखा, 15 मई (आर० एन० पी० एम०, 31 मई 1896), आई० एन० सा०, 1890 और 1902 के प्रस्ताव क्रमश XIII तथा III, जी० एस० अय्यर विलबी आयोग खंड 3, प्रश्न 18643 4 दत्त स्पीचेज I पृ० 23 26 37 40 सी० पी० ए० प० 486 ओपेन लेटस, पृ० 53 स्पीचज II पृ० 17 8, 41,59 97 200, 202, ई० एच० II प० 528, 606-07 स्वदेशमित्रन 17 मार्च (आर० एन० पी० एम० 31 मार्च 1900), ए० बी० बा० 21 अप्रैल 4 जून, 18 अगस्त० 1900 जोशी, पूर्वोद्धृत, पृ० 364-5 457 497, 513 एम० एम० मालवीय रिप० आई० एन० सी० 1900 पृ० 98 वाचा सी० पी० ए० पृ० 601 एस० एन० बनर्जी सा० पी० ए० पृ० 691, 698 699 बारहवें बबई प्रातीय सम्मेलन का प्रस्ताव मराठा 16 नव० 1902, तेरहवें बबई प्रांतीय सम्मेलन म तिलक का भाषण मराठा, 10 मई 1903, एस० ए० जी० अय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1903 पृ० 52 3, गोखले स्पीचेज, पृ० 77 80 83, 112 तथा देखिए आगे पाद टिप्पणी 55-58

51 रानाडे, जे० पी० एस० एस० अप्रल 1884 ((खड VI स० 4) पृ० 55 और देखिए रानाडे वही जुलाई 1879 (खड II स० 1) प० 11 3, दत्त ओपेन लेटर्स, पृ० 41 2, 53 65 89, 82 3, फमिन इन इंडिया, पृ० XVI स्पीचज II पृ० 18, 75 104 177 8 201 ई० एच० I प० 396 ई० एच० II पृ० X, XII 471 485 495 501-02 597 612 मराठा, 3 मई 1903

52 दत्त सी० पी० ए० पृ० 482 3, आपन लेटस पृ० 41 2, 53, 65 79, 82-3 बाद मे आर० सी० दत्त न विरोध प्रकट करत हुए कहा कि उन्होंने सकल उपज के 1/5 भाग को दर पर लगान की अधिकतम सीमा किसी अकेली जात पर न बढ़ाने का प्रस्ताव किया था न कि धरती क लगान क सामान्य मानक क रूप म कोई प्रस्ताव रखा था अधिकतम लगान पर इस प्रकार की रोक की आवश्यकता उस समय उत्पन्न हुई जब राजस्व अधिकारियों द्वारा उपज के आधे भाग पर सगठित लगान कभी कभी कुल उपज के 1/5 भाग से अधिक बढ़ता था और कभी कभी तो सकल उपज के 1/3 से भी बढ़ जाता था आपेन लेटस पृ० 39 पाद टिप्पणी 42 पाद टिप्पणी 53 पाद टिप्पणी 65 पाद टिप्पणी, स्पीचेज II पृ० 178 9, ई० एच० II पृ० 512 3 यह सभव है कि दत्त इस ढग से अपनी उस गलती पर परदा डालने की चेष्टा कर रहे थे जो मतभेद की तीव्रता म उनस हो गई था और कर्जन ने राष्ट्रवादियों की समालोचना को नकारने के लिए जिसका बड़ी बुद्धिमत्ता स उपयोग किया था

53 ज० पी० एम० एस जुलाई 1879 (खड II स० 1) पृ० 13

54 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 4९0-1

55 एल० एम० घाप स्पीचेज पृ० 28 आई० एन० सी० 1895, 1896 और 1901 और 1903 के प्रस्ताव क्रमश XIV XIII, III और III ... की ओर स 9 नवबर 1895 को लाड एलगिन के स्वागत म किया गया ... जनवर 1896 (खड XVIII स० 3) प० 11, सी० गवर्न ... 385 स्पीचेज I पृ० 40 181 ओपेन लेटर्स पृ० 48 9 स्पी 186-7 190 198 202 लड प्राब्लम आफ इंडिया

एच० II, पृ० 485 495, 501 595 612 एल० ए० जी० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1903 पृ० 55

56 तेलग स्पीचज पृ० 4 6-7 20 रानाड जे० पा० एस० एस० जनवरी 1884 (खड VI स० 3), पृ० 8 11 और वही, अप्रल 1884 (खड VI स० 4) पृ० 48 9 मराठा 30 माच 1884 25 जुलाई 1886 ज्ञान प्रकाश, 3 अप्रैल इदु प्रकाश 31 माच (आर० एन० पी० बब 5 अप्रल 1884), इडियन स्पेक्टेटर 20 अप्रल (वही, 26 अप्रल 1884) इदु प्रकाश 12 जुलाई (वही 17 जुलाई 1886), पूना सार्वजनिक सभा के सचिवो के पत्र दिनांक 4 जून 1884 जे० पी० एस० एस०, जुलाई 1886(खड IX, स० 1), प० 3, 5-6 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 824 दत्त, ई० एच० II पृ० 465 7

57 एल० एम० घोष स्पीचेज पृ० 28 एस० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1889 पृ० 50 आई० एन० सी 1894 1896 1898, 1901 और 1903 के प्रस्ताव क्रमश II (बी) XVII VI, III और III, जोशी पूर्वोद्धत पृ० 497 दत्त ओपेन लेटस प० 53 65-6 79 83, एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 698-9

58 पी० महता स्पीचेज पृ० 395 622-4 दत्त ओपन लेटस प० 49 51 54 80 फमिस इन इडिया पृ० XVI स्पीचेज II प० 12 41 ई० एच० II पृ० 467 9 612 आई० एन० सी० 1902 1903 और 1904 को प्रस्ताव क्रमश III III (ए) III (बी), डी० ए० खरे का तरहवें बबई प्रातीय सम्मेलन मे अध्यक्षीय भाषण, मराठा, 26 अप्रैल 1903

59 आई० एन० सी० 1895 का प्रस्ताव स० X एन० जी० चदावरकर सी० पी० ए प० 520

60 गोखले प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बांबे 1901 खड XXXIX पृ० 247 जी० एम० अय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 93 और ई० ए० पृ० 54-5

61 1876-77 और 1896-1901 क अकालो के दौरान भारतवष म सावदेशिक स्तर पर माग उठाई गई और देखिए रानाड ज० पी० एस० एस० अक्तूबर 1879 खड II स० 2) पृ० 66 पी० पी० पिल्लई रिप० आई० एन० सी० 1892 प० 99 100 मराठा 17 जन० 1897 जी० के० पारिख प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवर्नर आफ बाब 1900 खड XXXVIII पृ० 118 और आगे जोशी पूर्वोद्धत प० 404 413 4 420 511, 555 8 हिंदू० 18 अगस्त 1902 दत्त स्पीचेज II पृ० 59 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 55 7 गोखल स्पीचेज पृ० 82 3

62 रानाडे जे० पी० एस० एस जुलाई 1879 (खड II स० 1) पृ० 10 13-4 और अप्रल 1884 (खड II स० 4) पृ० 55, बबई समाचार 22 नव० (आर० एन० पी० बब, 27 नव० 1880) पूना सावजनिक सभा द्वारा प्रस्तुत स्मरणपत्र ज० पी० एस० एस० जुलाई 1881 खड IV स० 1) प० 9 ए० बी० पी० 26 जून 1884 और 19 जून 1892 मराठा का एक स्तभ लेखक, 7 फरवरी 1892 राय इडियन फमिस प० 58 दत्त ई० एच० II, पृ० 493 पाद टिप्पणी आर० एम० सयानी एल० सी० पी० 1897 खड XXXVI पृ० 191

63 रानाड जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) पृ० 13-4 दत्त ई० एच० II प० 493 पादटिप्पणी

64 केसरी 15 और दिस० (आर० एन० पी० बब 19 और 26 दिस 1896) आर० एन० पी० बंब 2 9 16 23 और 30 जनवरी और 6 13 और 27 फरवरी 1897 म यथाप्रतिवेदित विभिन्न समाचारपत्रो म प्रकाशित रिपोट, मराठा 3 10 17 जनवरी 1897, रामगोपाल

50 नौरोजी स्पीचेज, परिशिष्ट, पृ० 173, 176 रानाडे, जे० पी० एस० एस०, अक्तू० (खंड II स० 2) पृ० 66 जन० 1881 (खंड III स० 3), प० 17 और अक्तू० 18९ IV, स० 2) प० 42, 45 6, एल० एम० घोष, स्पीचेज, प० 28 मराठा, 31 जुलाइ स्वदेशमित्रन 8 मई, शशिलेखा, 15 मई (आर० एन० पी० एम० 31 मई 1896), आ सी०, 1890 और 1902 के प्रस्ताव क्रमश XIII तथा III, जी० एस० अ आयोग खंड 3, प्रश्न 18643-4 दत्त स्पीचेज I प० 23 26 37 40 सी० पी० ए० ओपेन लेटस, प० 53, स्पीचेज II पृ० 17 8 41 59 87 200 202 ई० एच० I 606-07 स्वदेशमित्रन 17 माच (आर० एन० पी० एम० 31 माच 1900), ए 21 अप्रल, 4 जून 18 अक्तू० 1900 जोशी, पूर्वोद्धृत पृ० 364-5 457 497 एम० मालवीय रिप० आई० एन० सी० 1900 प० 98 वाचा सी० पी० एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 691 698 699 बारहवें बंबई प्रांत प्रस्ताव मराठा 16 नव० 1902 तेरहव बंबई प्रांतीय सम्मेलन म तिलक का 10 मई 1903 एल० ए० जी० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1903 प स्पीचेज प० 77, 80 83 112 तथा देखिए आगे पाद टिप्पणी 55 58

51 रानाडे जे० पी० एस० एस० अप्रल 1884 ((खंड VI, स० 4) पृ० 55 ओ वही जुलाई 1879 (खंड II स० 1) प० 11 3 दत्त ओपेन लेटस प 89 82 3, फैमिन इन इंडिया प० XVI स्पीचज II पृ० 18 75, 10 एच० I प० 396 ई० एच० II प० X, XII 471, 485 495 501-02 3 मई 1903

1893 प० 114 और रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 133 जोशी पूर्वोद्धत प० 362 3, 811 824 5 एम० आर० सयानी एल० सी० पी०—1897 खड XXXVI स० 191 और सी० पी० ए० पृ० 365 जी० आर० एम० चिननवीस, एल० सी० पी० 1898 खड X XVII पृ० 481 पी० ए० चारलू, वही प० 502 और एल० सी० पी० 1900 खड XXXIX प० 146, पी० मेहता स्पीचेज पृ० 606-07 एम० एम० मालवीय रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 91 3 और रिप० आई० एन० सी० 1900 पृ० 99 एस० एन० बनर्जी रिप० आई० एन० सी० 1900 प० 75 6 गोखले स्पीचेज प० 24 5 112 जी० एस० अय्यर एच० आर० फरवरी 1902 प० 149 51, बारहवें और तेरहवें बबई प्रातीय सम्मलनो के प्रस्ताव, मराठा 16 नवबर 1902 और मई 1903 क्रमश

73 भूराजस्व के स्थाई निर्धारण की माग आर० सी० दत्त के भूमि समस्या पर लिखे गए लगभग सभी लेखा मे उपलब्ध है उदाहरणाथ देखिए इग्लड ऍड इडिया प० 51 133 5 फमिस इन इडिया, प० XII स्पीचेज I प० 15 24 158 180 1 इ० एच० II प० X XI

74 ज्ञान प्रकाश 6 फरवरी (आर० एन० पी० बब, 8 फरवरी 1879) अरुणोदय, 27 अप्रल (वही 3 मई 1879) शिवाजी 8 अगस्त (वही 16 अगस्त 1879), सुबाध पत्रिका 1 अगस्त (वही 7 अगस्त 1880) इदु प्रकाश 7 माच (वही 12 माच 1881), अरुणोदय 30 अक्तूबर (वही 5 नवबर 1889, 24 माच 1900 3 फरवरी 1901 ज्ञान प्रकाश, 8 फरवरी (आर० एन० पी० बब०, 10 फरवरी, 1883) सोमप्रकाश 8 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 13 जनवरी 1883), नेटिव ओपीनियन, 1 अप्रल 1883, हिंदू 27 फरवरी 1884, 13 सित० 1889 2 जून० 1891 नसीमे आगरा, 23 अग० (आर० एन० पी० पी० एन० अगस्त 1884) स्वदेशमित्रन, 27 जुलाई (आर० एन० पी० एम० अगस्त 1885) बगाली 28 जून 1890 इदु प्रकाश 28 जून 1890 हिंदुस्तान 3 माच (आर० एन० पी० एन० 10 माच 1891) हिंदुस्तानी 7 अक्तू० (आर० एन० पी० एन० 15 अक्तू० 1891) हिंदुस्तानी, 8 नवबर (वही 15 नवबर 1893) विक्टोरिया पेपर, 25 अक्तू० (आर० एन० पी० पा० 4 नवबर 1893, पसा अखबार 13 अक्तू० (वही, 20 अक्तू० 1894) केरल पत्रिका 26 जनवरी (आर० एन० पी० एम०, 31 जन० 1895), सियालकोट पेपर 8 अक्तू० पसा अखबार 7 अक्तू० (आर० एन० पी० पी० 28 अक्तू० 1899) स्वदेशमित्रन 18 मार्च और 21 अगस्त (आर० एन० पी० एम० 31 माच और 31 अगस्त 1900 क्रमश)

75 लड रवेन्यू पालिसी आफ दि गवनमेंट आफ इडिया (कलकत्ता, 1902) कडिका 5

76 वही कडिका 5 और 6

77 वही कडिका 6

78 वही कडिका 9

79 रीस पूर्वोद्धत प० 63 यह काफी आश्चयजनक है कि एक ओर तो रीस ने लगान के स्थाई बदोबस्त सबधी काग्रेस के आदोलन को जमींदार समथक नाम दे डाला दूसरी ओर उसी प्रस्ताव के तीन ही पष्ठो के उपरांत प्रत्येक जमीदार के निजी स्वामित्व के स्थाई बदोबस्त की वकालत प्रारभ कर दी रीस की मान्यता थी कि यह स्थाई बदोबस्त बगाल के स्थाई बन्दोबस्त से भिन्न होगा (वही प० 66-9) इससे स्पष्ट है कि उसे यह मालूम था कि स्थाई बन्दोबस्त शब्द के विपरीत रूप से दो भिन्न अथ हो सकते थे

80 सोवेट फ्रेजर पूर्वोद्धत पृ० 154 5

पूर्वोद्धत, पृ० 122 30 तहमकर, पूर्वोद्धत, पृ० 69 73 प्रधान और भागवत पूर्वोद्धत प० 100 03 सोर्स मटीरियल्स फार ए हिस्टरी आफ दि फ्रीडम मूवमेंट इन इडिया, (बबई), खड II प IX 196 638

65 उदाहरणार्थ 15 सितबर 1896 के अक के केसरी का लेख अशिक्षित किसान को यह पढ़ाने की आवश्यकता है कि उसके अधिकार क्या हैं और उन्हे वह किस प्रकार प्राप्त कर सकता है' उन्होने यह घोषणा की कि नेताओ का यह कर्तव्य है कि वे किसान जनता को समझाए कि यदि उनकी फसल खराब हो गई है तो उन्हे लगान चुकाने की आवश्यकता नही है (आर० एन० पी० बब०, 19 दिस० 1896), उन्होने इसी अक म लिखा यदि लोग गोली की परवाह न करके अपने अधिकारो के लिए लडने का दृढ निश्चय कर लें तो नेतागण उनका युद्ध में साथ देने के लिए कर्तव्यबद्ध होग (प्रधान तथा भागवत पूर्वोद्धत प० 102) तथा देखिए रामगोपाल, पूर्वोद्धत प० 125 6 और तहमकर पूर्वोद्धत, प० 71

66 रामगोपाल पूर्वोद्धत, प० 126-9

67 वही उद्धत प० 129 30

68 तहमकर—पूर्वोद्धत प० 63 पर उद्धत

69 जे० पी० एस० एस०, जुलाई 1879 (खड II स० 1) प० 14-20 और अक्तू० 1881 (खड IV स० II), प० 54 8 तथा प० 256-7 रिप० आई० एन० सी० 1887 पृ० 143 इस प्रकार 1881 मे स्थाई कर निर्धारण की वकालत करते हुए कहा 'सरकार के पास अवशिष्ट एकमात्र विकल्प जिसके साथ सभी उपकरणो का सुधार महत्वहीन हो जाता है' की अनुपस्थिति में अन्य उपचारों के प्रभाव की चर्चा करते हुए उन्होने शोकाकुल होकर कहा भारी लगानो की वसूली का आसान सुविधाओ ने इसे विस्मृति की नीद म सुला दिया है और वे यह मानने लगे हैं कि रोटी के टुकड के लिए परेशान लाखो किसान वैधानिक कानूनों के रूप म पत्थर के टुकडो के उपहार स सतुष्ट हो जाएग वस्तुत गहरे घावो को और गहरा करने वाली पद्धति में नव जीवन रक्त और शक्ति का सचार किए बिना किराया की सतही खाई को पाटने वाले कानूनो से कोई लाभ नही होगा जे० पी० एस० एस० अक्तूबर (खड IV, स० 2) पृ० 54 और 57 क्रमश

70 प्रस्ताव VII 1888 म प्रस्ताव पारित कराने क प्रयत्न की असफलता के लिए देखिए, रिप० आई० एन० सी० 1888 प० 163 4 174-8

71 1890 का प्रस्ताव VI 1891 का III 1892 का IX, 1893 का X और XI 1894 का II 1896 का XIII 1897 का VII 1898 का VI 1900 का XXIII, 1901 का III 1902 का III 1903 का III और 1904 का III

72 एल० एम० घोष स्पीचेज पृ० 5 पूना सावजनिक सभा के सचिव का पत्र जे० पी० एस० एस० जनवरी 1879 (खड I स० 3) पृ० 43 16 मई 1880 को पूना म हुई एक सावजनिक सभा म स्वीकृत याचिका जे० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खड III स० 1) प० 8-9 पूना सार्वजनिक सभा का स्मरणपत्र दिनाक 2 मार्च 1881 जे० पी० एस० एस० जुलाई 1881 (खड IV स 1) पृ० 8 9 शेख राजा हुसन खां मुशी शेख हुमन खां और राजा रामपालसिह आई० एन० सी० 1889 प० 1756, बी० एन० सेन रिप० आई० एन० सी० 1889 पृ० 48-9 एस० सुब्रह्मण्य अय्यर वही प० 50-1 आर० एन० मधोलकर, रिप० आई० एन० सी० 1890 प० 49 और इडियन पालिटिक्स पृ० 45-6 बी० जी० तिलक रिप० आई० एन० सी०

1893 प० 114 और रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 133, जाशा पूर्वोद्धत प० 362 3 811, 824 5, एम० आर० सयानी, एल० सी० पी०—1897 खड XXXVI स० 191 और सी० पी० ए० प० 365 जी० आर० एम० चितनवीस एल० सी० पी० 1898 खड X XVII पृ० 481 पा० ए० चारलू वही पृ० 502 और एल० सी० पी० 1900 खड XXXIX प० 146, पी० मेहता, स्पीचेज, पृ० 60₀-07, एम० एम० मालवीय रिप० आई० एन० सी० 1899 प० 91 3 और रिप० आई० एन० सी० 1900 पृ० 99 एस० एन० बनर्जी रिप० आई० एन० सी० 1900 प० 75 6 गोखले स्पीचेज प० 24 5 112 जी० एस० अय्यर एच० आर०, फरवरी 1902 प० 149 51, बारहव और तेरहवें ववई प्रातीय सम्मलना के प्रस्ताव, मराठा 16 नववर 1902 और मई 1903 क्रमश

73 भूराजस्व के स्थाई निर्धारण की माग आर० सी० दत्त के भूमि समस्या पर लिखे गए लगभग सभी लेखो मे उपलब्ध है उदाहरणाथ देखिए इग्लड ऐंड इडिया प० 51 133 5 फमिस इन इडिया प० XII स्पीचेज I प० 15 24 158 180-1 इ० एच० II पृ० X XI

74 ज्ञान प्रकाश 6 फरवरी (आर० एन० पी० बब 8 फरवरी 1879) अरुणोदय 27 अप्रल (वही 3 मई 1879) शिवाजी 8 अगस्त (वही 16 अगस्त 1879) सुबोध पत्रिका, 1 अगस्त (वही 7 अगस्त 1880), इदु प्रकाश 7 माच (वही 12 माच 1881) अरुणोदय 30 अक्तूबर (वही 5 नववर 1889, 24 माच 1900, 3 फरवरी 1901 ज्ञान प्रकाश 8 फरवरी (आर० एन० पी० बब० 10 फरवरी 1883) सोमप्रकाश 8 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 13 जनवरी 1883) नेटिव ओपीनियन, 1 अप्रल 1883 हिंदू, 27 फरवरी 1884 13 सित० 1889 2 जून० 1891 नसीमे आगरा, 23 अग० (आर० एन० पी० पी० एन० अगस्त 1884) स्वदेशमित्रन, 27 जुलाई (आर० एन० पी० एम० अगस्त 1885), बगाली 28 जून 1890 इदु प्रकाश 28 जून 1890 हिंदुस्तान 3 माच (आर० एन० पी० एन० 10 माच 1891) हिंदुस्तानी 7 अक्तू० (आर० एन० पा० एन० 15 अक्तू० 1891) हिंदुस्तानी, 8 नवबर (वही 15 नवबर 1893) विक्टोरिया पेपर 25 अक्तू० (आर० एन० पी० पी० 4 नववर 1893 पसा अखबार 13 अक्तू० (वही 20 अक्तू० 1894) केरल पत्रिका, 26 जनवरी (आर० एन० पी० एम० 31 जन० 1895), सियालकोट पेपर 8 अक्तू० पसा अखबार 7 अक्तू० (आर० एन० पी० पी० 28 अक्तू० 1899), स्वदेशमित्रन 18 माच और 21 अगस्त (आर० एन० पी० एम० 31 माच और 31 अगस्त 1900 क्रमश)

75 लड रवेन्यू पालिसी आफ दि गवनमेंट आफ इडिया (कलकत्ता 1902) कडिका 5

76 वही कडिका 5 और 6

77 वही, कडिका 6

78 वही कडिका 9

79 रीस पूर्वोद्धत पृ० 63 यह काफी आश्चयजनक है कि एक ओर तो रीस ने लगान के स्थाई बदोबस्त सबधी काग्रस के आंदोलन को जमींदार समथक नाम दे डाला दूसरी ओर उसी प्रस्ताव के तीन ही पष्ठो के उपरांत प्रत्येक जमादार के निजी स्वामित्व के स्थाई बन्दोबस्त की वकालत प्रारभ कर दा रीस की मान्यता थी कि यह स्थाई बन्दोबस्त बगाल के स्थाई बदोबस्त से भिन्न होगा (वही प० 66-9) इससे स्पष्ट है कि उसे यह मालूम था कि स्थाई बन्दोबस्त शब्द के विपरीत रूप से दो भिन्न अथ हो सकते थे

80 लोवेट फ्रेजर पूर्वोद्धत पृ० 154 5

81 शाह सिक्सटी इयस आफ इडियन फर्मिस, पृ० 196 और देखिए, पृ० 200

82 थामस पूर्वोद्धत प० 123, लोकनाथन, दि इकोनामिक्स आफ गोखले', इडियन जरनल आफ इकोनामिक्स जनवरी 1842, खड XXII स० 3 पृ० 228, बी० आर० मिश्र लैंड रवेन्यू पालिसी इन दि यूनाइटिड प्राविसेज (बनारस 1942) पृ 37 39 हा लोकनाथन ने गोखले को स्थाई वदोबस्त का समथन करने के दोष से मुक्त कर दिया

83 पी० सी० घोष 'दि डेवलपमट आफ इडियन नेशनल काग्रस 1892 1909 (कलकत्ता, 1960) प० 41 3

84 वही प० 44 यह एक भारी आश्चय का विषय है जसाकि बाद म दिखाया जाएगा, भाषण म कोई एसा अवतरण ही न था, जिसकी इस ढग से व्याख्या की जा सके

85 बी० बी० मिश्रा दि इडियन मिडिल क्लासेज—देयर ग्रोथ इन माडन टाइम्स (लन्दन 1961), प० 350 यह भी एक सयोग है कि जिस वप यह प्रस्ताव भने ही मिश्रा के अभिप्राय के अनुकूल नहा पारित हुआ, वह वप 1888 न होकर 1889 था 1888 में तो यह मामला काग्रेस की विभिन्न स्थाई समितिया के सदस्या के पास उनकी राय जानन के लिए ही भजा गया था (देखिए प्रस्ताव XIV)

86 वही प० 349 50

87 पी० स्पीयर इडिया ए माडन हिस्टरी (ए० एन० एन० आबर यू० एस० ए० 1961) पृ० 312 इसी प्रकार एच० एल० सिंह लिखते हैं जहां तक भूमिधारी वर्गों का सबध है काग्रस की नीति अधिकाशत उनके पक्ष म थी काग्रेस स्थाई बदोबस्त के विस्तार की समथक थी जो किसानों और जमीदारो के लिए बहुत अधिक और रयन तथा राज्य के लिए बहुत ही कम उपयोगी था काग्रेस की इस नीति का लेखा जोखा करते हुए लाड एलगिन ने सत्य को ही उजागर किया कि बगाल के जमादार बडे ही शक्तिशाली थ और उस प्रात के लेखको और वक्ताओ के साथ उनके व्यापारिक सबध थे प्राब्लम्स एँड पालिसीज आफ दि ब्रिटिश इन इडिया 1885 1898 (बबई 1963) पृ० 217

88 एन० एम० घोष स्पीचेज प० 5

89 रानाडे एसेज प० 327

90 जे० पी० एस० एम० जनवरी 1874 (खड VI स० 3) प० 19 20

91 आर० एन० पी० बग०, 12 माच 1881

92 और देखिए मराठा 22 अगस्त 1886 और बगाल पब्लिक ओपीनियन (बी० ओ० आई०, 31 जनवरी 1884)

93 रिप० आई० एन० सी 1888 प० 175 1889 के काग्रस के अधिवेशन म स्थाई बदोबस्त के प्रस्ताव क प्रस्तोता बी० एल० सेन ने इस पक्ष पर बल दिया था रिप० आई० एन० सी० 1889 प० 48-9) इसी प्रकार 1890 के काग्रेस के अधिवेशन में जानकीनाथ बोस ने विश्वास दिलाया कि सारे बबई और मद्रास मे हम किसानो के स्वत्वाधिकार वाला स्थाई बन्दोबस्त ही देखना चाहते हैं (रिप आई० एन० सी० 1890 प० 51 2)

94 और देखें एस० एन० बनर्जी रिप० आई० एन० सी० 1900 पृ० 75-6

95 रिप० आई० एन० सी० 1893 प० 14 उन्होंने यह भी टिप्पणी की कि सरकार देश के विभिन्न भागों में प्रचलित स्थिति के अनुरूप जमीदारा अथवा ग्रामों के मालिक अथवा किसानों के साथ बातचीत कर सकती है

96 रिप० आइ० एन० सी० 1894 प० 38 और देखिए पी० मेहता, स्पाचज, प० 606-07, पी० ए० चारलु एल० सी० पी० 1900 खड XXXIX प० 147

97 राय इडियन फर्मिस पृ० 56-7

98 एच० आर० फरवरी 1902, प० 149-51 और देखिए गोखले स्पीचेज प 24

99 दत्त पीजटरी इन बगाल (कलकत्ता 1874) प० 46 ग्रौर आग

100 बगबासी 10 अगस्त (आर० एन० पी० बब०, 17 अगस्त 1895)

101 दत्त इग्लड ऐंड इडिया प० 134

102 सी० पी० ए० प० 486 पी० सी० घोष को गुमराह करने वाली बात कदाचित आर० सी० दत्त की भारत के दूसरे भागो म बगाल प्रशासन के विस्तार की माग थी परतु दत्त विस्तार की माग कर रहे थे न कि जमीदारी पटटेदारी की वह उस पद्धति की माग कर रहे थे जिसमे कुल उपज का 1/6 भाग ही किराए के रूप म चुकाना होता है उनके भाषण का पूरा वाक्य इस प्रकार है बगाल नियम का भारत के दूसरे भागो मे विस्तार कीजिए दूसरे प्रातो मे कुल उपज के 1/6 भाग को किसान से वसूल किए जाने वाले धरती के किराए की अधिकतम सीमा निर्धारित कीजिए तब देखिए कि अकाल को रोकने की समस्या कसे सुलभती है (वही प० 481)

103 दत्त ओपेन लेटस प० 65 और देखिए वही प० 74 स्पीचेज II प० 178 ई० एच० II पृ० XI

104 उदाहरणाथ देखिए पूना सावजनिक सभा के सचिव का पत्र जे० पी० एस० एस० जनवरी 1879 (खड I स० 3) प० 43 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) प० 16 एसज प० 256 16 मई 1880 की पूना की जन सभा म स्वीकृत याचिका जे० पी० एस० एस० जलाई 1880 (खड III स० 1) प० 9 ज्ञान प्रकाश 8 फरवरी (आर० एन० पी० बब० 10 फरवरी 1883 आई० एन० सी०—1888 1889 1890 1891 1892 1893 1895 1897 और 1900 के प्रस्ताव क्रमश XIV VII VI III IX X, XIV VII और XXIII बी० एन० सेन रिप० आई० एन० सी० 1889 प० 48 जोशी पूर्वोद्धत प० 363 811 854-5 आर० एन० मधोलक्र इडियन पालिटिक्स प० 45-6 पी० ए० चारलु एल०सी०पी० 1898 खड XXXVII प० 502 और वही, 1900 खड XXXIX प० 146 सी० शकरन नायर सी० पी० ए० प० 384-5 दत्त इग्लड ऐंड इडिया, प० 51 134-5 स्पीचेज II प० 168 गोखले स्पीचेज पृ० 24

105 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) पृ० 14-15 16 मई 1880 को पूना में हुई जन सभा में स्वीकृत याचिका जे० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खड III स० 3) प० 9 रिप० आई० एन० सी० 1889 प० 48-9 आई० एन० सी० 1889 1893 1894 1898 1902 1903 और 1904 के प्रस्ताव VI XI II III III, और VI (बी) क्रमश जोशी पूर्वोद्धत प० 364 811 दत्त इग्लड ऐंड इण्डिया पृ० 91 2 स्पीचज I पृ० 19-20 स्पीचेज II पृ० 40-1 172 3 फर्मिस इन इडिया प० XII ई एच II पृ० X XI 273-291 आर० एन० मधोलक्र इडियन पालिटिक्स पृ० 45 6 गोखले, स्पीचेज प० 25

106 दत्त ई० एच० I प० 123 5 135-40 152, 168 और देखिए, दत्त इग्लड ऐंड इडिया प० 49-50 ओपेन लेटस प० 31 ई० एच० II पृ० 77-8 दत्त ने एलफिंस्टन क रयतवाड़ी पद्धति के प्रबल समथक होने पर भी ग्राम समुदायो और ग्राम पचायतो आदि के बचाने की चेष्टा के लिए उसकी प्रशसा की (ई० एच० I प० 352-65)

107 16 मई 1880 को पूना में हुई जन सभा में स्वीकृत याचिका जे० पी० एस० एस०

(खंड III स० 1), पृ० 8 9 रानाडे, एसेज, प० 327, जे० पी० एस० एस०, अक्तूबर 1881 (खंड IV स० 2) प० 56, वही जनवरी 1884 (खंड VI स० 3) प० 21 वही, अप्रल 1884 (खंड VI स० 4) प० 55, शेख राजा हुसन खा रिप० आई० एन० सी० 1888 प० 175 आर० एन० मधोलकर, रिप० एन० सी० 1890 पृ० 49 के० जी० देशपांडे, रिप० आइ० एन० सी० 1891 पृ० 33 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव II (बी) पी० ए० चारलु एन० सी० पी० 1900 खड XXXIX प० 146 पी० मेहता, स्पीचेज प० 607 दत्त स्पीचेज I प० 181 82 ओपेन लेटस प० 48 66 79, फमिस इन इंडिया पृ० XV, स्पीचेज II पृ० 187 8 ई० एच० II पृ० 514, गोखले, प्रासीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 190 खड XXXIX प० 245 एल० ए० जी० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1903 प० 56

108 दत्त ई० एच० II पृ० 503-04 एस० गोपाल, दि वायसरायल्टी आफ लाड रिपन (लदन, 1953) प० 189

109 रानाड जे० पी० एस० एस०, जनवरी 1884 (खड VI स० 3) प० 4-11, साधारणी, 23 नव०, सजीवनी, 22 नव० समाचार चंद्रिका 24 नव० (आर० एन० पी० बग० 29 नव० 1884), ग्रामवत प्रकाशिका, 29 नव० (वही, 6 दिस० 1884), प्रतिकार 12 दिस० (वही 20 दिस० 1884), आई० एन० सी० 1893, 1894 1898 और 1899 क प्रस्ताव क्रमश XI II, VI और II (बी) आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 159, रिप० आई० एन० सी० 1901 प० 87 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 607, दत्त, स्पीचज I प० 158-60, ओपन लेटस, प० 35, 41 53-4, 79, फमिस इन इंडिया प० XIII, XV, स्पीचज II पृ० 9, ई० एच० I प० XI XII 503 504

110 आई० एन० सी० 1889 1890 1902 1903 और 1904 के प्रस्ताव क्रमश VII, VI, III और III (बी) दत्त, स्पीचेज I प० 181 2 ई० एच० पृ० 184, गोखले, स्पीचज, प० 24, आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 87

110-ए दत्त स्पीचज II प० 173 तथा देखिए, गोखले, स्पीचेज पृ० 25

111 आई० एन० सी० 1896 1901 1902 1903 और 1904 के प्रस्ताव क्रमश XIII III III, III और III

112 रानाडे, जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) पृ० 17 8 इंदु प्रकाश, 10 माच (आर० एन० पी० बब०, 15 माच 1879), शिवाजी 8 अगस्त (वही 16 अगस्त 1879), इंदु प्रकाश 7 माच (वही, 12 माच 1881) पूना सावजनिक सभा का स्मरणपत्र जे० पी० एस० एस०, जुलाई 1881 (खड IV स० 1), प० 8, ए० बी० पी०, 5 अक्तूबर 1882 28 नव० 1889 27 माच 1900 बी० एन० सेन, रिप० आई० एन० सी० 1889 पृ० 48 जे० एन० बोस रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 51 ए० नदी इंडियन पालिटिक्स पृ० 33-4 मालवीय रिप० आई० एन० सी० 1900 प० 99 दत्त इग्लैंड ऐंड इंडिया, पृ० 13 134 स्पीचेज I पृ० 15-18 180-1, सी० पी० ए०, पृ० 481 ओपेन लेटस पृ० 59 60 64-5 स्पीचेज II पृ० 4 5 40 169 ई० एच० I, पृ० 94-6, ई० एच० II पृ० X 461, 509 और जे० एन० गुप्ता की लाइफ ऐंड वक आफ आर० सी० दत्त (लदन 1911) पुस्तक पृ० 333-4 पर उद्धृत एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, पृ० 698 एल० एम० घोष सी० पी० ए०, पृ० 759

3 दत्त फ्रांसिस मिनिट्स पृ० IV तथा देखिए स्पीचेज I, पृ० 18 ओपन लेटर्स प० 64 ई० एच II पृ० 94 5

4 दत्त, सी० पी० ए०, पृ० 484 ओपन लेटर्स, पृ० 22 61-4 फमिन इन इंडिया प० IX 106-07 ई० एच० II, 461 इस संबंध में दत्त के विवेचन में स्पष्ट गलती यह है कि वह यह देखने में चूक गए कि बंगाल में वास्तविक किसानो और जमींदारो के मध्य बिचौलिए थे जमीदार के पास तो काबिज किसान की ओर से 1/5 भाग से अधिक नहीं पहुचता था जबकि वास्तव में किसान बेचारे को शायद अपनी कुल उपज के प्रतिशत का बहुत बडा भाग देना पडता था और सचमुच ही यह सब कुछ रयतवाडी में भी हो रहा था

5 राय इंडियन फमिस, प० 55-6 और देखिए एस० एन० बनर्जी स्पीचेज II 12 3, इंडियन स्पेक्टेटर 25 सितंबर (आर० एन० पी० बब० 1 अक्तूबर 1881) ग्रामवर्त्त प्रकाशिका 16 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 1 माच 1884) मराठा 17 फरवरी 1884 बगाली 28 जून 1890 और आगे देखिए बगाल रट बिल की धारा जसा पहले निर्देश किया जा चुका है, एक नवयुवक के रूप मे दत्त ने स्वय 1874 में असहाय किसानो का दमन करने और उन्हे दरिद्र बनाने की जमींदारो को अनुमति देन वाले 1793 के स्थाई बदोबस्त की निंदा की थी देखिए, 'पीजटरी आफ बगाल', पृ० X 46 और आगे 1888 में जी० वी० जोशी ने बगाल मे ऊचे किराए लागू होने की निंदा लगातार की थी पूर्वोद्धत, पृ० 884

6 दत्त इग्लंड ऐंड इंडिया, पृ० 90-1, 116 स्पीचेज I पृ० 15 6 180 इंडियन पालिटिक्स, पृ० 55 सा० पी० ए० प० 481 ओपेन लेटर्स, प० 18 9 59 61 65 78 फ्रांसिस मिनिट्स पृ० VII VIII स्पीचेज II, प० 4 5 170 ई० एच० II, प० 263 4 437, 460-1

7 लड रवेन्यू पालिसी आफ गवनमट आफ इंडिया 1902 कडिका 9

8 दत्त स्पीचेज II पृ० 170

9 दत्त पीजटरी आफ बगाल पृ० 83 इस कायवाही के नतिक उद्देश्य की चर्चा दत्त ने निम्न लिखित रूप में प्रस्तुत की है और फिर यह जमींदार है कौन ? वही जो किराया बढाने के लिए किसान को परेशान करता है ? वही जो स्वय महलो के शहर में अपने आरामदेह घर मे चुपचाप बठा रहता है और उसके मजदूर प्रात से साय तक खेतो मे श्रम करते हैं और रात भर जागते रहते हैं वे जेठ की तपती दुपहरी मे सावन के बरसते पानी और पौष की सख्त कपाने वाली सर्दी में खुले आसमान के नीचे काम करते हैं वे जमीन जोतते हैं और फसल काटते हैं पौधे लगाते हैं और फल बीनते हैं उन्हे इसलिए परेशान किया जाता है कि वे अपने अथक श्रम के फल के भाग पर निरतर बढ़ती माग को पूरा करने से इनकार करते हैं जमीदारो के पास किसानो को तग करने की शक्ति कहा से आती है ? क्या एक निकम्मे आदमी को किसी मेहनती गरीब को परेशान करने का नतिक अधिकार प्राप्त है ? इस काय का समथन करने वाली आचारसहिता सचमुच ही विचित्र होगी (पृ० 87)

0 उनके दृष्टिकोण का तक अधिकाशतया असदिग्ध था हा यह कभी कभी स्पष्ट रूप से प्रकट किया जाता था प्रमाण रूप मे देखिए सी० जे० ओ० डोनिल की समीक्षा दि रूइन आफ इन्डियन प्राविंस जे० पी० एस० एस०, जनवरी 1881 (खड III स० 3) प० 38 इदु प्रकाश, 7 माच (आर० एन० पी० बब० 12 माच 1881) हिंदू 14 अप्रल 1884 जोशी पूर्वोद्धत 885 दत्त इग्लड ऐंड इंडिया प० 130 ए बी० पी० 28 जुलाई 1904

1 दत्त ई० एच I प० 128, 232 3 190, 362, 365 दत्त ने कपनी के एक डायरेक्टर हेनरी

सेंट जान टक्कर की पुस्तक मे निम्नलिखित अवतरण को उद्धृत किया इस न ही छुपाया जा सकता है और न ही नकारा जा सकता है कि इस रयतवाडी पद्धति का उद्देश्य किराए के रूप मे मिलने वाले सरकारी राजस्व की अधिकाधिक प्राप्ति है

122 वही पृ० 362

123 रानाडे एसेज, पृ० 29 30 327 सी० जे० आ० डानिल की समीक्षा स्टून आफ इंडियन प्राविंस' ज० पी० एस० एस०, जनवरी 1881 (खड III स० 3) एस० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1886, पृ० 62 एच० ए० रहीम रिप० आई० एन० सी० 1890, पृ० 55 जी० सी० सिंह रिप० आई० एन० सी० 1893 पृ० 115-6 केरल पत्रिका 26 जनवरी (आर० एन० पी० एम०, 31 जनवरी 1895) मालवीय स्पीचेज पृ० 266-8, दत्त इग्लैड ऐंड इडिया, पृ० 13 स्पीचेज I, पृ० 15 सी० पी० ए० पृ० 482 ओपेन लेटर्स पृ० 59, 74-6 78, और देखिए पीछे 40-1 पाद टिप्पणी उदाहरणार्थ आर० सी० दत्त ने विभिन्न प्रातो के किराया कानूनो को पूरा समर्थन दिया और किसानो की सुरक्षा के लिए इससे भी कोई बडा साधन अपनाने की वकालत की देखिए फरवरी 1899 की अवधि म पायनियर को लिखे पत्र तथा 14 सित० 1900 को ऐंटनी मक्डानल को लिखा पत्र, जे० एन० गुप्ता पूर्वोद्धृत पृ० 349 पर स्पीचेज II पृ० 178 और ई० एच० II पृ० 268 71 458-60 467

124 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज II, पृ० 10-11 हिंदू 14 अप्रल 1884 ए० बी० पी०, 22 नवबर 1883 3 फरवरी 1901 दत्त, ई० एच० I, पृ० 96 133 और ज० एन० गुप्ता पूर्वोद्धृत पृ० 334 पर, और देखिए ए० बी० पी० 25 जन० 1902 यहा यह उल्लेखनीय है कि राष्ट्रवादियो ने सरकारी तर्क को बडा ही सफाई से मोड दिया कि जमादारी पद्धति के अतगत जहा किराए का लाभ खून चूसने वाले जमादारवग को मिलता है वहा रयतवाडी म यह खून चूसने वाली सस्था सरकार है

125 रानाडे, एसेज पृ० 287 290 दत्त ई० एच० I पृ० 131 2 ई० एच० II पृ० 43

126 रानाडे जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) पृ० 2 17 18 एसेज पृ० 239-42 पूना सार्वजनिक सभा का स्मरणपत्र जे० पी० एस० एस० जुलाई 1881 (खड IV स०1) पृ० 9 ब्रह्मो पब्लिक ओपीनियन 28 अक्तूबर 1880 ए० बी० पी० 22 नवबर 1883 मराठा 27 जुलाई 1890 इदु प्रकाश 28 जुलाई 1890 बी० एन० सेन रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 50 ए० बी० पी० 20 फरवरी 1899 दत्त ई० एच० I पृ० 132 दत्त ई० एच० II पृ० 52 58 86 88-9 264 267 दत्त ने अपने ग्रथ 'इकोनामिक हिस्टरी आफ इडिया' के द्वितीय खड मे टिप्पणी की कि ग्राम समुदायो और बिचौलिया जमींदारो के अभाव म पजाब में व्यापारी सर्राफ और रकम उधार देने वाले आदि के रूप मे एक नया वग अस्तित्व में आ गया है जो किसी भी देश के कुलीनतत्र का निकृष्टतम रूप है (ई० एच० II पृ० 89-90)

कृषि II

जमीदारो को इस स्थिति म रखना चाहिए कि व काश्तकारा का दमन न कर सकें। साथ ही काश्तकारा को भी भूस्वामिया का अपमानित और तिरस्कृत करने के लिए प्रात्साहित नही करना चाहिए। सामाजिक शिष्टाचार का निर्वाह इस रूप मे हो कि भूमिपति काश्तकार से प्रेम करें और काश्तकार भूमिपतियो का आदर करें।

अमृत बाजार पत्रिका, 8 जनवरी 1885

समाज के एक वग को कठोर श्रम और दासता के बधन मे जकडने वाली तथा दूसरे वग को शारीरिक श्रम से सवथा छूट, सुख चैन और पूण अवकाश की सुविधा जुटाने वाली प्रवत्तियो के प्रमुख कारण कुछ भी क्यो न रहे हो 'परतु अब यह नितात स्पष्ट है कि आधुनिक सभ्यता की प्रवत्तिया तथा समता की पनपती भावना इन दोनो वर्गों मे असमान और अन्यायपूण सबधो को दीघकाल तक बने नही रहने देंगी। देर सवेर समाज की पुनव्यवस्था होना निश्चित है, और अच्छा यही है कि हम बिना किसी प्रहार की शिकायत किए और बुडबुडाए उस समय के स्वागत के लिए तैयार रहे।'

मराठा 21 अक्तूबर, 1893

यदि अगरेजो के दमन को चिंगारी की सज्ञा दी जाए तो राजाओ और जमीदारो के दमन को शोले की सज्ञा देनी पडेगी।

बगनिवासी, 30 अक्तूबर, 1891

किसान और जमीदार

भूमि जोतने वाले की उपज पर केवल कर कमचारी का ही अधिकार नही था। बगाल, बिहार, उडीसा, उत्तरी मद्रास, मध्य भारत के प्राता मे, उत्तरी पश्चिमी प्रात तथा अवध और बबई तथा पजाब के छोटे से भागा के जमीदारी क्षेत्रो मे भूमि जोतने वाला काश्तकार था जो जमीदार को किराया चुकाता था, उसमे से ही जमीदार सरकार को लगान का भुगतान करता था। इसके साथ ही साथ इन सभी इलाको मे किराया लेने वाले

जमीदार और किराया चुकाने वाले तथा असल में ही जमीन जोतने वाले किसानों के बीच बिचौलियों की संख्या निरंतर कई गुना बढ़ती जा रही थी। इधर रयतवाड़ी इलाका में भी धीरे धीरे खुदकाश्त की प्रणाली विच्छिन्न तथा विलुप्त होती जा रही थी। मालिक किसान धीरे धीरे अपनी धरती ऋणदाता, व्यापारी तथा व्यवसायी वर्ग के हाथों बेचते जा रहे थे। व्यापारी लोग भूमि के मालिक तो बन जाते थे पर धरती जोतते नहीं थे। वे उन पुराने किसान मालिकों को धरती पर बने तो रहने देते थे परंतु अब उनकी स्थिति दरिद्र व असहाय किराएदार किसान की हो जाती थी। देश के देहातों में निरंतर बढ़ते हुए किरायों तथा धरती को खाली कराने की घटनाओं ने विस्फोटक स्थिति उत्पन्न कर दी थी और किसी न किसी रूप में किसानों और जमीदारों के पारस्परिक संबंधों के प्रश्न को देश की एक महत्वपूर्ण आर्थिक तथा राजनीतिक समस्या बना दिया था। अतः सरकार किराए के कमरतोड़ भार से दबे किसानों को कुछ राहत देने के लिए तथा विभिन्न प्रांतों में काश्तकारी और किराए संबंधी कानूनों की शृंखला बनाने के लिए विवश हो गई। यहां यह उल्लेखनीय है कि सरकार ने रैयतवाड़ी इलाकों में मनमर्जी पर रखे काश्तकारों की समस्या की पूर्ण रूप से ही उपेक्षा कर दी।

यह काफी आश्चर्यजनक बात है कि इस प्रश्न पर राष्ट्रवादी नेताओं की नीति न केवल अनिश्चित थी प्रत्युत इस पर उन्होंने विशेष ध्यान भी नहीं दिया। इन नेताओं ने न तो किसान और जमींदार के बीच के प्रश्न को प्रमुख आर्थिक समस्या माना और न ही किसानों के लक्ष्यों को सामान्य राजनीतिक आंदोलन से जोड़ा। राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा किसानों की समस्याओं की उपेक्षा के परिमाण को इस तथ्य से नापा जा सकता है कि समीक्षाधीन अवधि में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से उनके संबंध में वास्तव में ही कुछ भी नहीं कहा[1] परंतु उस समय देश के सामने आने वाली आर्थिक यथार्थताओं से उत्तरोत्तर जूझने वाले, राजनीति में सक्रिय और सजीव भाग लेने वाले नेताओं से तो इन समस्याओं से आंखें मूंदने की अपेक्षा नहीं की जा सकती थी। इन नेताओं ने इन समस्याओं को दो रूपों में लिया : सामान्य और विशिष्ट। सामान्य रूप के अंतर्गत इन नेताओं ने किसानों का अस्पष्ट रूप से ही पक्ष लेते हुए छिटपुट टिप्पणियां कीं तथा सामान्य उपचार सुझाए। और विशिष्ट रूप के अंतर्गत उन्होंने सरकार द्वारा पारित विभिन्न काश्तकारी और किराया संबंधी अधिनियमों पर अपने मत प्रकट किए। यहां उन्हें रोग विशेष के लिए निश्चित उपचार सुझाना था अथवा अपना स्पष्ट मत प्रकट करना था। अतः उन्हें खुले तौर पर ही किसानों अथवा जमीदारों के समर्थक के रूप में आना पड़ा।

सामान्य रूप के अंतर्गत राष्ट्रवादी समाचारपत्रों ने जमीदारी इलाकों में किसानों के प्रति मानवीय चिंता प्रकट की तथा जमीदारों द्वारा किसानों के सामान्य दमन, कमरतोड़ किरायों की वसूली और किसान की बेदखली के प्रति विरोध प्रकट किया।[2] यह विरोध कभी कभी तीखी भाषा में भी होता था। उदाहरणार्थ, शक्तिशाली जमीदारों द्वारा किसानों के दमन की आलोचना करते हुए बंगाली ने अपने 9 दिसंबर 1882 के अंक में लिखा : किसी भी प्रकार का अत्याचार निंदनीय है। अत्याचारी भले ही गोरा हो अथवा काला आदमी, दमन करने वाला भले ही भारत में जन्मा और पला हो अथवा दूर

पश्चिम से आया हो, सर्वथा और समान रूप से घृणा का पात्र है।'[3] दस हजार व्यक्तियों के खून पसीने की कमाई पर एक व्यक्ति को जीवन की सभी सुख सुविधाएं तथा विलासिताएं जुटाने वाली लगान संग्रह पद्धति को अमान्य ठहराते हुए 'सोम प्रकाश' ने 24 जुलाई, 1882 के अंक में व्यंग्यपूर्वक पूछा 'एक के श्रम का दूसरे द्वारा लाभ उठाया जाना और गुलछर्रे उड़ाना कहां का न्याय है?' उसने स्पष्ट शब्दों में घोषित किया कि 'समय की गति के साथ जमींदार उत्तरोत्तर जितना अधिक शक्तिशाली हुआ है, किसान उत्तरोत्तर उतना ही अधिक दीन हीन हुआ है।'[4] 14 जून, 1884 के अंक में 'बंगबासी' ने गांव के जमींदार को सभी प्रकार के कानूनों का उल्लंघन करने वाला तथा बंगाल का सबसे बड़ा उत्पाती बताया।[5] 'बंगनिवासी' ने 30 अक्तूबर, 1891 में जमींदारों, उनके गुमाश्तों तथा अन्य संबंधित व्यक्तियों द्वारा किसानों के अमानवीय और अकथनीय दमन की निंदा करते हुए एक लंबा और क्रोधपूर्ण संपादकीय प्रकाशित किया। उसने इस संबंध में शिक्षित लोगों की अकर्मण्यता तथा उपेक्षा वृत्ति की आलोचना करते हुए लिखा

> यदि हमारे अपने ही देशवासी (जमींदार और उनके दलाल) साधारण सा अधिकार पाकर इतना भारी अत्याचार और दमन कर सकते हैं तो असीम शक्तियों से संपन्न विदेशी जिलाधीश के अन्याय के विरुद्ध चीखा चिल्लाहट करना कहां तक उचित है? यदि अंगरेजों द्वारा किए गए दमन को चिंगारी कहा जाए तो इन जमींदारों और राजाओं द्वारा किए जा रहे दमन को धधकते हुए शोले की संज्ञा दी जानी चाहिए।[6]

उत्तरी पश्चिमी प्रांत और अवध में उत्तरी भारत के कांग्रेस के मुस्लिम समर्थकों में अग्रणी सज्जाद हुसैन द्वारा संपादित प्रमुख हास्य व्यंग्य प्रधान पत्र 'अवध पंच' के 18 जनवरी 1894 के अंक में एक कार्टून प्रकाशित हुआ। इसमें अधनंगे बदन और नंगे पैरों दो किसान एक जमींदार को पालकी में उठाए हुए चित्रित किए गए थे। बड़ी तोंदवाले जमींदार ने चमकीले गहने और 'स्टार आफ इंडिया' का तमगा पहन रखा था। कार्टून का शीर्षक था 'अकाल का कारण'। उन दोनों में एक किसान दूसरे साथी से कह रहा था 'भाई इसका बोझ तो हमारा दम तोड़ देगा, क्यों न इस पाजी को फेंक दिया जाए?'[7] मालाबार से निकलने वाली, के० पी० करुणाकर मेनन द्वारा संपादित, 'केरल पत्रिका' ने अपने 21 मार्च 1896 के अंक में बार बार होने वाले मोपला बलवों के लिए, जमींदारों द्वारा किए गए असहनीय दमन से उत्पन्न गरीबी को उत्तरदायी बताया और अत्याचारी जमींदारों को सभी वर्गों और समुदायों के किसानों का समान रूप से क्रूरतापूर्वक दमन करने वाला घोषित किया।[8] 4 जुलाई 1896 के अंक में 'केरल पत्रिका' ने सरकार को चेतावनी दी कि यदि उसने जमींदारों का दमन न रोका तो न केवल मोपलों के बलवे नहीं रुक पाएंगे प्रत्युत नायर लोग भी विद्रोह पर उतर आएंगे।[9]

कुछ एक भारतीय जननेताओं ने 1870 के आसपास जमींदारी प्रथा की निंदा की। जमींदारों पर सशक्त प्रहार बंकिमचंद्र चटर्जी ने अपने 'बंगदर्शन' के अंतर्गत 'समय' लेख में किया।[10] युवक नेता आर० सी० दत्त ने चटर्जी महोदय का अनुसरण किया।[11] 17 फरवरी 1884 को 'मराठा' ने अपने एक लंबे लेख में जमींदारी पद्धति पर तीखा प्रहार

समर्थन किया तथा काश्तकारी अधिकारों को और अधिक सुदृढ़ बनाने के पक्ष में प्रबल तर्क दिए।[17] जोशी ने अधिकारियों से बंबई के नितांत असुरक्षित उपकाश्तकारोंवाले रयतवाड़ी इलाके में भी कानूनी संरक्षण के विस्तार का अनुरोध किया।[18]

यह स्वाभाविक ही था कि समीक्षाधीन अवधि के दौरान जमींदारी प्रणाली के उन्मूलन की व्यापक माग तो नहीं की गई परंतु यह कम महत्वपूर्ण नहीं कि यह माग क्यों उठाई गई। इस प्रकार 2 अक्तूबर 1881 के अंक में इंडियन स्पैक्टेटर ने सरकार से सारी जमींदारी खरीदने और फिर सीधे किसानों से समझौता करने का अनुरोध किया।[19] 24 जुलाई 1882 के अंक में 'साम प्रकाश' ने सरकार को रूस सरकार के आदर्श उदाहरण का अनुकरण करने का उपदेश दिया और कहा कि सरकार जमींदारी प्रथा समाप्त कर दे। जमींदारों को बीस वर्षों में होने वाले लाभ के बराबर का धन उसकी जमीन के मूल्य के रूप में देकर उनका स्वामित्व समाप्त कर दिया जाए। यह धन आधा सरकार जुटाए और आधे की व्यवस्था किसान करे।[20] कभी कभी भारतीय नेता माग के प्रति टालमटोल काम लेते थे और जमींदारी प्रणाली को एक सिद्ध तथ्य मानकर जमींदार और पट्टेदार के मध्य स्थाई समझौते की वकालत करते थे।[21]

12 जून, 1880 के अंक में बंगाली ने बंगाल के स्थाई बंदोबस्त की एक और मजेदार आलोचना प्रस्तुत की। बंगाली पत्र ने दृढ़ स्वर में कहा कि बंगाल में औद्योगिक और व्यावसायिक गतिविधियों का नितांत अभाव है। जमींदारी ही वहा पूंजी के निश्चित लाभप्रद निवेश का एकमात्र अवशिष्ट साधन है। यही कारण है कि पूंजी निवेश की प्रवृत्ति उद्योग की अपेक्षा जमींदारी की ओर हो रही है। दो वर्ष पश्चात 28 जनवरी 1882 के अंक में बंगाली ने अपनी आलोचना दोहराते हुए अपना मत प्रकट किया कि जमींदारी पद्धति का प्रवर्तन बंगाल और बंबई के औद्योगिक और व्यापारिक स्तर का उल्लेखनीय अंतर स्पष्ट करता है।

इसके विपरीत सामान्य आधार पर जमींदारों अथवा अन्य बड़े बड़े भूखंडों के स्वामियों के हितों के भारतीय नेताओं द्वारा समर्थन के उदाहरण बहुत ही कम थे। बंगाल में 'बंगाली' ने पट्टेदारों के समर्थन की अपनी पहली नीति से हटते हुए 19 मार्च 1887 के अंक में सरकार से पूर्वी बंगाल में किसान संगठनों को तोड़ने के उपाय करने का और किसानों को उचित किरायों के भुगतान की अनिवार्यता से परिचित कराने का अनुरोध किया। 20 फरवरी 1899 के अंक में अमृत बाजार पत्रिका ने भी दावा किया कि अंगरेजी राज्य की अकालों, कृषि संबंधित लागों के विप्लवों तथा अनेक अन्यान्य बुराइयों में सुरक्षा जमींदारों के अधिकारों और सुविधा को बनाए रखने पर ही निर्भर है न कि उनके विनाश में। एक वर्ष पश्चात इसी पत्रिका ने अपने 12 जनवरी 1900 के अंक में सरकार से अनुरोध किया कि वह या तो जमींदारों के प्रति अपनी कठोरता की नीति में मृदुता लाए या उन्हें किसानों से किराया वसूल करने की सुविधाएं जुटाए। 'केसरी' ने 18 अक्तूबर 1881 के अंक में शिकायत की कि देश के दूसरे भाग में, बंबई के सतारा तथा अन्य दूसरे जिलों में किसानों से जमीन के निर्धारण लगान की वसूली करने में इमामदारों को सफल बनाने के लिए अधिकारियों ने उनकी आवश्यक तथा अपेक्षित

किया। जैसा कि हम आगे विवेचन करेंगे, बगाल किराया बिल पर मतभेद के समय अनेक भारतीय सस्थाओ और राष्ट्रवादी नेताओ ने किसान समर्थक दृष्टिकोण अपनाया। बाद में पृथ्वीशचद्र राय ने अपने दो लेखो, 1895 में प्रकाशित 'पावर्टी प्राब्लम्स इन इडिया' और 1901 मे प्रकाशित 'दि काजेज आफ इडियन फामिन' में जमीदारी प्रणाली और जमीदारो के दमन को ही लोगो की दरिद्रता के लिए उत्तरदायी माना।[1] जी०वी० जोशी ने जमीदारी की विस्तृत आलोचना की। उन्होने 1890 मे प्रकाशित अपने निबध 'इकोनामिक सिच्युएशन इन इन्डिया' मे जमीदारी और रैयतवा... क्षेत्रो की बुराइयो की तफसील मे आलोचना की। उन्होंने लिखा कि सारे दे... आगे धरती को किराए पर देने की घटनाए बढ रही हैं। बिचौलि... रखे काश्तकारो की सख्या कई गुना बढ गई है। एक ओर जनस... और गैरकृषि उद्योग म बराबर ह्रास होने से किसानो मे ध... और प्रतियोगिता की स्थिति उत्पन्न हो गई है और इस स्थि... जमीदारो ने किसानो को गगनचुबी किराया देने के लिए बा... किराया और काश्तकारी की असुरक्षा का दुष्परिणाम यह ... जोतने वाले किसान का धरती को सुधारने का निश्चयात... है।[13] जोशी जी के निबध का सक्षेप इस प्रकार है

किया। जैसा कि हम आगे विवेचन करेंगे, बगाल किराया बिल पर मतभेद के समय अनेक भारतीय संस्थाओं और राष्ट्रवादी नेताओं ने किसान समर्थक दृष्टिकोण अपनाया। बाद में पृथ्वीशचन्द्र राय ने अपने दो लेखों, 1895 में प्रकाशित 'पावर्टी प्राब्लम्स इन इंडिया' और 1901 में प्रकाशित 'दि कॉजेज आफ इंडियन फैमिंस' में जमींदारी प्रणाली और जमींदारों के दमन को ही लोगों की दरिद्रता के लिए उत्तरदायी माना।[1] जी०वी० जोशी ने जमींदारी की विस्तृत आलोचना की। उन्होंने 1890 में प्रकाशित अपने निबंध 'इकोनामिक सिचुएशन इन इंडिया' में जमींदारी और रैयतवाड़ी दोनों क्षेत्रों की बुराइयों की तफसील से आलोचना की। उन्होंने लिखा कि सारे देश में काश्तकार द्वारा आगे धरती को किराए पर देने की घटनाएं बढ़ रही हैं। बिचौलियों और मनमरजी से रखे काश्तकारों की संख्या कई गुना बढ़ गई है। एक ओर जनसंख्या की वृद्धि और दूसरी ओर गैरकृषि उद्योग में बराबर ह्रास होने से किसानों में धरती के पाने के लिए होड़ और प्रतियोगिता की स्थिति उत्पन्न हो गई है और इस स्थिति का दुरुपयोग करते हुए जमींदारों ने किसानों को गगनचुंबी किराया देने के लिए बाध्य कर दिया है। इन ऊंचे किरायों और काश्तकारी की असुरक्षा का दुष्परिणाम यह निकला है कि असली हल जोतने वाले किसान का धरती को सुधारने का निश्चयात्मक उत्साह ही नष्ट हो गया है।[13] जोशी जी के निबंध का संक्षेप इस प्रकार है

> *किसान की स्थिति यह है कि वह कितनी भी समझदारी से काम कर ले, कृषि उद्योग अथवा उपज से उसे कुछ मिलता मिलाता नहीं है और यदि वह अपने काम की उपेक्षा करता है तो उसका कुछ बिगड़ता नहीं। उसे किसी प्रकार की कोई आशा नहीं है। अपने कब्जे की कुछ एकड़ धरती को बचाने के लिए वह भूखे मरने की बजाय मुंहमांगा ऊंचा किराया चुकाता है। अपनी सहायता आप करने का उद्देश्य ही इस स्थिति का अंग नहीं और न ही इस स्थिति में स्वतः कठोर श्रम की प्रेरणा की अपेक्षा की जा सकती है।*[14]

1894 में प्रकाशित अपने निबंध 'नोटस आन एग्रीकल्चर इन बाबे' में जोशी ने जमींदारी और स्वैच्छिक काश्तकारी के विकास पर विस्तृत विचार प्रस्तुत किया। उन्होंने दुख पूर्वक कहा कि आंशिक रूप में उपकाश्तकारी के व्यापक व्यवहार के कारण और आंशिक रूप से ऋण ग्रस्तता से मुक्ति न मिलने के फलस्वरूप बंबई प्रांत में समुचित काश्तकारी अधिकार अथवा काश्तकारी कानून नाम की कोई वस्तु ही नहीं रह गई है। इस प्रकार काश्तकारी अधिकारों तथा अधीनस्थ काश्तकारों की बेदखली अथवा किराया वृद्धि के विरुद्ध संरक्षण की कोई व्यवस्था ही नहीं है।[15]

बहुत सारे भारतीय नेताओं ने काश्तकारों को संरक्षण देने के निश्चयात्मक उपाय भी सुझाए। इनमें सर्वाधिक लोकप्रिय उपाय था किराया में अनुचित वृद्धि के, भारी लगाना के, बेदखली के तथा काश्तकारों के अधिकारों के हनन के विरुद्ध काश्तकारों को कानूनी संरक्षण प्रदान करना तथा कब्जे के अन्याय अधिकारों का विस्तृत तथा सुदृढ़ रूप देना।[16] यह एक रोचक तथ्य है कि सरकार द्वारा अपनाए गए काश्तकारी कानून का जी० वी० जोशी, आर० सी० दत्त तथा जस्टिस रानाडे तीनों मुख्य अर्थशास्त्रियों ने

समयन किया तथा काश्तकारी अधिकारो को और अधिक सुदृढ बनाने के पक्ष म प्रवल तक दिए।[17] जोशी ने अधिकारियो मे बबई के नितात असुरक्षित उपकाश्तकारोवाले रयतबाडी इलाके मे भी कानूनी सरक्षण के विस्तार का अनुरोध किया।[18]

यह स्वाभाविक ही था कि समीक्षाधीन अवधि के दौरान जमीदारी प्रणाली के उमूलन की व्यापक माग तो नही की गई परतु यह कम महत्वपूण नही कि यह माग क्यो उठाई गई। इस प्रकार 2 अक्तूबर 1881 के अक मे इडियन स्पेक्टेटर ने सरकार से सारी जमीदारी खरीदने और फिर सीधे किसाना से समझौता करने का अनुरोध किया।[19] 24 जुलाई 1882 के अक म 'सोम प्रकाश' ने सरकार को रूस सरकार के आदश उदाहरण का अनुकरण करन का उपदश दिया और कहा कि सरकार जमीदारी प्रथा समाप्त कर दे। जमीदारा को बीस वर्षों मे होने वाले लाभ के बराबर का धन उसकी जमीन के मूल्य के रूप म देकर उनका स्वामित्व समाप्त कर दिया जाए। यह धन आधा सरकार जुटाए और आधे की व्यवस्था किसान करे।[0] कभी कभी भारतीय नेता माग के प्रति टालमटाल काम लेते थे और जमीदारी प्रणाली को एक सिद्ध तथ्य मानकर जमीदार और पट्टेदार के मध्य स्थाई समझौते की वकालत करते थे।[1]

12 जून, 1880 के अक मे बगाली ने बगाल के स्थाई बदोबस्त की एक और मजेदार आलोचना प्रस्तुत की। बगाली पत्र ने दृढ स्वर मे कहा कि बगाल म औद्योगिक और व्यावसायिक गतिविधियो का नितात अभाव है। जमीदारी ही वहा पूजी के निश्चित लाभप्रद निवेश का एकमात्र अवशिष्ट साधन है। यही कारण है कि पूजी निवेश की प्रवति उद्योग की अपेक्षा जमीदारी की ओर हो रही है। दो वप पश्चात 28 जनवरी 1882 के अक म बगाली ने अपनी आलोचना दोहराते हुए अपना मत प्रकट किया कि जमीदारी पद्धति का प्रवतन बगाल और बबई के औद्योगिक और व्यापारिक स्तर का उल्लेखनीय अतर स्पष्ट करता है।

इसके विपरीत सामाय आधार पर जमीदारा अथवा अय बडे बडे भूखडा के स्वामिया के हिता के भारतीय नताओ द्वारा समथन के उदाहरण बहुत ही कम थे। बगाल मे 'बगाली' ने पटटेदारा के समथन की अपनी पहली नीति स हटते हुए 19 माच 1887 के अक मे सरकार से पूर्वी बगाल मे किसान सगठना का तोडने के उपाय करने का और किसानो को उचित किराया के भुगतान की अनिवायता से परिचित कराने का अनुरोध किया। 20 फरवरी 1899 के अक म अमृत बाजार पत्रिका ने भी दावा किया कि अगरेजी राज्य की अकालो, कृषि सबधित लागा के विप्लवा तथा अनक अयाय बुराइया से सुरक्षा जमीदारो के अधिकारा और सुविधा का बनाए रखने पर ही निभर है न कि उनके विनाश मे। एक वप पश्चात इसी पत्रिका न अपने 12 जनवरी 1900 के अक मे सरकार मे अनुरोध किया कि वह या तो जमीदारा के प्रति अपनी कठोरता की नीति म मृदुता लाए या उहें किसाना से किराया वसूल करने की सुविधाए जुटाए। केसरी ने 18 अक्तूबर 1881 के अक मे शिकायत की कि देश के दूसरे भाग म, बबई के सतारा तथा अय दूसरे जिलो म किसानो म जमीन के निर्धारण लगानो की वसूली करने मे इमामदारो को सफल बनान के लिए अधिकारिया ने उनकी आवश्यक तथा अपेक्षित

सहायता नहीं की।"[3] 27 जुलाई 1890 के अक में 'मराठा' ने विलाप करते हुए लिखा कि देश में जमीदारों और भूस्वामियों की दुदशा के उदाहरण बढ़ते जा रहे हैं। उसने सरकार की क्रमश जमीदारो के अधिकारो के उन्मूलन की प्रवृत्ति की शिकायत की। उसने जमीदारों को और कुछ नहीं तो अपने को जीवित रखने के लिए परस्पर सगठित होने का परामर्श दिया। उसने दक्षिण के जमीदारो को तो विशेष रूप से ही अपना एक सघ बनाने की सलाह दी। 9 दिसबर 1900 के अक में इस पत्र ने सरकार से लगान वसूली में इनामदारों की सहायता करने का अनुरोध किया। यहा इस बात को दोहराना अनुचित न होगा कि जमीदारो की सस्था और उनके अधिकारो की रक्षा की प्रवृत्ति के पीछे यह भावना काम कर रही थी कि दलित भारतीय जनता का सहज नेतत्व यही जमीदार वर्ग ही कर सकता था।[4]

जैसा हम पहले ही निर्देश कर चुके है कि जमीदार और किसान के सबधो पर राष्ट्रवादियो के सामान्य विचार अत्यत मृदु है। वस्तुत राष्ट्रवादी नेताओ ने किसान समथक अथवा जमीदार समथक प्रवृत्ति दिखाने के बजाय कृषि क्षेत्र से सबधित इस पक्ष की ओर विशेष रुचि नहीं दिखाई। सरकार द्वारा 1880 1905 की अवधि मे स्वीकृत काश्तकारी कानून के प्रति उनके दृष्टिकोण के अध्ययन से भी इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है। 1885 के बगाल काश्तकारी कानून को छोडकर इन नेताओ ने किसी भी अन्य काश्तकारी कानून मे कोई गहरी या पर्याप्त रुचि नहीं दिखाई।

1885 का बगाल टेनेंसी ऐक्ट

1793 के स्थाई बदोबस्त ने किसानो को जमीदारो की दया पर ही छोड दिया था। 60 वर्षों से भी ऊपर समय बीत जाने के बाद सरकार का बगाल के किसानो की दुदशा की ओर ध्यान गया। 1859 के लगान के अधिनियम (अधिनियम सख्या 10) के अनुसार 12 वर्षों से ऊपर एक ही भूभाग के पट्टेदार किसानो को मौरूसी हक मिल गया। इसके अतिरिक्त इस अधिनियम मे यह भी व्यवस्था थी कि इसके अतगत निर्धारित विशिष्ट और उचित आधारो को छोडकर अन्य किसी भी रूप मे लगान नहीं बढाया जा सकता था। यह अधिनियम तथा 1869 का सशोधित अधिनियम जमीदारो और किसानो के मध्य पनपते तनाव को दूर न कर सके। जमीदारो ने किसानो को निकालने, लगान मे बराबर परिवतन करते रहने, बलपूर्वक उन्हे तग करने, अवध रूप से उनकी कुर्की करने और उन्हे बेदखल करने आदि गन्दे तरीके जारी रखे। उन्होने किसी न किसी तरीके से किसानो को मौरूसी हक पाने से वचित करने मे तथा लगान बढाने मे सफलता पाने के माग निकाल ही लिए। एक ओर जमीदार पूववत धूतता करते रहे और दूसरी ओर यह शिकायत करते रहे कि 1859 और 1869 के कानूनो के अतगत उनके लिए चालू लगान की वसूली अत्यत कठिन हो गई है यहा तक कि सवथा उपयुक्त कारणो से भी लगान मे वृद्धि तो लगभग असभव हो ही गई है।[6] फलत 1872 76 में बगाल मे कृषको और जमीदारो के बीच अनेक सघर्ष हुए और जमीदार विरोधी विप्लव हुए। ऐसा लगने लगा कि स्थिति किसी समय भी नियत्रण से बाहर हो सकती है।[27] बिहार मे

विरोधी थे जिसमें किसानों को मौरूसी हक देने की तथा धरती को हस्तांतरित करने की शक्ति प्रदान करने की व्यवस्था हो और लगान बढ़ाने तथा किसानों को बेदखल करने के अधिकारों पर नियंत्रण की व्यवस्था हो। उनका दावा था कि इस प्रकार का कोई कानून बनाना उनके स्वत्वाधिकारों पर छापा मारना, उनके यश सम्मान और निहित अधिकारों को धूमिल करना तथा 1793 की संधि का उल्लंघन करना होगा। उनकी यह भी धारणा थी कि अधिकारियों द्वारा विचारित कानून का रूप स्वयं किसानों के लिए हानिप्रद सिद्ध होगा क्योंकि इसका परिणाम निरर्थक मुकद्दमेबाजी तथा उप-पट्टेदारी होगा।

दूसरी ओर इंडियन एसोसिएशन, बंगाल के युवा राष्ट्रवादियों के उदीयमान नेता सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने तथा बंगाल के बहुसंख्यक राष्ट्रवादी समाचारपत्रों ने किसानों के समर्थन का पक्ष लिया। उन्होंने किसानों और जमींदारों के मध्य के झगड़ों में सरकार के हस्तक्षेप करने के अधिकार को न्यायोचित ठहराया। किसानों के पक्ष में इस प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता को स्वीकार किया तथा यह मानते हुए भी कि ये बिल किसानों की रक्षा की दृष्टि से अधिक सार्थक नहीं हैं, 1880-1883 की अवधि में पेश किए गए सभी काश्तकारी बिलों के प्रारूपों का सामान्य स्वीकृति दी और इन बिलों के विरुद्ध जमींदारों द्वारा किए जा रहे मुकदमों का विरोध किया।[33] बंगाल के राष्ट्रवादी नेताओं का अपेक्षाकृत अधिक युवा और अधिक प्रगतिशील वर्ग तो सरकारी कानूनों के प्रति कोरे समर्थन को प्रकट करने से आगे बढ़ गया। उनमें से बहुतों ने बड़ी ही प्रबलता के साथ किसानों के उद्देश्य का अनुमोदन किया और बंगाल के शिक्षित लोगों, राजनीतिक संस्थाओं और नेताओं से किसानों के हितों को वाणी देने तथा जमींदारों द्वारा संचालित प्रतिक्रियावादी आंदोलन का विरोध करने का अनुरोध किया। उदाहरणार्थ, 18 सितंबर 1880 के अंक में बंगाली ने लिखा

> हमारे अपने संगठन हैं जो इस देश के लाचार किसानों के हितों की रक्षा तथा सुरक्षा का दम भरते हैं। हम तो समझ ही नहीं पाते कि आज के महान देशभक्तों के व्यापार तथा कर्तव्य पालन का अपेक्षाकृत कोई और श्रेष्ठ अवसर अगर ऐसा मौका कभी आएगा भी कि नहीं। सचमुच ही समय आ गया है कि ये संगठन अपनी उपयोगिता का प्रमाण दें तथा अपने अस्तित्व का औचित्य सिद्ध करें। बंगाल की ग्रामीण कृषक जनता देश के लाखों निरीह लोग इतना भी तो नहीं जानते कि उनके चारों ओर हो क्या रहा है। यह उनके मित्रों का काम है कि वे उनकी भावनाओं को अभिव्यक्ति दें, उनकी अगुआई करें तथा उनकी ओर से काम करें। आडंबर और घोष प्रदर्शन का समय अब बीत चुका है। अब तो ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता है जो हृदय से उत्साही हों, किसानों के प्रति गहरी सहानुभूति रखते हों और उनके भाग्य को सुधारने को उत्सुक हों। ऐसे व्यक्ति एक जिले से दूसरे जिले में जाएं। किसान के समर्थन में जनसभाएं करें और उन्हें उनके अधिकारों का अहसास करवाएं। प्रभावशाली मेंढीसोसायटी जिम्मेदार किसान की रक्षा करे। इस प्रकार इस देश की रक्षा ही करना है।[34]

जाने वाले लगान की राशि का उसकी कुल उपज के 5/16 भाग से अधिक का न होना। (4) गैरमौरूसी किसान के जोत मे हटाए जाने पर उसे मुआवजे का हक होना, तथा (5) लगान के मुकदमे की सरल और संक्षिप्त सुनवाई के साथ उनके शीघ्र निपटार की व्यवस्था के रूप मे जमीदारो की प्रमुख शिकायत को दूर करना। इसके अतिरिक्त अदालत के माध्यम से फसल की बिक्री और कुर्की की व्यवस्था की गई। इन सभी महत्वपूर्ण धाराओ के लागू होने की निश्चितता के लिए दीवानी अदालतो के तथा कार्यकारी अधिकरण के हस्तक्षेप की भी इस बिल मे व्यवस्था थी।[3]

1883 के काश्तकारी बिल पर जमीदारो ने तीखे प्रहार किए। इस प्रहार से घबराकर सरकार ने जमीदारो को शात और संतुष्ट करने वाले परिवर्तनो के सुझाव के लिए प्रवर समिति नियुक्त की। इस समिति मे जमीदारो के दो महत्वपूर्ण प्रवक्ता क्रिस्तोदास पाल (उनकी मृत्यु के बाद उनके स्थान पर प्यारेमोहन मुखर्जी को रखा गया) तथा महाराजा दरभगा सम्मिलित थे।[33] इस समिति ने बिल का इस रूप मे संशोधन किया कि उसका कृषक समर्थक आधार ही नामशेष हो गया। संशोधित बिल ने मार्च 1885 मे कानून का रूप ले लिया। 1885 के काश्तकारी कानून मे मौरूसी हक की प्राप्ति को संकुचित बना दिया गया। अब इस अधिकार को केवल उसी गाव मे धरती जोतने तक सीमित कर दिया गया। पहले के 1883 के बिल म निहित 'उसी जागीर में' धारा को छोड दिया गया। 1883 के ही बिल द्वारा किसान को हस्तातरण करने की दी गई पूर्ण शक्ति को भी इस बिल ने छीन लिया। मौरूसी और गैरमौरूसी किसानो पर लगान बढाने की सीमाए भी हटा दी गई। गैरमौरूसी किसानो को बेदखल करने पर क्षतिपूर्ति की व्यवस्था वाली धारा को भी इस बिल से हटा दिया गया। इस प्रकार 1883 के बिल की किसानो का लाभ पहुचाने की संभावनावाली तीनो धाराओ को तो छोड ही दिया गया और मौरूसी अधिकार प्राप्ति से संबंधित धारा को हलका बना दिया गया। विरोधी दिशा म बिल का एकमात्र संशोधन इस रूप मे था कि मौरूसी हक वाले किसान के लगान की वृद्धि का घटा दिया गया था। यह वृद्धि कचहरी के बाहर आपसी अनुबंध द्वारा 6 आने प्रति रुपये के बदले दो आने प्रति रुपया कर दी गई थी। 1885 का काश्तकारी अधिनियम मौरूसी किसानो के अधीनस्थ मुजारो को कोई संरक्षण नही दे सका था।[34] अधिनियम के प्रशसको का दावा था कि यद्यपि इसम जमीदारो को सुविधाए जुटाने की व्यवस्था है तथापि जिस ढग से अधिनियम का अतिम रूप म निर्धारित किया गया है, उसम किसान के अधिकार को, अधिकृत भूमि पर उसके स्वामित्व को, एकपक्षीय स्वत्वापहरण के विरुद्ध उसके हितो की सुरक्षा को वास्तविक रूप म सुदृढता प्रदान की गई है।[35] उनकी राय म इस अधिनियम की निर्दोषता का सर्वोत्तम प्रमाण सैद्धातिक रूप से इससे संबद्ध सभी प्रमुख वर्गों द्वारा शातिपूर्वक इसकी स्वीकृति थी।[36] दूसरो के विचार म 1883 म फ्लारेंस नाइटिंगेल द्वारा अभिव्यक्त भय, कि जमीदार अपने वर्ग को सुविधाए पहुचाने वाले बिल पास करा लेंगे और किसानो का मिलने वाली सुविधाए छीन ली जाएगी,[37] सत्य सिद्ध हुआ है।[38]

जगी आशा की जाती थी जमींदार किसी भी ऐसे काश्तकारी कानून के पूर्णत

वस्तुत बगाली ने तो 3 जनवरी 1880 के अक मे किसानो का एक अग होने का दावा किया। इडियन एसोसिएशन ने आगे बढकर किसानो की आवश्यकताओ और शिकायतो के प्रवक्ता के रूप मे काय करने के पवित्र कतव्य के निर्वाह की प्रतिज्ञा की।[41] इडियन एसोसिएशन तथा अन्य कतिपय महानुभावो, द्वारिकानाथ गागुली, कृष्णकुमार मित्र और रगलाल मुखर्जी आदि ने व्यक्तिगत रूप से किसानो को अपनी मागो के लिए अपने आप आदोलन करने के लिए सगठित करने का बीडा उठाया। सगठन के अधिकारी तथा अन्य किसानो से सहानुभूति रखने वाले बगाल के ग्रामीण क्षेत्रो मे गए और उन्होने 1880, 1881 और 1885 मे असख्य किसान प्रदर्शनो तथा किसान जनसभाओ का आयोजन किया। कुछ सभाओ म तो दस से बीस हजार तक किसान सम्मिलित हुए और इन सभाओ मे सुरेंद्रनाथ बनर्जी, आनदमोहन बोस तथा द्वारिकानाथ गागुली जैसे वक्ताओ ने भाषण दिए।[42] अनेक स्थानो पर लगान सघो तथा किसान सघो की स्थापना की गई।[43] वस्तुत इडियन एसोसिएशन ने इन सघो का उपयोग देहातो म अपनी शाखाओ के जाल बिछाने और राजनीतिक गतिविधि का विस्तार करने के लिए ही किया।[44]

1883 के बगाल टनेंसी बिल को देश के अन्य भागो के गण्यमान्य नेताओ का भी समथन प्राप्त हुआ। विशेषत बाल गगाधर तिलक अथवा जी० जी० आगरकर द्वारा बिल के समथन म लिखित तथा 1883 मे मराठा मे प्रकाशित सपादकीय लेख सचमुच विस्तृत रूप से उद्धत करने योग्य है क्योकि इनसे राष्ट्रीय नेताओ के उच्च पदाधिकारियो के कृषि सबधी क्रातिकारी दृष्टिकोण के प्रारभिक लक्षण देखने को मिलते है। 14 अक्तूबर 1883 के अक के सपादकीय न गहरी राजनीतिक दूरदर्शिता तथा मानवता के प्रति छलकते प्रेम के महान साधन के रूप म बिल की प्रशसा करते हुए घोषित किया कि भौतिक सुख सुविधाओ के समान वितरण का यह एक छोटा सा प्रारभ है जो प्रगतिशील ससार मे एक न एक दिन अवश्य पूरा होगा। सरकार से अपने न्यायसगत काय पर सुदृढ बने रहने का अनुरोध करते हुए सपादकीय न सलाह दी कि इस श्रेष्ठ काय के विरुद्ध निहित स्वार्थी वग चिल्लाएगे परतु दूरदर्शितापूण राजनीतिज्ञता इसी म है कि शक्ति, सपत्ति और सरक्षकता के हाथ स जाने वाले लोगो द्वारा अपनाए गए धमकी भरे व्यवहार की उपेक्षा की जाए, उनके आगे झुका न जाए। सपादकीय मे यह निर्देश किया गया कि यदि जमीदारो के पास सृष्टि के प्रारभ काल म स्वत्वाधिकार होते तो भी समय की गति के साथ उनमे सशोधन करना ही पडता। इसके अतिरिक्त सरकार जमीदारो के निहित हितो को बनाए रखने के लिए तब तक बाध्य है जब तक वे लोकहित के माग मे आडे नही आते। जब समाज कल्याण के लिए खतरा उपस्थित होता इन अधिकारों म सशोधन एक तकाजा बन जाता है। जब उपयुक्त समय आ जाए, परिस्थितिया अनुकूल हो तब परिवतन तो समाज म अपना माग आप ही बनाएगा तथा समाज पर अपने को बलपूवक ही थोपेगा, भले ही समाज के कुछ सदस्य उसे न चाहे। जमीदारो द्वारा उठाई गई आपत्तियो का उत्तर मराठा न 21 अक्तूबर 1883 के अक के सपादकीय म दिया। जमीदारो की इस धारणा का कि काश्तकारी कानून के लिए अभी उपयुक्त समय नहीं आया है, उत्तर देते हुए सपादकीय ने टिप्पणी की कि प्रत्यक्ष और तात्कालिक क्षतिग्रस्त व्यक्ति कभी

यह स्वीकार नहीं करेंगे कि उनके अधिकारो को छीनने का उपयुक्त समय आया है अथवा कभी आएगा। सारे विश्व म खेतिहरो के दुर्भाग्य पर रुदन करते हुए संपादकीय में लेखक ने लिखा

> प्रमुख कारण कुछ भी हो, चाहे खेत म वरीयता हो अथवा [illegible] हो, इसने समाज के एक वग पर कमरतोड कठोर श्रम और दास [illegible] दी है तथा दूसरे वग को पूण आराम तथा शारीरिक श्रम से मुक्ति का वरदान दे दि[illegible] है परंतु अब यह पूण रूप से नितात स्पष्ट हो गया है कि आधुनि[illegible] पनपती भावना इन दोनो वर्गों के मध्य असमान और [illegible] संबंधो को [illegible] समय तक बने नही रहने देगी। समाज की पुनर्व्यवस्था के दिन [illegible] निश्चित है। अच्छा हो कि हम बुडबुडाने अथवा शिकायत [illegible] उस दिन के स्वागत के लिए ही अपने आप को तैयार कर [illegible]।

लेखक ने घोषणा की कि यदि उस पर छोड दिया जाए तो वह [illegible] प्रस्तुत कर सकता है जिसके अनुसार जमीदार [illegible] हो जाएगे। 18 नवबर 1883 के अक म 'मराठा' [illegible] अपनाया और घोषणा की कि [illegible] यह है कि क्या हम सुस्त, आलसी और [illegible] हैं जो दूसर आदमियो के श्रम के [illegible] पर गुलछर्रे उडाए परन्तु इस बात की [illegible] पर वह पलता है, सर्दी मे ठिठुर कर [illegible] वरी 1884 के अक मे इसने जमीदारों [illegible] पसा है और उस पैसे के फलस्वरूप [illegible] और किसान निस्सदेह निधन, दुखी और [illegible] बना रहेगा यदि जमीदार समय पर [illegible] भटका उन्हें अवश्य [illegible] देगा।[35] 'इडियन स्पेक्टेटर' [illegible] 1883 [illegible]

1881 और 1883 के काश्तकारी बिलो का विरोध किया। कई मामलो मे यह विरोध खुले तौर पर ही किया गया।[51] 'अमत बाजार पत्रिका' और उसके बगाली प्रतिरूप आनद बाजार पत्रिका' न सामान्यतया विरोधी दृष्टिकोण अपनाया परतु उनके विरोध के आधार भिन्न थे। उन्होंने पितृवादी तक प्रस्तुत किया जो परिणाम म जमीदारो के पक्ष मे जाता था। उदाहरणार्थ उनका एक तर्क था कि किसी प्रकार के कानूनी हस्तक्षेप से जमीदारो और किसानो के मध्य मैत्री और सौहार्द के सबधो को धक्का पहुचेगा। 'अमत बाजार पत्रिका' न अपन 8 जनवरी 1885 के अक मे बडे सकोच और हिचकिचाहट के साथ इस तक को इस प्रकार प्रस्तुत किया

जमीदार और किसान से सबधित विषय पर हमारा सिद्धात पक्ष यह है कि किसानो के जोत सबधी अधिकारो की स्पष्ट और सतोषप्रद परिभाषागत व्याख्या की जानी चाहिए ताकि उन्हे छीना झपटी के प्रयासो के विरुद्ध बचाया जा सके परतु इसके साथ ही दोनो को परस्पर सामाजिक सद्भाव और सहानुभूति से बाधने वाले तथा समय की कसौटी पर खरे सिद्ध हुए बधनो को निममतापूवक टूटने नही दना चाहिए। सक्षेप मे जमीदारो को इस स्थिति म रखा जाए कि वे किसानो सता न सकें परतु इसके साथ ही किसानो को भी जमीदारो को नकारने के लिए और सामाजिक परपराओ मे उनके महत्व को अस्वीकार करने के लिए प्रोत्साहित नही करना चाहिए। जमीदार अपना हित किसान से स्नेह करने मे और किसान अपना हित जमीदार का आदर करन मे अनुभव करें।[52]

कभी कभी तो उन्होने यह अनुभव किया कि बगाल के जमीदारो पर प्रहार एक प्रकार स देश म एकमात्र अवशिष्ट सपन्न और नतृत्व प्रदान करने वाले वग पर ही आक्रमण था।[53] परतु उनके विरोध का प्रमुख आधार उनका यह विश्वास था कि प्रस्तावित उपायो म जमीदार और किसान के बीच के बिचौलिया, मध्यवर्ती किसान तथा मालिक, के हितो की पूण रूप से उपेक्षा की गई थी।[54]

यहा यह भी उल्लेखनीय है कि जब जमीदारो न अलबट बिल के विरुद्ध विपला आदोलन चलाने वाले बगाल के अगरेजो से अपने पक्ष मे समथन की माग की तो अमृत बाजार पत्रिका तक ने तथा अन्य जमीदार समथक राष्ट्रवादी पत्रो ने जमीदार विरोधी पत्रो का साथ दिया और जमीदारो की इस कायवाही की निंदा करते हुए उसे देश के प्रति विश्वासघात, वचन भग तुच्छापन तथा निलज्ज व्यवहार बताया।[55]

राष्ट्रवादी समाचारपत्रो और तत्कालीन नेताओं द्वारा प्रस्तावित काश्तकारी बिल के पक्ष अथवा विपक्ष म प्रस्तुत तर्कों की भिन्नता का आधार उनकी सहानुभूति के पात्र जमीदार, बिचौलिया अथवा किसान की भिन्नता थी।

जमीदार समथक राष्ट्रवादी समाचारपत्रो न मौरूसी अधिकारो क विस्तार सबधी व्यवस्था[56] का मौरूसी हक के हस्तातरण की व्यवस्था का[57] लगान की वद्धि पर प्रतिबध लगान की व्यवस्था का[58] तथा गरमौरूसी किसानो को बेदखल करन पर उन्हे क्षतिपूर्ति देने की व्यवस्था[59] का विरोध किया। उन्होने माग की कि यदि लगान पर सीमा ही लगानी है तो उसकी अपेक्षाकृत अधिकतम ऊंची सीमा निर्धारित करनी चाहिए।[60]

1881 और 1883 के काश्तकारी बिलो का विरोध किया। कई मामलो मे यह विरोध खुले तौर पर ही किया गया।[51] 'अमत बाजार पत्रिका' और उसके बगाली प्रतिरूप आनद बाजार पत्रिका' ने सामान्यतया विरोधी दृष्टिकोण अपनाया परतु उनके विरोध के आधार भिन्न थे। उन्होंने पितवादी तक प्रस्तुत किया जो परिणाम म जमीदारो के पक्ष मे जाता था। उदाहरणाथ उनका एक तक था कि किसी प्रकार के कानूनी हस्तक्षेप से जमीदारो और किसानो के मध्य मैत्री और सौहाद के सबधो को धक्का पहुचेगा। 'अमत बाजार पत्रिका' ने अपने 8 जनवरी 1885 के अक मे बडे सकोच और हिचकिचाहट के साथ इस तक को इस प्रकार प्रस्तुत किया

> जमीदार और किसान से सबधित विषय पर हमारा सिद्धात पक्ष यह है कि किसानो के जोत सबधी अधिकारो की स्पष्ट और सतोषप्रद परिभाषागत व्याख्या की जानी चाहिए ताकि उन्हे छीना झपटी के प्रयासो के विरुद्ध बचाया जा सके परतु इसके साथ ही दोनो को परस्पर सामाजिक सदभाव और सहानुभूति से बाधने वाले तथा समय की कसौटी पर खरे सिद्ध हुए बधनो को निममतापूवक टूटने नही देना चाहिए। सक्षप मे जमीदारो को इस स्थिति मे रखा जाए कि व किसानो सता न सकें परतु इसके साथ ही किसानो को भी जमीदारो को नकारने के लिए और सामाजिक परपराओ म उनके महत्व को अस्वीकार करने के लिए प्रोत्साहित नही करना चाहिए। जमीदार अपना हित किसान से स्नेह करने मे और किसान अपना हित जमीदार का आदर करने म अनुभव करें।[52]

कभी कभी तो उन्होने यह अनुभव किया कि बगाल के जमीदारो पर प्रहार एक प्रकार से देश म एकमात्र अवशिष्ट सपन्न और नेतत्व प्रदान करने वाले वग पर ही आक्रमण था।[53] परतु उनके विरोध का प्रमुख आधार उनका यह विश्वास था कि प्रस्तावित उपायो म जमीदार और किसान के बीच के बिचौलिया, मध्यवर्ती किसान तथा मालिक, के हितो की पूण रूप से उपेक्षा की गई थी।[54]

यहा यह भी उल्लेखनीय है कि जब जमीदारो ने अलबट बिल के विरुद्ध विषैला आदोलन चलाने वाले बगाल के अगरेजो से अपने पक्ष मे समथन की माग की तो अमृत बाजार पत्रिका तक ने तथा अन्य जमीदार समथक राष्ट्रवादी पत्रो ने जमीदार विरोधी पत्रो का साथ दिया और जमीदारो की इस कायवाही की निंदा करते हुए उसे देश के प्रति विश्वासघात, वचन भग, टुच्चापन तथा निलज्ज व्यवहार बताया।[55]

राष्ट्रवादी समाचारपत्रो और तत्कालीन नेताओं द्वारा प्रस्तावित काश्तकारी बिल के पक्ष अथवा विपक्ष म प्रस्तुत तर्कों की भिन्नता का आधार उनकी सहानुभूति के पात्र जमीदार, बिचौलिया अथवा किसान की भिन्नता थी।

जमीदार समथक राष्ट्रवादी समाचारपत्रो ने मौरूसी अधिकारो के विस्तार सबधी व्यवस्था[56] का मौरूसी हक के हस्तातरण की व्यवस्था का[57] लगान की वद्धि पर प्रतिबध लगाने की व्यवस्था का[58] तथा गैरमौरूसी किसानो को बेदखल करने पर उन्हे क्षतिपूर्ति देने की व्यवस्था[59] का विरोध किया। उन्होने माग की कि यदि लगान पर सीमा ही लगानी है तो उसकी अपक्षाकृत अधिकतम ऊची सीमा निर्धारित करनी चाहिए।[60]

राष्ट्रवादी समाचारपत्रो के एक समूह ने सोच समझकर ही तालुकेदार
जसे बिचौलिया के हितो की वकालत की। उदाहरणार्थ, 'अमृत बाजार पत्रिका
आम विचौलियो के हितो का समथन किया तथा उन्ह बगाली समाज का आध
भविष्य बताया।[60] आनद बाजार पत्रिका का तक था कि सरकार जो प्र
अधिकार सभी किसानो को देना चाहती है, यदि वे अधिकार बिचौलियो को दि
तो उनका अधिक अच्छा उपयोग हो सकता है क्योकि य बिचौलिय पटटेदार उल
रूप से उन सभी दोषो से मुक्त है जो किसानो और जमीदारो मे प्राय पाए जात
लोग जमीदारो से अपेक्षाकृत अच्छे हैं और वे जमीदारो और किसानो की अपेक्ष
म प्रत्यक्ष और गहरी रुचि लेते हैं। ये एक साधारण किसान की अपक्षा अधिक
और सुशिक्षित हैं अत भूमि सुधार और वैज्ञानिक साधनो के उपयोग म अधिक सक्ष
साथ ही, ये लोग जमीदारो के दमन को रोकने म भी पर्याप्त समथ और शक्ति सप
इसके अतिरिक्त ये किसानो से अपना प्रत्यक्ष सबध भी बनाए रखते है। इन्हे
के साथ सबध के लिए चपरासियो, नायबो और दिवानो आदि के माध्यम की आव
नही होती।[61] जब एक बार इस समाचारपत्र को यह विश्वास हो गया कि यह वि
बिचौलिये पट्टेदारो के विरुद्ध जाता है तो उसने 1883 के काश्तकारी बिल का
किया।[6] इस पत्र ने यह भी देखा कि ये विचौलिये सामाजिक और राजनीतिक
बगाल के एक महत्वपूण वग से सबधित थे। बहुत से मध्यवर्गीय बगाली, छात्र,
क्लक, डाक तथा पुलिस अधिकारी, इसी बिचौलिय वग से सबध रखत थे और
स्वशासन के आदोलन का आधार था।[63] बगाली ने 17 मार्च 1883 के अक म
समाज की रीढ की हडडी बने इन बिचौलियो के हितो की सुरक्षा करन और उ
बनाने का समथन किया। इस पत्र ने इस समथन के साथ यह भी सकेत किया
माय काश्तकारी बिल द्वारा पहले ही किया जा चुका है। बगवासी, नवविभाकर,
मिहिर, तथा साधारणी आदि ने भी बिचौलियो को अधिकार देन के पक्ष का
किया।[63]

किसानो के पक्ष के समथक भारतीय नेताओ ने काश्तकारी बिल की काश्तक
अधिकारो को विस्तत करने वाली धाराओ का अनुमोदन किया, इन अधिकारो क
सुदढ बनाने की वकालत की तथा किसानो के हित के विरोधी दिखाई देने वाले तत
आलोचना की। प्रथम, उन्होने व्यापक और स्थाई आधार पर मौरूसी हक देने वाली
स्थाओ का अनुमोदन किया।[65] उन्होने इस दिशा मे और अधिक बडी सुविधाओ की
की।[66] द्वितीय, उन्होने मौरूसी हक को हस्तातरित किया जा सकने वाला बनाने तथ
उत्तराधिकार का रूप देने का पूरा पूरा समथन किया।[67] तृतीय उन्होने जमीदार के
बढाने के अधिकार पर प्रस्तावित प्रतिबध का स्वागत किया।[68] कइयो का तो विचा
कि प्रतिबध वाछनीय रूप मे नही हैं और अधिकतम निर्धारित सीमा भी बहुत ऊची
कुछ ने माग की कि जब भूमि के सुधार मे जमीदार का कोई योगदान ही नहीं
उसे लगान बढाने की अनुमति क्यो दी जाए।[70] कुछ ने तो जमीदार और किसा
मध्य स्थाई रूप से लगान के निर्धारण की माग की।[71] चतुर्थ, गरमौरूसी हकवाल कि

को जमीदारो द्वारा बेदखल करने पर किसानो को जमीदारो द्वारा क्षतिपूर्ति की प्रस्तावित व्यवस्था का भी उन नेताओ ने अनुमोदन किया।[7] कुछ नेताओ ने यह प्रस्ताव किया कि जमीनो के लगान और इसकी वद्धि के सबध मे मौरूसी और गैरमौरूसी हकवाले किसाना मे किसी प्रकार का भेदभाव नही करना चाहिए।[73] पचम, किसानो से लगान के आसान तरीका मे वसूली की सुविधाए जमीदारा को प्रदान की जानी चाहिए।[74] जमीदारो को फसल की कुर्की का अधिकार दिए रखने का यह अभिप्राय होगा कि वे किसाना का दमन करते रहगे।[75]

राष्ट्रवादी नेताओ के इस वग न 1883 के टेनेंसी बिल के एक विशिष्ट पक्ष के प्रति कि इससे उपकाश्तकारी के प्रसार के निवारण मे कोई सहायता नही मिलती है तथा इससे मौरूसी हक प्राप्त किसानो के अधीनस्थ काश्तकारा के हिता की सुरक्षा नही मिलती है, ऐसा तीखा आलोचनात्मक और लगभग आधुनिक दष्टिकोण अपनाया कि बगाल के ग्रामा मे कालातर मे घटित घटनाओ के सदभ मे इस आलोचना को एक अतिरिक्त ऐतिहासिक महत्व प्राप्त हो गया है।[6] अत उसकी हम थोडी सी विस्तत चर्चा नीचे प्रस्तुत कर रहे ह

इन नेताओ ने निर्देश किया कि 1883 के बिल के विभिन्न प्रावधाना, मौरूसी हक को व्यापक बनाने, *मौरूसी हक को हस्तातरण का विषय बनाने तथा किसान को जमीन* को आगे लगान पर देने का अधिकार देने का परिणाम यह निकलेगा कि *बिचौलिया* वग बडे पमाने पर उभर कर अस्तित्व मे आ जाएगा जा जमीदार की अपेक्षा किसाना का अधिक दमन करे और उनमे बहुत ऊचे लगान वसूल करे। इस प्रकार असली धरती जातने वाला की बहुत बडी सख्या तो अधिकारहीन और सवथा असहाय तथा अधीनस्थ किसान बनकर रह जाएगी।[77] इस सबका कारण उनके विचार म यह था कि इस बिल मे न तो धरती के असली जोतने वालो के समुचित सरक्षण की कोई *व्यवस्था थी* और न ही 'किसान' शब्द का उपयुक्त विश्लेषण किया गया था। अत उनकी *माग थी कि* इस नए वग के विकास को अवश्यमेव रोका चाहिए। परतु यह काय कैसे हो ? इस सदम मे *यह उल्लेखनीय है कि जमीदार मौरूसी हक के हस्तातरण* के विरुद्ध इस आधार पर थे कि उनके अनुसार इसको परिणामस्वरूप जमीन सूदखोर बिचौलिया के हाथा म पड जाएगी। नेताओ के जिस वग के विचारो का हम यहा विश्लेषण कर रहे हैं *वह बिचौलिया* के विरुद्ध इसलिए था कि यह वग जमीदारो के नही प्रत्युत किसाना के हितो के प्रतिकूल था। अत उन्होने जमीदारा द्वारा अपनाई गई स्थिति का मानने से इनकार कर दिया और इसके विपरीत मौरूसी हक के हस्तातरण का इस आधार पर समथन किया कि इससे किसाना को सहायता मिलगी। इसके साथ ही इसके परिणामस्वरूप बिचौलिया के विकास की सभावना को निमूल *करने तथा उपकाश्तकारी का निरुत्साहित करने* के लिए उन्होने कुछ अन्य उपचार भी सुझाए जो किसाना के अनुकूल और जमीदारा, बिचौलिया तथा सूदखोरो के प्रतिकूल थ। सवाधिक व्यापक लोकप्रिय उपचार था कि मौरूसी हक असली खेत जातन वाल को मिलना चाहिए। नाम के लिए जमीन के स्वामी नही। इसके साथ ही उनका कथन था कि जब कभी जितने समय के लिए मौरूसी

हक प्राप्त किसान अपनी मारी धरती को अथवा उसके कुछ भाग को लगान पर चढाता है, *उतनी अवधि के लिए उसे अपने मौरूसी हक से वचित कर देना चाहिए और उसके* बदले असली जोतने वाले उपकाश्तकार को ही यह अधिकार मिल जाना चाहिए।[78] 10 नवबर 1883 के अक म सजीवनी ने और 12 नवबर 1883 के अक मे नवविभाकर ने उपकाश्तकारी पर कानूनी प्रतिबध लगाने की माग की।[79] नवविभाकर ने बडी ही बुद्धिमत्तापूवक स्वय हल जोतनेवाले किसान की परिभाषा निम्नलिखित रूप मे की, *'क्या यह कानून बनाना ठीक नही होगा कि जो स्वय अपने हाथो अथवा नौकरो के माध्यम से हल नही जोतता, जोत के हानि-लाभो का प्रत्यक्ष रूप से भागीदार नही बनता, किसान कहलाने का हकदार नही है और इसके फलस्वरूप ऐसा व्यक्ति मौरूसी हक प्राप्त नही कर सकता।'* 13 माच 1883 के अक मे 'बगाली' ने जमीन की जोतो की सीमा निधारित करने वाले आज के प्रस्ताव के महत्व का पूर्वाभास करते हुए सिफारिश की कि किसी भी काश्तकार को समुचित और नियमित रूप से जोतने के लिए अपेक्षित साधनो की उपलब्ध पर्याप्तता से अधिक धरती रखने की अनुमति नही देनी चाहिए। अतिम कुछ कृषक समथक समाचारपत्रो न प्रस्ताव रखा कि मौरूसी हकदार किसान द्वारा और गैरमौरूसी हकदार किसान द्वारा चुकाए जाने वाले लगान का अतर इतना थोडा हो कि कोई भी मौरूसी हकदार किसान अपनी धरती को किराए, पट्टे पर देने मे किसी प्रकार के लाभ की प्राप्ति की सभावना ही न देखे।[80]

1884 की प्रवर समिति और भारत सरकार द्वारा 1883 के काश्तकारी बिल के तीन प्रमुख सिद्धातो, पट्टे की स्थिरता, न्यायसगत लगान तथा स्वतत्र रूप मे बिक्री का अधिकार म कतरब्योंत किए जाते ही किसानसमथक राष्ट्रवादी नेताओ न इन परिवतनो के विरुद्ध रोषपूर्ण आदोलन शुरू कर दिया। उन्होने किसानो के हितो के साथ विश्वासघात करने के लिए और जमीदारो के हितो के अनुरूप बिल मे सशोधन करने के लिए विशेषत मौरूसी हक प्राप्त करने सबधी, हस्तातरण करने सबधी धाराओ को पानी मे डालने तथा लगान वृद्धि को सीमित करने वाली और बेदखली की हालत म क्षतिपूर्ति करने वाली व्यवस्थाओ को छोडने के लिए सरकार की आलोचना की।[81] कुछ लोगो का विरोध तो इस सीमा तक पहुच गया कि वे सशोधित बिल को स्थगित करने की ही माग करने लगे क्योकि उनका विचार था कि किसानो के दृष्टिकोण से यह बिल न केवल असतोषजनक प्रत्युत उनके हितो के प्रतिकूल भी था।[82] अत म किसानो के पक्षधर जो इस बिल के आलोचक थे, केवल इसी विश्वास से इसका समथन करने लगे कि कुछ भी न होने से तो कुछ होना अच्छा है।[83] इसके अतिरिक्त बहुतो ने यह अवश्य अनुभव किया होगा जैसा 'साधारणी' ने अपने 5 जुलाई 1885 के अक म लिखा 'यद्यपि काश्तकारी अधिनियम सतोषप्रद नही है तथापि इसके अतर्गत प्रमुख सिद्धात कृषको के अनुकूल हैं अत यह अधिनियम इस रूप म किसानो के अन्याय हितो तथा अधिकारो के आदोलन के लिए आधारशिला का काय करेगा।[84] यहा यह उल्लेखनीय है जो सभवत आश्चयजनक ही है कि वस्तुत हमारे अध्ययन के अतगत अवधि से सबधित 1885 के परवर्ती बीस वर्षों की अवधि में बगाल मे इस सबध म कोई आदोलन नही हुआ। साथ ही यह निष्कष

निकालना भी बिलकुल सही होगा कि भारत सरकार बगाल और विहार के जमीदारो के आगे उनके द्वारा डाले गए दबाव के कारण झुकी न कि इस कारण कि किसानो के पक्ष मे अपेक्षित समथन तथा बगाल के उभरते बहुसंख्यक राष्ट्रवादी नेताओं के विरोध का अभाव था। वस्तुत राष्ट्रवादियो का एक वर्ग सरकारी अधिकारियो की अपेक्षा अधिक प्रगतिशील और अधिक दूरदर्शी था। जब बहुत सारे सरकारी अधिकारी उपकाश्तकारी को देहाती बेरोजगारों का एक सुरक्षित सहारा अथवा अधिक से अधिक एक अपरिहाय रोग मानते थे, इन नेताओ ने उपकाश्तकारी को रोकने के लिए और मजदूर किसानो के हितो की सुरक्षा के लिए आदोलन किया।[85]

पट्टेदारी सबधी कानून, 1880 1905

1881 के उत्तर-पश्चिमी प्रातीय लगान अधिनियम (नार्थ-वेस्टन प्राविसज रेंट ऐक्ट) पर राष्ट्रवादियो की कोई भी टिप्पणी उपलब्ध नही।[86] 'जरनल आफ दि पूना सावजनिक सभा' मे अप्रैल 1881 मे बिना नाम स प्रकाशित एक लेख मे 1883 मे कानून का रूप ग्रहण करने वाले मध्य प्रदेशीय प्राता के काश्तकारी बिल की तीखी आलोचना की गई।[87] लेखक ने बिल की उन व्यवस्थाओ पर आपत्ति की जिनके अतगत मालगुजारो के लगान बढाने की शक्तियो को सीमित किया गया था, विशेषत सरकार अपने राजस्व की मागो पर इस प्रकार की कोई सीमा लगान के पक्ष मे नही थी लगान वसूली मे किसानो को कष्ट देने पर तथा उन्हे बेदखल करने पर प्रतिबंध लगाया गया था। लेखक ने उन व्यवस्थाओ की भी निंदा की जिनका सबध गरमौरूसी किसान को बेदखल करने पर भूमिसुधार की क्षतिपूर्ति करना था तथा मौरूसी हको को व्यापक रूप देना था।[88] लेखक ने सैद्धांतिक रूप मे यह मान लिया था कि जमीदारो और किसानो के सबध किसी बाहरी एजेंसी द्वारा नियमित नही किए जा सकते, इन्हे तो किसी प्रतियोगिता पर छोड देना पड़ेगा।[89] 'वायसुधा' ने भी जमींदारो के दृष्टिकोण से सट्रल प्राविसज टेनेंसी बिल की आलोचना की।[90] दूसरी और बगाली ने बिल का समथन तो किया परन्तु यह अनुभव किया कि किसानो के हितो की सुरक्षा की दिशा म बिल पर्याप्त नही है।[91] जब सरकार ने बाद म 1883 के सी० पी० टनेंसी ऐक्ट को थोडा और अधिक किसानो के अनुकूल बनाने की इच्छा से उसम परिवतन का प्रयत्न किया तो 'मराठा' न अपने 29 सितबर 1889 के अक म जमीदारो के हितो के साथ खिलवाड करने का सरकार की नीति के प्रति विरोध किया।

राष्ट्रवादी नेताओ ने 1886 के अवध रेंट ऐक्ट पर तथा पजाब काश्तकारी अधिनियम पर अपने विचार प्रकट नही किए।

1885 के बगाल टेनेंसी ऐक्ट मे सशोधन का बिल 1897 म पेश किया गया और 1898 मे पारित किया गया। इससे उल्लेखनीय रूप से ही बगाल म नाममात्र का मतभेद उभरा। 'ढाका प्रकाश' और 'बगवासी' ने इस बिल के प्रति जमीदार समथक दृष्टिकोण अपनाया तो 'बगाली' और 'हितवादी' किसान समथक ही बने रहे।[92] बगाल विधान परिषद म सुरेंद्रनाथ बैनर्जी और कालीचरण बैनर्जी ने अपने विचार म किसानो के हितो

होने पर अधिनियम की आलोचना की ।[105]

1898 और 1904 की अवधि मे बबई सरकार ने रत्नगिरि जिले मे खेतो और उनके किसाना के मध्य के सबधो के जटिल प्रश्न पर कानून बनाने का एक प्रयास किया । इस सबध मे उत्पन्न मतभेद की स्थिति मे बबई के राष्ट्रवादी नेताओ ने निश्चित रूप से खात समर्थक दृष्टिकोण ही अपनाया ।[106]

किसान तथा साहूकार

ग्रामीण भारत की तीसरी मुसीबत थे गाव के साहूकार अथवा कर्ज देने वाले बनिए। 19वी शताब्दी के अतिम चरण म ग्रामीण कर्जदारी इतनी तेजी से बढ गई कि वह ग्रामीण क्षेत्र की विषमतम समस्या बन गई । ग्रामीण ऋणदाता साहूकार द्वारा वसूली जाने वाली, आसमान को छूने वाली ब्याज की दर ने दो प्रमुख रोगो को जन्म दिया ब्याज के भुगतान किसान की आय का बहुत बडा भाग हडप जाते थे और किसान की प्राय ही ऋण की वापसी मे असमर्थता के फलस्वरूप बडे पैमाने पर किसाना की भूमि हल न चलाने वाले ऋणदाता साहूकारो के हाथ म चली जाती थी । इस प्रकार पुराना किसान साहूकार की मरजी पर पट्टदार बन गया था और इसका अवश्यभावी परिणाम यह निकला कि कृषि और कृषक दोना की हालत पहले से अधिक बिगड गई ।[107]

ग्रामीण कर्जदारी की समस्या के प्रति भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ का रवैया प्राय कुछ जटिल, बहुमुखी और उभयपक्षी और कभी कभी विपरीत था । जहा ब्रिटिश भारतीय प्रशासको ने साहूकार और उसके ब्याज की ऊची दरो को किसान की निर्धनता और कर्जदारी के प्रमुख कारणो मे से एक माना,[108] वहा भारतीय नेताओ का विश्वास था कि ऋणदाता साहूकार खेतिहरा की गरीबी और ऋणग्रस्तता का प्रमुख कारण न होकर गौण कारण ही था । इस सबध म उनकी आशका यह थी कि साहूकार को ही इस अपराध का प्रमुख और एकमात्र कारण बनाना किसान की गरीबी और ऋणग्रस्तता के वास्तविक और मूल कारणो से ध्यान हटाने जैसा था ।[109] उनकी धारणा थी कि इस प्रश्न को इस रूप म प्रस्तुत करना चाहिए कि किसान को साहूकार के पास आना ही क्या पडता है ? साहूकार के पास रुपया उधार लेने के लिए जाना किसान के लिए कोई खुशी अथवा फायदे की बात ता है नही ।[110]

उनके अनुसार ग्रामीण ऋणग्रस्तता मे चौकानेवाली वृद्धि के प्रमुख कारणो म एक भारतीय किसान की निर्धनता भी थी। भारतीय किसान को अपनी धरती मे पर्याप्त आजीविका नही मिल पाती थी फलत वह अपने और अपने परिवार के भरण पोषण के लिए, विपत्ति काल के दिनो म, ब्याज की बहुत ऊची दरो पर ऋण लेने को बाध्य था। इस प्रकार किसान के पास दो ही विकल्प थे, या तो वह भूखा मरे या साहूकार की शरण म जाए ।[111] उनके विचार म ऋणग्रस्तता का दूसरा कारण था, लगान की ऊची दर के साथ साथ निश्चित तथा कठोर भूराजस्व पद्धति । उन्होने घोषित किया कि अधिकाशतया किसान सरकार के लगान का भुगतान करने के लिए ही ऋण लेते थे। 'अमृत बाजार पत्रिका' ने 12 जून 1884 के अक म लिखा खून चूसने वाला ऋणदाता साहूकार सरकारी भूराजस्व

पद्धति की ही उपज है। साहूकार का जन्म ही इसलिए हुआ है क्योंकि सरकार लगान से दबे *किसान को सकट के समय मे भी लगानो मे किसी प्रकार की राहत नही देती थी।*[112] कुछ भारतीय नेताओ ने तो ग्रामीण कर्जदारी का सारा दोष जटिल और अत्यत विस्तृत कानून प्रणाली पर डाला जो व्यवहार मे साहूकार की सहायता करती थी और उसे किसान से उसकी भूमि का कब्जा हथियाने मे प्रोत्साहित करती थी और इस प्रकार साहूकारी की सारी बुराइयो को तीव्रता प्रदान करती थी।[113] बहुत सारे नेताओ ने इस सरकारी धारणा का जोरदार और दृढता से खडन किया कि किसान विवाह, मृत्यु तथा अन्य इस प्रकार के सामाजिक और धार्मिक समारोहो के लिए अनावश्यक रूप से ऋण लेता है अथवा दूसरे शब्दो मे किसान की ऋणग्रस्तता का कारण उसकी फिजूलखर्ची है।[114]

इस प्रकार राष्ट्रवादियो द्वारा ग्रामीण कर्जदारी के विश्लेषित कारणो के पीछे उनका यह विश्वास था कि यह ब्रिटिश प्रशासनिक पद्धति की ही देन है और ऋणदाता साहूकार तो ब्रिटिश अर्थनीतियो का एक उपकरणमात्र है। इस विश्वास को किन्ही मामलो म *अत्यत स्पष्ट भाषा मे अभिव्यक्त भी किया गया। उदाहरणार्थ अमृत बाजार पत्रिका'* ने 2 जनवरी 1901 के अक मे दृढतापूर्वक कहा कि इस देश मे कम से कम मारवाडी उद्यमी तो ब्रिटिश शासन की ही उपज थे। 'केसरी ने 18 फरवरी 1902 के अक म टिप्पणी की

> निस्सदेह ऋणदाता साहूकारो की सख्या ब्रिटिश शासन के अतगत बढी है परतु इसका कारण ब्रिटिश शासन द्वारा स्वदेशी उद्योगो की हत्या है। जब राष्ट्रीय उद्योग नामशेष हो गए है, जब प्रतिवर्ष 45 करोड रुपया की इग्लैड को निकासी कर दी जाती है तब यह क्या आश्चर्य का विषय है कि भारतीय जनता के विभिन्न वर्गो द्वारा एक दूसरे को खाने के सिवाय उनके लिए और कोई वकल्पिक माग ही नही रह गया है। ब्रिटिश सरकार न केवल यह परिवतन लाई है अपितु उसने कानूनी साधनो से इसे निरतर बनाए रखने का प्रयत्न भी किया है।[115]

बहुत सारे राष्ट्रवादी नेताओ ने किसान की दरिद्रता के प्रमुख कारण देहाती कर्जदारी तथा साहूकार को मानने की सरकारी धारणा से असहमत होते हुए भी साहूकारी से उत्पन्न बुराइयो को तत्परतापूर्वक स्वीकार किया, ग्राम के साहूकारो द्वारा वसूले जाने वाले ऊची दर के ब्याज की निंदा की तथा किसान को लूटने के लिए बनिए द्वारा अपनाए जाने वाले अवैध और घृणित हथकडो की भर्त्सना की तथा साहूकारी को महत्वपूर्ण मानते हुए भी उसे किसानो की गरीबी का एक गौण कारण ही घोषित किया। उन्होने प्राय 'खून चूसने वाले' के रूप मे विख्यात और ज्ञात साहूकार के पजो से किसान को बचाने की माग की।[116] उदाहरणार्थ भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के 1899 के अधिवेशन मे पजाब के प्रतिनिधि लाला मुरलीधर ने कर्ज देने वाले साहूकार का रेखाचित्र निम्नलिखित रूप म प्रस्तुत किया

> *साहूकार मनुष्य और पशु का विचित्र समन्वित रूप है। जो लोग आत्मा के पुनर्जन्म* तथा पुन शरीर धारण करने के सिद्धात मे विश्वास करते हैं, वे मेरी इस धारणा से एकदम सहमत होगे कि साहूकार के पास शेर के पजे हैं, लोमडी का दिमाग है और

वकरे का दिल है। वह पैसे को हडपने वाला, घृणित जोक है, मैं तो कहूगा कि यह वह व्यक्ति है जो गरीब खेतिहर का खून चूसता है।[117]

कुछ भारतीयो ने कृषि भूमि के गैर खेतिहर वर्गों के पास हस्तातरण होने की बढती प्रवत्ति पर चिता प्रकट की तथा उसकी निंदा की।[118]

इसके साथ ही साथ सारे भारतीय नेताओ ने यह अनुभव किया कि वतमान आर्थिक परिस्थितियो म तथा ऋण लेने के वैकल्पिक साधनो के अभाव की स्थिति मे साहूकार ग्रामीण भारत की आर्थिक आवश्यकता था, क्योकि उसके बिना किसान के लिए कृषि कार्यों का सचालन लगान की माग का शीघ्रता से भुगतान आर्थिक कठिनता के समय अपना तथा अपने परिवार का पालन पोषण करना कठिन हो जाएगा। अत उनका विचार था कि साहूकार को दबाना नही चाहिए प्रत्युत उसे सुधारना चाहिए और उस पर नियत्रण रखना चाहिए।[119] निस्सदेह उस समय की परिस्थितियो मे यह चितनधारा अपने मे साथक तथा सुदृढ थी।[120] नेताओ म स कुछ लोग इस तक को बहुत आगे ले गए और कभी कभी साहूकारो और उनके हितो की रक्षा के लिए खुले आम बोलने लगे।[121]

साहूकारो के साथ किसानो के सबधो के प्रति भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ के दृष्टिकोण को कदाचित समय समय पर साहूकारो के शोषण तथा अपदस्थ करने के प्रयत्नो से किसानो को बचाने के लिए और इन प्रयत्नो के परिणाम मे ब्रिटिश शासन की राजनीतिक और सामाजिक स्थिरता के लिए उत्पन्न होने वाले खतरो को बचाने के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रयासो के प्रति अपनाए गए उनके दृष्टिकोण के सदभ म ही भली प्रकार समझा जा सकता है।

दक्षिण के खेतिहरो की सहायता का 1879 का अधिनियम (डक्कन ऐग्रीकल्चरिस्टस रिलीफ ऐक्ट)

अधिकारियो द्वारा उठाया गया साहूकार विरोधी प्रथम महत्वपूर्ण चरण 1879 का दक्षिण के कृषिको की सहायता का अधिनियम था। इसका उद्देश्य 1875 के गभीर उपद्रवो के रूप मे दक्षिण बबई के खेतिहरो द्वारा अभिव्यक्त असतोष को दूर करना था। यह काय साहूकारी को दबाने साहूकारो की गलत और कपटपूर्ण प्रवत्तियो को रोकने, कानूनी कायवाही का सरल रूप देने तथा ग्रामीण ऋणो को नीचे लाने से किया जा सकता था। दक्षिण के चार जिलो म लागू किए गए अधिनियम के अतगत न्यायालयो को यह अधिकार दिया गया कि वे प्रतिज्ञापत्रो की भावना को देखें, ऋण के इतिहास और योग्यता की जाच करें अनुचित ब्याज दरो की वसूली की अनुमति न देते हुए समुचित आधार पर वास्तव म दी देय ऋण राशि निर्धारित करें। यह अधिनियम काश्तकार की धरती को बिकने से बचाता था जब तक कि किसान ने जमीन देने का ही निश्चित रूप स निश्चित इकरारनामा न कर रखा हो। इतने पर भी कुछ विशेष परिस्थितियो म स इस अधिनियम म किसानो को धरती लौटवाने की व्यवस्था भी थी। अधिनियम म ग्राम रजिस्ट्रार की नियुक्ति की व्यवस्था थी जिसके आगे ऋण सबधी सभी प्रतिज्ञापत्रो का पजीकरण करवाना पडता था और ऋण की रकम अधिक होने पर कजदार को दिवालिया घोषित

करन का प्राथनापत्र देना होता था। इस अधिनियम के अतगत ऋण चुकता न करने पर जेल के दड को हटा दिया गया था तथा ऋण परामशदाता की नियुक्ति की व्यवस्था की गई। 1882 म इस अधिनियम मे सशोधन किया गया और कजदारो को रेहन रखी गई धरती को छुडवाने की चिंता किए बिना ही हिसाब के लिए कानून की शरण लेन की शक्ति दी गई।

इस अधिनियम को जस्टिस रानाडे, पूना सावजनिक सभा तथा बबई के कई समाचारपत्रो ने सक्रिय समथन दिया।[1 2] रानाडे ने अपने दृष्टिकोण को निम्न शब्दो मे सक्षिप्त रूप दिया

> इस अधिनियम का समग्र औचित्य इसी एक तथ्य मे निहित है कि साधारण कानून दिवालिये और अशिक्षित किसान मे तथा सपन्न और चालाक साहूकार मे बुद्धि और सुविधाओ की समानता के सिद्धात को लेकर चलता है जबकि वस्तुत इस समानता का किसी भी रूप मे अस्तित्व ही नही है नकली कानून द्वारा समानता की धारणा पूण रूप से ही कल्पनामूलक है और इसका बहुत ही दुरुपयोग होता रहा है। अपेक्षाकृत दुबल वग के सरक्षण की दृष्टि से पुरानी रूढिवादी स्वदेशी परपराओ की ओर लौट कर इस बुराई के उन्मूलन का समय आ गया है।[13]

रानाडे ने अक्तूबर 1879 मे 'जरनल आफ दि पूना सावजनिक सभा' म प्रकाशित अपने लेख, 'दक्न ऐग्रीकलचरिस्ट बिल' मे बिल की लगभग सभी महत्वपूण धाराओ का समथन किया।

बबई के बहुत सारे राष्ट्रवादी समाचारपत्रो न प्रमुख रूप से इस आधार पर बिल को अस्वीकृत कर दिया कि यह अनिच्छापूवक किया गया प्रयास है अत यह किसानो की सुरक्षा मे सफल नही होगा। यह साहूकार के रूप म गौण बुराई का तो उपचार करता है परन्तु कठोर और दकियानूसी लगान पद्धति के रूप मे प्राथमिक बुराई को छूता तक नही। इसका परिणाम यह होगा कि किसान के दायित्व तो यथापूव बने रहग परतु उसकी ऋण लेने की साख जाती रहेगी अत उसकी और दुदशा होगी।[14] अधिनियम के आलोचको के मन मे कदाचित वही विश्वास काम कर रहा था जिसे 3 फरवरी 1884 के अक म मराठा ने खुले तौर पर प्रकट किया यह एक ऐसा साधन है जिसे दुर्भाग्य के वास्तविक आधार को छिपान के लिए अपनाया गया है। सरकार द्वारा अपन उत्तरदायित्व को साहूकार के कधो पर फेंकन की दिशा मे किए जा रह प्रयत्नो का यह एक रूप है।' यहा तक कि अधिनियम का खुलकर समथन करने वाले रानाडे न यह शत जोड दी कि यह बिल किसानो को राहत पहुचाने मे तभी सहायक सिद्ध हो सकता है जब इस कल्पना स काम लिया जाए कि भूराजस्व नीति को उदार बनाया जाएगा बिल की सफलता के लिए यह एकमात्र शत है।[15] उन्होंने आगे दृढतापूवक लिखा 'नही तो यह कानून कोई भी उल्लेखनीय और स्थाई लाभ नही पहुचा सकेगा और सभव यह भी है कि वतमान स्थिति को ही और अधिक विषम बना देगा क्योंकि किसान बेचारा को बढे हुए भूमि लगानो को चुकाने के लिए किसी न किसी तरह रुपया जुटाना पडेगा।[16] थोडे से भारतीय नेताओ ने अधिनियम का विरोध भी किया। उनके विचार

मे यह साहूकार के हितो की पूर्ण उपेक्षा करता था और परिणामस्वरूप पूरी तरह बरबाद कर रहा था।[17]

धरती के सक्रमण पर प्रतिबध

1879 के उपरात शताब्दी के अत तक सरकार ने देहाती कर्जदारी के बढते खतरे के विरुद्ध कोई बडा कदम नही उठाया। परतु धरती के किसानो के हाथ से निकल कर गैर खेतिहर वर्गो के हाथ मे जाने की गति इतनी अधिक बढ गई कि अधिकारी घबडा उठे। तब सरकार पहले से अपनाए गए प्रयत्नो की अपेक्षा और अधिक वेगवान और प्रभावी उपचार करने को विवश हो गई। इस सबध मे वर्षो तक सरकारी चितन इस धारणा के चारो ओर घूमता रहा कि किसानो के हाथो से धरती के गैरखेतिहर वर्गो के पास जाने के प्रमुख कारण थे, सरकारी भाग की अत्यधिक कोमलता। सरकारी कर नीति आर्थिक लगान का एक भाग लेने के बाद बहुत बडे अनुपार्जित अवशिष्ट भाग को भूस्वामियो के हाथ म छोड देती थी और इससे खून चूसने वाले लगान वसूलने वाले वर्ग के बने रहने म सहायता मिलती थी। ब्रिटिश प्रशासन द्वारा भूस्वामियो को धरती बेचने अथवा रेहन रखने के रूप म धरती का हस्तातरित करने की अबाधित शक्तिया दी गई थी। भारतीय किसान की फिजूलखर्ची की आदत थी। वह एक ओर अपनी इस प्रकृति के कारण और दूसरी ओर भूमि के सक्रमण की शक्ति से सपन्न होने के कारण अधिकतम रुपया उधार लेता था।[18] अत यह विश्वास बनाया गया कि जितना ऊचा कराधान होगा, किसानो के लिए वह उतना ही अधिक फायदेमद होगा। यदि ब्रिटिश प्रशासको ने राजनीतिक दृष्टि से अपने प्रस्ताव को लागू करना असभव अनुभव न किया होता तो अवश्य ही उन्होने गैर खेतिहर जमीदारो को लाभरहित बनाने के लिए भूमि लगान म वृद्धि के प्रस्ताव को रखने की उत्सुकता अवश्य दिखाई होती।[19] अधिकारियो द्वारा विकल्प रूप मे अवशिष्ट दूसरा उपाय था, अबुद्धिमान और अदूरदर्शी किसानो के लिए घातक सिद्ध हो रहे भूमि हस्तातरण के उपहार रूप अधिकार को उनके हाथो से छीन लेना, धरती बेचने की उसकी शक्ति पर प्रतिबध लगाना तथा इस प्रकार उसकी साख को सीमित करते हुए बडे पैमाने पर ऋण लेने की उसकी शक्ति और प्रलोभन को दूर करना।[20]

नई नीति का प्रथम प्रमुख साकार रूप 1900 का पजाब एलिनेशन एक्ट था। अधिनियम के अतर्गत उत्तराधिकारी किसान द्वारा डिप्टी कमिश्नर की स्वीकृति के बिना और परिभाषित खेतिहर के सिवाय किसी अन्य को स्थाई रूप से भूमि के स्वामित्व परिवर्तन पर प्रतिबध लगा दिया गया। गैरखेतिहरो को भूमि के स्वामित्व की कई रूपो म अस्थाई स्वीकृति अधिकतम बीस वर्ष की अवधि के लिए निश्चित की गई। इस अवधि के उपरात, बिना किसी प्रकार की बाधा के धरती मूल स्वामी के अधिकार म मानी जाने की व्यवस्था की गई तथा किसी आदेश अथवा आज्ञाप्ति के परिपालन म किसी कृषि भूमि को न बेचे जा सकने की व्यवस्था की गई।[21] इससे स्पष्ट है कि यह अधिनियम किसान को चालू ऋणग्रस्तता से मुक्त करने के लिए नही बल्कि पजाब म कृषक वर्ग म एक राष्ट्री व्यक्ति के रूप म साहूकार द्वारा किए जा रहे सपत्तिहरण से और इस

रूप से शायद निरतर बढ रहे राजनीतिक खतरे के रोग से बचाने के लिए तथा भविष्य मे उस न बढ़ने देने के लिए बनाया गया था।[13] यही कारण है कि भूमि के खेतिहर वर्गों म हस्तातरण की पूरी इजाजत थी और वास्तव मे भूमि के सक्रमण को पूणरूप से रोकने की जगह इस कम किया गया और नियमित बनाया गया। हा यह आशा अवश्य की गई थी कि इसस किसान की थोडी सी आवश्यकता होते ही साहूकार के पास भागे जाने की प्रवृत्ति और सामर्थ्य पर परोक्ष रूप से दबाव अवश्य पडेगा।

इस दिशा म उठाया गया अगला महत्वपूण कदम 1901 मे बबइ मे लड रेवेन्यू अमडमट एक्ट (भूराजस्व सशोधन अधिनियम) को कानून का रूप देना था। इसमे सरकार का भूमि लगान का भुगतान न करन के अपराध मे सरकार द्वारा जब्त किए गए खाली भूखडो और खेता के तथा हस्तातरण के अधिकार से रहित नए प्रकार के जोतो के बदोबस्त करने की शक्ति दी गई थी। इसके अतिरिक्त अधिनियम मे कलक्टर द्वारा यथानिर्दिष्ट अवधि के लिए तथा यथानिर्दिष्ट शर्तों पर जब्त धरती दने की भी व्यवस्था थी।[133] इस अधिनियम म सामथ्य देने की व्यवस्था थी बाध्यता की नही थी तथा जब्त धरती को असक्रमणीय बनान की व्यवस्था थी। अत ऐसा कहा जा सकता है कि इस अधिनियम का क्षत्र पजाब के क्षेत्र की अपेक्षा बहुत ही सकीण था इसके अतिरिक्त पजाब अधिनियम की अपेक्षा यह अधिनियम दो रूपा म कठोर था प्रथम इसके अतगत जितनी भी धरती आती थी, यह अधिनियम उस पर प्रतिबध ही नही लगाता था प्रत्युत रेहन, बिक्री आदि किसी भी रूप मे धरती के हस्तातरण पर पूण निषेध लगाता था। द्वितीय, यह सरकार को सर्वेक्षित जोतो पर स्थाई मौरूसी हक देने के बदले जब्त किए गए खडा का थोडे समय के पट्टे पर देने का अधिकार देता था।

धरती के निजी स्वामित्व परिवतन की शक्ति को प्रतिबधित करने की चेष्टाओ के प्रति राष्ट्रवादिया का दृष्टिकोण ग्रामीण ऋण ग्रस्तता के कारणो और निवारण के उपाया के सबध म ब्रिटिश अधिकारियो और भारतीय नताओ के बीच मतभेदो का उजागर करता है। इन मतभेदो को देखते हुए यह स्वाभाविक ही था कि राष्ट्रवादी नेताओ ने इस अधिनियम का उसके जन्म काल से लेकर सरकार द्वारा उसे स्वीकृति देने के समय तक विरोध किया।[134]

पजाब के बाहर पजाब भूमि सक्रमण बिल का या तो विरोध हुआ और या उसे समथन नही मिला।[135] पजाब म भी राष्ट्रवादी पदाधिकारिया म इस बिल ने मतभेद उत्पन्न कर दिया।[136] इसने बहुत सारे भारतीय राष्ट्रवादियो का अजीब स्थिति मे डाल दिया। उदाहरणाथ पजाब प्रात के राष्ट्रवादी पत्रो मे उर्दू भाषा के मुखपत्र 'अखबारे आम' न आरभ मे बडी ही सकोच की सी स्थिति अपनाई और अपनी प्रतिक्रिया समथका और विरोधिया दोनो के विचारो को प्रकाशित करने के रूप मे प्रकट की। लगभग एक वष तक बीच म लुढकते रहने के उपरात आखिरकार उसने अपने 7 अगस्त 1900 और 27 अक्तूबर 1900 के अको मे बिल का विरोध किया।[137] परतु दो ही सप्ताहा के उपरात उसन अपना रुख बदल दिया और उसने 10 नवबर 1900 के अक मे

विश्वास के साथ भविष्यवाणी की कि यह अधिनियम सफल होगा और इसके सबध म उठाई गई सभी आपत्तिया असगत है।[138] किसी भी रूप मे पजाब के भीतर अथवा बाहर पजाब एलिएनेशन बिल का कठोर रोषपूण अथवा दीघकालीन विरोध नही हुआ।

दूसरी ओर 'बबई भूराजस्व सशोधन बिल' मे बबई प्रदेश की जनता मे व्यापक रोष की लहर दौड गई। । प्रदेश के सभी भागो मे विरोध सभाए हुई तथा बबई प्रेजीडेंसी एसोसिएशन, पूना सावजनिक सभा तथा दकन सभा ने इसके विरुद्ध ज्ञापन भेजे।[139] प्रमुख राष्ट्रवादी समाचारपत्र इस बिल की निंदा के लिए कटिबद्ध हो गए[140], और प्रमुख लोकनेता हाथ धोकर इसके पीछे पड गए।[141] बबई लैजिस्लेटिव कौसिल के कुछ भारतीय सदस्या, पी० एम० मेहता, जी० के० गोखले जी० के० पारिख, बालचद्र कृष्ण और डी० ए० खरे ने बिल को जल्दबाजी म कानून का रूप दने के विरुद्ध अपना विरोध प्रदर्शित करने के लिए कौसिल से बहिर्गमन का अभूतपूव कदम उठाया, यह भारतीय विधान परिषदो के इतिहास म कदाचित प्रथम उदाहरण था।[142]

भूस्वामित्व परिवतन विरोधी कानून के विरुद्ध राष्ट्रवादियो के विरोध का आधार यह विश्वास था कि भले ही यह कानून किसाना को साहूकारा द्वारा किए जाने वाले स्वामित्वहरण से बचाने के उत्तम उद्देश्य को लेकर बनाया गया है परतु इससे व्यवहार मे कोई लाभ तो होगा नही उलटे यह किसानो के हिता के विरुद्ध ही जा सकता है। प्रथम उनकी धारणा थी कि स्वामित्व परिवतन पर लगे प्रतिबधो से किसान की साख जडमूल से नष्ट न होने पर भी क्षीण अवश्य हो जाएगी। क्योकि किसान को कृषि सबधी गतिविधिया के सचालन के लिए, सरकारी मागा के भुगतान के लिए और अभाव के दिना म परिवार के भरण-पोषण के लिए ऋण की आवश्यकता पडती ही रहती है इस कानून का परिणाम यह होगा कि या तो वह ऋण ले ही नही पाएगा अथवा उसे इसके लिए बहुत ऊची ब्याज दर देनी पडेगी।[143] उनका यह भी दावा था कि इस प्रकार के प्रतिबधा का अनिवाय परिणाम यह होगा कि भूमि का मूल्य घट जाएगा।[144] उनकी यह भी धारणा थी कि ये प्रतिबध किसाना के स्वामित्व के अधिकारो के क्षत्र म घुसपैठ हैं। धीरे धीरे ये प्रतिबध किसानो को वास्तव म ही राज्य का दास बना देंगे।[145] भारतीय नताओ न विशेष रूप से बबई भूराजस्व सशोधन बिल पर प्रहार करते हुए अपनी इस आलोचना का उग्र स्वर दिया। उनके अनुसार जब्त की गई धरती पर समुचित समझी जाने वाली शर्तों पर और समुचित समझी जाने वाली अवधि के लिए बदोबस्त का सरकार को अधिकार देने वाली व्यवस्थाए न केवल किसान से स्वामित्व का अधिकार छीनने का उद्देश्य लिए हुए हैं प्रत्युत उससे स्थाई मौरूसी हक और निरतर जोतने का हक भी छीनती हैं। इस प्रकार नेताओ ने इन व्यवस्थाओ को राजकीय जमींदारी अथवा भूमि के राष्ट्रीयकरण के सिद्धात को लागू करने का एक गुप्त षडयत्र बताया।[146] कुछ ने तो भविष्यवाणी की कि जहा तक किसान का सबध है इन 'क्रांतिकारी' व्यवस्थाओ म विपरीत परिणाम ही प्राप्त होंगे। बचारा किसान अपने पूण स्वामित्व के अधिकार को बचाने के लिए साहूकार पर और अधिक निभर रहेगा

अधिकार के स्रोत की खोज करते हुए उन्होंने निर्देश किया कि कठोर वित्तीय पद्धति लागू करने पर भारत सरकार के लिए किसान को भूमि बेचने अथवा रेहन रखने के रूप में स्वामित्व में परिवतन का अधिकार अनुपूरक पग के रूप में ही देना पडा अन्यथा लगान की द्रुत वसूली सभव ही न हो पाती। स्वामित्व परिवतन के अधिकार में किसी प्रकार का प्रतिबंध लगाना सामाजिक अव्यवस्था उत्पन्न करना होगा और उसके साथ वित्तीय पद्धति में जिसके सदर्भ में इन अधिकारों का देना एक अनिवार्य आवश्यकता बन गई थी, प्रभावी सशाधन करना ही नहीं प्रत्युत उसे खत्म करना होगा।[155]

बहुत सारे भारतीय नेता इस तथ्य से सहमत थे कि स्वामित्व परिवतन, निषेधक कानूनी उपायों की वास्तविक प्रभावात्मकता के सदर्भ में दृष्टिगोचर परिणाम के अनुरूप सिद्ध नहीं हो रहा था क्योंकि यह उपाय ग्रामीण ऋणग्रस्तता के सतही पक्ष से ही सबध रखता था। यह उपाय अधिक से अधिक रोग के प्रभाव को कम ही कर सकता था परतु वास्तविक समस्या का न तो यह विश्लेषण कर पाता था और न ही समाधान।[156]

वैकल्पिक उपचार

ग्रामीण ऋणग्रस्तता की समस्या के प्रति भारतीय नेताओं का मूल दृष्टिकोण यह था कि अपेक्षाकृत अधिक असदिग्ध उपायों के रूप में केवल साहूकार विरोधी उपायों पर ही अधिक बल नहीं देना चाहिए प्रत्युत देखना यह चाहिए कि वे कौन से कारण हैं जिनसे विवश होकर किसान को साहूकार और ऋणदाता के चगुल में फसना पडता है। ग्रामीण ऋण के अपेक्षाकृत अच्छे अभिकरण (एजेंसियां) खोलने से ही किसान को साहूकार से छुटकारा मिलना सभव है। 'मराठा' ने इस दृष्टिकोण को अपने 8 अक्तूबर 1899 के अक में स्पष्ट रूप से इस प्रकार व्यक्त किया

> जब तक रुपया ऋण लेने की आवश्यकता बनी रहेगी, खेतिहर और ऋणदाता साहूकार एक दूसरे के निकट आते ही रहेंगे और भूस्वामित्व परिवतन निषेधक कानूनों के पवित्र उद्देश्य की पूर्ति नहीं होगी। वस्तुत सरकार जितना कर सकती है उसे उतना अवश्य करना चाहिए। या तो वह ऋणग्रस्तता के वास्तविक कारण लगान में कुछ कटौती करके ऋणग्रस्तता को, आशिक रूप में ही सही, कुछ कम करे अथवा किसानों की वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तथा उन्हें शैतान और क्रूर प्राइवेट ऋणदाता साहूकारों के पजा से छुडाने के लिए स्वय ऋणदाता के रूप में कार्य करे।[157]

इसी प्रकार गोपालकृष्ण गोखले ने बबई भूमि राजस्व सशोधन बिल पर भाषण करते समय सरकार को चुनौती दी कि वह एक छोटा सा इलाका छाट ले। वहां के किसानों के सारे ऋण साहूकारों से लेकर अपने हाथ में कर ले और किसानों की साधारण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कृषि बैंक चालू करे और फिर किसान से भूस्वामित्व परिवतन का अधिकार छीन। उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कि समस्या को इसी ढग से सुलझाना ही यही एकमात्र सही उपाय होगा। उन्होंने यह भी घोषणा की कि हमारे यहां सारे स्वावलंबी सरकार की इस नीति का समर्थन करेंगे। उन्होंने अनुभव किया कि मूल समस्या यह है

पूर्वार्ध में वहां के किसानों की दशा में सफलतापूर्वक सुधार किया है। उन्होंने निर्देश किया कि भारतीय काश्तकारी कानून के अंतर्गत किसान और जमींदार दोनों का कृषि संबंधी की पुरानी व्यवस्था के बंधनों में बंधा रहना जारी रहेगा। इस प्रकार का कानून तो कर्तव्यों और अधिकारों की वर्तमान जटिलताओं में वृद्धि करने का काम ही करेगा, जमींदार वर्ग को केवल लगान के रूप में अनुग्रह राशि (पेंशन) खाने वाला बनाने के और किसान को जमीन के पूर्ण स्वत्वाधिकारी के रूप में राज्य की ओर अधिक से अधिक देखने के लिए विवश करेगा। दोनों को अपनी स्थिति को सही प्रकार से समझने में कोई सहायता नहीं मिलेगी। एक वर्ग के हित में वर्तमान अधिकारों को सतही तौर पर दुहा जा रहा है, हालांकि इसे 'शीघ्र सुधार' व 'क्रांतिकारी' सुधार का नाम दिया जा रहा है। इस प्रकार की नीति का परिणाम यह होगा कि झगड़ालू भागीदारों में भूमि पर स्वामित्व और हितों का पूर्ववत पृथक और विभाजित रूप बना रहेगा और किसी भी प्रकार का वास्तविक सुधार नहीं हो पाएगा।[167] इसी प्रकार किसान को कर्जदार साहूकार की लूट से बचाने के लिए भूमि संक्रमण को अवैध बनाने के प्रस्ताव पर आपत्ति करते हुए रानाडे ने अपना मत प्रकट किया वास्तविक संपत्ति के इच्छित तथा अनिच्छित सभी प्रकार के हस्तांतरणों पर प्रतिबंध लगाने से स्थिति में किसी प्रकार का कोई सुधार नहीं होगा। इससे तो केवल वर्तमान गरीबी की जड़ें मजबूत होंगी और वर्तमान असहाय अवस्था और अधिक विषम बन जाएगी।[168]

रानाडे ने चालू भूमि संबंधों के स्थान पर निजी और स्वतंत्र संपत्ति के आधार पर नए भूमि संबंध स्थापित करने का आह्वान किया।[169] संरक्षित पट्टेदारी के स्थान पर उन्होंने किसान को स्वतंत्र तथा उन्मुक्त बनाने का सुझाव दिया ताकि उसके निजी अस्तित्व की स्थापना हो सके। इस प्रकार का स्वतंत्र किसान दबाया नहीं जा सकेगा, वह स्वामित्व के पूर्ण अधिकार का उपभोग करेगा। संपत्ति के जादू से सम्मोहित वह अपनी धरती पर कठोर श्रम करेगा।[170] इसके साथ ही उनका यह विश्वास था कि छोटे छोटे किसानों में बंटी हुई कृषि, भारतीय परिस्थितियों में न तो स्थाई और प्रगतिशील बन सकेगी और न ही सभी वर्गों की सर्वोत्तम शक्तियों का सदुपयोग या उन्नत तकनीक और लोक कर्मों का समुचित उपयोग कर सकेगी। उन्होंने लिखा कि जमीन जोतने वालों का जमीन से पूर्णतः अलगाव एक राष्ट्रीय रोग है और सारे देश में छोटे छोटे किसानों के स्तर का बहुत नीचे गिरना भी किसी रूप में कम गंभीर रोग नहीं।[171] उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कृषि के समुचित और संतुलित विकास के लिए बड़े पैमाने के पूंजीनिष्ठ किसानों का होना आवश्यक है। ऐसे संपन्न किसान भारतीय जमींदारों के समान नहीं प्रत्युत बरतानवी जमींदारों तथा जर्मन जमींदारों के आदर्श पर धरती के पूरे तौर पर मालिक होंगे। 1879 में उन्होंने आशा प्रकट की कि एक बार धरती को कृत्रिम प्रतिबंधों से मुक्त कीजिए समझदार और मितव्ययी वर्ग धरती पर अधिकार करने में सफल हो ही जाएगा। सारे देश में जमींदारों का एक ऐसा वर्ग अस्तित्व में आ जाएगा, जिसका उद्देश्य धरती के अधिकाधिक साधनों का और सरकार द्वारा निर्मित लोक कार्यों का उपयोग करना होगा।[172] थोड़ा अन्य उद्गारों में रोचक टिप्पणियां दी

भारत जैसे पुराने और पिछड़े हुए सभी देशो मे शक्ति के सभी तत्वा पर एकाधिकार करने वाला एक अल्पसख्यक वग सदैव मिलता है। सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र म इस वग के लोग सदैव अग्रणी रहते हैं। इस वग के लोगो के पास प्रतिभा, सपत्ति मितव्ययी प्रवृत्ति, ज्ञान और सयोजनशक्ति होती है जबकि बहुसख्यक वग के लोग अशिक्षित, अदूरदर्शी, बेसमझ फिजूलखच और साधनहीन होते हैं, इन दोनो वर्गों मे किसी भी राजनीतिक चातुरी से सतुलन नही रखा जा सकता। प्रतिभा और सपत्ति के प्रति शक्ति का आकषण निश्चित है। अत कगाली मे फसे किसानो को भूमि का स्वामी बनाए रखने के लिए सघष करना सवथा निरथक है। यह तो धरती और पूजी के स्वाभाविक ऐक्य को भग करना है।[173]

1883 मे बगाल काश्तकारी अधिनियम की समीक्षा करते हुए रानाडे ने खमार भूमि अथवा जमीदारो के निजी अधिकार की भूमि को कम करन की और किसानो के अधीनस्थ धरती मे बढोतरी करन की प्रवत्ति की आलोचना की।[174] उन्होने इस बिल की व्यवस्थाओ का प्रशा की भूमि कानून व्यवस्थाओ स अतर दिखाते हुए प्रशा के कानून की इस आधार पर प्रशसा की कि उसमे पुरान जमीदारो को अपनी भूसपत्ति के एक भाग को अपने अबाधित अधिकार मे ही बडे पैमाने के पूजीनिष्ठ खेतो मे बदलने की अनुमति थी।[17] इसी प्रकार सरकार की नीति की आलोचना के अन्यान्य कारणो के साथ एक महत्वपूण कारण उनका यह विश्वास था कि इससे बडे पैमाने की पूजीनिष्ठ कृषि के विकास मे रुकावट पदा होती है।[176] इसी प्रकार उनके भूमि के हस्तातरण के अधिकार पर प्रतिबध लगाने के विरोध का प्रमुख आधार उनका यह भय था कि इन प्रतिबधो से दश की भूमिगत सपत्ति के केंद्रित होने की अपरिहाय प्रवृत्ति रुक जाएगी।[177]

अतएव रानाडे ने भारत म कृषि सबधो म भावी विकास को साथ साथ जीवित रहने वाले दो कृषि सबधित वर्गों को जन्म देकर उन पर आधत करने की वकालत की (क) व्यापक क्षुद्र कृषक वग, जो राज्य के अथवा जमीन्दारो के किसी भी प्रकार के भार स पूणतया मुक्त होगा। उसे स्थाई और निम्न दर पर निर्धारित भूराजस्व की प्रतिभूति प्राप्त होगी और उसके लिए कृषि बको के द्वारा सस्ती दर और आसान शर्तों पर ऋण की व्यवस्था होगी। (ख) पूजीपति किसानो का बडा वग जो किसी भी काश्तकारी कानून स अप्रभावित होगा अर्थात उसके पास धरती का पूण और एकातत स्वत्वाधिकार होगा। यह वग इस स्थिति में होगा कि अपक्षित पूजी का निवेश तथा अधुनातन वज्ञानिक कृषि सबधी तकनीक का उपयोग कर सके। प्रश० मे इस सबध म उन्होंने 19वीं शताब्दी क मध्य म प्रचलित जमीदार और किसान दोनो वर्गों के सपत्ति पर स्वतत्र अधिकारवाली स्वामित्व पद्धति के अनुकरण और स्वीकरण की अपील की।[178] उन्होंने बताया कि प्रशा म 1860 मे 15 प्रतिशत भूमि पर राज्य अथवा चच का अधिकार था 44 प्रतिशत पर बडे बडे जमीदारो का अधिकार था, 35 प्रतिशत पर किसानो का स्वत्वाधिकार था और 5 प्रतिशत पर छोटे छोटे मालिको का अधिकार था। इस प्रकार समथन के स्वर मे उन्होंने कहा कि वहा भूमि समृद्ध जमीदार और भारमुक्त निधन मे बराबर बटी हुई है। सामती अधदास ने वहा भारमुक्त स्वत्वाधिकारी का और जागीरदार लाड न अपनी सपत्ति क

अवाध स्वामी का रूप ले लिया है।[179] प्रशा के आदर्श को भारत पर लागू करते हुए जस्टिस रानाडे इस निष्कष पर पहुचे

> यदि इस देश को अपनी शक्ति और समृद्धि के आधार के रूप मे स्वाभिमानी व स्वतत्र भूधरो की गहरी आवश्यकता है तो भूमि पर स्वामित्व प्राप्त व्यक्तियो के प्रकाश और नेतृत्व की भी आवश्यकता किसी प्रकार कम महत्वपूण नही। ऊपर के दस हजार लोगो द्वारा बडे बडे भूभागोवाली जागीरो पर अधिकार करना और बडी सख्या म छोटे छोटे खेतिहर किसानो द्वारा छोटे छोटे भूभागो पर अधिकार रखना, इस प्रकार बडे और छोटे खेतो पर खेती । देश की उन्नति और स्थिरता की प्राप्ति के लिए ग्रामीण समाज की यह मिश्रित रचना एक आवश्यकता है।[180]

रानाडे न पूजीनिष्ठ किसान और जमीदार वग के अस्तित्व म आने के साधनो और उपायो पर भी विचार किया। उन्होने आशा प्रकट की कि कुछ एक मितव्ययी स्वतत्र किसान धीरे धीरे अपनी स्थिति म विस्तार करेंगे और अपक्षाकृत बेहतर स्थिति म आ जाएग।[181] उन्होने यह आशा भी प्रकट की कि धनिक वग के बहुत सारे लोग भूमि की ओर आकृष्ट होगे, बेपरवाह और निकम्म किसानो से भूमि खरीदगे तथा इस प्रकार पूजीपति जमीदार की भूमिका निभाने के लिए आगे बढेंगे।[182] स्पष्टतया यह उपचार रैयतवाडी इलाके पर ही लागू होगा। बगाल के जमीदारी क्षेत्र के सबध म रानाडे ने प्रशा के भूमि सुधारो के अनुकरण का सुझाव दिया। उनका इस सबध मे सर्वप्रथम सुझाव यह था कि कृषि स सबधित सारे क्षेत्र मे सभी प्रकार के सुधार समाज के विभिन्न वर्गो के आर्थिक सबधो पर किसी प्रकार की हिंसक गडबड डाले बिना अथवा क्राति का झटका अनुभव किए बिना तथा अतवर्गीय सघर्षो को जन्म दिए बिना ही किए जाने चाहिए।[183] बगाल काश्तकारी कानून के प्रति उनके विरोध के कारणो मे उनकी एक यह आशका थी कि इस बिल का अनिवाय परिणाम वग सघष होगा।[184] वह जमीदारो के वतमान अधिकारो के एकतरफा छीन जाने के भी विरुद्ध थे और बगाल बिल म उनके अनुसार यह भावना निहित थी।[185] इसके साथ ही उनकी यह भी मान्यता थी कि छीन गए अधिकारो की क्षतिपूर्ति की जानी चाहिए।[186] इस सबध म रानाडे की अपनी योजना किसानो और जमीदारो दोनो को धरती के स्वामित्व का समान अधिकार देकर दोनो म सौहाद और सौमनस्य की भावना उत्पन्न करना था। उनका प्रस्ताव था कि किसान को भूमि का पूण स्वत्वाधिकार दे देना चाहिए परतु केवल उतने ही भाग का, जितना उसकी पटटेदारी के अतगत आता है। इस स्वामित्व को खरीदने के मूल्य के रूप म उस अवशिष्ट धरती पर जमीदार के पक्ष म अपने सभी दावे छोडने होग। इस प्रकार उसकी पटटेदारीवाले भूभाग पर उसका पूण स्वत्वाधिकार होगा और शेष भाग पर जमीदार का पूण स्वामित्व हो जाएगा। यदि जमीदार का फिर भी कुछ बकाया निकलना है तो उसकी पूर्ति किसान कुछ एक वर्षों तक किराया प्रभारो के नकद भुगतान द्वारा करेगा।[187] सक्षेप म जमीदारी अधिकारो को खोने के लिए जमीदारो की क्षतिपूर्ति की जानी चाहिए तथा उस पटटेदारी के अतगत भूमि का कुछ भाग अपनी जोत के लिए रखने का अधिकार मिलना चाहिए। इस योजना के अतगत निष्क्रिय लगान वसूलने वाले जमीदार साहसी पूजी निवेशक उद्यमी किसान

कि कृषि की प्रगति देश के उद्योगो के साथ और द्रुतविकास के साथ बडी घनिष्टता म सबधित है। जब तक देश के ग्रामीण की प्रवृत्ति को शीघ्रता से रोका नही जाता दश की कृषि समस्या के समाधान की दिशा मे किया जाने वाला कोई प्रयास सफल नही हो सकता।

इस दृष्टिकोण के प्रारभिक प्रस्तावक के रूप मे रानाडे ने 1881 मे तक प्रस्तुत किया कि भारतीय कृपि मे व्याप्त रोग का मूल कारण राजनीतिक पद्धति के गहरे ग्रतस्तल म निहित है अत वाहरी उपचार अथवा चमडी पर मरहम पटटी करने का कोई लाभ नही होगा। स्थिति के उपचार के लिए किसी भी अन्य वस्तु से बढचढकर अपेक्षित यह है कि कृपि पर राज्य के भार को कम किया जाए और श्रम, उद्योग और फालतू पूजी के लिए नए माग खोलकर धरती पर आबादी का भार घटाया जाए।[19] बाद मे 1892 मे रानाड ने 'भारतीय राजनीतिक अथव्यवस्था' पर दिए गए अपने भाषण मे इस सिद्धात का प्रनिपादन किया कि कृपि पर सदा के लिए निभर रहने वाले देश का निधन रहना तथा अपेक्षाकृत और अधिक निधन बनते जाना निश्चित है क्योकि कृपि तो ह्रासमान प्रनिफल नियम (ला आफ डिमिनिशिंग रिटन्स) की अवाछनीय स्थिति के अतगत सचालित होती है और भारत मे तो वर्षा की अनिश्चितता का एक और दुर्गुण इसके साथ जुडा है।[103] मराठा' ने 1881-84 की अवधि मे अपनी सपादकीय माला मे कृपि प्रगति और औद्योगिक प्रगति के घनिष्ठ रूप से अन्योन्याश्रित होने पर बार बार जोर दिया। उदाहरणाथ, 4 सितबर 1881 के अक मे उसने लिखा

> कृपि सबधी श्रम बाजार मे कृपक श्रमिको का आधिक्य है और जब तक यह आधिक्य कृपि से हटाया नही जाता और कही दूसरे स्थान पर खपाया नही जाता तब तक कृपको की दीन हीन दशा मे सुधार के लिए उपचार रूप मे किए गए किसी भी प्रयास का उत्तम, लाभप्रद और स्थाई परिणाम नही निकलेगा। कृपि और मशीनी उद्योग का विकास साथ साथ ही होना चाहिए।

इसी प्रकार अपने 12 फरवरी 1882 के अक मे उसने तक प्रस्तुत किया 'केवल कानूनो से, केवा से यहा तक कि किसानो को स्थाई रूप म काश्तकारी के अधिकार देने से किसानो की हालत मे तब तक कोई सुधार नही होगा, जब तक कि देश मे विविध उद्योगो की स्थापना नही की जाती क्योकि एकमात्र कृपि पर निभर रहने वाला देश कभी सपन्न नही रह सकता।'[104] नेटिव ओपीनियन ने भी अपने 25 मई 1884 के अक मे इस तक को दोहराया।

1895 मे पी० सी० राय ने रानाडे के विचार स सहमति प्रकट करते हुए घोषणा की कि कृपिप्रधान देश दस्तकारो और हस्तशिल्पियो के देश की अपेक्षा सदैव पिछडा रहेगा। देश की आर्थिक कठिनाइयो का सर्वोत्तम समाधान मृतप्राय भारतीय उद्योगो का पुनरुद्धार तथा पश्चिम के आधुनिक उद्योगो का अपनाना है। इससे कृपि म श्रम का आधिक्य कम होगा और देश सपन्न बनेगा।[105]

जी० वी० जोशी न जमीन पा लेने की अस्वस्थ और अत्यधिक प्रतियोगिता के लिए कृपि पर बढ़ते भार को उत्तरदायी ठहराया। उनके अनुसार इस प्रतियोगिता का दुष्परि-

णाम यह हुआ है कि धरती के लगान गगनचुंबी हो गए हैं, धरती को छोटे छोटे टुकड़ा मे बाटना पड़ा है और किसान की धरती सुधारने की आकाक्षा क्षीण हुई है।[196] इसके अतिरिक्त कृषि पर जनसख्या के बढ़ते भार न बेकारी बढ़ाई है और लाखो को जबरदस्ती निकम्मा बना दिया है अथवा दूसरे शब्दो म इसने देश की आर्थिक शक्ति को विनाशात्मक रूप से बेकार कर दिया है। उनकी सगणना के अनुसार आधी स अधिक ग्रामीण जनता वास्तव मे उपयुक्त काम के अभाव का शिकार थी।[197] अतएव उन्होने फालतू और बकार जनसख्या को समुचित काम जुटाने के लिए अद्भुतीय उद्योगो के विकास की सिफारिश की। उन्होने अपना मत प्रकट करते हुए कहा कि श्रम के नए अवसरो को जुटाने के रूप मे वतमान अस्वस्थ और असामान्य दबाव म किसान जितना ही अधिक मुक्त होगा उतनी ही अधिक उसकी कायस्थिति भाररहित होगी और सफलता के अधिक अच्छे अवसर उस उपलब्ध होंगे।[198] उन्होने इस बात पर भी बल दिया कि जब तक भारत एकमात्र कृषि उद्योग पर निभर है, हमारी आर्थिक कठिनाइया का मूल अछूता ही रहगा।[199] तिलक के केसरी ने 18 जून 1901 तथा 11 नवंबर 1902 के अको म इन दोनो धारणाओ की पुष्टि की।[00]

जी० सुब्रह्मण्य अय्यर ने भी 1903 मे प्रकाशित अपनी पुस्तक सम इकोनामिक आसपैक्टस आफ ब्रिटिश रूल इन इंडिया' म इसी विचारधारा का असदिग्ध अभिव्यक्ति दी। रूस के वित्तमत्री एम० डी० वित्ते के इस कथन स सहमति प्रकट करते हुए कि जब तक कोई भी देश विशुद्ध रूप से कृषिप्रधान देश बना रहेगा, तब तक वह समय समय पर आने वाले अकालो और सामान्य दरिद्रतापरक अभावो से मुक्ति नही पा सकेगा, अय्यर न आरोप लगाया कि इस सबध म भारत की स्थिति रूस से भी बदतर है। यहा की 80 प्रतिशत जनसख्या कृषि पर निभर है और शेष मजदूरी अथवा छोटे छोटे अनुत्पादक धधो पर आश्रित है। उन्होने लिखा कि जब तक देश की आर्थिक दशा की इस गभीर अव्यवस्था का उपचार नही किया जाता तब तक हजारो वर्षो की अवधि मे भी न यहा का किसान सपन्न बन पाएगा और न ही दूसरे वग समृद्धि प्राप्त कर सकेंगे। निर्धनता की इस चरम सीमा का निराकरण कभी नही हो पाएगा। अतएव देश का उद्योगीकरण देश की सपन्नता की अनिवाय शत है।[01]

संदर्भ

1 एकमात्र अपवाद 1899 का था और वह भी पजाब लड एलिएनेशन बिल पर प्रस्ताव के रूप म काग्रेस ने और बातो के साथ इस बात की भी सिफारिश की कि निजी किराया वसूली वाले जमीदारो के मामले म अनुचित रूप से किराय मे बढ़ोतरी रोकने की कुछ व्यवस्था की जानी चाहिए (प्रस्ताव II बी) जमीदारी पर काग्रेस की चुप्पी को ए० ओ० ह्यूम की पुस्तिका 'हिंटस आन ऐग्रीकल्चरल रिफाम इन इडिया मे की गई टिप्पणियो तीखी भत्सनाओ पूणत किराया वसूली करने वाले बेकार बिचौलिए आदि के सदभ म देखिए उनकी पुस्तिका

आन एग्रीकल्चरल रिफार्म इन इंडिया (कलकत्ता 1889 पृ० 3)

2 सोम प्रकाश 14 जून (आर० एन० पी० बग०, 19 जून 1880), नवविभाकर 12 जुलाई (वही 17 जुलाई 1880) वर्दवान सजीवनी 9 नवबर (वही 20 नवबर 1880), भारत बधु, 26 नव० (आर० एन० पी० पा० एन० 2 दिसबर 1880), साधारणी 15 मई (आर० एन० पी० बग०, 21 मई 1881) केरल मित्रन, 30 अप्रल (आर० एन० पी० पी० एम०, मई 1881), हिंदी प्रदीप अगस्त (आर० एन० पा० पी० एम० 3 सितबर 1881) इडियन स्पेक्टेटर 25 सितबर (आर० एन० पी० बब० 1 अक्तू० 1881) परिदर्शक, 1 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 14 जनवरी 1882) सोम प्रकाश 26 जून वही 1 जुलाई 1882), उत्कल दीपिका 15 जुलाई (वही 22 जुलाई 1882) प्रयाग समाचार 11 दिसबर म प्रकाशित लेख (आर० एन० पा० पी० एन०, 14 दिस० 1882) साधारणी 7 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 13 जनवरी 1883) समय 28 मई (वही 2 जुलाई 1883) सहचर 18 जुलाई (वही 28 जुलाई 1883), ग्रामवत प्रकाशिका 22 मार्च (वही 5 अप्रल 1884) समय 29 दिसबर 1884 (वही 3 जनवरी 1885) सहचर 6 मई (वही 16 मई 1885), सुरभि ओ पताका 9 दिस० (वही 18 दिसबर 1886) सजीवनी 14 जनवरी (वही 21 जनवरी 1892) प्रकृति 21 जनवरी (वही 28 जनवरी 1892) सजीवनी 11 फरवरी (वही, 18 फरवरी 189-), बगनिवासी 25 अक्तू० (वही 2 नवबर 1895) चार मिहिर 27 अप्रल (वही 9 मई 1896) केरल पत्रिका 16 नव० और केरल सचारी 20 नवबर (आर० एन० पा० एम० 30 नव० 1895) केरल चद्रिका 20 मार्च (वही 31 मार्च 1896) केरल सचारी 1 जुलाई (वही 15 जुलाई 1896) हिंदुस्तान 25 अगस्त (आर० एन० पा० एन० 31 अगस्त 1898) और आगे उल्लिखित समाचारपत्र और देखिए मराठा, 17 फरवरी 1884

3 बगाली 23 जनवरी 1892 भी देख

4 आर० एन० पी० बग० 29 जुलाई 1882

5 वही 21 जून 1884

6 वही 7 नवबर 1891

7 आर० एन० पा० एम० 24 जनवरी 1874

8 आर० एन० पी० एम० 31 मार्च 1896 तथा देखिए केरल पत्रिका 1 अगस्त 12 और 26 दिसबर (वही 15 अगस्त 31 दिसबर 1896)

9 वही 15 जुलाई 1896

10 दत्त पार्जेन्टरी इन बगाल पृ० 210-28

11 वही पृ० 46 और आगे

12 राय पावर्टी पृ० 179 200 इडियन फाइनान्सेज पृ० 39-40 55 57

13 जोशी पूर्वोक्त पृ० 870-94 900 01 904-05

14 वही पृ० 884

15 वही पृ० 351 2 तथा पृ० 412

16 एन० एन० अय्यर स्पीचेज ऐंड राइटिंग्स पृ० 250 4 सोम प्रकाश 14 जून (आर० एन० पा० बग०, 19 जून 1880) साधारणी 23 जन० (वही 29 जनवरी 1881) सोम प्रकाश 14 अगस्त (वही 19 अगस्त 1882) बगवित्तनगुप्ता 5 मार्च (आर० एन० पी० पी० एन० 15 मार्च 1883) एस० एन० बनर्जी स्पीचेज II पृ० 1९ 17 केरल पत्रिका निर्दिष्ट

(आर० एन० पी० एम० माच 1886) एच० ए० रहीम, रिप० आई० एन० सी०1890 प०55 वगनिवासी 25 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग०, 2 नवबर 1895) केरल पत्रिका 16 नवबर और 14 दिसबर (आर० एन० पी० एम० 30 नवबर और 31 दिसबर 1895) करल पत्रिका 4 जुलाई और 1 अगस्त (वही 15 जुलाई और 15 अगस्त 1896) हिंदुस्तान 25 अगस्त (आर० एन० पी० एन० 31 अगस्त 1898) राय पावर्टी पृ० 217 273 मालवीय स्पाचेज प० 266-8 रिप० आई० एन० सी० 1900 प० 98 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव II (बी०)

17 रानाडे एसज प० 30 1 327 जोशी पूर्वोद्धत प० 878 84 दत्त पीछ अध्याय 9 म पाद टिप्पणी 116 तथा सी० पी० ए० प० 482 ओपन लेटस प० 18 74 8 मे तथा जे० एन० गुप्ता पूर्वोद्धत प० 349

18 जोशी पूर्वोद्धत प० 365 6

19 आर० एन० पी० बब० 8 अक्तूबर 1881

20 आर० एन० पी० बग० 29 जुलाई 1882 तथा देखिए सोम प्रकाश 27 नवबर (वही 2 दिसबर 1882)

21 वगाली 19 फरवरी 1881 सोम प्रकाश 14 जून (आर० एन० पी० बग० 19 जून 1880) सोम प्रकाश 27 नवबर (वही 2 दिस० 1882) भारत मिहिर 22 जनवरी (वहा 2 फरवरी 1884) तथा देखिए आगे पाद टिप्पणी 71 यहा यह उल्लेखनीय है कि किरायेदारो के स्थाई बन्दोबस्त की माग को सवप्रथम 1831 म राजा राममोहन राय न हा मुखरित किया था अमित सेन नोटस आन बगाल रिनेसा (कलकत्ता द्वितीय सस्करण 1957) प० 12 बी० बा० मजूमदार पूर्वोद्धत प० 67 9 सोम प्रकाश ने अपने 24 जुलाई 1882 के अक में अपन दष्टिकोण क समथन म राममाहन राय का मत उद्धत किया था (आर० एन० पी० बब० 29 जुलाई 1882)

22 आर० एन पी० बग० 26 माच 1887 वगवासी 16 दिसबर (वही 23 दिस० 1893)

23 आर० एन० पी० बब०, 22 अक्तूबर 1881

24 विशेष रूप से देखिए मराठा 27 जुलाई 1890 और ए बी० पी० 20 फरवरी 1899

25 इस सबध म राष्ट्रवादी विचारधारा की शून्यता का उपर ध कारण कदाचित यह हा सकता है कि विभिन्न प्रातो के स्वदेशी पत्रा के सवान्दाताओ ने इस सबध म अपक्षित प्रतिवेदन हा न भज हो यहा इस तथ्य की ओर हम अवश्य निर्देश करना चाहग कि हमन जितने भी राष्ट्रवादी पत्रो और पत्रिकाओ का उनकी मूल भाषा म तथा साथ ही साथ राष्ट्रवादिया के लखो और भाषणो का अध्ययन किया है उनसे हम इस परिणाम पर हा पहुचे हैं कि ये सब तत्कालीन राष्ट्रवादी नेताओ की इस विषय म वचारिक गहराई और रुचि क अभाव के ही परिचायक हैं साथ ही यह निष्कष निकालना भी गलत और अनुचित न हागा कि यदि सवाददाताओ ने व्यापक तथा प्रबल दष्टिकोण के सवाद भज होते तो विषय की गभीरता का देखते हुए पत्र-पत्रिकाओ द्वारा उनकी उपेक्षा कदापि सभव न होता

26 सी ई० बकलैंड बगाल अडर दी लेफ्टिनेंट गवनर (कलकत्ता 1901) खड II प० 705 812 3 इलबट एल० सी० पी० 1883 खड XXII प० 77 8 स्ट्रैची इडिया (1903) प 424 जमीदारो द्वारा किसानो के दमन के लिए सरकारी रिपोट के अवतरण देखिए जिन्हें पावती चरण राय न अपन ग्रथ दि रट क्वश्चन इन बगाल (कलकत्ता 1883) प० 122 और आग म पुनरुद्धत किया है

27 बक्लैंड पूर्वोद्धृत खंड I, पृ० 544-8, खंड II पृ० 631-2, 636-5.

28 वही, खंड II पृ० 702, स्ट्रेची इंडिया (1903) पृ० 425-6

29 बक्लैंड पूर्वोद्धृत, खंड II पृ० 704-05 813

30 इनवट एल० सी० पी० 1883 खंड XXII पृ० 80-3

31 वही पृष्ठ 84-8

32 वही पृष्ठ 100-126

33 बक्लैंड पूर्वोद्धृत खंड II पृष्ठ 809

33 A वही पृष्ठ 811 2 और 1885 का अधिनियम VIII

34 देखिए 1885 के अधिनियम की धारा-49

35 लायल लाइफ आफ दि मोरक्विस आफ डफरिन ऐंड एवा (लंदन 1905), खंड II पृ० 80

36 बक्लैंड पूर्वोद्धृत खंड II पृ० 816

37 जरनल आफ ईस्ट इंडिया एसोसिएशन खंड XV संख्या 3 1883 पृ० 191

38 जे० एन० गुप्ता पूर्वोद्धृत पृ० 101-03 पर आर० सी० दत्त और ए० पी० मैक्डोनल

39 27 जून 1881 को इंडियन एसोसिएशन द्वारा प्रेषित ज्ञापन बागल पूर्वोद्धृत परिशिष्ट पृ० I, II XIV पर 1879-80 का इंडियन एसोसिएशन का प्रतिवेदन ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन के 25 अगस्त 1881 के अंक में उद्धृत इंडियन एसोसिएशन का 29 अक्तूबर 1883 का विज्ञापन इंडियन एसोसिएशन का 1883 का प्रतिवेदन पृ० 15 और आगे एस० एन० बनर्जी स्पीचेज II 6-11 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 28 अक्तूबर 9 16 दिसंबर 1880 19 मई 16 जून 18 अगस्त 1881 बंगाली 24 जुलाई 14 21 अगस्त 4 सित० 9 अक्तू, 13 नव० 11 18 दिस० 1880, 8 15, 29 जनवरी 3 फरवरी 17, 24 31 मार्च 7 अप्रैल 1 नवंबर 1884 समालोचक 27 फरवरी (आर० एन० पी० बंग० 6 मार्च 1880) सोम प्रकाश 9 अगस्त (वही 14 अगस्त 1880) साधारणी 15 अगस्त (वही, 21 अगस्त 1880) नव विभाकर 10 जनवरी (वही 22 जन० 1881) पत्रिका 6 फर० (वही 19 फरवरी 1881) साधारणी, 13 मार्च (वही 26 मार्च 1881) सुधाकर 14 मई (वही 21 मई 1881) बंगवासी 11 नवंबर (वही 18 नवंबर 1882) साधारणी 24 दिस० (वही 30 दिस० 1882) इंडियन मिरर 31 मार्च (वी० ओ० आई०, अप्रैल 1883), ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 9 16 23 अप्रैल (वही मई 1883) और 5, 21 जुलाई (वही जुलाई 1883) बंगवासी 7 जुलाई भारत मिहिर 17 जुलाई प्रतिनिधि 12 जुलाई साधारणी 24 जून, ग्रामवार्त्ता प्रकाशिका 14 जुलाई संजीवनी 7 जुलाई (वही जुलाई 1883), माहेश 23 जुलाई मध्यस्थ [illegible] (वही 30 अगस्त 1883), सहचर 28 मार्च (आर० [illegible] [illegible]० बंग०, 31 मार्च [illegible] बंधु 31 मार्च प्रभाती 3 अप्रैल (वही, 7 अप्रैल [illegible] 15 जून [illegible] . 1883) संजीवनी, 11 अगस्त बंगवासी [illegible] 25 अगस्त [illegible] सित०, आलोक [illegible] 14 सितंबर (वही 22 सि [illegible] प्रकाशिका [illegible] नव० 18[illegible] ग्रामवार्त्ता प्रकाशिका, 10 नव [illegible] 7 दिस० प्रजा 4 दिस० [illegible] 22 दि[illegible] 188[illegible]

10 अप्रल (वही 30 अप्रल 1884), सजीवनी 16 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 23 फरवरी 1884), ग्रामवत प्रकाशिका 16 फरवरी प्रतिकार, 22 फरवरी (वही 1 माच 1884)

40 इसी प्रकार इस पत्र ने 19 फरवरी 1881 के अक मे दढतापूवक लिखा राष्ट्र का गठन किससे होता है ? क्या ब्रिटिश इडियन एसोसिएशन के कुछ सौ सदस्या स ? अथवा मुफस्सिल मे मिलने वाले कुछ हजार जमीदारो से ? अथवा सकडो हजारो कलकत्तावासियो से ? राष्ट्र तो भ्रापडी मे निवास करता है वस्तुत बगाल की यह गूगी कृषक जनता ही है जिससे वास्तव मे राष्ट्र का गठन होता है इसी प्रकार अन्य सबल मान्यताओ के लिए देखिए बगाली, 14 अगस्त 13 नवबर 1880 15 जनवरी 1881 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 9 दिसबर 1880 25 अगस्त 1881 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज II प० 1 3 20 साधारणी 15 जुलाई (आर० एन० पी० बग०, 28 जुलाई 1883), सजीवनी 11 अगस्त (वही 25 अगस्त 1883) बगाल पब्लिक ओपीनियन 20 दिसबर 1883 (वी० ओ० आई० 15 जनवरी 1884)

41 इडियन एसोसिएशन का 1879 80 का चतुथ वार्षिक विवरण 25 अगस्त 1881 के ब्राह्मा पब्लिक ओपीनियन मे उद्धत किसानो के प्रतिनिधि होने की हैसियत से ही एसोसिएशन ने बगाल सरकार को 27 जून 1881 को किरायेदारी कानून पर एक ज्ञापन भेजा बागल पूर्वोद्धत परिशिष्ट ग म उद्धत और दूसरा ज्ञापन 29 अक्तूबर 1883 को भजा (इडियन एसोसिएशन का 1883 का वार्षिक विवरण) प० 15 और आग

42 बागल पूर्वोद्धत प० 50 53-4 70-1 90 और परिशिष्ट प० 1 बगाली 8 जनवरी 5 12 फरवरी 2 अप्रल 14 28 मई 1881 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 20 जनवरी 10 फरवरी 1881 इडियन एसोसिएशन का पाचवा वार्षिक विवरण 4 माच 1882 के बगाली म उद्धत, ए० बी० पी० 25 जून 1885

43 बागल पूर्वोद्धत, पृ० 53 54, 71, ए० बी० पी० 25 जून 1885

44 बागल पूर्वोद्धत, प० 72 3 78 इडियन एसोसिएशन के 1885 मे पाचवें वार्षिक विवरण मे इस सदभ मे कहा गया इस समय एसोसिएशन बडी सक्रियता से ग्राम सघो के निर्माण मे जुटी हुई है शक्ति के प्रदशन के लिए आयोजित किए जाने वाले राजनीतिक प्रदशनो की सफलता के लिए लोगो की विपुल सख्या के सघो की बडी भारी आवश्यकता है यह तथ्य जब हमारे सामने आता है कि हमारा आदोलन थोड से शिक्षित बाबुओं तक सीमित है तो हमारे मन मे बडी ही *कसक पदा होती है एसोसिएशन ने इस कसक अथवा कलक को मिटाने का सकल्प कर लिया* है (उसी मे उद्धत, प० 90) तथा देखिए बगाली, 4 मार्च 1882

45 और देखिए मराठा 10 अप्रल 7 सितबर 1884

46 वी० ओ० आई० मार्च 1883 और आर० एन० पी० बब 31 माच 1883 इडियन स्पेक्टेटर 24 जुलाई (*आर० एन० पी० बब 30 जुलाई 1881*) और 1 अप्रल तथा 1 जुलाई (वी० ओ० आई० अप्रल और जुलाई 1883) भी देखें

47 नेटिव ओपीनियन ने बाद मे अपनी स्थिति बदल ली और बिल का विरोध करना प्रारभ कर दिया देखिए उसका दिनाक 11 नवबर 1883 का अक

48 बाबे क्रानिकल 25 फरवरी (वी० ओ० आई० माच 1883) ट्रिब्यून 7 अप्रल (वही अप्रैल 1883) रास्त गोफतार, 4 नवबर (वही नव० 1883) जामेजमशेद 20 दिसबर 1883 बाबे क्रानिकल 30 दिसबर 1883 गुजराती समाचार 1 जनवरी (वही 15 जनवरी 1884) केसरी 16 माच (वही मार्च 1885)

49 रानाडे एसेज पृ० 275 7

50 स्पीचेज II पृ० 170 तथा जे० एन० गुप्ता पूर्वोद्धृत पृ० 50 99 103

51 उदाहरणार्थ भारत मिहिर 17 अगस्त ढाका प्रकाश, 22 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 28 अगस्त 1880) भारत मिहिर 14 सित० (वही 25 सित० 1880), बिहार बंधु 9 16 23 सितंबर (वही 2 अक्तूबर 1880) साम प्रकाश 3 जनवरी (वही 8 जनवरी 1881) ढाका प्रकाश 16 जनवरी (वही 22 जनवरी 1881) बिहार हेराल्ड 13 मार्च (वी० ओ० आई०, मार्च 1883) इण्डियन क्रानिकल 21 28 मई मिरर 3 10 17 जून (वही जून 1883) चारु वार्ता 2 9 जुलाई (वही जुलाई 1883) उत्कल दीपिका 30 दिसंबर 1882 (आर० एन० पी० बग० 20 जनवरी 1883) उत्कल दर्पण 21 जनवरी (वही 10 फरवरी 1883) चारु वार्ता 5 फरवरी (वही 17 फरवरी 1883) साम प्रकाश 27 अगस्त (वही 1 सितंबर 1883) 10 सितंबर (वही 22 सितंबर 1883) ढाका प्रकाश 11 नवंबर (वही 17 नवंबर 1883), इण्डियन क्रानिकल 22 29 दिसंबर 1884 (वी० ओ० आई० जनवरी 1885) नवविभाकर 9 मार्च (आर० एन० पी० बग० 14 मार्च 1885) वी० एन० माडलिक स्पीचेज पृ० 636 7 640-1 645

52 वी० ओ० आई० जनवरी 1885 तथा देखिए ए० वी० पी० 3 मार्च 1880 7 दिसंबर 1882 19 मार्च 1885 आनंद बाजार पत्रिका 23 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 4 सित० 1880) 12 फरवरी (वही 17 फरवरी 1883) तथा देखिए कविवचन सुधा 26 मार्च (आर० एन० पी० पी० एन० 5 अप्रैल 1883) यह उल्लेखनीय है कि 1883 के पट्टेदारी टेनेंसी बिल पर रानाडे के प्रहार का यही आधार था रानाडे की आशंका यह थी कि इस बिल में एक वर्ग के दूसरे वर्ग के बीच हस्तक्षेप की सरकार को अधिक शक्ति प्राप्त है जिसका दुरुपयोग वह वर्ग-संघर्ष को जन्म देने और बढ़ाने में कर सकता है (एसेज पृ० 276) तथा देखिए पृ० 283-4

53 ए० बी० पी० 22 नवंबर 1883 आनंद बाजार पत्रिका 20 जून (आर० एन० पी० बग० 5 जुलाई 1883) और 21 जुलाई (वही 26 जुलाई 1881) दक्षिण शिवाजी 8 फरवरी (वी० ओ० आई० 15 फरवरी 1884)

54 ए० बी० पी० 10 मार्च 1881 21 मार्च 1884 19 मार्च 1885 आनंद बाजार पत्रिका 14 मार्च (आर० एन० पी० बग० 26 मार्च 1881) ट्रिब्यून (वी० ओ० आई० फरवरी 1883) तथा आग 61 3 पाद टिप्पणियों में उद्धृत

55 ए० बी० पी० 27 29 नवंबर 1883 मराठा एण्ड ओरीएंटल 29 नव० 6 13 दिस० (वी० ओ० आई० दिस० 1883 दर्पण 24 नव० 15 दिसंबर 1883 समय 26 नवंबर आनंद बाजार पत्रिका 26 नवंबर (आर० एन० पी० बग० 1 दिस० 1883) नवविभाकर 3 दिसंबर (वही 8 दिसंबर 1883) भारत मिहिर 11 दिस० (वही 22 दिस० 1883) इण्डियन स्पेक्टेटर 2 दिसंबर मिरर 25 नवंबर इण्डियन मिरर 27 नवंबर इण्डियन हेराल्ड 27 नव० भारत मिहिर 27 नव० नवविभाकर 26 नवंबर (वी० ओ० आई० दिसंबर 1883) मराठा और गुजराती मित्र 23 दिसंबर 1883 (वही 15 जनवरी 1884)

56 30 अगस्त का नवविभाकर में एक संवाददाता (आर० एन० पी० बग० 4 सित० 1880) भारत मिहिर 21 सित० 1880 (वही 1 अक्तू० 1881) बिहार हेराल्ड 27 मार्च 3 अप्रैल (वी० ओ० आई० अप्रैल 1883) इण्डियन क्रानिकल, [illegible] मई 1883) इण्डियन क्रानिकल 21 नव० 4 दिस० बिहार हेराल्ड 29 न[illegible] 1884) [illegible] 7 दिस० (आर० एन० पी[illegible] दिस० 1884)

57 ढाका प्रकाश 16 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 22 जनवरी 1881), बिहार हेराल्ड, 12 और 19 फरवरी (वी० ओ० आई० 29 फरवरी 1884)

58 बिहार बधु 9 16 23 सितबर (आर० एन० पी० बग० 2 अक्तूबर 1880) हिंदू रजिका 8 दिस० ढाका प्रकाश 12 दिस० (वही, 18 दिसबर 1880), भारत मिहिर 21 दिसबर 1880 (वही 1 जनवरी 1881) सोम प्रकाश 9 माच (वही 14 माच 1885)

59 30 अगस्त के नवविभाकर का एक सवाददाता (आर० एन० पी० बग० 4 सितबर 1880), भारत मिहिर, 7 सितबर (वही 18 सितबर 1880) उत्कल दीपिका, 23 जून (वही 7 जुलाई 1883), बिहार हेराल्ड 8 15 अप्रल (वी० ओ आई० 30 अप्रल 1884) साधारणी 7 दिसबर (आर० एन० पी० बग० 13 दिसबर 1884)

60 बिहार हेराल्ड 27 माच 3 अप्रल (वी० ओ० आई० अप्रल 1883) इडियन क्रानिकल 30 जुलाई (वही अगस्त 1883) बिहार हेराल्ड 11 18 माच (वही 31 माच 1884)

60-क ए० बी० पा० 3 और 10 माच 1881 21 28 फरवरी और 6 नवबर 1884 तथा 19 माच 1885 उसने अपने 3 माच 1881 के अक म यह भी निर्देश किया कि वस्तुत बगाल के गावो का बिचौलिया बाबू था जिसने परीक्षा पास कर रखी थी और जो लिखना पढ़ना और गर जता था

61 आनद बाजार पत्रिका 12 19 26 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 17 24 फरवरी 3 माच 1883 और वी० ओ० आई० फरवरी 1883) और 23 जुलाई (वी० ओ० आई० अगस्त 1883)

62 आनद बाजार पत्रिका 5 19 नवबर (आर० एन० पी० बग० 10, 24 नवबर 1883) 10 माच 18 अगस्त 22 सितबर (वही 15 माच 23 अगस्त 27 सितबर 1884) 3 अगस्त (वही 8 अगस्त 1885)

63 आनद बाजार पत्रिका 26 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 3 माच 1883) 10 माच 18 अगस्त (वही 15 माच 18 अगस्त 1884) तथा देखिए नवविभाकर 17 नवबर (वही 22 नवबर 1884)

64 बगवासी 17 नवबर (आर० एन० पी० बग० 24 नवबर 1882) भारत मिहिर 20 नवबर 11 दिसबर (वही 1 22 दिसबर 1883) नवविभाकर 25 फरवरी 7 नव० (वही 1 माच 22 नवबर 1884) साधारणी 25 मई (वही 31 मई 1884)

65 बगाली 24 जुलाई 18 दिसबर 1880 8 जनवरी 1881 24 31 माच 7 अप्रल 1883 22 29 नवबर 1884 इडियन एसोसिएशन का 27 जून 1881 का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल इडियन एसोसिएशन का 29 अक्तूबर 1883 का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल साधारणी 24 दिस० (आर० एन० पी० बग 30 दिस० 1882) मराठा 15 अप्रल 1883 इडियन मिरर 31 माच (वी० ओ० आई० अप्रल 1883) इडियन नेशन 22 अक्तूबर (वही नव० 1883) समय 10 सितबर (आर० एन० पी० बग० 22 सितबर 1883) सजीवनी 10 नवबर (वही 17 नव० 1883) इडियन नेशन 7 जनवरी (वी० ओ० आई० 31 जनवरी 1884) ग्रामवार्ता प्रकाशिका 16 फरवरी (आर० एन० पी० बग 1 माच 1884) सजीवनी 3 मई (वही 10 मई 1884) एस० एन० बनर्जी स्पीचेज II पृ० 15

66 बगाली 15 जनवरी 1881 इडियन एसोसिएशन का 27 जून 1881 का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल इडियन एसोसिएशन के तत्वावधान म विलिंगटन स्क्वेयर कलकत्ता म हुई पट्टेदारों के सम्मेलन की कार्यवाही बगाली 2 अप्रल 1881

111 इंदु प्रकाश, 4 अगस्त (आर० एन० पी० बब०, 9 अगस्त 1879), मराठा, 10 अप्रल 1881, रानाडे 'लैंड ला रिफाम ऐंड एग्रीक्लचरल बक्स' जे० पी० एस० एस०, अक्तूबर 1881 (खड IV सख्या 2), प० 39-40, जोशी पूर्वोद्धत, प० 350 356, 515 521 2 ए०बी० पी० 20 माच 1892 22 नव० 1898, राय पावर्टी पृ० 222 नदी इंडियन पालिटिक्स पृ० 116 118, सियालकोट पेपर, 16 नवबर (आर० एन० पी० पी०, 25 नव० 1899), दत्त सी० पी० ए० प० 478 बगाली 21 अगस्त 1901, एन० सी० केलकर एच० आर०, सितबर-अक्तूबर 1901 पृ० 243, जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 13 16 केसरी 18 फरवरी (आर० एन० पी० बब०, 22 फरवरी 1902)

112 और देखिए ज्ञान प्रकाश 5 सितबर बोध सुधाकर 28 अगस्त (आर० एन० पी० बम०, 7 सित० 1878), ज्ञान प्रकाश 30 सित० (वही 5 अक्तू० 1878) इंदु प्रकाश 4 11 अगस्त (वही 9 16 अगस्त 1879), इंदु प्रकाश 25 अक्तू० (वही, 30 अक्तूबर 1880), इंदु प्रकाश 5 सित० (वही 10 सित० 1881), रानाडे दि डक्कन एग्रीकल्चरिस्टस बिल, जे० पी० एस० एस० अक्तू० 1879 (खड II स० 2) पृ० 46 7 'लैंड ला रिफाम ऐंड एग्रीकल्चरल बक्स' पूर्वोक्त स्थल प० 37 55 और वेलाक पूर्वोद्धत पृ० 27, मराठा 24 सितबर 1882 इंडियन स्पेक्टेटर 8 अक्तूबर (आर० एन० पी० बब 14 अक्तूबर 1882) ए० बी० पी० 26 जून 1884 20 माच 1892 22 नवबर 1898, 1 2 जनवरी 1901 रहबरे हिंद 3 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 15 जुलाई 1893) जोशी पूर्वोद्धत प० 348-9 357 408 410 414 421 426 435 443-4 448 50 515 522 पी० मेहता पूर्वोद्धत प० 394 5 450 575 655 मालवीय पूर्वोद्धत प० 305 06 312-3 आई० एन० सी० 1895 का प्रस्ताव X, आर० एन० मुधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 111 आर० पी० करंदिकर वही प० 112, नदी इण्डियन पालिटिक्स, प० 131 2, गोखले स्पीचज, पृ० 1016-7 जी० एस० अय्यर विलबी कमीशन खड III प्रश्न 19024 रिप० आई० एन० सी०, 1900 प० 29 और ई० ए० प० 13 16 7 अखबारे आम 6 जनवरी (आर० एन० पी० पी० 14 जनवरी 1899) पजाब समाचार 18 माच (वही 25 माच 1899) ज्ञान अक्तूबर 1899 पृ० 67 नवबर 1899 प० 136 दत्त सी० पी० ए० प० 480, स्पीचज II प० 194 ई० एच० II पृ० 331, जी० के० पारिख बबई के दसवें प्रातीय सम्मेलन म अध्यक्षीय भाषण बगाली 22 मई 1900, सी० वाई० चितामणि इडिया ऐंड लाड कजन पूर्वोक्त स्थल पृ० 341 2 बगाली 21 अगस्त 1901 मद्रास स्टडड 2 अगस्त (आर० एन० पी० एम० 10 अगस्त 1901), रिव्यू आफ थाटस पजाब दा पीस ऐंड वार' एच० आर० अगस्त 1904 प० 196 और देखिए पोछे अध्याय 9 और आग भूमि स्वामित्व परिवतन' भाग I

113 एन० एम० घोष स्पीचज प० 88 रानाडे दि डक्कन एग्रीकल्चरिस्ट्स बिल पूर्वोक्त स्थल पृ० 50-1 'लैंड ला रिफाम ऐंड ऐग्रीकल्चरल बक्स' पूर्वोक्त स्थल पृ० 44 पुना सावजनिक सभा 6 सितबर 1879 का विरोधपत्र जे० पी० एस० एस० जनवरी 1890 (खड II स० 3) प० 106 सजीवनी 6 अगस्त (आर० एन० पी० बंग० 13 अगस्त 1898) ज्ञान अक्तूबर 1899 पृ० 67 नवबर 1899 प० 135 7 गोखले स्पीचज पृ० 1016 दत्त स्पीचज I प० 13-4 27 रिव्यू आफ थाटस—'पजाब इन पीस ऐंड वार' एच० आर० अगस्त 1904 पृ० 197

114 उदाहरणार्थ देखिए रानाडे दि डक्कन एग्रीकल्चरिस्ट्स बिल पूर्वोक्त स्थल, पृ० 45 नेह

रिफाम ऐंड ऐग्रीकल्चरल बवस' पूर्वोक्त स्थल पृ० 55, जोशी पूर्वोद्वत पृ० 346 7, 443 4 515 517 519 536, मेहता स्पीचेज पृ० 663 4 810 मालवीय स्पीचेज पृ० 308, आर० एन० मुधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 111, नदी इडियन पालिटिक्स पृ० 117 जी० एस० अय्यर ई० ए०, पृ० 13 6, दत्त ओपेन लेटस प० 78 स्पीचेज I पृ० 27 तथा देखिए पीछे अध्याय 9 और आग पाट टिप्पणी सख्या 152

115 आर० एन० पी० बब 22 फरवरी 1902

116 उदाहरणार्थ देखिए ज्ञान प्रकाश 30 सितबर (आर० एन० पी० बब 5 अक्तूबर 1878), एल० एम० घोष स्पीचेज, पृ० 88 आनद बाजार पत्रिका 7 सितबर (आर० एन० पी० बग० 18 सितबर 1880) इंदु प्रकाश 25 अक्तू० (आर० एन० पी० बब 30 अक्तूबर 1880) भारत बधु 26 नवबर (आर० एन० पी० पी० एन० 2 दिस० 1880) रानाडे मिस्टर वेडरबन ऐंड हिज क्रिटिक्स आन ए परमानेंट सटलमेंट फार दि डक्न जे० पी० एस० एस० जनवरी 1881 (खड III सं० 3) पृ० 17, नइ ला रिफाम ऐंड एग्रीकल्चरल बवस पूर्वोक्त स्थल, पृ० 41 50 मराठा 1 जनवरी, 12 19 फरवरी 1882 बगाली 2 दिस० 1882 भारत मिहिर 28 नवबर (आर० एन० पी० बग० 9 दिस० 1882) भारत मिहिर 28 नवबर (आर० एन० पी० बग०, 9 दिसबर 1882), भारत मित्र 22 नवबर (वही 1 दिसबर 1883) ए० बी० पी० 12 26 जून 1884 सजीवनी 19 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 26 अप्रल 1884) हिंदू पत्रिका 30 अप्रल (वही, 10 मई 1884) हिंदू 29 दिसबर 1884 राजा रामपाल सिंह रिप० आई० एन० सी० 1886 पृ० 65 6 कोहेनूर 13 15 17 अगस्त रावी 14 अगस्त आफ्ताबे पजाब, 16 अगस्त (आर० एन० पी० पी० 24 अगस्त 1889) हितवादी 25 जुलाई (आर० एन० पी० बग 1 अगस्त 1891) बगनिवासी 28 अगस्त (वही 5 सितबर 1891) बगाली 23 जनवरी 1892, हिंदुस्तान 26 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 28 अप्रल 1892) ताज उल अखबार 4 फरवरी (आर० एन० पी० पी० 18 फरवरी 1893), रहबरे हिंद 13 जुलाई (वही 22 जुलाई 1893) अखबारे आम 13 अक्तूबर (वही 21 अक्तूबर 1894), रहबरे हिंद 14 माच 20 जून (वही 23 माच और 6 जुलाई 1895) अखबारे आम 18 जुलाई (वही 27 जुलाई 1895) गमख्वारे हिंद 20 जुलाई (वही, 3 अगस्त 1895) जाशी पूर्वोद्धत पृ० 350 61 407-08 411 3 447 8 राय पावर्टी, पृ० 220 सहचर 13 माच सजीवनी 16 माच (आर० एन० पी० बग० 23 माच 1895), आर० एन० मुधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 15 तिलक रामगोपाल पूर्वोद्धत पृ० 145 सजीवनी, 19 माच 6 13 27 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 26 माच 13 20 अगस्त 3 सितबर 1898) आर० एम सयानी एल० सी० पी० 1898 खड XXXVII प० 524, फीइनेक्स 5 अक्तूबर गुरखी 6 अक्तूबर (आर० एन० पी० बब० 6 अक्तूबर 1898), ताज उल अखबार 21 जनवरी (आर० एन० पी० पी० 4 फरवरी 1899) पसा अखबार 1 फरवरी (वही 18 फरवरी 1899) सियालकोट पेपर 8 अक्तू० (वही 28 अक्तूबर 1898) अल्मोडा अखबार 1 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 12 अप्रैल 1899) मराठा 8 अक्तूबर 1899 वाचा स्पीचेज प० 436 दत्त स्पीचज I प० 14 तेज बहादुर सप्रू एच आर० नवबर 1900 पृ० 36 प्रोसीडिंग्स आफ दि फस्ट नाथ अरकोट डिस्ट्रिक्ट कान्फ्रेंस हेल्ड आन 21 22 जुलाई 1900 पृ० 9 एन० जी० चदावरकर सी० पी० ए० पृ० 517 कमरी के 12 फरवरी 12 माच के सवाददाता (आर० एन० पी० बब 16 फरवरी 16 माच 1901) विक्ट

दूतन 4 मई (आर० एन० पी० एम० 4 मई 1901) इडियन मिरर, 28 सित० (आर० एन० पी० बग० 5 अक्तू० 1901) न्यू इडिया 25 नव० 1901 सी० वाई० चितामणि इडिया ऐंड लार्ड कर्जन पूर्वोक्त स्थल प० 341, पी० मेहता स्पीचेज प० 625, एम० आर० आर० अय्यर रिप० आई० एन० सा० 1903 प० 142, सा० सी० घोष वही, प० 144, गोखले स्पीचेज प० 111 329 1034 मालवीय स्पीचेज, प० 30

117 रिप० आई० एन० सी० 1899 प० 44

118 रानाडे एसेज प० 293 4, जोशी, पूर्वोद्धृत प० 419-20 439 447 8 519 21 आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 108 09, नदी इडियन पालिटिक्स, प० 116 7 एम० एन० बनर्जी मा० पा० ए० प० 698, बगाली 13 फरवरी 1892 सजीवनी 13 अगस्त (आर० एन० पी० बग 20 अगस्त 1898), इडियन स्पेक्टेटर 11 दिसबर 1898, पसा अखबार 1 फरवरा (आर० एन० पी० पी० 18 फरवरी 1899) सियालकोट पेपर 8 अक्तूबर (वही, 28 अक्तूबर 1899), इदु प्रकाश 9 अक्तूबर (आर० एन० पी० बव० 14 अक्तूबर 1899)

119 रानाडे दि डक्न ऐग्रीकल्चरिस्ट्स बिल पूर्वोक्त स्थल प० 49 50 आनद बाजार पत्रिका 7 सितबर (आर० एन० पी० बग० 18 सितबर 1880) ज्ञान प्रकाश 25 सित० (आर० एन० पा० बब, 30 सितबर 1882), इडियन स्पेक्टेटर 8 अक्तूबर 26 नवबर (वही 14 अक्तू० 2 दिस० 1882) ए० बा० पी०, 25 जनवरी, 1 फरवरी 1883 20 मार्च 1892 22 नवबर 1898 इडियन स्पेक्टेटर 29 जून (आर० एन० पी० बब 5 जुलाई 1884) जोशी पूर्वोद्धृत प० 343 एन० जा० चन्दावरकर सा० पा० ए० पृ० 517 प्रधान और भागवत पूर्वोद्धृत म तिलक प० 133 पी० मेहता स्पीचेज प० 656-7 जी० के० पारिख प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1901 खड XXXIX पृ० 314, डा० ग० दारे वही पृ० 325-6 वाचा सी० पी० ए०, प० 582 जी० एस० अय्यर ई० ग० पृ० 156

120 दुरनीय गाडगिल पूर्वोद्धृत प० 97 तथा कर्जन स्पीचेज II पृ० 29 सी० एम० रिवाज एन० सी० पी० 1899 खड XXXVIII पृ० 325 6 जा० हैमिल्टन इडियन डिबेटस 3 फरवरी 1901 लगभग 113

121 मराठा 6 मार्च 1881 7 मई 1882, अखबारे आम 6 नवबर (आर० एन० पा० पा० 17 नवबर 1894) और 6 जनवरा (वही 14 जा० 1899) विक्टोरिया पेपर 17 जुलाई (वही 5 अगस्त 1899) भारत मित्र 22 जनवरा (आर० एन० पी० बग० 27 जनवरा 1900), ए० बी० पी० 1 जनवरी 1901, बगरा 18 फरवरी (आर० एन० पा० बब 22 फरवरा 1902)

122. रानाडे दि डक्न ऐग्रीकल्चरिस्ट्स बिल ज० पी० एस० एस० अक्तूबर 18/9 (खड II स० 2) (यह लेख मूल रूप से सम्पा के नाम से दिया प्रकाशित हुआ था और मनकर के अनुसार इस अन्तिम रानाडे ने ही लिखा था लेख में इसे शामिल है जिससे इस सबध म मनकर का विचार असदिग्ध रूप से सत्य सिद्ध होता है) पूना सार्वजनिक सभा 6 सितबर 1879 का विज्ञापन जे० पा० एस० एस० जनवरी 1880 (खड II स० [illegible] का राज्य गुजार और सार- मित्र) आर० एन० [illegible] 26 जुलाई 1879), (वही 16 अगस्त 1879) जाम जमशे [illegible] 23 अगस्त [illegible]

123 रानाडे एसेज मा दि [illegible] पूर्वो [illegible]

124 इदु प्रकाश 22 जुलाई (आर० एन० पी० बब 27 जुलाई 1878) ज्ञान प्रकाश, 30 सितबर (वही 5 अक्तूबर 1878) गुजरात मित्र 29 दिसबर 1878 (वही 4 जनवरी 1879) अरुणोदय 27 जुलाई (वही 2 अगस्त 1879) इदु प्रकाश 4 अगस्त (वही 9 अगस्त 1879) नेटिव ओपीनियन 10 अगस्त (वही 16 अगस्त 1879) इदु प्रकाश 29 नवबर (वही, 4 दिसबर 1880), सुबोध पत्रिका, 5 दिसबर (वही 11 दिसबर 1880) मराठा 3 अप्रल 1881 3 फरवरी 1884 इदु प्रकाश 3 अप्रल (आर० एन० पी० बब 8 अप्रल 1882) शिवाजी 22 सितबर (आर० एन० पी० बब 30 सितबर 1882) इडियन स्पेक्टेटर 8 अक्तूबर (वही 14 अक्तूबर 1882), मराठा 15 अक्तूबर 1882, जनवरी 1883 व बा० आ० आई० म उद्धत समाचारपत्र

125 दि डक्न ऐग्रीकल्चरिस्टस एक्ट पूर्वोक्त स्थल प० 44

126 एसेज प० 327 और दि लड ला रिफाम ऐंड एग्रीकल्चरल बक्स पूर्वोक्त स्थल प० 42 45 6 49 53 पूना सावजनिक सभा का 6 सितबर 1879 का विरोधपत्र पूर्वोक्त स्थल प० 110 11 परवर्ती वर्षों मे बहुत सारे भारतीयो ने इसी प्रकार का भय प्रकट किया तथा निर्देश किया कि बिल साहूकार और कजदारो म झगडा पदा करन के लिए बनाया गया है और इसका परिणाम बहुत सारे मामलो मे किसानों की धरती के यथाथ रूप मे ही साहूकारो क हाथो म चले जान के रूप मे हुआ है अत उन्होने अधिक उदार राजस्व नीति की और किसान के ऋण के लिए वकल्पिक साधन की व्यवस्था की वकालत की नेटिव ओपीनियन 23 सितबर 1888, मराठा 4 अक्तूबर 1891 केसरे हिंद 28 अक्तूबर (वही 24 अक्तूबर 1891) गुजरात दपण 29 नवबर (वही 5 दिसबर 1891) जोशी पूर्वोद्धत पृ० 355 359-60 बी० आर० नातू रिप० आई० एन० सी० 1894 प० 38 इदु प्रकाश 7 मई (आर० एन० पी० बब 12 मई 1891) इडियन स्पेक्टेटर 13 मई (वही 19 मई 1894), एन० जी० चदावरकर सी० पी० ए० प० 509 10 517 8 पी० मेहता स्पीचेज प० 304-05

127 मराठा 5 जून 1881 24 सितबर 1882 4 अक्तूबर 1891 इदु प्रकाश 21 सितबर 1891 प्रकाशक 4 जनवरी काल 4 जनवरी (आर० एन० पी० बब 12 जनवरी 1901)

128 प्रमाण के रूप म देखिए भारत सरकार का 3 जनवरी 1894 का भारत सचिव को सप्रेषण होम (पब्लिक) प्रोसीडिंग्ज जनवरी 1894 प्रोग स 186 (ए) कडिका 28 जे० मौरी प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1900 खड XXXVIII पृ० 141 और वही 1901 खड XXXIX पृ० 179 84 जाज हैमिल्टन इडियन डिबटस 3 फरवरी 1901 लगभग 111 5 लड रेवियू पालिसी आफ दि गवनमट आफ इडिया 1902 कडिका 29 एरिक स्टोक्स दि इग्लिश युटिलिटेरियस ऐंड इडिया (आक्सफोड 1959) प० 138 39 रीस पूर्वोद्धत पृ० 319

129 जे० मौरी प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1900 खड XXXVIII पृ 141 जाज हैमिल्टन इडियन डिबटस 3 फरवरी 1901 लगभग 111 2 एम० एम० थाबन का 10 जनवरी 1902 को फबियन सोसायटी म भाषण स्टेटसमन 6 फरवरी 1902

130 इस दृष्टिकोण के विकास के इतिहास क लिए देखिए सी० एम० रिवाज एल० सी पी० 1899 खड XXXVIII पृ० 318 20 1857 और 1880 मे सरकारी क्षेत्र म इस विषय पर मतभेद के लिए देखिए रानाडे एसेज पृ० 294-324

131 1900 का अधिनियम XIII

132 सी० एम० रिवाज पूर्वोक्त स्थल, पृ० 325 7, बजन, स्पीचेज I पृ० 124-5 स्पीचेज II पृ० 28 9 34

133 1901 का बबई अधिनियम IV ज० एम० मौंटी प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1901 खड XXXIX पृ० 186, जोशी, पूर्वोद्धत पृ० 532 539 545

134 रानाड, लड ना रिफाम ऐंड डेग्रावल्वरन बवस पूर्वोक्त स्थल पृ० 32 एमेज पृ० 325-7 आई० एल० सी० 1895 का प्रस्ताव X 9 नव० 1895 को पूना सावजनिक सभा द्वारा लार्ड एलगिन को सम्बोधन ज० पी० एस० एस०, जनवरी 1896 (खड XVIII स० 3) पृ० 11 दत्त सी० पी० ए० पृ० 478 और स्पीचेज II पृ० 36

135 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव II इडियन स्पेक्टेटर 8 अक्तूबर इदु प्रकाश 9 अक्तूबर (आर० एन० पी० बब 14 अक्तू० 1899) हिंदुस्तानी, 20 दिसबर (आर० एन० पी० एन०, 26 दिसबर 1899) इडियन स्पेक्टेटर जुलाई 1900 केसरी 30 अक्तूबर (आर० एन० पी० बब 3 नव० 1900) बगाली 8 नवबर 1900 7 अक्तूबर के अक म हिंदू ने तथा 8 अक्तूबर 1889 के अक म मराठा न बिल का निन्दा ता नहा की परतु उस निरथक घोषित किया

136 बिल के समथका के लिए दखिए सिविल एड मिलिट्री गजट 4 अक्तू० (आर० एन० पी० पी०, 21 अक्तू० 1899), पसा अखबार 4 नवबर (वहा 18 नवबर 1899), रफीके हिंद 18 नव० (वही 25 नवबर 1899) रफीक हिंद 3 माच 28 अप्रल 9 जून 8 सितबर 3 नवबर (वही क्रमश 10 माच, 5 मई 30 जून 15 सितबर 17 नवबर 1900) गमख्वारे हिंद 27 जनवरी (वहा 3 फरवरी 1900) विरोधियो क लिए देखिए ट्रिब्यून 7 अक्तू० (आई० एस० यो० ओ० आर्० 22 अक्तूबर 1899) बगाल 31 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 12 अगस्त 1899) सियालकोट पपर 8 अक्तूबर (वही 28 अक्तूबर 1899) विक्टोरिया पेपर 4 नवबर (वही 18 नवबर 1899) पजाब समाचार 18 नवबर (वही 25 नवबर 1899) दोस्त हिंद, 2 माच विक्टोरिया पेपर 5 माच (वही 10 माच 1900) सियालकोट पपर 8 अप्रल (वहा 14 अप्रल 1900) पब्लिक गजट, 24 अक्तूबर (वही 3 नवबर 1900) पजाब के दो कांग्रेसी न्हाआ मुरलीधर और कन्हैयालाल ने काग्रस अधिवशन म बिल का विरोध किया देखिए रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 45-7

137 आर० एन० पी० पी० क्रमश 18 अगस्त और 3 नवबर 1900

138 वही 24 नवबर 1900 इसी प्रकार 22 अगस्त 1900 क अक म विक्टोरिया पेपर भी अपनी पिछली स्थिति म पलट गया और सशोधन बिल का समथन करने लगा आर० एन० पी० पी० 8 सित० 1900

139 हावर्ड पूर्वोद्धत पृ० 71 एच० मार्टी पूर्वोक्त खड 1 पृ० 424

140 मराठा 30 जून 7 14 जुलाई 1901 हिंदू 31 जुलाई 1901 ए० बी० पा० 26 अगस्त 1901 आर० एन० पा० बब 1 8 22 जून 1901 म प्रतिबिम्बित समाचारपत्र तथा दक्षिण जुलाई अगस्त और सितबर 1901 क आर० एन० पा० बब

141 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 439-44, 512 54 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 641-6 651 712 गोखले स्पीचेज पृ० 1017-43 जा० क० प्रोसि० प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1901 खंड XXXIX पृ० 191 5 312-9 डा० ए० खरे बना पृ० 319-28 डन्या और मालवन पूर्वोद्धत म लिखा प 132 3 बाबा सा० पा० ए० पृ० 569-70 एल० सा० बयबर दि रीरोट सैट ल बिल्मेशन इन बाब एल० आर०, सितबर-अक्तूबर 1901 पृ० 242

और आगे तथा देखिए दत्त स्पीचेज II पृ० 136 138 और इंग्लैंड में रहने वाले भारतीयों के सम्मेलन की ओर से दादाभाई नौरोजी आर० सी० दत्त और म० हरनामसिंह द्वारा हस्ताक्षरित ज्ञापन दत्त, स्पीचेज II पृ० 141 9 में पुनः उद्धृत

142. प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवर्नर आफ बाम्बे 1901 खंड XXXIX पृ० 367 8

143 पूना सार्वजनिक सभा का 6 सितंबर 1879 का विरोधपत्र पूर्वोक्त स्थल पृ० 110 आर० एन० मुधोलकर, रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 110 रहबर 1 मार्च (आर० एन० पी० एन० 10 मार्च 1897) आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव II इंडियन स्पेक्टेटर 8 अक्तूबर इंदु प्रकाश 9 अक्तू० (आर० एन० पी० बंब 14 अक्तूबर 1899) पैसा अखबार 1 फरवरी (आर० एन०पी०पी०, 18 फरवरी 1899) वकील 31 जुलाई (वही 12 अगस्त 1899) विक्टोरिया पेपर 4 नवंबर (वही 18 नवंबर 1899) सियालकोट पेपर 16 नवंबर (वही 25 नवंबर 1899) इंडियन एसोसिएशन की लाहौर की उपसमिति का प्रतिवेदन, ट्रिब्यून 25 नवंबर में पुनः उद्धृत (वही 9 दिसंबर 1899) केसरी 30 अक्तूबर (आर० एन० पी० बंब 3 नवंबर 1900) जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 444 515 544 गोखले स्पीचेज पृ० 1032 3 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 674 686 जी० वे० पारिख पूर्वोद्धृत पृ० 192 3 डी० ए० खरे पूर्वोक्त स्थल पृ 325 सी० वाई० चिंतामणि इंडिया ऐंड लार्ड कर्जन एन० आर० मई 1901 पृ० 340-1 मराठा 14 जुलाई 1901 अहमदाबाद टाइम्स व सारे न्दि 26 मई गजराती 26 मई (आर० एन० पी० बंब 1 जून 1901) इंदु प्रकाश 20 जून (वही 22 जून 1901) मालवीय स्पीचेज पृ० 310, 317

144 रहबर 1 मार्च (आर० एन० पी० एन० 10 मार्च 1897) विक्टोरिया पेपर 4 नवंबर (आर० एन० पी० पी० 18 नवंबर 1899) पंजाब समाचार 18 नवंबर सियालकोट पेपर 16 नवंबर (वही 25 नवंबर 1899) इंडियन एसोसिएशन लाहौर की उपसमिति का प्रतिवेदन पूर्वोक्त स्थल भारत हित 2 मार्च (आर० एन० पी० पी० 10 मार्च 1900) दत्त सी० पी० ए०, पृ० 477 आर्थेन वेटन पृ० 78 स्पीचेज II पृ० 36 ई० एच० II पृ० 471 487 494 मुधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 47 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 444 मालवीय स्पीचेज पृ० 317

145 रानाडे लैंड लॉ रिफार्म ऐंड ऐग्रीकल्चरल बैंक्स पूर्वोक्त स्थल पृ० 32 3 पूना सार्वजनिक सभा का लार्ड एलगिन को संबोधन 9 नवंबर 1895 पूर्वोक्त स्थल पृ० 11 आर० एन० मुधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 109-10 मुधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 45

146 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 444 513, 515 522 530-1 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 643-4 654 658 9 680-5 692 3 697 702 704 गोखले स्पीचेज पृ० 1018 9 1038 9 वाचा सी० पी० ए० पृ० 569-70 केसरी 4 18 जून (आर० एन० पी० बंब 8 22 जून 1901)

147 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 531 543, पी० मेहता स्पीचेज पृ० 675 711 गोखले स्पीचेज पृ० 1037

148 रानाडे, एसेज पृ० 325-7 जे० एन० गुप्ता पूर्वोद्धृत में दत्त पृ० 168, इण्डियन स्पेक्टेटर 8 जुलाई 1900 जी० व० पारिख पूर्वोक्त स्थल पृ० 316

149 विक्टोरिया पेपर 4 नवंबर (आर० एन० पी० पी 18 नव० 1899) वकील 20 नव (वही, 2 दिस० 1899) इंडियन एसोसिएशन लाहौर की उपसमिति का प्रतिवेदन पूर्वोक्त स्थल

कहैदाराल, रिप० आइ० एन० सी० 1899, प० 46 एन० सी० केलकर, दि रीसेंट लड लेजिस्लेशन इन बाव, पूर्वोक्त स्थल, प० 247 दूसरी ओर गोखले ने शिकायत की कि बर्ड लजिस्लशन के तथाकथित शिकार इससे किसी भी रूप मे बुरी तरह स प्रभावित नहा होा (स्पीचज प० 1030 1037 8)

150 उदाहरणार्थ फिरोजशाह मेहता ने यह निर्देश करने के उपरात कि अगरेज अधिकारी देशी व्यक्तियों क साथ सपक बनाता है वह सहानुभूतिपूण होने पर भी अकेला पड जाता है जिज्ञासु होने पर भी अनभिज्ञ रहता है और जीवनपयत अजनबी और विदेशी ही बना रहता है दढतापूवक कहा कि मैं और मेरे साथी ही यह कहने का दावा कर सकते हैं कि हम किसानो के विचारो और भावो को व्यक्तिगत रूप से और सही तौर पर जानते तथा उनकी जानकारी का अनुभव रखते हैं हम ही उनके जीवन के ढग उनकी इच्छाओ और आकाक्षाओ उनके स्वभाव उनके पूवग्रहों और रुचियो आदि को जानत और समझते हैं अत कृषको के विचारो को ठीक ढग से प्रस्तुत करने क और उनका प्रतिनिधित्व करने के सही अधिकारी हम ही हैं न कि दूर द्वीप म रहने वाले अगरेज और कृषक जनता से दूर तथा अलग थलग अगरेज अधिकारी (स्पीचेज प० 6/0) तथा देखिए वही प० 640 1 652, 703 गोखले स्पीचेज प० 1029 30

151 एन० सी० केलकर दि रीसेंट लड लजिस्लशन इन बाबे' पूर्वोक्त स्थल प० 244 तथा आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सा० 1895 प० 111 मराठा 8 अक्तूबर 1899 30 जून 7 जुलाई 1901 हिंदू 7 अक्तूबर 1899, इदु प्रकाश 9 अक्तू० (आर० एन० पी० बब 14 अक्तू० 1899) इडियन स्पेक्टेटर 28 अक्तू० 1900 जोशी पूर्वोद्धत प० 443 447 512 5 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 304 दत्त स्पीचेज II प० 135 6 सी० वाई० चिंतामणि 'इडियन पॉलिटिक्स' पूर्वोक्त स्थल प० 340-2, गुजराती 2 जून (आर० एन० पी० बब, 8 जून 190) बगाली 21 अगस्त 1901 मालवीय स्पीचज प० 313 4

152 जोशी पूर्वोद्धत प० 448 515 22 544 पी० मेहता स्पीचेज प० 663-4 676 7 जी० के० पारिख पूर्वोक्त स्थल पृ० 193 318 मालवीय स्पीचेज पृ० 308 तथा देखिए पीछे पादटिप्पणी सं० 114

153 उदाहरणार्थ जी० एस० अय्यर ने टिप्पणी की यदि सरकार यह समझती है कि लगान इतना कम है कि इससे ग्रामीण ऋणग्रस्तता अम विलासिता और भारी रोग को बढ़ावा मिलता है तो सरकार के लिए रास्ता खुला है वह लगान म इतनी अधिक वद्धि की घोषणा कर दे कि किसान बचारे को अपनी खेती से आजीविका ही न मिल सके और उस इस प्रकार सभी के लिए ऋण लेने से मुक्ति मिल जाए सरकार भविष्य म और अधिक नरमी बरतने के लिए जब तब वचन देते रहे हैं उनको वचनबद्ध क्यो करती है ? (ई० ए० प० 13-4) आर० सी० दत्त न सरकार पर पुरानी परपरा के जमीदारो की प्रवृत्तियो को दोहराने का आरोप लगाया रियासतदारो को इतना चूसा कि वे दूर दूर हो गए गरीब आदमी क्या स बदतर हो जाए' (स्पीचज II प० 194-5) तथा पी मेहता स्पीचज प० 656-7

154 डा० ए० आर किर पर पूना सावजनिक सभा का 6 सितबर 1872 का विरोधपत्र पूर्वोक्त स्थल प० 110 आर० पी० करदिकर रिप० आइ० एन० सी० 1895 पृ० 112 3 मराठा 8 अक्तू० 1899 हिंदू 7 अक्तूबर 1899 गंगा समाचार 7 अक्तूबर (आर० एन० पी० पी० 28 अक्तूबर 1899) सिविल मिलिटरी गेजट 16 नवबर 1 रिप० (वही 25 नवबर, 9 f प० 1899) भारत मित्र 2 मार्च (वही 10 मार्च 1900) मद्रास रिप० आई० ए० सी० 1899 पृ० 45 जोशी

पूर्वोद्धत, पृ० 440 443-4, 450 गोखले स्पीचज, पृ० 1019 सी० वाई० चितामणि इन्डिया ऐंड लार्ड कर्जन पूर्वोक्त स्थल प० 341 2 मराठा 30 जून 7 जुलाई 1901 इदु प्रकाश, 20 जून (आर० एन० पी० बब 22 जून 1901) एन० सी० केलकर दि रीसेंट लैंड लेजिस्लेशन इन बांबे, पूर्वोक्त स्थल पृ० 243-4, मालवीय स्पीचेज पृ० 305-06 312-4

155 सरकार द्वारा भूमि का अधिकार न पाने पर भी किसान सरकारी लगान माग की पूर्ति आसानी से कर सकता है, इसका अनुमान अथवा ज्ञान होने पर सरकार उसे स्वामित्व का अधिकार न दे यह एक बात है तथा किसान द्वारा प्राप्त भूमि के स्वतंत्र व्यापार के अधिकार का अपना अबुद्धिमत्ता हठधर्मिता और फिजूलखर्ची आदि के कारण दुरुपयोग करने पर सरकार द्वारा उस अधिकार का छीना जाना दूसरी बात है दूसरी स्थिति में सरकार का पग न्यायसगत हो जाता है

156 बबई भूराजस्व बिल पर अपने भाषण में समीक्षा के इस रूप का स्पष्ट अभिव्यक्ति गोपालकृष्ण गोखले ने की उन्होंने यह घोषणा की कि यदि बिल वास्तव में साहूकारों के बुरा तरह शिकार बने हुए किसानों को किसी प्रकार की राहत दे सकता है तो मैं यह कहना चाहूंगा कि इस उपाय के विरुद्ध कितना भी कुछ क्यों न कहा गया हो उससे उन किसानों के पक्ष में तो यह लाभ ही पहुचाएगा उन्होंने अपना यह दृढ मत अभिव्यक्त किया यह कहना असभव है कि बिल इस प्रकार से कुछ भी कर सकता है (स्पीचेज प० 102) तथा देखिए वही प० 25 1022-4 1036-40 दत्त सी० पी० ए० प० 460 ओपेन लेटर्स पृ० 78, एन० जी० चन्दावरकर सी० पी० ए०, प० 519 20 हिंदू 7 अक्तूबर 1899 सियालकोट पेपर 16 सितबर (आर० एन० पी० पा० 6 अक्तूबर 1900) मुरलीधर रिप० आई० एन० सा० 1899 प० 45 जोशी पूर्वोद्धत प० 444 512 514 5 530 541 2 544 सी० वाई० चिंतामणि इंडिया ऐंड लार्ड कर्जन पूर्वोक्त स्थल प० 340-1 मराठा 14 जुलाई 1901 केसरी हिंद 26 मई गुजराती 26 मई (आर० एन० पी० बब 1 जून 1901), बगाली 21 अगस्त 1901 तथा देखिए पी० महता, स्पीचज प० 672.

157 और देखिए मराठा 30 जून 1901

158 गोखले स्पीचेज, प० 1039-40

159 और देखिए, वही प० 25 1017 रानाडे लैंड ला रिफार्म ऐंड एग्रीकल्चरल बैंक्स पूर्वोक्त स्थल पृ० 48 57 एसेज प० 256-7 एन० जी० चंदावरकर सी० पी ए० पृ० 520

160 रानाडे लैंड ला रिफार्म ऐंड एग्रीकल्चरल बैंक्स पूर्वोक्त स्थल प० 42 तथा देखिए मराठा 4 सित० 1881 1 जनवरी 12 फरवरी 1882 25 मई 1884 25 जनवरी 1885 प्रकाशक, 8 जनवरी कल, 4 जन० (आर० एन पी० बब 12 जनवरी 1901) केसरी 18 जून (वही 22 जून 1901) 10 17 नवबर (वही 14 21 नवबर 1903), जी० एस० अय्यर ई० ए० प 65-6

161 प्रमाण के रूप में देखिए पूना सावजनिक सभा का 6 सितंबर 1879 का विरोधपत्र पूर्वोक्त स्थल, प० 105-06 110-1 रानाडे दि डक्न एग्रीकल्चरिस्ट बिल पूर्वोक्त स्थल प० 49 मिस्टर वडरबन ऐंड हिज क्रिटिक्स आन ए परमानेंट सेटलमेंट फार दि डक्न पूर्वोक्त स्थल प० 17 लैंड ला रिफार्म ऐंड एग्रीकल्चरल बैंक्स पूर्वोक्त स्थल प० 42 46 53-7 एसेज प० 256-7 मराठा 1 जनवरी 1882 इदु प्रकाश और ज्ञान प्रकाश तिथिरहित (वी० आ० आई० जनवरी 1883) जोशी पूर्वोद्धत प० 355-60 आई० एन० सी० 1895 का प्रस्ताव X आर एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी 1895 प० 111 पी मेहता स्पीचेज प 395 673-4

दत्त सी० पी० ए० पृ० 490 और आगे स्पीचेज II पृ० 135-6 ई० एच० II पृ० 495 एन० पी० चंदावरकर, सी० पी० ए०, पृ० 520, ए० बी० पी०, 22 नवंबर 1898, सी० वाई० चिंतामणि, 'इंडिया एँड लार्ड कर्जन' पूर्वोक्त स्थल, पृ० 340-2, मालवीय स्पीचेज, पृ० 31-4 तुलनीय म्यूहर मकजी छूट की कोई पद्धति ऋणग्रस्तता को न तो समाप्त करेगी और न ही धन के रूप मे बढाएगी भूमिलगान को समाप्त कर देने का भी अपेक्षित प्रभाव रहा पड़ेगा (प्रासीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे खड XXXIX पृ० 353)

162 एल० एम० घोष स्पीचेज पृ० 88 सोम प्रकाश 31 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग०, 5 नवबर 1881) भारत बधु 26 नव० (आर० एन० पी० पी० एन० 2 दिस० 1880), 29 अप्रैल (वही 3 मई 1882) बगाली 10 सित० 1881, 2 दिस० 1882 माडर्लिंग पूर्वोक्त पृ० 131 9 रानाडे लैंड ला रिफार्म एंड ऐग्रीकल्चरल क्रेडिट पूर्वोक्त और एसज पृ० 40 65 256 नेटिव ओपीनियन 19 नव० (आर० एन० पी० बव 25 नव० 1882) सोम प्रकाश 20 नव० (आर० एन० पी० बग० 25 नव० 1882) भारत मित्र 28 नव० सुलभ समाचार 2 दिस० (वही 9 दिस० 1882) बगवासी, 16 दिस० (वही 23 दिस० 1882), भारत मित्र 22 नव० (वही 1 दिस० 1883) इंडियन मिरर ब्राह्म पब्लिक ओपीनियन दि हेराल्ड (बिहार) इन्डियन स्पेक्टेटर नेटिव ओपीनियन मराठा सभी तिथिरहित (बी० ओ० आई० जनवरी 1883) इंडियन मिरर 2 अगस्त, पीपुल्स फ्रेंड 4 11, 18 अगस्त, ट्रिब्यून 11 अगस्त इडियन स्पेक्टेटर 12 अगस्त इडियन इको 14 अगस्त इदु प्रकाश 6 अगस्त (बी० ओ० आई० अगस्त 1883), सजीवनी 19 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 26 अप्रल 1884) ग्रामवत प्रकाशिका 26 अप्रल (वही, 3 मई 1884), आनद बाजार पत्रिका 5 मई (वही 10 मई 1884) सन्चर 7 मई नवविभाकर 12 मई (वही 17 मई 1884) बगवासी 16 अगस्त (वही 23 अगस्त 1884) बबई समाचार 26 अप्रल (आर० एन० पी० बव 26 अप्रल 1884) ज्ञान प्रकाश 15 मई (वही 17 मई 1884) इडियन स्पेक्टेटर, 29 जून (वही 5 जुलाई 1884) हिंदू 29 दिस० 1884 3 फरवरी 1888 मराठा 25 जनवरी 1885 पजाबी अखबार 9 फरवरी (आर० एन० पी० पी०, 16 फरवरी 1887) हितवादी 10 दिस० (आर० एन० पी० एन०, 16 दिस० 1890) बगनिवासी 28 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 5 सित० 1891) गुजरात दर्पण 29 नवबर (आर० एन० पी० बव 5 दिस० 1891) आई० एन० सी० 1891 1896 1901 और 1902 के प्रस्ताव III XIII III और III क्रमश एन० मुन्नियार रिप० आई० एन० सी० 1891 पृ० 36-7 हितवादी 26 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 28 अप्रैल 1892) जोशी पूर्वोक्त पृ० 359 366 राव पार्टी पृ० 222 5 सजीवनी 26 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग० 2 नव० 1895) विक्टोरियन पेपर 9 फरवरी (आर० एन० पी० पी० 16 फरवरी 1895) आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 158 रेन्ड स्पीचेज I पृ 14 आर० एन० मधोलकर एन० सी० पी० 1897 खड XXXVI पृ० 191 रन्चर 1 मार्च (आर० एन० पी० एन० 10 मार्च 1897) पैसा अखबार 23 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 10 अगस्त 1898) अखबार आम 25 जुलाई (वही 6 अगस्त 1899) अल्माहा अखबार 1 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 12 अप्रैल 1899) ताज उल अखबार 21 जन० (आर० एन० पी० पी० 4 फरवरी 1899) विक्टोरिया पेपर 4 फरवरी (वही 18 फरवरी 1899) काठी 3 अप्रैल (वही 29 अप्रैल 1899) नवाब एम हुसैन रिप० आई० एन० सी० 1899

पृ० 49 जी० के० पारिख, 22 मई 1900 के बगाली मे उद्धत तेज बहादुर सप्रू एच० आर० नववर 1900 प० 36, रफीके हिंद 16 जून (आर० एन० पी० पी० 7 जुलाई 1900) सियाल काट पपर 16 सित० (वही 6 अक्तूबर 1900), अखबारे आम 10 नवबर (24 नवबर 1900) जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1900 पृ० 29 चित्तौड म 21 22 जुलाई 1900 को हुए प्रथम अरोटा सम्मेलन की कायवाही प० 9 पी० महता स्पीचेज प० 673 वाचा सी० पी० ए० प० 580-4 बी० के० बोस एल० सी० पी० 1901 खड XL प० 266 8 ए० बा० पी० 1 जन० 25 सित० 1901 हिंदू 23 माच 1901 बगाली 28 नवबर 1901 यू इडिया 2 दिसबर 1901 सी० वाई० चितामणि इडिया ऐंड लाड कजन पूर्वोक्त स्थल प० 341 इन्डियन डेली मेल, 24 नव० हिंदुस्तानी 27 नव० (आर० एन० पी० एम० 30 नववर 1901) इदु प्रकाश, 2 दिसबर क सरे हिंद 1 दिसबर सुधारक 2 दिस० (आर० एन० पी० बब 7 दिस० 1901) मराठा 16 नवबर 1902 श्रीराम एल० सी० पी० 1903 खड XLII प० 103

163 ए० बा० पी० 28 29 अक्तू० 1903 बगाली 28 अक्तू० 1903 मराठा 8 नव० 1903 आर० एन० पी० बग० 14 21 नवबर 1903 आर० एन० पी० बब 31 अक्तू० 7 14 नवबर 1903 आर० एन० पी० एम० 7 21 नव० 1903 मे उल्लिखित सभी समाचारपत्र एडवोकेट 1 नव० (आर० एन० पी० यू० पी० 7 नव० 1903) ट्रिब्यून 21 अक्तू० (आर० एन० पी० पी० 31 अक्तूबर 1903) पसा अखबार 8 नव० (वही 14 नवबर 1903) आई० एन० सी० 1903 का प्रस्ताव XII गोखले स्पीचेज प० 329 30 ए० मुखोपाध्याय और श्रीराम एल० सी० पी० 1904 खड XLIII क्रमश प० 389 और 401-02

164 रानाडे एसेज प० 61, 63 जोशी पूर्वोद्धत प० 359 60 366 हिंदू 29 दिस० 1884 नवविभाकर 12 मई (आर० एन० पी० बग० 17 मई 1884) सहचर 14 मई (वही 24 मई 1884) एस० मुदालियर रिप० आई० एन० सी० 1891 प० 37 राय पावर्टी प० 224 इदु प्रकाश 2 दिस० (आर० एन० पी० बब 7 दिस० 1901) गोखले स्पीचेज प० 332 3 मराठा 8 नव० 1903 एच० आर० माच 1904 प० 502-03

165 रानाडे लड ला रिफाम ऐंड ऐग्रीकलचरल बक्स पूर्वोक्त स्थल प० 49 51 एसेज प० 256 जोशी पूर्वोद्धत प० 367 गोखले स्पीचेज प 25 112 331 2

166 रानाडे के इस विषय पर विचार 1879 83 की अवधि म प्रकाशित पूना सावजनिक सभा के जरनल म लिखे चार लखो म प्रकट हुए थे देखिए दि ऐग्रेरियन प्राब्लम ऐंड इट्स सोल्यूशन ज० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) दि ला आफ लड सेल इन ब्रिटिश इडिया (1880) एसेज म लड ला रिफाम एड एग्रीकल्चरल बक्स जे० पी० एस० एस० अक्तू० 1881 (खड IV स० 2) और प्रशियन लड लेजिस्लेशन ऐंड दि बगाल टनेंसी बिल (1883) एसेज म

167 रानाडे एसज प० 275 81 283 288 9 यहा यह उल्लेखनीय है कि उ होने बगाल म वतमान बुराइयो को हटाने के लिए उपाय के रूप म कानूनी साधन की महत्ता को स्वीकार किया था

168 वही प 326

169 इस प्रकार बगाल के सबध म उन्होंने लिखा रयतवाडी भूमि पहले ही अधिकारो की जटिलता को सीमित करने की कल्पना करती है जबकि सभी वधानिक उपायों की प्रवृत्ति यथासभव जोता को अधिक से अधिक जिरायती अथवा खाम बनाने की होनी चाहिए कानूनो का रूप एसा होना चाहिए कि उनके अतगत भूमि का स्वामी सभी प्रकार के लाभ का तो भागी बने और

दत्त सी० पी० ए०, पृ० 480 और आगे स्पीचेज II पृ० 135-6, ई० एच० II पृ० 495, एन० पी० चन्दावरकर सी० पी० ए०, पृ० 520, ए० बी० पी०, 22 नवबर 1898 सी० वाई० चिंतामणि 'इंडिया ऐंड लार्ड कर्जन' पूर्वोक्त स्थल, पृ० 340-2, मालवीय, स्पीचेज पृ० 313-4 तुलनीय म्यूहर मकजी छूट की कोई पद्धति ऋणग्रस्तता को न तो समाप्त करेगी और न ही धन के रूप म बनाएगी भूमिलगान को समाप्त कर देने का भी अपेक्षित प्रभाव नही पडेगा (प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे, खड XXXIX पृ० 353)

162 एल० एम० घोष स्पीचेज पृ० 68 सोम प्रकाश, 31 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग० 5 नवबर 1881) भारत बधु, 26 नव० (आर० एन० पी० पी० एन० 2 दिस० 1880), 28 अप्रल (वही 3 मई 1882), बगाली 10 सित० 1881, 2 दिस० 1882, माडलिक पूर्वोक्त पृ० 131 8 रानाडे, लड ला रिफाम ऐंड ऐग्रीकल्चरल क्वस पूर्वोक्त और एसेज पृ० 40 65 256 नटिव ओपीनियन 19 नव० (आर० एन० पी० बब 25 नव० 1891) सोम प्रकाश 20 नव० (आर० एन० पी० बग०, 25 नव० 1882) भारत मिहिर, 28 नव० सुलभ समाचार 2 दिस० (वही 9 दिस० 1882) बगबासी, 16 दिस० (वही 23 दिस० 1882) भारत मित्र 22 नव० (वही 1 दिस० 1883) इंडियन मिरर अमृत पत्रिका ओपीनियन दि हेराल्ड (बिहार) इन्डियन स्पेक्टटर, नटिव ओपीनियन मराठा सभी तिथिरहित (बी० ओ० आई० जनवरी 1893), इडियन मिरर, 2 अगस्त पीपुल्स फ्रड 4 11 18 अगस्त ट्रिब्यून 11 अगस्त इडियन स्पेक्टेटर 12 अगस्त इडियन इको 14 अगस्त इं० प्रकाश 6 अगस्त (बी० ओ० आई० अगस्त 1883) सजीवनी, 19 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 26 अप्रल 1884) ग्रामवत प्रकाशिका 26 अप्रैल (वही 3 मई 1884), आनन्द बाजार पत्रिका 5 मई (वही 10 मई 1884), सहचर 7 मई नवविभाकर 12 मई (वही 17 मई 1884) बगवासी 16 अगस्त (वही, 23 अगस्त 1884) बबई समाचार, 26 अप्रल (आर० एन० पी० बब 26 अप्रल 1884) भारत प्रकाश, 15 मई (वही 17 मई 1884) इंडियन स्पेक्टटर 29 जून (वही 5 जुलाई 1884) हिंदू 29 दिस० 1884 3 फरवरी 1888, मराठा 25 जनवरी 1885 पजाबी अखबार 9 फरवरी (आर० एन० पी० पी०, 16 फरवरी 1889) हिन्दुस्तान 10 दिस० (आर० एन० पी० एन० 16 दिस० 1890), बगनिवासी 28 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 5 सित० 1891) गुजरात दपण 29 नवबर (आर० एन० पी० बब 5 दिस० 1891) आई० एन० सी० 1891 1896 1901 और 1902 के प्रस्ताव III XIII III और III क्रमश:, एन० मुदलियार रिप० आई० एन० सी० 1891 पृ० 36-7 हिन्दुस्तान 26 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 28 अप्रल 1892) जोशी पूर्वोक्त पृ० 359 376 राय पार्टी पृ० 222 5 ज्ञानोदय 26 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग० 2 नव० 1895) बिहारियार पेपर 9 फरवरी (आर० एन० पी० पी० 16 फरवरी 1895) आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 158 दत्त स्पीचेज I पृ० 14 आर० एम० सयानी एन० सी० पी० 1897 खड XXXVI पृ० 191 रफ्तार 1 मार्च (आर० एन० पी० एन० 10 मार्च 1897) पंजा अखबार 23 जनवरी (आर० एन० पी० पी० 10 जनवरी 1898) अखबार आम 25 जुलाई (वही 6 अगस्त 1899) अल्मोडा अखबार 1 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 12 अप्रैल 1899) ताज उल अखबार 21 जन० (आर० एन० पी० पी० 4 फरवरी 1899) बिहारियाँ पेपर 4 फरवरी (वही 18 फरवरी 1899) वही 3 अप्रैल (वही 22 अप्रैल 1899) नवाब एन० हुसैन रिप० आई० एन० सी० 1899

पृ० 49 जी० के० पारिख 22 मई 1900 के बगाली में उद्धत तेज बहादुर सप्रू एच० आर० नवबर 1900 पृ० 36, रफीके हिंद 16 जून (आर० एन० पी० पी० 7 जलाई 1900) सियाल कोट पेपर 16 जित० (वही 6 अक्तूबर 1900) अखबारे आम 10 नवबर (24 नवबर 1900) जी० एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1900 पृ० 29 चित्तौड में 21 22 जुलाई 1900 को हुए प्रथम मराठा सम्मलन की कार्यवाही, पृ० 9 पी० महता, स्पीचेज पृ० 673 वाचा सा० पी० ए० पृ० 580-4 जी० के० वाग एल० सी० पी० 1901 खड XL पृ० 266-8 ए० बी० पी० 1 जन०, 25 सित० 1901 हिंदू 23 मार्च 1901 बगाली 28 नवबर 1901 न्यू इण्डिया 2 दिसबर 1901 सी० वाई० चिन्तामणि 'इंडिया ऍड साइ कजन पूर्वोक्त स्थल पृ० 341 इंडियन डेली मेल 24 नव० हिंदुस्तानी 27 नव० (आर० एन० पी० एन०, 30 नवबर 1901), इदु प्रकाश, 2 दिसबर कैसरे हिंद 1 दिसबर सुधारक 2 दिस (आर० एन० पी० बब, 7 दिस० 1901) मराठा 16 नवबर 1002 श्रीराम एन० सी० पी० 1901 खड XLII पृ० 103

163 ए० बी० पी० 28 29 अक्तू० 1903 बगाली 29 अक्तू० 1903 मराठा 8 नव० 1903 आर० एन० पी० बग० 14 21 नवबर 1903 आर० एन पी० बब 31 अक्तू० 7 14 नवबर 1903 आर० एन० पी० एम० 7 21 नव० 1903 में उल्लिखित सभी समाचारपत्र एडवोकेट 1 नव० (आर० एन० पी० यू० पी० 7 नव० 1903) ट्रिब्यून 21 अक्तू० (आर० एन० पी० पी० 31 अक्तूबर 1903), पैसा अखबार 8 नव० (वही 14 नवबर 1903) आई० एन० सी० 1903 का प्रस्ताव XII गोखले स्पीचेज पृ० 329 30 ए० मुखोपाध्याय और श्रीराम एन० सी० पी० 1904 खड XLIII क्रमश पृ० 389 और 401-02

164 रानाडे एसज पृ० 61, 63 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 359 60 366 हिंदू 29 दिस० 1884 नवविभाकर 12 मई (आर० एन० पी० बग० 17 मई 1884) सम्बर 14 मई (वही 24 मई 1884) एन० मुदालियर रिप० आई० एन० सी० 1891 पृ० 37 राय पार्वती पृ० 224, इदु प्रकाश 2 दिस० (आर० एन० पी० बब 7 दिस० 1901) गोखले स्पीचेज पृ० 332 3 मराठा 8 नव० 1903 एच० आर० मार्च 1904 पृ० 302-03

165 रानाडे 'लैंड ला रिफार्म ऍड ऐग्रीकल्चरल बैक्स पूर्वोक्त स्थल पृ० 49 51 एसज पृ० 256 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 367 गोखले स्पीचेज पृ० 25 112 331 2

166 रानाडे के इस विषय पर विचार 1879 83 की अवधि म प्रकाशित पूना सार्वजनिक सभा के जरनल म लिखे चार लेखों म प्रकट हुए थे देखिए दि ऍग्रेरियन प्रॉब्लम ऍड इट्स सोल्यूशन जे० पी० एस० एस० जुलाई 1879 (खड II स० 1) दि ला आफ लैंड सेल इन ब्रिटिश इंडिया (1880) एसज म लैंड ला रिफार्म एड एग्रीकल्चरल बैक्स जे० पी० एस० एस अक्तू० 1881 (खड IV, स० 2) और प्रशियन लैंड लेजिस्लेशन एड दि बगाल टेनेंसी बिल' (1883) एसेज म

167 रानाडे एसज पृ० 275-81 283 288-9 यहा यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने बगाल में वर्तमान बुराइयों को हटाने के लिए उपाय के रूप म कानूनी साधन की महत्ता को स्वीकार किया था

168 वही पृ० 326

169 इस प्रकार बगाल के सबध म उन्होंने लिखा रयतवाडी भूमि पट्टे ही अधिकारों की जटिलता को सीमित करने की कल्पना करती है जबकि सभी वैधानिक उपायों की प्रवृत्ति यथासभव जोतों को अधिक से अधिक जिरायती अथवा खाम बनाने की होनी चाहिए कानूनों का रूप ऐसा होना चाहिए कि उनके अंतर्गत भूमि का स्वामी सभी प्रकार के लाभ का तो भागी बने और हानियों

स उसका कोई संबंध न हो (वही, पृ० 278)

170 वही पृ० 257 264, 287 289 तथा लैंड लॉ रिफार्म ऐंड एग्रीकल्चरल थीसिस पूर्वोक्त स्थल, पृ० 56-7

171 रानाडे पृ० 287 तथा देखिए "एग्रेरियन प्रॉब्लम ऐंड इट्स सोल्यूशन" पूर्वोक्त स्थल पृ० 17

172 दि एग्रेरियन प्राब्लम ऐंड इट्स सोल्यूशन पूर्वोक्त स्थल पृ० 17 उन्होंने आगे कहा "समृद्ध वर्गों को इस समय भूमि में किसी प्रकार की कोई रुचि नहीं है न उन्हें धरती से कोई पद मिल सकता है न प्रतिष्ठा और न ही वे जमींदारों के रूप में काम कर सकते हैं इस प्रकार के संपन्न वर्ग की अनुपस्थिति कृषि के सर्वतोमुखी विकास को अवरुद्ध कर देती है"

173 वही पृ० 18 तथा देखिए वही पृ० 10-1 13 14 19 और रानाडे पृ० 325 7

174 रानाडे पृ० 277 8

175 वही पृ० 267 70 273 5

176 दि एग्रेरियन प्राब्लम ऐंड इट्स सोल्यूशन पूर्वोक्त स्थल पृ० 16-7

177 रानाडे पृ० 326-7 उन्होंने यह भी लिखा "इस समय देश संक्रमण की अवस्था में है यह वर्तमान अर्धसामंती और पितृसत्तात्मक स्थितियों से गुजर रहा है वह इस समय अधिक व्यवस्थित और व्यवसायपरक स्थिति को अपनाने जा रहा है प्रवाह के विरुद्ध जाने वाला अथवा प्रवाह को अवरुद्ध करने वाला कोई आर्थिक कानून वर्तमान परिस्थितियों में सफल नहीं हो सकता सभी देशों में सभी प्रकार की—भूमिगत अथवा वस्तुगत संपत्ति का स्वामित्व कमसमझ अदूरदर्शी और अपने हस्तगत साधनों को संभालने और उनका सही रूप में उपयोग करने में असमर्थ लोगों के वर्ग के हाथों से निकल कर बुद्धिमान दूरदर्शी व्यावहारिक तथा दृढ़ निश्चयी वर्ग के हाथ में ही चला जाना चाहिए यह प्रकृति का नियम है इस संबंध में सरकार अधिकतम जो प्रयास कर सकती है वह यह है कि अपरिहार्य हस्तांतरण को मंथर नियमित रूप दे दे ताकि तात्कालिक कठिनाई दूर हो जाए" (वही पृ० 325-6) यह भी उल्लेखनीय है कि रानाडे का यह मत था कि साहूकार भूमि का कब्जा ब्याज की ऊँची दर वसूलने के लिए लेता था न कि कृषि व्यवसाय में उत्साहपूर्वक प्रयत्न होने के लिए स्वामित्व संभालता था (लैंड लॉ रिफार्म ऐंड एग्रीकल्चरल थीसिस पूर्वोक्त स्थल पृ० 39)

178 रानाडे पृ० 264 268 9 276 रानाडे ने बंगाल के जमींदारों को अपनी योजना के आदर्श जमींदार मानने में कोई गलती नहीं की परवर्ती भारतीय लेखकों ने आमतौर पर यह गलती की है दूसरी ओर उन्होंने देखा कि 19वीं शताब्दी में बंगाल की और 1911 के पूर्वार्ध में सुधार से पूर्व प्रजा की स्थिति वास्तव में हो गई समान थी क्योंकि बंगाल के जमींदारों और प्रजा के आसामी भूमिदारों में निरंकुश शोषण था प्रजा कानून के कारण है उन्होंने प्रजा भूमि प्रश्न का सावधानी के साथ अध्ययन किया था तथा उसका समर्थन किया था (वही पृ० 259)

179 वही पृ० 272-4

180 वही पृ० 287 तथा देखिए पृ० 290

181 दि एग्रेरियन प्राब्लम ऐंड इट्स सोल्यूशन' पूर्वोक्त स्थल पृ० 17

182 वही और रानाडे पृ० 325-7

183 रानाडे पृ० 274 5

[illegible]

185 उन्होंने आरोप लगाया कि वर्तमान प्रस्ताव केवल एक वर्ग के लाभ के लिए दूसरे वर्ग के अधिकारों को छीनता है इसे केवल समाजवादी अथवा साम्यवादी सिद्धांतों पर ही न्यायसंगत माना जा सकता है (वही प० 287) तथा देखिए प० 279 80 283 289 291

186 वही प० 280

187 वही प० 284

188 वही पृ० 285-6

189 वही प० 286-7

190 नेटीव आगरा, 23 अगस्त (आर० एन० पी० पी० एन० 25 अगस्त 1884) जे० एन० दास रिप० आई० एन० सी० 1890 प० 52 आइ० एन० सी०—1891 और 1892 के प्रस्ताव III और IX हिंदुस्तानी 8 नवंबर (आर० एन० पी० एन० 15 नवंबर 1893) विभुन्रजनी *25 नवंबर (आर० एन० पी० एम० 15 अप्रैल 1896) दत्त स्पीचेज I पृ० 161 सी० शंकरन* नायर सी० पी० ए० पृ० 385, स्वदेशमित्रन 17 मार्च (आर० एन० पी० एम० 31 मार्च 1900)

191 रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 53 उन्होंने यह सवाल उठाया क्या यह अच्छा नहीं होगा कि भूमि के सुधार में कुछ भी भाग न लेने में असमर्थ निर्धन किसानों को जोतों का स्वामी बनाने की अपेक्षा श्रमिक किसान बना लिया जाए ? क्या यह स्वयं उनके अपने लिए धरती के लिए तथा देश के लिए बेहतर नहीं होगा ?

191ए टान, अप्रैल 1900 पृ० 268

192 लैंड ला रिफार्म ऐंड एग्रीकल्चरल बैंक पूर्वोक्त स्थल प० 42 अपनी सामान्य गहरी पकड़ के अनुरूप रानाडे ने संबंध के दूसरे पक्ष पर भी विचार किया "इसमें सन्देह नहीं कि कृषि अनुसंधानों को दी गई प्रेरणाएं अंत में अपने आप दूसरे उद्योगों को संप्रेरित करेंगी और परिणाम में देश के साधनों का इस रूप में पूंजी परीय विकास होगा जिसका कि इस समय पूर्वानुमान नहीं किया जा सकता। (वही प० 53)

193 रानाडे एसेज पृ० 25 6 तथा मैत्रिन प० 207

194 तथा देखिए मराठा 23 जनवरी 13 फरवरी 17 जुलाई 1881 1 जनवरी 1882 25 मई 1884

195 राय पावर्टी प० 97 8

196 जोशी पूर्वोद्धृत, प० 350 353 870 2

197 वही पृ० 849 851 2

198 वही प० 368 तथा देखिए प० 852 3

199 वही प० 642

200 आर० एन० पी० बंब, क्रमशः 22 जून 1901 और 15 नवंबर 1902 तथा देखिए केसरी 10 17 नव० (आर० एन० पी० बंब 14, 21 नव० 1903), बारहवें बंबई प्रांतीय सम्मेलन का प्रस्ताव मराठा, 16 नवंबर 1902

201 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 64-6

लोकवित्त I

सभ्य प्रशासनवाला कोई ऐसा देश नहीं जहां पर इतना ज्यादा कराधान हो।

—जान स्ट्रेची

हां, कुछ वस्तुएं अभी ऐसी बची हैं जिन पर कर लगाया जा सकता है ताकि अंग्रेजों का विजय अभियान पूरा हो सके। ऐसी अवशिष्ट वस्तुओं में उल्लेखनीय हैं भारतीय लोगों की चमड़ी और उनका वायुमंडल। —केसरी, 31 जनवरी 1888

न्यायप्रिय सरकार द्वारा प्रशासित प्रत्येक देश में निर्धनों की अपेक्षा धनिकों पर ही अधिक मात्रा में कर लगाना उचित समझा जाता है क्योंकि यह धनी वर्ग ही पुलिस संगठन से, न्यायिक व्यवस्था की स्थापना से, रेल, तार आदि से लाभान्वित होता है परन्तु जिस देश का प्रशासन उच्च वर्गों के लोगों के ही हाथ में हो, क्या वे अपने आप पर कर थोपने की सलाह देंगे? —स्वदेशमित्रन्, 18 फरवरी 1888

समीक्षाधीन अवधि में भारत सरकार की औद्योगिक और शुल्क पद्धति संबंधी नीतियां तथा विनिमय समस्या के उपरांत भारतीय राष्ट्रीय नेताओं की आपत्ति का [illegible] बनने वाला तत्व था उसकी वित्त नीति। इस अवधि में भारतीय वित्त के निर्धारण [illegible] दुनिया में अंग्रेजी [illegible] के [illegible] के परिणामस्वरूप [illegible] पर [illegible] के आक्रमण की आशंका, नागरिक व्यय में भारी बढ़ोतरी, [illegible] मूल्य में अवमूल्यन [illegible] विकास पर ध्यान [illegible] तथा [illegible] सभी तत्वों के परिणामस्वरूप [illegible] में [illegible] द्वारा [illegible] की बढ़ोतरी का [illegible] लाद दिया जाना। यद्यपि कुछ [illegible] वर्षों में भारतीय वित्त सदस्य [illegible] का बजट प्रस्तुत करने में सफल हो [illegible] तथापि कुल मिलाकर ये वर्ष आर्थिक असुरक्षा, कष्ट तथा करों द्वारा [illegible] के [illegible] प्राप्त करने के [illegible] अधिकतर [illegible] ही रहे थे। [illegible] की बात नहीं कि [illegible] सभी [illegible] पृथक पृथक [illegible] से भारत के [illegible] की दुर्दशा का रोना रोते रहे तथा [illegible] जब कभी

प्रत्येक एम महत्वपूर्ण अधिनियम की जिसे उन्होंने जनता पर नए कर थोपने का, अनाव श्यक, निरथक तथा आल्याणकारी व्यय का तथा भारत और ब्रिटेन के सबधो म अयाय का उदाहरण समभा, परीक्षा की, निंदा की तथा उसके विरुद्ध लोकप्रिय आदोलन चलाया। प्रत्यक इस प्रकार के उदाहरण मे उन्होंने भारत म ब्रिटिश राज्य की प्रकृति और उद्देश्या के सबध म समुचित निष्कष निकालने की चेष्टा की।

कराधान

भारत सरकार के कुल राजस्व 1880 म 74 3 करोड के मुकाबले 1993 म 90 6 करोड और 1904 म 172 2 करोड तक पहुच गए।[10] परतु जहा तक अय बाता के साथ राज्य रलवे की कुल रलव वसूली, सिंचाई योजनाओ की वसूली तथा अय रला के खाता की विशुद्ध वसूली का सम्मिलित करने का सबध था, य अक विकृत रूप लिए हुए थ। इसके अतिरिक्त खात के एकक म परिवतन जसे कुछ और तत्वो न भी वर्षों तक वित्तीय आकडा की तुलनात्मकता का विकृत किया था।[11]

नागा पर राजस्व भार के सबध म ब्रिटिश अधिकारिया और भारतीय नताओ द्वारा परस्पर विरोधी मत प्रकट किए गए। बहुत सारे ब्रिटिश लेखको और अधिकारिया न सार सरकारी राजस्व का कराधान के परिमाणस्वरूप देखन पर प्रारंभिक आपत्ति की।[1] उदाहरणाथ उनम से कहुता न यह सिद्ध करने की चेष्टा की कि भूमि पर लगान सरकारी किराया था कर नहीं।[13] इसी प्रकार उन्होंने अफीम स मिलने वाले राजस्व का भी लोगा पर लगन वाला कर मानन स इन्कार कर दिया।[14] दूसरी ओर भारतीय लेखका न सरकारी राजस्व के स्रोतरूप लगभग सभी महत्वपूर्ण वस्तुओ का कर योग्य क रूप म वर्गीकरण किया। उदाहरणाथ दादाभाई नौरोजी न कर की परिभाषा इस प्रकार स की देश की कुल वार्षिक आय म स देश की सरकार अपन प्रशासन और सावजनिक ऋण आदि के लिए जो रकम लेती है, वह कर है।[15] शब्द के वतमान स्वीकृत अथ को ध्यान म रखत हुए भारतीय नताओ द्वारा विकसित परिभाषा को अपेक्षाकृत अधिक सही मानना उचित है।

ब्रिटिश प्रशासक प्राय इस बात को दृढ़तापूवक कहत रहे कि भारत पर बहुत हलके कर लगाए गए हैं और सर्वाधिक सभावना यही है कि यह विश्व भर म सबसे कम कर चुकाने वाला देश है। प्रमाण क रूप म भूतपूर्व वित्त सदस्य जान स्ट्रची न बडे विश्वास के साथ यह दावा किया 'विश्व म शायद प्रशासन वाला कोई भी देश इतना कम हलके कर चुकाने वाला देश है।[16] कर्जन भी इसी प्रकार की स्थिति से पूर्णत विश्वस्त था। जी० के० गोखले की इस धारणा का कि करदाता भारतीय जनता का कन्धा पूरी तरह से अधिक भार सह रहे हैं नकारते हुए कर्जन न 1902 म निर णयपूर्ण स्वर म टिप्पणी की यदि तुलनात्मक समस्या का किसी यूरोपीय रूप म सहन के लिए पेश किया जाए तो मुझे आशा है कि व राजस्व पद्धति क मामला म परिवर्तित विचारा के साथ ही शीघ्र रूप देश म लौटने के लिए वापस लौट आएगे।[17]

ब्रिटिश अधिकारियो का इस सबध म दृढ़ मत यह था कि कराधान की व्यावहारिक

प्रकार 1880 में रानाडे ने टिप्पणी की कि 'कराधान में और अधिक वृद्धि करना राजनीतिक पागलपन का परिचय देना होगा।'[9] 'अमृत बाजार पत्रिका' ने मत प्रकट किया कि एक सीमा होती है जिसके आगे कराधान असंभव सा हो जाता है और यह सिद्ध करने के कई प्रमाण उपलब्ध हैं कि भारत उस सीमा तक पहुंच चुका है। उसने 27 अगस्त 1885 के अंक में चेतावनी देते हुए लिखा 'जब विवेकशून्य शासक सीमा का अतिक्रमण करते हैं तो वे विद्रोह को निमंत्रण देते हैं। यदि लोग विद्रोह करने में अत्यंत अशक्त हैं तो प्रकृति स्वयं ही हस्तक्षेप करती है तथा अपने रोष का स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करती है। भारत में इस सीमा का अतिक्रमण हुआ है, इसका प्रमाण लगातार अकालों के रूप में देखा जा सकता है।' यहां तक कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन में भी कराधान पर बहुत तीखी आलोचनाएं हुईं। दादाभाई नौरोजी ने शासकों पर आरोप लगाया कि वह इस प्रकार ऊंचे और ऊंचे कर लगाए जा रहे हैं, जैसे निचुड़े हुए संतरे को और निचोड़ने की चेष्टा की जा रही हो। इस प्रकार वे शासक जनता के कष्टों और दुखों में वृद्धि कर रहे हैं।[10] इसके साथ ही तिलक के केसरी ने अपने 31 जनवरी 1888 के अंक में टिप्पणी की 'भारत में कोई भी वस्तु कराधान से मुक्त नहीं, यहां तक कि वृक्षों के पत्तों तक को कराधान का विषय बनाया गया है।' व्यंग्यपूर्ण प्रहार करते हुए केसरी ने सुझाव दिया हां अभी भी कुछ एक वस्तुएं बची हैं, जिन पर कर लगाया जा सकता है ताकि अंग्रेजों का विजय अभियान पूरा हो जाए। इन अवशिष्ट वस्तुओं में उल्लेखनीय है, भारतीय लोगों की चमड़ी और उनका धातुमत्ता।[11] 9 फरवरी 1899 के मराठा मित्र ने चेतावनी दी कि सरकार को यह बात अपने ध्यान में भली प्रकार धारण कर लेनी चाहिए कि गुस्सा दिलाए जाने पर एक निरीह गाय भी मालिक को फाड़कर टुकड़े टुकड़े कर सकती है अथवा स्वतः दुह जाने वाले दूध को पहले के उपरांत खाना यदि गाय के स्तनों से फिर दूध को दोहने की चेष्टा करता है तो उस ग्वाले को वह गाय दुलत्ती मार सकती है। लगभग विनाशात्मक स्वर में उसका यह भी कहना था कि झांसी की रानी, निजाम उल मुल्क, सिकन्दर शाह, नानासाहब, तात्या टोपे और अन्य अन्य श्रेष्ठ वीर योद्धा यद्यपि इतिहास के पात्र बन गए हैं तथापि उनकी तलवार आज भी विश्व के सामने घूम रही है तथा हमारी वीरता का प्रमाण प्रस्तुत कर रही है।' 1896 में कांग्रेस के अध्यक्ष भी बराबर इस तथ्य से सहमत और प्रभावित थे कि किसी भी नए कराधान को सहन करने की देश की शक्ति पूर्णतः समाप्त हो चुकी है।[12] वर्षों तक इसी प्रकार की विरोधी आवाजें और इसी प्रकार के मत बहुत सारे राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा प्रकट किए जाते रहे।[13]

भारतीय नेताओं की एक अन्य शिकायत यह थी कि देश में कराधान अन्याय ऊंचा और भारी ही नहीं है प्रत्युत निरंतर बढ़ता भी जा रहा है।[14] उदाहरणार्थ जी० वी० जोशी ने 1896 में हिसाब लगाया कि स्थल तथा अन्य व्यापारिक वस्तुओं का विस्तार होने पर भी और कराधान का भार 1853-4 और 1895-6 की अवधि में 35 प्रतिशत बढ़ा है।[15]

भारत में कराधान की भारी ऊंचाई प्रमाणित करने के लिए भी भारतीय नेताओं ने

अन्याय सरकारी कर्मचारियो द्वारा अपनाई गई विधि के समान आकडो को ही कसौटी बनाया परतु इस कसौटी का निर्धारण उन्होने अपने ढग से ही किया। उन्होंने यह स्वीकार किया कि स्वतत्र रूप से प्रति व्यक्ति कराधान की राशि कम थी परतु उनका तर्क यह था कि प्रति व्यक्ति आय को देखे बिना ही प्रति व्यक्ति से लिए जाने के स्वतत्र आकडो मे कराधान के परिमाण का निर्णय नही किया जा सकता। इस सबध म यहा प्रति व्यक्ति कराधान की राशि नही प्रत्युत इससे सबद्ध प्रतिव्यक्ति आय के अनुपात को दखना अधिक महत्वपूर्ण था। यदि भारत मे कराधान नीचा था तो राष्ट्रीय आय उससे भी अधिक नीची थी। भारतीय नताओ का कथन था कि इस सदर्भ मे दखे जाने वाले पर भारत म कराधान सचमुच ही अत्यत भारी और दबाने वाला सिद्ध होता है। दादाभाई नौरोजी इस तर्कपद्धति के मुख्य निर्माता थे। उन्होने 1871 म पूर्वी भारत के वित्तो के लिए नियुक्त प्रवरसमिति को प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन म इस तर्क पद्धति का प्रयोग किया था। उन्होने इस तथ्य को वाणी दी कि इग्लड म प्रतिव्यक्ति कराधान का परिमाण लगभग 8 प्रतिशत है जबकि भारत मे यह 16 प्रतिशत के लगभग है।[37] उन्होने तथा अन्य भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने अपना पक्ष सिद्ध करने के लिए सांख्यिकी प्रमाणो का वर्षो तक उपयोग किया। इस सबध मे यह उल्लेखनीय है कि उनके अको की सगणना म प्रतिशत मे भिन्नता आ जाती थी।[38]

कुछ भारतीय नेताओ ने अनुभव किया कि आय के साथ कराधान का यह औसत भी बोझ के भारीपन को सही रूप म और यथोचित ढग से प्रस्तुत नही कर पाता। उनका कथन था कि कुल मिलाकर कराधान का जनता की भुगतान की क्षमता के साथ सबधित करना चाहिए। एक निर्धन व्यक्ति स उसकी आय के एक निश्चित अनुपात को कर के रूप मे लेना एक बात थी और एक धनी व्यक्ति से उसकी आय के उसी अनुपात को कर के रूप मे लेना सर्वथा भिन्न बात थी क्योकि इससे निर्धन व्यक्ति के लिए तो जीवनस्तर बनाए रखने मे उस और अधिक कठिनता का सामना करना पडेगा। चिंतन की इस रूपरेखा की स्पष्ट और निश्चित अभिव्यक्ति दादाभाई नौरोजी के लेखो म देखने को मिली। उन्होंने राष्ट्रवादियो की स्थिति म प्रतीत होने वाले विरोधाभास के समाधान के लिए इस चिंतन पद्धति का प्रयोग इस प्रकार से किया कि भले ही यह मान लिया जाए कि प्रति व्यक्ति कराधान नीचा है फिर भी वह भारतीय लोगो के लिए कमरतोड है। उन्होने पूर्वी भारत के वित्तो स सबधित प्रवरसमिति को भेजे गए अपने प्रतिवेदन म इस तथ्य का सम्यक विश्लेषण इस प्रकार से किया

> इस तथ्य को भली प्रकार ध्यान मे रखना चाहिए कि एक हाथी के लिए एक टन वजन भी भारी नही परतु बच्चे को कुछ एक किलो भार ही कुचलने के लिए काफी है। कराधान के प्रतिशत से आसानी के साथ भार उठा सकने अथवा उस भार स कुचले जाने को नही मापा जा सकता प्रत्युत इस मापन के लिए उपयुक्त आधार है भुगतान के लिए आय के साधनो की प्रचुरता अथवा तुच्छता। आय के साधनो की प्रचुरता की स्थिति म भारी प्रतिशत के करो का सुविधा स भुगतान किया जा सकता है और आय के साधनो की सीमितता की स्थिति मे यह भार कठिनता स ही सहन

हो पाता है अथवा थोड़ा-बहुत क्लेश उत्पन्न करता है परंतु आय के साधनों की अपर्याप्तता की स्थिति में तो यह भार अत्यधिक कष्टदायक हो जाता है।[39]

उन्होंने अपने इस सूत्रबद्ध सिद्धांत को 'पावर्टी आफ इंडिया' लेख में दोहराया और बाद में अपने अन्य भाषणों आदि में इनका विस्तृत विवेचन किया।[40] 1896 में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष आर० एम० सयानी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में अत्यंत स्पष्ट शब्दों में दादाभाई के तर्क को दोहराया।[41]

दादाभाई ने जब इस चिंतनपद्धति का भारत पर प्रयोग किया तो उन्हें यह घोषणा करनी पड़ी कि भारत में कराधान का भार इंग्लैंड के कराधान के भार से दुगना ही नहीं अपितु दुखदायक भी है क्योंकि यह गरीबों से लिया जा रहा था।[42] इसी प्रकार आर० एम० सयानी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि भारत के संबंध में आय पर करों की औसत 16 प्रतिशत है और यद्यपि इंग्लैंड के संबंध में प्रचलित अनुपात के मुकाबले इसका अनुपात केवल 2½ गुना ऊंचा है तथापि वास्तव में यह परिमाण में उल्लेखनीय रूप से अत्यधिक भारी है और इस प्रकार सूचक अनुपात की अपेक्षा भारत इंग्लैंड से वास्तव में ही कहीं अधिक बुरी स्थिति में है।[43] के० टी० तैलंग, मदनमोहन मालवीय, गोपालकृष्ण गोखले, आर० सी० दत्त तथा कितने ही अन्य नेताओं ने भी इसी ढंग से देश की निर्धनता और कराधान भार में सहसंबंध जोड़ा।[44] 1896 में जी० वी० जोशी ने सर्वथा ठोस सिद्धांत प्रस्तुत किया कि जब तक कुल राष्ट्रीय उत्पादन में विकास नहीं होता वर्तमान कराधान में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं होनी चाहिए। इस संबंध में उन्होंने दावा किया कि कराधान बढ़ रहा है जबकि राष्ट्रीय उत्पादन का ह्रास हो रहा है।[45] दादाभाई नौरोजी और मदनमोहन मालवीय ने भी थोड़े भिन्न शब्दों में इसी तरह के वाक्य को दोहराया। उन्होंने जोर देकर इस तथ्य को दोहराया कि भारतीय अपेक्षाकृत ऊंचे कर देना भी प्रसन्नतापूर्वक उचित होगा, परंतु शर्त यह है कि इनका संबंध बढ़ती राष्ट्रीय आय के साथ होना चाहिए।[46]

अपने मंतव्य के समर्थन के लिए भारतीय नेताओं ने इस संबंध में अंग्रेज अधिकारियों के वक्तव्य प्रस्तुत किए जिनमें कहा गया था कि भारत सरकार ने सरकारी स्तर में भारत पर किसी प्रकार के कराधान का अवकाश हो नहीं छोड़ा है। अब स्थिति यह हो गई कि भारत में आर्थिक और राजनीतिक संकट लाए बिना किसी प्रकार का नया कराधान किया ही नहीं जा सकता।[47]

बजट में घाटे और लाभ के बजट पर विचार करते समय राष्ट्रवादियों ने इस तथ्य को प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया कि भारतीय जनता से आवश्यकता अथवा वास्तविकता से अधिक कर ऐंठे गए हैं।[48] 1902 में आवार बजट पर चर्चा में अपने भाषण का केंद्रीय विषय बनाते हुए गोपाल कृष्ण गोखले ने यह घोषित करते हुए भारत सरकार की वित्त नीति पर भारी प्रहार करना आरंभ किया कि ये लगातार अतिरेक दुगने रूप से और स्पष्ट रूप से यह सिद्ध करते हैं कि देश के लोगों की स्थिति और करों के बीच किसी प्रकार का भी व्यावहारिक संबंध नहीं है। उन्होंने यह आरोप लगाया कि अन्यायपूर्ण ढंग से बड़े ऊंचे परिमाण में जनता पर भारी करों का दबाव निर्धारित किया

गया है और उसे बनाए रखा जा रहा है। इस प्रकार एक ओर विपन्न राष्ट्र और दूसरी ओर भरपूर कोश के प्रत्यक्ष विरोध का सुविधापूर्वक विश्लेषण किया जा सकता है।[49]

राष्ट्रवादी नेताओं में से कुछ अर्थशास्त्रियों ने भी लोगों के विभिन्न वर्गों में कराधान के वितरण के प्रश्न पर विचार किया। 1880 के प्रारंभ में भारत सरकार के वित्त विभाग द्वारा कराधान के परिमाण के संबंध में विहित विस्तृत जांच-पड़ताल के निष्कर्ष के रूप में यह परिणाम सामने आया था कि भारत में कराधान का प्रमुख भार प्रधान रूप से अपेक्षाकृत अधिक निर्धन वर्गों पर ही पड़ता है।[50] राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों ने इस परिणाम के साथ पूर्ण सहमति प्रकट की और कराधान पद्धति की उसके प्रतिगामी चरित्र के लिए आलोचना की। उनके अनुसार कराधान पद्धति का प्रतिगामी चरित्र यह था कि इसकी प्रवृत्ति धनिकों की अपेक्षा निर्धनों पर अधिक भार डालने की थी। 1871 में दादाभाई नौरोजी ने जनता के अन्यान्य वर्गों की अपेक्षा किसानों से अधिक कर ऐंठने के लिए सरकार को आड़े हाथों लेते हुए व्यंग्यपूर्वक पूछा 'क्या इसका कारण यह है कि समृद्ध वर्ग आंदोलन का आश्रय ले सकता है और सरकार को अपनी बात मानने के लिए विवश कर सकता है जबकि गरीब मजदूर और खेतिहर यह सब कुछ नहीं कर सकते। क्या इसी कारण से यह उचित समझा गया है कि अन्यान्य वर्गों की अपेक्षा इस वर्ग को निचोड़ना आसान है?'[51] जी० वी० जोशी ने अप्रैल 1888 में अपने निबंध 'दि वर्मा डेफिसिट एंड दि एनहैंसमेंट आफ साल्ट ड्यूटीज' में इस प्रश्न की विस्तृत समीक्षा की। उन्होंने 'सम्पन्न जमींदारों और उसके धनिक मित्रों तथा चायबागान के स्वामियों को छूट देने वाली और निर्धनों पर भार डालने वाली कर नीति अपनाने के लिए वित्त सदस्य की भर्त्सना की।[52] उन्होंने कराधान पद्धति की विषमता पर दुःख प्रकट करते हुए कहा कि यह बड़े आश्चर्य की बात है कि इस पद्धति के अंतर्गत ब्रिटिश प्रशासन ब्रिटिश न्याय और ब्रिटिश शांति से अधिकाधिक लाभान्वित होने वाले सम्पन्न व्यक्ति तो कम टैक्स देते हैं जबकि लाखों, कम उपार्जन करने वाले निर्धन लोग अधिकतम कर चुकाते हैं। उन्होंने यह भी निर्देश किया कि कराधान के भार की विषमता एक वर्ग और दूसरे वर्ग के मध्य ही नहीं प्रत्युत नगरों में विभिन्न वर्गों के बीच और देहातों की साधारण जनता के बीच विद्यमान है।[53] इस संबंध में भावी कार्यवाही के लिए उन्होंने पथप्रदर्शक के रूप में सरकार को सलाह दी कि सर्वप्रथम वह सार्वजनिक कराधान के वितरण की विषमताओं के संशोधन और निवारण को अपने प्राथमिक कर्तव्य के रूप में स्वीकार करे।[54] उससे पूर्व 1886 में उन्होंने कराधान के निम्न सिद्धांत का उल्लेख किया था

> सभी वित्तीय विचार विमर्शों में व्यावहारिक वित्त विशेषज्ञ के लिए विचारणीय प्रश्न यह नहीं है कि सामान्य जनसंख्या पर कराधान का कुल बोझ भारी है अथवा हलका यह तो व्यावहारिक राजनीति का एक तत्व है। अर्थशास्त्री के लिए तो विचारणीय यह है कि सार्वजनिक भार को एक साथ लेते हुए यह देखना है कि उसका विभाजन समान रूप से और निष्पक्ष रूप से हुआ है अथवा नहीं (और) यह देखना है कि उसका भार सभी वर्गों पर न्यायसंगत और निष्पक्ष रूप से उनकी भुगतान क्षमता के अनुरूप पड़ता है अथवा नहीं?[55]

नमक कर मे वद्धि के बदले आय कर मे बढोतरी की वकालत करते हुए सुब्रह्मण्य अय्यर के स्वामित्ववाने तथा उनके द्वारा सपादित 'स्वदेश मित्रन' ने अपने 18 फरवरी 1888 के अक म जोशी जी के विचारो को इस प्रकार दोहराया

एक न्यायसगत सरकार द्वारा प्रशासित प्रत्येक देश मे निधनो की अपक्षा धनिको पर ही अधिक परिमाण मे कराधान करना उचित समझा जाएगा क्योकि धनी लोग ही लाभान्वित होते हैं परतु यदि किसी देश की सरकार ही उच्च वग के लोगो के हाथ मे है तो क्या वे अपने आप पर कराधान की मूखता करेंगे।[6]

'स्वदेशमित्रन' ने अपने 25 फरवरी 1888 वाले अगले अक मे यह सिद्धात प्रस्तुत किया कि केवल वही सरकार न्यायप्रिय सरकार कही जा सकती है जो निधन वर्गों को कष्टो से मुक्ति दिलाती है तथा उच्च और मध्यवग पर कराधान द्वारा अपने राजस्व की वसूली करती हैं।[57] इसी प्रकार 18 माच 1888 को पूना सावजनिक सभा के तत्वावधान म नमक कर के प्रति विरोध प्रकट करने के लिए हुए पूना के निवासियो के एक सम्मेलन न अपने ज्ञापन मे शिकायत की कि इस देश का निधन वग पहले से ही भारी करो के बोझ से दबा हुआ है जबकि उच्च वग के तथा अधिक समृद्ध लोग तुलनात्मक रूप मे छूट और राहत का आनद भोग रहे है।[58] पृथ्वीश चद्र राय भी कराधान के असमान परिमाण की आलोचना करन म पयाप्त उग्र थ और उन्होंन इस अपमाहृत बडा कलक बताया। नमक कर, आय कर तथा भूमि लगान का विस्तृत विश्लेषण करन के उपरात वह इस निष्कष पर पहुचे कि अतत दुव्यवस्थित वित्तो का सारा भार बेचार निधनो का ही उठाना पडता है।[59] बाद म 1903 म अपन बजट भाषण म गोखले ने भी यही मत प्रकट किया कि कराधान म प्रस्तावित किसी प्रकार की राहत अपमाहृत निधन वर्गों को ही मिलनी चाहिए क्योकि अपने साधनो की अपेक्षा वे ही राजकोष म वाछनीय स बहुत अधिक भुगतान का योगदान करत है।[60]

यह एक पयाप्त रोचक तथ्य है कि इस काफी कुछ क्रातिकारी दृष्टिकोण का अपने समय के अग्रणी भारतीय उद्योगपति जे० एन० टाटा का प्रबल समथन मिला। उन्होंने 1895 म 'लदन डेली क्रानिकल' को भेजे अपन पत्र म लिखा

मैं सदव इस मत का समथक रहा हू कि भारत म निधनो पर कराधान का बहुत ही भारी है और अच्छे खान पीन वग के समृद्ध लोगों पर यह भार अत्य हलका है। जिन लोगो का अपना जीवन और सपत्ति की सुरक्षा के लिए सरका सहायता की अपेक्षा रहती है उनके लिए कुछ भी भुगतान नहीं करना, जिन्हें सरकारी सहायता के अभाव म किसी हानि की आशका नहीं रहती यह ता सरकार के बदले जाने पर भी जिन्हें बाद अन्तर नहीं पडता उन लोगो को सरकारी के भुगतान के लिए अपन मात्रा तक की बलि चढानी पडती है।[61]

इस विचारधारा को राष्ट्रवादी विचारको के सभी वर्गों द्वारा लिए गए दृष्टिकोण की चर्चा हम नमक कर और आय कर के प्रति भारतीय राष्ट्रवादियो के दृष्टिको समीक्षा के सदभ म करेंग जहा यह दिखाया गया है कि वहा सार भारतीय रा इस मतव्य की पुष्टि की कि धनि भारतीय लोगो पर कराधान करना ही है ना

धनिकों पर कर लगाने चाहिए, निर्धनों पर नहीं ।[6]

कराधान के कारण हुआ अन्याय

भारतीयों के विचार में अत्यधिक करारोपण भारत की घोर निर्धनता के ही नहीं यहां तक कि प्रायः निरंतर पड़ने वाले अकालों के भी तात्कालिक और प्रमुख कारणों में से एक था। इस संबंध में राष्ट्रीय विचारधारा को दादाभाई नौरोजी ने 1880 में भारतीय अकाल आयोग के प्रतिवेदन में निहित कुछ विवरणों पर ज्ञापन में स्वर दिया गया। उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कि भारी करारोपण लाखों की भुखमरी और मौतों के लिए उत्तरदायी थे।[63] भारत के असंख्य राष्ट्रवादी जननेता तथा पत्रकार वर्षों तक इस दृष्टिकोण को दोहराते रहे।[64] अंततः 1896 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसे अपने एक मौलिक सिद्धांत के रूप में अपना लिया। उस समय कांग्रेस ने घोषणा की कि हाल के अकालों का कारण भारतीयों की घोर दरिद्रता थी और दरिद्रता लाने के अन्यान्य कारणों में प्रमुख थे अत्यधिक करारोपण तथा ऊंचे लगान।[65]

इससे भी अधिक रोचक तथ्य यह है कि कुछ भारतीय नेताओं ने और सर्वोपरि जी० वी० जोशी ने उपयुक्त तर्क के अतिरिक्त भारतीय उद्योग और भारतीय उद्यम की दृष्टि से भी ऊंचे करारोपण की निंदा करते हुए अपनी सूक्ष्म बुद्धि का परिचय दिया। उन्होंने घोषणा की कि ऊंचे करारोपण पूंजी निर्माण की प्रक्रिया को बाधित करते थे और इस रूप में देश के आर्थिक विकास को यदि पूर्णतः असंभव नहीं तो कठिन अवश्य बना रहे थे।

1888 में जी० वी० जोशी ने प्रथम इस बात पर जोर दिया कि राज्य द्वारा लगाए गए भारी कर मजदूरी की बढ़ोतरी और मजदूरी कोष के विकास में बड़े पैमाने पर हस्तक्षेप करते थे।[66] बाद में 1890 में उन्होंने अपने एक विस्तृत लेख 'इकोनामिक सिच्यूएशन इन इंडिया' में इस तथ्य को उजागर किया कि भारत में औद्योगिक श्रमिक को पीड़ित करने वाला एक क्लेश पूंजी की अपर्याप्तता थी जो अन्यान्य विषयों के साथ इस तथ्य का परिणाम थी कि भारतीयों की कुल आय में प्रथम तो बचतों का अवकाश ही कम रहता है और फिर हमारी कुल अर्जित आयों पर भारी कर लगाकर उन्हें और भी क्षीण कर दिया जाता है। उन्होंने संगणना की कि कुल राष्ट्रीय बचतों (कुल उत्पादन में से लोगों के जीवन निर्वाह पर होने वाले व्यय को घटा कर) की राशि प्रतिवर्ष 90 करोड़ रुपये थी, जिसमें से सरकार 50 करोड़ रुपये करों के रूप में ले लेती थी। इस प्रकार राष्ट्रीय वार्षिक बचतों का आधे से अधिक भाग न्यूनाधिक रूप से अधिकांशतः अनुत्पादक व्ययों की पूर्ति के लिए सरकारी कोश में चला जाता था। इससे स्पष्ट है कि हमारी औद्योगिक प्रगति को पीछे की ओर धकेलने वाला इससे अधिक बड़ा आर्थिक रोग और क्या हो सकता है?[67] गोपालकृष्ण गोखले ने 1902 में अपने प्रथम बजट भाषण में इन भावनाओं को प्रतिध्वनित किया। गोखले ने अपना मत प्रकट करते हुए कहा 'भारतीय वित्तों पर करारोपण का स्तर इतना अधिक निम्न होना चाहिए कि उससे राष्ट्रीय उद्योग की अबाधित गतिविधि और विकास के लिए यथासंभव अवकाश मिल सके।'[68]

तथ्यात्मक रूप से बहुत सारे भारतीय नेताओ ने भारत की विशिष्ट आर्थिक और राजनीतिक स्थितियो से सबधित सैद्धातिक नियम के स्तर पर निम्न कराधान की माग उठाई। यह माग 'अमृत बाजार पत्रिका' के 7 फरवरी 1871 के अक मे बडी स्पष्टता स अभिव्यक्त की गई। उसमे इस सरल कथन को निम्नलिखित रूप से अभिव्यक्ति दी गई

> लोगो पर कराधान स्वय लोगो द्वारा लगाया ही नही जाता और उनका साम्राज्य के वित्तो पर कोई नियत्रण भी नही है। उनकी चीखोपुकार कराधान मे कटौती के लिए हो सकती है न कि वृद्धि के लिए। हमारी विनम्र सम्मति मे ससदविहीन जनता के लिए कराधान म कटौती के लिए निरतर और सुदृढ माग करते रहना ही एकमात्र बुद्धिमत्तापूण नीति है।

1886 म जी० वी० जोशी ने बल देकर घोषणा की कि भारत म ब्रिटिश शासन की विशिष्ट स्थितियो के कारण राष्ट्र की भौतिक और नैतिक प्रगति के लिए सरकारी बोझा का यथासभव हलका होना आवश्य है।[69] जब 1898 के उपरात भारतीय बजटो मे निरतर बचत होनी प्रारभ हा गई, बहुत सारे भारतीय नेताओ ने करो मे छूट की माग की।[70] 1902 म सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने टिप्पणी की कि जब देश के सामान्य करदाता भूखा मरते किसान हो तो देश के शासका का उन प्रजाजना का कराधान मे छूट देना सर्वाधिक महत्वपूण उत्तरदायित्व बन जाता है।[71] 1905 06 के बजट पर भाषण करत हुए गोपाल कृष्ण गोखले ने निम्न कराधान के मामले को अत्यन्त स्पष्टता के साथ इस प्रकार प्रस्तुत किया

> सभी देशो मे यह वित्त का सवमान्य नियम है कि सरकारी करो का भार यथासभव हलका हाना चाहिए। यदि सपन्न यूरोपीय देशा म यह स्थिति है तो भारत म इसकी और अधिक जरूरत है क्योकि यहा राजस्व की वसूली निधन और असहाय जनता स की जाती है तथा उस राजस्व के अपक्षाकृत बडे भाग का भुगतान जीण शीण एव नितात अभावग्रस्त कृषक वग द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त यहा भारत मे सामने की विशिष्ट स्थितिया के कारण सरकारी व्यया के एक बहुत बड भाग का जनता की नतिक तथा भौतिक उन्नति से असबद्ध अथवा अत्यत दूर स सबद्ध कार्यों पर व्यय करना पडता है।[7]

भारतीय दृष्टिकोण के कुछ पक्ष

देश पर अधिक कर भार होन के विचार की लोकप्रियता म वृद्धि के लिए कई तत्व उत्तर दायी थे। प्रथम, वी० एन० वकील के अनुसार 1871 1901 की अवधि म कराधान का परिमाण राष्ट्रीय आय की औसत क 8 9 प्रतिशत के बीच था।[72] द्वितीय, आवश्यकता से ऊपर कराधान अथवा कराधान का ऊचा स्तर विकासशील देश की अपनी आर्थिक दृष्टि स पिछडे रूप के लिए अधिक म भी कुछ बढकर कठिनता उत्पन्न करता था। क्योकि यह विचार दसाबारा अथवा दूसर शब्दो म निम्न मध्य वर्गों क सभी तबका स बलपूवक सपहिरण था। यह धारणा 19वी शताब्दी क उत्तराध की अवधि म स्वत प्रमाण क

रूप म सामने आ गई। तृतीय, वतमान कराधान के स्तर के समथक तत्व के रूप मे देशानुराग अथवा सामाजिक जागरूकता की भावना नही थी। इसके विपरीत, जैसा हम बाद मे स्पष्ट रूप से दिखाएगे, भारतीय नेताओ के मन मे यह भय था कि भारत सरकार की विदेशी प्रकृति के कारण प्रशासन की न्यूनतम आवश्यकताओ से किसी प्रकार का अधिक राजस्व शाही उद्देश्यो की पूर्ति मे लाया जाएगा। चतुथ, भारतीय नेताओ ने भूमि और नमक पर करो के तथा शराब पर उत्पादन शुल्को के माध्यम से सरकार के भारतीय राजस्वो के उगाहने पर आपत्ति की। अतिम, भारतीय नेताओ ने कराधान के स्तर और उसके उपयोग के ढग को सहसबधित कर दिया। उन वर्षों मे भारत सरकार अतत राज्यो के कार्यों मे अहस्तक्षेप के सिद्धात की सकीण परिधि मे काम कर रही थी और किसी बडे पैमाने के विकास को सक्रियता से नही ले रही थी।

राजस्व के स्रोत

अब हम भारत सरकार के राजस्व के तत्कालीन मुख्य स्रोतो, भूमि लगान, नमक कर, अफीम और उत्पादन शुल्क, सीमा शुल्क, और आयकर के प्रति भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ के दृष्टिकोण का विवेचन करेंगे।[74] वतमान भूमि लगान के परिमाण और उसम किसी प्रकार की वद्धि के विरुद्ध भारतीय राष्ट्रवादी, नेताओ की तीव्रतम आलोचना तथा चुने हुए कुछ उत्पादनो पर आयात कर लगाकर कोश जुटान की उन नेताओ द्वारा की गई जोरदार वकालत का विस्तृत विवेचन पूववर्ती अध्यायो मे किया जा चुका है। अगले पष्ठो मे आय कर, नमक कर, अफीम कर तथा उत्पादन शुल्क के सबध मे उनके विचार प्रस्तुत करते हुए उनका विश्लेषण किया गया है।

आय कर[75]

हमारे अध्ययन के अतगत अवधि के प्रारभ मे ही अर्थात 1880 मे लाइसेंस कर के रूप मे प्रसिद्ध आय कर का एक सशोधित रूप भारत मे लगाया जाता था। इस दिशा मे सवप्रथम प्रारभ 1860 मे किया गया, जब प्रथम वित्त सदस्य जेम्स विल्सन ने व्यापार, कृषि, व्यवसाय, सरकारी तथा गरसरकारी नौकरी से 200 रुपये प्रति वष से अधिक आय पर कर लगा दिया। इस कर म निरतर परिवतन किए जाते रहे हैं और अत मे 1865 मे इसका परित्याग कर दिया गया, साथ मे यह घोषणा की गई कि इसे देश के एक बहुत बडे सुरक्षित कोष का काम करना था।[76] उस वष के उपरात व्यक्तिगत आय पर कर लगान के मामले को कई बार अपनाया गया और कई बार छोडा गया। अतत उसे कुछ विभिन्न रूपो मे फिर ग्रहण किया गया।

1878 म भारत सरकार ने अतिम रूप से तब तक नियमित रूप ले चुके अकालो के मुकाबले के लिए लबी अवधि की बीमा निधि योजना के रूप मे समुचित राजकोशीय व्यवस्था का दृढ निश्चय किया। इस निधि के लिए रकम अशत भूराजस्व और [illegible] पर उपकर लगाने से और अशत व्यवसायी और व्यापारी वर्गों तथा दस्तकारो [illegible] कर लगाने से उगाही जानी थी। इस काय के लिए कोई केंद्रीय कानून नही [illegible]

प्रातीय उपायो की ही इस विषय मे सहायता ली गई। लाइसेंस कर वस्तुत सीमित आय कर था और इसका निर्धारण प्राय लगभग आय के अनुसार वर्गीकरण के आधार पर होता था।[77] कृषि, व्यवसाय तथा वेतनो से तथा इनके अतिरिक्त प्रतिभूतियो से प्राप्त होने वाली आय को इस कर की क्षेत्र सीमा के बाहर रखा गया था। इस कर का परिमाण और प्रकृति सब प्रातो म समान न थी। उत्तर पश्चिमी प्रातो और अवध मे तथा मद्रास मे कर योग्य न्यूनतम आय की राशि 200 रुपये थी जबकि बगाल, बबई और पजाब मे यह राशि 100 रुपये थी। कर का परिमाण भी विभिन्न वर्गों (जिनके अतगत करदाता विभक्त किए गए थे) के अनुसार भी भिन्न था परतु यह किसी भी रूप मे करदाता के कुल लाभ के दो प्रतिशत से अधिक अथवा 500 रुपये से अधिक नही था। 1879 80 मे सरकार ने व्यवसायी और वेतनभोगी वर्गों तक इस कर के विस्तार की असफल चेष्टा की। 1880 मे कर मे छूट की सीमा 500 रु० तक बढा दी गई। इस समय कर से प्राप्त होने वाली राशि 5 लाख पौंड स ऊपर थी और करदाता व्यक्ति 228,447 थे।[78]

भारतीय नेताओ ने लाइसेंस कर लगाने के समय ही सामान्य रूप स उसका विरोध किया[79] और परवर्ती वर्षों म उसे हटाने की माग करते रहे।[80] यहा यह ध्यान देने योग्य है कि उन्होने प्रमुख रूप मे लाइसेंस कर लगाने के पीछे निहित सिद्धात पर प्रहार नही किया। उन्होने इसे लगाने के ढग पर आपत्ति की, जो उनके अनुसार असमान और अन्यायपूर्ण था। इस कर के विरुद्ध उनकी सर्वप्रथम आपत्ति यह थी कि यह आय के बहुत ही निम्न स्तर तक आक्रमण करता था, अत निर्धनो की बहुत बडी सख्या इससे दुष्प्रभावित होती थी। कुछ का तो यह भी विचार था कि करो का बोझ निर्धनो पर अत्यधिक भारी था, जबकि समृद्ध वर्ग इससे अपेक्षाकृत रूप म मुक्त था। उदाहरणार्थ, 14 जनवरी 1878 के अक म 'इदु प्रकाश' ने इस कर की न्यायोचितता पर प्रश्नात्मक स्वर म पूछा कि यह कहा का न्याय है कि यह बडे बडे और प्रभावशाली व्यक्तियो, व्यापारियो तथा वाणिज्य म लगे व्यक्तियो, जिनमे अधिकाश यूरोपीय हैं की जेबो को तो हलके रूप म प्रभावित करता है जबकि छोटे छोटे व्यापारियो और दस्तकारो पर जिनम अधिकाश भारतीय हैं, पर भारी बोझ डालता है।[81] इसी प्रकार 'इडियन स्पेक्टेटर' न 23 अक्तूबर 1881 के अक म इस कर को भयकर राक्षस बताया जो आधा भीरु और आधा गुडा था। समृद्धतम और अच्छी सरकार के सर्वोत्तम लाभो का आनद उठाने वालो के पास स तो यह दुष्ट कर निकल जाता था और छोटे छोटे व्यापारियो का खून चूसता था।[82] राष्ट्रवादी समाचारपत्रो न इस ओर भी सकेत किया कि लाइसेंस कर निर्धारण और समाहरण से सबधित छोटे छोटे अधिकारियो के कुप्रशासन की प्रवृत्ति स भी बुरी तरह दुखी थे।[83] अतएव कुछ समाचारपत्रो ने कर सीमा बढाने की माग की।[84] यह पर्याप्त रोचक तथ्य है कि 17 जनवरी 1880 के अक मे बगाली ने बडी तीव्रता स कर की अधिकतम सीमा निर्धारित करने पर आपत्ति की क्योकि इससे उन लखपति व्यापारियो के प्रति जिन्हे इस प्रकार के किसी असाधारण सरक्षण की कोई आवश्यकता नही थी और जो अधिकाशत यूरोपीय ही थे विशिष्ट पक्षपातपूर्ण व्यवहार होता था। यहा यह उल्लेखनीय है कि भारतीय समाचारपत्र इस मामले म [illegible] की तीव्र भावना

पेंशनो से वसूल की गई। 1902 03 मे करदाताओ की सख्या बढकर लगभग 5,31,000 हो गई और लगभग 2 1 करोड रुपयो की राशि इकट्ठी हुई।[92]

आय कर के प्रति राष्ट्रवादी नेताओ के दष्टिकोण मे सामान्यतया मतभेद ही था। यदि समय की पर्याप्त लबी अवधि के सदभ मे देखा जाए तो यह मतभेद और भी स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आ जाता है। वस्तुत कुछ भारतीय नेताओ ने विभिन्न कालो मे भिन्न भिन्न यहा तक कि परस्पर विरोधी दष्टिकोण अपनाया।

1880 मे आय कर लगाने के प्रस्ताव का और 1886 मे वास्तविक रूप म इस कर के आरोपण का राष्ट्रवादी पत्रो और नेताओ ने बडे पैमाने पर विरोध किया।[93] यह विरोध स्वय कर की प्रकृति के विरुद्ध उसे यूरोपीयो और समृद्ध तथा प्रभावशाली भारतीयो का डर है। इतना नही था क्योकि अतिरिक्त करो के किसी भी प्रस्ताव पर राष्ट्रवादियो मे विश्वास का अभाव था और यह उस समय राष्ट्रवादी नेताओ के लिए एक प्रकार म स्थाई अभिशाप था, राष्ट्रवादियो का विरोध उस आवश्यकता की अस्वीकृति के प्रति था जिसके अतगत यह कर लगाया गया था। उदाहरण के रूप मे भारतीय समाचारपत्रो द्वारा अपनाई गई स्थिति की समीक्षा करते हुए 'वायस आफ इडिया' के सपादक ने राष्ट्रवादियो के मतव्य को इसी रूप म ग्रहण किया।[94] इसके अतिरिक्त 1882 से पहले तक तो बहुत सारे भारतीय राष्ट्रवादियो का यह आशका थी कि आय कर लगाने से बजट म बचत हो सकती है और इन बचतो को सरकार आयात कर हटाने के बहाने के रूप मे इस्तेमाल कर सकती है।[95] 1882 के उपरात जब सचमुच आयात कर हटा दिया गया तो भारतीय नेताओ न इस आधार पर आय कर का विरोध किया कि राजस्व वसूली का अपेक्षाकृत अच्छा साधन आयात करो का पुन लगाना होगा।[96] थोडे से भारतीयो न इस कर स प्राप्त राजस्व को सरकार द्वारा तजी स बढते सनिक व्ययो की पूर्ति के लिए प्रयोग करने का सदेह भी किया। ये व्यय भारतीयो के लिए क्लेश और कष्ट का कारण बने हुए थे।[97] अधिक महत्वपूण बात यह है कि आय कर विरोधियो के शीर्षस्थ नेताओ ने इस कर के एक पक्ष, व्यवसायी और वेतनभोगी वर्गों को इसके सीमा क्षेत्र म लाने का समथन किया।[98]

इतना सब जानने के बाद यहा यह जान लेना भी आवश्यक है कि जब आय कर के कुछ विरोधियो ने भारत के लिए प्रत्यक्ष कर के सवथा अनुपयुक्त होने की घोषणा की[99] अथवा उनमे से कुछ ने आय कर लगाने के स्थान पर लाइसेंस कर के विस्तार और उसम वृद्धि की वकालत की।[100] तो उस समय उन्होने यह सवथा स्पष्ट कर दिया कि उनका विरोध किसी भी रूप म सामान्य [illegible] की कामना स उतना प्रेरित नहीं था जितना सकुचित वग तथा निहित स्वाथपूण [illegible] से किसी भी रूप म [illegible] जाए। वी० एन० माडलिक पर्याप्त स्पष्टवक्ता दिखाई देते हैं। उन्होने 1886 म आय कर बिल (इन्कम टैक्स बिल 1886) पर भाषण करते हुए सावजनिक रूप स यह स्वीकार किया कि उच्च वर्गों का लाइसेंस कर के स्थान पर आय कर के आगमन [illegible] [illegible] का अनुभव [illegible] जाता रहा है।[101]

आय कर के इस विरोध के अतिरिक्त एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य जिसकी भारतीय

आय कर के इतिहास लेखकों ने न्यूनाधिक रूप से लगभग उपेक्षा ही की है, यह था कि आय कर लगाने का विरोध करने के बदले राष्ट्रवादी नेताओं में अधिक सशक्त वर्ग ने कर लगने के पूर्व, कर लगने के समय और कर लग चुकने के बाद एक प्रकार से उसका प्राय सक्रिय और प्रबल तथा किन्हीं किन्हीं मामलों में अनिच्छा तथा अनुत्साहपूर्ण समर्थन ही किया।

'अमृत बाजार पत्रिका' ने 1870 के बाद से आय कर का सक्रिय समर्थन किया।[10-] बहुत सारे राष्ट्रवादी समाचारपत्रों ने 1880 में आय कर को वेतनभोगी तथा व्यवसायी वर्गों पर लागू करने के जान स्ट्रैची के प्रयास का स्वागत और समर्थन किया।[103] भारत में रहने वाले अंगरेजों के विरोध के कारण जब स्ट्रैची को प्रस्ताव को वापस लेना पड़ा तो 'अमृत बाजार पत्रिका' ने तीखे व्यंग्य बाण बरसाए। 5 मार्च 1880 के अंक में इस पत्र ने भारतीय आलोचकों के आय कर हटाने के प्रयास को आड़े हाथों लेते हुए निम्नलिखित टिप्पणी की

अब वेतनभोगियों और व्यवसायी वर्गों पर लगा कर हटा लिया गया है। एक निपट मूर्ख को भी यह समझने में देर नहीं लगेगी कि सर स्ट्रैची के आय कर को लगान के क्षेत्र में विस्तार की घोषणा के विरुद्ध की गई चिल्लाहट कितनी निरर्थक और निराधार थी। प्रत्येक समाज में कुछ गधे अवश्य होते हैं, यदि वे न हों तो भला अपनी पीठ पर धोबी के कपड़ों का बोझा कौन उठाएगा? परंतु इन गधों को धोबी के कपड़ों का भार उठाने पर ही लगाए रखना चाहिए। इन्हें राजनीतिक संस्थाओं का नेतृत्व अथवा सार्वजनिक पत्रों का संपादकत्व नहीं संभालने देना चाहिए।

परवर्ती वर्षों में 'हिंदू', 'इंदु प्रकाश' और 'इंडियन स्पेक्टेटर' जैसे अग्रणी राष्ट्रवादी समाचारपत्रों की बहुसंख्या ने चालू लाइसेंस करके स्थान पर आय कर लगाने का अनुरोध किया।[104] अंततः भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1885 में अपने प्रथम अधिवेशन में अन्य वस्तुओं के साथ फिलहाल इस कर से मुक्त सरकारी और गैरसरकारी वर्गों के समुदाय पर इस कर के विस्तार के अनुरोध का प्रस्ताव पारित किया।[105] 1886 में जब अंततः आय कर लगाया गया तब 'अमृत बाजार पत्रिका', 'हिंदू', 'मराठा' तथा अन्य अनेक राष्ट्रवादी समाचारपत्रों ने उसका समर्थन किया।[106]

1886 के उपरांत राष्ट्रवादी क्षेत्रों में आय कर को और अधिक व्यापक तथा और अधिक विस्तृत लोकप्रियता मिलने लगी, विशेष रूप से यह इस तथ्य से सिद्ध है कि यह माना जाने लगा कि इसके हटाने का परिणाम अन्य करों को लगाना होगा। यह तथ्य इस दृष्टिकोण को भी सिद्ध करता है कि कुछ भारतीय नेताओं का पूर्ववर्ती विरोध वस्तुत अपने आप में आय कर का विरोध न होकर किसी प्रकार के नए कराधान का ही विरोध था। जब एक बार यह प्रमाणित हो गया कि नए करों का लगाना अपरिहार्य है तो राष्ट्रवादी नेताओं ने एक स्वर से आय कर हटाने की मांग का विरोध किया तथा किसी भी प्रकार के अन्य कर लगाने की अपेक्षा इस कराधान का ही पक्ष लिया। भारतीय ९ ५। कांग्रेस के 1887 के तृतीय अधिवेशन में यह तथ्य उस समय नाटकीय जब एक प्रतिनिधि वी० आर० चक्रवर्ती आयंगर ने छठे प्रस्ताव में

आय कर हटान की माग पेश की, तत्काल नही' 'नही' 'सशोधन वापस लो' की ऊची ऊची आवाजें आई, यह कहा गया कि हम अपने आपको कराधान से मुक्त नहा करना चाहत हम इस कर के 'पक्षधर' हैं। 'बठ जाइए' 'बकवास बद कीजिए'। चक्रवर्ती आयगर को अपना सशोधन वापस लेन पर विवश होना पडा ।[107] काग्रेस के अगल अधिवेशन (1888) म मदनमोहन मालवीय ने घोषणा की कि काग्रेस धनिको अथवा उन लोगा पर जो कर चुकान म समथ हैं, आय कर लगाने की वाछनीयता से सहमति प्रकट करती है और उसकी पुष्टि करती है ।[108]

1902 मे सी० वाई० चितामणि ने तहरवा प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए कर हटान क आदोलन की वडी जारदार निदा की[109], साथ ही उस वप के काग्रेस अध्यक्ष एस० एन० बैनर्जी की भी कर हटान की माग के प्रति सहानुभूति न थी ।[110] भारत के अय सावजनिक नताआ म से दादाभाई नौरोजी ने वायसराय की कौसिल के सदस्य एस० एम० मनावारी का 26 अप्रल 1889 को लिखे पत्र द्वारा आय कर के विरुद्ध नमक कर के पक्ष म मत दने के लिए उनकी निदा की ।[111] आर० सी० दत्त ने अपनी पुस्तक 'इकानामिक हिस्टरी आफ इडिया' म आय कर के न्यायसगत और उचित हाने के कारण उसकी प्रशसा की ।[11] 1888 म जी० वी० जाशी न नमक कर म वृद्धि के बदले आय कर म वृद्धि और विस्तार के पक्ष मे जोरदार तक प्रस्तुत किया ।[113] 'इडियन एसोसिएशन' न भी 1894 म इसी प्रकार की माग प्रस्तुत की ।[114]

समाचारपत्रा म अमृत बाजार पत्रिका' ने तो आय कर के पक्ष म जिहाद जारी रखा ।[115] इस पत्र ने 18 अप्रल 1893 के अपने अक म इस कर के परिमाण म वृद्धि की माग की। 28 दिसबर 1887 के अपन अक म हिंदू ने माग की कि आय कर को भारतीय कराधान का स्थाई स्रोत बना देना चाहिए ।[116] 15 दिसबर 1890 क अपन अक म सुधारक ने घोषणा की कि कर को हटाने की माग असदिग्ध रूप स स्वार्थपूण ही होगी ।[11] 'सजीवनी म 10 माच 1894 के अक म आय कर म वद्धि की वकालत की। उसका आधार यह था कि वतमान दर म वास्तव म धनिको को छूट मिलती थी ।[118] 'बगाली' न भी 4 नवबर 1902 के अक म कर हटाने पर आपत्ति की। 29 मई 1904 के अक मे मराठा' न बजट म बचत होन पर भी इस कर के बने रहन की इच्छा प्रकट की और सुझाव दिया कि इस कर स हान वाली आय का न्याम बना दना चाहिए और उस आय का शिक्षा विशेषत औद्योगिक शिक्षा पर खच करना चाहिए। बहुत सारे अय समाचारपत्र आय कर हटान के विरुद्ध यही स्थिति अपनाए रहे और कई मामला म तो इसके क्षेत्र विस्तार की निरतर वकालत करते रहे ।[119] विशेषत 1888 म नमक कर म वद्धि क समय बहुत अधिक सख्या म समाचारपत्रो न इसके बदले आय कर म वद्धि की वकालत की ।[120]

1886 म उगाहन आय कर के पक्ष म उत्कट राष्ट्रवादी विचारधारा क प्रबल बहुमत के विरुद्ध केवल मुट्ठी भर भारतीय समाचारपत्रा और नताआ न ही उस कर के [illegible] की माग की। [illegible] निश्चित रूप स जान पाए हैं। [illegible] प्रकाश' (बगाल म निकलन वाला) और 11 फरवरी 1891

का सहचर', 'नाथ वेस्ट प्राविसेज' तथा अवध से प्रकाशित होने वाला 'भारत जीवन' ही इस कर को हटाने की माग कर रहे थे।[11] राजनीतिक नेताओ मे जी०आर० चितनवीस, महाराजा दरभगा और आशुतोष मुखर्जी ही, जिनकी उच्च स्तर के राष्ट्रीय नेताओ मे गिनती नही होती थी। कर का विरोध करने वाला मे थे।[1]

जहा तक आय कर लगाने के ढग का सबध है, कुछ भारतीय नेताओ ने भ से ही जमीदारो और भूमिपतियो को इस कर से मुक्त करने की आलोचना की। 17 जनवरी 1880 को 'बगाली' ने इसी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करते हुए जमीदारो द्वारा पहले से ही सडक शुल्क और लोककम शुल्क चुकाए जाने के कारण उन्हे इस कर से मुक्ति देने के औचित्य की धारणा का खडन किया। उस पत्र ने अपना मत प्रकट करते हुए लिखा कि ये कर वस्तुत परोक्ष रूप से किसानो द्वारा ही चुकाए जाते है। 7, 9, और 12 जनवरी 1886 के अको मे 'हिंदू' ने, 25 फरवरी 1886 के अक मे 'इडियन नेशन' ने और 18 जनवरी 1886 के अक मे 'गुजरात मित्र' ने जमीदारो को 1885 के ... ाधिकार क्षेत्र से बाहर रखने की आलोचना की।[123] 1888 म जी० वी० जोशी ... रो, ताल्लुकेदारो और बागान मालिको तक आय कर के क्षेत्र विस्तार के पक्ष ... का विस्तृत विवेचन किया।[14] 9 जनवरी 1890 के अक मे 'हिंदू' ने और 18 फरवरी 1894 के अक मे 'कैसरे हिंद'[15] ने भी इसी प्रकार की माग करते हुए तर्क प्रस्तुत किए।

थोडे से भारतीय नेताओ ने भारतीय आय कर मे नियमित वृद्धि के नितात अभाव की भी चर्चा की। इस कर की दृष्टि से 2000 रुपय स ऊपर की सभी प्रकार की वार्षिक आयो को इकट्ठे वर्गीकृत करने पर आपत्ति करते हुए हिंदू ने दृढतापूर्वक लिखा कि क्रमिक कराधान का सिद्धात विश्व के अन्य किसी भी देश के समान ही भारत म भी सही तौर पर लागू है। अपना मत प्रकट करते हुए उसने लिखा कि उच्च वेतनभोगियो के लिए 2½ प्रतिशत कर की दर बहुत ही नीची दर है।[16] इडियन एसोसिएशन ने 8 मार्च 1894 के ज्ञापन मे सुझाव दिया कि जीवन की उपभोग सामग्री पर परोक्ष ढग स कराधान के बदले आय कर की दर क्रमिक रूप स बढा देनी चाहिए। अपेक्षाकृत उच्च वेतनो पर अपेक्षाकृत ऊचा करारोपण करना चाहिए।[17] बहुत सारे और भारतीय नेताओ न सुव्यवस्थित रूप से क्रमिक आय कर के लगान की माग की।[18]

इस समय राष्ट्रवादी नेताओ के विशाल बहुमत द्वारा आय कर के समर्थन के अथवा कम से कम उसके अधिकार क्षेत्र के वेतनभोगी और व्यवसायी वर्गों तक विस्तार के आधारो का सक्षिप्त विवेचन कदाचित अनुचित न होगा। इन आधारो म प्रथम और कदाचित सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण यह समझ थी कि आय कर ही एक ऐसा अकेला महत्वपूर्ण कर है जिसके द्वारा भारत मे रहने वाले यूरोपीय, भले ही व सरकारी अधिकारी हो, निजी व्यवसाय सस्थानो के कर्मचारी हो व्यवसाय वर्ग के लोग हो अथवा व्यापारी हो, भारत सरकार के शासन-सचलान के व्यय में अपने भाग का योगदान कर सकते हैं।[19] 'अमृत बाजार पत्रिका' ने इसी भावना की अभिव्यक्ति निम्नलिखित शब्दो मे की आय कर भारत मे रहने वाले शत प्रतिशत यूरोपीयो की जेबो को

है जबकि इससे हजार भारतीयो मे केवल एक व्यक्ति की जेब ही प्रभावित होती है।[130] कुछ समाचारपत्रो ने तो यह दृढ मत अभिव्यक्त किया कि आय कर का विरोध करना यूरोपियो के हाथो खेलना है।[131] राष्ट्रवादियो द्वारा आय कर को समर्थन देने का दूसरा कारण था कराधान म सामाजिक न्याय और समता की भावना। इस अत्यत प्रजातन्त्रीय दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति किन्ही किन्ही मामलो मे तो सवथा स्पष्ट रूप म की गई। उदाहरणार्थ, 17 जनवरी 1880 के अक म 'बगाली' ने बल देकर कहा कि यदि भारत सरकार अपने खर्चों मे कटौती न करके उन खर्चों की पूर्ति के लिए नए कर लगाने पर ही तुली हुई है तो अच्छा, बहुत ही अच्छा यह होगा कि यह कर निधनो पर थोपने की अपेक्षा उन लोगो पर लगाए जाए जो उनका भार सहन कर सकते हैं।[132] 5 मार्च 1880 के अक म तो 'अमृत बाजार पत्रिका' ने और भी अधिक दृढता के साथ लिखा 'इस समय हमारे सामने विचारणीय प्रश्न यह नही है कि प्रत्यक्ष कर भारत के अनुकूल है अथवा नही? इस समय तो विचारणीय यह है कि हमारे समाज के अपेक्षाकृत सपन्न सदस्यो को इस भार म अपने समुचित भाग का योगदान करना चाहिए अथवा नही? यदि उन्हें अपना योगदान करना है तो प्रत्यक्ष कराधान के अतिरिक्त उन तक पहुचने का और कोई मार्ग ही नहीं।' अगले वर्ष 'पत्रिका' ने आय कर लगाने के औचित्य की एक बार फिर वकालत की तथा इस कर के द्वारा लोगो को अत्यधिक असुविधा और कष्ट मिलने और इस कारण इसके लाभो के निर्मूल हो जाने के तर्क के औचित्य को मानने से इनकार कर दिया। उसने अपने 29 दिसबर 1881 के अक म लिखा 'सवप्रथम, सत्य तो यह है कि जब बीस करोड लोगो को नमक कर, भूमि लगान और मुद्रांक शुल्क आदि के भुगतान म होने वाले कष्ट की निश्चित रूप से ही कोई चिंता नही की जाती तो फिर इस देश म समृद्ध वग के दो लाख लोगो को होने वाली साधारण सी असुविधा की चिता ही कौन करता है?'[133] 19 दिसबर 1884 के अक म 'हिंदू' ने भी निर्देश किया निर्धन लोगो को धनिको पर कर लगाने पर आपत्ति करने का कोई अधिकार नही। निधनो को तो उलट अपने पर नमक कर, उत्पादन शुल्क और मुद्रांक शुल्क आदि लगाने के विरुद्ध शिकायत करनी चाहिए।'[134] 1888 म जी० वी० जोशी ने भी इसी दृष्टिकोण को बडी स्पष्टता और प्रबलता के साथ अभिव्यक्ति दी। 1886 म आय कर लगाने का अनुमोदन करते हुए उन्होंने यहा तक कहा कि 1886 के आय कर अधिनियम के अन्तर्गत उच्च तथा उच्च मध्यम वर्गों पर डाला गया भार निर्धन वर्गों पर डाले गए भार के मुकाबले किसी भी परिमाण म स्तर म पर्याप्त, उचित अथवा अनुरूप नही है। इसके विपरीत सत्य तो यह है कि कराधान के नए उपाय म और कराधान म समानता तथा समुचित सतुलन सिद्ध नही होता। 1886 के कराधान के उपरांत आज भी स्थिति यह बनी हुई है कि सपन्न वर्ग तो कर अपने परिमाण म चुकाता है जबकि जनता को अपना उचित भाग की अपेक्षा अधिक करों का भुगतान करना पडता है।[135]

हा, आय कर के समर्थकों ने लगाए गए कर का अनुमान नही किया। सिद्धांत रूप मे इसे स्वीकार करते हुए भी जिस ढग से कर लगाया जा रहा था, उसकी आलोचना की। उनके अनुसार तथा सम्भावित समस्याओं का निराकरण कर

इनके वेतनभोगी वर्ग के साथ घनिष्ठ पारिवारिक सबध थे फिर भी उनमे से बहुत बडी सख्या मे नेताओ ने इस कर का समर्थन ही नही किया प्रत्युत आय कर लगाने की वकालत तक की। यहा तक कि इस कर का अपने उस रूप मे विरोध करने वाले नेताओ की बहुत बडी सख्या ने इसका समर्थन ही नही किया प्रत्युत इसकी अधिकार सीमा का वेतनभोगी वर्गों तथा व्यवसायी वर्गों तक विस्तार करने की माग की। इस प्रकार शिक्षित मध्यवित्तीय वर्गो को किसी प्रकार के प्रत्यक्ष कराधान की अधिकार सीमा के अतर्गत लाने की वाछनीयता के बारे मे राष्ट्रवादी नेताओ मे प्राय यथासभव व्यापक एकमत था। जब एक बार आय कर अस्तित्व मे आ गया तो परवर्ती वर्षों मे इसे हटाने के लिए इसके विरुद्ध कोई एक भी महत्वपूर्ण राष्ट्रवादी स्वर सुनने को नही मिला।

इस सदर्भ मे यह अत्यत सावधानी के साथ उल्लेखनीय है कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अधिकाश शीर्षस्थ नेता तथा अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण राष्ट्रवादी समाचारपत्रो, 'अमृत बाजार पत्रिका', 'हिंदू', 'मराठा', 'बगाली', 'हितवादी', 'सजीवनी', 'इदु प्रकाश', 'इडियन स्पक्टेटर' तथा 'स्वदेशमित्रन' के स्वामी तथा सपादक निश्चित रूप से आय कर के निर्धारण क्षेत्र के अतर्गत आते थे और अन्यथा प्रत्यक्ष करो के बधन से अथवा यहा तक कि अधिकाशत परोक्ष करो के बधन से सर्वथा मुक्त थे।[117] इतने पर भी वे अपने आप को अपने पर कर लगाने के लिए समर्पित करने के लिए और इस रूप मे आत्मक्षति के कष्ट का भुगतान के लिए सहमत थे ताकि भारत सरकार के विदेशी कर्मचारियो पर कराधान किया जा सके। भारतीय राष्ट्रीय नेताओ का यह दृष्टिकोण एक ओर राष्ट्रीय भावनाओ के तथा देश पर विदेशी शासको के विरुद्ध शत्रुता की भावनाओ के उभरते तूफान का द्योतक है और दूसरी ओर उस समय के राष्ट्रीय नेताओ द्वारा सामान्य राष्ट्रीय हितो के समक्ष अपने निजी स्वार्थों को गौण बनाने की प्रवृत्ति का सूचक है।[118]

राष्ट्रवादी नेताओ ने जनता के केवल उसी वर्ग के हितो की इस मामले मे देखभाल की जिस वर्ग की वार्षिक आय एक हजार रुपये प्रति वर्ष से नीचे थी अथवा दूसरे शब्दो मे निर्धन दुकानदारो तथा निम्नवेतनभोगी सरकारी कर्मचारियो के हितो की वकालत की। इस सबध मे यह अवश्य उल्लेखनीय है कि भारतीय नेताओ द्वारा आय कर की छूट सीमा को बढाने की वकालत केवल सामाजिक न्याय और समता के आधारो पर ही उपयुक्त नही थी प्रत्युत छोटे छोटे दुकानदारो और निम्न स्तरीय सरकारी कर्मचारियो को राष्ट्रीय पक्ष मे लाने की यह एक सभी दृष्टियो से सर्वथा उपयुक्त राजनीतिक युक्ति भी थी। यहा तक कि इस मामले मे नेताओं ने आय कर की छूट सीमा बढाने की अपेक्षा नमक कर और भूमि लगान घटाने के लिए अपेक्षाकृत कठोर सघर्ष किया। सत्य यह है भारतीय नेताओ ने करो मे रियायत के मामले मे सर्वदा गरीबो का पक्ष लेते हुए और गुणकर किसी भी योजना की सिफारिश करते हुए ऊपर दी गई प्राथमिकताओ का ध्यान रखा।[119] यहा यह भी उल्लेखनीय है कि वास्तव मे भारतीय नेताओ ने आय कर के मामले मे इस कर को हटाने के लिए निरतर वकालत तथा आदोलन कर रहे बडे कर्मचारियो और जमीदारो के हितो का वास्तविक रूप मे प्रतिनिधित्व नही किया।[120]

नमक कर

1880 से 1905 की अवधि म नमक कर भारत सरकार की आय का एक दूसरा सवाधिक महत्वपूण स्रोत था। नमक पर कराधान की पद्धति एक प्रात स दूसरे प्रात म भिन्न भिन्न रूप लिए हुए थी। बबई म इसे उत्पादन शुल्क का रूप प्राप्त था बगाल म प्रधान रूप से आयातित नमक पर सीमा शुल्क लगता था[151] और मद्रास, उत्तरी भारत तथा पजाब मे सरकार द्वारा एकाधिकार के रूप म स्वत उत्पादित नमक पर कर सरकार द्वारा वस्तुओ के निधारित मूल्य म सम्मिलित रहता था।

1878-79 तक नमक कर की दर भी एक प्रात स दूसरे प्रात म व्यापक रूप से भिन्न थी।[15] कलवित्त अतर्देशीय सीमा शुल्क रेखा समाप्त करने के उपरात जब नमक कर की दर म लगभग एकरूपता लाई गई तो उत्तरी भारत मे उसे समानातर रूप देन के लिए उसकी दर घटाकर 3 रुपये प्रति मन क स्थान पर 2रु० 8 आन प्रति मन कर दी गई, बगाल म भी यह दर घटाकर 3 रु० 4 आने के बदले 2 रु० 14 आने प्रति मन कर दी गई। मद्रास और बबई म यह दर बढाकर 1 रु० 13 आने के स्थान पर 2 रु० 8 आन कर दी गई। यह सुधारकारी एकीकरण सरकार के लिए लाभ प्रद सिद्ध हुआ। 1875 77 से 1879 81 मे नमक कर के राजस्व की राशि लगभग दस लाख पौड बढ गई।[1 3] परतु लोगो न इस वद्धि के पूरे परिमाण को अनुभव नही किया क्योकि उस समय परिवहन सुविधाओ के समकालीन विस्तार के कारण बाजार म नमक के मूल्यो मे उल्लेखनीय रूप से गिरावट आ गई थी।

1858 से पहले भी प्रमुख भारतीयो ने नमक कर की आलोचना की थी।[154] 1882 तक भारतीय नेता नमक कर मे कटौती और उसे हटाने तक की माग करत रहे। नमक कर के समानीकरण की प्रक्रिया 1859 मे प्रारभ हुई और उसके फलस्वरूप बबई प्रात म कर की दर बढकर काफी ऊची हो गई। अत स्वाभाविक रूप से ही उस प्रदेश म कर के विरुद्ध तथा कर म वद्धि के विरुद्ध आलोचना का स्वर अत्यत मुखर था।[155] उदाहरणाथ, 1880 मे दादाभाई नौरोजी न नमक कर को ब्रिटिश नाम पर एक कलक बताया।[156]

इस समय हम इस तथ्य की ओर भी ध्यान देना होगा कि भारतीय नताओ के एक अन्य वग न भले ही वह अल्पसख्यक था, नमक कर का समथन किया। यह बहुत स्वाभा विक था कि यह वग प्रधान रूप से बगाल मे ही था जहा नमक कर मे परिवतन नीचे की ओर जा रहे थ और जहा जमीदार सदव किसानो के हितो के मूल्य पर अपन हितो की रक्षा के प्रति चिंतित थ। बगाल मे नमक कर के पक्षधर दो प्रारभिक प्रतिनिधि थे, राजा दिगबर मित्र और क्रिस्नोदास पाल।[157] इसस भी अधिक आश्चयजनक तथ्य यह है कि 'अमृत बाजार पत्रिका' ने भी सडक शुल्क जस अन्याय करो म वद्धि के बदले नमक कर म वद्धि की वकालत की।[158] इस अप्रत्याशित स्थिति अपनाने के लिए पत्र के सपादको द्वारा निर्दिष्ट कारण यह था कि बगाल मे नमक कर प्रधान रूप स नमक पर आयात शुल्क था। यह नमक लिवरपूल और चेशायर से लाया जाता था अत इस कर मे वद्धि का सारा भार विदेशियो पर ही पडने की सभावना थी।[159]

1882 मे भारत सरकार न नमक कर मे कटौती की। बर्मा अथवा पजाब व सिंधु

पार के जिलो को छोडकर सारे देश मे यह कर दो रुपये प्रति मन कर दिया गया। इस कदम के प्रति राष्ट्रवादियों की प्रतिक्रिया मिश्रित थी। मराठा और बबई के बहुत सारे अन्य पत्रो ने और बगाल के कुछ पत्रो ने इसका स्वागत किया और सरकार से इसे और अधिक घटाने यहा तक कि इसे समाप्त करने का ही अनुरोध किया।[160] दूसरी ओर 'अमृत बाजार पत्रिका' और बगाल तथा उत्तरी भारत के कितने ही दूसरे पत्रो ने अनुभव किया कि इस कदम का स्वागत नही किया जा सकता क्योकि वस्तुत लोगो ने नमक कर को कभी दुखप्रद नही माना। इसके बदले तो लाइसेंस कर के भुगतान मे राहत देनी चाहिए थी।[161]

1882 और 1888 की मध्यावधि मे नमक कर के विरुद्ध अनेक राष्ट्रीय स्वर मुखरित हुए। उदाहरणार्थ नमक कर विरोधी आदोलन के सचालन मे अग्रदूत होने का श्रेय प्राप्त करने वाले जी० वी० जोशी ने इन्ही वर्षों की अवधि मे नमक कर के विरुद्ध अपना सघर्ष जारी किया था। 1886 मे प्रकाशित अपने एक लेख 'वेज ऐंड मीज आफ मीटिंग दि ऐडीशिनल आर्मी एक्सपेंडीचर' मे उन्होंने नमक कर का और जनजीवन तथा लोकश्रम पर उसके प्रभाव का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया। उन्होंने नमक कर मे किसी भी प्रकार की वृद्धि का अत्यत प्रखरता के साथ विरोध किया तथा किन्ही क्षेत्रो मे इस कर को सुरक्षित राजस्व मानने की नीति को घातक प्रवृत्ति बताते हुए उसकी तीव्र निंदा की। उन्होंने नमक कर को देश मे स्थाई कराधान का एक अग बनाए रखने की भर्त्सना की।[162] 1885 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के सर्वप्रथम अधिवेशन मे ही एम० ए० स्वामिनाथन अय्यर तथा वी० एम० पतुलु ने नमक कर मे किसी प्रकार की वृद्धि के प्रयत्न की निंदा की तथा काग्रेस और जनता से इस प्रकार की किसी भी अवाछनीय घटना के विरुद्ध अपनी आवाज उठाने का अनुरोध किया।[163] इन वर्षों की अवधि मे कुछ एक अग्रगण्य समाचारपत्रो ने भी नमक कर घटाने अथवा उसे समाप्त करने की वकालत की।[164] दूसरी ओर 1886 मे कुछ समाचारपत्रो ने आय कर लगाने के बदले नमक कर मे वृद्धि की वकालत की।[165]

1888 तक ऊपरी बर्मा पर विजय और उसके सयोजन से उत्तर-पश्चिमी सीमा मे सैनिक कार्यवाही से तथा विनिमय मे होने वाली निरतर गिरावट के फलस्वरूप भारत सरकार की आर्थिक स्थिति एक बार फिर गडबड हो गई थी और एक बार फिर नए करो का लगाना अनिवार्य हो गया। इन सबके परिणामस्वरूप तत्कालीन वित्त सदस्य जेम्स वेस्टलैंड को 19 जनवरी 1888 के अपने एक कार्यकारी आदेश द्वारा नमक पर 2 रुपये प्रति मन कर के स्थान पर उसे बढ़ाकर ढाई रुपये प्रति मन कर देना पड़ा।[166] 1902 मे नमक कर से कुल आय 9.1 करोड़ रुपये हुई जबकि 1888 मे इस कर से होने वाली आय की राशि 7.6 करोड़ रुपये थी।[167]

नमक कर मे वृद्धि ने भारत मे असतोष, रोष और विरोध की सशक्त, तीव्र लहर उत्पन्न कर दी। मराठा', हिंदू, बगाली और यहा तक कि 'अमृत बाजार पत्रिका के साथ साथ देश के बहुत सारे अग्रणी राष्ट्रवादी समाचारपत्रों ने बड़ी ही तीखी और निरकुश भाषा मे इस पग की कठोर भर्त्सना की।[168] कुछ समाचारपत्रो ने विरोध

का ढग तो विद्रोह की सीमा को छूता सा लगने लगा। उदाहरणाथ, बाल गगाधर तिलक द्वारा सपादित केसरी ने अपने 31 जनवरी 1888 के अक म टिप्पणी करते हुए लिखा

> विश्व के किसी भूभाग मे भारत के समान दुभाग्यग्रस्त लोग नही रहते। यदि विश्व के किसी भी देश के किसी व्यक्ति को उसके पापो के लिए दड देना हो तो उसे भारत म भेज दीजिए। हमे यह सब भारत सरकार के नमक कर विषयक नवीन आदेश के सदम म ही सोचने को विवश होना पड रहा है। वस्तुत इस प्रकार का अमानवीय पग केवल वही उठा सकता है जिसे भारतीय जनता की सवथा अभावग्रस्त और दीन हीन दशा की चिंता ही न हो। इस समय तो उन लोगो की ही बन आ रही है जो यह मानते हैं कि तलवार के बल पर अगरेजो ने भारत को जीता है और तलवार के बल पर उन्हे इसे अपने अधीन बनाए रखना चाहिए। बिल्ली स्वभावत विनम्र और भीरु होती है परतु जब उसे आवश्यकता से अधिक दबाया जाता है तो वही पलटकर इस प्रकार से झपटती है कि उसका प्रहार असह्य हो जाता है। इस समय यही सभव स्थिति हिंद की है। यहा यह स्मरणीय है कि इस समय अगरेज लोगो पर थोडा सा भी कर भार डालने मे सकोच करने वाली सरकार के लिए भारत पर अपना स्थाई प्रभुत्व खोने की आशका हो सकती है।[169]

'बोध समाचार ने अपने 25 जनवरी 1888 के अक मे चेतावनी देते हुए लिखा कि वतमान बढोतरी गहरी खाई के धसते कगार के अतिरिक्त और कुछ नही और इसे लागू करना जनता के रिसते घावो को हरा करना है, इसमे जनसाधारण की शाति और सतोष भग होने की निश्चित आशका निहित है।[170] महाराष्ट्र मित्र ने अपने 8 माच 1888 के अक मे अन्या य वस्तुओ के साथ नमक कर मे वद्धि के विरुद्ध लोगो को भडकाते हुए एक हिंदू और एक अगरेज के बीच एक वातालाप प्रकाशित किया जिसमे हिंदू लाड डफरिन को कसाई की उपमा देता है। अगरेज जब हिंदू के इस व्यवहार पर आपत्ति प्रकट करता है तो वह उत्तर मे स्पष्ट शब्दो मे कहता है 'क्या नमक कर म वृद्धि जीवन रक्त चूसना नही?'[171] इसी प्रकार बगाल के पत्र 'प्रजाबधु' ने अपने 27 जनवरी 1888 के अक मे आश्चय प्रकट करते हुए लिखा 'सचमुच भारतीयो के लिए वह घडी अभिशाप रूप ही थी, जब लाड डफरिन ने भारत भूमि पर पाव रखा।'[17]

नमक कर मे बढोतरी ने एक बार फिर जी० वी० जोशी को 1888 मे सरकार की नमक कर नीति पर घातक प्रहार करने का उत्तेजित किया।[1 3] अतत इस प्रश्न को 1888 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने अपने हाथ मे लिया और कर वद्धि के पग को अमान्य ठहराते हुए उसके विरुद्ध प्रस्ताव पारित तथा अभिलिखित किया।[174] यह एक पर्याप्त रोचक तथ्य है कि काग्रेस ने यह प्रस्ताव अपनी ही स्थाई समिति की इच्छाओ के विरुद्ध पारित किया। स्थाई समिति इस प्रस्ताव का पहले ही इस आधार पर विरोध कर चुकी थी कि एक बार जब वद्धि कर ही दी गई है तो उसके तुरत उपरात उसे हटाने की माग करना सवथा निरथक है।[175] अत इसमे आश्चय की कोई बात नही कि रत्नगिरि जिले

के दो साधारण सदस्यो द्वारा प्रस्तुत तथा समर्थित प्रस्ताव पर कांग्रेस के किसी भी मुख्य नेता ने कोई भी वक्तव्य नही दिया।[176]

इस प्रश्न पर राष्ट्रवादी सवसम्मत मत को छिन्न भिन्न करते हुए थोड़े से स्वर सरकारी पग के समथन म भी मुखरित हुए।[177] यहा यह उल्लेखनीय है कि पहल म ही विरोधी राज्य के चतुर्थ स्तभ के रूप म मान्यता प्राप्त 'अमृत बाजार पत्रिका' और 'ट्रिब्यून' जैसे अधिकाश समाचारपत्रो के नाम इस समय इस प्रश्न पर राष्ट्रीय भावना के मुख्य स्रोत म पुन सम्मिलित होकर उस सयुक्त स्वर से वाणी देनेवालो की सूची के अतगत नहीं था।

राष्ट्रीय नेताओ द्वारा परवर्ती वर्षों म नमक कर की तीव्र निंदा और उसम कटौती की निरतर माग जारी रही। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस सबध म राष्ट्रीय भावना का सम्यक प्रतिनिधित्व किया और एक के बाद दूसरे वष निरतर इस कर म तात्कालिक कटौती की माग के प्रस्ताव पारित करती रही।[178] बहुत सारे प्रमुख राष्ट्रवादी नेताओ ने इसी पथ का अनुसरण किया।[179] जी० वी० जोशी के राजनीतिक शिष्य गोपालकृष्ण गोखले ने अपने राजनीतिक विषयो मे नमक कर के प्रश्न को अपनी रुचि का विषय बनाया तथा अपने गुरु के काय को राजनीतिक मच तथा विधानसभा के सदन स आगे बढाया।[180] इसी प्रकार अधिकाश राष्ट्रवादी समाचारपत्रो ने इस कर के विरुद्ध वर्षों तक अविच्छिन्न रूप स आदोलन चलाए रखा।[181] इस सबध मे आर० डी० रसडन नामक एक अग्रेज व्यापारी द्वारा 'मराठा' के सपादक को लिखे और मराठा के ही 21 जुलाई 1889 के अक म प्रकाशित पत्र का विवरण भी एक पर्याप्त रोचक तथ्य प्रस्तुत करता है। यद्यपि स्पष्टत इसम व्यक्तिगत मत का ही प्रकाशन था तथापि इसके प्रकाशन का अथ निश्चित रूप से इसके सपादक तिलक के मत के थोडा बहुत अनुकूल होना था। इसके प्रकाशन से सपादक जेल जाने मे बाल बाल बचा।[182] पत्र लेखक रसडन ने भारतीय नेताओ को अनाज कानून विरोधी आदोलन के समानुरूप नमक कर के विरुद्ध आदोलन चलाने की सलाह दी। उन्होंने भारतीयो से अनुरोध किया कि वे सरकार को बताए कि अकाल से बहुत बडी सख्या मे होने वाली मृत्यु तो नमक कर से होने वाली हत्या ही है। यह सारी कायवाही घृणाजनक, लज्जाजनक तथा कलकपूण है। हम इस कर को वापस लेने का अनुरोध करते हैं। यदि तुम इस कर को नही हटाओगे तो हम प्रयत्न करेंगे और स्थिति को इस प्रकार से असह्य और विषम बना दें कि तुम चाहो अथवा न चाहो पर तुम्हे इस कर को शीघ्रता से हटाना ही पडेगा। महात्मा गाधी द्वारा लगभग चालीस वष बाद अपनाए गए पथ का निर्देश करते हुए उसने भारतीय नेताओ को सलाह दी कि वे अपने लोगो को समझाए कि वे स्वय नमक तयार करें ताकि उन्हे नमक कर देना ही न पडे और आप नेतागण उनकी आवश्यकता के समय उन्हे सुरक्षा और सरक्षण प्रदान करने के लिए कोष की व्यवस्था करके उन्हे इस दिशा मे प्रोत्साहन दे सकते हैं।'

बाद मे शताब्दी के बदलते बदलते जब बजटो म बचतें होने लगी तो भारतीय नेताओ ने इन बचतो का निम्नलिखित रूप स उपयुक्त उपयोग करने और सवप्रथम नमक कर मे कटौती करने के लिए सघष किया।[183] मिलमालिक सघ को सबोधित करते हुए

डॉ० ई० वाचा ने तो यहा तक कहा कि कपास पर सीमा शुल्क हटाने से भी पहले नमक कर मे कटौती करनी चाहिए ।[184]

अतत 1903 मे 8 आने प्रति मन की दर से नमक कर मे कटौती की घोषणा की गई। जैसी कि आशा की जाती थी, भारतीय नेताओ ने इस घोषणा का सहर्ष स्वागत किया। हा, उस समय उन्होंने कर की इस दर को और नीचा करने की माग पेश कर दी।[185] परवर्ती महीनो और वर्षो मे यह माग दोहराई गई[186] और जब 1905 मे सरकार ने आठ आने प्रति मन की दर से और अधिक राहत देने की स्वीकृति दी तो भारतीयो ने अपनी प्रतिक्रिया सरकार को बधाई देने के साथ साथ इस कर म और अधिक कटौती करने की माग के रूप मे प्रकट की ।[187]

यह उल्लेखनीय है कि जहा एक ओर भारतीय नेताओ का शक्तिसपन्न तथा प्रभुत्व-प्राप्त वर्ग नमक कर के विरुद्ध संघर्ष कर रहा था, वहा दूसरी ओर एक छोटा सा अल्पमत प्रमुख रूप से 'अमृत बाजार पत्रिका' के नेतृत्व मे नमक कर के बदले आय कर म अथवा अन्यान्य करो मे राहत देने के पक्ष मे अपने विचार प्रकट कर रहा था ।[188] जसा हम पहले ही दिखा चुके हैं, थाडे से अतराल के लिए 1888 म 'अमत बाजार पत्रिका' ने अपनी स्थिति बदली थी और नमक कर मे वद्धि का विरोध किया था, परतु 1888 के उपरात उसने एक बार पुन अपनी पूर्ववर्ती स्थिति अपना ली ।[189]

नमक कर पर राष्ट्रवादियो के प्रहार के कारण

राष्ट्रवादियो ने नमक कर पर अपने आक्रमण के लिए कौन स आर्थिक कारण प्रस्तुत किए ? उन्होंने सैद्धातिक आपत्ति उठानी प्रारभ की। उनकी घोषणा के अनुसार उत्तम राजस्व और न्यायपूर्ण कराधान का यह नियम है कि जीवन की प्रधान आवश्यकता की वस्तु नमक निस्सदेह जीवन की एक प्रमुख आवश्यकता थी पर कराधान और वह भी इस असाधारण परिमाण मे नही होना चाहिए ।[190] इसके उपरात उन्होंने प्रशासको की इस धारणा के आगे प्रश्नचिह्न लगाया कि यद्यपि इस कर स समद्ध राजस्व की प्राप्ति होती है तथापि इसका भार लोगो को दुखप्रद प्रतीत नही होता क्योकि यह जनसख्या के विशाल भाग मे बटा हुआ है ।[191] उनका कथन था कि इसके परिमाण को अमूत रूप मे नही नापना चाहिए प्रत्युत भारतीय जनता की निपट दरिद्रता के सदर्भ मे और उस प्रसग मे ही उसे देखना चाहिए। यदि लोगो की आय के अत्यत निम्न स्तर को देखा जाए तो कुछ आने प्रति व्यक्ति कर भी वास्तव मे ही स्पष्ट रूप स उनकी कमर तोडने वाला सिद्ध होगा। इस दिशा मे तर्क देते हुए जी० वी० जोशी न टिप्पणी की कि यदि अन्यान्य बातो के साथ अपेक्षाकृत निर्धन वर्गों की स्थिति मे निरतर उत्तरोत्तर सुधार हुआ होता जिससे उनके पास उनके जीवन की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए अधिकाधिक सुविधा तथा अवकाश प्राप्त होता तो यह नमक कर इतना अधिक दुखद न होता ।[19] 1888 म इलाहाबाद काग्रेस म नमक कर प्रस्ताव को पेश करने वाले एन०बी०बरवे न अपनी मान्यता को सचित्र रूप मे प्रस्तुत करते हुए लिखा इस देश म लाख लाख एस लोग है कि जिनके लिए इन अतिरिक्त आठ आनो का अर्थ है वर्ष मे आठ दिन बिना भोजन किए व्यतीत

करना और विशेषत उन लोगो के लिए जिन्ह पहले ही 24 घटो म कठिनता स एक समय का खाना मिल पाता है।[192] कुछ राष्ट्रवादियो ने तो नमक कर के परिमाण का गणित रूप म सगणना करके इस तर्क का बढ-चढ कर समथन देना चाहा। उदाहरणाथ, 1890 म प्रिगल केनेडी न सगणना की कि पाच व्यक्तियो के परिवार की पाच रुपए प्रति मास की आय पर नमक कर 6 पाई प्रति रुपये की दर से पडता था जबकि निम्न स्तर पर आय कर की दर चार पाई प्रति रुपये प्रति व्यक्ति पडती थी।[194] इसी प्रकार डी० इ० वाचा ने उसी वष सगणना की कि यदि प्रति व्यक्ति आय को 2 पौंड भी मान लिया जाए तो नमक कर प्रति व्यक्ति आय का 1 1 प्रतिशत था।[195]

राष्ट्रवादियो के नमक कर विरोध का प्रधान आधार उसका दोषपूर्ण स्वरूप था जिसका उद्भव इस तथ्य स होता था कि यह कर देश के निधनो म अत्यन निधनो को, जो न तो किसी प्रकार के कर का भुगतान करने म समथ थे और न ही जिनकी आय कठिनता से भी तन और प्राण एक साथ रख पाने मे समथ थी, बहुतो की तो आय जीवन निवाह के ही उपयुक्त नहीं थी,[196] अत्यत भारीपन, दबाव तथा क्रूरतापूवक प्रभावित करता था।[19] यही मुख्य कारण था कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने बार बार इस टैक्स मे बढोतरी का विरोध किया। इस सदभ म थोडे से भारतीय नेताओ न राजस्व की असमानता और नमक कर की प्रतिगामी प्रवृत्ति का भी उल्लेख किया। 1871 म इसी प्रमुख आधार पर दादाभाई नौरोजी न नमक कर के विरुद्ध आपत्ति की। 'सिलेक्ट कमेटी आन ईस्ट इडिया फाइनास' को प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन मे दादाभाई ने निर्देश किया कि नमक कर के भार का परिमाण जितना अधिक गरीबो पर पडता था, अन्य धनिक वर्गों द्वारा भुगतान किए जाने वाले राजस्व के भाग का परिमाण उतना अधिक नही था। निधन कुलिया, श्रमिको और किसानो पर नमक कर का भार उनकी साधारण 20 शिलिंग वार्षिक आय का चार प्रतिशत था, यह बताने के उपरात उन्होने दृढ स्वर म कहा 'बीस शिलिंग प्रतिवष कमाने वाले निधन व्यक्ति के लिए चार प्रतिशत कर भी अपेक्षाकृत धनी वर्गो की आय पर दस अथवा बीस प्रतिशत कर की अपेक्षा अधिक महत्वपूण है।'[198] इसी प्रकार 1880 म 'जरनल आफ पूना सावजनिक सभा प्रकाशित 'फाइनास आफ इडिया अडर लाड लिटन' के अज्ञातनामा लेखक ने लिखा यह कर अपने परिमाण म धनिको और निधनो को समान रूप स प्रभावित करता है किंतु उनके साधनो के अनुरूप उन्हे प्रभावित नही करता। यही एक प्रबलतम कारण है कि इसे बराबर नीची दर पर ही रखा जाए जिससे यह निधन जनता के लिए दुखद सिद्ध न हो।[199] इसी प्रकार की भावनाए अन्य नेताओं ने भी प्रकट की।[00] हा जी० वी० जोशी ने अवश्य ही इस दष्टिकोण को 1886 म अत्यत स्पष्टता तथा निव्याजता के साथ अपने लेख म प्रस्तुत किया। उनका तक था कि रकम के भुगतान मे समानता एक प्रकार की झूठी समानता है। यह सच्ची समानता अथात 'बलिदान की समानता' नही है।[01] दो वर्षो के उपरात 1888 म उन्होंने यह दिखाने का प्रयत्न किया कि नमक कर म वद्धि लोक करो के निधनो और धनिको म वितरण की विषमता को और गहरा करती है।[0-]

भारतीय नेताओ द्वारा अपनाई गई दूसरी कसौटी नमक कर का नमक की खपत पर

भूखा मरते निधना का रक्त चूसने वाली कर पद्धति, कितनी ही महत्वपूर्ण आवश्यकता से प्रेरित क्यो न हो, सर्वथा निंदनीय तथा स्पष्टतया तिरस्करणीय है। कोई भी राजस्व कानून, राजनीतिक अर्थव्यवस्था का कोई भी सिद्धात इस प्रकार का क्रूर कर पद्धति लागू करने की स्वीकृति नही देता। कितनी ही बडी अपरिहार्य आवश्यकता क्यो न हो ? राजस्व सबधी सकटकालीन स्थिति कितनी ही विषम और असह्य क्यो न हो ? जनसाधारण के कष्टो को इस प्रकार की निमम उपेक्षा को किसी भी रूप म न्यायोचित नही ठहराया जा सकता।

इस कथन के उपरात आक्रोश और निराशा से पूर्ण लेखक ने अपना अतिम निर्णय देते हुए लिखा परतु दुख ता यह है कि हमारा वित्तीय प्रशासन सामान्य मानवीयता की दुर्बलता स परिचित ही नही, उसे सघर्षशील दरिद्रता म किसी प्रकार की सहानुभूति ही नहीं।[9]

1868 के उपरात नमक कर विरोधी आदोलन म महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले दूसरे प्रमुख नेता थे गोपालकृष्ण गोखले। उन्होने जोशी का अनुसरण ही नही किया प्रत्युत सभी महत्वपूर्ण स्थितियो म उन्होंने जोशी द्वारा प्रस्तुत तर्कों के साथ साथ उनके ही द्वारा उदधृत साख्यिकी सगणनाओ को दोहराया। इस दिशा मे उनका महत्वपूर्ण योगदान यह था कि उन्होने जोशी के कार्य को लोकप्रिय बनाया।[10]

नमक कर के विरुद्ध राष्ट्रवादियो का दूसरा आरोप यह था कि इसमे नमक जैसी आवश्यक उपभोग्य वस्तु की पर्याप्त मात्रा म अनुपलब्धि के कारण पशुओ और भूमि को नमक स वचित करके कृषि को हानि पहुचाने की प्रवृत्ति निहित थी।[11] इसके अतिरिक्त जी० वी० जोशी और गोपालकृष्ण गोखले न नमक कर की इस रूप म भी निंदा की कि नमक उद्योग पर कर एक औद्योगिक कर था क्योकि इसके परिणामस्वरूप एकाधिकार पद्धति को बढावा मिलता था अत इससे भारत की विशेषतया आवश्यक और सशक्त आर्थिक प्रगति बुरी तरह से प्रभावित होती थी।[1] इसके साथ ही साथ उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि नमक कर लगाने के फलस्वरूप अस्तित्व मे आने वाले कतिपय विभिन्न तत्व जैसे कि नमक पर सरकार का एकाधिकार, विभिन्न प्रातो मे नमक कर का समानीकरण और कर की ऊची दरें आदि भारत के विभिन्न प्राता मे विशेषतया बगाल म एक फलते फूलते स्थानीय उद्योग को प्रतिबाधित और विनष्ट करने म तथा स्वदेशी उत्पादन को बाजार से निकाल फेंकने म उत्तरदायी सिद्ध हुए हैं।"[13] जी० वी० जोशी न तो इस सीमा तक आरोप लगाया कि बगाल मे उद्योगो का सामूहिक ह्रास सभी देशी उद्योगो को विदेशियो का हस्तातरित करने की कर नीति की एक चातुरीपूर्ण रणनीति है।[14] उन्होने यह आशका भी प्रकट की कि एकाधिकार की मध्यवर्ती स्थिति अपनाए बिना ही कपटपूर्ण ढग स बगाल की ही घातक नीति बबई मे भी अपनाई जाने लगी है।[15] "

कराधान के वैकल्पिक साधन

बहुत सारे भारतीय नेताओ ने धीमे स्वर मे या खुले रूप म यह अभिस्वीकार किया कि बजट के घाटे ने सचमुच ही सरकार को इतनी ऊची दर पर नमक कर बनाए रखने के

यदि परम श्रेष्ठ वायसराय महोदय मांचेस्टर से आने वाले सूती सामान पर आयात कर लगाने का निश्चय करते तो इससे मांचेस्टर के व्यापारियों म व्याकुलता फल जाती क्या कृपालु ब्रिटिश सरकार ससद के चुनाव के समय उपयोगी सहायता देने वाला के प्रति कृतघ्न हो सकती थी? यदि आय कर म वद्धि की जाती तो उसका भार अधिकाशतया उच्च यूरोपीय अधिकारियों और यूरोपीय व्यापारियो पर पडता। विनिमय की दर पहले से ही ऊची होने के कारण यह भार उनकी कमर तोडने वाला होता और इससे व विद्रोह के लिए उठ खडे होते। क्या लाड डफरिन जसा समझदार व्यक्ति इस प्रकार के विरोधी तत्वो को उभार कर अपने उज्वल नाम को कलकित करेगा? सक्षेप म लाड डफरिन ने इन दोनो विकल्पो को अस्वीकार कर तथा नमक कर मे वद्धि के अवशिष्ट उपाय को अपना कर अपनी प्रतिभा का ही परिचय दिया है। लाड डफरिन को यह भली भाति ज्ञात है कि भारत की निहत्थी और वफादार जनता जब तक भी वह जीवित है, किसी माग के प्रति इनकार के स्वर का उच्चारण नही करगी। भारतीयो का सगठनात्मक रूप मे सुदृढ होने की भी तो आवश्यकता नही क्योकि सरकार ने कृपापूवक उनकी सुरक्षा का दायित्व लिया हुआ है।[5]

इसी प्रकार इडियन स्पेक्टेटर' ने अपने 22 जनवरी 1888 के अक म लिखा

अथवा कदाचित सरकार लोकमत स भयभीत है क्योकि यह निश्चित है कि धनिक वर्गों पर लगे करो मे किसी प्रकार की वद्धि के परिणामस्वरूप पचीस करोड लोगो के प्रतिनिधियो के विरोध के रूप मे सरकार का बुरा समय देखना पडता, जबकि बीस करोड लोगो के मुह म जबान ही नही जिससे नमक कर मे वद्धि के विरुद्ध उनके द्वारा किए जाने वाले किसी प्रकार के विरोध की सभावना हो। सरकार की न्याय भावना के प्रति कुछ न कहा जा जाए, इतना तो निश्चित है कि भारत सरकार इस पीढी मे काफी समझदार है।[6]

22 जनवरी 1888 के 'मराठा' 25 जनववरी 1888 के हिंदू', 26 जनवरी 1888 के अमत बाजार पत्रिका, 28 जनवरी 1888 के 'बगाली ने तथा 4 फरवरी 1888 के 'सजीवनी ने इसी स्वर म अपना मत प्रकट किया।[7] जी० वी० जोशी ने इस विषय मे सरकार की कायवाही के पीछे निहित कारणो का समान भावना से उल्लेख किया।[8] 18 माच 1888 के मराठा ने तो यहा तक दावा किया कि नमक कर स जुडा विचारणीय प्रश्न वस्तुत यह है कि भारत देश भारतीयो के लिए है अथवा औरो के लिए?

राजनीतिक सीख

बहुत सार राष्ट्रवादी समीक्षको ने विधान परिषद के दो नामजद सदस्यो, प्यार मोहन मुकर्जी और दिनशा पेटिट के 1888 म नमक कर मे वद्धि को समथन देने के व्यवहार की तीव्र भत्सना की।[9] उन्होने इसे राष्ट्रवादियो की इस धारणा के प्रमाण रूप म प्रस्तुत किया कि वतमान विधान परिषदें भारतीय लोकमत को न सही रूप में प्रतिबिंबित करती है और न कर सकती है और न ही यह देश के जनसाधारण के हितो की रक्षा कर सकती

हैं। अत इन विधानपरिषदो मे लोकप्रिय तत्वो को सम्मिलित करके इनका सुधार करना चाहिए।"[30] इस निष्कर्ष का जी० वी० जोशी ने अच्छा समर्थन दिया। उन्होंने टिप्पणी करते हुए लिखा कि 'नमक कर मे वृद्धि सबधी चर्चा विधान परिषद के लिए अपमानजनक है। और देशी सदस्यों के लिए तो यह और भी अधिक अपमानजनक है। इन सबसे बढकर तो व्यवस्था के लिए ही यह सर्वाधिक अपमानजनक है।'[31] इसी प्रकार कांग्रेस के 1890 के अधिवेशन मे मदनमोहन मालवीय ने कहा हम इस बात पर सतोष कर लेंगे कि विधान परिषद मे कोई गैरसरकारी सदस्य न हो परतु हमारे लिए इस बात पर सतोष करना सभव नही कि ऐसे लोग गैरसरकारी सदस्य हैं जिनका जनता से साथ किसी भी प्रकार का कोई सपर्क नही जो जनता की वास्तविक स्थिति से सर्वथा अनजान हैं तथा जनता के प्रति अनिवार्यतया वाछनीय सहानुभूति न दिखाकर उसके प्रति विश्वासघात करते हैं।' उन्होंने पी० एम० मुकर्जी और दिनशा पटिट को निजी आय का उपभोग करने वाले और ऊचे वेतन पानेवाले अत्यत सम्मानीय सज्जन बताते हुए आलकारिक भाषा मे पूछा 'सज्जनो, क्या आपको विश्वास है कि विधानपरिषद के चुनाव मे यदि जनता के मत के लिए कोई अवकाश हो तो क्या जनता इन लोगो को सदस्य के रूप मे भी कभी चुनेगी?' श्रोताओ की ओर से नही नही कभी नही की तुमुल ध्वनि के मध्य उन्होंने पुन पूछा कि और यदि किसी भी प्रकार की गलती से ये लोग एक बार विधानपरिषद के सदस्य नियुक्त हो भी गए तो क्या अगले चुनाव मे उन्हें अपमान और घृणा के साथ ठुकरा नही दिया जाएगा।[32]

निष्कर्ष

नमक कर के प्रति राष्ट्रीय दृष्टिकोण के उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने नमक कर मे कटौती और उस कर को समाप्त करने की माग को राष्ट्रीय स्तर पर और राष्ट्रीय नीति के रूप मे ही अपनाया था। वस्तुत इस माग का नेताओ ने चालू वित्त नीति की निंदा और उसकी व्यावहारिकता के आगे प्रश्नचिह्न लगाने के लिए उपयोग किया। इसके साथ ही साथ इस मामले मे राष्ट्रवादी नेताओ ने देश की निर्धन जनता के हितो का सही रूप मे और तत्परतापूर्वक अभिव्यक्ति दी और इसके द्वारा उन्होंने उभरते हुए राष्ट्रीय आदोलन मे निर्धन जनता को साथ लेकर चलने का प्रयास किया। वस्तुत इस प्रयास मे निर्धनो को साथ लेकर चलने के तथ्य को भारतीय नेताओ ने अत्यत स्पष्टतापूर्वक समझ लिया था। 1890 मे राष्ट्रीय कांग्रेस के छठे अधिवेशन मे नमक कर मे कटौती की माग के प्रस्ताव को पेश करते हुए ईंगले केनेडी ने प्रतिनिधियो को निम्नलिखित अवतरण मे इस प्रकार सबोधित किया

> प्रतिनिधि मित्रो! क्या आप उन लोगो के कथन को जो आप पर यह आरोप लगाते हैं कि आपका मामला निजी स्वार्थ मे प्रेरित है और आपका आदोलन मात्र कृष्ण वर्ण के शूद्रो की गौर वर्ण के ब्राह्मणो के प्रति घृणा को अगरेजो के प्रति घृणा के रूप मे परिवर्तित करने के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं यह कहकर गलत सिद्ध कर सकेंगे कि यदि गुलामी का यह जुआ और किसी रूप मे कम दुखदायी नहीं बनाया जा

सकता तो हम पर ही कर लगाइए, धनिका पर कर लगाइए परन्तु कृपा करके निधनो को तो क्षमा कर दीजिए।[33]

इसी प्रकार 1892 म काग्रेस के एक प्रतिनिधि जी० एस० सपर्दे ने नमक कर पर प्रस्ताव को दरिद्र नारायण की काग्रेस से विनय के रूप म वर्णित किया।[34]

इसके विपरीत राष्ट्रीय नेताओ ने इस मामले म देश के धनिका के हितो की सुरक्षा की कोई चिता नही की अन्यथा धनिक वर्गों के प्रवक्ता के रूप म वे भी इसी विश्वास स कि इससे धनिको पर लगे आय कर जैसे अन्याय करो की समाप्ति म सहायता मिलगी नमक कर को बनाए रखने तथा उसम वृद्धि करन का समथन ही करते।[35] राष्ट्रवादियो की स्थिति और धनिक वर्गो के हितो के बीच अतर को स्पष्ट रूप मे तभी देखा जा सकता है यदि जमीदारो, बडे बडे व्यापारियो और गैरसरकारी अगरेजो के समकालीन प्रवक्ताओ द्वारा अपनाए गए और सावजनिक रूप स अभिव्यक्त कर समथक दृष्टिकोण के सदभ मे राष्ट्रवादी नताओ के दृष्टिकोण को देखा जाए। 1882 मे कलकत्ता क व्यापारियो के प्रवक्ता दुर्गाचरण लाहा ने इपीरियल विधानपरिषद मे नमक कर म कटौती की विचाराधीन नीति को भावनात्मक बताकर इसका विरोध किया। उन्होंने सुझाव दिया कि इससे अच्छा तो यह होता कि इसके बदले सरकार देश की परिस्थितियो के अनुकूल न बैठने वाले प्रत्यक्ष करो को हटा ही देती।[36] विधानपरिषद मे बगाल के जमीदारो के प्रतिनिधि महाराजा जीतेंद्र मोहन टैगोर ने लाहा के मत का पूरा पूरा समथन किया।[37] इसी प्रकार बगाल के जमीदारो के एक अन्य प्रवक्ता प्यारेमोहन मुकर्जी न बबई के व्यापारियो के प्रवक्ता दिनशा पेटिट तथा भारत मे रहन वाले ब्रिटिश सरकारी कमचारियो और व्यापारियो के अनेक प्रवक्ताओ न 1888 म नमक कर म की गई वृद्धि का पूरा पूरा समथन किया।[38] 1887 के बगाल राष्ट्रीय वाणिज्य सदन की समिति के प्रतिवेदन मे यह दावा किया गया कि आय कर की वतमान दर को दुगना करने की अपेक्षा नमक कर म वृद्धि कम आपत्तिजनक थी।[39] सदन के 1889 के अध्यक्ष और सचिव ने तो पूरी शक्ति और दृढता के साथ नमक कर म किसी प्रकार की कटौती का विरोध किया।"[40]

उत्पाद राजस्व

राजस्व का एक महत्वपूर्ण स्रोत तथा एक अन्य परोक्ष कर उत्पादनो पर उत्पादन शुल्क के रूप मे तथा मादक द्रव्यो शराब, भाग धतूरा और अफीम, बेचने के लिए लाइसेंस फीस के रूप मे लगाया गया कर था। इस साधन स होन वाली कुल आय 1860-1 म 1 18 करोड रुपय से 1880 01 मे 3 19 करोड तथा 1902 03 मे 6 64 करोड रुपये हो गई।[41] हमने यहा देशी अथवा कच्ची शराब से प्राप्त होने वाले राजस्व के उस पक्ष विशेष का ही यहा विवेचन प्रस्तुत किया है जो इस मद स होन वाली आय का प्रमुख भाग था।[4] देशी शराब पर शुल्क पद्धति देश के भिन्न भिन्न भागो मे है। इन पद्धतियो को मोटे तौर पर परस्पर दो वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है (1) केंद्रीय शराब कारखाना पद्धति इसके अतगत उत्पादित तथा बिक्री के लिए अनुमप्त प्रत्यक गलन

शराब पर एक निश्चित शुल्क लगाया जाता था, (2) ठेका बिक्री पद्धति, इसके अतगत उत्पादित मात्रा पर शुल्क न लगाकर कुल उत्पादन पर शुल्क लगाया जाता था और उसका भुगतान एक मुश्त नीलामी के आधार पर किया जाता था। स्पष्ट है केंद्रीय पद्धति की अपेक्षा ठेका बिक्री पद्धति म शराब की खपत पर सरकारी नियत्रण का अवकाश काफी कम था। [45] 1890 के वर्षों मे शराब की न्यूनतम खपत से अधिकतम राजस्व की उगाही भारत सरकार की एक नीति थी। इसका अथ था शुल्क की दर का बढाना तथा शराब की बिक्री के स्थानो को इस सीमा तक प्रतिबधित करना कि उसकी खपत न्यूनतम हो जाए। इसके साथ ही साथ गैरकानूनी शराब के उत्पादन को भी सीमित कर दिया गया।[211] कम से कम 1890 के पश्चात तो क्रमश नीलामी पद्धति को हटाते जाना और केंद्रीय शराब कारखाना पद्धति का विस्तार करना सरकार की निश्चित निर्धारित और और घोषित नीति बन गई। [4]

भारतीय नेताओ ने मादक द्रव्यो की खपत और उन पर कराधान के प्रश्न को बहुत अधिक महत्व दिया। भारतीय नेता कुल मिलाकर मदिरा के प्रयोग के विरुद्ध थे और देश म मदिरापान की प्रवृत्ति के प्रसार के विरोधी थे। उनके विचार मे मदिरापान की प्रवृत्ति एक घातक दोष तथा भयकर उत्पात था जो नैतिकता को ध्वस करने वाला एक प्रकार का पापमय कृत्य था, आर्थिक दृष्टि से देश को दरिद्र और शारीरिक दृष्टि स दुबल बनाने वाला था। [16] कुछ नेताओ का तो यहा तक विश्वास था कि मदिरापान की प्रवृत्ति के विकास से श्रमिको की कायक्षमता घट जाने से औद्योगिक प्रगति दुष्प्रभावित होगी।[217]

मदिरा की खपत मे वृद्धि की निंदा करते समय भारतीय नेताओ ने यहा एक बार फिर 'पहली चपत सरकार के मुह पर मारी। उन्होने सरकार पर यह आरोप लगाया कि वह और उसकी आबकारी नीति ही मदिरापान की प्रवृत्ति के प्रसार के लिए पूरी तरह उत्तरदायी थी। उन्होंने अधिकतम उत्पादन शुल्क की वसूली के लिए जानबूझकर अथवा अनजाने मदिरापान की प्रवृत्ति का प्रोत्साहित करने के लिए अथवा तत्परता के साथ उसे निरुत्साहित करने मे असफल रहने के लिए सरकार की तीव्र भत्सना की।"[48] 1880 के वर्षो म बगाल मे तो सरकारी उत्पादन शुल्क नीति की आलोचना अत्यत उग्र तथा निरतर थी क्योकि वहा उस प्रात म ठेका पद्धति प्रचलित थी जिस पर मदिरा को सस्ता करने का आरोप लगाया जा रहा था। [49]

भारतीय नेताओ ने यह भी दोष लगाया कि एक ओर तो सरकार सावजनिक रूप से तथा सिद्धात रूप स मदिरापान की प्रवृत्ति को निरुत्साहित करने का दावा करती है परतु दूसरी ओर व्यावहारिक रूप मे उसकी नीति का प्रभाव सवथा विपरीत रूप म पड रहा है। [50] प्रशासन द्वारा उत्पादन शुल्क की वसूली म वृद्धि करने वाले सरकारी अधिकारियो की मुक्तकठ से प्रशसा करने, उन्हे उन्नति देने तथा इस वसूली म वृद्धि न कर पाने वाले अधिकारियो की निंदा करने की नीति अपनाने का वास्तविक परिणाम यह देखने मे आया है कि सरकारी कमचारी मदिरा की खपत का बढाकर उत्पादन शुल्क की वसूली मे वृद्धि करने के प्रति और उत्साही बन गए हैं। [51] यहा यह उल्लेखनीय है कि इस

विषय मे सरकारी पक्ष के प्रवक्ता भी राष्ट्रवादियो के आरोप का प्रत्याहार करने मे तथा उत्पादन राजस्व म वृद्धि का कारण उत्पादन शुल्क की ऊची दर और उस पर अपेक्षाकृत अधिक नियन्त्रणो को सिद्ध करने मे कम उत्साही तथा कम तत्पर थे। यह पर्याप्त रोचक तथ्य है कि कुछ एक अन्याय सदर्भो म सरकारी अधिकारियो न परोक्ष रूप म मदिरा की खपत मे वृद्धि का स्वीकार तो किया परतु इस सरकार ने जनता की बढती सपन्नता के सकेत के रूप म ही प्रस्तुत किया।[53] राष्ट्रवादी नेताओ न प्रश्न के समग्र रूप के अनुरूप ही सरकारी मान्यता का खडन किया और उसके विपरीत यह धारणा प्रस्तुत की कि मदिरापान ने पियक्कडो और उनके परिवारो म दुर्भाग्य, विनाश और दरिद्रता का आधिपत्य स्थापित कर दिया है।[54]

राष्टवादी नेताओ का इस तथ्य के प्रति निश्चित मत था कि मदिरापान के व्यसन के विरुद्ध सघर्ष करने मे शिक्षा एक अत्यत मद प्रभाववाला शस्त्र था। इस व्यसन के प्रसार का तत्काल कम करने के लिए प्रशासकीय उपाय ही उपयोगी सिद्ध हो सकते थे।[55] अत उन्होने मदिरापान के विरुद्ध लोकप्रिय आदोलन छेडने की ओर विशेष ध्यान नही दिया। उन्होने अपना सारा ध्यान और सारे प्रयास सरकार से जनता के नैतिक व्यवहार की श्रेष्ठता के आदर्श के समक्ष राजस्व के दृष्टिकोण को गौण बनाने और इस प्रकार मदिरापान की प्रवत्ति को निरुत्साहित करने की नीति को अपनाने के लिए अनुरोध और विवश करने पर ही केंद्रित किया।[256] उन नेताओ द्वारा सुझाए गए लगभग सभी प्रशासकीय उपायो का उद्देश्य मधुशालाओ और मदिरा बिक्री की दुकानो की सख्या घटा कर मदिरा को महगा और मदिरा की प्राप्ति को दुर्लभ तथा कष्टसाध्य बनाना था। नेताओ द्वारा प्रचारित उपायो म जिस उपाय को सर्वाधिक व्यापक लोकप्रियता मिली, वह था स्थानीय लोकमत। उन्होने माग की कि किसी भी स्थान पर नई मदिराशाला अथवा नई मदिरा बिक्री दुकान को खोलने के प्रश्न को निर्णय के लिए प्रत्यक्ष रूप से अथवा स्थानीय नगरपालिका जैसी सस्थाओ के माध्यम से अभिव्यक्त लोकमत को निर्णायक तत्व के रूप मे ही ग्रहण करना चाहिए।[257] एक अन्य लोकप्रिय माग जो अधिकाशत बगाल तक ही सीमित रह गई वह थी ठेका प्रथा की समाप्ति।[58] जब 1889-90 की अवधि म बगाल के अधिकाश भागो म ठेका पद्धति समाप्त कर दी गई, स्वय भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने आगे बढकर उसका स्वागत किया।[59] राष्ट्रवादियो ने मदिरा पर आयात कर और उत्पादन शुल्क बढाने का समर्थन किया।[60] कुछ ने तो सरकार स मदिरा बिक्री केंद्र बद करने मदिरा की परचून बिक्री की दुकानो को लाइसेंस देने म कठोरता बरतने जैसे विशुद्ध प्रशासनिक पग उठाने का अनुरोध किया।[61] यह भी कम आश्चर्यजनक नही कि राष्ट्रवादी नेताओ मे इन सभी उपायो की वकालत करते हुए नशाबदी को कोई विशेष महत्व नही दिया। सभवत उनके विचार म यह उपाय व्यावहारिकता तथा सभावना के क्षेत्र म बाहर था।[6]

मदिरा से सबद्ध उत्पादन शुल्क स प्राप्त होने वाले राजस्व के प्रति राष्ट्रवादियो के दृष्टिकोण से उपर्युक्त विश्लेषण स यह स्पष्ट हो जाता है कि उनका दृष्टिकोण और उसके पीछे प्रेरणा विशुद्ध राष्ट्रीय ही थी। भले ही मदिरा उत्पादन शुल्क राजस्व का एक

फलता फूलता साधन था और इसका भुगतान केवल मदिरा के वास्तविक उपभोक्ताओ द्वारा ही किया जाना था जिससे देश की सामान्य जनता पर अतिरिक्त कर लगाने की आवश्यकता नही थी फिर भी राष्ट्रवादी नेताओ ने सवसाधारण की हितकामना की दृष्टि से इसे देखा और इस रूप मे उसकी निंदा करने म किसी प्रकार का कोई सकोच नही किया। इस सबध मे राष्ट्रवादियो की नीति के इस पक्ष को एक और दष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। मदिरा को अपेक्षाकृत अधिक महगा करने की राष्ट्रीय नीति अपनाने पर एक ओर मदिरा का सेवन करने वाले भारतीय नेताओ का भी घाटे मे रहना स्पष्ट था, दूसरी ओर मदिरा की पूर्ति मे कटौती का स्वाभाविक परिणाम उत्पादन शुल्क म ह्रास था और यह मदिरापान न करने वालो के हित के सवथा विरुद्ध था। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस मामले म वित्तीय विषयो मे भी भारतीय राष्ट्रवादियो ने नि स्वाथपरता और परोपकारिता का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया।

विचाराधीन प्रश्न से सबधित दो अन्य तत्व भी यहा उल्लेखनीय है, प्रथम, कालातर म भारत मे राष्ट्रीय आदोलन मे एक प्रबल राजनैतिक शस्त्र के रूप म प्रयुक्त मदिरा विरोधी सघष के इस रूप मे प्रयोग करने की प्रवत्ति का इस समय तक अभाव था। उच्च भारतीय नेताओ मे यह भावना अवश्य उभरने लगी थी कि मदिरा विरोधी आदोलन का जनता का राजनीतिक कार्यो का प्रशिक्षण देने के लिए उपयोग किया जा सकता है। 17 अप्रल 1905 म ऐंग्लो इडियन टेंपरेंस एसोसिएशन के अधिवेशन म बोलते हुए दादाभाई नौरोजी ने कहा

> भारत म इन लोगो की सस्था की 300 शाखाए थी और इसका अथ था कि नीचे से ऊपर तक के सभी वर्गों, धर्मों और स्थितियो के लोग परस्पर सगठित होने, एक दूसरे के प्रति भ्रातभाव अपनाने तथा एक महान उद्देश्य के लिए काय करने का पाठ सीख रहे थे। यह सस्था भारत मे मदिरापान के व्यसन को निर्मूल करने के लिए ही प्रयास शुरू करने नही जा रही थी, प्रत्युत समान रूप से ही महत्वपूण परस्पर सगठित होने के उच्च विचारो को अपनाने के लिए भी जनसाधारण को प्रशिक्षित करने जा रही थी। यह सघ प्रवत्ति इन लोगो के लिए सचमुच अत्यत उपयोगी सिद्ध होगी।[63]

द्वितीय, विदशी सरकार के मदिरापान के प्रसार के लिए दायी घोषित करने की प्रवृत्ति ने भारतीय उत्पादन शल्क नीति को एक राष्ट्रीय रग दिया।

अफीम से प्राप्त होने वाला राजस्व

अफीम भारत सरकार के राजस्व का एक अन्य महत्वपूण स्रोत था। 1884 तक यह बजट की द्वितीय और 1884 के उपरात ततीय सर्वाधिक महत्वपूण और लाभप्रद मद थी। इसकी वसूली मे वष प्रतिवष बडे ही भयकर रूप स उतार चढाव आता रहता था और इसके फलस्वरूप भारतीय वित्त को निश्चित रकम की वसूली मे सदव अस्थिरता और अनिश्चितता रहती थी। उदाहरणाय, 1880 81 मे अफीम स प्राप्त होन वाली विशुद्ध रकम 8 45 करोड थी, 1890-91 म 5 70 करोड और 1900 91 मे 4 97 करोड थी

जबकि 1897-8 मे यह 2 70 करोड की निम्न सीमा को पहुच गई।[264] अफीम राजस्व की वसूली बगाल अफीम के निर्यात से जिसका उत्पादन बगाल सरकार के अधिकार के अतगत बिहार, उत्तर-पश्चिम प्रात और अवध के राज्य एकाधिकार व्यवस्था के अतगत होता था तथा बबई म मालवा अफीम पर भारी नियात शुल्क के सग्रह से होती थी। निर्यातित अफीम का अधिकाश चीन को भेजा जाता था और उसका एक भाग उत्पादन और राजस्व पद्धति के अतगत भारत मे बेचा जाता था जिसकी बिक्री से प्राप्त आय उत्पादन कर के खाते मे जमा की जाती थी। अफीम से प्राप्त होने वाला उत्पादन शुल्क 1870 1871 म 36 लाख था जो धीरे धीरे बढकर 1900 01 मे 103 लाख हो गया।[65]

सारी 19वी शताब्दी म ब्रिटेन की विभिन्न पत्र पत्रिकाओ और अनेकानेक लोक सस्थाओ ने नैतिकता और मानवीयता के आधारो पर चीन के साथ ब्रिटेन के अफीम के व्यापार की कटु आलोचना की। 1888 मे अफीम व्यापार निरोध सघ (सोसाइटी फार दि सप्रेशन आफ दि ओपियम ट्रेड) की स्थापना के रूप मे अफीम व्यापार के, सरकार द्वारा उसे दिए जा रहे सरक्षण के तथा उसके उन्नयन के विरुद्ध एक सुनियोजित आदोलन प्रारभ हुआ।[66] इस आदोलन के फलस्वरूप 10 अप्रल 1891 को हाउस आफ कामस ने एक प्रस्ताव पास किया जिसमे इस बात को दृढतापूवक स्वीकार किया गया कि भारत म अफीम से वसूल किया जाने वाला लगान अनैतिक था। इसके साथ ही भारत सरकार पर दबाव डाला गया था कि उचित रूप मे औषधि के रूप मे प्रयोग म आने वाली माग को छोड कर उसे पोस्त की खेती और अफीम की बिक्री के लिए लाइसेंस देना बद कर देने चाहिए। 1893 मे इस प्रश्न को उसके समग्र रूप मे देखने और उसकी छानबीन करने के लिए एक राजकीय आयोग (रायल कमीशन) नियुक्त किया गया। कमीशन ने 1895 मे अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और यथास्थिति मे किसी भी प्रकार का परिवतन न करने की सलाह दी।[267] इन सभी वर्षों मे भारत सरकार ने अफीम के व्यापार का निषिद्ध और प्रतिबधित करने के किसी भी प्रस्ताव का तीव्र प्रतिवाद किया। भारत सरकार का प्रमुख तक यह था कि इस प्रकार के पगो से वित्तीय तथा राजनीतिक स्थितियो के दुष्प्रभावित होने की आशका थी।[268]

अफीम व्यापार और उससे प्राप्त होने वाले राजस्व के प्रति भारतीय नेताओ के दष्टिकोण का अध्ययन रोचक है। उनके सामने एक ऐसी स्थिति आ गई थी जहा उन्हे दो बातो मे से एक का चुनाव करना था प्रथम, अपना राष्ट्रीय हित, जो अनेक अन्य मामलो म उनका पथप्रदशक तत्व बना रहा था, द्वितीय मानवीयता और परोपकार की भावना, जिसके आधार पर वे प्राय ब्रिटिश सरकार से आर्थिक तथा राजनीतिक रियायतें देने के लिए निवेदन करते आ रहे थे।

अफीम कर के नैतिक पक्ष के सबध मे अधिकाश राष्ट्रीय नेताओ ने सरकारी स्थिति के प्रतिकूल पक्ष ही ग्रहण किया। उनका यह पक्ष इस लगान के विरोधी आलोचक अगरजो की स्थिति के ही अधिक निकट था क्योकि इन नेताओ ने खुले तौर पर घोषित किया कि अफीम का व्यापार और उससे उगाहा जाने वाला कर दोनो सवथा अनैतिक होने के कारण अत्यत निदनीय थे। 1870 मे ही केशवचद्र सेन ने हजारो दरिद्र चीनियो के हत्यारे

अन्यायपूर्ण अफीम व्यापार को हटाने की माग की।[69] 1880 म दादाभाई नौरोजी ने बड़े क्षोभपूर्ण स्वर म घोषणा की कि अफीम व्यापार इग्लड के मस्तक पर कलक का टीका है और भारत के लिए इसमे भागीदार होना अभिशाप रूप है।[70] उसी तीव्र स्वर मे 7 अगस्त 1881 के अक मे 'मराठा' ने 40 करोड मानवो को विष देन के अभिशाप को भारतीय जनता के मत्थे मढने के विरुद्ध विरोध प्रकट किया।[1]

दादाभाई नौरोजी और रमेश चद्र दत्त अफीम से प्राप्त राजस्व की प्रवृति के सबध मे सरकारी दृष्टिकोण से असहमत थे। सरकारी दृष्टिकोण यह था कि अफीम लगान का भुगतान भारतीय जनता द्वारा नही प्रत्युत चीनी उपभोक्ताओ द्वारा ही किया जाता है।[7] नौरोजी और दत्त का विपरीत मत यह था कि वस्तुत यह भारतीय जनता पर एक गुप्त कर है क्योकि यदि अफीम व्यापार पर सरकार का एकाधिकार न होता तो अफीम कर के रूप म सरकार को होने वाले सारे के सारे लाभ भारतीय जनता को उपलब्ध होते।[73]

अफीम व्यापार के प्रमुख प्रश्न अफीम व्यापार को खत्म करन पर भारतीय नेताओ मे मतभेद उत्पन्न हो गए। जहा अधिकाश नेताओ ने इस प्रकार का पक्ष ग्रहण किया जो भारत सरकार की नीति से बहुत कुछ मिलता जुलता था वहा उल्लेखनीय सख्या म नेताओ ने मानवीय आधारो पर अफीम व्यापार को त्यागने का भी पक्ष ग्रहण किया। प्रथम पक्षवालो का तर्क था कि कोरी भावना को आधार बना कर अफीम कर की बलि चढाने की बात कहना युक्तिसगत नही लगता क्योकि अफीम से प्राप्त होने वाली राशि भारतीय वित्त का एक उल्लेखनीय अश है और उसे छोडने का अर्थ होगा उसके स्थान पर अन्य नए कर लगाना। अत उन्होने उस समय इग्लड मे चलाए जा रहे अफीम विरोधी आन्दोलन की तीव्र आलोचना की।[74] इस प्रकार 'अमृत बाजार पत्रिका' न अपन 9 जुलाई 1880 के अक म टिप्पणी करते हुए लिखा 'नैतिकता के दृष्टिकोण से राजस्व के इतन अच्छे स्रोत को छोडकर उसकी पूर्ति के लिए नए करो को लगाने के रूप म पहले ही निधन तथा अभावग्रस्त जनता के जीवन रक्त को निचोडना हमारी विनम्र नैतिक सम्मति म ऊचे स्तर की अनैतिकता होगी।'[7] सघर्षशील साधारण ब्रह्म समाज का उच्च नैतिक मुखपत्र 'ब्राह्म पब्लिक ओपीनियन' ने 15 जुलाई 1880 के अक मे अफीम लगान के सबध म आदर्श नैतिक दृष्टिकोण अपनाने के रूप मे भारतीय अर्थव्यवस्था को अस्त व्यस्त करने के विरुद्ध चेतावनी दी।[76] यहा तक कि भारत मे सामाजिक सुधारो के लिए सतत यत्नशील तथा प्रचड प्रवक्ता इडियन स्पेक्टेटर' ने अपने 12 मार्च 1882 क अक मे इग्लड के अफीम विरोधी आदोलन करने वालो को अच्छी भावनाओ से प्रेरित परतु अज्ञानी कट्टर लोगो का शक्तिशाली वर्ग बताया।[7] एक अन्य सुधारक पत्र हिंदू ने अपने 3 जुलाई 1883 के अक मे घोषणा की कि वह अफीम राजस्व को हटाने की माग का केवल इस शर्त पर समर्थन कर सकता है कि इग्लड के करदाता इससे भारत सरकार को होने वाली क्षति की पूर्ति करने का वचन दें।[278]

बहुत सारे भारतीय नेताओ ने अग्रेजो के अफीम विरोधी प्रयास को दूसरे लोगो के मूल्य पर लोकोपकार के दभ का रूप देते हुए उस पर तीखे व्यग्य प्रहार किए। उनका सुझाव था कि यदि ब्रिटिश लोग चीनियो के कल्याण के प्रति सचमुच ही उत्सुक थे

उन्हें अपनी सरकार पर भारत सरकार को अफीम राजस्व में खोने से होने वाली क्षति-पूर्ति के लिए दबाव डालना चाहिए। [9] यह भी पर्याप्त रोचक तथ्य है कि ब्रिटेन के अफीम विरोधी आंदोलन के जिन अग्रणियों की ईमानदारी के आगे प्रश्नचिह्न लगाया गया और जिन्हें मूर्ख तथा कट्टर की उपाधियों से विभूषित किया गया, उनमें भारत समर्थक, राष्ट्रीय कांग्रेस के उत्साही पक्षधर, संसद सदस्य डब्ल्यू एस० केन और सैमुअल स्मिथ जैसे लोग भी सम्मिलित थे।

भारतीय नेताओं के इस वर्ग ने अफीम व्यापार को प्रतिबंधित करने के विरोधी अपने पक्ष के समर्थन में कुछ और रोचक तर्क भी पेश किए। प्रथम उनका निश्चित मत था कि चीन के दोषों में सुधार के कार्य को हाथ में लेने से पहले अधिकारियों और सुधारकों का यह नैतिक दायित्व है कि वे भारत में मदिरापान के दुर्व्यसन के विरुद्ध संघर्ष करें क्योंकि मदिरापान अफीम फूंकने की अपेक्षा किसी भी रूप में कम हानिप्रद नहीं था। [10] द्वितीय, कुछ की तो यह मान्यता थी कि अफीम निर्यात के त्याग से संबंधित भारत सरकार का कोई भी पग सर्वथा निष्फल सिद्ध होगा क्योंकि अभाव की खाई की पूर्ति फ़ारस, तुर्की और संयुक्त राज्य अमरीका द्वारा अथवा अपने देश में अफीम की खेती के विस्तार तथा अफीम के उत्पादन में वृद्धि करके स्वयं चीनियों द्वारा अत्यंत तत्परता और शीघ्रता से की जाएगी। इस प्रकार लोकहित का उद्देश्य तो अपूर्ण तथा अप्राप्त ही रहेगा। हां इसमें भारतीयों को निश्चय ही आय के एक बढ़िया स्रोत से हाथ धोना पड़ेगा। [81] यह आश्चर्य-जनक तथा उत्सुकतावर्धक है कि समाचारपत्रों ने यह तर्क प्रस्तुत नहीं किया कि अफीम व्यापार को निषिद्ध करने से इस व्यापार में संलग्न भारतीय व्यापारी बहुत बुरी तरह प्रभावित होंगे। इसके विपरीत अफीम विरोधी पत्रिका 'संजीवनी' ने अपने 23 दिसंबर 1893 के अंक में व्यापारियों पर अफीम व्यापार के समर्थन का अभियोग लगाते हुए लिखा कि उनका ऐसा करना स्वाभाविक था क्योंकि इससे उन्हें बहुत बड़ा लाभ जो था। [8] अफीम विरोधी आंदोलन के विरोधी राष्ट्रवादियों द्वारा प्रस्तुत तर्कों के पीछे व्यापारिक प्रेरणा का अभाव तथा राजस्व प्रेरणा की प्रमुखता से यही सिद्ध होता है कि राष्ट्रवादी नेताओं के इस वर्ग की इस नीति के निर्माण के पीछे व्यापारियों के हित की किसी प्रकार की कोई महत्व पूर्ण भूमिका नहीं थी।

मानवीयता के आधार पर अफीम उत्पादन को प्रतिबंधित और अफीम व्यापार को कानूनी रूप से निषिद्ध करने के समर्थक भारतीय नेताओं के दूसरे वर्ग ने इस कार्यवाही से राजस्व को होने वाली क्षति की पूर्ति व्यय में कटौती द्वारा करने का सुझाव दिया। इस संबंध में मराठा, 'हिंदू', सोम प्रकाश' और 'आनंद बाजार पत्रिका' जैसी बहुत सी पत्र-पत्रिकाओं की स्थिति समय विशेष पर संपादकीय लिखने वाले किसी भी महानुभाव की व्यक्तिगत प्रवृत्ति के अनुरूप परिवर्तित रूप लेने वाली और इस प्रकार अस्थिर तथा डावां-डोल रही है। आनन्द बाजार पत्रिका' ने अपने 20 जुलाई 1880 के अंक में राष्ट्रवादियों की अफीम विरोधी भावनाओं को बड़ी ही स्पष्टता तथा प्रबलता के साथ निम्नलिखित अवतरण में इस प्रकार से वाणी दी है

क्योंकि चीन को अपनी मांग की संतुष्टि के लिए कहीं न कहीं से अफीम का आयात

हित को ध्यान मे रखते हुए अफीम व्यापार को निषिद्ध करके नए करा की सभावना की आशका प्रकट की। इस सबध म यहा यह उल्लेखनीय है कि जिस प्रकार भारतीय नताओ ने 1877 से 1882 तक सीमा शुल्क का हटाने के लिए व्यापक और सयुक्त विरोधी आदोलन चलाया था, अफीम व्यापार म अपक्षाकृत अधिक विस्तृत वित्तीय सभावनाए निहित होन पर भी इन नेताओ ने इस व्यापार के विरुद्ध सचालित ब्रिटिश आन्दोलन के विरुद्ध उसी प्रकार के किसी व्यापक और सयुक्त विरोध का आयोजन नही किया।[8] इसका विश्लेषण कदाचित इस तथ्य स हो जाता है कि अफीम राजस्व के मामल म सभावित हानि केवल वित्तीय थी, उसस किसी प्रकार से औद्योगिक हित प्रभावित नहा हाते थे जबकि कपास सीमा शुल्क से वित्तीय हानि के साथ साथ औद्यागिक हिता को हानि पहुचती थी। अत स्पष्टत भारतीय नताओ का यह मतव्य था कि वित्तीय हानि के प्रति विराध प्रकट करके उसे भले ही सहन कर लिया जाए चाह इससे वित्त को सतोष न मिले और न ही सिद्धातो के पालन की प्रसन्नता मिले, परतु औद्यागिक हानि को तो किसी भी रूप म सहन नही किया जा सकता क्योकि इसके परिणाम दूरगामी हाते है और इससे राष्ट्रीय हिता को वास्तविक और व्यापक क्षति पहुचती है।

सदभ

1 इपारियल गजेटियर आफ इडिया (1908) खड IV पृ० 165 9 काले पूर्वोद्धत प० 12 6, पी० जे० थामस ग्रोथ आफ फेडरल फाइनास इन इडिया (मद्रास 1939) पृ० 239-54

2 विसनी पूर्वोद्धत प० 339

3 कनिका 82

4 16 अगस्त 1901 हसाड (चौथी सिरीज) खड XCIX लगभग 1208 इसी प्रकार 1899 मे कजन ने घोषणा की कि बुरी हालत म भी बजट मे 4¾ करोड लाभ की उपस्थिति यह दिखाती है कि भारतीय वित्तो मे केवल सहन शक्ति ही नही प्रत्युत उनम अदभुत सामर्थ्य का स्रोत भी अतर्हित है (स्पीचेज I पृ० 76) तथा देखिए जी० हैमिल्टन हसाड (चौथी सिरीज) 4 सितबर 1895, खड XXXVI लगभग 1702-05

5 रिप० आई० एन० सी 1898 प० 131

6 एस० एन० बनर्जी सी० पी ए० पृ० 242 तथा देखिए उनकी स्पीचेज III प 12 जान ब्राइट के उसी अवतरण को उद्धत करते हुए पी० सी० राय न 1895 म दावा किया कि ब्राइट की कसौटी पर तो भारत पर ब्रिटेन का शासन स्वत विनिदित स्वत कलकित तथा स्वत लाछित सिद्ध होता है (पावर्टी प 276-7)

7 वही पूर्वोद्धत प० 207

8 वही पृ० 279-30 जाशी ने इस सुझाव को भी अस्वीकार कर दिया कि भारतीय वित्तों की प्रवत्ति व्ययों में सतुलन लाने की है अत भारतीय वित्त को स्वस्थ कहा जा सकता है जोशी के अनुसार यह सतुलन वित्तीय स्वास्थ्य का सूचक न होकर देश की सरकार की निरकुश प्रकृति

का ही सूचक है यह केवल प्रशासन की क्रूर शक्ति का ही प्रदर्शन है व्यावहारिक रूप से अनुत्तरदायी और स्वेच्छाचारी विभाग की विवेकहीन नीति को ताज के व्यय निर्धारित करने की अनुमति दी जा रही है इस प्रकार से व्यवस्थित व्ययों से जनता पर कराधान का स्तर निश्चित किया जा रहा है, जिसका वस्तुत जनता की कर भुगतान की क्षमता स किसी भी प्रकार का कोई सामान्य सबध नही (वही प० 207)

9 गोखले स्पीचेज पृ० 21

10 वकील, पूर्वोद्धत प० 607-08 भारत सरकार का विशुद्ध राजस्व 1881 2 म 46-86 करोड रुपये और 1904-05 मे 65 17 करोड रुपये था (इपीरियल गजटियर आफ इडिया, 1908 खड IV पृ० 201)

11 विसनी पूर्वोद्धत प० 326 8 दत्त, ई० एच० II प० 37 43, वकील, पूर्वोद्धत प० 85 91 और थामस पूर्वोद्धत प० 120

12 उदाहरणाथ देखिए, रिपोट आफ दि इडियन फेमीन कमीशन, 1880 खड II प० 82 फाउलर हसाड (चौथी सिरीज) 15 अगस्त 1894 खड XXVIII लगभग 1140 और स्ट्रेजी इडिया (1903) पृ० 120-1

13 अध्याय 14 मे लैंड रवेन्यू के अतगत 'इडियन पोलिटिकल इकोनमी सबधी प्रश्न देखिए

14 आगे ओपीयम रवेन्यू पर अनुभाग देखिए

15 नौरोजी, पावर्टी प० 60 उन्होंने साथ मे यह भी कहा 'आप इस रकम को कर राजस्व कहें अथवा अपनी रुचि का कोई अन्य नाम दें सरकार इसे किसी भी रूप मे अथवा किसी भी शैली म ग्रहण करें इतना तो निश्चित है कि यह रकम सरकार के लिए देश की आय से ही ली जाती है इस तथ्य को तो नहा बदला जा सकता है भारत के सबध म सरकार यह रकम भूमि लगान क रूप मे लेती है अफीम कर के रूप मे अथवा किसी भी अन्य रूप म इससे कोई अतर नही पडता तथ्य यह है कि सरकार देश की कुल आय मे से अपने लिए इतना अधिक राजस्व ले लेती है जो अन्यथा जनता के पास ही रहता (वही) उन्होंने अपने इस मत को दोहराते हुए थोड समय के उपरात और अधिक सशक्त अभिव्यक्ति दी राजस्व के इस भाग को राजस्व कर किराया प्रशदान वरदान अभिशाप अथवा अगरेजी शब्दकोश की वणमाला के ए से जड तक अक्षरक पर अन्य किसी नाम से पुकारिए सीधी सी सच्चाई तो यह है कि देश को अपनी आय से सरकार को उसके प्रयोजनो के लिए एक निश्चित भाग देना ही पडता है यह भाग न तो आकाश से बरसता है और न ही देश की सरकार द्वारा किसी जादू से उत्पन्न किया जाता है (वही प० 220) तथा देखिए, नौरोजी स्पीचेज प० 316 परिशिष्ट प० 40 और आग वाचा सी० पी० ए० प० 539 जोशी पूर्वोद्धत प० 223

16 स्ट्रेची इडिया (1894) प० 395 तथा देखिए विसनी पूर्वोद्धत प० 347

17 कर्जन स्पीचेज खड II प० 452 तथा वही खड III पृ० 146

18 थामस पूर्वोद्धत प० 77 पर

19 नौरोजी की पावर्टी पृ० 58 पर उद्धत 1880 के अकाल आयोग की सगणना क अनुसार भारत में प्रति व्यक्ति पर 4 शिलिंग का कर भार था (रिपोर्ट आफ दि इडियन फमिन कमीशन 1880 भाग II प० 93)

20 हसाड (चौथी सिरीज) 15 अगस्त 1894 खड XXVIII लगभग 1140 वित्त सदस्य तहवड ला के अनुसार 1904 में कर भार का परिमाण केवल 1-42 प्रति व्यक्ति था (एल० सी० पी०

1904) खड XLIII प० 534) स्ट्रेची इडिया (1903) प० 120 भी देखिए

21 देखिए पीछे अध्याय I

22 चिमनी पूर्वोद्धत प० 328 तथा प० 331

23 कजन स्पीचेज खड III पृ० 148 तथा जी० हैमिल्टन, इडियन डिबेटस, 3 फरवरी 1902 लगभग 106 ला फाइनांशल स्टमट, 1903 कडिका 35

24 स्ट्रेची इडिया (1903) पृ० 119 वस्टलड, एल० सी० पी० 1895 खड XXXIV प० 436

25 उदाहरणाथ सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने 1895 म भारतीय राष्ट्रीय काग्रस के अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए व्यग्यात्मक टिप्पणी की यहां तक कि प्रेम के क्षेत्र म भी कोई अपेक्षाकृत सदर मूर्ति सामने नही आती किंतु ज्यो ही छानबीन करने वाली सच लाइट का प्रकाश उस पर डाला जाता है सारा भ्रमजाल तत्काल लुप्त हो जाता है (सी० पी० ए० मे पृ० 702)

26 हिंद् पायनियर, बिमानबिहारी मजुमदार की हिस्ट्री आफ पोलिटिकल थाट फ्राम राममोहन टु दयानद (1882 4) खड I (कलकत्ता, 1934) पृ० 91 पर उद्धत

27 दत्त ई० एच० II पृ० 385 पर उद्धत और देखिए नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट डी०

28 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज I पृ० 203

29 रिव्यू आफ पासेटस थी एसेज आन इडियन फाइनांस जे० पी० एस० एस० खड III सख्या 1 (जुलाई 1880) प० 80 हमारे पास जी० ए० मनेकर का कथन प्रमाण रूप म उपलब्ध है जिनके अनुसार यह समीक्षा जस्टिस रानाडे द्वारा लिखी गई थी (मनकर पूर्वोद्धत प० 214)

30 नौरोजी स्पीचेज प० 116

31 आर० एन० पी० बब 4 फरवरी 1888 उसी मनोदशा मे लिखते हुए हिंदी प्रदीप ने 1 जनवरी 1879 के अक म टिप्पणी की हमारी सरकार के पवित्र चरण असन्दिग्ध रूप से अयत चमत्कारी हैं जहा जहा पडते हैं वह धरती और वहा की घटिया से घटिया वस्तु राजस्व का बहुमूल्य स्रोत बन जाती है (आर० एन० पी० पी० एम० 11 जनवरी 1879)

32 आर० एन० पी० बब 11 फरवरी 1888 अपने 5 माच 1888 के अक मे इसी पत्र ने व्यग्यात्मक ढग से सरकार को बजट का घाटा पूरा करने के लिए लोगो को लूटने और हवा मेला विवाह तथा वेश्यागमन पर कर लगाने की सलाह दी (आर० एन० पी० बब 10 माच 1888)

33 सी० पी० ए० पृ० 354 पर तथा देखिए प० 351 और 367 दो वष उपरात सयानी ने चेतावनी दी कि वतमान करो म वद्धि करना अथवा और नए करारोपण करना राजनीतिक खतरे का विषय बन जाएगा क्योकि भारतीय जनता म और अधिक करो क भुगतान की सामर्थ्य नही है (एल० सी० पी० 1898 खड XXXVII पृ० 531)

34 उदाहरण के लिए देखिए इडियन स्पेक्टेटर 24 अक्तूबर (आर० एन पी० बब 30 अक्तूबर 1880) रिव्यू आफ दि इडियन साल्ट टक्स ज० पी० एस० जुलाई 1881 खड IV सख्या 1) प० 60 नवविभाकर 7 जनवरी (आर एन० पी० बग० 12 जनवरी 1884) सजीवनी 6 माच साधारणी 7 माच (वही 13 माच 1886) महाराष्ट्र मित्र 9 सित० (आर० एन० पी० बब 18 सितबर 1885) एस वा० सुब्बारायुड रिप० आई० एन० सी० 1885 पृ० 70 मालवीय स्पीचेज प० 220-1 281 हिंदू 29 अगस्त 1887 बगाली 3 सितबर 1887 इडियन स्पक्टेटर 28 अगस्त 11 सितबर ज्ञान प्रकाश 29 अगस्त इडियन यूनियन 31 अगस्त बिहार हराल्ड और इडियन क्रानिकल 3 सितबर सुबोध पत्रिका 4 सितबर इदु प्रकाश 5 सितबर इडियन नेशन 5 सितबर तथा अन्य अनक भारतीय समाचारपत्र (वी ओ० आई० अक्तूबर

1887), बोध सुधाकर, 25 जनवरी (आर० एन० पी० बब 28 जनवरी 1888), मराठा 22 जनवरी 1888 हितवादी, 22 मार्च (आर० एन० पी० बम० 20 मार्च 1895) बंगवासी 20 अप्रल (वही, 27 अप्रल 1895) राय पावर्टी प० 260 तिलक प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवर्नर आफ बांबे 1895 खड XXXIII प० 90-1 पी० महता स्पीचेज पृ० 447 8, जी० वी० जोशी, पूर्वोद्धत, प० 203 228 9 ट्रिब्यून 16 जनवरी (आर० एन० पी० पी० 25 जनवरी 1902) एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 259 700 गोखले स्पीचेज प० 6-7, 21 परिशिष्ट, पृ० 1169 और 1178 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट प० 51, नन्दी, इडियन पालिटिक्स प० 120 एन० एम० घोष सी० पी० ए० प० 747 756 दत्त ई० एच० II पृ० 559 603

35 राय पावर्टी प० 256-8, जोशी, पूर्वोद्धत पृ० 221 6 पी० महता स्पीचज प० 448 सयानी, सी० पी० ए० पृ० 348 वाचा सी० पी० ए०, प० 611 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, प० 700, जी० एस० अय्यर विलबी कमीशन खड III प्रश्न 18965 और ई० ए० प० 38-40 मालवीय, स्पीचेज, प० 219 291 दत्त इग्लड ऐंड इडिया प० 141 2 ई० एच० II पृ० 383-4 गोखले, स्पीचेज, प० 6

36 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 223

37 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट प० 182

38 नौरोजी, स्पीचेज पृ० 141 156 7 189, 292 4 592 परिशिष्ट प० 38 एसज प० 374 पावर्टी, पृ० 60-1 221 इडियन स्पेक्टेटर 24 जून (आर० एन० पी० बब 30 जून 1883) तेलग सेलेक्टेड राइटिंग्ज ऐंड स्पीचेज (बबई 1885) (इस भाग सदभ के लिए स्पीचेज स सवेतित किया जाएगा) प० 222 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III प० 143 और सी० पी० ए० पृ० 703 राय पावर्टी प० 259 सयानी सी० पी० ए० प० 347 8 नदी इडियन पालिटिक्स प० 110 एल० एम० घोष सी० पी० ए० प० 756 दत्त ई० एच० II प० 603-04 ए० मुखर्जी एल० सी० पी० 1904 खड XLIII प० 423-4 तथा देखिए पी० महता स्पीचेज पृ० 447 8 451 2, मालवीय स्पीचेज प० 276 279 80 291 2 ज्ञान प्रकाश 2 अप्रल (आर० एन० पी० बब 4 अप्रल 1903)

39 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 183

40 उदाहरणार्थ नौरोजी पावर्टी प० 60-1, 221 2 और स्पीचेज प० 156 और 293-4

41 सी० पी० ए० प० 348

42 नौरोजी स्पीचेज प० 157 भारत के व्ययो पर उन्होंने विलबी आयोग को बताया कि किसानो पर कराधान मात्र इस दृष्टि से दुखदायक है कि यह दुखदायक बन जाता है (स्पीचेज परिशिष्ट प० 51) तथा पावर्टी पृ० 221 2

43 सी० पी० ए० प० 348

44 तेलग स्पीचज प० 223 मालवीय स्पीचेज प० 30-1, गोखले स्पीचज प० 15 21 दत्त ई० एच० II प० 572 राय पावर्टी प० 258 9 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प 32 विशम्भरनाथ एल० सी० पी० 1897 खड XXVI प० 182, ए० मुखर्जी एल० सी० पी० XLIII प० 424

45 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 226 तथा देखिए मालवीय स्पीचेज प० 219 और 291

46 नौरोजी, स्पीचेज प० 116 316 361 609 परिशिष्ट प० 21 मालवीय स्पीचेज पृ 219

और 291 तथा देखिए, तिलक प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1895 खड XXXIII प० 91, दत्त स्पीचेज II प० 83-4 गुजराती, 22 माच (आर० एन० पी० बब 28 माच 1903)

47 नौरोजी पावर्टी पृ० 61 स्पीचेज प० 131 528 राय, पावर्टी पृ० 260-1, मालवीय स्पीचज पृ० 221 नदी इडियन पालिटिक्स पृ० 120, दत्त, ई० एच० II प० 377, जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 10

48 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 45 तथा पी० मेहता स्पीचेज प० 574-5 604

49 गोखले स्पीचेज, पृ० 1 2 8 9 तथा प० 6 7, 21 71 74 और 101 तथा देखिए गोखले रिप० आई० एन० सी० 1904 प० 170 और आगे, वाचा, सी० सी० ए० पृ०610-1 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 700, आई० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव VIII

50 रिवस थापसन एल० सी० पी० 1882 खड XVI प० 313 4 1880 के भारतीय अकाल आयोग के अनुसार कराधान का भार पथक पथक वर्गों पर प्रति व्यक्ति भिन्न भिन्न था भूमि स सबधित जमीदार वर्गों पर यह भार 273 पौंड, कृषक श्रमिको पर ·085 पौंड व्यापारियो और अधिकारियो पर 164 पौंड और हस्तशिल्पियों पर 1 पौंड था इस सगणना के उद्देश्य के लिए आयोग को अपनी इच्छाओ के नितात प्रतिकूल भूमि लगान को समग्र कराधान मे सम्मिलित करना पडा (रिपोट आफ दि इडियन फमीन कमीशन 1880 खड II प० 93)

51 नौराजी स्पीचेज परिशिष्ट प० 177

52 जाशी पूर्वोद्धत प० 152 तथा देखिए, पृ० 89 100 142

53 वही पृ० 164

54 वही प० 185 तथा प० 165

55 वहा प० 91 और देखिए पृ० 100 149

56 आर० एन० पी० एम० 29 फरवरी 1888

57 वही

58 जे० पी० एस० एस० जनवरी-अप्रल 1888 (खड X सख्या 3-4) प० 21 इसी प्रकार 4 फरवरी 1888 के सजीवनी ने निर्देश किया कि इस देश म धनिक वग पर केवल उपयक्त एव पर्याप्त कर नही लगा इतनी ही बात नही वल्कि बात यह है कि वह उतना कर भी नहा देता जितना निधन वग देता है (आर एन० पी वग० 11 फरवरी 1888)

59 राय पावर्टी पृ० 261 और 274 बाद मे 1901 म उन्होने सिफारिश का कि गरीबो पर कराधान भार को अवश्य कम करना चाहिए भले ही इसके लिए उन करो को भारी खाते-पीते लोगों क कधों पर ही क्या न डालना पडे (इडियन फमिस प० 67)

60 गोखल स्पीचेज प० 40 तथा देखिए गोखले प्रासीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाबे 1900 खड XXXVIII प० 94 साम प्रकाश 24 जुलाई (आर० एन० पी० बग 29 जुलाई 1882) *एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 704 दत्त इग्लड ऐंड इडिया* प० 163 कसरी 31 माच (आर० एन पी० बब 4 अप्रैल 1903)

61 राय पावर्टी पृ० 274 5 पर उद्धत

62 प्रमाण के रूप म देखिए, जोशी पूर्वोद्धत प० 100 140-2 161 6

63 नौराजी पावर्टी प० 222

64 उदाहरणाथ जाशी पूर्वोद्धत प० 185 221 228 राय पावर्टी पृ० 241 जी० एस० अय्यर

विलवी कमीशन, खंड III प्रश्न 18646, मालवीय स्पीचेज पृ० 250-2 281 दत्त इंग्लड ऐंड इंडिया, पृ० 133, स्पीचेज I पृ० 27 आर० एन० मधोलकर रिप० आई० एन० सी० 1901 पृ० 83 ज्ञान प्रकाश, 16 जनवरी (आर० एन० पी० बब 18 जनवरी 1879), बोध सुधाकर 22 जनवरी (वही, 29 जनवरी 1879) नवविभाकर 7 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 12 जनवरी 1884), सजीवनी 18 जुलाई (वही 25 जुलाई 1885) साधारणी 7 मार्च सजीवनी, 6 मार्च (वही 13 मार्च 1886) हितवादी, 13 जुलाई (वही 21 जुलाई 1900) जा० एस० अय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1900 प० 29 ए० बी० पी० 18 मार्च 1901 एडवोकेट 2 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 4 फरवरी 1905)

65 प्रस्ताव XII इस प्रकार का एक प्रस्ताव लगभग इसी भाषा में कांग्रेस ने निम्नांकित वर्षों में पारित किया, देखिए 1897 का प्रस्ताव IX, 1901 का प्रस्ताव VIII 1902 का प्रस्ताव III और 1904 का प्रस्ताव III

66 जोशी पूर्वोद्धत प० 185

67 वही पृ० 793 5 तथा पृ० 824, 1136 यहां यह उल्लेखनीय है कि जोशी ने अपनी उद्योग की परिभाषा के अंतर्गत कृषि को भी शामिल किया था

68 गोखले स्पीचेज प० 13 तथा देखिए एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 710

69 जोशी पूर्वोद्धत प० 1

70 जी० एस० अय्यर ई० ए०, प० 42 3 गोखले स्पीचेज पृ० 4 15 21 73 दत्त ई० एच० II पृ० 559 596-7 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, पृ० 691 700-02 आई० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव VIII

71 सी० पी० ए० प० 700 पर

72 गोखले स्पीचेज प० 101

73 वकील पूर्वोद्धत प० 533 निश्चय ही यह कामचलाऊ तखमीना था फिर भी मेरे विचार में विचाराधीन विषय के लिए यह उपयुक्त और पर्याप्त था हमारे पास बहुत सारे उच्च सरकारी प्रवक्ताओं की मान्यताएं प्रमाण रूप में उपलब्ध हैं कि किसी भी अन्य कराधान को सहन करने की भारत की क्षमता पूर्ण रूप से छिन्न भिन्न हो चुकी थी प्रमाण रूप में देखिए एलगिन स्पीचेज प० 490

74 1880 में भूमि राजस्व से 21 1 करोड नमक कर से 7 1 करोड अफीम शुल्क से 10 4 करोड उत्पादन शुल्क से 3 1 करोड सीमा शुल्क मे 2 5 करोड और आय कर (लाइसंस कर) से 5 करोड रुपया की वसूली हुई 1904 में इन करों से प्राप्त होने वाली राशि क्रमश 28 3 करोड 7 9 करोड 9 0 करोड 7 9 करोड 6 4 करोड और 1 8 करोड रुपये थी (पी० ज० थामस पूर्वोद्धत पृ० 408)

75 लाइसेंस कर और आयकर के संक्षिप्त इतिहास के लिए देखिए ज० पी० नियोगी दि इवाल्यूशन आफ दि इंडियन इनकम टैक्स (लन्दन 1929) प्रमथनाथ बनर्जी ए हिस्टरी आफ इंडियन टैक्सेशन (कलकत्ता 1930) और पी० के० आर० वी० राव टैक्सेशन आफ इनकम इन इंडिया (कलकत्ता 1931)

76 वित्त सदस्य चार्ल्स ट्रिवेलियन पी० बनर्जी इंडियन टैक्सेशन प० 94 पर उद्धत

77 जान स्ट्रेची और रिचार्ड स्ट्रेची दि फाइनांस ऐंड पब्लिक वर्क्स आफ इंडिया प० 197

78 पी० बनर्जी इन्डियन टैक्सेशन पृ० 72

79 आर० एन० पी० बव 12, 19 26 जनवरी, 2 फरवरी 1878 आर० एन० पी० बग०, 12 19 26 जनवरी 2 फरवरी, 2 23 माच 1878, आर० एन० पी० एम० अप्रल 1878 आर० एन० पी० पी० एन० 19 26 जनवरी, 2, 9 16 23 फरवरी 9 16 मार्च 6 अप्रल 1878 एल० एम० घोष स्पीचेज, प० 6

80 उदाहरण के रूप में देखिए ब्राह्मो पब्लिक आपीनियन 1, 8 जनवरी 1880, बगाली 4 दिस० 1880 नवविभाकर 1 माच (आर० एन० पी० बग०, 6 माच 1880) विवेक्वर्धिनी, स० 12 (आर० एन० पी० एम० माच 1880) वर्ड समाचार 11 दिस० (आर० एन० पी० बव 11 दिसबर 1880) रास्त गुफ्तार, 27 माच, जामे जमशेद, 1 अप्रल (वहा 2 अप्रल 1881) इडियन स्पेक्टेटर 3 अप्रल (वही 9 अप्रल 1881) नटिव आपीनियन 17 अप्रल (वही 23 अप्रैल 1881) इडियन स्पक्टटर नेटिव ओपीनियन 12 माच (वही 18 माच 1882) ए० बी० पी० 16 माच 1882 अखबार आम 12 अप्रल (आर० एन० पी० पी० एन० 19 अप्रल 1882) रहबरे हिंद 24 अप्रल (वहा 26 अप्रल 1882) भारत मिहिर 14 माच सहचर 15 माच (आर० एन० पी० बग० 25 माच 1882) द्रविडावतमणि, 2 अप्रल (आर० एन० पी० एम० अप्रल 1883) इडियन स्पेक्टेटर 16 माच (वी०ओ०आई०, 31 माच 1884) बगाली 22 माच 1884

81 आर० एन० पी० बव 19 जनवरी 1878

82 वही 29 अक्तूबर 1881 और देखिए बोध सुधाकर 9 जनवरी (आर० एन०पी०बव 12 जनवरी 1878) रास्त गुफ्तार 13 जनवरी (वही 19 जनवरी 1878) कवि वचन सुधा 21 जनवरी (आर० एन० पी० पी० एन० 26 जनवरी 1878) आफताबे पजाब 21 फरवरा (वही 23 फरवरी 1878) ए० बी० पी० 10 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 10 जनवरी 1878) भारत मिहिर 17 जनवरी सोम प्रकाश 21 जनवरी (वही 26 जनवरी 1878) साधारणी 20 जनवरी (वही 2 फरवरी 1878) सुदेशाभिमानी 1 मई (आर० एन० पी० एम०, मई 1878) विवेक्वर्धिनी स० 12 (वही माच 1880) आनद बाजार पत्रिका 13 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 24 अप्रल 1880) सोम प्रकाश 7 जून (आर० एन० पी बग० 12 जून 1880) एल० एम० घोष स्पीचेज प० 6 16 मई 1880 को पूना की सावजनिक सभा म स्वीकृत ज्ञापन, ज० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खड III स० 1) प० 4

83 जुलाई से दिसबर 1878 तक के महीनो का आर० एन० पी० बव ए० बी पी० 21 फरवरी प्रतिवार 22 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 2 माच 1878) वष 1879 म बबई बगाल पजाब और उत्तर पश्चिम प्राता तथा अवध और मद्रास के नेटिव प्रस के प्रतिवेदन ब्राह्मो पब्लिक आपीनियन 8 जनवरी 1880 बगाली 4 दिस० 1880 आनद बाजार पत्रिका 13 अप्रल (आर० एन० पी० बग 24 अप्रल 1880) सोम प्रकाश 7 जून (वही 12 जून 1880) नवविभाकर 21 जून (वही, 26 जून 1880) इडियन स्पेक्टटर 23 अक्तू (आर० एन पी० बव 29 अक्तूबर 1881)

84 सहचर 14 जनवरी (आर० एन पी० बग , 26 जनवरी 1878) बनारस अखबार 17 जनवरी (आर० एन० पी० पी० एन० 26 जनवरी 1878) आफताब पजाब 21 फरवरा (वही 23 फरवरी 1878) ए० बी० पी० 2 जनवरी 1880 बगाली 17 जनवरी 1 80 हिंदू हितैषिणी 21 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 28 फरवरी 1880) नवविभाकर 1 माच (वही 6 माच 1880) साधारणी 7 माच (वही 13 माच 1880) भारत मिहिर 9 माच (वही 20 माच

1880), इंडियन स्पेक्टेटर 7 मार्च (आर० एन० पी० बंब 12 मार्च 1881)

85 जे० पी० नियोगी दि इवाल्यूशन आफ दि इंडियन इनकम टैक्स पृ० 100-03

86 वही पृ० 101

87 मास मटीरियल फार ए हिस्टरी आफ दि फ्रीडम मूवमेंट इन इण्डिया खंड I 1818 95 (बम्बई 1957) पृ० 29-40

88 इंदु प्रकाश 14 जनवरी रास्त गुफ्तार 13 जनवरी (आर० एन० पी० बंब 19 जनवरी 1878) जामे जमशेद 24 जनवरी (वही 26 जनवरी 1878) सफीरे बाग़ाना 6 फरवरी आफ्ताबे पंजाब 21 फरवरी (आर० एन० पी० पी० एन० 23 फरवरी 1878) सोम प्रकाश 7 जनवरी (आर० एन० पी० बंग० 12 जनवरी 1878) वकीले हिन्दुस्तान 5 अप्रैल (आर० एन० पी० पी० एन० 13 अप्रैल 1878) गुल्शानिमानी 1 अप्रैल (आर० एन० पी० एम० अप्रैल 1878), साधारणी 16 मार्च (आर० एन० पी० बंग० 13 मार्च 1878) एल० एम० घोष स्पीचेज पृ० 6 19 नए कर के अधिकार क्षेत्र से सरकारी कर्मचारियों और व्यवसाय में लगे हुए लोगों को बाहर रखने संबंधी प्रावधान की भर्त्सना करने के लिए मद्रास में एक जनसभा हुई शम्स उल अख़बार 18 मार्च (आर० एन० पी० एम० मार्च 1878)

89 बंगाली 17 जनवरी 6 मार्च 1880 ए० बी० पी० 2 जनवरी 1880 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 8 जनवरी 1880, आर० एन० पी० बंब, 4 सितंबर 1880 में प्रतिवेदित समाचारपत्र हिंदू हितैषिणी 21 जनवरी (आर० एन० पी० बंग० 28 फरवरी 1880) नवविभाकर 1 मार्च (आर० एन० पी० बंग० 6 मार्च 1880), साधारणी 7 मार्च (वही 13 मार्च 1880) भारत मिहिर 9 मार्च (वही 20 मार्च 1880) सहचर 15 मार्च (वही 27 मार्च 1880) इण्डियन स्पेक्टेटर 6 मार्च 3 अप्रैल (आर० एन० पी० बंब 12 मार्च 9 अप्रैल 1881) नेटिव ओपीनियन, 17 अप्रैल (वही 23 अप्रैल 1881) सुबोध पत्रिका 19 फरवरी (वही 25 फरवरी 1882) मराठा 30 अप्रैल 1882 नेटिव ओपीनियन 16 अगस्त (आर एन० पी० बंब 22 अगस्त 1885) इंडियन स्पेक्टेटर 23 अगस्त (वही 29 अगस्त 1885) जे० यू० याज्ञिक रिप० आई० एन० सी० 1885 पृ० 67 और रिपोर्ट आई० एन० सी० 1885 का प्रस्ताव VI

90 जे० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खंड III संख्या 17) पृ० 4

91 देखिए 2 जनवरी 1880 की अमृत बाजार पत्रिका और 19 दिसंबर 1884 का हिंदू तथा देखिए ए० बी० पी० 3 जनवरी ग्रामवर्त्त प्रकाशिका 5 जनवरी (आर० एन पी० बंग० 12 जनवरी 1878) हिंदू हितैषिणी 12 जनवरी (वही 26 जनवरी 1878) भारत मिहिर 21 फरवरी (वही 2 मार्च 1878) और साधारणी 16 मार्च (आर० एन० पी० बंग० 23 मार्च 1878) और इंडियन स्पेक्टेटर 23 अक्तूबर (आर० एन० पी० बंब 19 अक्तूबर 1881) 10 जनवरी 1878 के अमृत बाजार पत्रिका ने टिप्पणी की कि सरकार ने आय कर नहीं लगाया है क्योंकि उसे यूरोपियों और समृद्ध तथा प्रभावशाली भारतीयों का डर है

92 वी० के० आर० वी राव टैक्सेशन आफ इनकम पृ० 292 तथा पी० बनर्जी इंडियन टैक्सेशन पृ 127 ए कालविन एल० सी० पी० 1886 खंड XXV पृ० 21 और आगे

93 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 8 जनवरी 1880 22 दिसंबर 1881 बंगाली 24 दिस० 1881 रास्त गुफ्तार गुजरात मित्र शावे श्रानिकन और अरुणोदय 11 दिस सूर्य प्रकाश 10 दिस० न्याय प्रकाश 12 दिस० कासिदे मुंबई 16 दिस (आर० एन० पी० बंब 17 दिसंबर 1881) बंबई समाचार जामे जमशेद 20 दिस० (वही 24 दिस० 1881) सहचर 28 दिस० 1881

(आर० एन० पी० बग० 7 जनवरी 1882) परिदर्शक 1 जनवरी (वही 14 जनवरी 1882) *नसीमे आगरा 30 दिसबर 1881 (आर० एन० पी० पी० एन०, 10 जनवरी 1882)*, सोम प्रकाश 5 अक्तूबर सुरभि ओ पताका 7 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग० 10 अक्तू० 1885), सहचर 7 अक्तू० भारत मिहिर 8 अक्तू० सजीवनी, 10 अक्तू (वही, 17 अक्तू० 1885), वायस आफ इडिया जनवरी 1886, इडियन मिरर 7 9, 15 जनवरी ट्रिब्यून 9 जनवरी बिहार हेराल्ड 19 जनवरी इडियन नेशन 11 जनवरी इडियन इको 11 जनवरी (वो० ओ० आई० जनवरी 1886) हिंदुस्तानी 8 जन० अखबारे आम 9 जन० (वो० ओ० आई० जन० 1886) बगाली 9 16 23 जन० 1886 इडियन एसोसिएशन के सेक्रेटरी का भारत सरकार को पत्र बगाली 23 जनवरी 1886 बाबे प्रेसीडेंसी एसोसिएशन का भारत सरकार को विरोधपत्र रिपोर्ट आफ बाब प्रसीडेंसी एसोसिएशन 1885 6 प० 205-08 बबई समाचार और जाम जमशद, 5 जनवरी (आर० एन० पी० बब 9 जनवरी 1886) इदु प्रकाश 11 जनवरी 10 जनवरी के *गुजराती गुजरात मित्र रास्त गुफ्तार और पंजाब परस्त हितेच्छु 14 जनवरी पडित 15 जन०* (वही 16 जन० 1886) सुरभि ओ पताका भारत मिहिर 31 दिस० 1885 भरी 1 जन० नव मेदिनी 3 जन० ढाका प्रकाश 3 जन० सोम प्रकाश और नवविभाकर 4 जन (आर० एन० पी० बग० 9 जनवरी 1886) सहचर 6 जनवरी सजीवनी 9 जन० (वही 16 जनवरी 1886) उत्कल दीपिका 16 जनवरी (वही 30 जन० 1886) कर्णाटक प्रकाशिका तिथिरहित हिंदू जनभूषयी तिथिरहित केरल मित्रन तिथिरहित शम्स उल अखबार 8 फरवरी (आर० एन० पी० एम० फरवरी 1886) माडलिक स्पीचेज पृ० 660 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III प० 1-9

94 वायस आफ इडिया जन० 1886 तथा देखिए इडियन मिरर 7 9 15 जनवरी इडियन इको 11 जनवरी (वो० ओ० आई० जन० 1886) बगाली 9 16 जन० 1887, 1886 मे बबई प्रजीडसी एसोसिएशन का भारत सरकार को विरोधपत्र पूर्वोक्त स्थल इडियन स्पेक्टेटर 10 जन० (आर० एन० पी बब 16 जन० 1886) आर एन० पी० बग० 16 जनवरी से 6 फरवरी 1886 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III प० 3-4

95 रास्त गुफ्तार गुजराती गुजरात मित्र और अरुणोदय 11 दिस० इदु प्रकाश 12 दिस० (आर० एन० पी० बब 17 दिस० 1881) बबई समाचार और जाम जमशेद 20 दिस० (वही 24 दिसबर 1881)

96 सहचर 7 अक्तूबर सजीवनी 10 अक्तू० (आर० एन० पी० बग० 17 अक्तू० 1885), सुरभि ओ पताका 31 दिस० 1885 नवविभाकर 4 जनवरी (वही 9 जन० 1887) भारत मित्र 7 जनवरी उचित वक्ता 8 जनवरी बगवासी 9 जनवरी (वही 16 जनवरी 1886) सहचर 13 जन० भारत मिहिर 14 जन (वही 23 जनवरी 1886) सोम प्रकाश 1 फरवरी (वही 6 फर 1886) बाब प्रेसीडेंसी एसोसिएशन का 1886 म भारत सरकार को ज्ञापन, पूर्वोक्त स्थल माडलिक स्पीचेज प० 651 60 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III प० 8

97 जनवरी 1886 के वायस आफ इडिया मे भारतीय समाचार पत्रो की राय का सार-सग्रह 1886 म बाबे प्रेजीडेंसी एसोसिएशन का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III पृ० 8

98 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 8 जनवरी 1880 बगाली 9 16 जन० 1886 भारत सरकार को इडियन एसोसिएशन के सेक्रेटरी का पत्र बगाली 23 जनवरी 1886 म ट्रिब्यून 9 जन (वो० ओ आई जन० 1886) जनवरी 1886 के वाइस आफ इडिया म भारतीय समाचारपत्रो के

दृष्टिकोण का सार सक्षप, 1886 मे बाबे प्रेसीडसी एसोसिएशन के सक्रेटरी का भारत सरकार को ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल, सहचर 30 दिसबर 1885 सुरभि ओ पताका, 31 दिस० 1885 (आर० एन० पी० बग०, 9 जन० 1886) सजीवनी, 9 जनवरी (वही 16 जन० 1886)

99 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 8 जनवरी 1880 22 दिस० 1881 पूना सावजनिक सभा 1881 का ज्ञापन ज० पी० एस० एस०, खड IV, स० 1 (जुलाई 1881) प० 15 सहचर 7 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग०, 17 अक्तू० 1885) ट्रिब्यून 6 फर० (वी० ओ० आई० फरवरी 1886) माण्डलिक स्पीचेज, पृ० 665

100 पूना सावजनिक सभा का 1881 का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल नवविभाकर, 4 जन० (आर० एन० पी० बग० 9 जनवरी 1886) सहचर 6 जनवरी (वही 16 जनवरी 1886) सोम प्रकाश 1 फरवरी (वही 6 फरवरी 1886)

101 माडलिक स्पीचेज, प० 661

102 1870 और 1872 के लिए देखिए बी० बी० मजूमदार पूर्वोद्धत, प०382 3 तथा ए० बी० पी० 7 फरवरी 1871

103 ए० बी० पी० 2 जनवरी 1880 बगाली 17 जनवरी 1880, आनद बाजार पत्रिका, 30 दिस० 1879 नवविभाकर 5 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 10 जन० 1880) नवविभाकर 1 माच (आर० एन० पी० बग०, 6 माच 1880) साधारणी 7 माच (वही 13 माच 1880), भारत मिहिर 9 माच (वही 20 माच 1880) सहचर 15 माच (वही 27 माच 1880) तथा देखिए पीछे पादटिप्पणिया 89 90

104 हिंदू 19 दिस० 1884 इदु प्रकाश 3 माच 1884 इडियन स्पेक्टेटर, 23 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग 29 अक्तू० 1881) 18 दिस० (आर० एन० पी० बग 24 दिसबर 1881) 9 माच 1884 सुबोध पत्रिका 11 दिस० (आर० एन० पी० बग 17 दिस० 1881) नवविभाकर 19 दिस० (आर० एन० पी० बग 24 दिस० 1881) आनद बाजार पत्रिका 26 दिस० 1881 (आर० एन० पी० बग० 7 जनवरी 1882) साधारणी 15 जन० (वही 21 जन० 1882) प्रभाती 7 अप्रल (वही 7 अप्रल 1883) स्वदेशमित्रन 11 दिस० (आर० एन० पी० एम० दिस 1881) दनिक 23 नव० (आर० एन० पी० बग० 28 नव० 1885) 1880 से पूव इस प्रकार की माग के लिए देखिए पीछे पादटिप्पणी स० 91

105 प्रस्ताव VI बाद म जब सरकार ने दोबारा कर लगान का निणय किया तो गवनर जनरल ने काग्रस क इस प्रस्ताव को भारतीया के प्रगतिशील वग क मत के रूप म लेत हुए अपने पक्ष की स्वीकृति के तौर पर उद्धत किया (एल० सी० पी० 1886 खड XXV प 27)

106 ए० बी० पी० 14 28 जन 4 11 फरवरी 1886 हिंदू 7 9 15 जनवरी 1886 (वी० ओ० आई० जनवरी 1886) मराठा, 17 जनवरी 1886 (मराठा ने आय कर को कराधान पद्धति के स्थाई पक्ष बनाए जाने का विरोध किया) इदु प्रकाश, 25 जनवरी 1886 सुबोध पत्रिका 24 जन० (आर एन० पी० बग 30 जन० 1886) शिवाजी 29 जन० (वही 6 फरवरी 1886) दैनिक 30 दिस० 1885 (आर० एन० पी० बग० 2 जनवरी, 1886) भारतवासी 9 जन० साधारणी 10 जनवरी (वही 16 जनवरी (1886) आनद बाजार पत्रिका 18 जन० (वही 23 30 जन० 1886) सुरभि ओ पताका 28 जन० (वही 6 फरवरी 1886) आफताब पजाब 13 जनवरी (वी० ओ० आई० जनवरी 1886) इन पत्रो म कुछ न इसस पहले यहा तक कि कुछ ही दिन पहल आय कर का विरोध किया था इसी सूची म प्रदर्शित बगाल क प्रमुख समाचारपत्रो की व्यापक सख्या को दखत हुए 1886 म बगाल क हिंदुस्तानी भाषाई

समाचारपत्रों के प्रतिवेदन मे की गई इस स्वीकृति पर आश्चर्य होता है कि आनन्द बाजार पत्रिका को छोडकर किसी एक भी स्वदेशी भाषाई पत्र ने आय कर का पक्ष लेते हुए उसका समर्थन नहा किया होम (पब्लिक) माच 1888 प्राग, 404 (ए) कडिका, 56

107 रिप० आई० एन० सी० 1887 पृ० 135

108 मालवीय स्पीचज पृ० 505

109 रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 133

110 सी० पी० ए० प० 704

111 मसानी पूर्वोद्धत प० 318 पर

112 दत्त ई० एच० II प० 165 समान रूप से ही महत्वपूर्ण यह तथ्य है कि राष्ट्र की आय को दुष्प्रभावित करने वाले करो को लौटाने की माग क समय उनके द्वारा उल्लिखित कर थ भूमि लगान भूमि लगान पर उपकर नमक कर कपास उत्पादन शुल्क उनके द्वारा हटाए जाने के लिए उल्लिखित किए गए करो म आय कर सम्मिलित नहा था देखिए ई० एच० II प० 596-7 इसी प्रकार 1904 के बजट पर उनके भाषण बी० के० बोस और श्रीराम न आय कर जारी रखन क पक्ष म ही भाषण दिया (एल० सी० पी० 1904 खड XLIII प० 432 और 508 क्रमश)

113 जोशी पूर्वोद्धत प० 141, 161 6 190

114 ज्ञापन, दिनाक 8 माच 1894 रिपोट आफ दि इडियन एसोसिएशन 1892 3 से 1895 6 पृ० 43 तथा देखिए पूना सावजनिक सभा का ज्ञापन, दिनाक 23 दिस० 1890 जे० पी० एस० एस० जन० 1891 (खड XIII स० 3) प० 80

115 20 सित० 1891 7 8 माच 1894 23 अक्तूबर 1902

116 और देखिए, हिंदू 8 अप्रल 1889 28 मई 1890 3 दिसबर 1890

117 आर० एन० पी० बब 20 दिस 1890

118 आर० एन० पा० बग० 17 माच 1894 तथा सजीवनी 30 अगस्त (आर० एन० पी बग० 6 सित० 1890)

119 तिरगा निशान 13 अप्रल (आर० एन० पी० एम०, 30 अप्रल 1889) इदु प्रकाश 8 दिस० (आर० एन० पी० बब 13 दिस० 1890) नेटिव ओपीनियन 14 दिस० (वही 20 दिस० 1890) मराठा 14 दिस० 1890 बगवासी 30 अगस्त (आर० एन० पा० बग० 6 सित० 1890), हिंदुस्तानी 21 जनवरी (आर० एन० पी० एन० 27 जन० 1891), कसरे हिंद 18 फरवरी (आर० एन० पी० बब 24 फरवरी 1894) स्वदेशमित्रन 5 अप्रल (आर० एन० पी० एम 15 अप्रल 1899) जमी उन उलूम 7 नव० (आर० एन० पी० एन० 13 नव० 1900) अवध समाचार 7 नव०(वहा 8 नव० 1902) हितवादी 31 अक्तूबर (आर०एन०पी० बग० 8 नवबर 1902) स्वदेशमित्रन 8 अप्रल (आर० एन० पी० एम०, 9 अप्रैल 1904)

120 देखिए आगे नमक कर सबधी भाग

121 आर० एन० पी० बग० 15 नव० 1890 वही, 21 फरवरी 1891 और आर० एन० पा० एन० 25 नवबर 1890 क्रमश

122. जी० आर० चितनवीस एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII प 246 महाराजा आफ दरभगा एल० सी० पा० 1897 खड XXXVI प० 210 आशुतोष मुखर्जी एल० सी० पी० 1904 खड XLIII प० 416 20

135 जोशी, पूर्वोद्धत पृ० 164 6 तथा नवविभाकर 5 जन० (आर० एन० पी० बग०, 10 जनवरी 1880), सुबोध पत्रिका 11 दिस० (आर० एन० पी० बब, 17 दिस० 1881), अखबारे आम 21 जनवरी (आर० एन० पी० पी० एन० 31 जन० 1882) इंदु प्रकाश, 8 माच 1884 इडियन स्पेक्टेटर 9 माच 1884 स्वदेशमित्रन 11 दिस० (आर० एन० पी० एम० दिस० 1884), द निव 23 नवबर (आर० एन० पी० बग०, 28 नवबर 1885) मराठा 17 जन० 1886 भारतवासी 9 जनवरी साधारणी 10 जनवरी (वही 16 जनवरी 1886) सुरभि ओ पताका 28 जन० (वही, 30 जन० 1886), रिप० आई० एन० सी० 1887 पृ० 135 तिरगा निशान 13 अप्रल (आर० एन० पी० एम० 30 अप्रल 1889), सुधारक, 15 दिस० (आर० एन० पी० बब 20 दिस० 1890), पूना सावजनिक सभा का 23 दिसबर 1896 का ज्ञापन ज० पी० एस० एस० जनवरी 1891 (खड XIII स० 3), पृ० 80 हिंदुस्तानी 21 जनवरी (आर० एन० पी० एन०, 27 जन० 1891), आफ्ताबे पजाब 2 नवबर (आर० एन० पी० पी० 14 नवबर 1891) सजीवनी, 10 माच (आर० एन० पी० बग०, 17 माच 1894), स्वदेशमित्रन 5 अप्रल (आर० एन० पी० एम० 15 अप्रल 1899), उमी उल उलम 7 नवबर आर० एन० पी० एन०, 13 नवबर 1900) अवध समाचार, 7 नवबर (वही 9 नवबर 1902) हितवार्ता, 31 अक्तूबर बगाली, 4 नव० (आर० एन० पी० बग० 8 नवबर 1902) स्वदेशमित्रन, 8 अप्रल (आर० एन० पी० एम० 9 अप्रल 1904)

136 नवविभाकर 26 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 31 जनवरी 1880) ए० बी० पी० 29 दिस० 1881) इडियन स्पेक्टेटर 18 दिस० (आर० एन० पी० बब०, 24 दिस० 1881) और 9 माच 1884 सजीवनी 10 अक्तू० सोम प्रकाश 12 अक्तू० (आर० एन० पी० बग० 17 अक्तूबर 1885)

137 प्रस्ताव सख्या VI

138 ए० बी० पी० 28 जनवरी 11 फरवरी 1886 बगाली 9, 23 जनवरी 1886 द निव 30 दिस० 1885 (आर० एन० पी० बग० 2 जनवरी 1886) बगवासी 9 जनवरी (वही, 16 जन० 1886) द निव और आनद बाजार पत्रिका, 11 जनवरी (वही) सहचर 13 जन० भारत मिहिर 14 जन० सजीवनी और भारतवासी 16 जनवरी साधारणी 17 जनवरी (वही 23 जनवरी, 1886), सुरभि ओ पताका 28 जनवरी (वही 6 फरवरी 1886) एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III पृ० 4 इडियन एसोसिएशन का ज्ञापन बगाली के 23 जन० 1886 के अंक म प्रकाशित, बाबें प्रसीडेंसी एसोसिएशन का ज्ञापन रिपोर्ट आफ बाबे प्रेसीडेंसी एसोसिएशन 1885 6 पृ० 206-07

139 प्रस्ताव सख्या VI

140 मालवीय स्पीचेज, पृ० 504

141 1888 का प्रस्ताव VIII 1889 का प्रस्ताव III (जी) 1890 का प्रस्ताव II (जी) 1891 का प्रस्ताव IV 1892 का प्रस्ताव V (बी), 1893 का प्रस्ताव III (बी) 1894 का प्रस्ताव XVI (बी) 1895 का प्रस्ताव XXII (ए) 1896 का प्रस्ताव XIII 1898 का प्रस्ताव XX (जी) 1899 का प्रस्ताव XIV (III डी) 1900 का प्रस्ताव X (III डी) 1901 का प्रस्ताव III तथा XIX (I ए)

142 उदाहरणाथ हिंदू 8 अप्रल 1889 बगवासी सजीवनी 30 सितबर (आर० एन० पी० बग० 6 सित० 1890) नेटिव ओपीनियन 14 सितबर (आर० एन० पी० बब 20 सित० 1890) हिंदुस्तानी 21 जनवरी (आर० एन० पी० एन० 27 जनवरी 1891) ए० बी० पी० 20

सितबर 1891 आफ्ताबे पजाब 2 नवबर (आर० एन० पी० पी० 14 नवबर 1891) हिंदू 4 अप्रल 1894 30 नवबर 1895 स्वदेशमित्रन 5 अप्रल (आर० एन० पी० एम 15 अप्रल 1899) जमी उल उलूम, 7 नवबर (आर० एन० पी० एन०, 13 नवबर 1900) अवध समाचार 7 नवबर (वही 8 नवबर 1902) ए० बी० पी० 12 माच 1902 हितवादी 31 अक्तूबर (आर० एन० पी० बग० 8 नव० 1902)

143 जी० पी० सेन रिप० आई० एन० सी० 1887 प० 131 2 जे० सी० घोष वही पृ० 133, मालवीय, स्पीचेज, प० 505-08 राय पावर्टी प० 267 71 जी० आर० एम० चितनवीस एल० सी० पी० 1894 खड XXXVIII प० 246 पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1896 खड XXXV प० 285 जी० आर० एम० चितनवीस एल० सी० पी० 1899 खड XXXVIII प० 234 पी० ए० चारलू वही प० 243 गोखले स्पीचेज प० 10 पी० ए० चारलू, एल० सी० पी० 1902 खड XLI प० 119 श्रीराम, वही प० 142 3 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, पृ० 704 सी० वाई० चितामणि रिप० आई० एन० सी० 1902 प० 133

144 रियायत की घोषणा करते हुए वित्त सदस्य सर एडवड ला ने टिप्पणी की जहा तक आय कर मे छूट की सीमा को बढाने की बात है हमारा विश्वास है कि हजार रुपये से कम रकम पर कर का भुगतान अधिकाशत साधारण व्यापारियो व्यापारिक सस्थानो तथा सरकारी कार्यालयो के क्लर्कों और पेंशनभोगियो द्वारा किया जाता है जो आय के अपने निम्न तथा साधारण साधनो के कारण इस कर को असाधारण भार के रूप में ही ग्रहण करते हैं इसके अतिरिक्त हमारे विचार म कर निर्धारको की जाच सबधी अनुचित कार्यवाही का शिकार भी अधिकाशत इस निम्न वग को होना पडता है ये कर निर्धारक कभी कभी जाच के समय अन्यायपूर्ण ढग से बहुत ऊचे कर निर्धारित कर देते हैं (फाइनेंशनल स्टटमट 1903-04 कडिका 39)

145 *गोखले स्पीचज प० 38 श्रीराम बी० के० बास०, पी० आनन्द चारलू एल० सी पी० 1903* खंड XLI पृ० 100 126-7, 140-2 क्रमश हिंदू, 18 माच 1903 ए० बी० पी० 19 23 माच 1903 बगाली 21 माच 1903, 28 माच 4 11 अप्रल 1903 के० बी० ओ० आई० म 28 माच के आर० एन० पी० बब मे 28 माच 4 11 अप्रल 1903 के आर० एन० पी० बग म 4 11 22 अप्रल 1903 म आर० एन० पी० पी० म 28 माच 4 11 अप्रल 1903 आर० एन० पी० यू० पी० म तथा 21 माच 1903 के आर० एन० पी० एम० म उल्लिखित पत्र-पत्रिकाए आई० एन० सी० 1903 का प्रस्ताव स० VIII

146 प्रमाण रूप मे देखिए गोखले स्पीचेज प० 77 और आई० एन० सी० 1903 का प्रस्ताव स० VIII

147 राष्ट्रीय दृष्टिकोण के इस पक्ष पर अमृत बाजार पत्रिका के सपादक मोतिलाल ने 23 अक्तूबर 1902 को सावजनिक रूप से बल दिया उन्होने निर्देश किया कि वह आय कर का तब भी समथन कर रहे हैं जबकि उन्हे इस कर के कारण एक बहुत बडी रकम का भुगतान करना पडेगा

148 अत भारतीय नेताओ की बडी सख्या वित्त सदस्य ए० कालविन की 1886 में उच्च वर्गों पर इस निंदापरक टिप्पणी से बच गई कि ये लोग जनता पर कराधान का भार डालने के लिए तो उत्सुक हैं परतु अपनी उंगली भी छुआना नही चाहते फलत य वग विशेषत व्यापारी और व्यवसायी लोग जिस सरकार की छत्रछाया म पनपते-फूलते हैं उस सरकार के समथन के लिए कर के रूप म *उसके प्रति अपना कोई भी योगदान नहीं देते कालविन ने अपने मित्रो सदानन्द* का कररहित उल्लेखनीय आय अजन करने के लिए मजाक उडाया तथा उनस जनता के भार म

उनके समुपयुक्त भाग की उगाही द्वारा उच्च तथा मध्यवर्ग को कर से बचन व इस 'वलर' से मुक्त करने का वचन दिया (एल० सी० पी० 1886 खड 25 पृ० 11 और 18) जमा हम दिखा चुके हैं, भारतीय पत्रकार तथा अन्यान्य राष्ट्रीय नेता इस काय मे सरकार की सहायता करने के लिए आध स भी अधिक माग तक आग बढ़ने को सहमत थ वस्तुत जसा कि नमककर वाले अगले भाग म स्पष्ट रूप से दिखाया गया है, सरकार ने ही इस सबध म इनकार का रवया अपनाया दो वप बाद सरकार ने इस राह पर आगे बढ़ना अस्वीकार कर दिया भारतीय नेताओ के पास इस इनकार की तीव्र आलोचना का माग ही बचा था तुलनीय डफरिन मिनिट्स एन्क्लोजर टु डिस्पच (फाइनस)आफ गवर्मेंट आफ इडिया सख्या 68 दिनाक 6 नवबर 1888

149 उदाहरण के रूप म 8 अप्रल 1889 के प्रक म हिंदू ने निर्देश किया कि निम्न मध्य वग का सालना 500-1000 उपाजन करने वाला व्यक्ति आय कर चुकाने की अच्छी स्थिति म था उस व्यक्ति की अपेक्षा जो बेचारा नमक कर का भुगतान करता है पत्र ने इस आधार पर माग की कि प्रत्याशित राहत देने के किसी भी प्रश्न पर इन दोनो मे निधन व्यक्ति को प्राथमिकता मिलनी चाहिए और देखिए एस० एन बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 703-04 और पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1902 खड XLI, प० 119 कराधान में किसी प्रकार की राहत आय कर की अपेक्षा नमक कर और भूमि लगान के भार को हलका करने के दृष्टिकोण के लिए देखिए ए० बी० पा० 4 फरवरी 1886 मराठा 14 दिस० 1890, सजीवनी 30 अगस्त (आर० एन० पी० वग०, 6 सित० 1890) पूना सावजनिक सभा का 23 दिस० 1890 को प्रेषित ज्ञापन, ज० पी० एस० एस० जनवरी 1891 (खड XIII स० 3) प० 80 मराठा 29 मई 1904

150 1882 म इपीरियल लजिस्लेटिव कौंसिल म कलकत्ता के व्यापारियो के प्रतिनिधि दुर्गाचरण लाहा और बगाल के जमीदारो के प्रतिनिधि जीतेंद्र मोहन टगोर ने नमक कर म कटौती का विरोध किया उन्होंने इसके बदले लाइसेंस कर को हटाने की सिफारिश की (एल० सी० पी० 1882 खड XXI प० 290-1 304) 1889 मे दुर्गाचरण लाहा ने नमक कर म कटौती का विरोध किया और उसके बदले आय कर समाप्त करने का सुझाव दिया उनके अनुसार आय कर समाप्त करने से जनता को ठोस और वास्तविक राहत मिलेगी तथा लोग इसका सचमुच ही स्वागत करेंगे (एल० सी० पी० 1889 खड XXVIII प० 141) 1890 म बगाल के राष्ट्रीय वाणिज्य सदन (बगाल नेशनल चबर आफ कामस) ने सरकार के पास आय कर समाप्त करने के लिए ज्ञापन भेजा (चबर का 1890 की रिपोर्ट प० 23)

151 बगाल और असम को उनकी जरूरत का सारा नमक इग्लड और यूरोप से मिलता था इसका प्रमुख कारण यह था कि देशी नमक उद्योग आयातित नमक की प्रतियोगिता नहा कर सकता था यह आयातित नमक वस्तुत विदेशो पोतो म पोत के भार को सतुलित करने के लिए लादा जाता था स्थानीय नमक पर और आयातित नमक पर शुल्क लगाने के उपरात दानो का मूल्य बराबर हो जाता था (पी० बनर्जी इन्डियन टक्सेशन प 280-6 वकील पूर्वोद्धत प० 457 8)

152 1859 म यह दरें निम्नलिखित रूप स था
बगाल म 2 रु० 8 आने प्रति मन मद्रास म 14 आने प्रति मन बबई म 12 आन और उत्तर भारत म 2 रुपय प्रति मन (पी० बनर्जी इडियन टक्सेशन पृ० 278)

153 जान और रिचाड स्ट्रची पूर्वोद्धत पृ० 219-32

154 उदाहरण के रूप म देखिए पी० बनर्जी इडियन टक्सेशन प० 277 बी० बी० मजूमदार पूर्वोद्धत प० 204 484 5 दत्त इ० एच० II पृ० 150-1

155 प्रमाण के रूप में देखिए नौरोजी स्पीचेज, परिशिष्ट पृ० 178 एसेज पृ० 107 नेटिव ओपीनियन 18 अगस्त(आर० एन० पी० बंब, 24 अगस्त 1872) सत्य शोधक 5 सितंबर जगनमित्र 6 सित०, ज्ञान प्रकाश 16 सित० (वही, 18 सितंबर 1875) बंबई समाचार 21 सित० (वही, 25 सितंबर 1875), शुभसूचक 22 जनवरी और रास्त गुफ्तार 14 जनवरी (वही 20 जनवरी 1877) सूय प्रकाश 5 जनवरी, गुजरात मित्र 6 जनवरी जाम जमशद 10 जन० (वही, 12 जनवरी 1878), इदु प्रकाश 14 जनवरी रास्त गुफ्तार 13 जन०(वही 19 जनवरी 1878), नेटिव आपीनियन, 20 जन० (वही 26 जन० 1878) बाबे क्रानिकल 14 माच जामे जमशद 17 मार्च (वही 20 माच 1880), दि फाइनासेज आफ इडिया अडर लाड लिटन ज० पी० एस० एस० अप्रल 1880 (खड II स० 4) पृ० 30, प्रोसीडिंग्स आफ दि सभा ज० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खड III स० 1), प० 3 दि वायसरायल्टी आफ लाड लिटन वही पृ० 63, भारत मिहिर, 27 जुलाई (आर० एन० पी० बग० 7 अगस्त 1880), मराठा 15 मई 1881 'दि इडियन साल्ट टक्स, ए बुक रिव्यू जे० पी० एस० एस०, जुलाई 1881 (खड IV स० 1) प० 59-61, इडियन स्पेक्टेटर, 14 अगस्त (आर० एन० पी० बब 20 अगस्त 1881) केसरी, 23 अगस्त (वही, 3 सितंबर 1881), इडियन स्पेक्टेटर और रास्त गुफ्तार 29 जनवरी (वही 4 फरवरी 1882), हिंदी प्रदीप जनवरी 1879 (आर० एन० पी० पी० एन०, 11 जनवरी 1879)

156 नौरोजी पावर्टी पृ० 215

157 बी० बी० मजूमदार पूर्वोद्धत प० 314 और 317

158 1877 में पत्रिका द्वारा अपनाई स्थिति के लिए देखिए वही प० 383 1881 मे उसक रवये के लिए देखिए 30 जून 1881 का उसका मत और देखिए नवविभाकर 26 जनवरी(आर० एन० पी० बग० 31 जनवरी 1880), आनन्द बाजार पत्रिका 11 जुलाई (वही, 23 जुलाई 1881)

159 ए० बी० पी० 30 जून 1881 तथा आनद बाजार पत्रिका 11 जुलाई 1881 पूर्वोक्त स्थल

160 मराठा 2 अप्रल 1882 बबई समाचार और जामे जमशेद 10 माच (आर० एन० पी० बब, 11 माच 1882) अरुणोदय नेटिव ओपीनियन रास्त गुफ्तार और इडियन स्पेक्टटर 12 माच (वही 18 माच 1882) सोम प्रकाश 13 माच (आर० एन० पी० बग 18 माच 1882) सुलभ समाचार और बगवासी 18 माच (वही 25 माच 1882) साधारणी 19 माच (वही 1 अप्रल 1882)

161 ए० बी० पी० 16 माच 1882 भारत मिहिर 14 माच सह्चर 15 माच नवविभाकर 20 माच (आर० एन० पी० बग० 25 माच 1882) चारुवत और आनद बाजार पत्रिका 20 माच विहार बधु 30 माच (वही 1 अप्रल 1882) परिदशक 26 माच (वही 8 अप्रल 1882) अखबारे आम 12 अप्रल (आर० एन० पी० पी० एन० 19 अप्रल 1882) रहबरे हिंद 24 अप्रैल (वही 26 अप्रल 1882)

162 जोशी पूर्वोद्धत प० 89 100 तथा देखिए प० 3

163 रिप० आई० एन० सी० 1885 पृ 69 और 73

164 मराठा 25 जन० 22 माच 1885 शिवाजी 23 जनवरी जामे जमशेद 29 जनवरी (आर० एन० पी० बब 31 जन० 1885) नेटिव ओपीनियन और इडियन स्पेक्टेटर 22 माच (वही 28 माच 1885) हिंदू 3 अप्रल 1885 स्वदेशमित्रन 18 जनवरी (आर० एन० पी० एम जनवरी 1886) बगवासी 2 और 23 जनवरी (आर०एन०पी० बग० 9 और 30 जनवरी

165 देखिए पाद, पादटिप्पणी संख्या, 100 उदाहरणार्थ ट्रिब्यून 1 मई (वी० ओ० आई०, मई 1886)

166 एन० सी० पी० 1888 खंड XXVII, पृ० 20

167 थामस पूर्वोद्धृत पृ० 498

168 मराठा 22 और 29 जनवरी 1888 हिंदू 25 जन० 1888, बंगाली, 28 जन० 1888 ए० बी० पी० 26 जन० 1888, नेटिव प्रेस बबई के रिपोर्टर ने 28 जनवरी और 4 फरवरी 1888 को समाप्त होने वाले सप्ताहों की रिपोर्टों में लिखा कि इस सप्ताह में लगभग सभी समाचारपत्रों ने नमक कर में वृद्धि के संबंध में न्यूनाधिक रूप में रोष प्रकट किया है और देखिए आर० एन० पी० बंब 11 फरवरी 1888 सजीवनी, 21 जनवरी नवविभाकर, साधारणी 23 जन० (आर० एन० पी० बग०, 28 जन० 1888) सुरभि आ पताका 26 जनवरी प्रियबंधु और समय, 27 जनवरी बगवासी 28 जन० ढाका प्रकाश 29 जन० (वही 4 फरवरी 1889), हिंदू रंजिका 1 फरवरी जगतबासी 2 फरवरी प्रतिकार 3 फरवरी (वही, 11 फरवरी 1888) आर० एन० पी० एम० 31 जन० 15 29 फरवरी 1888 में उल्लिखित लगभग सभी समाचारपत्र कोहेनूर, 28 जनवरी (आर० एन० पी० पी० एन०, 31 जन० 1888), हिंदुस्तान 1, 2, 3 फरवरी, पजाबी अखबार 4 फरवरी सुबोध सिंधु 1 फर० (वही 7 फरवरी 1888), अवध अखबार, 10 फरवरी (वही 14 फरवरी 1888) वायस आफ इंडिया के कार्यालय में प्राप्त समाचारपत्रों द्वारा अभिव्यक्त मत को संक्षेप में प्रस्तुत करते हुए उसके संपादक ने लिखा कि अधिकांश ने नमक कर में वृद्धि के प्रति तीव्र विरोध प्रकट किया है वी० ओ० आई०, फरवरी 1888 नेटिव ओपीनियन 22 जनवरी इंडियन नेशन 23 जनवरी इंडियन यूनियन 25 जन० पीपुल्स फ्रेंड्स, 28 जन० (वी० ओ० आई० फरवरी 1888) बिहार हेराल्ड और ट्रिब्यून 11 फरवरी (वही मार्च 1888)

169 आर० एन० पी० बंब 4 फरवरी 1888

170 वही 28 फरवरी 1888 इसी प्रकार मृदु स्वर वाले इंदु प्रकाश ने अपने 30 जनवरी 1888 के अंक में चेतावनी देते हुए लिखा कहा जाता है कि जिस लार्ड डलहौजी ने अधिग्रहण नीति अपना कर लार्ड केनिंग के लिए विद्रोह से जूझने का वातावरण तैयार किया था उसी प्रकार लार्ड डफरिन भी भारतीय जनता पर विभिन्न करों की वृद्धि द्वारा अपने उत्तराधिकारी के लिए कठिन वैसा ही वातावरण तैयार कर रहे हैं (आर० एन० पी० बंब, 4 फरवरी 1888)

171 आर० एन० पी० बंब 17 मार्च 1888

172 आर० एन० पी० बंग० 4 फरवरी 1888 बंबई के सत्य शोधक ने अपने 25 जनवरी 1888 के अंक में टिप्पणी की कि इस प्रकार का अक्षम्य भूल करके लार्ड डफरिन ने भारतीय जनता की दृष्टि में अपने को घृणा का पात्र बना लिया है (आर० एन० पी० बंब, 28 जनवरी 1888) 22 जनवरी के अंक में गुजरात मित्र ने व्यंग्यपूर्वक लिखा कि लार्ड डफरिन इस देश से बदनाम होकर ही जाएगा भारतीय लोग उनकी अवहेलना करेंगे और भगवान से प्रार्थना करेंगे कि उन्हें शीघ्रातिशीघ्र इस व्यक्ति से छुटकारा मिले। (वही)

173 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 137 90 सरकारी नीति के अन्याय से असंतुष्ट उन्होंने घोषणा की वायसराय और राज्य सचिव आते जाते रहते हैं उनकी कीर्ति भी बुलबुलों के समान क्षणभर के लिए दीप्त रहकर अनंत में सदा के लिए विलीन हो जाएगी परंतु करोड़ों दुखी और क्लेशग्रस्त भारतीयों का भ्रम नहीं हो पाएगा सांविधानिक रूप से उन्हें बोलने का अधिकार प्राप्त नहीं परंतु उनमें एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं होगा जो अपने पर किए गए अन्याय और अत्याचार को चुपचाप सहन

कर लें' (वही प० 140)

174 प्रस्ताव सं० XV

175 रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 179

176 वही प० 179 80

177 इडियन मिरर 22 फरवरी (वी० ओ० आई० फरवरी 1888) सोम प्रकाश, 23 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 28 जन० 1888), वर्धमान सजीवनी 24 जनवरी सहचर, 25 जन० (वही, 4 फरवरी 1888)

178 1899 का प्रस्ताव III (1) 1890 का प्रस्ताव V, 1891 का प्रस्ताव VI (ए) 1892 का V(ए) 1893 का VII (ए), 1894 का XVI (ए) 1895 का XIX 1896 का VIII, 1897 का IV 1898 का XX 1899 का XIII 1900 का X 1901 का XIX 1902 का XIII पूना सावजनिक सभा का 23 दिस० 1890 का ज्ञापन जे० पी० एस० एस० जनवरी 1891 (खड XIII स० 3) प० 79 80 विभिन्न प्रातीय काग्रसो ने भी अपने वार्षिक अधिवेशनो म इस प्रश्न पर विचार किया

179 नौरोजी, सी० पी० ए० पृ० 177 स्पीचेज प० 142 (उन्होंने नमक कर को किसी सभ्य देश म प्रचलित राजस्व पद्धतियो मे सर्वाधिक क्रूर बताया) वाचा रिप० आई० एन सी० 1890 प० 37 9 रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 158 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III प० 160 एस० ऐंड डब्ल्यू० प० 312 रिपोट आफ दि बगाल नेशनल चबर आफ कामस 1888 प० 34 राय पावर्टी पृ० 266-7, पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1896 खड XXXV प 84 2०5, जी० वी० जोशी पूर्वोद्धत प० 191 202 1136 जी० आर० एम० चितनवीस एल० सी० पी० 1899 खड XXXVIII प० 234, पी० ए० चारलू वही प० 243 और एल० सी० पी० 1902 खड XLI पृ० 118

180 उदाहरण के रूप म देखिए आई० एन० सी० 1890 प० 39 और रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 151

181 उदाहरण के रूप मे बगाली 9 माच 1889 ओनामी अखबार 7 फरवरी (आर० एन० पी० पी 9 फरवरी 1889) कोहेनूर 5 माच (वही 9 माच 1889) मराठा 14 दिस० 1890 23 जन० 1891 हिंदू 10 जन० 1891 बगाली 28 माच 1891 आर० एन० पी० बब 28 माच और 4 अप्रैल 1891 पसा अखबार 1 अप्रैल (आर० एन० पी० पी० 18 अप्रैल 1891) अखबारे आम 16 अप्रैल (वही 25 अप्रैल 1891)

182 रामगोपाल पूर्वोद्धत प० 45 47

183 स्वदेशमित्रन 16 अप्रैल (आर० एन० पी० एम० 4 दिस० 1900) बगाली 16 अक्तूबर 1901 भारत जीवन 17 फरवरी (आर० एन० पी० यू० पी० 22 फर० 1902) गोखले स्पीचेज प० 10 3 पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1902 खड XLI पृ० 118 9 हितवादी 4 अप्रैल (आर एन० पी बग० 12 अप्रैल 1902) आई० एन० सी० 1902 का प्रस्ताव XIII स्वदेशमित्रन 17 जन० (आर० एन० पी० एम० 17 जनवरी 1903) 1902 की काग्रेस में अध्यक्षीय भाषण करते हुए एस० एन० बनर्जी ने घोषणा की कि यदि करो म राहत दनी ही है तो विचारणीय तथ्य यह है कि कटौती के लिए किस कर को प्राथमिकता दनी चाहिए मुझे यह कहने म कोई सकोच नही कि नमक कर मे ही सवप्रथम कटौती की जानी चाहिए (सी० ए० प० 703)

184 वाचा स्पीचेज, पृ० 434

185 आई० एन० सी० 1903 का प्रस्ताव VIII गोखले, स्पीचेज पृ० 38 40-1, श्रीराम तथा पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1903 खड XLII पृ०99 100 और 140-2, मराठा 22 मार्च 1903, हिंदू 18 मार्च 1903, बगाली, 19 21, 25 मार्च 1903, कायस आफ इंडिया, 21 मार्च 1903 मद्रास स्टडड, 18 मार्च (बी० ओ० आई०, 28 मार्च 1903), इदु प्रकाश, 19 मार्च, इडियन मिरर, 20 मार्च, इडियन सोशल रिफामर, 22 मार्च (वही, 4 अप्रैल 1903), एडवोकेट और न्यू इडिया 26 मार्च (वही 11 अप्रैल 1903), आर० एन० पी० बब, 21 28 मार्च 4 अप्रल 1903 आर० एन० पी० बग० 28 मार्च, 4 अप्रल 1903 आर० एन० पी० एम०, 21 28 मार्च 1903, आर० एन० पी० यू० पी०, 28 मार्च 4 11 अप्रैल 1903, आर० एन० पी० पी० 28 मार्च 4 11, 25 अप्रल 1903 मे उल्लिखित समाचारपत्र

186 उदाहरण के रूप म हिंदू 18 नव० 1903 हिंदुस्तान रिव्यू और कायस्थ समाचार, सितबर 1902 गोखले स्पीचेज प० 77 9 आई० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव VIII (बी)

187 आई० एन० सी० 1905 का प्रस्ताव VII गोखले स्पीचेज प० 93 5 मराठा 26 मार्च 1905 बगाली 28 मार्च 1905 आर० एन० पी० बब 25 मार्च 1, 8 अप्रल 1905, आर० एन० पी० बग०, 1 8 अप्रल 1905 आर० एन० पी० एम० 1 8 अप्रल 1905 में उल्लिखित समाचारपत्र सिटीजन 3 अप्रल (आर० एन० पी० यू० पी० 8 अप्रैल 1905)

188 डी० पी० सर्वाधिकारी रिप० आई० एन० सी० 1890 प० 43 4 उन्होंने नमक कर मे कटौती को मद्रास और बबई की (वगगत) माग बताते हुए उसकी आलोचना की दैनिक ओ समाचार चद्रिका 20 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 24 फरवरी 1894)

189 ए० बी० पी० 4 दिस० 1902 12 जन० 23 24 मार्च 1903 27 मार्च 1905 उसके द्वारा प्रस्तुत तर्कों म एक यह था कि नमक कर म किसी भी प्रकार की कटौती का लाभ लिवरपूल और चेशायर के नमक व्यापारियो को ही मिलेगा

190 नौरोजी पावर्टी प० 213-6 दि इडियन साल्ट टक्स जे० पी एस० एस०, जुलाई 1881 (खड IV म० 1) पृ० 59 61 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 91 केसरी 24 जनवरी (आर० एन० पी० बब 28 जनवरी 1888) मजावनी 28 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 4 फरवरी 1888), हिंदुस्तान, 1 2 3 फरवरी सुबोध सिधु 1 फरवरी पजाबी अखबार 4 फरवरी (आर० एन० पी० पी० एन० 7 फरवरी 1888) एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III, पृ० 161 और सी० पी० ए० प० 703 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1890 प 38 पसा अखबार 1 अप्रल (आर० एन० पी० पी०, 18 अप्रल 1891) राय पावर्टी पृ० 261 2 गोखले स्पीचेज प० 13 94 1890 के कांग्रेस अधिवेशन म इसी आपत्ति को चित्रात्मक भाषा मे प्रकट करते हुए पजाब के लाला मुरलीधर ने नमक कर को भूख और प्यास पर मानव जीवन पर कर' बताया (रिप० आइ० एन सी० 1890 प० 42)

191 प्रमाण के रूप म देखिए, ड्यूक आफ आरगिल का 21 जनवरी 1869 का सप्रेषण जान स्ट्रेची तथा रिचार्ड स्ट्रेचा पूर्वोद्धत प० 222 3 पर लिटन एल० सी पी० 1878 खड XVII प० 99 100 वेस्टर्न एल सी० पी० 1888 खड XXVII पृ० 20

192 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 184 5

193 रिप० आई० एन० सी० 1888 प 179 1890 के कांग्रेस अधिवेशन म यही तथ्य प्रस्तुत करते हुए मोहन चटर्जी ने आश्चर्यचकित होकर कहा "जब उच्च पद प्रतिष्ठित और विलासिता की

गोद में लोटते हुए महानुभाव कहते हैं अरे गरीब आदमी इसे महसूस नहीं करेगा तो हम यह बहुत दुखदायी, बहुत निरुत्साहित करने वाला तथा बहुत हृदयद्रावक लगता है वस्तुत हमारे पास इस मूर्खता, नग्नता तथा स्वार्थपरता को सही रूप में परिभाषित करने के लिए शब्द ही नहीं (रिप० आई० एन० सी०, 1890 पृ० 46) इसी प्रकार की अन्य टिप्पणियों के लिए देखिए, जोशी, पूर्वोद्धत पृ० 186 7 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 64 मालवीय स्पीचेज पृ० 30 1 राय पार्वर्टी पृ० 265 हिंदू 18 नवबर 1903

194 रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 36

195 वही पृ० 37 तथा देखिए वाचा को सी० एल० पारिख पूर्वोद्धत पृ० 345 पर

196. नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 178 एस० ए० स्वामिनाथ अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1885 पृ० 69 बबई के नागरिकों के द्वारा दिनाक 18 माच 1888 को प्रस्तुत सावजनिक ज्ञापन, जे० पी० एस० एस० जन अप्रल 1888 (खड X स० 3-4) पृ० 18 बगाली 28 जन० 1888 इडियन स्पेक्टेटर नेटिव ओपीनियन, 22 जन० इडियन नेशन 23 जन० इडियन यूनियन 25 जनवरी पापुलस फ्रड, 28 जन० (वी० ओ० आई० फरवरी 1888) बिहार हेराल्ड ट्रिब्यून 11 फरवरी (वही माच 1888) स्वदेशमित्रन 28 जन० (आर० एन० पी० एम० 31 जन० 1888) एन० बी० बरवे रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 179 एस० एन० बनर्जी और एम० तथा डब्ल्यू० पृ० 312 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 37 और स्पीचेज पृ० 434 जी० एस० अय्यर बिलबी कमीशन खड III प्रश्न 18762 मालवीय स्पीचेज पृ० 30-1 राय, पार्वर्टी पृ० 265 6 पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1902 खड XLI पृ० 118 हिंदू 18 नवबर 1903 नमक कर में वद्धि से प्रभावित भारतीय जनता के दुर्भाग्य का सजीव चित्र खींचते हुए जी० के गोखले ने 1890 में घोषणा की कि इस वद्धि ने अकाल की सीमा पर जीवन निर्वाह करने वाले निधन तथा अभावग्रस्त लोगो के भयकर कष्ट विषम दुख गहन बाधाओ और भारी कठिनाइयों को और अधिक बना दिया है जी० वी० जोशी ने इस विषय पर अपने विस्तृत लेख में इस तथ्य को भली प्रकार उजागर किया गोखले रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 40 आई० एन० सी० 1895 की रिपोर्ट पृ० 150-1, स्पीचज पृ० 11 95 जोशी, पूर्वोद्धत पृ० 83 105 137 90 191 202 विशष रूप से देखिए पृ० 3 92 140 149 167, 185 7 195 1136

197 1888 का प्रस्ताव IV, 1895 का प्रस्ताव XIX 1896 का प्रस्ताव VIII 1897 का प्रस्ताव IV 1898 का प्रस्ताव XX (11 बी), 1899 का प्रस्ताव XIV (11 बी) 1900 का प्रस्ताव X (11 बी) 1901 का प्रस्ताव XIX (11 बी)

198 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 178

199 जे० पी० एस० एस० अप्रल 1880 (खड II स० 4) पृ० 30

200 सजीवनी 28 जन० (आर० एन० पी० एम० 4 फरवरी 1888) पूना म पारित प्रस्ताव जे० पी० एस० एस० जन० अप्रल 1888 (खड X स० 3-4) पृ० 31 जे० मुगनियार रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 46 गोखले स्पीचेज पृ० 40

201 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 91

202 वही पृ० 185 तथा देखिए पृ० 149 पृ० 188

203 आरगिल के ड्यूक का 1869 का संप्रेषण जान स्ट्रची और रिचाड स्ट्रची पर फाइनांशल स्टटमेंट 1877 दूसरी ओर दो भतपूर्व वित्त सदस्य ई० बेरिंग

अपना यह सुविचारित मत प्रकट कर चुके थे कि नमक कर में किसी प्रकार की वृद्धि का परिणाम निर्धनों पर भार में वृद्धि और नमक की खपत में कटौती होगी (एल० सी० पी०, 1882 खंड XXI पृ० 321 3 और एल० सी० पी० 1886, खंड XXVI पृ० 9 10)

204 एल० सी० पी० 1888 खंड XXVII पृ० 20

205 सत्य शोधक 5 सित० जगमित्र 6 सित०, ज्ञान प्रकाश 16 सित० (आर० एन० पी० बंब, 18 सित० 1875) केसरी 23 अगस्त (वही, 3 सित० 1881), इंडियन स्पेक्टेटर 22 जन०, केसरी 24 जन०, शुभ सूचक 20 जन० (आर० एन० पी० बंब, 28 जन० 1888), बंगवासी और संजीवनी 28 जन० (आर० एन० पी० बंग०, 4 फरवरी 1888), पंजाबी अखबार, 4 फरवरी सुबोध सिंधु 1 फर० हिंदुस्तान 1 2 3 फर० (आर० एन० पी० पी० एन० 7 फर० 1888) पूना में सार्वजनिक सभा द्वारा 18 मार्च 1888 को स्वीकृत ज्ञापन ज० पी० एस० एस० जन अप्रैल 1888 (खंड X सं० 3-4) पृ० 26 27 वाचा, रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 37 और सी० एल० पारिख पूर्वोद्धृत पृ० 382 पी० केनेडी रिप० आई० एन० सी०, 1890 पृ० 36 बंगाली 28 मार्च 1891 पैसा अखबार 1 अप्रैल (आर० एन० पी० पी०, 18 अप्रैल 1891) अखबारे आम 16 अप्रैल (वही 25 अप्रैल 1891) राय पार्वती पृ० 264 5 ए० डी० उपाध्याय रिप० आई० एन० सी०, 1895 पृ० 151, 1902 की कांग्रेस का प्रस्ताव सं० XIII इस विषय पर लोकप्रिय भावना के प्रदर्शनार्थ कुछ एक अवतरण नीचे प्रस्तुत किए जा रहे हैं 1890 की कांग्रेस में पी० केनेडी ने दुःखित होकर कहा नमक की सस्ते दाम पर उपलब्धि न हो पाने के कारण इस विशाल भारत देश के लाखों-करोड़ों पुरुषों स्त्रियों और बच्चों की इन दिनों आयु घट गई है उनका शरीर क्षीण हो गया है शारीरिक दुर्बलता के साथ साथ उनके मानसिक और नैतिक स्तर के विकास की सुविधाएं भी धूमिल पड़ गई हैं' (पूर्वोद्धृत), 1895 की कांग्रेस में ए० डी० उपाध्याय ने शोक प्रकट करते हुए कहा आखिर हमने ऐसा कौन सा भयंकर अपराध किया है कि जिसके फलस्वरूप हमें वर्षों तक पर्याप्त नमक की अप्राप्ति का अवांछनीय दंड दिया जा रहा है (पूर्वोद्धृत) अपने 31 जन० 1888 के अंक में तिलक के केसरी ने लिखा 'वायसराय महोदय की अथवा किसी अन्य महानुभाव की सलाह पर वित्त सदस्य ने नमक की पूर्ति को घटाकर उचित ही पग उठाया है उसने अपने एक ही तीर से दो शिकार मारे हैं एक ओर तो राजस्व की उगाही कर ली गई है और दूसरी ओर शासन के विरुद्ध अपने लेखों द्वारा निरर्थक उछलकूद मचाने वालों को क्षीणकाय बना दिया है (आर० एन० पी० बंब 4 फरवरी 1888)

206 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 169-83

207 वही, पृ० 184

208 वही पृ० 187 8

209 वही पृ० 195-8

210 गाखले रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 40 रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 150 1 स्पीचेज पृ० 13 31 39-41 79

211 हिंदू 3 अप्रैल 1885 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 90 824 इंडियन स्पेक्टेटर 22 जनवरी (आर० एन० पी० बंब 28 जनवरी 1888) इंडियन नेशन 23 जनवरी (बी० ओ आई० फरवरी 1888) हिन्दू 25 जनवरी 1888 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 37 राय पार्वती पृ० 263-4, ताज उल अखबार 27 दिसंबर 1890 (आर० एन० पी० पी०, 10 जन० 1891)

212 जाशी पूर्वोद्धत, प० 92

213 वही, प० 93 9, 178 9 गोखले स्पीचज, पृ० 79 80

214 जोशी पूर्वोद्धत प० 97

215 वही प० 98 शुभसूचक न अपने 22 जनवरी के अक म और रास्तगुफ्तार न अपन 14 जनवरी के अक मे इस प्रकार की आशकाए प्रकट की थी (आर० एन० पी० बब 20 जनवरी 1877)

216 जोशी पूर्वोद्धत प० 100 142 स्वदेशमित्रन 18 जनवरी (आर० एन० पी०, जनवरी 1886), पीछे पादटिप्पणी सख्या 168 म निर्दिष्ट लगभग सभा समाचारपत्र आई० एन० सी० 1889 का प्रस्ताव सख्या III (1) नौरोजी सी० पी० ए० प० 177 8

217 जोशी पूर्वोद्धत प० 166 190, मराठा 22 जन० 1888 ए० बी० पी०, 26 जन० 1888 28 जनवरी 1888 को समाप्त होने वाले सप्ताह के बबई के लगभग सभी समाचारपत्र रिपोटर का सार सक्षेप (आर० एन० पी० बब 28 जन० 1888) ट्रिब्यून 11 फरवरी (बी० आ० आई०, माच 1888) सजवनी 28 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 4 फरवरी 1888) स्वदशमित्रन 28 जन० 25 फर० (आर० एन० पी० एम० 31 जनवरी 29 फरवरी 1888), अमत बोधिनी 2 फरवरी (वही 15 फर० 1888) हिदुस्तान 1 2 3 फरवरी सुबोध सिंध 1 फरवरी (आर० एन० पी० पी० एन०, 7 फरवरी 1888)

218 जोशी पूर्वोद्धत प० 141 2 161 165 6 190 कसर हिंद 22 जन० (आर० एन० पी० पी० बब 28 जन० 1888)

219 एन० वी० बरवे रिप० आई० एन० सी० 1888 प० 179 इदु प्रकाश 30 जनवरी (आर० एन० पी० बब 4 फरवरी 1888), स्वदेशमित्रन 18 फरवरी (आर० एन० पी० एम० 29 फरवरी 1888) गोखले रिप० आई० एन० सी० 1890 प० 39-40, शशिलेखा 27 दिस० (आर० एन० पी० एम० 31 दिस० 1895)

220 पूना निवासियो द्वारा 18 माच 1888 को एक सावजनिक सभा मे स्वीकृत ज्ञापन ज० पी० एस० एस० जनवरी अप्रल 1888 (खड X स० 3-4) प 17 जोशी पूर्वोद्धत प० 141, 189 तथा दखिए आगे अध्याय XII

221 रिपोटर का सार सक्षेप आर० एन० पी० बब 28 जनवरी 1888 कसरी 31 जन० (आर० एन० पी० बब 4 फरवरी 1888)

222 जोशी पूर्वोद्धत प० 199

223 गोखले स्पीचेज प० 39

224 वही प० 79

225 आर० एन० पी० बब 28 जन० 1888

226 आर० एन० पी० बब 28 जनवरी 1888

227 आर० एन० पी० बग० 11 फरवरी 1888

228 जोशी पूर्वोद्धत प० 139

229 मुकर्जी और पेन्टि द्वारा नमक कर के समथन क लिए दखिए एन० सी० पी० 1888 खड XXVII पृ० 24 और 31 मुकर्जी ने घोषणा की कि नमक हा साथ यह एक ऐसा साधन है जिसमे सवसाधारण को सामान्य सतोष मिल गया और जो दश क निम्नतम व्यक्ति की जेब का भी उल्लेखनीय रूप से प्रभावित नही करेगा उनकी कायवाही की आलोचना क लिए दखिए 9 फरवरी 1888 का गुजरात गजट जिसने लिखा "क्रूरता की यह पराकाष्ठा है तुम क्या

जानो कि तुम किस तरह अधीन जनता का खून चूस रहे हो (आर० एन० पी० बव, 11 फरवरी 1888), 5 फरवरी 1888 के 'राज्यभक्त' ने भी एन० मुखर्जी को 'जादूगर लार्ड डफरिन के सकेतो पर नाचने वाली कठपुतली' की सज्ञा देते हुए टिप्पणी की कि मुखर्जी महोदय का स्वाग घृणास्पद है और यह उसके देशद्रोही होने का प्रमाण है (आर० एन० पी० बव 11 फरवरी 1888) ज्ञान प्रकाश, 9 फरवरी, श्री शिवाजी 10 फरवरी और बबई के बहुत सारे अन्य समाचारपत्र (आर० एन० पी० बव०, 11 फरवरी 1888) वत घर 9 फरवरी, सुबोध सिंध 8 फर० (आर० एन० पी० पी० एन० 14 फरवरी, 1888) जोशी पूर्वोद्धत प० 143-4, 186 7 स्वदशमित्रन, 18 फरवरी (आर० एन० पी० एम०, 29 फरवरी 1888) डब्ल्यू० सी० बनर्जी का लेख बगाली 25 अगस्त 1888 के अक म, मसानी पूर्वोद्धत पृ० 318 पर नौरोजी का कथन वाचा रिप० आई० एन० सी०, 1890 प० 38 मालवीय स्पीचेज, पृ० 27 8 30 एस० एन० बनर्जी एस० ऐंड डब्ल्यू० प० 312 इसके बहुत समय पश्चात 1897 म जमा उल उलम ने अपने 28 मई के अक म घटना का स्मरण करात हुए अपना रोष निम्नलिखित शब्दों म प्रकट किया 'नमक कर के मामले मे महामहिम की अपेक्षा पदवियों के भूखे भारतीय ही वास्तव म अधिक दोषी हैं एसा लगता है कि यह धोखेबाजी उन्हे मा के दूध के साथ घुट्टी में पिलाई गई है वे देशद्रोही हैं बगाल म एक राजा हैं जिन्होने नमक कर का जोरदार समर्थन किया है ऐसे लोग जिस भी देश म उत्पन्न हुए हैं और रहते हैं उस देश के और मानवता के नाम पर कलक रूप हैं, ऐस लोगो को तो समुद्र मे फेंक देना चाहिए जब तक एसे धोखेबाज इस देश मे जीते हैं देश कभी समद्ध नही हो सकता (आर० एन० पी० एन० 2 जून 1897)

230 बबई के नेटिव प्रेस के सवाददाता ने अपनी साप्ताहिक टिप्पणी म लिखा कि रास्त गुफ्तार और सप्ताह व अन्य अनेक समाचारपत्र विधानसभाओ के वतमान दोषपूर्ण गठन की एक बार फिर शिकायत कर रहे हैं और उन्हे वास्तविक रूप म अधिक लोक प्रतिनिधित्व का रूप देने की माग कर रहे हैं (आर० एन० पी० बव 11 फरवरी 1888) मराठा 18 फरवरी 1888 स्वदेश मित्रन 19 फरवरी (आर० एन० पी० एम० 29 फरवरी 1888) हिंदुस्तान 1 2 3 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 7 फरवरी 1888) एस० एन० बनर्जी एस० ऐंड डब्ल्यू० प० 311 2 स्पीचेज III प 137 161 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 38 लाला मुरलीधर वही पृ० 42

231 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 144

232 मालवीय स्पीचेज प० 26-7 और 30-1

233 रिप० आइ० एन० सी०, 1890 पृ० 36

234 रिप० आई० एन० सी० 1892 पृ० 67 और गोखले स्पीचज पृ० 79 और जोशी पूर्वोद्धत प० 200

235 सी० पी० जान स्ट्रेची इडिया (1903) पृ० 165-6 जिन लोगो पर यह कर लगा है उन लोगो की बहुसख्या तो इस कर के अस्तित्व तक से परिचित नही जनता तो शात और अप्रभावित रहती है अपनी आवाज सुना सकने वाले केवल अल्पसख्यक सपन्न वग ही उन बातो का जिनका उनके अपने जीवन पर कोई विशेष प्रभाव नही पडता, गला फाडकर समर्थन करते रहते हैं स्ट्रेची द्वारा स्थिति का अध्ययन या तो सवथा सही है परतु केवल एक बात गलत है जिसका उल्लेख उनने नही किया उस समय भारतीय नेता भी अपनी आवाज सुना सकने म समर्थ थ और उन्होने नमक कर का विरोध ही नहीं किया प्रत्युत उसके विरुद्ध बहुत ही ऊचा स्वर

उठाया इस प्रकार उन्होंने मूक जनता की भावनाओं को वाणी दी

236 एल० सी० पी०, 1882 खंड XXI पृ० 290-1 1889 में उसने नमक कर में किसी प्रकार की कटौती के अपने विरोध को दोहराया और एक बार फिर उसने आय कर में राहत देने की वकालत की (एल० सी० पी० 1889 खंड XXVII पृ० 141)

237 एल० सी० पी०, 1882 खंड XXI पृ० 303-04

238 एल० सी० पी० 1888 खंड XXVII पृ० 24 और आगे

239 रिपोर्ट आफ दि बगाल नेशनल चैंबर आफ कामर्स, 1887 पृ० 23-4 तथा देखिए हिंदू पैट्रियाट 23 जनवरी (बी० ओ० आई०, फरवरी 1888)

240 रिपोर्ट आफ दि बगाल नेशनल चैंबर आफ कामर्स 1889 पृ० 3-4 34 5

241 इपीरियल गजटियर आफ इंडिया (1908) खंड IV, पृ० 276

242. कुल 6 64 करोड़ राजस्व में से 4 86 करोड़ मदिरा पर उत्पादन शुल्क से ही वसूल हुआ (वहां)

243 यह समझने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि नीलामी पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह था कि इससे मदिरा के मूल्य में भारी कटौती की संभावना थी एकाधिकार का एकमात्र उद्देश्य यथासंभव अधिकतम लाभ कमाना था बहुत सारे मामलों में यह पाया गया कि थोड़ी मात्रा में ऊंची कीमतवाली मदिरा की बिक्री की अपेक्षा बड़ी मात्रा में थोड़ी कीमतवाली मदिरा की बिक्री से अधिकतम लाभ की सुरक्षित प्राप्ति हुई (वकील, पूर्वोद्धृत पृ० 470)

244 पी० बनर्जी इंडियन टक्सेशन पृ० 482 5

245 वकील पूर्वोद्धृत पृ० 477

246 उदाहरणार्थ मराठा 18 फरवरी 1883 29 सितंबर 1885 बंगाली 9 अप्रैल 19 अप्रैल 1887, इंडियन एसोसिएशन का बंगाल सरकार को प्रतिवेदन दिनांक 15 नवंबर 1887 बंगाल पूर्वोद्धृत, परिशिष्ट डी० एस० एन० बनर्जी ए नेशन इन मेकिंग, पृ० 93 7 दादाभाई नौरोजी के दृष्टिकोण के लिए देखिए मसानी पूर्वोद्धृत पृ० 363 365 आई० एन० सी० 1888 का प्रस्ताव VII आई० एन० सी०, 1900 का प्रस्ताव XV पी० मेहता स्पीचज, पृ० 565 मालवीय स्पीचेज, पृ० 381, मुरलीधर रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 32 जी० सी० मित्रा रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 77 9 गोखले स्पीचेज पृ० 16 84 मदिरापान की प्रवृत्ति के प्रति प्रारंभिक भारतीय समालोचना के लिए देखिए ऐटीशन आफ दि ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन 1852 बी० बी० मजूमदार पूर्वोद्धृत पृ० 486 पर और केशवचंद्र सेन, लाइफ ऐंड वर्क्स पी० एस० बसु द्वारा संपादित (कलकत्ता 1940) पृ० 209 10

247 आई० एन० सी० 1900 का प्रस्ताव XV एम० एन० चौधरी रिप० आई० एन० सी 1900 पृ० 86

248 लोकनेताओं और संस्थाओं के लिए देखिए इंडियन एसोसिएशन द्वारा बंगाल सरकार को 15 नवंबर 1887 को प्रस्तुत ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल, आई० एन० सी० 1888 का प्रस्ताव VII और आई० एन० सी० 1900 का प्रस्ताव XV तिलक के मत को रामगोपाल ने उद्धृत किया है पूर्वोद्धृत पृ० 72 3 217 तिलक प्रोसीडिंग्ज आफ दि कौंसिल आफ दि बाब 1895 खंड XXX पृ० 91 2 पी० मेहता स्पीचज पृ० 564 5 एस० एन० बनर्जी ए नेशन इन मेकिंग पृ० 381 मालवीय स्पीचेज पृ० 381 गोखले प्रोसीडिंग्ज आफ दि कौंसिल आफ बांबे 1901, खंड XXXIV, पृ० 249 स्पीचेज पृ० 16 83 4 वाचा रिप० आई० एन० सी० पृ० 140 और रिप० आई० एन० सी० 1890 पृ० 31, जी० सी० मित्रा, रिप० आई

सी० 1899 पृ० 77 9 समाचारपत्रों के लिए देखिए समाचार चंद्रिका, 8 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 17 अप्रल 1880), सुलभ समाचार, 30 अक्तूबर (वही 6 नवबर 1880) सोम प्रकाश 6 दिसबर (वही, 11 दिस० 1880), ए० बी० पी० 24 नव० 1881 22 नव० 1883 और 2 अप्रल 1885, मन्दार मजरी, स० 4 (आर० एन० पी० एम० फरवरी 1882), सोम प्रकाश 3 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 8 अप्रैल 1882), सोम प्रकाश 3 अप्रल (वही 5 मई 1883) भारत मिहिर 1 मई (वही 12 मई 1883) बगवासी 27 अक्तूबर (वही 3 नवबर 1883) सशोधिनी 7 नवबर, (वही 17 नव० 1883) परिदर्शक 11 नवबर (वही 24 नवबर 1883) मराठा, 17 मई और 29 सितबर 1885 बगाल के सभी पत्र-पत्रिकाओ ने इडियन एसोसिएशन द्वारा 15 नवबर 1887 को प्रस्तुत ज्ञापन का समर्थन किया देखिए आर० एन० पी० बग० नवबर दिसबर 1887, सजीवनी 7 14 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 14 और 21 अप्रल 1888) आर० एन० पी० बग० 22 माच 1890 25 अप्रल 1891 म उल्लिखित सभी समाचारपत्र हिंदुस्तान, 17 और 18 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 24 जुलाई 1889) भारत जीवन 1 जुलाई (वही 9 जुलाई 1895) स्वदेशमित्रन 13 माच (आर० एन० पी० एम० 15 माच 1889) इडियन पीपुल 26 मई (आर० एन० पी० यू० पी० 4 जन 1904) स्वदेशमित्रन 2 दिस० (आर० एन० पी० एम०, 3 दिस० 1904) राष्ट्रवादियो की कभी कभी अभिव्यक्त होने वाली हार्दिक भावनाओ की सुदर अभिव्यक्ति लाला मुरलीधर के भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के 1890 के अधिवेशन के सदस्यो को सबोधित भाषण के निम्न अवतरण मे इस प्रकार से हुई है जहा पूर्व ने पश्चिम को गणित ज्योतिष तथा अन्य विज्ञानो की शिक्षा दी है वहा प्रतिदान म पश्चिम ने पूर्व को मुक्ति के बदले मदिरा क रूप म नरक-यातना दी है यहा तक कि हमारे मुस्लिम शासक भी मदिरा से घणा करते थे और मदिरा से प्राप्त आय को अभिशाप मानते थे यह ईसाई शासको को ही समर्पित है कि वे इस प्यार करे उत्तजित हो इसे चूमे चाटें और इससे लाखो-करोडो पौंड धन कमाए क्या ऐसे मनुष्य भी ससार म हैं जो ईश्वर और परलोक पर विश्वास करने का ढोग तो रचते हैं परतु ईश्वर द्वारा उनके अधीन किए लोगो के प्रति क्रूरता निदयता तथा योजनाबद्ध निममता का व्यवहार करते हैं ? इस प्रकार ये लोग उस परमपिता के प्रति प्रत्यक्ष प्रकार क पापमय और घणित आचरण करते हैं (रिप० आई० एन सी० 1890 प० 32 3)

249 248 की पादटिप्पणी म उद्धत प्रसगो के अतिरिक्त उदाहरणाथ देखिए आर० एन० पी० बग० 17 अप्रल 30 अक्तू०, 27 नवबर 1880 26 फरवरी 12 माच 16 25 जुलाई 1 अक्तू, 26 नवबर, 10 17 दिस० 1881 18 25 फरवरी 18 माच 15 जुलाई 1882 27 अक्तू 10 17 नवबर 1883 इडियन मिरर 20 नव० बगाल पब्लिक ओपीनियन 13 दिस० (बी० ओ० आई० दिस० 1883) बगाली 10 नवबर 1883 9 अप्रल और 19 नवबर 1887 सजीवनी 30 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 7 मई 1887) बगाल की प्रथम प्रातीय परिषद का प्रस्ताव, 3 नव० 1888 के बगाली म उद्धत

250 1898 म पी० मेहता ने टिप्पणी की कि उत्पादन (एक्साइज) विभाग 'उस प्रचारक के उदाहरण का अनुकरण कर रहा है कि जो यह कहता है कि वह अच्छे सिद्धातो और आदर्शो के प्रचार के लिए तो प्रतिबद्ध है परतु उन सिद्धातो पर आचरण करने के लिए किसी भी रूप म विवश नहीं है (स्पीचेज प 564) तथा देखिए, तिलक प्रोसीडिंग्ज आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1895 खड XXX पृ० 92

251 ए० बी० पी०, 22 नवबर 1883, वाचा रिप० आई० एन० सी०, 1888 प० 140 दनिक ओ समाचार चद्रिका, 10 माच सहचर 12 माच (आर० एन० पी० बग० 22 माच 1890) जी० सी० मित्रा रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 78-9 तथा देखिए केशवचद्र सेन पूर्वोद्धत, प० 210

252 फाइनाशल स्टेटसमट 1888 9 कडिका 65 तथा भारत सरकार का सप्रपण सख्या 166 25 जून 1887 उसी मे उद्धत फाइनाशल स्टेटमेट 1891 2 कडिका 38 1903 म लिखते हुए जान स्ट्ची ने बल देकर कहा 1880 के पश्चात लगभग सभी ओर मदिरा की दुकाना की सख्या मे और मदिरा की खपत म कमी हुई है इसे सामान्य रूप स स्वा जा सकता है इडिया (1903) प० 170

253 फाइनाशल स्टेटमेट 1884-5 कडिका 37, फाइनाशल स्टटमट, 1889 90 कडिका 22 फाइनाशल स्टटमेट 1891 2 कडिका 38 एडवड ला एन० सी० पी० 1901 खड XL प० 309 फाइनाशल स्टेटमेट 1902-03 कडिका 91

254 जी० सी० मित्रा रिप० आई० एन० सी० 1899 पृ० 70 रामगोपाल पूर्वोद्धत प० 217 पर तिलक गोखले स्पीचेज, प० 16 मालवीय स्पीचेज प० 380

255 1904 म जी० के० गोखले ने कहा था शिक्षा एक उपयोगी उपचार हो सकता है परतु इसके प्रवतन की प्रक्रिया का मद होना अनिवाय है मेरे विचार मे स्थानीय लोकमत को इस सबध म वधानिक मान्यता दी जानी चाहिए (स्पीचेज प 85)

256 आई० एन० सी० 1888 का प्रस्ताव VII 1889 का प्रस्ताव IV 1890 का प्रस्ताव IV 1891 का प्रस्ताव VI (सी) 1892 का प्रस्ताव V (सी) 1893 का प्रस्ताव III (सी) 1894 का XVI (सी), 1895 का प्रस्ताव XXII (बी) 1896 का प्रस्ताव XI (ए) 1897 का प्रस्ताव IV (ए) 1898 का प्रस्ताव XX (ए) 1800 का प्रस्ताव XV रानाडे 'एडिमिनिस्ट्रटिव रिफाम्स इन बाबे प्रेजीडेंसी केलाक पूर्वोद्धत प० 45 पर मराठा 18 फरवरी 1883 हिंदू 15 जुलाई 1885, वी० एन० माडलिक, स्पीचेज प० 579 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 140 और रिप० आई० एन० सी० 1890 प० 31 प्रधान ऐंड भागवत पूर्वोद्धत प० 90 पर तिलक गोखले स्पीचेज प० 83 5

257 ए० बी० पी० 24 नव० 1881, नेटिव ओपीनियन 26 अगस्त (वी० ओ आई० सित० 1883 स० 9 खड 1) निवरल 18 नवबर बगाल पब्लिक ओपीनियन 13 दिस० (वही दिसबर 1883 सख्या 12 खड I), बगवासी, 21 मई नवविभाकर साधारणी 23 मई (आर० एन० पी० बग० 28 मई 1887) इडियन एसोसिएशन का 15 नवबर 1887 का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल बगाली 5 और 19 नव० 1887 प्रथम प्रातीय सम्मेलन का प्रस्ताव बगाली के 3 नवबर 1888 के अक म उद्धत ए० बी० पी० 21 फरवरी 1889 आई० एन० सी के 1890-1900 के प्रस्ताव पीछे 256 सख्या पादटिप्पणी म उद्धत रामगोपाल पूर्वोद्धत प० 72 3 पर तिलक हिंदू 27 नव० 1890 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1890 प० 31 एम० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 290 गोखले स्पीचेज प० 84 5

258 देखिए पीछे पादटिप्पणी स० 249 म प्रस्तुत सदभ

259 आई० एन० सी० 1890 का प्रस्ताव स० IV

260 केलाक पूर्वोद्धत प० 45 पर रानाडे का दृष्टिकोण सोम प्रकाश 13 फरवरी (आर० एन० पी० बग० 18 फरवरी 1882) मराठा, 18 फरवरी 1883 समय 26 जन० (आर० एन० पी०

बग० 31 जन० 1885), बगवासी 30 अप्रैल (वही 7 मई 1887) आई० एन० सी०, 1890 का प्रस्ताव IV तिलक प्रोसीडिंग्ज आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1896 खड XXXIV पृ० 117 आई० एन० सा० 1990 का प्रस्ताव XV

261 आई० एन० सी० 1899 का प्रस्ताव IX तथा समाचार चद्रिका, 8 अप्रल (आर० एन० पा० बग० 17 अप्रल 1880), सुलभ समाचार, 30 अक्तू० (वही 6 नवबर 1880) मांडलिक, (स्पीचेज पृ० 584 मराठा 18 फर० 1883, समय, 26 जनवरी (आर० एन० पा० बग० 31 जन० 1885) आई० एन० सी० 1890 का प्रस्ताव स० IV तिलक, प्रासीडिंग्ज आफ दि कौंसिल आफ गवनर आफ बाब 1895 खड XXXII प० 92, गाखले वही 1901 खड XXXIX प० 249 इस सबध म गोखले ने एक रोचक तथ्य का निवश किया कि जब तक शराब मिलने की सभावनाओ मे कटौती नही की जाती तब तक मदिरा जसे पदार्थों के मूल्यो म वद्धि का अथ दरिद्र उपभोक्ता की जब को हल्का करना ही होगा तिलक महोदय ने तो यहा तक कह डाला कि यदि लोग पक्के पियक्कड ही हैं तो फिर मदिरा क मूल्यो मे वृद्धि करने म कोई तुक नही

262 हमारे अध्ययन काल की अवधि म 1900 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने यह माग केवल स उस समय प्रस्तुत की जबकि उसने सरकार से अमरीका के प्रमुख मदिरा कानून जस उपायो को अपनाने का अनुरोध किया परतु उसी साल म उसने स्थानीय लोकमत और मदिरा पर अतिरिक्त कराधान की भी वकालत की (प्रस्ताव XV)

263 मसानी पूर्वोद्धृत प० 366 1891 म नितात परहेज (मदिरापान न करने) करने वाले भारतीय घ्रात भाव वाले सघ (इडियन ब्रदरहुड आफ टोटल ऐब्स्टेनस) का उद्घाटन करते हुए दादाभाई नौरोजी ने सुविचारित रूप से कहा था इसका एक अय महत्वपूर्ण तत्व यह है कि हिंदू और मुसलमान इकट्ठे मिलने म समथ हुए हैं तथा सभी समुदायो को समान रूप से दुष्प्रभावित करने वाले महान प्रश्न पर सुविचारित कायवाही करने का प्रस्तुत हुए हैं वही प० 365 6 तथा दखिए एस० एन० बैनर्जी ए नेशन इन मेकिंग पृ० 94-07

264 इपीरियल गजटियर आफ इडिया (1908) खड IV पृ० 275 और वकील पूर्वोद्धृत, प० 603

265 इपीरियल गजटियर आफ इडिया (1908) खड IV, प० 275

266 वकील पूर्वोद्धृत पृ० 492

267 इपीरियल गजटियर आफ इडिया (1908) पृ० 245 6 अफीम के हानिप्रद प्रभाव क सबध मे कमीशन की राय थी कि भारत म अफीम के सयत प्रयोग को उसी रूप मे लेना जिस रूप म इगलड मे मदिरा क सयत प्रयाग का लिया जाता है अफीम हानिप्रद है, हानिरहित है और यहां तक कि अफीम लाभप्रद भी है यह सब उस परिस्थिति और उस विवेक पर निभर है जिसके अतगत इसका उपयोग किया जाता है (वही पृ० 246)

268 ई० बेरिंग फाइनांशल स्टटमट 1882 कडिका 146-73 1893 म डविड बारबर का अफीम क लिए नियुक्त शाही कमीशन के समक्ष साक्ष्य वकील पूर्वोद्धृत प० 49 पर तथा देखिए चिसनी पूर्वोद्धृत पृ० 328 30 जान स्ट्रेची इडिया (1903) प० 15९

269 केशवचद्र सेन पूर्वोद्धृत, प० 210

270 नौरोजी पावर्टी प० 215 तथा दखिए वही प० 201 स्पीचेज प० 142 तथा 192 3 मसानी पूर्वोद्धृत प० 316 दादाभाई नौराजी का भी अफीम व्यापार क सबध में बहुत ऊचा नतिक आदर्श था जब उन्होने 1855 म व्यापारिक सस्थाओ क साथ व्यापारिक गठबधन किया तो

उन्होंने उसी समय यह शत रख दी थी कि वे अफीम के व्यापार स होने वाले लाभ के भागीदार नहीं बनेंगे बाद मे उन्होने सचमुच ही अफीम तथा मदिरा स अर्जित लाभ म से अपना अश लेने से इनकार कर दिया (नौरोजी, स्पीचेज पृ० 192 और मसानी पूर्वोद्धत प० 74)

271 और देखिए, रास्त गुफ्तार 12 जून (आर० एन० पी० बब 18 जून 1870), नेटिव ओपीनियन (वही 24 अगस्त 1872) बगाली 3 जुलाई 1880 12 माच 1882 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन, 26 मई 1881, हिंदू 5 दिस० 1884, मराठा 22 माच 1885 ए० बी० पी० 20 मई 1886, 16 फरवरी 1888, आध्र प्रकाशिका स० 19 (आर० एन० पी० एम० मई 1886) बगनिवासी 17 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 25 अप्रल 1881) सजीवनी 26 अगस्त (वही 2 सित० 1893)

272 रिपाट आफ दि इडियन फमिन कमीशन 1880 भाग II पृ० 89 पी० बनर्जी इडियन टक्सेशन, प० 314 तथा पीछे पादटिप्पणी स० 268 म उद्धत अधिकारीगण

273 नौरोजी स्पीचेज, परिशिष्ट प० 41 तथा मसानी पूर्वोद्धत प० 316 दत्त ई० एच० II प० 155 इसक दूसरी ओर जी० वी० जोशी ने अभिस्वीकार किया कि अफीम लगान का भुगतान विदेशी उपभोक्ताओ द्वारा ही किया जाता है (पूर्वोद्धत प० 222)

274 बबई समाचार 29 जून (आर० एन० पी० बब 3 जुलाई 1875) जाम जमशद 19 फरवरी (वही, 22 फरवरी 1879), बबई समाचार 3 मई (वही 8 मई 1881) बाव क्रानिकल 8 मई (वही 14 मई 1881) आर्यावित्त 4 जून और शिवाजी 3 जून (वही 11 जून 1881) बगाली 3 जुलाई 1880 भवविभाकर 29 माच (आर० एन० पी० बग० 3 अप्रैल 1880) नेटिव ओपीनियन 19 जून 25 दिस० 1881 मराठा 16 अप्रल 1882 सुबोध पत्रिका, 22 जून (आर० एन० पी० बब 28 जून 1882), केसरी 2 मई (वही 6 मई 1882) नेटिव ओपीनियन रास्त गुफ्तार और बाबे क्रानिकल 7 मई (वही 13 मई 1882) सहचर 25 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 4 फरवरी 1882) समय 4 जून (वही 9 जून 1882) साधारणी 11 मई और नवविभाकर, 12 मई (वही 17 मई 1884), समाचार चद्रिका 16 मई (वही 24 मई 1884), आनद बाजार पत्रिका 2 जून (वही 7 जून 1884) मराठा 22 माच 1885 गुजरात दपण 12 मई (आर० एन० पी० बब 18 मई 1889), नेटिव ओपीनियन 7 मई (वही 9 मई 1891), पूना वभव 6 सितबर (वही 12 सित० 1891) ज्ञान प्रकाश 17 नव० (वही 19 नवबर 1892) आफताबे पजाब 27 अप्रल और ताज उल अखबार 25 अप्रल (आर० एन० पी० पी० 9 मई 1891) अखबारे आम 18 अगस्त (वही 29 अगस्त 1891) हिंदुस्तान 8 मई (आर० एन० पी० एन० 15 मई 1889) न्यायसिंधु 22 अप्रल (वही 30 अप्रल 1891), सुबोध सिंधु 29 अप्रल (वही 7 मई 1891), बगाली 18 अप्रल 1891, सहचर 15 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 25 अप्रल 1891), ढाका प्रकाश 26 अप्रल और सुरभि ओ पताका 17 अप्रैल (वही 2 मई 1891), सोम प्रकाश 8 जून (वही 13 जून 1891), हिंदू जनभूषणी 18 मई (आर० एन० पी० एम० 31 मई 1889) बनात पत्रिका 14 दिस० तथा बगाल के अन्य पत्रो की स्वीकृति (वही 15 दिस० 1893) ताज उल अखबार 5 अगस्त (आर० एन० पी० पी० 19 अगस्त 1893), कोहेनूर 9 सितबर (वही 23 सित० 1893) दास्त हिंद 13 अक्तूबर (वही 21 अक्तूबर 1893) पैसा अखबार 8 दिस० (वही, 16 दिस० 1893) बिहार हराल्ड 18 मई (आई० एस० बी० ओ० आई० 9 जून 1895) फोर्टनिकम 8 मई (आर० एन पी० बब 18 मई 1895, इडियन स्पेक्टटर 12 मई 1895) कर्नाटक प्रकाशिका 30 अगस्त (आर०

एन० पी० एम०, 31 अगस्त 1897)

275 अफीम विरोधी आदोलनकारी अगरेजो और लोकोपकारियो पर चोट करते हुए पत्रिका ने अपने 20 मई 1886 के अक म व्यग्यपूर्ण भाषा म लिखा वे भूल जाते हैं कि इगलड जसे आक्रमणकारी और विजता देश को किसी देश को विष देने जसी साधारण सी घटना पर बडबडाना नही चाहिए इतना तो असदिग्ध रूप से तथ्य है कि अफीम की अपेक्षा लाहा और सिक्का किसी भी देश को अधिक शीघ्रता और अधिक निश्चितता से विनष्ट करने वाल साधन हैं इसके साथ ही पत्र ने अपना मत प्रकट करते हुए लिखा अफीम राजस्व की क्षति पूर्ति के लिए भारतीयो पर कर लगाने के लिए भारत सरकार को कहना चाहिए कि यह इस प्रकार का कृत्य होगा कि जहर देने क स्थान पर सरकार लूट का धधा अपनाने पर विवश होगी और देखिए ए० बी० पी०, 16 फरवरी 1888 और 17 अप्रल 1891

276 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन ने अपने 26 मई 1881 के अक म और अधिक दृढ़तापूवक लिखा कि भले ही अफीम लगान के अभाव में भी बजट म किसी प्रकार का असतुलन न आने पाए फिर भी भारत जसा निधन देश अफीम राजस्व को हटाने का सामथ्य नही रखता

277 आर० एन० पी० बव 18 माच 1882 मराठा ने अपने 22 माच 1885 के अक मे इन आंदोलनकारियो को 'अतिरिक्त श्रेष्ठ आदशवादियो के सामाजिक सगठन की सज्ञा दी

278 हिंदू ने अपने 11 मई 1895 के अक मे और आगे लिखा अफीम एक भारी बुराई हो सकती है परतु राष्ट्रीय दिवालियापन उसस बडी बुराई है

279 ए० बी० पी०, 9 जुलाइ 1880 और 20 जुलाई 1886 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 15 जुलाई 1880, आनद बाजार पत्रिका 2 जून (आर० एन० पी० बग० 7 जून 1884) हिंदू 26 जनवरी 1885 9 नवबर 1890 3 जुलाई 1893 बगाली 18 अप्रल 1891

280 कलाक पूर्वोद्धृत प० 45 पर तिलक, ए० बी० पी०, 9 जुलाई 1880 16 फरवरी 1888 ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन 15 जुलाई 1880 नेटिव आपीनियन 19 जून 1881, मराठा 17 जुलाई 1881 23 अप्रल 1882 22 माच 1885 दि इडियन साल्ट टक्स ज० पी० एस० एस० खड IV स० 1 जुलाई 1881 प० 61 केसरी 2 मई (आर० एन० पी० बव 6 मई 1882), साधारणी 11 मई और नवविभाकर 12 मई (आर० एन० पी० बग०, 17 मई 1884) समाचार चद्रिका 16 मई (वही 24 मई 1884), सहचर 15 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 25 अप्रल 1891) सोम प्रकाश 8 जून (वही 13 जून 1891), सुलभ दनिक 15 दिस० (वही 23 दिसबर 1893) रहबरे हिंद 28 सितबर (आर० एन० पी० पी० 14 अक्तू० 1893) अखबारे आम, 31 अक्तू० (वही 4 नवबर 1893) बगाल पत्रिका 14 दिसबर तथा अय पत्र पत्रिकाए (आर० एन पी एम० 15 दिस० 1893)

281 नवविभाकर 29 माच (आर० एन० पी० बग० 8 अप्रल 1880) नेटिव ओपीनियन 19 जून 1881 मराठा 16 अप्रल 1882 और 7 दिस० 1893 केसरी 2 मई (आर० एन० पी० बव 6 मई 1882) समय 4 जून (आर० एन० पी० बग० 9 जून 1882) साधारणी 11 मई (वही 17 मई 1884) हिंदुस्तान 8 मई (आर० एन० पी० एन० 15 मई 1889)

282 आर० एन० पी० बग० 30 दिस० 1893

283 आर० एन पी० बग० 31 जुलाई 1880 मराठा ने अपने 7 अगस्त 1881 के अक म टिप्पणी की निस्सदेह चीन के साथ अफीम व्यापार बद कर देने से भारतीय वित्त म चौडी खाई पड जाएगी परतु 40 करोड लोगों को विष देने के आरोप सिर पर लेने की अपेक्षा इस खाई को

मरने के लिए अन्य आर्थिक उपाय सोचना तथा विभिन्न विभागों के खर्चों में कटौती करना ही अधिक उपयुक्त है' थोड़े ही समय के उपरान्त 12 मार्च 1832 के अंक में मराठा ने मत प्रकट करते हुए लिखा अफीम व्यापार जैसे गर्हित काय को निषिद्ध करो जैसे नतिक और लाभप्रद साधन में अपने रुपये के उपयोग में किसी भी भारतीय को शिकवा शिकायत नहीं होगी इसी प्रकार सजीवनी ने 26 अगस्त 1893 के अंक में दावा किया 'पाप पूर्ण व्यापार से अर्जित राजस्व से कोई भी सरकार फलती फूलती नहीं रह सकती न्यायप्रिय भगवान द्वारा सभी पापी अवश्य दंडित किए जाएंगे अतः सरकार के लिए उचित यही है कि वह इस पापमय व्यापार को छोड़ दें (आर० एन० पी० बग० 2 सितंबर 1893) और देखिए सोम प्रकाश 19 जुलाई (आर० एन० पी० बब, 24 जुलाई 1880) इंडियन स्पेक्टटर 7 अगस्त (आर० एन० पी० बंब 13 अगस्त 1881), हिंदू 5 दिस० 1884 और 14 अप्रैल 1891 नौरोजी पावर्टी प०215 स्पीचेज पृ० 196 और मसानी पूर्वोद्धृत प० 359 362 पर हिंदुस्तानी 15 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 21 अप्रल 1891) इंडियन मिरर 15 अप्रल और एडवोकेट 17 अप्रल (आई० एस० बी० ओ० आई० 3 मई 1891), दि ऐंटी आपियम एलायंस मूवमेंट' ज० पी० एस० एस०, खंड XIV स० 2 अक्तूबर 1891 प० 6 16 वतात पत्रिका 16 अप्रल (आर० एन० पी० एम० 30 अप्रल 1891), रहबरे हिंद 16 और 20 अप्रल (आर० एन० पी० पा० 25 अप्रल 1891) बगनिवासी 17 अप्रल और सजीवनी 18 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 25 अप्रल 1891) समय 24 अप्रल (वही 2 मई 1891)

नौरोजी स्पीचेज प० 194

नौरोजी पावर्टी पृ० 215

नौरोजी स्पीचेज प० 192 6

सीमा शुल्क से होने वाली शुद्ध आय 1875 6 म 2 5 करोड रुपय 1877 8 म 2 4 करोड रुपय थी 1882 3 म यह घटकर 1 1 करोड रुपय रह गई इसका अथ हुआ कि कर नीति म सुधार के पांच वर्षों म 1 4 करोड रुपये घट गई 1882 और 1893 की अवधि के बीच इसकी निम्नतम प्राप्ति 1884 5 म 0·8 करोड रुपये थी इस प्रकार कर नीति से सुधार के फलस्वरूप सीमा शुल्क म किसी भी एक अकेले वष म होने वाली अधिकतम हानि दो करोड रुपय से कम की था अफीम राजस्व स 1875 1898 के बीच म होने वाली शुद्ध आय 6 1 करोड रुपय था देखिए बकान पूर्वोद्धृत, पृ० 596 और 603

लोकवित्त II

सरकारी और गैरसरकारी दृष्टिकोणो मे प्रमुख मतभेद का विषय है व्यय की दिशाए।

बालगंगाधर तिलक

भयकर बढते सैनिक व्यय जैसा कोई भी अन्य विषय भारत देश का बुरी तरह से झकझोरने वाला नही।

डी ई वाचा

व्यय

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने कराधान के परिमाण तथा कर निर्धारण की पद्धति की जाच पडताल के साथ साथ उसके उपयोग पर भी विस्तत विचार किया क्योकि उनके विचार म करो से प्राप्त कुल रकम के समान कराधान के उद्देश्या और उनके वितरण का प्रश्न भी किसी रूप मे कम विचारणीय तथा कम महत्वपूर्ण नही था। उन्होने इस तथ्य को पूण रूप म स्वीकार किया कि कर राजस्व के लोकहित मे व्यय होने वाले रूप मे अथवा करदाताआ को परोक्ष रूप स कर राजस्व लौटाए जाने के सभावित रूप म तथा कर राजस्व के अनुत्पादक निरथक और व्यय के कार्यों म उपयोग किए जाने वाले रूप म वडा भारी अतर था। इस कसौटी को आधार बनाने पर भारतीय नेता इस निष्कर्ष पर पहुच कि भारत सरकार की व्यय नीति असतोषप्रद ही नही थी, प्रत्युत सवसाधारण के हिता के लिए क्षतिकारक भी थी। प्रथम, उन्होने इस तथ्य को बडे ही गभीर रूप म लिया कि भारत के राजस्व का एक बहुत वडा भाग देश के भीतर खच न होकर देश के बाहर खच होता है इस प्रकार दश से राजस्व की निकासी हो रही है। उन्होने निर्देश किया कि इस सबध मे भारत की स्थिति ब्रिटेन जैसे स्वतत्र देश स जहा भले ही भारी कर लगाए गए है सवथा भिन्न थी।[1] इस विषय का विस्तत विवेचन हमने निकास शीषक अध्याय म किया है। यहा तो हम इतना सकेत करना है कि कुछ भारतीय नताआ ने लोकवित्त की कुल वसूली की अपक्षा व्यय की व्यावहारिक दिशाओ के प्रति अधिक ध्यान दिया। इस प्रकार 1800 म दादाभाई नौरोजी ने अपना मत प्रकट करत हुए लिखा

'इस समय वास्तविक प्रश्न, सभी प्रश्ना से सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह नही कि 60,00,00 00 पौंड या 100,000,000 पौंड कैसे प्राप्त किए जाए। हो सकता है कि यह विषय भी आवश्यक हो परतु अधिक आवश्यक और अधिक महत्वपूर्ण यह है कि जनता से उगाही रकम जनता को किस प्रकार लौटाई जाए। 1887 मे लिखे अपने एक पत्र मे वह और भी अधिक सुस्पष्ट और मुखर थे भारत म कराधान की बुराई उसका परिमाण नही, यहा तक कि अकबर के समय वसूल किए जाने वाले भूमि लगान जितना इस समय वसूल किए जान पर भी उसका कोई दुष्प्रभाव नही पडेगा। राजस्व के एक भाग की देश से निकासी ही दुर्भाग्यपूर्ण बुराई है।'[3] 'अमृत बाजार पत्रिका' ने भी अपने 22 फरवरी 1900 के अक मे इसी प्रकार की धारणा प्रकट की

> यदि करो द्वारा उगाही धनराशि इस देश म व्यय की जानी है तो इस देश के वासी ऊचे कराधान और उनके भुगतान से भी अपने को व्यथित अनुभव नही करेंगे परतु यदि 25 करोड रुपये के मूल्य का इस देश का उत्पादन प्रतिवर्ष इग्लड को ही भेजना है जिसके बदले मे इस देश को कोई लाभ नही मिलना है तो इस देश के वासी इनके कराधान का भुगतान करने मे भी अपने को दरिद्र और असमर्थ अनुभव करेंगे।[4]

द्वितीय, भारतीय नेताओ ने देखा कि सरकारी खर्च की प्रकृति फिजूलखर्ची वाली है और उनका वितरण देश की आर्थिकता और जनता की परिस्थितियो और सच्ची आवश्यकताओ के अनुकूल और उनसे सबधित नही है। उनका विश्वास था कि इनका और अधिक लाभप्रद तथा सार्थक उपयोग किया जा सकता था। यू तो उनका यह निष्कर्ष सामान्यतया भारतीय वित्तो के व्यय की आलोचना ही करता था परतु कभी कभी विशेषत इन नेताओ मे अर्थशास्त्र के पडितो द्वारा इसे भली प्रकार पकडा और अपने विश्लेषण का आधार बनाया गया। इस प्रकार 'अमृत बाजार पत्रिका' ने अपने 30 मार्च 1882 के अक मे यह मत प्रकट किया कि देश की वित्त व्यवस्था की किसी भी रूप मे जाच करने पर प्रथम प्रश्न यह उभर कर सामने आता है कि उगाही गई धनराशि मे से कितनी इस देश पर खर्च की गई है और कितनी यो ही बरबाद की जा रही है? इस पत्रिका की दृष्टि मे इसका उपयुक्त उपचार था, करो की राशि का उपयोग निश्चित रूप से केवल उन्ही के लिए किया जाना चाहिए जिनसे वह वसूल की गई है। इस बात को स्वीकार करते हुए कि अगरेजी शासन को कायम रखने का व्यय दायित्व भारत पर है, पत्रिका ने भारतीय वित्त का सभी पक्षो, चेशायर मानचेस्टर लदन, सिविल सर्विस, मिलिटरी सर्विस, नौकरी करने वाले तथा साहसियो की इच्छापूर्ति के लिए प्रयोग किए जाने का अथवा इग्लैंड के युद्ध अभियानो, आक्रमणो और दुष्कर्मो मे सहायता देने के लिए प्रयोग किए जाने का विरोध किया। फिरोजशाह मेहता ने 1883 मे देश भर म निर्मित सडको, पुलो, दवाखानो स्कूलो और पुलिस चौकियो की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए भी यह पूछा कि मौलिक प्रश्न यह है कि क्या इन सुधारो मे ससाधनो का व्यय आवश्यकता स अधिक तथा गलत दिशा मे नही हुआ है? क्या इन ससाधनो का और अधिक सार्थक तथा और अधिक लाभप्रद उपयोग नही किया जा सकता था? क्या देश की

वास्तविक आवश्यकताओ की जानकारी से इतनी भारी गलतिया सुधारी नही जा सकती थी।[5] 1895 मे बबई विधान परिषद मे अपने प्रथम बजट भाषण म बाल गगाधर तिलक ने यह सिद्धात निधारित किया कि बजट के मूल्याकन की वास्तविक कसौटी यह होनी चाहिए कि पिछले 25 वर्षो म राजस्व म कितनी वद्धि हुई है और प्रात की भौतिक सपन्नता के लिए उस राशि का कितना अश समर्पित किया गया है।[6] 1896 के अपने निबध दि प्रजेंट फाइनान्शियल पोजीशन म' 1883 4 के वर्षो से भारतीय खर्चो का सास्यकीय विश्लषण करने के उपरात जी० वी० जोशी ने अपना मत प्रकट किया कि यदि देश का इतना भारी अतिरिक्त धन देश के आतरिक विकास और प्रगति के उद्देश्यो पर खच किया जाना तो देश के लाखा करोडो लोग सतोष और आनद का उपभोग करते।[7] दादाभाई नौरोजी न 21 माच 1896 को विलबी कमीशन का लिखे अपने पत्र मे इस स्थिति का अत्यत सुस्पष्ट प्रतिवेदन पस्तुत किया।[8]

विलबी कमीशन के समक्ष और अपने प्रसिद्ध बजट भाषणो मे सुस्पष्ट सद्धातिक रूप मे राष्ट्रवादियो के दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने और उसके आधार पर भारतीय वित्तो के विश्लेपण करने का सारा दायित्व अकेले गोपालकृष्ण गोखले ने निभाया। 1897 मे विलबी कमीशन के समक्ष तक करते हुए उन्होने कहा कि खर्चो मे वृद्धि, राष्ट्रीय वित्त के एक पक्ष के रूप म कोई विशेष गभीर आपत्तिजनक नही। उन्होने लोकवित्तो का सिद्धात निर्धारित करते हुए कहा 'इस सबध मे सभी कुछ इस बात पर निभर करता है कि जिस क्षेत्र मे व्यय मे वृद्धि हुई है उसके उद्देश्य का स्वरूप क्या है ? और लोकवित्तो के उस दिशा म किए गए खर्चो का परिणाम क्या निकला है ?' उन्होने यह स्वीकार किया कि पिछली बहुत सी दशाब्दिया स यूरोपीय देशा के व्ययो मे वृद्धि हो रही है परतु उनका कथन था कि वह वद्धि भारत के खर्चो मे हो रही वृद्धि से मौलिक रूप से बहुत भिन्न है। जहा उन देशा के बढे खर्चो न उन देशा की सुरक्षा और शक्ति म वद्धि की है, उन देशवासियो के ज्ञान और सपन्नता म वद्धि की है वहा स्वेच्छाचारी शासको के प्रबध के, दोषग्रस्त वैधानिक नियत्रण के तथा विदेशी शासन के अतर्निहित दोषा के अतगत भारत के निरतर बढते खर्चो न भारत मे केवल हमारे ससाधन के निरतर शोषण मे वद्धि करने म सहायता की है, हमारी भौतिक प्रगति को अवरुद्ध किया है, हमारी प्राकृतिक सुरक्षा को दुबल क्षीण किया है तथा हम पर अपरिभाषित तथा अनिश्चित वित्तीय दायित्वों का बोझ लाद दिया है।[9] भारत के सावजनिक खर्चो तथा अन्य देशो के सावजनिक खर्चो के बीच एक अन्य मौलिक अतर यह था कि जहा अन्य दशा म सावजनिक व्यय करदाताओ के हिता म किया जाता है, वहा इस दश मे दूसरा के हितो का पर्याप्त महत्व दिया जाता है और कभी कभी ता उन हितो को भारतीय हिता की अपक्षा प्राथमिकता दी जाती है। इस प्रकार के उदाहरण के रूप मे यहा यह उल्लेखनीय है कि भारतीय वित्ता को ब्रिटिश सर्वोच्चता के हितो क स्थाई दावा की पूर्ति करनी पडती है। उन्ह ब्रिटिश प्रभुत्व क पूव म विस्तार के हिता की देखभाल और भारत म सिविल और मिलिट्री सवा म सलग्न यूरोपिया के हिता की सुरक्षा करनी पडती है। इसके साथ ही साथ ब्रिटिश वाणिज्य व्यापारी तथा धनिक वर्गो के हित भारतीय करदाताओ के हिता पर हावी हो जाते है।[10]

कराधान के प्रश्न के समान भारतीय नेता प्राय यह तर्क करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुचते थे कि भारत की निधनता और भारतीयों की कर भुगतान की अक्षमता के सदभ में सरकारी खर्चे भारत जैसे निधन देश के साधनों और शक्ति के बाहर थे। मदनमोहन मालवीय ने 1889 में घोषणा की कि भारत की दरिद्रता के सदभ म खर्चों म वद्धि न केवल अनुचित तथा अन्यायपूर्ण थी प्रत्युत निश्चित रूप म पाप कम भी थी। उन्होंने यह तो माना कि सरकारी खर्चों म वृद्धि अपने आप म कोई बुराई नहीं यह वद्धि तो वस्तुत स्वागत योग्य होती है परन्तु यह तब होता है जबकि उसका परिणाम जनता की धन सपत्ति म वद्धि के रूप म सामने आए। जैसे कि इगलैड म था परतु इस देश का दुर्भाग्य तो यह है कि सरकारी खर्चे तो निरतर बढ़ते जा रहे ह जबकि देशवासियो की दशा दिन प्रतिदिन बद से बदतर होती जा रही है।[11] इसी तर्क का आधार बनाते हुए 1894 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस न दृढ़तापूवक कहा 'वित्तीय खर्चों की जाच पडताल से तब तक कोई परिणाम नहीं निकलेगा, जब तक उसमे भारतीयो की चाल वित्तीय मार को सहन करने की शक्ति की जाच पडताल को साथ सम्मिलित न किया जाए।'[11 A] 1895 6 की इपीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल में अपने भाषण मे फिरोजशाह मेहता ने भी इस दृष्टिकोण का विस्तृत विवचन किया। उन्होंने निर्देश किया कि व्ययो की आवश्यक्ता तो एक तुलनात्मक शब्द है। खर्चे की किसी भी विशिष्ट मद के लिए कितनी ही अधिक आवश्यक्ता क्या न हो, इस आवश्यकता की पूर्ति करते समग्र व्यय के लक्ष्य और दिशा को प्राथमिकता मिलनी चाहिए। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि अतत करो का भार निधन किसानो को ही उठाना पडता है। इस कथन के उपरान्त अपने दृढ विश्वास को व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि यदि लगान की वसूली केवल इसी ढग से ही की जानी है तो जिस खर्चे की आवश्यकता की पूर्ति के लिए राजस्व वसूल किया जाता है अपने आप म भले ही कितना उपयुक्त, उचित तथा निर्विवाद सिद्ध क्या न कर दे उसका भुगतान देश के ससाधनो और शक्ति की सीमा के बाहर ह।[1]

पिछले बहुत सारे वर्षों की अवधि म बढते सरकारी खर्चों को सवथा अनुचित नितात हानिप्रद, यहा तक कि भारत की निधनता के लिए उत्तरदायी कारणो में से एक मानते हुए भारतीय नेताओ ने व्यापक स्तर पर सरकारी खर्चों म कटौती का समथन किया और उसके लिए आदोलन किया। उन नेताओ ने यह घोषित किया कि भारत के आर्थिक तथा वित्तीय दोषो की निवृत्ति के लिए खर्चों म कटौती एक आवश्यक उपचार था। भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस न बढे हुए सैनिक व्ययो की पूर्ति के लिए अपने पहले ही अधिवेशन म अन्य सावजनिक व्ययो मे कटौती करने का सुझाव दिया।[13] काग्रेस ने अपने 1887 के ततीय अधिवेशन म वित्तीय कठिनाइयो पर काबू पाने के लिए खच म कटौती का सुझाव एक बार पुन दिया।[14] 1891 में काग्रेस ने घोषणा की कि अनुचित रूप मे बढे हुए सैनिक और नागरिक सेवाओ के खर्चे भारत की दरिद्रता के महत्वपूर्ण कारणो मे से एक थे और सरकारी खर्चों म कटौती भारत की दरिद्रता के निवारण के साधनो मे एक थी।[15]
राष्ट्रीय काग्रेस ने सरकारी खर्चों और दरिद्रता व अकालो मे सहसबध को तथा खर्चों मे कटौती को बार बार 1892, 1896, 1897 1899, 1901 और 1904 मे दोह

1894, 1895 और 1897 मे काग्रेस ने अपने दृढ मत को पुन बलपूर्वक दोहराया कि देश के दुदशाग्रस्त वित्तो मे सुधार का एकमात्र उपचार सरकारी खर्चे म कटौती है।[17] 1885 म कलकत्ता में हुए अधिवेशन मे राष्ट्रीय सम्मेलन ने सरकारी खर्चो म कटौती के लिए इसी प्रकार के सशक्त तर्क प्रस्तुत किए।[18] 'पूना सावजनिक सभा ने,' 'बाबे प्रेसीडेंसी एसोसिएशन'[19] 'मद्रास महाजन सभा' [19 A] ने सरकारी खर्चो मे कटौती के लिए 1886 म इस सबध मे सरकार को विस्तृत ज्ञापन दिए। जी० वी० जोशी ने अपने 1886-7 मे प्रकाशित लेख ए नोट आन रिटेंचमेंट' मे, [0] गोपालकृष्ण गोखले और डी० ई० वाचा न विलबी कमीशन के समक्ष प्रस्तुत अपने साक्ष्यो [1] मे तथा रमेशचद्र दत्त ने 1898 मे इसी माग को मुखरित किया।

यहा यह जानना कम रोचक नही होगा कि दादाभाई नौरोजी ने खर्चों म कटौती के सबध मे कोई विशेष ध्यान नही दिया। इसका कारण यह बताया जा सकता है कि उन्होने भारत की निधनता के निवारण के लिए सपत्ति का उत्पादन बढान पर ही सारा बल दिया। उनका विश्वास था कि यदि राष्ट्रीय उत्पादन बढाया जा सके तो भारत किसी भी व्यय की पूर्ति मे समथ हो जाएगा।[3] अत उन्होने ऊचे खर्चो का घटाने की आवश्यकता पर बल न देकर धन की निकासी को रोकने की आवश्यकता पर ही सारा बल दिया। यहा तक कि बडे पैमाने पर यूरोपीयो को नौकरी देने की आलोचना भी उन्होंने इसी आधार पर की कि इससे देश से धन की निकासी होती है, न कि इस आधार पर कि इससे प्रशासन महगा हो जाता है।

इस प्रकार सरकारी खर्चों के वतमान ऊचे स्तर के कटु आलोचक तथा इन खर्चो म कटौती के प्रबल समथक होने के नाते राष्ट्रवादी नेताओ ने सरकारी खर्चो के वास्तविक विकास की जाच के लिए तथा इन व्ययो का सीमित करने के ठोस तथा व्यावहारिक उपाय सुझाने के लिए सारी समस्या की छानबीन आरभ की। व इस तथ्य से सहमत थे कि सरकारी खर्चों की ऊची दर के कारण अनिवाय नही है अत उनका उपचार किया जा सकता है।[4]

सरकारी खर्चो के सबध म राष्ट्रीय नेताओ के दृष्टिकोण का एक अन्य उल्लखनीय तथ्य यह है कि उन्होने इसके विवरण के प्रति कोई विशेष रुचि नही दिखाई। उनका मुख्य उद्देश्य व्यय सबधी मूल नीतियो तक ही सीमित था। इस प्रकार उदाहरण के रूप म 1895 म भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने यह मत अभिव्यक्त किया कि व्यय आयोग (एक्सपेंडीचर कमीशन) की जाच पडताल का तब तक कोई उपयोग नही होगा जब तक कि इन व्ययो को नियमित करने वाली नीति की रूपरेखा की जाच-पडताल न की जाए।[5] इसी प्रकार दादाभाई नौरोजी ने विलबी कमीशन को बताया कि व विभागीय खर्चों के विवरण की जानकारी के प्रति कोई उत्सुकता नही रखते क्योकि व्यय के समग्र प्रशासन का स्वाभाविक आधार पर स्थापित किए बिना इस प्रकार की जाच-पडताल केवल रोग के लक्षणो को छिपाना मात्र होगा इसकी जड को दूर करना नहीं। उन्होंने कहा कि आवश्यकता तो इस बात की है कि उन सिद्धान्तो की चर्चा की जाए जिनके अनुसार व्यय के सारे ढाचे का सचालन होता है।[6] उन्होने यह भी अनुभव किया कि गैर सरकारी लोग न

तो व्ययों के विवरण की समीक्षा कर सकते हैं और न ही व्यय के सही आकड़ों का गहरा अध्ययन कर सकते हैं क्योंकि इसके लिए आवश्यक जानकारी उपलब्ध ही नहीं होती। उन्होंने टिप्पणी की कि वस्तुत उन्हें तो यह भी नहीं मालूम कि व्यय के विवरण से संबधित कौन से प्रश्न पूछें ? अत वे केवल नीतियों की सामान्य रूपरेखा की आलोचना कर सकते हैं।"

सैनिक व्यय

1880 से 1905 तक की अवधि में भारतीय बजट में खर्चों का सबसे बड़ा भाग सेना पर होने वाले खर्चों का था। 1881 2 में सेना पर और सेना से संबधित कार्यों पर होने वाले सामान्य खर्चों की कुल विशुद्ध राशि 17 88 करोड थी जो भारत सरकार के कुल व्यय का लगभग 41 9 प्रतिशत था। 1885 के पश्चात प्रमुखतया बर्मा युद्ध, उत्तर पश्चिम में रूस के आगे बढ़ आने की आशका समय समय पर सेना के सुधार और आधुनिकीकरण के लिए उठाए गए पग और इस मद में लदन में किए जाने वाले भुगतान में हुई विनिमय की हानि आदि कारणों से यह राशि और भी अधिक बढ़ने लगी। समीक्षाधीन अवधि में सेना पर होने वाले व्यय में निरतर और क्रमिक वृद्धि को इन आकड़ों में देखा जा सकता है 1886 7 में यह राशि 19 41 करोड अथवा बजट के कुल शुद्ध खर्चों का लगभग 42 4 प्रतिशत थी। 1891-92 में 22 57 करोड अथवा लगभग 45 4 प्रतिशत, 1901-02 में 23 55 करोड अथवा लगभग 45 2 प्रतिशत तथा 1904 05 में 30 2 करोड अथवा कुल शुद्ध खर्च का 51 9 प्रतिशत थी।[2] इसके अतिरिक्त भारत को रायल नेवी (शाही नौ-सेना) को देश की सामान्य जलीय सुरक्षा का दायित्व निभाने के लिए आर्थिक सहायता देनी पडती थी जिसकी राशि विविधता लिए रहती थी। 1869 में जहा यह राशि 70 000 पौंड थी वहा 1900 में 100,000 पौंड हो गई। इसके साथ ही भारत सरकार को स्थानीय रायल इडियन मैरीन का खर्च भी उठाना पडता था।[3A] इसके अतिरिक्त युद्ध, विशेष अभियान तथा विशिष्ट सुरक्षा कार्य पर होने वाले विशिष्ट प्रकार के व्यय भार भी सहन करने पडते थे। 1876-7 और 1902 03 में सैनिक प्रक्रियाओं पर 22 2 करोड रुपय और विशिष्ट सुरक्षा कार्यों पर 4 5 करोड रुपये खर्च हुए।[4]

भारतीय नेताओं ने सेना पर होने वाले खर्चों पर प्रबल प्रहार किए तथा इस विषय पर एकमत होकर निरतर और नियमित रूप से अभियान चलाए रखा। वस्तुत हमारे अध्ययन के अतर्गत सपूर्ण अवधि में सेना सबधी व्यय राष्ट्रीय आदोलन के आक्रमण का सबसे प्रमुख लक्ष्य रहा है। यद्यपि इन नेताओं ने सेना सबधी व्यय और उसके सभी पक्षों, धनराशि के साथ साथ उद्देश्य और उसके उपयोग किए जाने के ढग आदि की तीखी आलोचना की तथापि उनका ध्यान प्रमुख रूप से इस प्रश्न के आर्थिक पक्ष पर ही रहा। उदाहरणार्थ, कुछ आर्थिक प्रश्नों से सबद्ध पक्षों को छोडकर इन नेता सगठन कार्यक्षमता की समस्याओं तथा सनिक नीति की न्यूनाधिक रूप की। इस प्रवृति का एकमात्र अपवाद सेना के भारतीयकरण की इच्छा थी

सक्षेप में भारतीय नेताओं ने यह घोषणा की कि भारत के वित्तो

प्रधान कारण तथा ऊचे कराधान के अस्तित्व का कारण मिलिटी के ऊचे और निरतर बढत हुए व्यय ही थे। उनकी यह निश्चित धारणा थी कि जब तक अनावश्यक सना सबधी खर्चे इसी प्रकार बढते जाएग अथवा इतने ऊचे बने रहगे तब तक भारतीय वित्त मे सुधार की कोई सभावना नही। भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने अपने पहले ही अधिवेशन से सैनिक व्यय मे वद्धि के प्रति विरोध प्रकट किया।[30] 1889 मे काग्रेस ने देश मे सना सबधी व्ययो मे वद्धि की निरतरता के स्थान पर उसमे कटौती की आवश्यकता पर बल दिया।[31] 1891 मे उसने अपना यह दष्टिकोण प्रस्तुत किया कि देश की घोर दरिद्रता का कारण वतमान सैनिक और नागरिक प्रशासन पर होने वाली फिजूलखर्ची है। इसम भी सैनिक प्रशासन की फिजूलखर्ची विशेष चितनीय है।[3] परवर्ती वर्षों मे काग्रेस सेना के खर्चों मे कटौती करन और उस कटौती को बनाए रखने की निरतर और बार बार माग करती रही। राष्ट्रवादियो की अन्य सस्थाए भी समय समय पर इस प्रश्न को उठाती रही। 1885 मे 'ब्रिटिश इडियन एसोसिएशन', कलकत्ता की 'इडियन एसोसिएशन', 'बाबे प्रेसीडेंसी एसोसिएशन पूना सावजनिक सभा', मद्रास की 'महाजन सभा', कराची की सिंध सभा' तथा सूरत की 'प्रजा हितवधक सभा' ने सयुक्त रूप से अगरेज मतदाताओ से 'भारत की अपील' शीर्षक से इग्लड म इस्तहारो की एक सामान्य माला निकाली और उसका वितरण किया।[33] इस्तहार नबर-9 का शीषक था '20 वर्षों मे भारत के सनिक व्ययो मे 21 प्रतिशत की वृद्धि।' इसका अथ था कि जो सैनिक व्यय 1857 म 11 463 000 पौड पर पहुच गया था, वही 1884 म और अधिक बढकर 16,975 550 पौंड हो गया है, इसे आसानी से घटाकर 14 लाख पौंड किया जा सकता था।[34]

बहुत सारे प्रमुख राष्ट्रवादी लोकनेताओ ने सनिक खर्चों की विस्तार से और तीख पन के साथ चर्चा की। डी० ई० वाचा निश्चित रूप से इस प्रश्न पर प्रमुख राष्टवादी प्रवक्ता थे। इस विषय पर दिए गए उनके भाषणो और लिखे गए लेखो को यदि एक स्थान पर इकठ्ठा किया जाए तो एक काफी बडा ग्रथ तैयार हो जाएगा। 1885 म उन्होंने प्रथम भारतीय राष्टीय काग्रेस को सबोधित करते हुए 1871 मे सेना पर किए जा रह खर्चों म वृद्धि की समीक्षा की तथा इस घोर पातक के लिए सरकार की भर्त्सना की।[35] 1891 के काग्रेस के अधिवेशन म एक अन्य विस्तत विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए उन्होंने दढतापूर्वक कहा कि इस समय सेना के खर्चों मे कष्टदायक वृद्धि के प्रश्न के समान दुखदायक अन्य कोई प्रश्न नही। सेना पर होन वाले व्ययो मे वृद्धि तो देसवासियों की क्षमता को खाए जा रही है।[36] उन्होंने अपन इसी दृष्टिकोण को परवर्ती वर्षो म बार बार दोहराया।[37] जी० वी० जोशी ने प्रथम अपने 1886 म प्रकाशित निबधों 'ए नोट आन रिट्रेंचमट' और 'दि नटिव इडियन आर्मी' मे देश के वित्तो पर बढते हुए सैन्य व्ययो के घातक प्रभाव की जाच की।[38] उन्होंने 1886 मे प्रकाशित अपन लेख दि प्रेजेंट फाइ-नाशल पोजीशन' म विस्तत सांख्यिकी विश्लेषण के आधार पर अपना आरोप दोह-राया।[39] अत्यधिक सैन्य व्ययो के विरुद्ध अभियान चलाए रखने वाल गोपालकृष्ण गोखले एक दूसरे राष्ट्रवादी नता थे।[40] अनक अन्य राष्ट्रवादी जननेताओ ने भी बराबर जोश खरोश के साथ बढे सनिक व्ययो के विरुद्ध भाषण दिए तथा लेख लिखे।[41] इसी प्रकार

राष्ट्रवादी पत्र पत्रिकाओ ने भी सैन्य व्यय के विरुद्ध बराबर जोरदार आवाज उठाई और इन व्यय मे कटौती की माग के लिए दबाव डाला।[4]

भारतीय नेताओ ने मिलिट्री के खर्चों की आलोचना के लिए केवल उन खर्चों के विस्तृत आकार को ही अपना आधार नहा बनाया प्रत्युत भारतीय ससाधना की न्यूनता पर विचार करते हुए उनके औचित्य को भी समीक्षा का आधार बनाया। उन्होन इस सिद्धान्त पर बल दिया कि देश की सुरक्षा और सेना सबधी आवश्यकताओ को मिलिट्री के खर्चों के उपयुक्त आकार के निधारण की एकमात्र कसौटी न मानकर देश की उन खर्चों का सहन करने की क्षमता को पर्याप्त महत्व दिया जाना चाहिए।[13] अतएव उनका तर्क था कि इस समय देश सशस्त्र सेनाओ पर जितना व्यय कर रहा है, वह उसकी सहनशक्ति के बाहर है।[14] कुछ लोगो ने तो यह तथ्य प्रतिपादित किया कि सैन्य खर्चों का इससे बढ़-कर अधिक निंदनीय पक्ष क्या हो सकता है कि भारत जैसा निर्धन देश अपने वार्षिक राजस्व का जितना बडा भाग सेना पर खच कर रहा है, उतना तो ब्रिटेन और जारशाही रूस को मिलाकर विश्व के अपेक्षाकृत अधिक विकसित, अधिक सपन्न और सैनिक तानाशाह देश भी नही कर रहे।[15] उन्होन यह तथ्य भी प्रस्तुत किया कि सैनिक खर्चे भारत के सारे विशुद्ध भूराजस्व को हजम कर जाते हैं। उन्होने इस तथ्य का प्रयोग इस महगे सशस्त्र सेनाओ के सैन्यतत्र को भारत द्वारा वहन करने म उसकी अक्षमता के प्रमाण के रूप मे किया।[16] भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के सातवें अधिवेशन म डी० ई० वाचा ने टिप्पणी की कि 'दरिद्र किसानो का खून चूसा जा रहा है ताकि सैनिक करभाक्ता मजे उडा सकें, स्टार और मडल प्राप्त कर सकें।[17]

भारतीय नेताओ के अनुसार भारत की आर्थिक क्षमता के बाहर सैन्य खर्चों का प्रत्यक्ष तथा कदाचित निकृष्टतम दुष्परिणाम यह हो रहा था कि सरकार एक ओर तो सेना पर पानी की तरह रुपया बहा रही थी और दूसरी ओर राष्ट्र निर्माता विभागो पर बहुत कम खच कर रही थी। इस प्रकार देश की स्वस्थ आतरिक प्रगति और आर्थिक विकास को धक्का लग रहा था। समस्या के इस तथ्य को प्राय ही प्रबलता के साथ प्रस्तुत किया गया। उदाहरणाथ, डी० ई० वाचा ने 1891 मे चिंतित होकर आश्चय प्रकट किया यदि भारत का 54 करोड का बडा भारी अनावश्यक, सामान्य से अतिरिक्त और फालतू खचा 5 वर्षों म बचाया गया होता तो भारत न जाने कितना सुखी सतुष्ट, कितना सपन्न तथा कितना उन्नत हो गया होता।'[18] दस वर्षों के उपरात उन्होने दृढतापूवक कहा 'जनता के कल्याण की दृष्टि से अत्यत महत्वपूण, देश के सभी आतरिक सुधारो के माग मे प्रधान बाधा मिलिट्री के खर्चे हैं।'[19] इसी प्रकार तिलक के केसरी ने अपने 15 अप्रल 1902 के अक मे अपना मत प्रकट करते हुए लिखा 'घरेलू प्रशासन के मामलो मे जनता के हितो के प्रति सरकार की उपेक्षा वृत्ति का वास्तविक कारण भारत के बढते हुए मिलिट्री के खर्चे ही हैं।'[20] जी० के० गोखले ने 1903 मे इस तथ्य पर कि 1885 1898 की अवधि म सरकार द्वारा जनता से अतिरिक्त राजस्व के रूप म इकट्ठी की गई 120 करोड रुपय की धनराशि मे से लगभग 80 करोड रुपया सेना द्वारा हडप लिया गया है। विशाल धनराशि मे से सावजनिक शिक्षा के भाग मे आधे करोड रुपये से भी

आई है शोक प्रकट करते हुए दृढतापूर्वक कहा कि जब हमारे राजस्व निरतर बढते हुए सेना के उद्देश्यो की पूर्ति की ओर ही उ मुख किए जा रहे है तब राज्य द्वारा किसी बड परिणाम पर जनता की भौतिक समद्धि तथा नैतिक प्रगति से सबधित किसी सुदढ और स्थाई प्रयास की सभावना के लिए अवकाश ही नही।[51]

ऊचा सैन्य व्यय तथा सुझाए गए उपाय

भारतीय नेताओ ने अनुभव किया कि ऊचे सैन्य व्ययो की कोरी निंदा करना ही काफी नहीं है क्योकि सरकारी अधिकारी इस तथ्य से तो इनकार ही नही करते कि ये खर्चे ऊचे है। उनका तब तो यह रहता है कि ये खर्चे अनिवार्य हैं और भारत साम्राज्य की सुरक्षा का ध्यान मे रखते हुए इनम किसी प्रकार की कटौती सभव नही। उदाहरणार्थ 1894 5 के वित्तीय विवरण पर हुए विवाद मे जनरल ब्रिक्बरी न सैन्य व्यया के आलोचको को उत्तर देते हुए कहा था

> मैंने निंदा प्रस्ताव दखे हैं मैंने आरोप पत्र देखे है मैंने जोरदार वक्तव्य सुने हैं, मैंने भारत सरकार से खर्चा घटाने की अपीलें भी देखी है, परतु किसी व्यक्ति ने भी इस सबध म कोई एक भी तर्क प्रस्तुत नही किया कि किस प्रकार उचित मात्रा मे सैन्य व्ययो मे कटौती की जा सकती है।

इस प्रकार लार्ड कर्जन के वायसराय काल मे सैन्य व्यय उत्तरोत्तर बढते बढते आसमान पर पहुच गए इसके बावजूद उसने 1901 मे घोषणा की

> मुझे इस तर्क से जरा भी क्षोभ नही पहुचा कि सेना पर किया जाने वाला सारा व्यय निरर्थक है और इस धन का अधिक अच्छा उपयोग देश के आर्थिक विकास की योजनाओ पर खर्च करके किया जा सकता है। मैं बडी प्रसन्नता से सारे राजस्व को ही विकास योजनाओ पर खर्च करने को प्रस्तुत हू परतु मैं यह स्पष्ट शब्दो म कहना चाहता हू कि मैं ऐसा दुस्साहस नही कर सकता। देश को सुरक्षित रखने के लिए सेना की आवश्यकता है और भारत को सुरक्षित नही माना जा सकता।[53]

इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय नेता सैन्य व्यय मे वृद्धि के लिए उत्तरदायी तत्वो की जाच पडताल करने और तदनुरूप उपायो को सुझाने के लिए विवश हो गए। परतु इस महत्व कार्य को हाथ मे लेकर भी इन नेताओ ने इस प्रश्न के व्यापक नीति सबधी पक्षो के अध्ययन तक ही अपने को सीमित रखा। उन्होने न तो कोई व्यावहारिक सुझाव दिए और न ही सरकारी पक्ष द्वारा पेश किए गए अपेक्षित तरमीदो प्रशासनिक विवरणो का अध्ययन किया।[54] इस दृष्टिकोण का स्पष्ट और युक्तियुक्त प्रतिपादन डी० ई० वाचा ने 1895 म उस समय किया, जब उन्होंने यह टिप्पणी की कि अधिकारी लोग सेना के खर्चों के आलोचको से रचनात्मक सुझावो की माग तो इस प्रकार कर रहे हैं जैसे कि मानो इन आलोचको के पास सारे सूक्ष्म तथा विस्तृत विवरण उपलब्ध हो और इनकी मान्यता से उनके लिए सुझाव भेजना सभव है। उदाहरणार्थ कि जिस प्रकार की स्थिति है उसम रचनात्मक ढग जान वाले सुझावो को भेजना सभव ही नहा है। रचनात्मक प्रस्ताव इन लिए जब हम अपेक्षित सामग्री ही नही दी जाती तो हम केवल समीक्षा ही कर सकते

हुई। यह घटना इस तथ्य को प्रमाणित करती है कि सेना मे कटौती बडी आसानी से की जा सकती है।[61] सेना की अधिकता की व्यथना के उप सिद्धात के रूप म नेताओ ने यह दृष्टिकोण प्रस्तुत किया कि जब कभी सेना की सख्या तथा उसकी क्षमता मे सुधार के लिए कदम उठाने की आवश्यकता पडी है, उन कदमो का अतिम निर्णय सुरक्षा से सबधित विषयो के सदभ मे नही हुआ है। सामान्य रूप से ब्रिटेन के शाही हितो की सुरक्षा और उन्नयन के विचारो को महत्व दिया जाता रहा है। भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने अपने 1903 और 1904 के अधिवेशनो मे इस विचारधारा को बडी स्पष्टता तथा प्रबलता के साथ प्रतिपादित किया।[62] 1896 मे विलबी कमीशन को भेजे अपने एक सप्रेषण मे दादाभाई नौरोजी ने असाधारण प्रखरता तथा कटुता के साथ इस तथ्य को निम्नलिखित शब्दो मे व्यक्त किया

> वास्तव मे सारी यूरोपीय (अशत भारतीय) सेना ब्रिटिश सेना का अविभाज्य अग है। ब्रिटिश सेना द्वारा भारत को एक श्रेष्ठ प्रशिक्षण क्षेत्र के रूप म समझा जाता है और उसी रूप मे इसका उपयोग किया जाता है। किसी भी मूल्य पर अगरेजो के लाभ, सम्मान और प्रतिष्ठा के लिए तथा उनके देशवासियो के लिए आखेट स्थल के रूप मे एक ब्रिटिश साम्राज्य तथा यूरोपीय सम्मान की सुरक्षा की दृष्टि से ही भारत का उपयोग किया जाता है। भारतीय लोगो के साथ दासो का व्यवहार किया जाता है। उन्हे मालिको की चरम उन्नति के लिए सारे खर्चों के भुगतान के गव गौरव का अनुभव करने का तो मिलता है परतु सारे मामले में जरा सी भी जबान खोलने की अनुमति नही मिलती।[63]

इसी प्रकार गोखले ने अपना निश्चित मत अभिव्यक्त किया कि ब्रिटिश नीति एशियाई साम्राज्यो को हडपने की तथा यूरोपीय शक्तियो की दौड में आगे बढने के लिए भारतीय समाधानो का प्रयोग करने की ही रही है।[64] बहुत सारे अन्य भारतीयो ने भी इसी उग्रता से लेख लिखे तथा भाषण किए।[65]

भारतीय नेताओ ने माग की कि भारत की प्राकृतिक सीमाओ के बाहर के सैन्य उद्देश्यो के लिए भारतीय सशस्त्र सेनाओ का उपयोग तथा ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सेवा के लिए भारतीय राजस्वो का व्यय नही किया जाना चाहिए।[66] उन्होने कहा कि शाही उद्देश्यो के लिए निर्दिष्ट भारतीय सेना के भाग विशेष के भरण पोषण का, भारत मे स्थित सुरक्षित ब्रिटिश सेना का और शाही युद्धो मे प्रयुक्त भारतीय सेना के व्यय का सारा भार ब्रिटिश सरकार को वहन करना चाहिए। ध्यानपूर्वक देखने से यह मत सर्वथा उपयुक्त तथा न्यायोचित ही होगा।[67] जब ब्रिटिश सरकार ने 1903 म भारतीय नेताओ द्वारा अनुमोदित सिद्धात का उल्लघन करते हुए दक्षिणी अफ्रीका मे नियुक्त ब्रिटिश सेना की एक टुकडी के भरण-पोषण के व्यय के कुछ भाग का भुगतान भारतीय राजस्व से करने की योजना की घोषणा की तब उसे सुनकर भारतीय नेता तिलमिला उठे। उन्होने बहुत दूरस्थ प्रदेश दक्षिणी अफ्रीका म शाति स्थापित करने के लिए किए जा रहे खर्चे के भार को भारत के ऊपर लादने की चेष्टा को एक घृणापूर्ण और निन्दनीय योजना घोषित की। उन्होने स्पष्ट शब्दो म कहा कि साम्राज्य के उद्देश्यों के लिए भारतीय धन को खर्च

करने का यह एक दूसरा उदाहरण था। उन्होंने अपनी भावनाए प्राय तीखी और कठोर भाषा म ही अभिव्यक्त की। उदाहरण के रूप म 'एडवोकेट' ने अपने 23 जुलाई 1903 के अक मे लिखा था। भारतीयो की छाती से मास के एक और बडे टुकडे को काटने के लिए मि० ब्रोडरिक ने अपना छुरा तेज कर लिया है।[68] 'इडियन सोशल रिफार्मर' ने 19 जुलाई 1903 के अक मे भारत को लूटने की नीति के विरुद्ध विरोध प्रकट करते हुए भारतीय लोक नेताओ से कहा कि वे इस आदेश की सीधी सादी शब्दावली मे इस घृणित योजना की निंदा करें।[69] दादा भाई नौरोजी ने स्पष्ट शब्दो मे प्लेटो के समान दार्शनिक भाषा मे लदन की सभा म उपस्थित लोगो से पूछा 'वे कौन से कारण है और व कौन सी परिस्थितिया हैं जिन्होंने हमारे शासको के मन को इतना अधिक कलुषित कर दिया है कि उन्हे ऐसा नीच और घृणित सुझाव देना पडा है ?'[70]

भारतीय नेताओ ने यू तो अपना सारा ध्यान प्राय सैन्य व्यय के नीतिपरक पहलुओ की सामान्य समीक्षा तक ही सीमित रखा कुछेक नेताओ ने अवश्य 1890 की अवधि मे अग्रिम सीमा नीति के अपनाने के फलस्वरूप सैन्य व्यया मे वद्धि होन से पूर्व ही सैन्य-सगठन के पक्षो को विशेष रूप से आलोचना और सशाधन का आधार बनाया।

सामान्यत अधिकाश भारतीय नेताओ की आलोचना मे केवल अस्पष्ट और थोडे से नेताओ की अभिव्यक्ति मे सुस्पष्ट प्रस्तुत किया गया। पहला आक्षेप यह था कि भारतीय सेना जहा एक ओर अधिक खर्चीली है वहा दूसरी ओर अपेक्षित रूप से कुशल नही है।[71]

बहुत सारे भारतीय नेताओ ने यह सिद्ध करने के लिए तथ्य तथा आकडे प्रस्तुत किए कि भारत मे सेना का प्रति सैनिक मूल्य सारे विश्व से ही उच्चतम था। उन्होंने आकडा से सिद्ध किया कि यूरोप मे जमनी के कुशलतम सैन्यतत्र से भी भारतीय सेना का व्यय अधिक ऊचा था। यहा तक कि ईस्ट इडिया कपनी के शासन काल मे हुए व्यय से भी यह व्यय अधिक ऊचा था।[7] उन नेताओ के विचार मे भारतीय सेना के महगेपन के लिए कई तत्व उत्तरदाई थे। उनका कहना था कि 1859 की एकीकरण योजना, अल्प कालीन सेना पद्धति इग्लड मे भर्ती और प्रशिक्षण प्रणाली, इग्लड और भारत के मध्य ब्रिटिश सेनाओ के परिवहन की पद्धति, अनुपयोगी सेवाओ का विकास तथा ब्रिटिश सैनिको को पेंशन दने जैसी बातो ने भारत पर व्यय का गलत और अनावश्य रूप स ज्यादा वित्तीय भार डाल दिया है इसलिए इन खर्चों को समाप्त करने की अथवा उनमे कटौती करने की आवश्यकता है।[73] 1897 म विलबी कमीशन के समक्ष अपना साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए जी० के० गोखले न भारतीय स्टाफ कार्प्स सिस्टम पर कटु प्रहार किए। गोखले ने वक्रता से टिप्पणी की कि सना मे उन्नति की पद्धति सेनाओ की आवश्यकता के सम्बन्ध मे नियमित नही की गई प्रत्युत अफसरो के हितो को दखते हुए ही उसका नियमन किया गया है। इसका अथ तो यह निकला कि सेना अधिकारियो के लिए है अधिकारी सेना के लिए नही हैं। वास्तव मे उनके चिंतन का निष्कर्ष यह था कि सेना के अधिकारियो को उनके सेवा काल म तथा सेवा निवृत्ति के उपरान्त आवश्यकता से बहुत अधिक वेतन दिया जाता है।[74]

एकाध भारतीय नेताओं का तो यहां तक विश्वास था कि भारत स्थित ब्रिटिश सैनिकों के वेतन और भत्ते आदि एकदम अपव्यय थे। उदाहरणार्थ 'इंडियन स्पेक्टेटर' ने अपने 15 अगस्त 1880 के अंक में यह निर्देश किया कि यूरोप में किसी एक सैनिक पर आने वाले व्यय की तुलना में भारत स्थित ब्रिटिश सैनिक पर व्यय पांच गुना अधिक आता है। पत्र ने टिप्पणी करते हुए लिखा

> छंटाई की छुरी का चलाना नितांत आवश्यक हो गया है। निश्चित रूप से ही हम यह नहीं चाहते कि हमारे सिपाही विलासिता का जीवन बिताएं। हम यह तो किसी भी रूप में नहीं देखना चाहते कि वीर ब्रिटिश सैनिक घटिया वस्त्र पहनें और घटिया भोजन खाएं परन्तु लोगों की आशंका यह है कि वे यदि आवश्यकता से अधिक बढ़िया वस्त्र नहीं पहनते तो भोजन अवश्य आवश्यकता से अधिक बढ़िया खाते हैं। हमारा भी विश्वास है कि स्वदेशी सेना को मिलने वाले तुच्छ राशन की तुलना में ब्रिटिश सैनिक अत्यंत विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं।[75]

जब इंग्लैंड में हुई वेतन वृद्धि के समान भारत में ब्रिटिश सैनिकों के वेतन में भी 1902 में वृद्धि की गई तो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और उसके साथ साथ अन्यान्य नेताओं ने इस पग के विरुद्ध अपना अत्यंत सशक्त विरोध प्रकट किया।[76] यहां उल्लेखनीय है कि उस समय कुछ ने तो भारतीय सैनिकों के वेतन में वृद्धि की वकालत की[77] और जब भारत सरकार ने 1895 में भारतीय सैनिकों का वेतन 7 रुपए से बढ़ा कर 9 रु० माह कर दिया तो उनमें से बहुत सारे नेताओं ने हर्षवर्धक समाचार के रूप में इस पग का स्वागत किया।[78]

कुछ भारतीय नेताओं द्वारा बचत का सुझाया गया दूसरा उपाय था पृथक क्षेत्रीय कमानों की समाप्ति, क्योंकि उनके वक्तव्य के अनुसार केंद्रीय शाही नियंत्रण के कारण सैनिक दृष्टि से उनकी सार्थकता निस्सार तथा नामशेष हो गई थी। उस समय तो उन्हें बनाए रखने का एकमात्र उद्देश्य बिना काम के ही अधिकारियों का वेतन जुटाना था।[79] भारतीय नेताओं ने लार्ड किचनर की 1904 की सेना के पुनर्विभाजन और पुनर्गठन की योजना का भी विरोध किया क्योंकि उसके साथ अतिरिक्त खर्चे जुड़े हुए थे। उन्होंने मांग की कि इस योजना का भार भारतीय राजकोष पर नहीं डालना चाहिए।[80]

सैन्य विभाग के प्रश्न पर किचनर कर्ज़न मतभेद[81] के प्रति भारतीय नेताओं द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से यह अत्यंत स्पष्ट हो जाता है कि वे लोग किस सीमा तक सैन्य व्ययों में बचत के लिए कृत-संकल्प थे। इस मतभेद को जिस पर कर्ज़न ने स्वयं अपने वायसराय पद के भविष्य तक को दांव पर लगा दिया था, पता जनता को 1905 में उस समय चला, जब कर्ज़न द्वारा बनाए गए यूनीवर्सिटी एक्ट कलकत्ता विश्वविद्यालय में उनके द्वारा दिए गए नैराश्य भाषण तथा बंगाल के किए गए विभाजन के कारण राष्ट्रवादी कर्ज़न के प्रबल विरोधी बन गए थे। उन नेताओं के लिए अपनी घृणा के पात्र, जिनके विरुद्ध वे प्रचंड संघर्ष करते आ रहे थे, के विरोधी किचनर का समर्थन करना सहज और मानवीय कृत्य ही था। परन्तु उनके द्वारा कर्ज़न का किया गया विरोध किसी व्यक्तिगत कारण से प्रेरित नहीं था प्रत्युत उसका मूल आधार राष्ट्रीयतावाद ही था,

अत उन्होंने प्रधान सेनापति की शक्तियो में वृद्धि द्वारा सैन्यव्यया मे वद्धि की सभावना की आशका से किचनर और भारत सचिव के विरुद्ध सदैव कजन के पक्ष का समथन किया। हा, यह बात दूसरी है कि इन लोगो का यह समथन उत्साह शू य था और कभी कभी तो उसका स्वर भी मद रहता था।[8]

कुछ भारतीय नेताओ के मत में भारत में सेना के ऊचे खर्चों के लिए उत्तर-दायी एक अ य तत्व था, भारतीय सेना में महगी ब्रिटिश सैनिक टुकडियो का अधिक अनुपात। इस कारण से तथा बहुत सारे अ या य कारणा से इन नेताओ ने सेना के भारतीयकरण की माग की।[83] हा, थोडे-बहुत नेताओ न यह अवश्य स्वीकार किया कि भारत सरकार की विदेशी प्रकृति के कारण उसके लिए भारत में एक निश्चित सख्या में ब्रिटिश सनिको का रखना एक प्रकार स अनिवाय सा हो गया है परतु उनका सुझाव यह था कि उन सनिको की सख्या इतनी बडी नही होनी चाहिए, जितनी कि उस समय थी।[84] इसके अतिरिक्त बहुतो का तो यह भी तक था कि ब्रिटिश सनिक टुकडियो की आवश्य-कता विदेशी शासन को बनाए रखन के लिए है। अत उनका सारा खर्चा ब्रिटिश वित्तो को ही उठाना चाहिए। यदि सारा नही तो कम से कम भारत के साथ इस खर्चे का भागीदार तो बनना चाहिए।[85] उ होने भारतीय सैनिको का अधिकारी बनन का अवसर देने से इनकार की भी आलोचना की तथा अनुभव किया कि यह अ या य आधारो के अतिरिक्त वित्तीय आधार की दृष्टि से आपत्तिजनक है क्योकि ब्रिटिश अधिकारी भार-तीय अधिकारियो की अपेक्षा अधिक महग पडते थे। अत उ होने भारतीयो के लिए सेना की सवा म उच्च पदो के द्वार खोलने का अनुरोध किया।[86] यहा यह उल्लेखनीय है कि इस माग को उठाने के पीछे वित्तीय आधार कदाचित अपेक्षाकृत गौण कारणा मे स एक था।

जी० वी० जोशी और जी० के० गोखले ने भी भारतीय सेना में किसी भी प्रकार की वालटियर पद्धति राष्ट्रीय देशरक्षक सेना तथा रिजव सेना के अभाव म स्थाइ सेना को युद्ध के लिए निरतर तैयार रखने की नीति की आलाचना की। उनका कथन था कि इसस अ या य दुबलताआ के साथ दश में नपुसकता की प्रवृत्ति पनपती है और दश के वित्तो का व्यर्थ दुरुपयोग होता है जिसके फलस्वरूप करदाता को अपन भुगतान के अनुरूप प्रतिदान नही मिल पाता है। उनका कथन था कि किसी देश की क्षमता का आधार सकटकाल में सैनिका की सख्या में वृद्धि कर सकना होता है। जहा अ य देशो न अपनी शाति काल की सेना में अल्पकालिक सूचना से ही अनेक समया में अपक्षित वृद्धि कर ली है, वहा भारत एक भी बटालियन के विस्तार की सामथ्य नही रखता अवगणना की दृष्टि स खर्चों में वद्धि के रूप में सेना में वृद्धि दिखा देना दूसरी बात है। इसस भारतीय पद्धति अकुशल और विनाशात्मक रूप से अपव्ययी तथा महगी बन जाती है। दूसरी ओर उनका सुझाव यह था कि रिजव सेना की पद्धति को अपनाने मे एक तो सरकार सेना की सख्या में कटौती कर सकेगी और दूसरे इससे वित्ता का राहत मिलगी। उल्लेख नीय यह है कि इस सबका कुल मिलाकर देश की सशस्त्र सेनाओ की क्षमता पर किसी प्रकार का दुष्प्रभाव नही पडेगा वल्कि उलटे इससे उसकी क्षमता में वद्धि ही होगी।[8]

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ द्वारा इस दिशा म प्रस्तावित दूसरा पग था,

पद्धति की स्थापना। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1886 मे ही इस साधन को अपनाने की वकालत की थी और इसके उपरात लगभग प्रतिवर्ष उसने इस माग को दोहराना जारी रखा।[88] इस माग का प्रत्यक्ष प्रयोजन देश की सुरक्षा क्षमता मे वृद्धि करना था परतु इन प्रस्तावो पर वक्तव्य देने वाले प्राय ही इसके वित्तीय लाभो का ही गुणगान करने लग जाते थे।[89]

भारतीय राष्ट्रीय नेताओ का विश्वास था कि किसी भी अन्य तत्व की अपेक्षा सीमावर्ती अभियान और उन अभियानो के लिए की जाने वाली तैयारिया ही सेना को बडी भारी सख्या म बनाए रखने के तथा दुखप्रद व भारस्वरूप सैन्य व्यया के लिए उत्तरदायी तत्व थे। क्योकि इन अभियानो का सबध सरकार की सीमा नीति से था अत भारतीय नेताओ ने इस नीति की विस्तृत रूप से भत्सना की तथा इस नीति को छोडने के लिए सरकार पर दबाव डाला।[90] इसके अतिरिक्त इन नेताओ ने माग की कि यदि सरकार के लिए अग्रगामी सीमा नीति को छोडना सभव नही तो इग्लड को या तो सारे का सारा अथवा उल्लेखनीय परिमाण मे खर्चे का भार उठाना चाहिए क्योकि यह नीति प्रधानतया इग्लड के सामाजिक लक्ष्या व हितो के लिए अपनाई गई है तथा इग्लड ही इनसे प्रमुख रूप मे लाभान्वित होता है।[91]

हम ऊपर इस बात का विवेचन कर चुके है कि किस प्रकार राष्ट्रवादियो न यह माग पेश की कि भारत के विदेशी युद्धा म भाग लेन के सारे अथवा आशिक व्यय का, भारत स्थित ब्रिटिश सेना के भरण पोषण के व्यय के भाग का भारत की आवश्यकता स बढ चढ कर शाही उद्देश्या के लिए हुए सैन्य व्यया का, सीमावर्ती अभियानो म हुए व्यय का तथा सामान्य रूप से इस प्रकार की अग्रगामी नीति के अपनान से हाने वाले व्यय का भार ब्रिटेन का उठाना चाहिए। अपने युग के कुछ प्रमुख नता तो एक पग और आगे बढकर यहा तक कहन लगे कि भारत के सामान्य सैनिक व्यय म ब्रिटिश कोष का अपना योगदान दना चाहिए। यह माग इस अपील क साथ जुडी हुई थी कि भारत के समग्र प्रशासकीय व्यय म इग्लड का अशदान करना चाहिए।

इस विचित्र माग के पीछे विद्यमान तर्क इस माग से भी अधिक रोचक ह तथा भारत म ब्रिटिश राज्य के उद्देश्या के सबध म राष्ट्रवादी नेताओ की गहरी जानकारी पर बहुत प्रकाश डालत हैं। निष्कर्ष रूप मे राष्ट्रवादियो का तर्क यह था कि अग्रेज भारत की सुरक्षा म इतनी अधिक रुचि रखत हैं जितनी कि भारत स्वय क्योकि अगरेजो को भारत पर शासन करन स महत्वपूर्ण आर्थिक तथा राजनैतिक लाभ प्राप्त होत हैं। इस तर्क का प्राय ही पर्याप्त सुस्पष्ट तथा सुदृढ भाषा म प्रस्तुत किया गया है। 1893 के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस क अधिवेशन की अध्यक्षता करत हुए दादाभाई नौरोजी न प्रश्न किया

> ब्रिटेन के इतन गहर व्यापक और महान हितो के साथ साथ महत्ता और सपन्नता अनिवायत पूर्वी साम्राज्य पर निर्भर है और इससे साथ अविच्छिन्न रूप स सबद्ध है। क्या यह उचित है क्या यह न्यायसगत तथा वाछनीय है कि ब्रिटेन की इस महत्ता प्रतिष्ठा और समृद्धि का सारा मूल्य दरिद्र भारतीय जनता की गर्दन पर लाद

भावना न केवल हमारे शासकों को देश पर शस्त्रबल से शासन करने को प्रोत्साहित करती है प्रत्युत निकृष्टतम सकटकालीन स्थिति का उपयुक्त और प्रभावी सामना करने के लिए सदैव सैनिक दृष्टि से उद्यत रहने की प्रेरणा भी देती है।[96] 'अमृत बाजार पत्रिका' ने भी अपने 6 सितबर 1894 के अक मे इसी भावना का प्रतिध्वनित करते हुए लिखा, भारतीय सेना के खर्चों मे वृद्धि का कारण शासको के मन म जनता के प्रति अविश्वास-भावना है। इसमे पूर्व पत्रिका ने अपने 3 सितबर 1885 के अक मे यह मत प्रकट किया था कि भारतीयो के प्रति ब्रिटेन के इस अविश्वास को मध्य एशिया मे रूस की गतिविधि के प्रति ब्रिटेन के दृष्टिकोण के सदर्भ म समझा जा सकता है। इस पत्रिका ने दावा किया कि अग्रेज रूसियो से भयभीत नही हैं प्रत्युत उन्हे इस बात का भय है कि रूसियो के पहुचते ही इस देश के वासी ही उनके विरुद्ध न हो जाए। अत उनकी इच्छा रूसियो को भारत की सीमा से हजारो मील दूर रखने की है। 1897 मे कांग्रेस के अधिवेशन मे अध्यक्षीय भाषण मे सी० शकरन नैयर न तथा 1903 मे अपने बजट-भाषण मे जी० के० गोखले ने भी इसी प्रकार की आलोचना अपनी सामान्य मृदु अभिव्यक्ति के साथ की।[97] विल्बी कमीशन के समक्ष जिरह के प्रश्नो का उत्तर देते हुए इस दृष्टिकोण को तीखी और सुस्पष्ट अभिव्यक्ति देने का श्रेय दादाभाई नौरोजी को है। उन्होने दृढतापूर्वक कहा कि भारतीय सेना मे दो भारतीय सैनिको की तुलना मे एक ब्रिटिश सैनिक रखने का अनुपात इस भय का परिणाम है कि भारतीय सैनिक पर विश्वास नही किया जा सकता। उनसे विशेष रूप से पूछा गया कि क्या यह भय सैनिको से है? उनका उत्तर था 'मेरा अभिप्राय भारतीय सैनिक से है। ब्रिटिश सरकार को भारतीय सैनिक से ही भय है।' अगले प्रश्न का उत्तर देते हुए वे पुन अपने मुख्य विषय की ओर लौट आए और बोले यदि आप यह मानते हैं कि यूरोपीय सैनिको की एक निश्चित सख्या का होना आवश्यक है तो इसका कारण यह आशका है कि भारतीय सेना उपयुक्त ढग से कार्य नही करेगी।[98]

अविश्वास और भारी सैन्य व्ययो की नीति के एक विकल्प के रूप म इन नेताओ ने एक नई नीति अपनाने की वकालत की जिसके अतर्गत देश की सुरक्षा को राष्ट्रीय आधार दिया जाए। भारतीय लोगो पर विश्वास तथा भरोसा किया जाए और भारतीयो को सपन्न तथा सतुष्ट बनाया जाए।[99] इसी प्रकार बहुतो का सुझाव था कि रूसी आक्रमण के विरुद्ध बचाव के लिए महगी अग्रगामी सीमा सुरक्षा नीति अपनाने की अपेक्षा जनता की वफादारी तथा विश्वास को पाना अधिक बेहतर और अधिक उपयोगी वकालिक नीति है। उनके अनुसार वास्तविक सीमा तो वफादार जनता का हृदय है और किसी आक्रमण से सुरक्षा का सर्वोत्तम उपाय आतरिक सुधार और जनता का सतोष है।[100]

असैनिक व्यय

भारतीय राष्ट्रवादी नेता सैन्य व्ययो के समान असैनिक व्ययो के प्रति इतने अधिक कटु और उग्र नहीं थे। हा, वस्तुत सारे नेताओ ने असैनिक व्ययो में वृद्धि की आलोचना अवश्य की, परतु उसम अन्यान्य विषयो के विरोध म पाई जाने वाली तीव्रता और उग्रता का

प्राय अभाव ही था। इस सबध म उनकी प्रधान आलोचना यह थी कि विशेषत भारत जैसे निधन देश के लिए यहा का प्रशासन बहुत अधिक महगा था। 1897 मे इस दृष्टिकोण का सक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत करते हुए डी० ई० वाचा न लिखा 'एशियाई निधनता लिए रहने वाले भारत जैसे एशियाई देश मे पश्चिमी ढग का प्रशासन चलाना वित्तीय-राजनीतिनता के प्रतिकूल ही है।[101]

भारतीय नेताओ के अनुसार प्रशासन के महगेपन का प्रधान कारण प्रशासन के उच्च पदो के लिए ऊचे वेतन का ढाचा है। वास्तव म असैनिक प्रशासन के विरुद्ध उनकी कदाचित यही अकेली महत्वपूर्ण शिकायत थी। स्वभावत असनिक प्रशासन के व्ययो मे कटौती के सुझाव इस पक्ष विशेष तक ही सीमित थे।

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ द्वारा असैनिक खर्चो मे कटौती के लिए सुझाए गए उपायो में सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपाय था, सभी प्रशासनिक सेवाओ नगर, रेलवे, इजीनियरी, मेडिकल डाक तार, पुलिस, लोक-कर्म, सीमा शुल्क आदि के वरीय पदो का और विशेषत महान इडियन सिविल सर्विस का भारतीयकरण इस सेवा पर व्यावहारिक दृष्टि से ब्रिटिश नागरिको का एकाधिकार था और इसमें प्राय स्पृहणीय वतन पेंशन और भत्ते आदि की व्यवस्था थी। यह विषय अपने आप में इतना अधिक विस्तृत है कि इस ग्रथ में इसे समेटा नही जा सकता और साथ ही यह विषय हमारे अध्ययन क्षेत्र की सीमा स भी बाहर है। इसके अतिरिक्त यह राष्ट्रवादियो की मागो में से एक है, जिस 1858 1905 की मध्यावधि में पनपते राष्ट्रीय आदोलन के विकास के अध्ययनो में गलत रूप से बढा-चढाकर पश किया गया है। फिर भी, 19वी शताब्दी के अतिम चरण की अवधि में इस माग के राष्ट्रवादी आदोलन के एक अत्यत महत्वपूर्ण, व्यापक रूप से मान्यता प्राप्त तथा समर्थित आधारफलक होने के कारण हम यहा इसका सक्षिप्त विवचन प्रस्तुत कर रहे है। सरकारी सेवाओ के भारतीयकरण के लिए भारतीय नताओ न सुझाव दिया कि सेवा में भारतीयो की वृद्धि जैसे प्रत्यक्ष पगो को उठान के अतिरिक्त, आई० सी० एस० तथा अन्याय सेवाओ की भारत और इग्लड में साथ साथ ही परीक्षा की व्यवस्था करने तथा प्रतियोगी परीक्षाओ के लिए आयु सीमा में वृद्धि करने जसे कुछ एक परोक्ष प्रशासनिक पगो को भी उठाना चाहिए।

राष्ट्रीय नताओ ने सरकारी सवाओ के भारतीयकरण की माग सामाजिक और नैतिक लाभों क अनेक और विविध आधारो पर की। वे आधार थे, राजनैतिक औचित्य, न्याय तथा विशुद्धता, । 1858 मे की गई 'प्रतिज्ञा' की पूर्ति प्रशासनिक क्षमता तथा प्रशासन म बचत।[10] हमारा सबध इस विषय मे केवल आर्थिक आधारो से है और इन्ही आधारो के प्राय पूर्वापेक्षा सर्वाधिक व्यापक प्रमुखता तथा महत्ता प्राप्त होने का विश्वास किया जाता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रवादियो की प्रशासनिक विभागो म यूरोपियो के प्रभुत्व स सबधित आर्थिक-आलोचना दोधारी थी। एक ओर तो उन्होने यूरोपियो की सख्या म अधिकता पर यह आरोप लगाया कि इससे देश की सपत्ति की निकासी होती है क्योकि यूरोपीय अधिकारियो द्वारा विपुल राशि म प्राप्त किए जान वाले वेतनो और पेंशनो का निर्यात कर दिया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि देश का दरिद्रता

का सामना करना पड़ता है। दूसरी ओर उनका अभियोग यह था कि यूरोपियों का ऊंचे स्तर पर दी जाने वाली वेतन राशि से सरकार के लिए आर्थिक कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं। यहां विवेचन के लिए हमें पुनः एक बार इस प्रश्न के इन दोनों पक्षों को पृथक करना है। हम यहां केवल व्यय पक्ष का ही विवेचन करेंगे, धन की निकासी के पक्ष का हमने अगले अध्याय 'टेन' में ही विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि भारतीय नेताओं में इन दोनों पक्षों के संबंध में अपने आप श्रम विभाजन हो गया था। उदाहरणार्थ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपनी मांग को सुदृढ़ आधार देते हुए न्याय, राजनैतिक औचित्य, प्रशासनिक कुशलता तथा 1858 के शासनपत्र में निहित व्यवस्थाओं को अपनाने की अपील की। दादा भाई नौरोजी, वाचा, दत्त तथा कुछ अन्य महानुभावों ने धन की निकासी पर अधिक बल दिया। 'अमृत बाजार पत्रिका', 'हिंदू', 'केसरी', 'मराठा', जी० वी० जोशी तथा अन्य बहुत सारे राष्ट्रवादी नेताओं ने मितव्ययी प्रशासन के प्रश्न पर बल दिया। इस प्रकार ये तीनों वर्ग अपने तर्कों को सर्वथा पृथक रूप में ही प्रस्तुत नहीं करते थे प्रत्युत बहुत बार वे तीनों प्रकार के तर्कों को मिला-जुलाकर भी उपस्थित करते थे।

भारतीय नेताओं द्वारा प्रस्तुत वित्तीय तर्क सार रूप में इस प्रकार थे। यूरोपीय ऊंची दर पर वेतन पाते हैं और कदाचित उन्हें ऊंचा वेतन मिलते रहना निश्चित ही है। अतः उच्च पदों पर विदेशियों की व्यापकता भारतीय प्रशासन के महंगेपन का महत्वपूर्ण कारण है। इसके विपरीत दूसरी ओर क्योंकि भारतीय अपेक्षाकृत तुलनात्मक रूप से कम वेतन पर नियुक्त किए जा सकते हैं अतः यूरोपीय अधिकारियों के स्थान पर भारतीयों को नियुक्त करके प्रशासनिक खर्चों को उल्लेखनीय रूप से नीचे लाया जा सकता है।[103] इस संदर्भ में आर्थिक पक्ष को कभी कभी नैतिक तथा राजनीतिक पक्षों से अलग करते हुए उस पर बल दिया जाता था। उदाहरणार्थ, अमृत बाजार पत्रिका ने 18 नवम्बर 1886 के अपने अंक में खरेपन के साथ, यह खरापन इस पत्रिका की अनेक महत्वपूर्ण तथा विशिष्ट विशेषताओं में से एक उल्लेखनीय विशेषता उस समय थी, जब यह दो भाइयों, शिशिर कुमार तथा मोतीलाल घोष द्वारा संपादित किया जाता था, टिप्पणी की

> ऊंचे वेतन वाले सभी पदों से भारतीयों को दूर रखने की सरकारी कार्यवाही की अनैतिकता पर सरकार से बात करना अथवा भारतीयों को बिना किसी प्रकार के राजनैतिक अधिकार दिए अधीनस्थ प्रजा बनाए रखने और इस प्रकार उनमें असंतोष पनपाने की राजनैतिक गलती करने की बात सरकार से करना भैंस के आगे बीन बजाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं। अतः तुच्छ बातों की ओर ध्यान देने की अपेक्षा हम अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आर्थिक विषय पर ही डटा रहना चाहिए। (बल दिया गया)।

भारतीय नेताओं में अर्थशास्त्रियों ने भी समस्या के सांख्यिकी विश्लेषण का प्रयत्न किया। 17 मई 1892 के सरकारीय विवरण को आधार बनाते हुए उन्होंने सगणना की कि 1000 रु० अथवा उससे अधिक प्रतिमाह वेतन अथवा पेंशन पाने वाले यूरोपीयों का प्रतिवर्ष दी

जाने वाली धनराशि 14½ करोड रुपये बैठती है, जो भारत सरकार के कुल शुद्ध राजस्व का 30 प्रतिशत है।[104]

सरकारी सेवाओ के भारतीयकरण के पक्ष मे प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत तर्कों के पीछे यह धारणा काम कर रही थी कि जब कभी एक भारतीय प्रशासनिक सेवा मे किसी यूरोपीय का स्थान ग्रहण करता है तो उसे अपेक्षाकृत निम्न वेतन दिया जाना चाहिए। वस्तुत राष्ट्रवादी मतव्य का आधार यह पूर्वानुमान ही था, परतु यह एक पर्याप्त रोचक आश्चय है कि जिस निरतरता के साथ इस मतव्य को ग्रहण किया गया, उस मतव्य के तथा उस मतव्य के प्रतिपादन के तुलनात्मक अध्ययन मे यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका खुले आम प्रतिपादन अथवा प्रचार विरल ही हुआ। उसके सवथा विपरीत कुछ भारतीय नताओ ने जातीय समानता के तक को आधार बना कर यहा तक माग करनी प्रारभ कर दी कि प्रशासनिक स्थानो की प्रकृति और उनके साथ जुडे उत्तरदायित्वो के सदभ म ही वेतनो और सुविधाओ के निर्धारण का न्याय पथ अपनाना चाहिए, न कि उन पदो पर आरूढ व्यक्ति विशेषो की राष्ट्रीयता को किसी भी रूप मे आधार बनाना चाहिए। उन्होने यह भी माग की कि भारतीय असनिक सेवारत भारतीय व्यक्तियो को यूरोपीय व्यक्तियो के समान ही वेतन समान अवकाश तथा समान पेशन आदि देकर इन सेवा की गरिमा और प्रतिष्ठा को बनाए रखना चाहिए। उदाहरणार्थ 'बम्बई पब्लिक ओपीनियन' न अपने 11 सितबर 1879 के अक मे अगरेज असनिक प्रशासको को मिलने वाले वेतन अवकाश और पेंशन इडियन सिविल सर्विस मे नियुक्त कमचारियो को देने की माग करते हुए एक नई जाति प्रथा चलाने का विरोध किया। पत्रिका के अनुसार यह प्रथा भारतीय प्रशासको म हीन भावना की सष्टि करेगी। इसी प्रकार सिविल सर्विस का कानूनी रूप देने की लिटन की योजना के विरुद्ध प्रतिवाद तथा उसे निवारण की चेष्टा करते हुए बगाली ने अपने 10 जनवरी 1880 के अक मे टिप्पणी की

> भारतीय प्रशासनिक कमचारी तो एक ऐसा विचित्र जतु है जिसे यूरोपीय कमचारियो के लिए मोहक सम्मान, भविष्य तथा वेतनो आदि से कुछ लेना देना ही नही। अपने यूरोपीय साथी की अपेक्षा वेतन, पेंशन, यश पदवी आदि की दिशा म तो उसकी स्थिति नितात भिन्न है, परतु ससार मे कोई भी सम्मानित और स्वतन्त्रता प्रेमी व्यक्ति इस प्रकार के असम्मानित पद के प्रति आकृष्ट नही होगा और न ही इस प्रकार के स्थान को ग्रहण करने का लालच करेगा।

1886 मे लोक सेवा आयोग को अपने प्रत्युत्तरो म वी० एन० माडलिक, फिरोजशाह मेहता और बी० जी० तिलक ने समान काय के लिए समान वेतन सिद्धात', की वकालत की।[105] इसके उपरात 1898 मे काग्रेस के सभापति ए० एम० बोस न और जी० के० गोखले ने वेतनो के सबध म भारतीय और यूरोपीयो म किसी भी प्रकार का भेदभाव बरतने पर तीव्र आपत्ति की।[106] दूसरी ओर अमत बाजार पत्रिका' 'हिंदू', 'स्वदशमित्रन', 'केसरी', तथा अय अनक ने खुले आम तया दढतापूवक भारतीयो को कम वेतन देने की वकालत की। उनका तक था कि इस प्रकार के त्याग के बिना आर्थिक आधारो पर प्रशासन के भारतीयकरण का राष्ट्रवादियो का सारा मामला ही व्यय सिद्ध हो जाएगा। इस

सदभ मे 'अमत बाजार पत्रिका' द्वारा अपनाई गई स्थिति का स्वय उसी के शब्दो म अध्ययन अपने आप मे पर्याप्त रोचक है। इस पत्रिका ने नववर दिसवर 1886 की अवधि मे प्रकाशित सपादकीय लेखमाला मे भारतीयो को यह सुझाव स्वीकार करने की सलाह दत हुए लिखा कि जो प्रत्याशी भारत मे हुई प्रतियोगी परीक्षाओ मे सफल होते हैं, उन्हें नियमित वेतन का 2/3 भाग ग्रहण करन को प्रस्तुत होना चाहिए। अपने 18 नववर 1886 के अक म इस पत्रिका न लिखा यदि हम यूरापीय लोगो के साथ समान वतन पाने के लिए झगडते ह तो इस सबध मे सरकार द्वारा सेवाओ के भारतीयकरण के उद्देश्य को ही हम समाप्त कर देते है। इस समय प्रश्न सही अथवा गलत के बीच चुनाव का नही। प्रत्युत हम 'भारतीयकरण' लेना है अथवा नही इसके बीच चुनाव का है। अपन 9 और 16 दिसवर के अको मे इस तक को सशक्त वाणी मे प्रस्तुत करते हुए इस पत्रिका ने आगे चलकर लिखा सत्य यह है कि यदि भारतीय अपेक्षाकृत कम वेतन लेकर क्षमता तथा कायकुशलता का प्रदशन करेंगे तो इससे परोक्ष रूप से सरकार पर प्रशासनिक अधिकारियो के वेतनो म कमी करने का दवाव पडेगा। कम वेतन पाने वाले भारतीय कमचारियो को सम्मान और लोक प्रतिष्ठा से हाथ धोना पडेगा, इस आपत्ति का उत्तर दत हुए पत्रिका ने जो लिखा वह एक ओर तो अकाल प्रौढ विचार है, और दूसरी ओर सपादक के मन म व्यापक रूप से उदार प्रजातात्रिक विचारो के गहरी जड पकडे होन का प्रमाण है। पत्रिका न लिखा

> हम यह अपन मन म भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि अधिकारियो म सम्मान की प्रवत्ति के जन्मदाता देश के विदेशी शासक है। कानून और व्यवस्था को वनाए रखने के लिए यह आवश्यक नही कि अधिकारियो को इतना अधिक अनुचित रूप से आदर-सम्मान दिया जाए, जितना कि भारत म दिया जाता है। सरकार न यह सब जानबूझकर इसलिए किया है ताकि ये अधिकारी जनता की पहुच के बाहर हो जाए। निरकुश सरकार का अपन कमचारियो को जनता पर निरकुश शासन के लिए निरकुश शक्तिया देनी ही होती हैं। हम प्रजाजनो के मान सम्मान तथा स्वतत्र चरित्र की बलि चढाकर अधिकारियो को ऊपर उठाना ही सरकार की नीति है। सरकारी कमचारियो क लिए सम्मान प्राप्ति की वात करना स्पष्टत देशद्रोह है। हमे अपनी सारी शक्तिया कमचारियो को नीचे लाने म और जनता को थोडा ऊपर उठान म खच करनी चाहिए।

इसी प्रकार 'हिंदू' ने अपने 15 जुलाई 1886 के अक म यह आशावादी दढ मत व्यक्त किया कि शिक्षित भारतीय भाडे क टटटू यूरोपीय द्वारा माग गए वेतन की अपेक्षा घाटे वेतन पर ही अपन देश तथा अपने देशवासियो के लिए काम करना स्वीकार कर लेंगे। उसन भारतीयो से विदेशियो के समान वतन पाने की आत्महत्या जैसी माग को छोडन का अनुरोध किया।[107] 25 मई 1887 के अक म इस पत्र ने फिर लिखा कि अगरेजो का मिलने वाले जिन वतनो को धन का अपव्यय कहकर हम उनकी निंदा करत आ रहे हैं उन्हीं वेतनो की देशवासियो द्वारा अपन लिए माग करना विवेकशून्य है, देशानुराग विरोधी कृत्य है।[108] इसी प्रकार 1886 के लोक सेवा आयोग के समक्ष अपन साक्ष्य म

अनेक राष्ट्रवादी नेताओ ने या तो कहा कि भारतीयो को यूरोपीयो को मिलने वाले वेतनो से कम वेतन मिलना चाहिए[109], या उन्होने एक मिला जुला सुझाव रखा कि एक हजार प्रतिमास के वेतन तक तो यूरोपीयो और भारतीयो के वेतन मे समानता रहनी चाहिए। इस राशि से ऊपर के वेतनो मे भारतीयो को कम मिलना चाहिए।[110] 1898 मे विलबी कमीशन के समक्ष अपना साक्ष्य देते सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने कदाचित अपने साथी मित्रो के कटु प्रहारो से बचने के लिए इस दृष्टिकोण को स्पष्ट कहने की अपेक्षा उसे मृदु भाषा मे प्रस्तुत किया। 'जहा कही किसी पद के लिए योग्य भारतीय उपलब्ध है वहा उसकी नियुक्ति अवश्य ही करनी चाहिए', इस सिद्धात का प्रतिपादन करते हुए उन्होने सुझाव दिया कि यदि किसी पद के लिए अपेक्षित योग्यताओ के मूल्य का स्थानीय बाजारी मूल्य के सदर्भ मे परीक्षण किया जाए और तदनुरूप वेतन का निर्धारण किया जाए तो इसमे सरकारी खर्चे मे उल्लेखनीय बचत हो सकती है।[111] इसी प्रकार विलबी कमीशन के समक्ष अपने साक्ष्य मे दादाभाई नौरोजी ने अभियोग स्वीकार किया कि भारत का प्रशासन भारतीयो के हाथ मे होना चाहिए और उन भारतीयो को स्थानीय परिस्थितियो के अनुरूप वेतन मिलना चाहिए। उन्होने दावा किया कि योग्यता के स्तर के वही बने रहने पर स्वय सरकार के अपने ही तखमीने के अनुसार कम से कम 1/3 भाग की सरकारी खर्चे मे बचत होगी।[112]

सरकारी सेवाओ के भारतीयकरण के सिवाय भारतीय नेताओ ने उल्लेखनीय परिमाण मे सरकारी खर्चों मे कटौती करने के लिए कोई अन्य ठोस सुझाव नही दिया। उन्होने असैनिक प्रशासन के खर्चो मे कटौती के लिए प्राय अस्पष्ट और सामान्य माग प्रस्तुत करने तक ही अपने को सीमित रखा। उनके द्वारा कटौती के लिए सुझाए गए उपायो मे अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण कुछ उपाय जो 1880 की अवधि मे ही सुझाए गए थे, निम्नलिखित हैं

> उनके मत मे उच्च सरकारी अधिकारियो को दिए जा रहे वेतनो मे कटौती करके प्रशासनिक व्ययो मे वास्तविक बचत की जा सकती है। उन्होने घोषणा की कि इकरारनामे के अतर्गत असैनिक प्रशासन के अधिकारियो जिनमे अधिकाश यूरोपीय है तथा अन्य उच्च पदस्थ अधिकारियो, उदाहरणार्थ, गवर्नर जनरल, प्रातो के गवर्नरो, भारत सरकार के तथा आयुक्तो के सचिवो के वेतन पेंशन तथा भत्ते गगनचुबी हैं, इनमे कटौती करने से सरकारी वित्तो को भारी लाभ हो सकता है और इस कटौती से इन वेतन भोगियो को भी कोई असुविधा नही होगी क्योकि अतीत मे इन लोगो के ऊचे वेतनो के लिए जिस देश निर्वासन तथा कष्टमय जीवन को न्यायसगत बताया जाता था और आज इग्लैंड और भारत मे यातायात साधनो के विकास के फलस्वरूप तथा भारत मे निवास की स्थितियो मे सुधार आ जाने के फलस्वरूप पहले की परिस्थितिया बदल चुकी हैं।[113]

भारतीय नेताओ ने इसके अतिरिक्त यह भी अनुभव किया कि कुछ ऊचे प्रशासनिक स्थान जैसे कि राजस्व बोर्ड, राजस्व आयोग का स्थान तथा कुछ मध्य-स्तरीय अधीक्षकों के स्थान निरर्थक ही नही प्रत्युत बिना काम के वेतन का भुगतान करने वाले थे,

अत उनकी माग थी कि इन स्थानो को समाप्त कर देना चाहिए।[114] उनमे से बहुतो ने तो इग्लड मे 'इडिया कौंसिल' (भारत परिपद) को ही समाप्त करने की माग की। उनकी इस माग के पीछे अन्य कुछ कारणो के साथ साथ परिपद का आर्थिक दृष्टि से महगा तथा उपयोगिता की दृष्टि से सर्वथा निरर्थक होना था।[115]

इसके साथ साथ कुछ राष्ट्रवादियो ने कटौती के नाम पर निचले स्तर के निम्न वेतन वाले स्थानो को समाप्त करने की अथवा उन स्थानो के वेतनो म कटौती करने की सरकारी प्रवृत्ति का विरोध किया।[116] *उनमे से बहुतों ने तो काफी आगे बढकर सरकार* से कभी कभी उसी जोश खरोश के साथ, जिस जोश खरोश के साथ व ऊचे वेतनो म कटौती की वकालत कर रहे थे, बहुत कम वेतन वाले अधीनस्थ प्रशासनिक तथा पुलिस-कर्मचारियो क वेतनो मे वृद्धि की वकालत की। इस प्रकार उदाहरण के रूप म, 1895 म काग्रेस के अध्यक्षीय भापण म सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने विनिमय क्षति पूर्ति भत्ते की आलोचना करते हुए सरकारी कार्यालयो म काम करने वाले क्लर्कों और चपडासियो की वेतन वद्धि के लिए तर्क प्रस्तुत किया। उन्होन शिकायत की कि बेचारे अभावग्रस्त सरकारी कर्मचारी अपने वेतन म बडी कठिनता म ही जीवन निर्वाह कर पाते हैं। विवश होकर जीविका जुटाने के लिए उन्ह गलत तरीके अपनाने पडते हैं। वे बहुत सालो से वही वेतन प्राप्त कर रह हैं।[117]

सरकारी खर्चों म कटौती का राष्ट्रवादी क्षेत्र मे व्यापक रूप से लोकप्रियता प्राप्त एक अन्य उपाय केंद्रीय तथा प्रातीय सरकारो का प्रतिवप गर्मी के महीनो म प्राय अप्रैल से अक्तूबर तक पर्वतीय प्रदेशो म जाना तथा वहा से वापस लौटना था। यद्यपि इस उपाय को अपनाने के फलस्वरूप रुपया-पैसा के रूप मे होने वाली बचत विशेष उल्लेखनीय नही थी तथापि इस उपाय को पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त हुई। वस्तुत भारतीयो न इस माग को मनवाने के लिए दो बार छोटे मोटे आदोलन किए। प्रथम, 1886-7 की अवधि म भारत सरकार द्वारा वित्त समिति की नियुक्ति ने भारतीय राजनीति मे व्ययो मे कटौती को एक सजीव विषय बना दिया और पुन जब भयकर अकाल न देश को अपनी लपट म ले लिया। उन्होंने विविध आर्थिक, राजनैतिक तथा प्रशासनिक आधारो पर सरकारो क पर्वतगमन की निंदा की।[118] यहा हम केवल उनकी आर्थिक आपत्तियो से प्रयोजन है और वे थी, प्रतिवर्ष पर्वतीय प्रदेशो म अल्पकालीन पडाव की विलासिता के लिए भारी और निरर्थक धन की व्यवस्था करनी पडती है और भारत जसे निर्धन देश के लिए यह सब जुटाना कठिन काय ही है।[119] इस तर्क को कभी कभी तो और अधिक प्रबलता से प्रस्तुत किया गया। उदाहरणार्थ, 'बिहार हेराल्ड' न अपने 20 जुलाई 1886 के अक म टिप्पणी की कि पहाडो पर सरकारी अधिकारियो का जीवन मात्र प्रमोदमना और मौजो का जीवन है। इस पर होन वाले भारी खर्च की पूर्ति बेचारे करदाताओ के जीवन रक्त को चूसकर ही की जाती है।[120] कुछेक भारतीय नेताओ ने इस व्यवस्था के तार्किक दृष्टि स असगत होने की भी चर्चा की। उनके अनुसार ब्रिटिश अधिकारियो को इस अनुमान तथा आवश्यकता के सन्दर्भ म ही ऊचे वेतन दिए जाते हैं कि इन बेचारो को भारत की गर्म गर्मी म काम करना पडता है। फिर गर्मियो के महीनो म उन्हें पर्वतीय प्रदेशो म जाने के लिए

नागरिको को विपुल परिमाण मे नौकरी के अवसर जुट पाते हैं, अत ब्रिटिश सरकार को इस सर्वोच्चता का मूल्य चुकाने के लिए और भारत सरकार के साधारण, सामान्य व्ययो के एक भाग का भुगतान करने के लिए सहमत होना ही चाहिए।[133]

सैन्य व्यय म योगदान करने के अतिरिक्त कुछ एक भारतीय नेताओ ने इस मद म दो महत्वपूर्ण तथा उपयोगी सुझाव रखे। प्रथम, भारत म सभी प्रकार की सेवाओ मे नियुक्त यूरोपियो पर होने वाले व्यय का ब्रिटेन को अशदान ही नही प्रत्युत सारे के सारे व्यय का ही भुगतान करना चाहिए क्योकि भारत सरकार ने किसी भी रूप म स्पष्टतया और अनिवार्यतया भारत मे ब्रिटिश सर्वोच्चता को सुरक्षित बनाए रखने के लिए ही इनकी नियुक्ति की है।[134] द्वितीय, ब्रिटेन को भारत सरकार के गह प्रभारो के तथा इगलड म हुए भारत सरकार के व्ययो के न्यायोचित भाग का योगदान करना चाहिए।[135]

ब्रिटेन के भारतीय व्ययो म योगदान करने को सहमत होने का एक परोक्ष सभावित लाभ भारतीय नेताओ की दूर दृष्टि के अनुसार यह था कि इसम ब्रिटेन की ससद और वहा की जनता भारतीय वित्तो के प्रति अधिक गहरी रुचि और अधिक समीक्षापरक दृष्टि अपनाएगी क्योकि इसस उनकी अपनी जेब ही प्रभावित होगी।[136]

बिलबी कमीशन न 1900 म अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। यह कमीशन कुल मिलाकर ब्रिटेन और भारत के मध्य प्रचलित वित्तीय सबधो से सतुष्ट था। अत उसने ब्रिटिश कोष मे से भारतीय कोष को साधारण सी ही राहत देने की सिफारिश की। दादाभाई नौरोजी, विलियम विडरबन तथा डब्ल्यू० एस० केन, जो कमीशन के सदस्य भी थे, कमीशन के बहुमत म असहमत थे तथा उन्होने भारतीय दृष्टिकोण को प्रति बिंबित करने वाला अपना अल्पमतीय प्रतिवेदन पृथक रूप से ही प्रस्तुत किया।[137] भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस न जहा बिलबी कमीशन द्वारा प्रतिभात ब्रिटिश अशदान को कृतज्ञता पूर्वक स्वीकार कर लिया, वहा बहुत सारे अन्य सदस्यो ने कमीशन के निष्कर्षों के प्रति असतोष प्रकट किया।[138] उनका विचार था कि यह योगदान थोडी असुविधाजनक प्रकृति का है और इसे भारत क प्रति किए गए न्याय की एक छोटी सी किस्त ही समझना चाहिए। दूसरी ओर उन्होने अल्पमतीय प्रतिवेदन का बडे ही उत्साह के साथ स्वागत किया।[139]

कुशल क्षेम व्यय

यद्यपि भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने भले ही सरकारी व्ययो म कटौती के लिए निरतर आन्दोलन किया तथापि वे सिद्धात रूप म सभी प्रकार के व्ययो म वृद्धि के विरुद्ध नहा थे। दूसरे शब्दो म उनका दृष्टिकोण किसी भी रूप म सब प्रकार स कराधान के न्यूनतम तथा व्ययो क न्यूनतम करने के सिद्धात तक सीमित नहीं था। इसके सर्वथा विपरीत जहा उन्होने सेना असैनिक प्रशासन तथा रेलो पर होने वाले खर्चों को अनावश्यक, निरर्थक तथा अत्यधिक महगा मानते हुए उनम कटौती के लिए आन्दोलन किया वहा उन्होने राज्य की विकासपरक तथा क्षेम-कल्याणकारक मानी जाने वाली गतिविधिया जैस कि प्राथमिक माध्यमिक तथा तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था औद्योगिक तथा कृषि-सबधी उन्नति

कृषि बकों का विकास, सफाई और सावजनिक स्वास्थ्य, लोकप्रिय तथा कुशल पुलिस-प्रणाली तथा न्याय प्रशासन के लिए व्ययो मे वृद्धि, का न केवल स्वागत किया प्रत्युत उसके लिए अनुरोध किया और दबाव तक डाला। वास्तव म भारतीय नेताओ द्वारा बचतो की वाछित दिशाओ के अध्ययन के उपरात तथा उनके द्वारा बचतो की अवाछित दिशाओ की समीक्षा के उपरात यह रोचक तथ्य सिद्ध हो जाता है कि सरकारी खर्चो के समुचित वितरण और उसके क्षेत्र की समस्या के सबध मे राष्ट्रवादियो की समझ सचमुच ही प्रशसनीय थी।

सामान्यीकरण के स्तर पर राष्ट्रवादी नेताओ ने देश की सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक प्रगति को द्रुतगामी बनाने के लिए सरकारी वित्तो के उपयोग की सभावनाओ को पूर्ण रूप से स्वीकार किया। उन्होने इस सबध मे कहा कि राज्य की पुलिस और सेना के प्रयोजनो के लिए किए जा रहे व्ययो के मुकाबले भारत सरकार द्वारा जनता के प्रत्यक्ष हितो के अथवा उनके नैतिक और भौतिक विकास के कार्यो पर वास्तव म किए जाने वाले खच की राशि साधारण तथा तुच्छ थी। अत उन्होने माग की कि सरकार को इस दिशा मे अधिक खच करना चाहिए और जब कभी कटौती की छुरी चलानी पडे तो उसका उपयोग राज्य के अनावश्यक खर्चो मे कटौती के लिए किया जाना चाहिए, आवश्यक खर्चों के लिए उसका प्रयोग कदापि नही करना चाहिए। 1886 7 के आर्थिक सकट से उभरने के लिए कटौती के उपायों की एक सूची प्रस्तुत करते हुए जी० वी० जोशी ने आवश्यक तथा उपयोगी खर्चो को समाप्त न करने की सरकार को चेतावनी दी क्योकि इसका अनिवाय दुष्परिणाम देश के विकास का अवरुद्ध अथवा पराङमुख होना था। उन्होंने बचत के लिए एक सिद्धात प्रस्तुत किया जिस भी क्षेत्र मे बचत की योजना बनाई जाए वहा यह अवश्य देखना चाहिए कि उससे स्थाई तथा उपयोगी रूप से कुशलता तथा प्रगति पर किसी प्रकार से बुरा प्रभाव तो नही पडता।[110] बाद मे 1888 म उन्होने इडियन पोलिटिकल ऐसोसिएशन और लेखको पर लगाए जा रहे इस अभियोग मे उनका बचाव किया कि वे वास्तव मे ही उपयोगी और आवश्यक खर्चो म भी कटौती चाहते हैं और दावा किया कि वे तो उलटे तकनीकी शिक्षा न्याय प्रशासन पर खर्चों आदि म वृद्धि की माग करते आ रहे हैं। उन्होने दृढतापूवक कहा कि लोकमत के व्याख्याता निरतर लबे समय से जिस बात पर दबाव डालते आ रहे हैं, वह इस प्रकार से है

> सरकार को उन खर्चों मे कटौती करनी चाहिए जिन्हे अनुभव और विवेक ने जनता के धन का निरथक अनावश्यक और धूततापूण अपव्यय सिद्ध कर दिया है। [illegible] सिता वाले बडे बडे भवन बनवाना पवतीय प्रदेशो म [illegible], [illegible] योग्यता वाले अथवा अधिक योग्यता वाले भारतीय प्रत्याशियो के सुलभ [illegible] पर भी [illegible] यूरोपीय लोगो को नियुक्त करना सवथा निरथक व्यय है। [illegible] म अनाव[illegible] तरी करना तथा गृह प्रभारों मे अनुचित वृद्धि [illegible] के 'वैधानिक सशोधन' पर, दूसरे [illegible] की सीमा म [illegible] किए जाने वाले व्यय धूततापूर्ण है।[111]

1895 म इपीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल म [illegible]

शिकायत की कि सेना और नगर प्रशासन के अत्यधिक ऊचे व्ययो की एक बहुत बडी बुराई यह थी कि शिक्षा और पुलिस सुधार जसे अत्यत आवश्यक प्रयोजनो के लिए भी अपेक्षित राशि सुलभ नही हो पाती थी।[112] 1895 म बबई के बजट पर अपने सवप्रथम भाषण मे ही बी० जी० तिलक ने सरकार को लताडते हुए कहा कि 1870 स सरकार ने 5½ करोड रुपये का अतिरिक्त राजस्व इकट्ठा करने पर भी राज्य के भौतिक विकास पर कठिनता से कुछ लाख रुपये ही खच किए है। उन्होने निर्देश किया कि जहा देश को औद्योगिक, तकनीकी अथवा उदार शिक्षा, ग्रामो म सफाई, सडकें और नहरें आदि लोकोपयोगी कार्यों के लिए अधिक धन की आवश्यकता थी[113] उस दिशा मे खच न करके अतिरिक्त राजस्व की उगाही राशि को विविध प्रशासकीय विभागो पर अनावश्यक रूप से खच कर दिया गया है। 1896 के बजट पर बोलते हुए उन्होने विशेष रूप स सरकार का ध्यान इस तथ्य की ओर खीचा कि सरकारी और गैरसरकारी क्षेत्रो के दृष्टिकोण म मतभेद का प्रमुख विषय खर्चों की दिशाए हैं[114] इसी प्रकार 1897 मे विलबी कमीशन के सामने अपना साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए डी० ई० वाचा ने सुस्पष्ट रूप से यह सिफारिश की कि उत्पादक प्रकृति के असैनिक व्यय अपनी पर्याप्त मात्रा म सदैव वाछनीय रहे हैं। इस कथन के उपरात उन्होने उत्पादक प्रकृति के व्यय का अत्यत वज्ञानिक ढग से विश्लेषण प्रस्तुत किया। करदाता को बदले मे शिक्षा, न्यायपूर्ण अधिक कुशल प्रशासन, ग्राम तथा नगरो की अपेक्षाकृत अधिक अच्छी सफाई, लोकहित के अन्य दूसरे काय—जिनसे प्रात के ससाधनो और जनता की समद्धि मे योगदान मिलता है—जिस व्यय से हो पाते हैं, वह 'उत्पादक प्रकृति का व्यय' है।[115]

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने, जो वर्षों से सामान्य तथा तकनीकी शिक्षा के लिए, न्याय प्रशासन की व्यवस्था आदि के लिए बजट म अधिक व्यवस्था की माग करती आ रही थी, 1897 मे अपनी मागो को अधिक व्यवस्थित रूप दिया तथा सरकार से अनुरोध किया कि सेना तथा अन्य इस प्रकार की मदो मे होने वाले अनुत्पादक खर्चों को घटाकर बची राशि के बडे भाग का *जनता की प्रगति और सुख समद्धि के उन्नयन म सदुपयोग करना* चाहिए।[116] अत मे हम जी० के० गोखले के विचारो पर ध्यान देना चाहिए। उन्होने सिचाई कार्यों के व्ययो म वद्धि पुलिस सेना म सुधार, विदेशो म औद्योगिक शिक्षा के लिए राजकीय छात्रवत्तियो की व्यवस्था, पूसा म कृषि महाविद्यालय की स्थापना और सहकारी ऋण-समितियो को प्रोत्साहन देने जैसे प्रस्तावित सरकारी उपायो का पूर्ण समथन किया तथा 1904 के बजट-भाषण मे उन्होने यह निर्देश किया कि इन उपायो तथा इन जैसे लोकहित कारक उपायो के लिए विपुल धनराशि अपेक्षित है। इसके साथ उनका यह भी दढ मत था कि लोक कल्याण के इन कार्यों पर बढे हुए व्ययो की न केवल शिकायत ही नही की जाएगी प्रत्युत देश भर म उसके प्रति ईमानदारी म गतोष और कृतज्ञता की भावना अभिव्यक्त की जाएगी।[117]

इस सबध म दो चुने वर्षों म कुछ अपने लोक कल्याण के विभागो पर भारत सरकार द्वारा खच की गई राशियो का अध्ययन भी पर्याप्त रोचक होगा[118]

	1885	1898
शिक्षा	1 4 करोड	1 37 करोड
विज्ञान विभाग	40 करोड	45 करोड
डाक्टरी और जन स्वास्थ्य	69 ,,	1 53 ,,
कानून और न्याय	2 77 ,	3 43 ,,
सिचाई	79 ,,	2 ,, (वास्तविक राजस्व)
पुलिस	2 5 ,	3 8 ,,

लोकहित के किसी भी अन्याय क्षेत्र की अपेक्षा भारतीय नेता शिक्षा को सर्वाधिक महत्व देते हुए उसके लिए पर्याप्त वित्त की व्यवस्था चाहते थे। इसका कारण उनका यह सुप्रसिद्ध सिद्धात था कि आधुनिक शिक्षा राष्ट्रीयतावाद को पुनजन्म देने के प्रमुख कारणो मे सबसे पहला है। इस विश्वास को स्वय वर्षो से सरकारी प्रवक्ता पनपाते तथा विकसित करते आ रहे थे। सवप्रथम राष्ट्रवादी नेताओ ने शिक्षा पर सामान्य रूप से तथा उच्च शिक्षा पर विशेष रूप से खर्चों मे कटौती के प्रयासो का विरोध किया।[149] यहा यह देखना भी रुचिवर्धक होगा कि उच्च शिक्षा पर किसी प्रकार के भी प्रतिबंध अथवा उस पर होने वाले व्यय मे किसी प्रकार की कटौती के प्रबलतम मुखर विरोधी फिरोजशाह मेहता ने सरकार द्वारा भारत म उच्च शिक्षा के प्रसार मे किसी प्रकार की बाधा के प्रयास को नव शिक्षित भारतीयो के प्रति शासको का ईर्ष्याभाव बताया। उन्होंने टिप्पणी करते हुए कहा, प्रजाजनो को शासको के स्तर पर उन्नत करने की बात करना अपने म बडा मोहक लगता है परतु जब प्रजा सरकार पर दबाव डालने लगती है, मानव स्वभाव की सहज दुबलता के कारण उस समय प्रबल प्रवृत्ति यह होती है कि प्रजा को पीछे धकेल दिया जाए।[150] इसी प्रकार वर्षो तक और लगभग निरतर ही भारतीय नेता शिक्षा पर सरकारी खर्च मे व्यापक वृद्धि के लिए दबाव डालते रहे। उदाहरणार्थ, यह एक ऐसी माग थी कि जिसे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने 1888 से आगे धार्मिक माग का रूप दे दिया था।[151] 1893 मे लाहौर अधिवेशन मे काग्रेस ने सरकारी स्कूलो और कालेजो मे निर्धन छात्रो की फीस मे रियायत अथवा माफी देने की माग की।[152] इसी प्रकार 1895 में उसने शिक्षा सस्थाओ मे फीस बढाने के राज्य द्वारा पूर्णत अथवा अशत समर्थित प्रस्ताव का विरोध किया।[153] 1904 म काग्रेस ने नि शुल्क और अनिवार्य शिक्षा की दिशा म सरकार द्वारा पथ प्रदर्शन करने की क्रातिकारी माग की।[154] बहुत सारे दूसरे राष्ट्रवादी नेताओ न शिक्षा के लिए अधिक धनराशि निर्धारित करने की माग की तथा साथ ही साथ अन्य देशो द्वारा शिक्षा पर किए जाने वाले व्ययो के मुकाबले तथा स्वय भारत सरकार द्वारा सेना पर किए जाने वाले व्ययो के मुकाबले भारत म शिक्षा पर होने वाले व्यय की तुच्छ राशि की आलोचना की।[155]

शिक्षा की ओर विशेषतया प्राथमिक शिक्षा को अथवा जन साधारण को शिक्षित करने के लक्ष्य को अपने सारे जीवन का लक्ष्य बनाने वाले जी० के० गोखले के विचारो का सक्षिप्त विवेचन अनुचित न होगा। उन्होन अपन सावजनिक जीवन के प्रारभ मे ही

इस उद्देश्य को अपनाया और 1891 के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन मे शिक्षा के लिए निर्धारित ससाधनो की स्वल्पता के लिए निंदा और शिकायत की। उन्होंने निर्देश किया कि यूरोप के सर्वाधिक पिछडे देशो मे भी शिक्षा पर किए जाने वाली व्यय की राशि उन देशो के सरकारी राजस्वो का 6 5 प्रतिशत है जबकि भारत मे शिक्षा पर व्यय की जाने वाली राशि का अनुपात केवल एक प्रतिशत है। भारत मे वास्तव मे ही शिक्षा पर व्यय होने वाली राशि 20 वर्ष पूर्व खर्च होने वाली राशि से भी कम थी, जबकि उसका अनुपात 1 4 प्रतिशत था।[156] 1897 मे विलबी कमीशन के समक्ष उन्होने शिक्षा पर व्यय की तुच्छता को भारतीय व्यय के मस्तक पर एक बडा भारी कलक बताया और कहा ग्रेट ब्रिटन मे शिक्षा पर बढते हुए व्यय के मुकाबले भारत मे शिक्षा पर हो रहे व्ययो की तुलना करने पर सरकार द्वारा पवित्र कार्य की उपेक्षा करने के लिए जितने भी अधिक कठोर शब्दो का प्रयोग किया जाए, थोडा ही है। ब्रिटन और भारत मे शिक्षा पर किए गए व्यय के अतर को दिखाते हुए उन्होने टिप्पणी की कि सगे बेटो और सौतेले बेटो के प्रति व्यवहार मे एक बहुत बडा अतर होता है। उन्होने देश मे प्राथमिक शिक्षा की सुविधाओ के नितात अभाव के लिए प्रशासन को विशेष रूप से ही आडे हाथो लिया।[157] 1901 मे अपने बजट भाषण मे बबे लेजिस्लेटिव कासिल मे उन्होने अपने विचारो को दढतापूर्वक दोहराया।[158] इपीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल मे अपने प्रसिद्ध वार्षिक बजट भाषणो मे गोखले ने शिक्षा के सामान्य रूप मे और प्राथमिक शिक्षा के विशेष रूप से प्रसार का निरतर तथा सशक्त शब्दो मे समर्थन किया। इस प्रकार 25 वर्षों तक सर्वसाधारण की शिक्षा की योजना के लिए वकालत करते रहने के उपरात 1903 मे उन्होने कहा 'देश की तात्कालिक और अनिवार्य आवश्यकता है, सर्वप्रथम जनता के लिए प्राथमिक विद्यालय। शिक्षा के प्रसार के प्रति अपने अत्यधिक उत्साह के कारण वे स्वय अपनी मान्यताओ के तथा अवशिष्ट अन्यान्य नेताओ के प्रशासन के और अधिक विकेंद्रीकरण के विश्वास के भी विपरीत चले गए। उन्होने माग की कि शिक्षा को राज्य के विषयो की सूची मे हटाकर केंद्रीय विषय बना देना चाहिए ताकि देश की सर्वोच्च सरकार जिस प्रकार और जितना ध्यान सैन्य सेवाओ तथा रेल पथ प्रसार जैसे अपनी सूची के विषयो पर देती है, उतना ही महत्व और ध्यान देश की जनता की शिक्षा पर दे सके। वस्तुत शिक्षा के लिए गोखले के मन मे इतना अनुराग था कि उन्होने राष्ट्रवादियो द्वारा समर्थित एक अन्य सिद्धात का भी अतिक्रमण कर लिया। उन्होने भारतीय विश्वविद्यालयो मे योग्य अग्रेजो को अध्यापक बनने के लिए आकृष्ट करने के लिए उन्हे ऊचे ऊचे वेतन देने की वकालत की।[159] इस सबध मे उनके द्वारा निर्दिष्ट सुस्पष्ट उपयोगी प्रस्ताव यह था कि जब कभी बजट मे बचत हो उसका उपयोग देश के शैक्षिक तथा औद्योगिक हितो के सवर्द्धन मे करना चाहिए।[160]

यहा यह उल्लेखनीय है कि प्राथमिक और तकनीकी शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा मे जहा भारतीय नेता सरकार से बहुत आगे बढ गए, वहा उन्होने सरकार द्वारा उच्चतर ऊची शिक्षा के प्रसार को बाधित करने की दिशा मे प्राथमिक शिक्षा को एक बहाने के रूप मे उपयोग करने पर आपत्ति की। उनका कथन था देश की राजनीति,

सामाजिक और आर्थिक उन्नति के लिए उच्च शिक्षा की भी समान रूप से आवश्यकता थी और सत्य तो यह कि उसके बिना शिक्षा के अन्य दोनों क्षेत्रों में भी किसी प्रकार की प्रगति नहीं की जा सकती।[161]

भारतीय नेता शिक्षा के अतिरिक्त देश के औद्योगीकरण,[16] सिंचाई[163] कृषि विकास, ग्रामीण ऋणग्रस्तता से मुक्ति के लिए कृषि बैंकों की स्थापना[164] स्वास्थ्य तथा सफाई-सुविधाओं,[165] तथा प्रशासन से न्यायाधिकरण को पृथक करने[166] तथा पुलिस पद्धति में सुधार करने[167] जैसे प्रशासनिक सुधारों के लिए भी *सरकारी बजट में से अधिक धन के* निर्धारण के इच्छुक थे।

सरकारी अधिकारियों ने एक ही साथ दो परस्पर विरोधी मांगों व्ययों और कराधान में कटौती करने तथा अपनी प्रिय लोक कल्याणपरक योजनाओं पर व्ययों को बढ़ाने, के लिए प्रायः ही राष्ट्रवादी नेताओं को फटकारा। उदाहरण के रूप में 1894 में वित्त सदस्य जेम्स वेस्टलैंड ने लाहौर में क्रिसमिस के अवसर पर इकट्ठे हुए राजनीति में रुचि रखने वाले भारतीय सभ्य महानुभावों (भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस) के मामले पर व्यंग्य आक्षेप करते हुए पूछा 'क्या हम आप ही सिखाएंगे कि भारत पर किस प्रकार शासन करें ? उन पर बरसते हुए उसने कहा कि वे एक ही साथ एक मद में खर्चों में *भारी कटौती करने और दूसरी मद में खर्चों में वृद्धि करने की अपनी सलाह और बुद्धि*-मत्ता को अपने पास ही रखें।[168]

राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा इस आलोचना का प्रत्युत्तर सीधा सादा परंतु निरुत्तर करने वाला था। आवश्यकता से अत्यधिक बढ़े हुए सैन्य व्ययों और प्रशासनिक व्यय में कटौती *करने से एक साथ ही कराधान में कमी और लोकहित के व्ययों में वृद्धि की जा सकती है।* इस प्रकार वेस्टलैंड की फटकार का उसी तीखी और व्यंग्यपूर्ण वाणी में उत्तर देते हुए फिरोजशाह मेहता ने इस तथ्य को मानने से इनकार कर दिया कि भारतीय नेता इस प्रकार के सुझाव देने में सर्वथा तर्कबुद्धि रहित और विवेकहीन थे हालांकि वे विश्व की विशिष्टतम सेवा के सदस्यों का मुकाबला तो नहीं कर सकते थे। इसके उपरांत उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कि यह समझना कठिन नहीं कि यदि सही दिशा में बचत की जाए तो राजस्व में कमी करना तथा अन्य दिशा में व्यय को बढ़ाना संभव है। उन्होंने कराधान और व्ययों के संबंध में राष्ट्रवादियों की समग्र स्थिति को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया

> यदि आप सैन्य व्यय में उचित कटौती कर सकें यदि आप व्ययसाध्य, महंगे अभियानों को न अपनाने की नीति पर स्थिर रह सकें, *यदि आप विपुल सेना और घरेलू* तामझामों में संतुलन ला सकें, यदि आप वेतनों और पेंशनों के जटिल तथा कमरतोड़ भार को हलका करने के व्यावहारिक उपाय अपना सकें तो यह अनुमान सर्वथा निर्मूल और काल्पनिक नहीं होगा कि न्याय व्यवस्था में सुधार लाया जा सकता है पुलिस को अधिक सुदृढ़ बनाया जा सकता है, शिक्षा की अपेक्षाकृत अधिक व्यवस्थित और सुदृढ़ पद्धति को अपनाया जा सकता है, देश में लोक कल्याणकारी कार्यों और रेल पथों का जाल बिछाया जा सकता है, सफाई के व्यापक साधन अपनाए जा

हैं डाक तार को अपेक्षाकृत सस्ता बनाया जा सकता है, इतने पर भी थोडी आय वालो को कर भार म राहत दी जा सकती है, धरती पर लगान की दर कम करके किसानो का सुख चन की सास लेने का अवसर जुटाया जा सकता है और नमक कर मे भी कटौती की जा सकती है।[169]

ए० एम० बोस ने[170] 1898 मे और जी० के० गोखले ने 1902 तथा 1905 मे[171] इसी तक को दोहराया। इसके अतिरिक्त राष्ट्रवादियो के दृष्टिकोण तथा चिंतन का आधारभूत तत्व यही था कि बढते हुए सैन्य व्यय ही देश के अन्य सभी प्रकार के आतरिक सुधारो के माग की प्रधान बाधा थे।

कुछ भारतीय नताओ ने तो एक कदम और आगे बढकर यहा तक कह डाला कि यदि वतमान करो की आय के पूवापेक्षा अधिक बडे और व्यापक भाग को आतरिक सुधारो के उद्देश्यो के लिए खच किया जाए तो कराधान के चालू परिणाम को भी सहन किया जा सकता है।[17] विशिष्ट दूरदर्शी तथा प्रतिभाशाली जी० वी० जोशी महान्य ने तो उत्पादक प्रयोजना के लिए विशेष रूप से लगाए गए अतिरिक्त कराधान तक का समथन देने का वचन दिया। इस प्रकार उन्होंने भारतीयो से औद्योगिक प्रयासो के प्रोत्साहन के उद्देश्य स विशेष रूप से लगे नए करो का भार सहष उठाने का अनुरोध किया।[1 3] इसी प्रकार उन्होंने 1893 म व्यापक परिमाण म कृषि शिक्षा के कायक्रम को अपनाने की वकालत की भले ही इसके लिए विशेष कराधान द्वारा धन की व्यवस्था क्यो न करनी पडे।[174] जी० के० गोखले ने भी विलबी कमीशन के समक्ष कुछ कुछ इसी प्रकार का सुझाव रखत हुए कहा कि प्राथमिक शिक्षा के प्रसार के लिए स्थानीय सस्थाओ को विशेष कर लगाने का अधिकार दिया जाना चाहिए।[175] जी० सुब्रह्मण्य अय्यर ने भी कमीशन को सूचित किया कि शिक्षा के प्रसार के लिए वे करो म वृद्धि करने के भी समथक हैं।[1 6]

सरकारी कोश पर लोकप्रिय भारतीय नियत्रण

भारत सरकार की वित्तनीति की समीक्षा करत समय भारतीय नेता कठोरतापूवक तथा अनिवाय रूप से इस परिणाम पर पहुचे कि सरकारी वित्त पर भारतीयो के नियत्रण की लोकप्रिय माग सवथा उचित है। उनके विचार म यदि भारत म कराधान कमरतोड स्थिति म ऊचा और अधिक रह और व्यय निरथक तथा अनावश्यक हो तो इस सारी स्थिति के लिए स्पष्टतया उत्तरदायी कारणो म एक वतमान म वित्त पर नियत्रण रखन वाला सवधानिक तत्र है जो सतापजनक रूप स अपन कतव्य का निवाह करन म असफल रहा है। 1892 से पूव भारत की इपीरियल लजिस्लेटिव कौंसिल का प्रस्तुत हो बजट स किसी प्रकार का कोई सबध नहीं था। 1892 के इडियन कौंसिल अधिनियम के अधीन कौंसिल म बजट का विश्लेषण प्रस्तुत करना होता था। सदस्यो को उस पर अपन विचार प्रकट करन का अधिकार अवश्य था परन्तु उन्हे उस पर किसी प्रकार के प्रस्ताव रखन का अथवा कौंसिल म मतदान करन का कोई अधिकार नहीं था। भारतीय वित्त पर सर्वोच्च नियत्रण ब्रिटिश ससद का था। भारत सरकार ससद म विद्यमान भारत राज्य सचिव के माध्यम स ब्रिटिश ससद के प्रति ही उत्तरदायी थी।[177]

राष्ट्रवादी नेताओं ने वित्त नियंत्रण के प्रचलित तंत्र को सर्वथा दोषपूर्ण घोषित किया। उनका कथन था कि यह तंत्र सरकार के कार्यपालक अंगों की व्ययपरक और कराधानपरक प्रवृत्तियों पर प्रभावी नियंत्रण रखने में असफल सिद्ध हुआ है। यह तंत्र कमरतोड़ कराधान को रोकने में और देश के संसाधनों के निरर्थक, व्यय, अनुचित तथा अनुपयोगी खर्चों को रोकने में नितांत असफल रहा है, इसी प्रकार जी० के० गोखले ने विलबी कमीशन के समक्ष अपने साक्ष्य में निर्देश किया कि भारतीय वित्तों की प्रबंध व्यवस्था में भारतीय हितों पर भारत में ब्रिटिश सर्वोच्चता के हितों को एशिया में ब्रिटिश विस्तार को, ब्रिटिश की नागरिक और सैन्य सेवाओं को तथा ब्रिटिश वाणिज्य और पूंजी को प्राथमिकता दी जाती है। उन्होंने टिप्पणी करते हुए कहा

भारतीय कर-दाताओं के हितों को इन अन्य हितों के गौण बनाने की व्यापक चेष्टा से और भी अधिक आवश्यक हो जाता है कि भारतीय वित्तों के न्यायोचित तथा मितव्ययी प्रशासन के लिए सवैधानिक नियंत्रण तंत्र द्वारा उनकी सुरक्षा की पर्याप्त व्यवस्था की जानी उचित है। मुझे तो यह आशंका है कि हमारे देश के समान और किसी भी देश में वित्तों की सुरक्षा की ऐसी भ्रांतिपूर्ण व्यवस्था नहीं है।[1 9]

भारतीय नेताओं ने दृढ़तापूर्वक यह मत प्रकट किया कि वर्तमान संविधान के अंतर्गत भारतीय कर दाताओं के हितों की सर्वोच्च संरक्षक ब्रिटिश संसद समुचित रूप से और ईमानदारी से अपने कर्तव्य का निर्वाह करने में असफल रही है। सत्र के अंतिम समय में खाली बेंचों के सामने भारत के बजट को पेश किया जाता है और बिना किसी गंभीर विवाद, चिंतन और छानबीन के कुछ थके मांदे सदस्यों द्वारा इसे पारित कर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त दलीय स्थिति के कारण भारत सचिव को सुरक्षित और निश्चित बहुमत का विश्वास रहता है।[179] भारतीय नेताओं की शिकायत थी कि भारत में भी किसी प्रकार के आर्थिक नियंत्रण और संतुलन की व्यवस्था का अभाव था, इसके बदले स्वतः निर्मित अपव्यय पद्धति ही प्रचलित थी। भारत सरकार के वित्त विभाग को छोड़कर लगभग और सभी विभाग पूर्णतः खर्च करने वाले विभाग हैं।[180] इंपीरियल लैजिस्लेटिव कौंसिल का इस संबंध में अस्तित्व अवश्य है परंतु वित्तीय मामलों में यह सर्वथा अशक्त है। इसके सदस्य केवल भाषण दे सकते हैं वे किसी भी रूप में सरकार की निंदा नहीं कर सकते, यहां तक कि सरकार के प्रस्तावों में अपनी असहमति तक प्रकट नहीं कर सकते। फलतः बजट पर हुए विवाद या तो निर्जीव होते हैं या अधिक से अधिक पांडित्यपूर्ण होते हैं।[181]

राष्ट्रवादी नेताओं के अनुसार वित्तीय नियंत्रण के चालू तंत्र के असंतोषप्रद चरित्र का मूल कारण इस तंत्र में लोकप्रिय भारतीय तत्व का नितांत अभाव था। अतः 1891 की भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने दृढ़तापूर्वक कहा कि भारतीय लोगों की अत्यंत दरिद्रता के अन्याय कारणों में एक मूल और व्यापक कारण, भारतीयों के अपने ही देश के वित्तों पर नियंत्रण से तथा उनके प्रशासन में समुचित योगदान से उन्हें सर्वथा पृथक रखना था।[18]
इसी प्रकार 1901 में कांग्रेस के सभापतीय भाषण में डी० ई० वाचा ने कहा :
यह देश का दुर्भाग्य है कि देश के व्ययों और कराधान पर देशवासियों का या तन

अधिकार ही नही अन्यथा वे यह दिखा देते कि किस प्रकार न्यूनतम राजस्व से अधिकतम बचत और कुशलता उपलब्ध की जा सकती है।[183] आर० सी० दत्त ने अपने ग्रथ—'इकोनामिक हिस्टरी आफ इडिया इन दी विक्टोरियन एज'—मे अपने लोकवित्तो के तथा विलबी कमीशन की कार्यवाहियो के परीक्षण का निष्कर्ष इस शिकायत रूप मे निकाला—भारतीय प्रशासन मे इस लोकप्रिय भारतीय तत्व की अनुपस्थिति मे सभी कार्यरत प्रभाव विशुद्ध रूप मे भारतीय हितो से सर्वथा असबद्ध प्रयोजनो के लिए भारतीय राजस्व की बलि चढाकर खर्चो मे वृद्धि और कराधानो मे वृद्धि के लिए ही निरतर कार्य करते रहे हैं और करते रहेगे।[184]

रोग निदान मे उपचार भी निहित था। इग्लड मे नियत्रण तत्र को सुदृढ बनाने के सबध मे सुझाए गए उपचारो मे महत्वपूर्ण—ढीले ढाले ससदीय नियत्रण को अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी बनाने की आवश्यकता थी। इस सबध मे भारतीयो की सर्वाधिक माग देश की वित्तीय स्थिति की जाच पडताल करने तथा तत्सबधी प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के लिए प्रतिवर्ष हाऊस आफ कामन्स की एक प्रवर समिति नियुक्त करने की थी।[185] दूसरा प्रस्ताव भारतीय मामलो की समय-समय पर ससदीय जाच पडताल करने की 1858 से पूर्व की पद्धति को पुनर्जीवित करना था।[186] इनके अतिरिक्त 1897 मे जी० के० गोखले ने सुझाव दिया कि भारतीय मत का प्रतिनिधित्व करने के लिए भारत के प्रान्तो का ससद मे सीधा प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए।[187] इस सदर्भ मे एक अन्य राष्ट्रवादी प्रस्ताव यह था कि प्रान्तीय तथा इपीरियल लजिस्लेटिव कौंसिलो द्वारा निर्वाचित योग्य भारतीयो की पर्याप्त सख्या मे भारत सचिव की कौसिल मे प्रतिनिधि नियुक्त करना चाहिए।[188]

ये सारे के सारे उपचार अपनी प्रकृति मे केवल उपशामक ही थे। वित्तीय रोग के उपचार के लिए भारतीय नेताओ ने एक और अधिक महत्वपूर्ण माग पेश की। उनका कथन था कि सरकारी कोष को प्रत्यक्ष रूप मे भारतीयो के प्रभावी नियत्रण के अतर्गत लाया जाए। वित्त को सुव्यवस्थित रूप देने का राजस्व की वसूली मे वृद्धि का और जनता के हित मे तथा जनता की इच्छाओ के अनुकूल वित्त के व्यय का यह एकमात्र सुनिश्चित उपाय था। यह माग प्राय सामान्य रूप मे पेश की जाती थी जबकि इसने पूर्णत क्रातिकारी रूप लिया। इस प्रकार प्रथम भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस का सबोधित करते हुए दादाभाई नौरोजी ने जोर देते हुए कहा कराधान के साथ प्रतिनिधित्व अवश्य मिलना चाहिए। उन्होने घोषणा की कि हमारा प्रथम सुधार यह हो कि हम स्वय अपने पर कराधान करने की शक्ति मिले।[189]

इसी प्रकार अपने 16 सितबर 1886 के अक मे 'अमृत बाजार पत्रिका' ने साहसपूर्वक यह माग की कि देश के लोगो को अपने लिए कानून बनाने की, अपने करो के निर्धारण करो की तथा अपने वित्तो का व्यवस्थित करने की अनुमति अवश्यमेव मिलनी चाहिए। पत्रिका ने बडी स्पष्टता से लिखा भारत के लिए यह एक प्रकार का यह प्रशासन है और केवल इसी से भारत स्थाई रूप से इग्लैंड मे सलग्न हो सकता है। जुलाई 1902 मे 'हिन्दुस्तान रिव्यू' ने और 'कायस्थ समाचार' ने भी इसी प्रकार की स्वशासन की माग अपेक्षाकृत अधिक आत्मविश्वास पूर्ण स्वर मे की।[190] अन्य अनेक भारतीय नेताओ ने

परिषदा द्वारा किए गए किसी भी निणय को रद्द करने की विशिष्ट और अतिम शक्ति का इग्लड के हाथ मे होना, को भी सहष स्वीकार कर लिया।[199] यह पर्याप्त आश्चयजनक ही है कि जी० के० गोखले ने विलबी कमीशन के समक्ष इस सीमा तक अभिस्वीकार किया कि नीति सबधी बडे बडे प्रश्नो पर विचार विमश तथा उन पर निणय ठीक प्रकार स इग्लड म ही हो सकता है।[00] इस प्रकार भारतीय नेताओ ने अपनी शक्तिमत्ता से दूरगामी प्रभाव वाली माग को नपुसक बना दिया और साथ ही साथ स्पष्ट शब्दो म यह कहते हुए उस दबाव क ढग का रूप दे दिया कि उनके द्वारा सुझाए गए सुधारो का प्रधान प्रभाव यह नही होगा कि भारत में ब्रिटिश कायपालिका के अधिकार खडित अथवा दुबल पड जाएग। इसका प्रभाव तो पूण रूप से मात्र नैतिक होगा, क्योकि जब कभी गैर सरकारी सदस्य सरकार के विरुद्ध अथवा पक्ष मे मतदान करेंगे तो ब्रिटिश जनता को और अधिकारियो को भारत के लोकमत की सही स्थिति का सच्चा रूप देखन को मिल जाएगा।[01] इन नताओ की सरकारी वित्त पर वैधानिक नियत्रणा के अपने ही तर्कों म सकोच शीलता कदाचित् आशिक रूप स तो कडवी गोली को चीनी म लपेट कर प्रस्तुत करन की भावना से प्रेरित थी परतु मुख्य रूप से एक एक पग आग बढने के विश्वास की उपज थी।

सदर्भ

1 उदाहरणाथ देखिए नौरोजी, पावर्टी प० 59 222-4 और स्पीचज, प० 331 157 220 294 316 593 परिशिष्ट पृ० 39 43 50-1 181 भोलानाथ चद्र एम० एम० खड II (1873) प० 92 मालवाय स्पीचज, प० 248 राय पृ० पावर्टी 251 2 259-60 278 दत्त ई० एच० I प० XI XIII ई० एच० II प० XIX 613 स्पीचेज II पृ० 21 61 2 गोखले स्पीचज पृ० 15 एल० एम० घोष सी० पी० ए०, प० 759

2 नौरोजी पावर्टी पृ० 200

3 ममाना पूर्वोद्धत पृ० 316 और देखिए नौराजी पावर्टी पृ० 223-4 और स्पीचेज, पृ० 142, 316 परिशिष्ट पृ० 18 20 41 50 52

4 और देखिए ए० बी० पी० 18 जून 1885 24 दिस० 1896 1 जून 1900 इडियन स्पेक्टटर 5 जुलाई 1885 राय पावर्टी पृ० 251 3 ए० नदी इडियन पालिटिक्स पृ० 126 दत्त फमिस इन इडिया पृ० 100-01 ई० एच० I पृ० XII वाचा सा० पा० ए० पृ० 605

5 पा० महता स्पीचज पृ० 152 तथा देखिए पृ० 350 451 456-8

6 प्रासीडिग्ज आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बबै 1895 खड XXXIII प० 90

7 जोशी पूर्वोद्धत प० 220 तथा देखिए पृ० 199 200

8 नौरोजी स्पीचेज प० 361 और देखिए जी० सी० अय्यर विलबी कमीशन खड III प्रश्न 18567 18917 18963 19048 न्यू इडिया 18 सितंबर 1902

9 गोखले स्पीचेज प० 1168-9

10 वही प० 1156-7 तथा देखिए पृ० 1159

11 मालवीय स्पीचेज पृ० 219 तथा देखिए पृ० 276-81, 291

11 ए प्रस्ताव सख्या V तथा देखिए मालवीय स्पीचेज प० 279 नौराजी स्पीचज प० 124-49

12 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 447 52 इडियन स्पेक्टेटर ने तो इसस भी पूव 1883 मे अपने 24 जून के अक मे सरकार को सुझाव दिया था कि सरकार को अनावश्यक रूप से बजट को सतुलित करने अथात पहले आवश्यक खर्चों के लिए सकल्प कर लेने तथा पुन उन खर्चों की पूर्ति के लिए आवश्यक वित्तीय साधना की खोज करने की चेष्टा छोड देनी चाहिए बजट को सतुलित करने का एकमात्र उपयुक्त ढग यह है कि प्रथम हिसाब-खाते के साथ साथ कराधान का समीक्षा करनी चाहिए और यह देखना चाहिए कि कौन सा कर निधनो को किसी प्रकार का विशेष कष्ट दिए बिना सुविधा स उगाहा जा सकता है फिर उसके अनुरूप खर्चों की यवस्था करनी चाहिए (आर० एन० पी० बब 30 जून 1883) देश के यया और ससाधनो म सह सबध की यवस्था की माग करने वाले अय नेता एस० एन० बनर्जी स्पीचज III पृ० 13 गोखल स्पीचेज पृ० 1169 वाचा स्पीचज परिशिष्ट प० 32 एन० पी० चदावरकर सी० पी० ए० प 528 9 तथा आर० डी० नागरकर रिप० आई० एन० सी० 1894 प० 78 9 जोशी पूर्वोद्धत प० 207-08

13 प्रस्ताव स० VI

14 प्रस्ताव स० VI

15 प्रस्ताव सख्या III

16 प्रस्ताव सख्या IX, XII IX XIII VIII और III क्रमश

17 प्रस्ताव सख्या XIV III (ii) क्रमश

18 बगाली 2 जनवरी 1886 तथा देखिए बागल पूर्वोद्धत पृ० 86

19 जे पी० एस० एस० अक्तू० 1886 और जन० 1887 (खड IX सख्या 2 और 3) तथा बाबे प्रजीडसी एसोसिएशन का प्रथम वार्षिक प्रतिवदन क्रमश 1885 86 पूना सावजनिक सभा ने इस तक को दोहराते हुए बडे प्रबल तथा सशक्त ढग से एक अय ज्ञापन 6 माच 1894 को प्रस्तुत किया जे० पी० एस० एस० अप्रल 1894 (खड XVI सख्या 4)

19 ए रिपोर्ट आफ दि फाइनास कमेटी 1886 खड II प० 452

20 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 1 82 तथा पृ० 140 1 189 90 201 222 824 6

21 गोखले स्पीचेज प० 1169 और आगे वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 9 और आग तथा 31 2

22 दत्त स्पीचेज I प० 26, 36-7 इग्लड ऐंड इडिया, पृ० IX 137, 141 2 144-5 फैमिस इन इडिया प० XIV, XVI XVII ई० एच० II पृ० 612 और देखिए एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III पृ० 13 ज० यू० याज्ञिक एस० ए० स्वामिनाथ अय्यर, बी० एस० पतुलु गुप्त रिप० आई० एन० सी० 1885 पृ० 65 72 पी० मेहता स्पीचज प० 443 50 मालवीय स्पीचेज प० 219 21 248 52 276-81 285-302 पी० ए० चारलू एस० सी० पी० 1896 खड XXV पृ० 286 आर० एम० सयानी सी० पी० ए० पृ० 309 351 2 एन० जी० चन्दावरकर सी० पी० ए० पृ० 527 भारतीय समाचारपत्रो ने प्रत्यक उपलब्ध अवसर पर विशषतया नए कर लगाने के अवसर पर बढ़ते सरकारी खर्चों की आलोचना की तथा उन खर्चों में कटौती का समथन किया

23 नौरोजी स्पीचेज पृ० 147 361 परिशिष्ट पृ० 16-8 2९ 48 और देखिए पावर्टी

24 उदाहरण के लिए जी० वी० जोशी द्वारा 1886-7 में किया गया बजट का विश्लेषण

के वतमान खर्चों के प्रमुख कारण नीति सबधी गलतियो की तरह या तो दूर किए जा सकते हैं या निरीक्षण की कठिनाइयो के कारण इनकी व्यावहारिक शक्ति कम होती जा रही है (पूर्वोद्धृत पृ० 10) इस सबध मे राष्ट्रवादियो के दृष्टिकोण और सरकारी दृष्टिकोण के अतर का समझना दिलचस्प होगा उदाहरणाथ जान स्ट्रची के कथन को देखिए 'यह सत्य है कि अनुत्तरदायी लोगो के लिए यह दावा करना सरल है कि सरकारी खर्चों में बचत करने की बड़े पमाने पर सभावनाए हैं परतु मै निर्भीकता के साथ चुनौती देता हू कि प्रशासनिक आवश्यकताओ की वास्तविक जानकारी रखने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए यह सिद्ध करना आसान नही होगा कि नागरिक सेवा के लिए जितनी राशि खच की जा रही है उससे कही अधिक की आवश्यकता है (फाइनाशल स्टेटमट 1878) ई० बेरिंग ने 1883-4 के फाइनाशल स्टेटमट म अपनी राय प्रकट करत हुए लिखा भारत के वित्तो के लिए खतरा पदा करने वाले सभी खतरे, जिनमे युद्ध का खतरा भी शामिल है ऐसे कारणो से नियत्रित हैं जिन पर भारत सरकार का कोई नियत्रण नही (कडिका 121) इसी प्रकार एलगिन ने 1894 म घोषणा की कि भारत सरकार के वित्त की दुदशा के लिए उत्तरदायी कारणो पर हमारा कोई नियत्रण नही (स्पीचेज पृ० 50)

25 प्रस्ताव स० II

26 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट, पृ० 6 22 3 वही पृ० 361, 379 परिशिष्ट पृ० 26-30, जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1894 पृ० 76 बी० एन० सेन० रिप० आई० एन० 1895 पृ० 61 इसी तथ्य को प्रस्तुत करते हुए जे० मुदालियर ने कहा कि भारतीयो को हिसाब किताब ठीक रखने की ब्रिटिश क्षमता पर पूरा भरोसा है (वही पृ० 62)

27 वही परिशिष्ट पृ० 22 28 तथा वाचा विलबी कमीशन खड III 17316

28 इपीरियल गजटियर आफ इडिया (1908) खड IV पृ० 202 मैंने गजटियर म दी गई तालिका से ही प्रतिशत की सगणना की है ग्रथो के अन्य आकड निम्नलिखित लेखको के निम्नलिखित ग्रथो म दिए गए हैं सी० एन० वकील फाइनाशल डिवलपमट आफ माडन इडिया पृ० 547 8, के० टी० शाह सिक्सटी ईयस आफ इडियन फाइनास पृ० 72 3 और पी जे० थामस दि ग्रोथ आफ फेडरल फाइनास इन इण्डिया, पृ० 502

28-क इपीरियल गजटियर आफ इडिया (1908) खड IV पृ० 382 3

29 वही पृ० 187

30 आई० एन० सी० 1885 का प्रस्ताव L वक्ताओ मे एक बी० एस० पांतुलु गुरु ने भावोद्बोधक घोषणा की कि यदि रूस के आक्रमण की आशका से ही सेना सबधी व्यय बढ़ाया जाना है तो इसके फलस्वरूप कराधान मे वृद्धि करना होगी बढ़े हुए करो को चुकाने म देश दरिद्र हो जाएगा किसानो को भूमि छोडनी पडेगी और सरकार को उनके पथ का अनुसरण करते हुए भारत देश छोडना पडेगा यह तो रूस के आक्रमण की अपेक्षा बदतर ही होगा अत यह औषधि रोग से बदतर ही है (रिप० आई० एन० सी०, 1885 पृ० 73)

31 1890 का प्रस्ताव सख्या III (एफ) तथा प्रस्ताव II (एफ)

32 प्रस्ताव स० III

33 इसके उपरांत इसे इडियन मेमोरेंडम के नाम से सकलित किया जाएगा

34 तथा देखिए 26 जनवरी 1896 को बढ़े हुए मिलटरी खर्चों पर भारत सचिव को दिया गया वाच प्रजाडेंसी एसोसिएशन का ज्ञापन 1885-6 का बाब प्रजाडेंसी एसोसिएशन का प्रथम वार्षिक

समाचार 1 अप्रल और बसरे हिंद, 26 मार्च (आर० एन० पी० बब०, 1 अप्रल 1993) बगवासी 8 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 15 अप्रल 1893), प्रतिकार 21 अप्रल (वही 29 अप्रल 1893) पसा अखबार 26 जनवरी (आर० एन० पी० पी०, 9 फरवरी (895) ए० बी० पी० 3 अप्रल 1885 27 अप्रल 1902 इदु प्रकाश, 25 मार्च (आर० एन० पी० बब 30 मार्च 1895), अवध टाइम्स 5 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 13 अप्रैल 1901), भारत जीवन 17 फरवरी (वही 22 फरवरी 1902) ट्रिब्यून 16 जनवरी (आर० एन० पी० पी० 25 जनवरी 1902) मराठा, 13 अप्रल 1902 केसरी 15 अप्रल (आर० एन० पी० बब 19 अप्रल 1902) केसरी 21 जुलाई (वही 25 जुलाई 1903), हितवादी, 3 अप्रल (आर० एन० पी० बग० 11 अप्रल 1903), गुजराती 17 अप्रल (आर० एन० पी० बब 2० अप्रल 1904) इंडियन एडवोकेट 18 अगस्त (आर० एन० पी० यू० पी० 27 अगस्त 1904) स्वदेशमित्रन 9 मई और प्रपच तारकी 13 मई द्रविडावतमणि 11 मई (आर० एन० पी० एम० 13 मई 1905) इदु प्रकाश 23 मार्च केसरे हिंद 26 मार्च गुजराती 26 मार्च (आर० एन० पी० बब 25 मार्च 1905) इंडियन सोशल रिफामर 26 मार्च ओरियंटल रिव्यू 29 मार्च कल 31 मार्च (वही 1 अप्रल 1905)

43 अन्य सारे राष्ट्रवादी नेताओं की धारणा में जबकि यह स्वत सिद्ध तथ्य सतहित था जी० के० गोखले ने उसे सुस्पष्ट वाणी दी जिस प्रकार लार्ड सलिसबरी ने स्वय एक बार निर्देश किया था सैन्य क्षमता का निर्धारण प्रत्येक देश के दो तत्वों के समवत विचार के सदर्भ में ही करना चाहिए प्रथम देश की सुरक्षा सबधी आवश्यकताए तथा द्वितीय इस उद्देश्य के लिए उस देश द्वारा सुविधापूवक जुटाए जा सकने वाले साधन (स्पीचेज पृ० 43)

44 ए० बी० पी०, 13 अगस्त 15 अक्तूबर 1885, हिंदू 20 अगस्त 24 सितबर 8 अक्तूबर 1885 मराठा 11 अक्तू० 1885 इण्डियन स्पेक्टेटर 27 सित०, 4 अक्तू० इदु प्रकाश 28 सित० 12 अक्तू० सुबोध पत्रिका 23 सित०, इडियन मिरर 4 6 10 अक्तूबर इडियन नेशन, 5 अक्तू० नेटिव ओपीनियन 11 18 अक्तू० स्वदेशमित्रन 28 सित० सजीवनी 3 अक्तू०, हिंदुस्तान 11 अक्तूबर गुजराती 29 सितबर केसरी 11 अक्तू० (बी० ओ० आई० अक्तूबर 1885) एडवोकेट 23 अक्तू० सिंध टाइम्स 24 अक्तूबर ट्रिब्यून 31 अक्तू० बिहार हेराल्ड 3 नवबर (यही नवबर 1885) समाचार चन्द्रिका 4 जनवरी (आर० एन० पी० ब० 9 जन० 1886) हिंदू, 13 फरवरी 1890 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III पृ० 143 एन० एड डब्ल्यू० परिशिष्ट पृ० 26 ए० बी० पी० 5 अप्रल 1895 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 452 राय पावर्टी पृ० 304 दत्त इग्लैंड ऐंड इण्डिया पृ० 136 अवध टाइम्स 5 अप्रल (आर० एन० पी० एन० 13 अप्रल 1901) वाचा स्पीचेज पृ० 397 बी० के० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1903 पृ० 121, गोखले स्पीचेज, पृ० 45 104 आई० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव XII

45 ए० बी० पी० 13 अगस्त 1885 राय पावर्टी पृ० 286-7 गोखले स्पीचेज पृ० 44 1180 हितवादी 3 अप्रैल (आर० एन० पी० बग० 11 अप्रल 1902) 1886 में जी० बी० जोशी ने यह बात को प्रस्तुत करते हुए यह प्रमाणित किया कि विशुद्ध पारिमाणिक दृष्टि से देखने पर भी यह स्पष्ट होता है कि भारत की दोगुनी बिना के अन्य किसी भी देश की तुलना में भारत ने अपनी सेना पर अधिक व्यय किया है (पूर्वोद्धृत पृ० 253) इडियाज आर्मी ऐंड इण्डिया एक्सपेन्स 1885 में भारत के मामले को उस समय दूसरे ढग से पेश किया जब उसने

यह तुलनात्मक तथ्य प्रस्तुत किया कि इग्लैड मे सेना पर होने वाला व्यय राष्ट्रीय आय का 2 16 प्रतिशत था जबकि भारत मे इस व्यय का अनुपात 4 25 प्रतिशत बैठता था (इडियन लीफ्लेटस स० 11 पूर्वोद्धत)

46 इडियन लीफ्लेटस स० 9 पूर्वोद्धत वाचा रिप आई० एन० सी० प० 60 तथा सी० पी० ए० प० 619 पी० मेहता स्पीचेज प० 449 गोखले स्पीचेज प० 44 105 केसरी 21 जुलाई (आर एन० पी० बब 25 जुलाई 1903)

47 रिप० आई० एन० सी०, 1891 प० 25

48 वही

49 सी० पी० ए०, प० 619 पर

50 आर० एन० पी० बब 19 अप्रैल 1902 दूसरी और इसने अपने 31 मार्च 1903 के अक मे टिप्पणी की कि यदि देश को समग्रत सुरक्षित रखना है तो उसका आतरिक विकास करना आवश्यक है (आर० एन० पी० बब 4 अप्रैल 1903)

51 गोखले स्पीचेज प० 43-4 इसी प्रकार 1892 के भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अधिवेशन मे एच० सी० मित्रा ने करुण अभिव्यक्ति करते हुए कहा शस्त्र लेखनी की हत्या कर रहा है सैनिक बर्बरता कला और सस्कृति को नष्ट करने जा रही है (रिप० आई० एन० सी० 1892 प० 96) देखिए बाबे प्रजीडेंसी एसोसिएशन का 27 जनवरी का ज्ञापन पूर्वोक्त स्थान पी० मेहता स्पीचेज प० 334 5 350 457 8 मालवीय स्पीचेज प० 295 जी०एस०अय्यर वित्तीय कमीशन खड III प्रश्न 18963 आर० एम० सयानी एल० सी० पी० 1898 खड XXXVII प० 527 ए० एम० बोस सी० पी० ए० प० 425 7 हिंदू 26 अप्रैल 1902 गोखले स्पीचेज प० 26 28 109 सी० वाई० चितामणि इडियन मिलिट्री एक्सपेडीचर एच० आर० फरवरी 1903 प 233 हितवादी 3 अप्रैल (आर एन० पी० बग० 11 अप्रैल 1903) आइ एन० सी० 1903 का प्रस्ताव VII

52 एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII प० 273

53 कर्जन स्पीचेज II प० 266 एक वर्ष पूर्व उसने कहा था भारत मे साम्राज्य के राजनीतिक दो बडे कर्तव्य है प्रथम यथासभव इस देश के लाखो करोडो लोगो को अधिकाधिक सतुष्ट प्रसन्न और समृद्ध बनाना द्वितीय देशवासियो को तथा उनकी सपत्ति को सुरक्षित बनाना हम एक कर्तव्य की उपेक्षा करके दूसरे कर्तव्य के पालन का ओर नही बढ सकते (स्पीचेज I प 325) तथा देखिए स्पीचेज III प० 404

54 उदाहरण के रूप मे जनरल ब्रेकनबरी ने अपने पूर्वोद्धत भाषण मे घोषित किया भारत सरकार मितव्ययिता की दिशा मे दिए गए किसी भी व्यावहारिक सुझाव का स्वागत करती है और सदा स्वागत करेगी (एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII पृ० 274)

55 वाचा रिप आई० एन सी० 1895 प० 73

56 इपीरियल गजेटियर आफ इडिया (1908) खड IV प० 187

57 इस विषय के विस्तृत अध्ययन के लिए देखिए मेरा लेख इडियन नेशनलिस्टस ऐंड फारेन वार्स ऐंड एक्सपीडिशस 1878 99 हिस्टोरिकल स्टडीज स० 1 इतिहास विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय

58 इपीरियल गजेटियर आफ इडिया (1908) खड IV प० 348 9

59 आई० एन० सी का 1885 का प्रस्ताव V वाचा रिप० आई० एन सी० 1885 पृ०

जोशी पूर्वोद्धत पृ० 254 ए० बी० पी०, 13 अगस्त, 15 अक्तू० 1885, हिंदू, 20 अगस्त 24 सित० 8 अक्तूबर नवबर 1885 मराठा, 11 अक्तू० 1885 अक्तू०-नवबर 1885 के वी० ओ० आई० म उद्धत पत्र आर० एन० पी० बग० 22 अगस्त, 5, 26 सित० 7 नवबर 1885 9 जनवरी 1886 म उल्लिखित पत्र-पत्रिकाए, बाबे प्रेसीडेंसी एसासिएशन का 27 जनवरी 1886 को प्रस्तुत स्मरणपत्र रिपोट आफ दि बाब प्रसीडेंसी एशोसिएशन 1885-6 प० 209, 214 5, मद्रास महाजन सभा का लाड डफरिन को सबोधित पत्र, मराठा, 7 माच 1886 पूना सावजनिक सभा द्वारा 30 सितबर 1886 को प्रस्तुत विरोधपत्र जे० पी० एस० एस० अक्तूबर 1886 और जनवरी 1887)खड IX सख्याए, 2 3)

60 आई० एन० सी० का 1891 का प्रस्ताव स० III, वाचा, रिप० आई० एन० सी०, 1891 प० 23-6 राय पावर्टी प० 304-06 जोशी, पूर्वोद्धत प० 141, 201 वाचा स्पीचज परिशिष्ट पृ० 9 10 गोखले स्पीचज, पृ० 1183, 1205 सी० शकरन नायर, सी० पी० ए०, प० 386 केसरी 3 अप्रल (आर० एन० पी० बब 7 अप्रल 1900), वाचा, सी० पी० ए०, प० 617 गोखले स्पीचेज प० 26-7 हिंदू 4 अप्रल (वी० ओ० आई० 26 अप्रल 1902), एच० आर०, अगस्त (आर० एन० पी० एन०, 4 अक्तूबर 1901) एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 706 सी० वाई० चितामणि इडियन मिलिट्री एक्सपडीचर एच० आर० माच 1903 प० 227 एल० एम० घाष० सी० पी० ए० प० 764 दत्त ई० एच० II प० XVII

61 बगाली 23 मई 1896 ए० बी० पी० 27 मई 1896 हिंदू 27 मई (आई० एस० बी० ओ० आई० 12 जुलाई 1896) आई० एन० सी०, 1899 1901 1902 1903 और 1904 के प्रस्ताव सख्या 3 10 7 7(बी)और 12(सी) क्रमश बी० एन० बसु रिप० आई० एन० सी०, 1899 पृ० 53 बगाली 29 जन 1900 दत्त स्पीचेज II पृ० 85 एच० एस० दीक्षित रिप० आई० एन० सी, 1901 प० 154, गोखले (स्पीचज प० 27, पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1902 खड XLI प० 114 5 श्रीराम वही प० 148 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, पृ० 706 बी० एन० सेन रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 105 ए० बी० पी० 15 माच 1903, वाचा स्पीचज प० 400 श्रीराम एन० सी० पी०, 1903 खड XLII प० 105, एल० एम० घाष सी० पी० ए० पृ० 764 वी० एन० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1903 पृ० 121

62 प्रस्ताव स० VII (ए) तथा प्रस्ताव स० XII (सी) क्रमश

63 नौरोजी, स्पीचज प० 352 और दखिए पृ० 250 340-1 और ममानी पूर्वोद्धत, 434 5

64 गोखले स्पीचज पृ० 106-07 और देखिए प० 21 26-7 1156 1205

65 राय पावर्टी प० 287 293 305-06 हिंदू 24 सित० और 8 अक्तू० 1885 मराठा, 11 अक्तू० 1885 अक्तू०-नवबर 1885 के वी० ओ० आई० म उल्लिखित पत्र-पत्रिकाए पूना साव जनिक सभा द्वारा 30 सितबर 1886 को प्रस्तुत विरोधपत्र पूर्वोक्त स्थल वाचा रिप० आई० एन० सी० 1891 पृ० 29 तथा सी० पी० ए० प० 607 618 स्पीचज प० 396 दत्त इग्लैंड एंड इडिया प० 110 137 सी० पी० ए० प० 490 स्पीचज II प० 45 85 ई० एच० II पृ० 566-7 श्रीराम एन० सी० पी० 1902 खड XLI पृ० 148 और वही 1903 खड XLII पृ० 106 एच० आर० अगस्त (आर० एन० पी० एन 4 अक्तू० 1902) एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 706 709 बी० एन० सेन रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 105 ए० बी० प० 22 सितबर 1903 एन० एम० समथ रिप० आई एन० सी०, 1903 प० 119

स्पीचेज परिशिष्ट प० 16 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 253, राय चावर्टी, प० 285 गोखले स्पीचेज प० 1183 ए० भीमजी रिप० आई० एन० सी० 1891 प० 40

73 1859 की एकीकरण योजना की आलोचना के लिए देखिए पूना सार्वजनिक सभा ए स्टेटमेट आफ इडियन ग्रवेन्सेस जे० पी० एस० एस०, जुलाई 1881 (खड IV स० 1) प० 10 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1885 प० 53 6 रिप० आई० एन० सी० 1891 प० 23 रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 71, रिप० आई० एन० सी० 1897 प० 29 स्पीचेज प० 395, एन० एन० बैनर्जी सी० पी० ए० प० 245, गोखले स्पीचेज प० 1184 सी० वाई० चिंतामणि, इडियन मिलिट्री एक्सपेंडीचर एच० आर० फरवरी 1903 प० 120 आई० एन० सी० 1903 का प्रस्ताव VII (डी) अन्य पक्षो के लिए देखिए रानाडे रिव्यू आफ फासेटस थी एसेज आन इडियन फाइनास पूर्वोक्त स्थल प० 80 इडियन स्पेक्टेटर, 11 मई (आर० एन० पी० बब 17 मई 1884) वाचा रिप० आई० एन० सी०, 1885 पृ० 57 60 इडियन लीफलेटस स० 9 प० 6 7 जोशी पूर्वोद्धत प० 156 आई० एन० सी० 1891 का प्रस्ताव III, गोखले स्पीचेज पृ० 992 5 1184 नौरोजी, स्पीचेज प० 160 352 बगवासी 20 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 27 अप्रल 1895)

74 गोखले स्पीचेज प० 1186 7 1880 मे ही जस्टिस रानाडे ने स्टाफ कार्प्स सिस्टम समाप्त करने की माग की थी देखिए उनका रिव्यू आफ फासेटस थी एसेज आन इन्डियन फाइनास पूर्वोक्त स्थल प० 80 भारतीय सनिक अधिकारियो को मिलने वाले भारी वेतन की आलोचना भी इडियन लीफलेटस स० 9 पृ० 6 पर की गई है

75 आर० एन० पी० बब 21 अगस्त 1880 और इडियन स्पेक्टेटर 20 अगस्त (वही 26 अगस्त 1882) इडियन लीफलेटस स० 11 पृ० 2 स्वदेशमित्रन 17 अगस्त (आर० एन० पी० एम० अगस्त 1885) ए० वा० पी० 16 सित० 1886 ए० भीमजी रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 133-4

76 आई० एन० सी० 1902 और 1903 के प्रस्ताव स० VII और VII (सी) ए० वा० पी० 29 अप्रल 1902 हिन्दू 24 मार्च 15 अप्रल 9 जुलाई 1902 मराठा 6 जनवरी 1902 गुजराती 6 जुलाई मद्रास स्टडड 8 जुलाई नेटिव ओपीनियन 9 जुलाई इडियन नेशन 21 जुलाई (वो० आ० आर० 2 अगस्त 1902) केसरी 8 जुलाई (आर० एन० पी० बब 12 जुलाई 1902) आध्र प्रकाशिका 16 अप्रल (आर० एन० पी० एम० 19 अप्रल 1902) स्वदेशमित्रन 16 जुलाई (वही 26 जुलाई 1902) निजाम उल मुल्क, 24 मार्च (आर एन० पी० एन० 29 मार्च 1902) एन० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 706 वाचा स्पीचेज पृ० 397 ए० वा० पी० 20 और 23 अगस्त 1903 बगाली 22 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 29 अगस्त 1903) स्पिरिट आफ इडिया 18 जुलाई बब 17 जुलाई (आर० एन० पी० बब 18 जुलाई 1903) केसरी 21 जुलाई (वही 25 जुलाई 1903) सार्वजनिक सभा, प्रजाबधु 16 अगस्त (वही 22 अगस्त 1903) (यह पर्याप्त रोचक तथ्य है कि प्रजाबधु ने शिकायत की कि नगर के प्रमुख धनी लोग सभा मे बिल्कुल अनुपस्थित थे) इडियन पीपुल और अवध समाचार 7 अगस्त (आर० एन० पी० य० पा०, 15 अगस्त 1903) एन० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 763 अखबार आम 16 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 25 जुलाई 1903)

77 जोशी पूर्वोद्धत प० 239 241 252 सुबोध पत्रिका 16 नवबर आम जमाना 2 नवबर

(आर० एन० पी० बंब, 22 नव० 1894), एडवोकेट 29 जनवरी (आर० एन० पी० यू० पी०, 4 फर० 1905)

78 राय पार्वती प० 285 मराठा 24 मार्च 1895, जी० आर० एम० चिन्तनराम, एन० सी० पी० 1895 खंड XXXIV पृ० 400, बंगवासी 29 मार्च (आर० एन० पी० बंग० 6 अप्रैल 1895), सहचर, 10 अप्रैल (वही, 20 अप्रैल 1895) अखबारे आम 28 मार्च (आर० एन पी० पी० 6 अप्रैल 1895) शुभ सूचक, 12 अप्रैल (आर० एन० पी० बंब, 20 अप्रैल 1895)

79 इंदु प्रकाश 28 मई (आर० एन० पी० बंब, 2 जून (1883) एन० पी० गुम्बरायुद्ध रिप० आइ० एन० सी० 1885 पृ० 72, हिंदू 24 जून 1885, स्वर्गामित्र 17 अगस्त (आर० एन० पी० एम० अगस्त 1885), ट्रिब्यून, 18 सित० (पी० ओ० आई० अक्तू० 1886) जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 6-8 एन० जी० चन्दावरकर, सी० पी० ए० पृ० 529, वाचा स्पीचेज, परिशिष्ट प० 15 यहा यह उल्लेखनीय है कि 1893 म प्रथम प्रगतिशील सभा का समापन कर दिया गया था

80 आई० एन० सी० 1904 प्रस्ताव XII (बा) बंगाली 25 दिस० (आर० एन० पी० बंग 31 दिस० 1904) इंडियन पीपल 28 अगस्त (आर० एन० पी० यू० पी० 3 सित० 1904) एडवोकेट 29 जनवरी (वही 4 फरवरी 1905) गोखले स्पीचेज पृ० 102-4 इंदु प्रकाश 23 मार्च कैसरे हिंद और गुजराती 26 मार्च (आर० एन० पी० बंब 25 मार्च 1905) इण्डियन सोशल रिफार्मर 26 मार्च ओरियंटल रिव्यू 29 मार्च बंगाली 31 मार्च (वही 1 अप्रैल 1905) स्वर्गमित्रन 9 मई प्रपंच तारकी 13 मई द्रविडावर्तमणि 11 मई (आर० एन० पी० एम० 13 मई 1905)

81 द्रविड नेवर मजर पूर्वोद्धृत प० 415-53

82 ए० बी० पी० 15 मई 1905 मराठा, 25 जून 1905, एच० आर० जुलाई 1905 पृ० 80-1 आर० एन० पी० बंब 1, 8 जुलाई 1905 म आर० एन० पी० एम० 1 15 जुलाई 1905 मे आर० एन० पी० बंग० 1 8 15 जुलाई 1905 म तथा आर० एन० पी० यू० पी० 1 8 जुलाई 1905 म उल्लिखित पत्र पत्रिकाएं

प्रस्तावा म आर्थिक तर्कों का स्पष्ट प्रतिपादन तो नही है परतु जिन लोगो ने इन प्रस्तावा को प्रस्तुत किया और जिन महानुभावो ने इन पर वक्तव्य दिए उन्होने आर्थिक तक एव युक्तियां अवश्य पश की थी देखिए ए० एम० भीमजी रिप० आई० एन० सी०, 1888 प० 134 और तिलक रिप० आई० एन० सी० 1891 प० 38 9 और देखिए इडियन स्पक्टेटर, 22 जनवरी (आर० एन० पी० बव 28 जन०, 1882), मराठा 14 फरवरी 1886 हिंदुस्तान 7 अक्तू० (आर० एन० पी० एन० 8 अक्तू० 1891) गोखले स्पीचज पृ० 1185, 1187 8, केसरी, 17 जनवरी (आर० एन० पी० बब 21 जनवरी 1899)

87 जोशी पूर्वोद्धत, प० 156 242 246-7 253-4, गोखल स्पीचेज प० 46 8 90-1 1183-5 और देखिए, राजा रामपाल सिह रिप० आई० एन० सी० 1886 प० 93 यह देखना भी मजेदार होगा कि यहा तक कि ईस्ट इडिया कपनी के शासनकाल म ही राजा राममोहन राय ने देश के प्रशासनिक व्यया म कटौती के उपाय के रूप म स्थाई सेना के एक बहुत बड भाग के लिए नगर रक्षक दल की स्थापना की वकालत की थी उन्होने कहा था कि मानव का दु ख देने वाले भूमि राजस्व आदि म वद्धि करन क किसी भी प्रकार को ढग की अपेक्षा इससे होने वाली बचत स अधिक उपयोगी लाभ होगा (बी० बी० मजूमदार पूर्वोद्धत पृ० 70)

88 1886 का प्रस्ताव स० XII 1887 का प्रस्ताव स० V तथा 1888 का प्रस्ताव स० VI तथा निम्नलिखित

89 रामपालसिह रिप० आई० एन० सी० 1886 प० 93 एम० वाहिद अली रिप० आई० एन० सी० 1888 पृ० 133 तिलक, रिप० आई० एन० सी० 1891 प० 38 9 गोखले, स्पीचज प० 48 9 इस दष्टि स कि इस माग को इस्तेमाल शिक्षित भारतीयो को अथवा बगालियो को धकेलने के लिए एक और प्रयास की तरह न किया जाए गोखले न प्रस्ताव रखा कि सरकार प्रयोग क लिए किसा विशिष्ट क्षत्र का तथा किसी विशिष्ट जाति के किसी विशिष्ट वग का चुनाव कर सकती है (वहा) तथा दखिए वही प० 90-1 जोशी पूर्वोद्धत प० 7 8 252, हिंदू 20 अप्रल 1885

90 इस विषय के विस्तत विवेचन के लिए दखिए मरा लेख इडियन नशनलिज्म ऐंड फारन वारस एड एक्सपीडिशस 1878 9 प्रकाशित हिस्टोरिकल स्टडी, अक 1

91 आई एन० सी० के 1892 1895 1897 और 1898 के प्रस्ताव क्रमश VII VIII I II III और VII, पी० महता स्पीचज प० 452 3 राय पावर्टी प० 299-300 आजाद 17 मई (आर० एन० पी० एन० 25 मई 1895) एस० एन० बनर्जी सा० पी० ए० पृ० 255 एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट पृ० 48 डी० जी० उपाध्ये रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 101 पी० ए० वारस एन० सी० पी 1896 खड XXXV पृ० 286, नौरोजी स्पीचज पृ० 344-6 349 50 परिशिष्ट प० 79 93 तथा आगे वाचा स्पीचज, परिशिष्ट पृ० 33 रिप० आई० एन० सा० 1897 प० 32 गोखले स्पीचज प० 1206 07 जी० एस० अय्यर, विलबी कमीशन खड III प्रश्न 19800 हिंदू 26 अगस्त 1897 रियाज उल अखबार 12 जन० (आर० एन० पा० एन० 19 जन० 1897) हिंदुस्तानी 13 अक्तू०, 22 दिस० (वही, 20 अक्तू० 29 दिसबर 1897) मराठा, 22 दिस० 1897 (आर० एन० पा० बग० 1 जन० 1898) संजीवनी 12 फरवरी (वही 19 फरवरी 1898) जी आर० एम० चित्नवीस एन० सी० पी० 1898 खड XXXVII पृ० 486 आर० एम० सयानी वही प० 525-7 बगाली 26 माच 1898 गुरखा 26 फर० राजमहल 1 माच, कैसर हिंद 27 फर० (आर०

एन० पी० बव, 5 मार्च 1898) दत्त इग्लड ऐंड इडिया पूर्वोद्धत 110 1 स्पीचेज I पृ० 34 5 41 ए० एम० बोस सी० पी० ए प० 421 पी० ए० चारलू एल० सी० पी० 1902 खड XLI पृ० 116 एच० ए० वाडिया रिप० आई० एम० सी० 1904 प० 203 एल० एम० घोप सी० पी० ए०, पृ० 765 केसरी 7 फरवरी (आर० एन० पी० बब 11 फरवरी 1903)

92 सी० पी० ए० प० 168 तथा देखिए, नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट प० 75 6 78 90

93 मसानी पूर्वोद्धत प० 456 पर

94 राय, पार्टी पृ० 299 इसी प्रकार 1898 की भारतीय राष्ट्रीय काग्रस के अध्यक्ष ने पूछा 'क्या इग्लैंड को यह पक्का विश्वास है कि यदि भारत की सुरक्षा नष्ट हो गई और भारत ब्रिटिश साम्राज्य से छिन गया तो वह प्रभारों के रूप म नात मूल्यवान विपयो क रूप म इग्लड को मिलने वाले लाखो करोडो रुपया की हानि स इग्लड की प्रतिष्ठा को उसके गौरव को उसके व्यापार को, उसक विनियोजन को उसकी पूजी को तथा उसकी जनता को किसी प्रकार की कोइ हानि नहा उठानी पडगी ? (ए० एम० बोस सी० पी० ए० पृ० 420) और देखिए हिंदू 20 अगस्त 1885 13 फरवरी 1890 सुरभि 1 सित० (आर० एन० पी० बम० 5 सित० 1885) पताका, 18 सित० (वही 26 सित० 1885) तिरगा निशान 1 सितबर (आर० एन० पा० एम० 15 सित० 1888) ए० बो० पी० 5 अप्रैल 1895 27 मई 1896 आर० एम० सयानी एल० सी० पी० 1898 खड XXXVII पृ० 527 एस० एन० बनर्जी एम० ऐंड० डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 26 48 विलबी कमीशन खड III प्रश्न 19435 सी० पी० ए० प० 708 केसरी 10 जून (आर० एन० पी० बब 14 जून 1902), दत्त इग्लंड ऐंड इडिया, पृ० 140-1, 145 166 ई० एच० II पृ० 567, गोखले, स्पीचेज पृ० 28 105 1208

95 आर० एन० पी० बब, 29 अगस्त 1903

96 राय पार्टी प० 296

97 सी० शकरन नायर सी० पी० ए०, पृ० 387, गोखले स्पीचेज पृ० 48

98 *नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 75-6 सुलनीय एच० एल० सिंह पूर्वोद्धत प० 165 8 206*

99 आई० एन० सी० 1891 का प्रस्ताव IV, तिलक रिप० आई० एन० सी० 1891 प० 38 9 एम० ए० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1885 पृ० 68 जोशी पूर्वोद्धत प० 156 252 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 75 राय पार्टी प० 297, वाचा स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 16 *गोखले स्पीचेज पृ० 48-9 90-1*

100 नौरोजी पार्टी पृ० 216 सी० पी० ए पृ० 165 6 स्पीचेज प० 658 9 664 एस० एन० *बनर्जी, स्पीचेज I पृ० 192 एस० ऐंड डब्ल्यू प० 422* और सी० पी० ए० प० 250, ए० बी० पी० 3 सितबर 1885 और 19 जुलाई 1891 बगाली 4 जून 1887 10 अक्तू० 1897 और 1 जुलाई 1903 केसरी 14 सितबर (आर० एन० पी० बब 18 सित० 1897) ए० एम० बोस सी० पी० ए० पृ० 403 पी० ए० चारलू एल० सी पी० 1902 खड XLI प० 115 6 अमृत बाजार पत्रिका ने अपने 1 मई 1884 के अक म इस दृष्टिकोण का विपरीत ढग से प्रयोग किया उसने लिखा यही कारण है कि भारतीय जनता रूसी सेना के भारतीय सीमाओ की ओर आग बढ़ आने पर असीम सतोष अनुभव करती है क्योंकि उसका विश्वास है कि रूसी जितना ही भारत की सीमा के अधिक निकट आएग उतना ही उसके मालिक उसका अधिक आदर-सम्मान करेंग

101 इडिया जुलाई 1897 प० 202 और उदाहरणाथ देखिए ए बी० पी० 21 मई 1885 31 मई

1888 27 अगस्त 1886 को व्यय की कटौती पर बाबे प्रेसीडेंसी एसोसिएशन द्वारा प्रस्तुत ज्ञापन सेकेंड एनुअल रिपोर्ट आफ दि बाब प्रेसीडेंसी एसोसिएशन 1886-7, 30 सितबर 1886 का पूना सावजनिक सभा द्वारा प्रस्तुत विरोधपत्र, जे० पी० एस० एम० अक्तू० 1886 और जनवरी 1887 (खड IX स० 2 और 3) जोशी, पूर्वोद्धत, प० 824 5 आई० एन० सा० 1891 और 1904 के प्रस्ताव स० III (बी) और III क्रमश , पी० मेहता, स्पीचेज, प० 456 मालवाय स्पीचज प० 250 281 वाचा, स्पीचेज परिशिष्ट, प० 9 31 2 सी० पी० ए०, प० 607-8 ए० नदी, इण्डियन पालिटिक्स प० 127, 'दि इकोनामिक सिच्युएशन इन इडिया डान, अक्तू० 1899 (खड IV स० 3) प० 65

102 *नतिक और सामाजिक लाभो क लिए हम थोड से ही उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं दखिए* जी० क० गोखल स्पीचज, प० 188 इडियन पीपुल्स राइट अमत बाजार पत्रिका ने अपन *23 नवबर 1886 के अक म अपना दढ मत प्रकट करते हुए लिखा कि भारत क लोगो का दावा* है कि भारताय प्रशासन क सभी स्थाना पर हा उनका ही अधिकार है उनके इस दावे का आधार यह है कि इन सभी स्थाना का व्यय भार भारतीय ससाधना द्वारा उठाया जाता है अत भारत के नागरिक हाने के नाते इन स्थाना को व अपना ही सपत्ति समझते हैं इसी प्रकार 1904 म राष्ट्रीय काग्रस म प्रस्ताव स० I का पक्ष करत हुए सुरेंद्रनाथ बनर्जी न तक उपस्थित किया कि विचारणीय तत्व यह है कि यद्यपि दश हमारा है, धन हमारा है भारी जनसख्या हमारी है फिर भी हमारे भाग्य म ऊची नियुक्तिया का कवल 14 स 17 प्रतिशत भाग हा उपलब्ध है एसा क्यो ? (रिप० आई० एन० सी० 1904 प० 64) सेवाओ क भारतीयकरण का प्रचार राजनीतिक दष्टि से इस रूप म किया गया कि यदि शिक्षित भारतीय लोगा को *लाभप्रद नियुक्तिया न दी गई तो वे राजनीतिक दष्टि स असतोष अनुभव करेंगे उदाहरण क* लिए दखिए नौरोजी एसेज पृ० 38 पावर्टी प० 205, स्पीचज, पृ०507 मालिक, स्पीचज, प० 701 ए० बी० पी० 9 जनवरी 1880 गोखल स्पीचज प० 68-9

103 आई० एन० सा० 1801 1897 1902 1903 और 1904 क प्रस्ताव सख्या III III (ii) XV II (सी) और I (बी) क्रमश नौरोजी पावर्टी, प० 124 184 639 स्पीचज प० 284 6 परिशिष्ट प० 5 एस० एन० बनर्जी स्पीचज I प० 191 सी० पी० ए० प० 210 एम० डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 26 8 32 44 47 16 मई 1880 का पूना की जनसभा म स्वीकृत विरोधपत्र जे० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खड III स० 1) प० 7 रानाडे रिव्यू आफ फारवेटग 'थी एसेज आन इडियन फाइनांस जे० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खड III स० 1) पृ० 80 पूना सावजनिक सभा द्वारा 2 माच 1881 को प्रस्तुत ज्ञापन जे० पी० एस० एस० जनवरी 1881 (खड IV स० 1) पृ० 12 जोशी, पूर्वोद्धत पृ० 5 6 40 155 बाब प्रेसीडेंसी एसोसिएशन का 27 अगस्त 1886 को प्रस्तुत स्मरणपत्र सकेंड एनुअल रिपोर्ट आफ दि बाबे प्रेसीडेंसी एसोसिएशन मद्रास महाजन सभा का स्मरणपत्र रिपोर्ट आफ दि फाइनांस कमेटी (कलकत्ता 1897) खड II पृ० 452 3 रानाडे मेमोरेंडम आन दि रिपोर्ट कमेटी खड I पृ० 398 मालवीय स्पीचज प० 290 299-301 518 गोखले स्पीचज पृ० 28 63-4 1187-9 वाचा स्पीचज परिशिष्ट प० 26-7 29 31 2 सी० पी० ए० पृ० 609 डब्ल्यू ई० एफ० I पृ० 413 ई० एफ० II प० XVII सी० पी० ए० पृ० 491 जी० एस० अय्यर ई० पी० प० 100 सिविल सर्विस कमीशन खड III प्रश्न 1864 एस० ए० स्वामिनाथ अय्यर, रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 63 माना मामग्रम रिप० आई० एन० सा० 1891

प० 15 जी० ए० पाटिल रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 139 नवविभाकर 14 जून (आर० एन० पी० बग० 19 जून 1880) अरुणोदय 23 जन० (आर० एन० पी० बव 29 जन० 1881) बकुन, 31 दिस०, शिवाजी 29 दिस० 1882 (वही 7 जन 1883) इंडियन स्पेक्टेटर 25 फरवरी और 24 जून (वही मार्च और 30 जून 1883 क्रमश) मराठा 3 जून 9 सितंबर 1883 अल्मोड़ा अखबार 9 जुलाई (आर० एन० पी० पी० एन 14 जुलाई 1883) उचित वक्ता 15 मार्च (आर० एन० पी० बग० 22 मार्च 1884) नवविभाकर 1 दिस० (वही 6 दिस० 1884) पताका 10 जुलाई (वही 18 जुलाई 1885) नटिव आपीनियन 19 अप्रैल (आर० एन० पी० बव 25 अप्रैल 1885) इंदु प्रकाश 25 मई (वही 30 मई 1885) ए० बा० पी० 21 मई 1885 18 नवंबर 9 और 16 दिस० 1886 बगाली 16 जन० 1886 14 फरवरी 1886 इंडियन स्पेक्टेटर 27 जून और 14 नव० 1886 मराठा 20 जून हिंदू 15 जुलाई (वी० ओ० आई० जुलाई 1886) भारतीय प्रेस के विचारो का सारांश सार-संग्रह वी० ओ० आई० जुलाई 1886 केसरी 31 जन० (आर० एन पी० बव 4 फरवरी 1888) अखबारे आम 21 अप्रैल (आर० एन० पी० पी० 28 अप्रैल 1888) ए० बा० पी०, 31 मई 1888 और 3 मार्च और 24 मई 1894 विक्टोरिया पेपर 30 नव० (आर० एन० पी० पी० 12 दिस० 1891) आयजनप्रियन 8 अप्रैल (आर० एन० पी० एम० 30 अप्रैल 1893) ज्ञानोदय 1 मई (वही 15 मई 1893) बगवासी 20 अप्रैल (आर० एन० पी० बग० 27 अप्रैल 1895) बसुमती 5 मई (वही 14 मई 1898) केसरी 31 मार्च (आर० एन० पी० बव 4 अप्रैल 1903), इंडियन पीपुल 18 अगस्त (आर० एन० पी० यू० पी० 27 अगस्त 1904)

104 भिन्न भिन्न लोगों का जोड़ भिन्न भिन्न था और यह स्वाभाविक ही था क्योंकि उन सबने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 1892 के अधिवेशन में मदनमोहन मालवीय द्वारा जुटाए गए अनुमानित और मिलते जुलते आकड़ो पर ही हिसाब लगाया था (स्पीचेज प 515 6) तथा दखिए नौरोजी स्पीचज पृ० 134 (उनकी मतगणना 20 करोड़ रुपए बढ़ती थी) परिशिष्ट प० 6 89 90 वाचा सी० पी० ए० पृ० 607 दत्त ई० एच० I पृ० 427 की पादटिप्पणी स्पीचज I प० 178 गोखले स्पीचज, पृ० 1187 8 समनीय लेखा जोखा के लिए दखिए इपीरियल गजटियर आफ इंडिया (1909) खंड IV प० 201

105 मालिक स्पीचेज पृ० 186-7 पी० महता स्पीचज पृ० 225 अन्य भारतीय नेताओ के लिए दखिए प्रोसीडिंग्स आफ पब्लिक सर्विस कमीशन (कलकत्ता 1887 खड I भाग III प० 18 20 45 6 खड II भाग II प० 23 खड III भाग III प० 5 खड IV भाग II प० 102 325 (तिलक) खड V भाग II पृ० 288 393 खड VI भाग II प० 36 240 273 428 442 494 504 भाग II पृ० 32 71 86

106 ए० एम० बोस सी० पी० ए० प० 407 गोखले स्पीचेज पृ 68

107 वी० ओ० आई० जुलाई 1886

108 और देखिए रास्त गुफ्तार 29 जून शुभ सूचक 13 जून (आर० एन० पी० बव 5 जुलाई 1879) एस० ए० स्वामिनाथ अय्यर रिप० आई एन० सी० 1885 प 68 इंडियन स्पेक्टटर और मराठा 20 जून (वी ओ० आई जुलाई 1886) स्वदेशमित्रन तिथिरहित (आर० एन पी० एम० फरवरी 1887) केसरी 31 जनवरी (आर० एन० पी० बव 4 फरवरी 1888) आयजनप्रियन 8 अप्रैल (आर० एन० पी एम० 30 अप्रैल 1893) ए० बी० पी० 24 मई

1894, बसुमती 5 मई (आर० एन० पी० बग० 14 मई 1898), जी० एस० अय्यर, ई० ए०, पृ० 100 दत्त स्पीचेज I पृ० 94

109 प्रोसीडिंग्स आफ पब्लिक सर्विस कमीशन (1887) खड II भाग III प० 41 खड III भाग III प० 7, खड IV भाग III प० 147 खड IV भाग II पृ० 214 खड VI भाग II प० 386 भाग III पृ० 93

110 वही, खड IV भाग II प० 130 (नौरोजी) प० 145 (रानाडे), खड V भाग II प० 230 खड VI भाग II पृ० 74

111 एस० एन० बनर्जी एस० ऐंड डबल्यू० परिशिष्ट पृ० 47 तथा देखिए एस० एन० बनर्जी, विलबी कमीशन, खड III प्रश्न 19419

112 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट 5 इसके अतिरिक्त परिशिष्ट 11 31 2 37 भी

113 ए० बी० पी० 27 फरवरी 1880 रानाडे, रिव्यू आफ फासेटस थी एसेज आन इंडियन फाइनास जे० पी० एस० एस० जुलाई 1880 (खड III स० 1) प० 80 जलवा तूर 1 माच (आर० एन० पी० पी० एन, 4 माच 1880), भारत मिहिर 3 अगस्त (आर० एन० पी० बग 14 अगस्त 1880) जे० पी० एस० एस० जुलाई 1881 (खड IV स० 1) पृ० 10, बगाली 29 अक्तू० 1881 बकुल, 31 दिस० 1882, शिवाजी 29 दिस० 1882 (आर० एन० पी० बव 6 जन० 1885) भारत मिहिर, 5 जून (आर० एन० पी० बग० 9 जून 1883, सुरभि 2 जून (वही, 7 जून 1884) नवविभाकर 1 सित० (वही, 6 सित० 1884), तत्व-विवेचनी 4 मई (आर० एन० पी० एम० मई 1884), बगाली, 19 जुलाई 1884, प्रजाबध 6 फर० (आर० एन० पी० बग 14 फरवरी 1885), पताका, 11 सित० (वही 19 सित० 1885) नेटिव ओपीनियन 19 अप्रल आर० एन० पी बव 25 अप्रल 1885 इदु प्रकाश 25 मई वही 30 मई 1885) स्वदेशमित्रन 17 अगस्त (आर० एन० पी० एम० अगस्त 1885) वी० राघवाचारी रिप० आई० एन० सी०, 1885 प० 44 5, ज० मू० याज्ञिक वही पृ० 65 एम० ए० एम अय्यर वही पृ० 68 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III पृ० 15-6 195 मराठा, 14 फर० और 18 जुलाई 1886 सिंध टाइम्स 10 जून बगाली 3 जुलाई (वी० ओ० आई० जुलाई 1886) सजीवनी 9 जन० सोम प्रकाश 11 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 16 जन० 1886) भारत मिहिर 14 जन० (वही, 23 जन० 1886) सार सुधानिधि, 15 माच उचित वक्ता 13 माच सोम प्रकाश और समाचार चद्रिका 15 माच (वही 20 माच 1886) *बगवासी 6 नव० (व) 13 नव० 1886) रिपोट आफ दि प्रसीडेंसी एसोसिएशन 1886 7,* पृ० 44-6 54 30 सितबर 1886 का पूना सावजनिक सभा का ज्ञापन जे० पी० एस० एस० अक्तू 1886 जनवरी 1887 (खड IX स० 2 3) पृ० 6 मद्रास महाजन सभा तथा अन्य स्थानीय सावजनिक सस्थाओ के ज्ञापन रिपोट आफ दि फाइनास कमेटी 1886 खड II पृ० 453 स्वदेशमित्रन निर्धिरहित (आर० एन० पी० एम० फरवरी 1887) एस० एस० अय्यर और जी० एस० अय्यर प्रोसीडिंग्ज आफ दि पब्लिक सर्विस कमीशन 1887 खड V भाग II पृ० 214 और 288 क्रमश ए० बी० पी० 16 सित० 1886 ट्रिब्यून 18 सितंबर और बिहार हेराल्ड 21 सित० (वी० ओ० आई० अक्तू० 1886) हिंदू 25 मई 1887 आर० एन० पी० बग 29 जनवरी 1898 मे उल्लिखित पत्र पत्रिकाए केसरी 31 जनवरी (आर० एन० पी० बव 4 फरवरी 1898) आजाद 3 फरवरी (आर० एन० पी० एन० 7 फरवरी 1898) हिन्दुस्तान 18 अगस्त (वही 21 अगस्त 1899) हितवादी हितान 5 अक्तू (आर० एन० पी० एम० 31 अक्तू 1899) नौरोजी स्पीचेज पृ० 141 397 परिशिष्ट प० 32 3 रमेश ट

हिन्द 26 फर० (आर० एन० पी० पी० 3 मार्च 1894) राय पार्कर्टी पृ० 306 308 10 318 एम० के नायर रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 74 विशम्भर नाथ एल० सी० पी० 1897 खड XXXVI प० 185 और वही 1898 खड XXXVII प० 518 9 वस्तुत उच्च वेतनो मे कटौती की माग एक पुरानी माग ही थी क्योकि 1852 म सवप्रथम ब्रिटिश इडियन एसासिएशन के तथा बगाल प्रेसाडेंसी के मूल निवासियो की एसोसिएशन के ज्ञापन म यह माग की गइ थी (बी० बी० मजूमदार पूर्वोद्धत प० 482 पर)

114 डक्कन स्टार 12 सित० (आर० एन० पी० बब, 18 सित० 1880) ज० पी० एस० एस० जलाई 1881 (खड IV स० 1) पृ० 10 जोशी, पूर्वोद्धत, प० 3 7 64 69 75 7 82 मराठा 25 फरवरी 1883 इंदु प्रकाश 26 माच 28 मई (आर० एन० पी० बब 31 माच 2 जून 1883) जे० यू० याज्ञिक रिप० आई० एन० सी० 1885 प० 65, एस० ए० अय्यर वही पृ० 68 हिंदू 24 जून 1885 इडियन प्रम ओपीनियम का सपादकीय सार सक्षप बी० ओ० आई० जुलाइ 1886 मराठा 17 जून 1886 मराठा 20 जून इडियन मिरर 22 जून 3 जुलाई बगाली 3 जुलाई (बी० ओ० आई० जुलाई 1886) 27 अगस्त 1886 का बाबे प्रसीडेंसी एसासिएशन द्वारा खर्चो पर प्रस्तुत ज्ञापन पूर्वोक्त स्थल 30 सितबर 1886 की पूना सावजनिक सभा का विरोधपत्र पूर्वोक्त स्थल, पृ० 7, 10 मद्रास महाजन सभा तथा अय अनक स्थानीय सावजनिक सस्थाओ द्वारा प्रस्तुत ज्ञापन रिपोट आफ दि फाइनास कमेटी 1886 खड II प० 450 452 54 459 65 471 84 रानाडे मैमारडम आफ डिसेंट (असहमति मे ज्ञापन) वही खड 1 प० 395 6 398 403 04 गोखले स्पीचज प० 1197 9 और देखिए तिलक प्रोसीडिग्स आफ दि कौसिल आफ दि गवनर आफ दि बाबे 1895 खड XXXIII पृ० 91

115 भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने अपने प्रथम अधिवेशन मे ही इस माग को उठाया और उसके पश्चात वर्षो तक यह माग दोहराती तो रही परतु उसने इसके पक्ष मे किसी प्रकार के आर्थिक कारण उपस्थित नही किए काग्रेस के लिए देखिए 1885 1894 1896 1897 और 1898 के प्रस्ताव सख्या II IV XI (जी) IV (एफ) और XX (एफ) क्रमश एस० मुनालियर रिप० आई० एन० सी 1885 प० 27 8 स्वदशमित्रन 17 अगस्त (आर एन० पी एम० अगस्त 1885) तिरगा निशान 14 जुलाइ (आर० एन० पी० एम 15 जुलाई 1888) स्वदेशमित्रन 21 जुलाई (वही 31 जलाई 1888) स्वदेशमित्रन 6 जून (वही 15 जून 1900)

116 भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के प्रथम अधिवशन म भाषण करत हुए जे० यू० याज्ञिक ने इस तथ्य की आलोचना की कि प्राय विभाग अध्यक्षो द्वारा खर्चो म कटौती के लिए बनाई गइ योजना दिखावटी होती है अथवा उसका पालन इधर उधर किसी क्लर्क को नौकरी स हटाने के रूप म अथवा किसी सरकारी सस्थान के प्यास कमचारियो को पानी पिलाने वाले किसी नौकर को अथवा 8 10 रु० मासिक वेतन पाने वाले किसी चपरासी को नौकरी से हटाकर किया जाता है इसके पश्चात उन्होने अपना मत प्रकट किया कि इस प्रकार की आसू पोछने वाली नीति अपनाने से निश्चित रूप से किसी प्रकार के सतोषप्रद परिणाम की आशा नही का जा सकता (रिप० आई० एन० सी० 1885 प० 65) जनवा तर 1 माच (आर० एन० पी० पा० एन 4 माच 1880) ए० बी० पी० 21 मई 1985 सोम प्रकाश और आनद बाजार पत्रिका 1 जून (आर० एन० पी० बग० 6 जून 1885) रहबरे हिन्द 1 जून (आर० एन पा० पा० 15 जून 1889) सजावनी 21 सितबर (आर० एन० पी० बग 28 सितबर 1889) तिरगा निशान 5 अक्तूबर (आर० एन० पी० एम० 31 अक्तूबर 1889) रहबरे हिन्द 26 फरवरी (आर० एन० पा० पी०

3 मार्च 1894), सजीवनी, 20 अप्रल (आर० एन० पी० बग०, 27 अप्रल 1895), बसुमती 5 मई (वही 14 मई 1898)

117 एस० एन० बनर्जी सा० पी० ए०, प० 263-4 और स्वदेशाभिमानी 15 अप्रल (आर० एन० पी० एम० अप्रल 1878), आई० एन० सी० के 1891, 1892 1893 1894 1901 और 1902 के क्रमश प्रस्ताव सख्या VII (सी) V (ई) III (ई) XVI (ई) VII और X, अखबारे आम 20 अगस्त (आर० एन० पी० पी०, 7 सितबर 1895) सहचर 10 अप्रल (आर० एन० पी० बग 20 अप्रल 1895) बगाली 11 अप्रल 1896 एस० एन० बनर्जी एम० ऐंड ड्यू० परिशिष्ट पृ० 25 जी० एस० अय्यर, विलबी कमीशन, खड III प्रश्न 18963 19710 19719 20 19735 19761 हिंदुस्तानी, 14 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 20 जुलाई 1898), ए० एम० बोस सी० पी० ए० प० 426 गोखले स्पीचेज, प० 95 1200, विक्टोरिया पेपर 8 जुलाई (आर० एन० पी० पी० 19 जुलाई 1902) और देखिए नौरोजी स्पीचज परिशिष्ट प० 15

118 1886 मे एस० एन० बनर्जी ने इन धारणा को बडे ही सुदर ढग से सक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत किया है देखिए (स्पीचेज III प० 10-20)

119 ए० बी० पी० 19 नवबर 1880 इडियन स्पेक्टेटर 24 अक्तूबर (आर० एन० पी० बब, 30 अक्तू० 1880) बगाली 19 मार्च 1881 12 मार्च 1882 मराठा 27 मार्च 1881 सोम प्रकाश 17 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 22 जन० 1881), ढाका प्रकाश 20 फरवरी (वही 26 फर० 1881) बर्दवान सजीवनी 22 मार्च (वही 2 अप्रल 1881), साधारणी 13 नव० (वही 10 नव० 1881) चारुवार्ता 6 मार्च (वही मार्च 1882) सोम प्रकाश 27 मार्च (वही 1 अप्रल 1882) बर्दवान सजीवनी 2 मई (वही 13 मई 1882), अल्मोडा अखबार 7 मई (आर० एन० पी० पी० एन० 10 मई 1883), हिंदुस्तान 28 मार्च (वही 2 अप्रैल 1884) बगाली, 15 मार्च और 21 जून 1884 आर० एन० पी० बग० 31 मई 21 28 जून 5 12 19 जुलाई 1884 बी० ओ० आई० 30 जून 15 31 जुलाई 1884 जून जुलाई 1886 तथा आर० एन० पी० बग० 2 9 16 23 30 जनवरी, 3 10 24 जुलाई 1886 म उल्लिखित पत्र-पत्रिकाए शफीक हिंद 22 मई (आर० एन० पी० पी 31 मई 1886) रफ्तारे हिंद 26 जून (वही 5 जुलाई 1886) बगाली 10 जून 1885 बी० एस० पोतुदु गुरु रिप० आई० एन० सा० 1885 पृ० 72- बगाली 3 अप्रल, 17 जुलाई 1886, मराठा 17 अक्तूबर 1886 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III, पृ० 6 12 4 बाँब प्रसीडेंसी एसोसिएशन द्वारा 27 अगस्त 1886 को प्रस्तुत मानन पूर्वोक्त स्थल मरठ एसोसिएशन और मद्रास महाजन सभा का स्मरण-पत्र रिपोर्ट आफ दि फाइनास कमेटी 1886 खड 2 प० 452 3 हिंद 2 मई 1887 बगवासी 26 फर (आर० एन० पी० बग० 5 मार्च 1887) रास्त गुफ्तार 2 अप्रल (आर० एन० पी० बब 27 अप्रल 1887) गुलजार उल अखबार 15 दिस० (आर० एन० पा० एम० 15 दिस० 1887), जाशा पूर्वोद्धृत पृ० 155 हिंदू, 22 जून 1888 1 जून 1891 3 फरवरी 1892, 31 जुलाई 1893 2 अप्रैल 1894 हिंदुस्तान 5 फरवरी (आर० एन० पी० एन०, 10 फर० 1889) समय 10 मार्च सजीवनी 11 मार्च (आर० एन० पी० बग० 18 मार्च 1893) चारु वार्ता 20 मार्च सहचर 22 मार्च (वही 1 अप्रैल 183) हिंदुस्तान 5 अप्रैल (आर० एन० पी० बब० 11 अप्रैल 1876) वाचा स्पीचेज परिशिष्ट 26 ए० बी० पी० 27, 28 फरवरी 1897 मराठा 14 मार्च 1897 सजीवनी 13 फरवरी (आर० एन० पी० बग०, 20 फरवरी 1897),

24 मार्च के उड़िया और नवसवाद (वही, 15 मई 1897) मद्रास स्टडड, 11 मा एस० वी० आ० आई० 21 मार्च 1897) नात प्रकाश, 11 मार्च सत्य ि काठियावाड टाइम्स 10 मार्च (आर० एन० पी० बब 13 मार्च 1897) श्री सय 17 मार्च, इंडिपेंडेंट, 21 मार्च (वही 27 मार्च 1897) आजाद 5 मार्च हिंदुस्ता (वही 10 मार्च 1897) प्रजमते हिंद 3 मार्च रफी उल अखबार 5 अप्रल (वही 1897), कर्णाटक प्रकाशिका 8 मार्च (आर० एन० पी० एम० 15 मार्च 1897) 16 मार्च (वही 31 मार्च 1897) स्वदेशमित्रन 1 अप्रल (वही 15 अप्रल 1897) 30 सित० (वही 15 अक्तू० 1898) स्वदेशमित्रन 14 अप्रल (वही 30 अप्र हितवादी 3 मार्च (आर० एन० पी० बग० 11 मार्च 1899 (वही 30 अप्रल 1899) 3 मार्च (आर० एन० पी० बग०, 11 मार्च 1899) आंध्र प्रकाशिका 10 मार्च (उ पी० एम० 15 मार्च 1900) दत्त इंग्लैंड ऐंड इंडिया पृ० 165

120 वी० ओ० आई० जुलाई 1886

121 बगवान सजीवनी, 17 जून सहचर 18 जून समय, 23 जून (आर० एन० पी० बग 1884) *अमृत पत्र 29 जुलाई (आर० एन० पी० पी० एन० 4 अगस्त 1884)* जुलाई (वा० ओ० आई० 31 जुलाई 1884) एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III पृ०

122 नौरोजी पसेज पृ० 170 पावर्टी पृ० 142 210 सी० पी० ए० पृ० 173 4 अ *सी० 1885 का प्रस्ताव सख्या VI जोशी पूर्वोद्धत पृ० 102-05 111 2 131 5* मई (आर० एन० पी० बब 4 जून 1898) दत्त ई० एच० II पृ० XVII 612

123 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 55 61 27 अगस्त 1886 का बाब प्रसीडेंसी एसोसिएशन *पूर्वोक्त स्थल राय पावर्टी पृ० 311 8 गोखले स्पीचेज पृ० 1202*

124 विशेषतया देखिए नौरोजी पावर्टी पृ० 149 150 और आगे उन्होंने इस तथ्य को प्रस्तुत किया कि व्यावहारिकतया इग्लैंड और भारत के बीच वित्तीय सबध इस प्रकार के प्रकार के मालिक और नौकर के बीच होते हैं (स्पीचेज पृ० 163 337 342 पृ० 78 93 सी० पी० ए० पृ० 168)

125 प्रस्ताव V अनेक अन्य भारतीय नेताओं ने दोनों देशों के बीच खर्चों के समुचित वि *माग का पूर्ण समर्थन किया उद्धरणों के लिए देखिए आगे इस माग के विस्तृत वि* सबधित विवरण उदाहरण के रूप में देखिए आर० एम० सायानी मा० पी० ए० प आई० एम० वी० ओ० आई० मई जून जुलाई में उल्लिखित पत्र-पत्रिकाए गोखले *नौरोजी एस० एन० बनर्जी और एस० अय्यर के वित्तीय कमीशन के समक्ष साक्ष्य* फाइनेंस इन इंडिया पृ० XX और ई० एच० II पृ० 213

126 गोखले स्पीचेज पृ० 1204-07 वाचा, पृ० 394-5 नौरोजी स्पीचेज पृ० 343 पावर्टी *एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 253-4 268-9 पा० मेहता स्पीचेज पृ० 361* स्पीचेज II पृ० 46 ए० बी० पी०, 4 जून 1883

127 देखिए पीछे

130 ए० बा० पी० 24 जून 15 सित० 1895, आर० एन० पी० बब 22, 29 जून 1895 मे, आर० एन० पी० बग० 29 जून 6 जुलाई 1895 मे, आर०एन०पी० एन०, 4 जून 2 9 16, 23 30 जुलाइ 1895 म आर० एन० पी० एम०, 30 जून 15, 31 जुलाई 1895 मे उल्लिखित पत्र पत्रिकाए, एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 256, नौरोजी स्पीचेज प० 351, राय पावर्टी प० 338

131 ए० बी० पा० 11 जुलाई 1902 हिंदू 18 जुलाई 1902 आर० एन० पी० बब 26 जुलाई 23 अगस्त 1902 आर० एन० पी० एम०, 19 26 जुलाई 1902 आर० एन० पी० पी० एन० 19 26 जुलाई 9 16 23 अगस्त 1902 आर० एन० पी० बग०, 19 26 जुलाई 1902 और आर० एन० पी० पी०, 2 अगस्त 1902 में उल्लिखित पत्र-पत्रिकाए

132 हितवाणी 30 अक्तू० (आर० एन० पी० बग० 7 नव० 1903), इडियन पीपुल 6 नव० (आर० एन० पी० यू० पी० 7 नव० 1903), एडवाकेट 13 दिस०, (वही, 19 दिस० 1903)

33 नौरोजी पावर्टी प० 142 सी०पी०ए० 167 8 171 स्पीचेज, पृ० 146 151 5 158 162 3, 299 330-6 380 परिशिष्ट प० 78 9, गोखले स्पीचेज प० 1208, पी० ए० बारलू, एल० सा० पी० 1897 खड XXXVI पृ० 231, जी० एस० अय्यर विलबी कमीशन खड III प्रश्न 19800 दत्त ई० एच० प० 409 ई० एच० II प० XVI XVII 605 613 इस सबध म इन नेताओ ने अपन शासको का स्मरण कराया कि भारतीय साम्राज्य को पान म इग्लैंड ने अपना ओर स तो एक पाई भी खच नहा की 1857 के विद्रोह को कुचलने क खर्चे को मिलाकर भारतीय साम्राज्य का विजित करने के सारे खर्चे का भार भारतीय जनता ने ही उठाया है नौरोजी पावर्टी, पृ० IX 210 सी० पी० ए० प० 170, स्पीचज पृ० 222 351 परिशिष्ट प० 78 गोखले स्पीचज, पृ० 1207, दत्त ई० एच० प० 399 406 409 स्पीचज II पृ० 46

134 नौरोजी पावर्टी पृ० 142 657 सी० पी० ए० प० 167 8 स्पीचेज पृ० 146 150 158 9 337-40 परिशिष्ट प० 5 23 43-4 75 79 89 90 वाचा, स्पीचज प० 400 परिशिष्ट प० 33 सी० पी० ए० प० 618 एस० एन० बनर्जी विलबी कमीशन खड III प्रश्न 19419 जी० एस० अय्यर वही, प्रश्न 19800

135 इडियन स्पेक्टेटर 25 फरवरी (आर० एन० पी० बब, 3 मार्च 1883), एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 254-5 नौरोजी स्पीचेज प० 340 परिशिष्ट प० 79, वाचा स्पीचज परिशिष्ट प० 33 आई० एन० सी० 1898 का प्रस्ताव XIII (बी) दत्त ई० एच II पृ० XVI XVII 215 613

136 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, प 256-7 एच० ए० वाडिया रिप० आई० एन० सी० 1895 पृ० 91 सी० शंकरन नायर सी० पी० ए०, प० 386 दत्त स्पीचज I प० 35 वाचा, सी० पी० ए०, पृ० 618 9 स्पीचज पृ० 400

137 फाइनल रिपोर्ट आफ दि रायल कमीशन आन दि एडमिनिस्ट्रेशन आफ दि एक्सपेंडीचर आफ इडिया (खड IV) (हाउस आफ कामन्स) 1900 खड 29 प० लगभग 131

138 1900 का प्रस्ताव XI

139 वाचा सी० पी० ए पृ० 618 स्पीचज पृ० 398 400-01 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए पृ० 708 ई एच० II पृ० 557 553 बगाली 24 अप्रैल 1900 मराठा और केसरी हिंदू 6 मई (आर० एन पी० बंब 12 मई 1900) हिन्दुस्तानी 25 अप्रैल (आर० एन० पी० एन

1 मई 1900) स्वदेशमित्रन 16 अप्रैल (आर० एन० पी० एन० 30 अप्रैल 1900)

140 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 12

141 वही, पृ० 154-5

142 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 456-7

143 प्रोसीडिंग्स आफ कौंसिल आफ दि गवर्नर आफ बांबे 1895 खंड XXXIII प० 90-1

144 वही 1896 खंड XXXIV पृ० 119 और देखिए इसी अध्याय के पृ० 2 और 3

145 वाचा स्पीचज परिशिष्ट, पृ० 31

146 प्रस्ताव III (ii) इसी प्रकार 1904 में कांग्रेस ने मांग की कि जब तक बजट की बचत में करदाताओं को राहत देकर सरकार के अपने खर्चों को बढ़ाने के प्रलोभन की आशका को समाप्त किया जाए सरकार को चाहिए कि अपने बजट की बचत के एक भाग को जनता को लाभान्वित करने वाले अत वैज्ञानिक कृषि सबधी तथा औद्योगिक शिक्षा डाक्टरी राहत की सुविधाओं में वृद्धि कार्यों में खर्च करे तथा अवशिष्ट राशि को स्थानीय तथा नगर प्रशासन मडलों को अत्यावश्यक रूप से अपेक्षित सफाई सुधार तथा दूरस्थ क्षेत्रों में सचार साधनों के विकास कार्यों को हाथ में लेने के लिए सहायता देने में खर्च करे (प्रस्ताव VIII सी)

147 गोखले स्पीचज पृ० 92 और देखिए पृ० 109 लोक कल्याण के खर्चों में वृद्धि की वकालत करने वाले कुछ और नेता थे नौरोजी स्पीचज परिशिष्ट पृ० 25 एस० एन० बनर्जी एस० ऐंड डब्ल्यू०, परिशिष्ट प० 22 5 जी० एस० अय्यर विलबी कमीशन खंड III प्रश्न 19002

148 वकील पूर्वोद्धत पृ० 158-67 555 6 566

149 आई० एन० सी० 1891 1892 1893 और 1894 के प्रस्ताव सख्या VIII XII XV और XX क्रमश के० टी० तेलग मिनिट टु दि रिपोर्ट आफ दि इंडियन एजुकेशन कमीशन 1883 पृ० 607 और रिप० आई० एन० सी 1888 पृ० 152 रानाडे मेमोरेंडम आफ डिसेंट रिपोर्ट आफ दि फाइनांस कमेटी, 1886 खंड पृ० 411 ए० बी० पी० 21 मई 1885 26 जुलाई 1888 सहचर 2 सित०, सुरभि 8 सितबर (आर० एन० पी० बग० 12 सित० 1885) चारु वार्ता 7 सित० पताका 11 सित० (वही 19 सित० 1885) सोमप्रकाश 28 सित० (वही 3 अक्तू० 1885) सुरभि औ पताका 10 जून (वही 19 जून 1886) 1888 के भारत सरकार के शिक्षा बिल पर बगाल और बबई के समाचारपत्रों मे टिप्पणिया विभिन्न पत्रो और जुलाई अगस्त 1888 के नेटिव प्रेसो मे क्रमश उद्धत एच० सी० मित्रा रिप० आई० एन० सी० 1891 पृ० 49 पी० मेहता, स्पीचेज पृ० 331 5 339 55 502-04 508 बी० एन० सील रिप० आई० एन० सी 1892 पृ० 87 8 डब्ल्यू सी०-बनर्जी, सा०पी०ए० प० 130 गोखले स्पीचज प० 56-7 1193

150 पी० मेहता स्पीचज पृ० 334 एक अन्य अवसर पर उन्होंने कहा कि भारत में उच्च शिक्षा के अनेक विरोधी से कहा भारत मे प्रत्येक महाविद्यालय को विपले नाग सेन की जगह मानते हैं और इसीलिए चाहते हैं कि जितने कम विद्यालय हो उतना ही अच्छा है (वही प० 348)

151 आई एन सी० 1888 का प्रस्ताव सख्या IX और आग

152 प्रस्ताव सख्या XII और देखिए तैलग मिनिट टु दि रिपोर्ट आफ इन्डियन एजुकेशन कमीशन 1883 पृ० 614

153 प्रस्ताव सख्या XX 1903 के शिक्षा सुधारो पर आपत्ति करते हुए 1903 म काग्रेस के अध्यक्ष लाल मोहन घोष ने घोषणा की हम अपने देश के अपेक्षाकृत निर्धन छात्रो के मार्ग में कठिनाइया

उत्पन्न करना नही चाहते हम अपने दरिद्र देश मे एटन और आक्सफोर्ड के स्तर की आभिजात्य (ठाट-बाटवाली) शिक्षापद्धति का प्रस्तावन और प्रचलन नहीं चाहते' (सी॰पी॰ए॰, पृ॰ 777) और देखिए—तलग पूर्वोक्त स्थल प॰ 606 08

154 प्रस्ताव स॰ 11 इसी के साथ अपने ततीय प्रस्ताव मे काग्रेस ने देश की दरिद्रता के निवारण के उपाय क रूप म शिक्षा के प्रसार का समथन किया लाल मोहन घोष ने अपने अध्यक्ष भाषण मे जनता की नि शुल्क और अनिवाय शिक्षा के लिए जोरदार तक दिए (सी॰पी॰ए॰ प॰ 777 9) और दखिए जी॰ एस॰ अय्यर विलवी कमीशन खड III प्रश्न 19685

155 जोशी पूर्वोद्धत, प॰ 222 826 1076, 1086-7 1090 और आगे तलग रिप॰ आई॰ एन॰ सी॰ 1888 प॰ 152 जी॰ एस॰ अय्यर वही प॰ 153-4, एच॰ सी॰ मित्रा रिप॰ आई॰ एन॰ सी॰ 1891, प॰ 49-50 बी॰ एन॰ सील रिप॰ आई॰ एन॰ सी॰ 1892 पृ॰ 87 95 एच॰ सी॰ मित्रा वही, प॰ 95-6 एस॰ एन॰ बनर्जी, सी॰ पी॰ ए॰ प॰ 290-1, एस॰ ऐंड ड्यू॰ परिशिष्ट प॰ 22-4 वाचा, स्पीचेज परिशिष्ट, प॰ 28 9 सी॰ पी॰ ए॰ प॰ 584, 619 मालवीय स्पीचज, प॰ 295, 359-68, पी॰ मेहता स्पीचज प॰ 352 3 457 9 बी॰ जी॰ तिलक प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1896 खड XXXIV प॰ 115 9 एल॰ एम॰ घाष, सी॰ पी॰ ए॰, प॰ 777 9 समाचारपत्रा क मत के लिए दखिए इदु प्रकाश 26 माच (आर॰ एन॰ पी॰ बब 31 मार्च 1883) नव विभाकर 1 माच (आर॰ एन॰ पी॰ बग॰, 6 माच 1886) हितवादी 24 दिस॰ 1898 (आर॰ एन॰ पी॰ बग॰ 1 जन॰ 1899) स्वदेशमित्रन 15 सित॰ (आर॰ एन॰ पी॰ एम॰ 20 सित॰ 1902) केसरी 31 माच (आर॰ एन॰ पी॰ बब 4 अप्रल 1903) इस सबध म एक विचित्र टिप्पणी 20 सितबर 1896 क सर हिंद की थी उसने यह निर्देश किया कि 1896-7 क लिए शिक्षा पर 6 319 000 रुपये बजट के खर्च का तखमीना था तथा मदिरा से वसूल होने वाला उत्पादन शुल्क 5 करोड रुपय था उसन टिप्पणी की कि वे भारत को पियक्कड बनाने क लिए अत्यधिक उत्सुक हैं परतु ज्ञान क प्रकाश के व्यापक प्रसार के प्रति सवथा उदासीन हैं उनके पास 'आबकारी शुल्क' क 1/11 भाग स अधिक खच करने के लिए हृदय ही नहा है (कि हर 100 म 23 व्यक्तियो क स्व ग तक सीख मरें ब्रिटिश शासन क 150 वष के बाद भी देश म सभ्यता का यह कसा सुन्दर प्रसार है आर॰ एन॰ पी॰ बब 26 सित॰ 1896) तकनीकी शिक्षा क लिए दखें अध्याय 2

156 रिप॰ आइ॰ एन॰ सी॰ 1891 पृ॰ 51

157 गोखले स्पीचेज पृ॰ 192 3 1200

158 प्रायमिक शिक्षा क लिए बजट क अपेक्षाकृत अधिक बडे भाग की व्यवस्था तथा केन्द्रीय सरकार से प्रातीय राजस्व के एक निश्चित भाग के शिक्षा के लिए निर्धारण करने की वकालत करते हुए गोखले ने प्रायमिक शिक्षा के लाभा का विस्तृत वणन किया और कहा शिक्षा का अथ है समाज की जनसख्या का बुद्धिमत्ता का स्तर उन्नत करना सुशिक्षित श्रम के प्रति अपेक्षाकृत अधिक रुचि और उत्पादन उत्पन्न करना उचित और अनुचित म विवेक का अपेक्षाकृत अधिक योग्यता उत्पन्न करना (प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1901 खड XXXIX प॰ 250-1)

159 गोखले स्पीचेज पृ॰ 59-62 तथा दखिए, प॰ 25-6 43-4 95-6

160 वही पृ॰ 61

161 सर्नग मिनिट टु दि रिपोर्ट आफ दि इंडियन एजुकेशन कमीशन, 1883 पृ० 609 बंगाली 17 अप्रैल 1886 मराठा 1 अगस्त 1886, भारतीय समाचारपत्रों के विचारों का सम्पादकीय सार-संग्रह, बी० ओ० आई० अगस्त 1886, इंडियन नेशन, 2 अगस्त इंडियन मिरर 8 अगस्त ट्रिब्यून 14 अगस्त बिहार हेराल्ड 17 अगस्त (बी० ओ० आई० अगस्त 1880) भारत मिहिर 8 अप्रैल नवविभाकर 12 अप्रैल (आर० एन० पी० बंग० 17 अप्रैल 1886) भारत मिहिर 15 अप्रैल सहचर 14 अप्रैल (वही 24 अप्रैल 1886) साधारणी और ढाका प्रकाश, 25 अप्रैल (वही 1 मई 1886) सुरभि ओ पताका 12 मई (वही 22 मई 1886) भारतवासी 14 सित० नवविभाकर साधारणी 6 सित० (वही 11 सित० 1886) डब्ल्यू० सा० बनर्जी सा० पी० ए०, पृ० 130 पी० मेहता स्पीचेज पृ० 334 349-51 506-08 एन० सी० मित्रा रिप० आई० एन० सी० 1891 पृ० 49-50 बी० एन० सील रिप० आई० एन० सी० 1892 पृ० 87 90 एच० सी० मित्रा वही पृ० 96 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 291 2 वाचा सी० पी० ए० पृ० 628

162 देखिए अध्याय III

163 देखिए अध्याय V

164 देखिए अध्याय X

165 जोशी पूर्वोद्धृत प० 64 नवविभाकर 1 मार्च (आर० एन० पी० बंग० 6 मार्च 1886) पीछे पादटिप्पणी संख्या 143 और 145 मालवीय, स्पीचेज पृ० 368 76 आई० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव VII (ग)

166 आई० एन० सी० 1886 1887 1888 1892 1894 1901 और 1904 के प्रस्ताव क्रमश XI III III XII IV और XIII, पी० मेहता स्पीचेज पृ० 457 जोशी पूर्वोद्धृत प० 154 222 ए० एम० बोस सी० पी० ए० पृ० 447 8 वाचा सी० पी० ए० प० 619 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 717 8

167 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 222 पी० मेहता स्पीचेज प० 457 ए० एम० बोस सी० पी० ए० प० 450-2 वाचा सी० पी० ए० पृ० 619 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 719-21 विशम्भरनाथ एन० सी० पी० 1897 खंड XXXVI पृ० 183 गोखले स्पीचेज पृ० 91 2 95 इसका निर्देश पहले ही पीछे किया जा चुका है कि भारतीय नेताओं ने पुलिस व्यवस्था म योग्यता और ईमानदारी बढ़ाने के लिए निम्न वेतनभोगी पुलिस कर्मचारियों के वेतन मे वृद्धि की वकालत की

168 एन० सी० पी० 1894 खंड XXXIII पृ० 306 इसी प्रकार एक अन्य वित्त सदस्य ई० ला ने टिप्पणी की आदरणीय श्री गोखले एक ऐसे वर्ग से सबंधित हैं जो खजाने के द्वार पर आकर 'दो' 'दो' की रट लगाता है परन्तु वह बढ़ हुए खर्चे ही नहीं चाहता प्रत्युत वर्तमान चालू करों को भी समाप्त करवाना चाहता है (एल० सी० पी० 1904 खंड XLIII प० 539 और देखिए वजन स्पीचेज II प० 464

169 नौरोजी स्पीचेज पृ० 319-20 दत्त ई० एच० I प० 308 9 406-9 ई० एच० II प० XV XVI 215 20 373 5, 604 भारतीय नेताओं ने अन्य सन्दर्भों म भी इस ओर सकेत किया था कि भारतीय रक्त और पैसे के मूल्य पर साम्राज्य हथियाया गया था नौरोजी पावर्टी पृ० 567 640 स्पीचेज पृ० 221 2 गोखले स्पीचेज पृ० 120 दत्त ई० एच० I प० 399

170 ए० एम० बोस सी० पी० ए० प० 427 448

171 गोखले स्पीचेज, पृ० 26 8 तथा 109 क्रमश, और देखिए डी० ई० वाचा, रिप० आई० एन० सी० 1891 प०25, इंडियन एडवोकेट 18 अगस्त (आर० एन०पी०यू०पी० 27 अगस्त 1904)

172 बी०जी० तिलक प्रासीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर आफ बाब 1895 खड XXXIII, प० 91 गोखले स्पीचेज प० 61, आइ० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव VIII गोखले रिप० आई० एन० सी० 1904 प० 169 मराठा ने अपने 29 मई 1904 के अक मे आय कर समाप्त करने का विरोध किया उसने इसके बदले यह प्रस्ताव किया कि इसकी आय के लिए एक न्यास बना दिया जाए जो इस रकम को शिक्षा पर खच करे इससे पूव अमृत बाजार पत्रिका ने अपने 3 अगस्त 1900 के अक म लिखा कि धरती पर लगे ऊचे लगानो को भी यदि कृषि सुधारो सफाई और ग्रामीण शिक्षा आदि पर खच किया जाता, तो हम इन लगानो को उपयोगी मान लेते

173 जोशी पूर्वोद्धत प० 751

174 वही प० 1088

175 गोखले स्पीचज प० 1200

176 विलबी कमीशन खड III प्रश्न 19686

177 सी० एन० वकील पूर्वोद्धत अध्याय I

178 गोखले स्पीचज पृ० 1156-7 और देखिए वही प० 21 1159 60, नौरोजी सी० पी० ए० प० 155 6 स्पीचज पृ० 300, जोशी पूर्वोद्धत प० 203 207, 220-1 229-30 एस० एन० बनर्जी एम० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 2 3 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 3-4 सी० पी० ए० प० 620 जी० एस० अय्यर विलबी कमीशन, खड III प्रश्न 18559 मालवीय स्पीचज प० 287 90 सी० शकरन नायर सी० पी० ए० पृ० 385 दत्त ई० एच० प० XV और ई० एच० II प० 386-7

179 आई० एन० सी० 1889 और 1890 के प्रस्ताव क्रमश IX और III पी० मेहता सी० पी० ए० प० 90 नौरोजी स्पीचेज प० 107 8 सी० पी० ए प० 156 मालवीय स्पीचज प० 17 20 46 216-7 गोखले स्पीचज प० 1158 1160-1 एस० एन० बनर्जी एम० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 3 जी० एस० अय्यर रिप० आई० एन० सी० 1894 प० 77 विलबी कमीशन खड III प्रश्न 18559 18765 18769 एच० एन० दत्त, रिप० आई० एन० सी० 1897 प० 44

180 गोखले स्पीचज प० 1161 मालवीय स्पीचज प० 287, दत्त ई० एच० I पृ० XV ई० एच० II प० XVIII 360

181 उदाहरणाथ भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के 20वें अधिवेशन म जी० एस० अय्यर ने दावा किया कि 1892 म कौंसिल म बजट पर विचार विमश करने की जो छूट मिली थी वह वास्तव म कोरी बकवास और निरा धोखा था क्योंकि इस कौंसिल म किए गए भाषणो का सरकार की नीति और प्रशासन पर कोई भी प्रभाव नहीं पडता था उन्होंने आगे टिप्पणी करते हुए कहा बजट पहले से ही तैयार रहता है उसके सभी पद पूवनिर्धारित रहते हैं और कौंसिल के अतिरिक्त सदस्यो को केवल अपना मत प्रकट करना होता है और इसके लिए पहले से ही निश्चित नियमो का पालन भर होता है (रिप० आई० एन० सी० 1904 प० 181) और देखिए नौरोजी सी० पी० ए० प० 154 5 स्पीचज पृ० 245 पावर्टी प० 637 8 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ 230 एम० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 3 आर० एम० सयानी सी० पी० ए० प० 357

गोखले, स्पीचेज, प० 1158, 1161 वाचा स्पीचेज, परिशिष्ट, प० 3 मालवीय स्पीचज प० 50

182 प्रस्ताव III

183 सी० पी० ए०, पृ० 620

184 प० 601 उन्होंने यह भी शिकायत की कि ब्रिटेन का प्रत्येक हित और ब्रिटिश जनता का प्रत्येक वर्ग भारत सरकार पर दबाव डाल सकता है परतु भारत की जनता अपनी ही सरकार पर कोई दबाव नहीं डाल सकती है(प० 598) तथा देखिए उनकी ई०एच० I प० XV ई० एच० 2 प० 387 स्पीचज I पृ० 41, नौरोजी स्पीचज पृ० 108 131 222 245 300 356 पावर्टी प० 638 9 सी० पी० ए० प० 172 3 जोशी पूर्वोद्धत प० 220 गोखले स्पीचज पृ० 8 1156 1158 9 1161 1169, मालवीय स्पीचज प० 287 आर० एम० सयानी सी० पी० ए० पृ० 357

185 नौरोजी स्पीचज प० 108 आई० एन० सी० 1885 1886 और 1897 के प्रस्ताव क्रमश III IV और III (1) गोखले स्पीचज प० 1162 वाचा स्पीचज परिशिष्ट प० 5 एस० एन० बनर्जी एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 3 6 जी० एस० अय्यर विलवी कमीशन खड III प्रश्न 18767 18834 18847

186 एस० एन० बनर्जी एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 5 6

187 गोखले स्पीचेज पृ० 1164 1904 में भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने इस माग को व्यापक सदभ मे दोहराया प्रस्ताव IX (ए) तथा देखिए इदु प्रकाश 4 जून (आर० एन० पी० बब० 9 जून 1883)

188 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट प० 34 एस० एन० बनर्जी एस० एंड डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 5 6 जी० एस० अय्यर बिलवी कमीशन खड III प्रश्न 18767 आई० एन० सी० 1897 का प्रस्ताव सख्या III (1) आर० सी० दत्त ने 1903 म बिना किसी निर्धारित सिद्धात के इस माग को उठाया (ई० एच० II प० 600) तथा भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने व्यापक प्रशासनिक सुधारो के सदभ म इस माग को उठाया (प्रस्ताव स० IX) और देखिए दत्त स्पीचेज 1 प० 98

189 नौरोजी स्पीचेज प० 105 भारतीय नेताओ की उदीयमान पीढी के प्रथम वास्तविक अखिल भारतीय सम्मेलन के महान ऐतिहासिक महत्व के प्रति सम्यक रूपेण जागरूक दादाभाई नौरोजी ने भावी राष्ट्रवादी प्रयास के लिए एक लक्ष्य निश्चित किया मैं यहा यह कह सकता हू कि भारत की इस प्रथम राष्ट्रीय काग्रेस का प्रधान काय जनता की उच्चतम और अतिम आकाक्षाओ को स्पष्ट रूप स और साहसपूवक प्रकाशित करना है हमें तत्काल अपनी आकाक्षाओ की प्राप्ति म सफलता मिलती है अथवा नही यह एक दूसरी बात है परतु हमारे शासको को यह ज्ञात होना चाहिए कि हमारी उच्चतम आकाक्षाए कौन सी हैं यदि हम स्पष्ट शब्दो म यह कहते हैं कि हम स्थाई समिति को सामान्य नियत्रण क्षमता प्राप्त होने के अतगत इग्लड स भारत को हस्तातरित वास्तविक सरकार लेना चाहते हैं और इसके साथ साथ हम यह चाहते हैं कि हम पर कराधान का अधिकार हमारी प्रतिनिधि परिषदो को होना चाहिए हमे बता देना चाहिए कि हमारा अतत लक्ष्य क्या है ? (इस पर बल दिया गया) (वही प० 109) और देखिए वही प० 222 300 परिशिष्ट प० 10 108 और आगे बाद म 1897 म डा० ई० वाचा को लिखित पत्र मसानी पूर्वोद्धत प 379 पर

190 आर० एन० पी० यू० पी० 23 अगस्त 1902 इग्लड में ताजपोशी के अवसर पर उपस्थित

अतिथिया पर हुए खर्चे की दनदारी भारत पर डालने की तीव्र निंदा करते हुए और इस तथ्य पर शोक प्रकट करते हुए बडा ही वीरता तथा साहस के साथ उन्होंने घोषित किया 'निधन भारत देश एक बहुत कठिन समय स गुजर रहा है भारतीयो की दशा तब तक एसी बनी रहेगी जब तक इस देश के सपूत अपने अधिकारो के लिए डट नही जाते तथा उन अधिकारों की प्राप्ति के लिए उपनिवेशियो की तरह धीरता तथा साहस का परिचय न दें अन्यथा ब्रिटिश सरकार के हाथो वित्तीय मामलो म उदारता की कौन कहे न्याय तथा औचित्य की भी आशा नहा की जा सकती

191 उदाहरणाथ दखिए सहचर 26 जनवरी (आर० एन० पी० बग० 7 फरवरी 1880) सजीवनी, 9 जून (वही 16 जून 1883) नवविभाकर 29 माच (वही 3 अप्रल 1886), मद्रास महाजन सभा का ज्ञापन *रिपोर्ट आफ दि फाइनास कमेटी 1886 खड II प० 453 मालवीय स्पीचेज* पृ० 7 एमिनेंट इडियस, प० 29 पर डब्ल्यू० सी० बनर्जी, मराठा 1 अप्रल 1894 गुजराती 24 माच (आर० एन० पी० बव 30 माच 1895) जनोपकारी 16 जून (आर० एन० पी० एम० 30 जून 1896) हिंदुस्तान, 28 दिस० (आर० एन० पी० एन० 29 दिस० 1897) दस इडियन पालिटिक्स प० 51 फमिस इन इडिया पृ० XX ई० एच० I पृ० 408 और ई० एच० II पृ० XVII XVIII 380-1 387 599 601 एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III प० 136 145 159 सी० पी० ए० प० 710-1, बगाली, 22 जुलाई 1903

192 उदाहरणाथ सुरेंद्रनाथ बनर्जी न 1895 के काग्रेस के अपने अध्यक्षीय भाषण म बडे निश्चन शब्दों म कहा कि बिना प्रतिनिधित्व के कराधान नहा यह आधुनिक सभ्य सरकार का तात्विक सिद्धांत है काग्रेस ने सरकार से प्रशासन मे इस सिद्धात को अपनाने की बात नहीं कही है उन्होंने कांग्रेस के प्रतिनिधियो को यह निर्देश किया कि राजनीति एक व्यावहारिक कला है इसम कोरे सिद्धाता की बातें करने से काम नही चल सकता (सी० पी० ए० पृ० 236-7)

193 प्रस्ताव स० III

194 प्रस्ताव स० IV

195 प्रस्ताव स० II I और II और III क्रमश

196 उदाहरणाथ 1887 म भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस को सबोधित करते हुए मदनमोहन मालवीय ने तक दिया हम आपसे न्याय और औचित्य के नाम पर अपने बजट पर थोड़ा बहुत नियत्रण का अनुमति की प्राथना करते हैं कौंसिल म लाए जाने पर अपने प्रतिनिधियो के माध्यम स इस पर कुछ कहने की स्थिति म रखने के लिए हम आपसे अनुनयविनय करते हैं (स्पीचेज, पृ० 20) और देखिए, इडियन स्पेक्टेटर 6 माच इदु प्रकाश 7 माच (आर० एन० पी० बव 12 माच 1881) नेटिव ओपीनियन 13 माच (वहा 19 माच 1881), एस० एन० बनर्जी स्पीचेज III पृ० 9 26 34 38 नौरोजी स्पीचेज पृ० 109-10 साम प्रकाश 24 जन० (आर० एन० पी० बग० 29 जन० 1887)

197 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 236 और एस० ऐंड डब्ल्यू०, परिशिष्ट 4-6 आर० एम० सयानी सी० पी० ए० पृ० 369 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 3-5 जी० एस० अय्यर सिलबी कमीशन खड III प्रश्न 18765 18767 18873 4 आई० एन० सी० 1897 का प्रस्ताव III (1) सी० शकरन नायर सी० पी० ए० पृ० 386 मालवीय स्पीचेज प० 222 3 आई० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव IX

198 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 236-7 एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट पृ० 4-5 आर०

एम० सयानी सी० पी० ए०, प० 369 गोखले स्पीचेज प० 1161 वाचा स्पीचेज परिशिष्ट, प० 4, सी० शंकरन नायर सी० पी० ए० प० 386 एच० एन० दत्त रिप० आई० एन० सी०, 1897 प० 44 मालवीय, स्पीचेज प० 293

199 एस० एन० बेनर्जी सी० पी० ए० प० 237 एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट पष्ठ 5 जी० एस० अय्यर विलबी कमीशन खंड III प्रश्न 18767 18875 आई० एन० सी० 1904 का प्रस्ताव स० IX तथा देखिए, नौरोजी स्पीचेज प० 106

200 गोखले स्पीचज प० 1161

201 वही एस० एन० बनर्जी, एस० ऐंड डब्ल्यू० परिशिष्ट प० 5 मालवीय स्पीचज प० 293-4 एच० एन० दत्त, रिप० आई० एन० सी० 1897 प० 44

निकासी

> ब्रिटिश शासन की लोकोपकारी प्रवृत्ति की चर्चा तो केवल कल्पित कहानी के अतिरिक्त और कुछ नहीं। इस शासन की सही प्रवृत्ति तो देशवासियों का रक्त चूसना है।
>
> अपनी सरकार के बिना भारतीय वर्तमान आर्थिक निकासी से मुक्ति नहीं पा सकते। किसी भी प्रकार के कोई भी शामक उपाय उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकते। प्रशासनिक तंत्र में किसी प्रकार के यांत्रिक हेर फेर अथवा सुधार से न तो भारतीयों को कोई लाभ हो सकता है और न ही होगा।
>
> दादाभाई नौरोजी

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं के मत में भारत की दरिद्रता के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारणों में एक था—भारत से इंग्लैंड को संपत्ति की निकासी। नेताओं के एक वर्ग के अनुसार तो यह निकासी भारत के सभी आर्थिक दोषों का प्रधान आधारभूत कारण है। वस्तुतः हमारे अध्ययन काल की अवधि में राष्ट्रवादी आंदोलन का प्रमुख आधार 'निकासी सिद्धांत' अथवा यह विश्वास था कि भारत की राष्ट्रीय संपत्ति अथवा कुल वार्षिक उत्पादन का एक भाग इंग्लैंड को निर्यातित किया जा रहा है जिसके बदले में भारत को कोई समुचित आर्थिक अथवा भौतिक लाभ नहीं मिलता। अथवा दूसरे शब्दों में भारत को पराधीन रूप से ब्रिटिश राष्ट्र को खिराज देने के लिए बाध्य किया जा रहा है। धीरे धीरे कुछ वर्षों के उपरांत देश में जनता के दिलों में निकासी सिद्धांत ने इतनी अधिक व्यापक लोकप्रियता और प्रभाव जमा लिया कि कितने ही ब्रिटिश प्रवक्ताओं और लेखकों को यह सिद्ध करने के लिए प्रबल प्रयास करने को बाध्य होना पड़ा कि यह सारी की सारी कल्पना आर्थिकता की दृष्टि से निराधार तथा भ्रांतिमूलक है।

निकासी सिद्धांत के सर्वमान्य प्रमुख आचार्य दादाभाई नौरोजी थे। उन्होंने अपने लंबे सार्वजनिक जीवन-काल की सारी ही अवधि में किरन मवन्य के साथ रात दिन इसके लिए संघर्ष किया। इस सिद्धांत की उलझनों को सुस्पष्ट करने की चेष्टा तो थोड़े से ही नेताओं ने की परंतु इसमें विश्वास रखने और इसका प्रचार करने वालों की संख्या कम नहीं थी। दादा

भाई नौरोजी ने 1867 मे अपनी मान्यता को वाणी दी और उसके उपरात यह धीरे धीरे व्यापकता और समथन प्राप्त करती गई। उनके ग्रथो—'पावर्टी ऐंड आनब्रिटिश रूल इन इडिया' डिगबी के ग्रथ—'प्राम्परस ब्रिटिश इडिया' और दत्त के ग्रथ—'इकोनामिक हिस्टरी आफ इडिया' के दो खडो के प्रकाशित होने पर तो यह मान्यता प्रचार के अपने चरम शिखर पर पहुच गई तथा उसे राष्ट्रवादियो और लोकनेताओ मे व्यापक मान्यता ही मिल गई। इस ग्रथ म हम अपने अध्ययन के अतगत अवधि मे राष्ट्रवादी नेताओ द्वारा प्रचारित तथा मान्य 'निकासी सिद्धात' के विस्तृत विश्लेषण को प्रस्तुत करने के लिए प्रमुख रूप से दादा भाई नौरोजी के भाषणो और लेखो को ही विश्वस्त आधार बनाकर चलेगे।

सवप्रथम, 2 मई 1867 को लदन म हुई ईस्ट इडिया ऐसोसिएशन की एक बैठक के समक्ष पढे गए अपने एक लेख— इग्लडस डट टु इडिया'[1]—मे इस धारणा को प्रस्तुत किया कि ब्रिटेन भारत मे अपने शासन की कीमत के रूप मे उस देश की सपदा को उस देश से छीन रहा है। भारत मे वसूल किए गए कुल राजस्व का लगभग चौथाई भाग देश से बाहर चला जाता है, तथा इग्लड के ससाधनो से जुड जाता है। इसके फलस्वरूप भारत का रक्त निरतर निचोडा जा रहा है। बबई के दो प्रमुख समाचारपत्रो— नेटिव ओपीनियन' और 'रास्त गोफ्तार'—को उन्होंने यह दिखाने के लिए उद्धत किया कि शिक्षित भारतीयो की उदीयमान पीढी उनके विचारो की समथक है।[3] इसके साथ ही देश म व्याप्त आर्थिक दुदशाओ के उपचार के रूप म उन्होने सुझाव दिया कि कम से कम इग्लड की जनता के लिए जो करना उचित है, वह यह है कि वह भारत से छीनी गई सपत्ति भारत को वापस लौटा दें ताकि भारत अपने ससाधनो का विकास कर सके।[4] दादा भाई नौराजी ने 1870 और 1872 मे लदन की क्लासमिति के समक्ष क्रमश पढे गए दो लेखो—'दि वाटस ऐंड मीन्स आफ इडिया'[5] तथा 'आन दि कामस आफ इडिया'[6]—मे भारत से भौतिक और नैतिक धन की निकासी सबधी अपने दृष्टिकोण को फिर से दोहराया। हा, इस सिद्धात के साथ कालातर मे जुडे क्रातिकारी आशय तथा मौलिक चितन का इन लेखो मे अभाव ही था, इस समय धन निकासी के आर्थिक परिणामो की निन्दा करते समय दादा भाई नौरोजी निकासी के लिए भारत और इग्लड के बीच राजनतिक सबध के महत्व के उत्तरदायी होने मे विश्वास रखते थ। उन्होने अभिस्वीकार किया कि यदि इग्लड ने भारत को अपने अधीन नया रूप ही देना है तो भारत को उसका मूल्य चुकाने के लिए प्रस्तुत हो ही जाना चाहिए।[7] उन्होने इग्लड को अवश्य यह परामश दिया कि वह भारत के साथ न्यायोचित ढग से आर्थिक सबधो को स्थापित करने की चेष्टा करे[8] तथा देश के उत्पादन को बढाने की चेष्टा करे ताकि देश दरिद्रता के अभिशाप का भागे बिना ही ब्रिटिश शासन के मूल्य का भुगतान कर सके तथा देश से धन की निकासी का भार उठा सके।[9]

1871 मे अपने द्वारा सगणित लगभग 120 करोड पौंड प्रतिवष की देश म निकासी के प्रति अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा—मैं इसे एक शिकायत के रूप मे नही कह रहा हू। आपको भारत मे की गई सेवाओ का प्रतिदान तो मिलना ही चाहिए परतु प्रश्न तो यह है कि हमारे पास भुगतान के साधन तो होने चाहिए।[10] उन्होंने घोषणा

निकासी

> ब्रिटिश शासन की लाभापकारी प्रवत्ति की चर्चा तो केवल कल्पित कहानी के अतिरिक्त और कुछ नही। इस शासन की सही प्रवृत्ति तो देशवासियो का रक्त चूसना है।
>
> अपनी सरकार के बिना भारतीय वतमान आर्थिक निकासी से मुक्ति नही पा सकते किसी भी प्रकार के कोई भी नामक उपाय उपयोगी सिद्ध नही हो सकते। प्रशासनिक तत्र म किसी प्रकार के यात्रिक हेर फेर अथवा सुधार से न तो भारतीयो को कोई लाभ हो सकता है और न ही होगा। दादाभाई नौरोजी

भारतीय राष्ट्रवादी नताओ के मत म भारत की दरिद्रता के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारणा म एक था—भारत म इग्लड का सपत्ति की निकासी। नेताओ के एक वग के अनुसार तो यह निकासी भारत के सभी आर्थिक दोषा का प्रधान आधारभूत कारण है। वस्तुत हमारे अध्ययन काल की अवधि म राष्ट्रवादी आदोलन का प्रमुख आधार 'निकासी सिद्धात' अथवा यह विश्वास था कि भारत की राष्ट्रीय सपत्ति अथवा कुल वार्षिक उत्पादन का एक भाग इग्लड को नियातित किया जा रहा है जिसके बदले म भारत को कोई समुचित आर्थिक अथवा भौतिक लाभ नहीं मिलता। अथवा दूसरे शब्दो म भारत को पराश रूप स ब्रिटिश राष्ट्र को खिराज देने के लिए बाध्य किया जा रहा है। धीरे धीरे कुछ वर्षों के उपरात देश म जनता के दिलो म निकासी सिद्धात न इतनी अधिक व्यापक लोकप्रियता और प्रभाव जमा लिया कि कितने ही ब्रिटिश प्रवक्ताओ और लेखको को यह सिद्धात खडन के लिए प्रयत्न प्रयास करने को बाध्य होना पडा कि यह सारी की सारी कल्पना आर्थिक की दृष्टि स निराधार तथा भ्रातिमूलक है।

निकासी सिद्धात के सवमान्य प्रमुख आचाय दादाभाई नौरोजी थ। उन्होने अपने लबे सावजनिक जीवनकाल की सारी ही अवधि म विरल सकल्प क साथ रात दिन इसके लिए सघर्ष किया। इस सिद्धात की उलझना का सुस्पष्ट करने की चेष्टा तो थोडे स ही नताओ न की परतु इसम विश्वास रखने और इसका प्रचार करने वालो की सख्या कम न थी। दादा

की कि वस्तुत यह तो इग्लड का ही कर्तव्य है कि वह हमे एक ऐसी सरकार दे, अपनी शक्ति और साख के सभी लाभ हमे दे ताकि हम बिना भूखे मरे अथवा अकाल का शिकार बने ब्रिटिश शासन का मूल्य चुका सकें।[11] उन्होने एक बार फिर देश के उत्पादन मे वद्धि के लिए बडे परिमाण मे विदेशी पूजी के विनियोग की सिफारिश की। इस प्रकार उन्होंने 1870 मे ब्रिटेन से अनुरोध किया कि वह विदेशी शासन के दरिद्रता वधक प्रभावो को दूर करने के लिए बडे परिमाण मे विदेशी पजी का आयात करे।[1] उन्होने आशा की कि यदि समुचित परिमाण मे विदेशी पूजी का भारत देश मे आयात किया गया और उसका यथोचित रूप से विनियोग भी किया गया तो शीघ्र ही वतमान विनीय कठिनाइया और असतोष दूर हो जाएगे।[13]

1871 मे 'सिलैक्ट कमेटी आन ईस्ट इडिया फाइनास' को दिए अपने प्रतिवेदन मे दादा भाई नौरोजी ने एक बार फिर स्वीकार किया कि धन की निकासी विदेशी शासन का ही एक प्राकृतिक आर्थिक परिणाम था।[14] उन्होने ब्रिटिश राजनेताओ से वष प्रतिवष करोडो पौड के भारत से इग्लड को निकासी के भार को समुचित रूप से हल्का करने के तथा भारतीय लोगो की धन की निकासी के न्यायोचित भाग के भुगतान की समुचित और आवश्यक परिमाण तक, क्षमता बढाने के उपायो को ढूढने का अनुरोध किया।[15]

1873 तक जब दादा भाई नौरोजी ने 'भारत की दरिद्रता' पर अपने प्रसिद्ध लेख का प्रथम प्रारूप तैयार किया, तो उस समय तक धन की निकासी पर उनके विचार अपेक्षाकृत अधिक सुप्रसिद्ध रूप से ज्ञात सघषशीलता का रूप ग्रहण करने लगे थे। 1876 तक निकासी-सिद्धात न उनके मन मे सुस्पष्ट रूप ग्रहण कर लिया और उसे उन्होन उसकी समग्रता में ईस्ट इडिया एसोसिएशन की बबई शाखा के समक्ष पढे अपने लेख—'पावर्टी आफ इन्डिया' के सशोधित प्रारूप म अभिव्यक्त किया। इस सिद्धात के दादा भाई नौरोजी द्वारा प्रस्तुत आर्थिक और राजनतिक पक्षो के विस्तत विश्लेषण को तो हम अगले पष्ठो मे पेश करेंगे। यहा केवल इतना ही निर्देश करना चाहते हैं कि उन्होन अपने लख का निष्कष इन जोरदार शब्दो मे निकाला

> ब्रिटिश शासन की भारत के हितो की उपेक्षा करने की और भारतीयो को इग्लड के हित मे दास वत्ति से परिश्रम करने वाले बनाए रखने की अस्वाभाविक नीति के फलस्वरूप सारा शासन गलत, अस्वाभाविक आत्महत्या के गढे म धसता हुआ चला जा रहा है। उन्होने इस कथन के साथ ही चेतावनी दी कि प्रकृति के नियमो का उल्लघन नही किया जा सकता। जब तक प्रकृति के ये नियम अचल हैं, तब तक प्रत्येक उल्लघन के लिए दड का न्याय उसी प्रकार निश्चित रूप से जुडा हुआ है जिस प्रकार दिन के पश्चात रात के आने का क्रम निश्चित रूप से जुडा हुआ है।[16]

इस समय से दादा भाई नौरोजी ने अपने निकासी सिद्धात के प्रचार के लिए तथा निकासी के विरुद्ध प्रचड और प्रबल सघष चलाने के लिए अपना सारा जीवन समर्पित कर दिया। उनके विचार मे निकासी भारत म ब्रिटिश शासन का प्रधान आधारभूत दोष था। अपने ... ।। मे ब्रिटिश समाचार पत्रो को लिखे पत्रो म, पत्र पत्रिकाओ मे लिखे लेखो म, ।ि। के साथ किए गए पत्र-व्यवहार मे, सरकारी आयोगो, समितियो और निजी

भाषण मे उन्होने घोषणा की कि भारत से हो रही निकासी का उदाहरण आज तक विश्व के किसी भी अन्य देश मे ढूढने से भी नही मिलता। उन्होंने दृढतापूवक कहा कि यदि इग्लड को प्रतिवष स्वय अपने राजस्व का आधा भाग खच करने के लिए जमनी, फ्रास अथवा रूस को भेजना पडता तो इग्लड मे वर्षों पूव अकाल पड गया होता।[3]

अपने ग्रथ—'इकोनामिक हिस्टरी आफ इडिया' के प्रथम खड की भूमिका म उन्होंने निणयात्मक स्वर मे लिखा—शुद्ध राजस्व का आधा भाग प्रतिवष भारत से बाहर निष्कासित कर दिया जाता है। उन्होने शोक विह्वल होकर कहा—सचमुच ही भारत का उपजाऊपन, दूसरे देशो का ही सपन्न और भाग्यशाली बना रहा है।[4] पुस्तक के परवर्ती भाग मे उन्होने निकासी के साथे निम्नलिखित पाप का मढते हुए लिखा—'देश के साधनो की सीमा से बढकर इतनी बडी आर्थिक निकासी विश्व के किसी समृद्धतम देश को दरिद्र बना सकती है। इसने भारत को विश्व के इतिहास मे अभूतपूर्व और अश्रुतपूर्व रूप स निरतर और व्यापक रूप स पडने वाले घातक अकालो का देश बना दिया है।[5] इसी प्रकार ग्रथ के दूसरे खड की भूमिका मे उन्होने इग्लड की आलोचना करते हुए लिखा कि इग्लड जसा विश्व का समृद्धतम देश विश्व के दरिद्रतम देश भारत से आर्थिक योगदान को वसूलने की नीचता पर उतर आया ह। उन्होने जोर देकर दढ स्वर म कहा कि इस योगदान के लिए भारतीयो को निरतर अजाध रूप स अपने जीवन रक्त का निर्यात करना पडता है।[6]

जी० वी० जोशी, पी० सी० राय, मदन मोहन मालवीय, डी० ई० वाचा, जी० के० गोखले, सी०सुब्रह्मण्य ऐयर और और सुरेंद्रनाथ बनर्जी सहित अन्य बहुत सारे भारतीय नेता भी निकासी के प्रश्न म सबधित आदोलन मे सम्मिलित हो गए।

राष्ट्रवादी समाचार पत्रो मे अमत बाजार पत्रिका निकासी सिद्धात का प्रबलतम समथक था। 28 जुलाई 1870 म ही इस पत्रिका न निकासी को भारत की दरिद्रता का कारण घोषित किया और कालातर मे वर्षों तक अपने इस सुदढ मत को दोहराया। उदाहरणाथ 14 अगस्त 1881 के अक म इस पत्रिका ने शिकायत की कि भारत अनेक विभिन्न ढगो से तथा अनेक देशो द्वारा इस प्रकार चूसा जा रहा है कि वे स्वय अपने आप भी एक दूसरे की गतिविधियो और कायवाहियो स परिचित नही। व यह भी नहीं जानते कि इस शन्य क्रिया के परिणामस्वरूप उनका रोगी किस अत्यत विषम तथा शोचनीय दशा म पहुच गया है। 2 माच 1896 के अक म इस पत्रिका ने अपने कथन को इस प्रकार दोहराया—इस लगातार निकासी के फलस्वरूप भारत दरिद्रता का शिकार हो गया है और इग्लड सपन्न देश बन गया है। यह व्यवस्था भारत को सपत्ति की स्थिति म और भारतीयो को पशुओ की स्थिति म लाकर उनका अवमूल्यन करती है।[8] अधिकाश अन्य प्रमुख भारतीय पत्रो न भी नियमित रूप से इस सबध म अपने विचार प्रकट किए तथा भारत स सपत्ति की निकासी की निंदा की।"[9]

कितने ही वर्षों तक सोच विचार करने के उपरात अथवा कदाचित सकोच के साथ भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस न 1896 म कलकत्ता मे हुए अपने अधिवेशन म औपचारिक रूप से निकासी सिद्धात को स्वीकार करते हुए यह मत व्यक्त किया कि वर्षों से निरतर

के रूप मे भारत को दी जाने वाली परतु न दी गई एक अन्य विपुल राशि को लिया और इसमे निकासी का अपक्षाकृत अधिक सही अनुमान लगाया।[37] उनके इस दृष्टिकोण के दो आधार थे। प्रथम, उनका अनुमान था कि ब्रिटेन और कई दूसरे देशो मे निर्याता पर आयाता की अधिकता इस तथ्य को सिद्ध करती है कि पूजी के सौदा तथा भारत से धन की निकासी पर होने वाले व्ययो को पृथक कर देने पर भी निर्याता से लाभ होता था।[38] यह तक वस्तुत सवथा कोरी कल्पना ही था। इसका अथ यह हुआ कि आयातो और नियातो के मूल्या के अतर द्वारा निर्दिष्ट राशि की अपेक्षा वास्तव मे ही निकासी की राशि अपने परिमाण मे बहुत अधिक है। इस तक की प्रामाणिकता स्पष्ट रूप से दादा भाई की इस धारणा पर आधत है कि भारतीय निर्याता का निर्यात पत्तन पर घापित मूल्य लागत मूल्य रहता था न कि बिक्रेता के लाभ के साथ बिक्री का मूल्य रहता था तथा भारतीय आयातो मे ब्रिटिश निर्यातकार के लाभ पहले ही सम्मिलित रहते थे।[39] अस्तु निकासी की राशि के इस विकृत अनुमान का किसी भी मामले मे बहुत सारे अन्य नेताओ न कोई उल्लेख नही किया। निकासी के विषय से सबधित बहुतो ने तो व्यापार के निर्यात—सतुलन की सीधी सादी सगणनाओ तक ही अपने को सीमित रखा। यहा तक कि स्वय दादा भाई नौरोजी भी भारत के वित्तीय न्याय के मामले को पेश करते हुए कभी कभी निर्याता पर होन वाले लाभा की गणना को छोडने के लिए सहमत हो जाते थे।[40]

बहुत सारे भारतीय नेताओ ने निकासी की सही राशि की सगणना की चेष्टा की। विभिन्न व्यक्तियो द्वारा सगणना की विभिन्न विधिया अपनाए जाने के कारण प्रति व्यक्ति तथा प्रतिवष आयातो और नियातो की खाई निरतर चौडी होती जाने से प्रतिवष निकासी सबधी आकडे भिन्न भिन्न रूप मे ही सामने आने लगे। उदीयमान राष्ट्रीय नेता वग ने इन आकडो को अपने हाथ मे लिया तथा जन सपक के प्रत्येक उपलब्ध माध्यम के द्वारा देश के कोने कोने मे इनका प्रचार प्रसार करते हुए इन्हे लोकप्रिय बनाया। जब जनता के सामने देश की सपत्ति की निकासी के सुस्पष्ट आकडे आए तो स्पष्टत जनता के मन मे इस प्रश्न पर राष्ट्रीय आदोलन की आवश्यकता न प्रबलता तथा विश्वसनीयता का रूप ले लिया। अत इस सबध में कुछ एक प्रमुख राष्ट्रवादी नेताओ द्वारा जो अथशास्त्री भी थे की गई सगणनाओ का अध्ययन रोचक ही होगा।[41]

दादा भाई की निकासी सबधी सगणनाए अत्यधिक जटिल थी। इसका कारण यह था कि सभी प्रकार की सभव आपत्तिया का सामना करन के लिए तथा आलोचको को सतुष्ट करने के लिए वे अपनी सगणना के आधारो को ही निरतर बदलते रहे। 1867 म उनके द्वारा निकासी की सगणित राशि 80 लाख पौड थी।[42] 1870 म उनके आकडे बढ कर 1 करोड बीस लाख पौड हो गए।[43] 1876 म प्रकाशित 'पावर्टी आफ इडिया' म उन्होंने घोषणा की कि रेल पथो के ब्याज को निकाल कर 1835 से लेकर निकासी की औसतन वार्षिक राशि इस प्रकार से थी[44]

वर्ष	वार्षिक औसत (पौंड मे)
1835 1839	5,347,000
1840 1844	5 930 000
1845 1849	7,760,000
1850 1854	7,458,000
1855-1859	7,730 000
1860 1864	17 300,000
'865-1869	24,600,000
1870-1872	27,400,000

1893 मे उन्होने गिनती की कि निकासी की राशि 25 करोड रुपये प्रति वर्ष स अधिक बठती है।[45] 1897 म उनके आकडे 1883 92 की अवधि मे लगभग 359 करोड रुपये थे, परतु सरकारी ऋण पर वसूल किए जाने वाली रकम को निकासी न मानने के समर्थकों को सतुष्ट करने के लिए उन्होने प्रभारो की राशि को निकासी की सीमा से अलग कर दिया और फिर भी देखा कि इन दस वर्षों मे निकासी की राशि लगभग 288 करोड थी, जिसमे अनुमानत 118 करोड रुपये की राशि विदेश व्यापार के लाभो से अर्जित आय थी। दादा भाई द्वारा सगणित अल्पतम राशि थी 241 करोड रुपयो अथवा 24 करोड रुपयो की वार्षिक निकासी।[46] अतत 1905 मे उन्होने घोषणा की कि लगभग 3 करोड 40 लाख पौंड का अथवा 51 5 करोड रुपयो के मूल्य के सामान की प्रति वर्ष देश म निकासी हो रही है।[47]

जी० वी० जोशी के अनुसार 1834 1888 तक लगभग 66 करोड पौंड की देश से निकासी हो चुकी थी। उन्होने यह भी निर्देश किया कि यह निकासी प्रति वर्ष बढ रही है और 1888 तक कुल 25 करोड रुपये प्रतिवर्ष तक पहुच गई है।[48] 1901 म भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के सभापति पद से भाषण करते हुए डी० ई० वाचा ने निकासी की राशि 30 से 40 करोड रुपये प्रतिवर्ष बताई।[49] काग्रेस के अगले ही अधिवेशन मे एस० एन० बैनर्जी ने 19वी शताब्दी के पिछले तीस वर्षो मे निकासी की औसत राशि 3 करोड पौंड सगणित की।[50] आर० सी० दत्त का अनुमान कम था। उनके अनुसार बीसवी शताब्दी के प्रारभिक वर्षों म निकासी की राशि लगभग 2 करोड पौड प्रतिवर्ष थी।[51] पृथ्वीचद्र राय द्वारा 1901 म सगणित निकासी की अत्यधिक राशि 6 से 7 करोड पौंड प्रतिवर्ष थी।[5]

अपनी मान्यता के अनुसार लोगो को यह समझाने के लिए कि निकासी की राशि सचमुच ही परिणाम मे विपुल है, बहुत सारे भारतीय नेताओ ने सरकारी राजस्व के अनुपात के सगणन की पद्धति को अपनाया। इस प्रकार उदाहरण के रूप म आर० सी० दत्त ने बार बार इस ओर निर्देश किया कि भारत के कुल राजस्व का लगभग आधा भाग विदेशो को निष्कासित हो जाता है।[53] असल म, जैसा कि हम इस ग्रथ के एक अध्याय मे पहले ही दिखा चुके है कि भारत सरकार की वित्त नीति की राष्ट्रवादियो द्वारा की गई

महत्वपूण आलोचना यही थी कि देश मे वसूल किए गए राजस्व के एक विपुल भाग का देश के बाहर व्यय किया जा रहा है।[54]

निकासी का उद्भव

भारतीय नेताओ के अनुसार व्यापार सतुलन मे अधिशेष निकासी का रूप लेता था। परतु कौन से तत्व निकासी को जन्म देने के आधारभूत कारण थे? यहा यह उल्लेखनीय है कि 1858 के उपरात ही निकासी के विश्लेषण के समय यह प्रश्न प्रमुख रूप से उपस्थित हुआ। यद्यपि कपनी के शासन काल मे विशेषतया 1833 से पहले की अवधि मे हुई सपत्ति की निकासी की राशि की तो प्राय सगणना की गई और उसकी निंदा भी की गई तथापि इन नेताओ न इन वर्षों की मध्यावधि मे हुई निकासी के विश्लेषण की आवश्यकता को अनुभव नही किया।[55] इसके लिए प्रमुख रूप से उत्तरदायी दो कारण थे —प्रथम, भारत मे ईस्ट इडिया कपनी का निवेश, इसके भागीदारो को लाभो का भुगतान, इसके सरकारी ऋण तथा खुली लूट की प्रक्रिया के माध्यम से इसके अधिकारियो द्वारा निजी सपत्ति का सचय आदि भारत से शुल्क वसूलने अथवा सपत्ति लौटाने के अत्यत स्पष्ट और महत्वपूण तत्व थे। इन शुल्को के परिमाण और इनकी आर्थिक महत्ता पर भले ही मतभेद हो, परतु इनकी सत्ता निर्विवाद थी। द्वितीय, भारतीय नेता अगणित उच्च सरकारी और गरसरकारी अगरेजो के अधिकृत वक्तव्यो को उद्धत करने और उनकी विस्तत परीक्षा करने के चक्कर मे बिना पडे ही निकासी के तथ्य को सिद्ध कर सकते थे।[56] वस्तुत निकासी और उसके दुष्परिणामो के सबध मे भारत से सहानुभूति रखने वाले अगरेजो की सख्या इतनी बडी थी कि आर० सी० दत्त महोदय को आश्चयचकित होकर यह कहना पडा— कोई एक निंदक यह टिप्पणी कर सकता है कि भारत की ओर से तो इग्लड को सपत्ति प्रवाहित होती है और वहा के लोग भारतीयो को कोरी सहानुभूति और खेदो के रूप म बदला चुकात है।[57] इसके अतिरिक्त भारतीयो को भूतकाल की इतनी अधिक चिंता नही थी, जितनी कि भविष्य की। भविष्य के सुरक्षित हो जाने पर तो व भूत को भूलने तक के लिए सहमत थे।[58]

1858 के पश्चात अथवा यहा तक कि 1833 के पश्चात निकासी का प्रश्न जटिल और विवादास्पद बन गया था क्योकि न तो भारत द्वारा उस समय इग्लड का किसी प्रकार का शुल्क दिया जा रहा था और न ही भारत के अधिशेष राजस्व को इग्लड के कोश मे डाला जा रहा था। अत निकासी के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए भारतीय राष्ट्रवादी नताओ के लिए यह दिखाना आवश्यक हो गया कि किस प्रकार भारत ब्रिटेन के पृथक पृथक नागरिको के भुगतानो के रूप म तथा वह भी विभिन्न मार्गों से ब्रिटेन को 'परोक्ष शुल्क' चुका रहा था।[59] उन्ह यह भी सिद्ध करना पडा कि इस परोक्ष निकासी का कारण पूणतया भारत पर ब्रिटेन का राजनतिक तथा आर्थिक प्रभुत्व था।

भारतीय नताओ के अनुसार निकासी का सर्वाधिक महत्वपूण तत्व असैनिक सेवा म, सेना म तथा रेलवे म नियुक्त अंग्रेज कमचारियो, अंग्रेज वकीलो तथा अंग्रेज डाक्टरो आदि द्वारा अपनी बचतो आय और वतन के एक बहुत बडे भाग का इग्लेड मे भेजना

था तथा भारत सरकार द्वारा अंग्रेज सरकारी कर्मचारियों की पेंशनों तथा अवकाशकालीन भत्तों का इंग्लैंड में ही भुगतान करना था। दूसरे शब्दों में आंशिक रूप से भारतीय प्रशासन में, सेना में तथा रेलवे में यूरोपियों की असामान्य नियुक्ति का ही परिणाम निकासी था।[60] इस संदर्भ में यहां यह उल्लेखनीय है कि कभी कभी तो दादा भाई नौरोजी ने निकासी के उद्गम के संबंध में बड़ा ही संकीर्ण दृष्टिकोण अपनाया। उन्होंने विशेषतया विवादों में संलग्न होने पर निकासी के सारे ही रोग का दायित्व भारतीय प्रशासन में अंग्रेजों की अत्यधिक नियुक्ति पर डाला।[61] कभी कभी तो उनकी यह संकीर्ण मनोवृत्ति मूर्खता की सीमा पर पहुंच जाती थी। उदाहरण के रूप में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन के प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए उन्होंने अपना मत प्रकट किया कि भारत की जनता की इस विषम दरिद्रता और चरम दीनता का एकमात्र कारण देश की सरकार में विदेशी कर्मचारियों की असामान्य नियुक्ति है। इसी के फलस्वरूप देश का भौतिक हानि हो रही है और देश की संपत्ति की निकासी हो रही है। उन्होंने उस समय चेतावनी देते हुए कहा—देश के लिए यह जीवन और मृत्यु का प्रश्न है। आप केवल इसी एक बुराई को हटा दीजिए, भारत प्रत्येक रूप में सौभाग्यशाली बन जाएगा।[6] दादा भाई नौरोजी द्वारा इस संकुचित दृष्टिकोण को अपनाने का परिणाम यह निकला कि उनके निंदकों को निकासी सिद्धांत के खोखलेपन को सिद्ध करने के लिए केवल उनके वक्तव्य को ही विवेकशून्य प्रमाणित करने की आवश्यकता रह गई। कदाचित् इससे भी अधिक दुर्भाग्यजनक बात यह है कि दादा भाई के इस हास्यप्रद विश्लेषण ने बहुत सारे विचारकों को निकासी पर स्वयं उनके तथा अन्य राष्ट्रवादियों के विचारों की वास्तविक गहराई व जटिलता को समझने में पथभ्रष्ट ही किया। दादा भाई नौरोजी के निकासी पर तर्क के इस अंधकारपूर्ण पक्ष की व्याख्या किसी सीमा तक निम्नलिखित तीन पहलुओं से की जा सकती है (1) दादा भाई नौरोजी स्वभाव से उग्रवादी थे। (2) 1870 तक सरकारी विदेशी पूंजी विपुल परिमाण में नहीं थी और उससे काफी समय बाद तक निजी विदेशी पूंजी की मात्रा भी उल्लेखनीय नहीं थी। उस समय भारतीयों के विश्लेषण के अनुसार यूरोपीयों की नियुक्ति निश्चित रूप से ही निकासी का सर्वाधिक विस्तृत स्रोत थी। (3) 1860 की अवधि तक दादा भाई नौरोजी विदेशी पूंजी के विरुद्ध नहीं थे[63] और यहां तक कि उन्होंने तथा अन्य भारतीय नेताओं ने इसके बाद भी कई वर्षों तक विदेशी पूंजी के प्रयोग का अत्यंत सुदृढ़ता तथा प्रबलता के साथ विरोध नहीं किया। यहां यह उल्लेखनीय है कि बाद में जब विदेशी पूंजी भारत से संपत्ति की इंग्लैंड को निकासी का महत्वपूर्ण स्रोत बन गई तो दादा भाई नौरोजी ने निकासी के इस स्रोत के विरुद्ध ऊंचे स्वर में उसकी निंदा करना प्रारंभ कर दिया।[64]

भारतीय नेताओं के अनुसार भारत में धन की निकासी का एक अन्य प्रधान और आधारभूत स्रोत भारत सरकार के गृह प्रभार अथवा भारत सरकार की ओर से भारत सचिव द्वारा इंग्लैंड में किया गया खर्च था। गृह प्रभारों के अंतर्गत भारत के सरकारी ऋणों और प्रतिभूत रेल पथों के ब्याज का भुगतान भारत को संभरित सैन्य तथा अन्यान्य भंडारों का मूल्य, भारत सचिवालय में भारत सचिव के कर्मचारियों पर होने

वाले खर्चों तथा भारत सरकार के यूरोपीय कर्मचारियों को पेंशनों और भत्तों को मिलाकर भारत के खाते से इंग्लैंड में भुगतान किए गए सैनिक व असैनिक व्यय आदि सम्मिलित थे।[65] गृह प्रभारों के इनमें से प्रत्येक अंग का कभी न कभी भारतीय नेताओं ने पृथक पृथक विवेचन किया तथा निकासी के स्रोत के रूप में इसकी निंदा की।[66]

भारतीय नेताओं के अनुसार निकासी का तीसरा प्रमुख स्रोत भारत में व्यापार और उद्योग में निवेशित निजी विदेशी पूंजी पर होने वाले लाभ थे।[67]

निकासी के आर्थिक प्रभाव

जैसाकि हम पूर्व निर्देश कर चुके हैं तथा जैसाकि आधुनिक इतिहास के छात्रों को सम्यक रूप से ज्ञात है, निकासी के साथ जुड़ा उसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण दुष्परिणाम देश की घोर दरिद्रता थी। हां प्रमुख भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं के इस संबंध में दृष्टि-कोण थोड़ा-बहुत भिन्न रूप अवश्य लिए हुए थे। उदाहरणार्थ, दादा भाई नौरोजी ने निकासी को देश के सभी रोगों, दुखों और दरिद्रता का वास्तविक, प्रधान और यहां तक कि एक मात्र मूल कारण घोषित किया, तथा अन्यान्य कारणों को केवल भ्रामक बताया।[68] उन्होंने 1880 में बड़ी प्रबलता के साथ तर्क प्रस्तुत करते हुए कहा —

> यह आर्थिक नियमों की क्रूर प्रक्रिया नहीं है प्रत्युत यह तो ब्रिटिश नीति की विवेक-शून्य और क्रूर कार्यवाही है। यह भारत की धन संपत्ति को ही भारत में हड़पने का क्रूर कृत्य है और इससे भी बढ़कर देश से इंग्लैंड को संपत्ति की क्रूर निकासी है। संक्षेपतः यह भारत का रक्त चूसने के रूप में दुखद ढंग से आर्थिक नियमों को विकृत करना और इसके फलस्वरूप भारत का विनष्ट करने का निर्मम प्रयास है।[69]

इस संबंध में दादा भाई के दृष्टिकोण को अपनाने वाले केवल थोड़े से ही और राष्ट्रवादी नेता थे। इन थोड़े में सर्वाधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति थे —अमृत बाजार पत्रिका के संपादक गण।[70] इन नेताओं में अधिकांश ने तो इस धारणा से कि भारतीय जनता को दरिद्र बनाने में निकासी की महत्वपूर्ण ही नहीं कदाचित सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका है, सहमति के रूप में अपने विचार प्रकट करके ही संतोष कर लिया।[71] भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी निकासी को केवल भारत की दरिद्रता के कारणों में से एक बताया।[72] यहां इस तथ्य का उल्लेख करना अनुचित न होगा कि बहुत सारे भारतीय नेताओं ने निकासी के सापेक्षिक महत्व के प्रश्न पर तथा दरिद्रता के लिए उत्तरदायी अन्यान्य विविध पक्षों पर विचार ही नहीं किया। जब उन्होंने निकासी पर विचार विमर्श किया तो उन्होंने इसकी प्रबलता से निंदा की और जब उन्होंने अपने विश्वासानुसार भारत की दरिद्रता के लिए उत्तरदायी किसी दूसरे पक्ष पर विचार विमर्श किया तो उन्होंने पहले जैसी ही प्रबलता से उसकी निंदा की।

लोगों को कदाचित यह सम्यक रूप से ज्ञात नहीं है कि राष्ट्रवादी नेताओं की निकासी को देश को दरिद्र बनाने वाली मानने की अथवा उसे देश के लिए आर्थिक दृष्टि से विध्वंसक तथा दुर्भाग्यजनक कारण मानने की धारणा के पीछे कौन-सा आर्थिक तर्क काम कर रहा था। इस दृष्टि से इस संबंध में ध्यान देने योग्य तत्व यह है कि भारतीय

नेताओं ने निकासी को केवल संपत्ति की हानि के रूप में ही नहीं लिया प्रत्युत उसे पूंजी की हानि भी माना। उनके द्वारा प्रतिपादित निकासी सिद्धांत केवल धन के अथवा सामग्री के निर्यात के संकुचित विचार क्षेत्र तक सीमित नहीं था प्रत्युत वह व्यापक आर्थिक कारणों तथा विचारों पर ही आधारित था।

संपत्ति की प्रत्यक्ष हानि की अथवा राष्ट्रीय उत्पाद के एक भाग के स्थूल रूप से स्थानांतरण होने की अथवा लोगों की आजीविका के साधनों में वास्तविक कमी होने की धारणा तो निकासी की परिभाषा में निहित थी। राष्ट्रवादी नेताओं में बहुत सारे अर्थशास्त्रियों ने व्यापक रूप में निकासी के रूप और अर्थ को जिस प्रकार समझा तथा स्पष्ट अथवा अस्पष्ट रूप से जिस प्रकार उसका प्रचार प्रसार किया, वह यह था कि इस निकासी का देश की अर्थव्यवस्था पर भले ही अन्य कोई दुष्प्रभाव न पड़ता हो फिर भी इससे राष्ट्रीय उत्पादन में होने वाली कटौती ही अपने आप में इतना विशाल दोष है कि इसे एक भारी रोग कहा जा सकता है।[73]

कुछ एक भारतीय नेता इस तथ्य को भी समझने में सफल हो गए कि विदेशों में राष्ट्रीय संपत्ति के स्थानांतरण से देश की आय पर और देश के भीतर रोजगार पर उसका घातक प्रभाव ही पड़ता है। उन्होंने इस तथ्य की ओर निर्देश किया कि निकासी का अर्थ राष्ट्रीय आय के कुछ निश्चित भाग का देश के बाहर विदेशों में खर्च करना मात्र ही नहीं प्रत्युत देश के भीतर ही उसके खर्च किए जाने पर उसमें आय और रोजगार में होने वाली अतिरिक्त वृद्धि में कमी है। इस प्रकार 1903 में आर० सी० दत्त ने टिप्पणी की कि

> जब देश में उगाहे करों को देश में ही खर्च किया जाता है तो धन देश की जनता में परिचालित होता है, व्यापारों, उद्योगों और कृषि को परिपुष्ट करता है तथा किसी एक न एक रूप में सर्वसाधारण के पास पहुंच जाता है परंतु जब देश में वसूल किए गए करों को देश के बाहर प्रेषित कर दिया जाता है तो देश का वह धन देश के लिए सदा के लिए ही नष्ट हो जाता है। वह न तो देश के व्यापारों अथवा उद्योगों को संपन्न बनाता है और न ही किसी रूप में देश के जनसाधारण के हाथ में पहुंचता है।[4]

आर० सी० दत्त सहित कुछ एक भारतीय नेताओं ने जार्ज विंगेट की निम्नलिखित सुप्रसिद्ध टिप्पणियों को उद्धृत करते हुए देश के करों के देश के बाहर विदेशों में खर्च किए जाने पर उसके देश की आर्थिकता पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों से संबंधित तथ्य को सिद्ध किया

> किसी देश से वसूल किए गए करों को उसी देश में खर्च करने तथा एक देश से वसूल किए गए करों को दूसरे देश में खर्च करने में प्रभाव की दृष्टि से एक महान अंतर है। प्रथम स्थिति में जनता से वसूल किए गए करों का विशाल भाग सरकारी सेवा में लगे लोगों को ही वापस मिल जाता है। उन लोगों द्वारा पाया गया धन खर्च किए जाने पर फिर श्रमिक वर्गों के पास पहुंच जाता है। परंतु वह स्थिति सर्वथा और पूर्णतया भिन्न होती है जबकि किसी देश में उगाहे करों को उस देश में नहीं

खर्चा जाता। इस स्थिति मे उस देश को भारी और वास्तविक हानि होती है और कराधान द्वारा देश मे निकाला गया धन पूर्णतया नष्ट हो जाता है। जहा तक राष्ट्रीय उत्पाद पर इसके प्रभावो का संबंध है, सारे का सारा धन समुद्र मे फेका गया ही समझना चाहिए।[5]

इस तथ्य के आधार पर भी भारतीय नेताओ ने भारत के पुराने स्वेच्छाचारी शासको और ब्रिटिश शासको के बीच अतर को स्पष्ट किया। इस प्रकार 1902 मे सुरेंद्रनाथ बैनर्जी ने टिप्पणी करते हुए लिखा पुराने विजेताओ ने विजित देश को शीघ्र ही अपना देश बना लिया था तथा देश की जनता से छीनी गई सपत्ति शीघ्र देश के लोगो के पास लौट आई थी। इस प्रकार उन्होने गृह उद्योग के स्रोतो को प्रोत्साहित किया तथा देश की जनता की भौतिक सपन्नता मे योगदान दिया।[76] अपने 'इकोनॉमिक हिस्टरी आफ इंडिया' ग्रथ के प्रथम खड की भूमिका मे आर० सी० दत्त ने भी इस विषय पर अत्यंत स्पष्ट शब्दो मे प्रकाश डाला। एक भारतीय कवि के शब्दो मे जिस प्रकार सूर्य पृथ्वी के जल को सुखाकर भाप के रूप मे ग्रहण करता है और फिर उसी जल को धरती को हरा-भरा करने के लिए वर्षा के रूप मे उसे वापस लौटा देता है उसी प्रकार देश शासक को देश के करो को उगाहकर देश की सपन्नता के लिए खर्च करने के रूप मे उन करो को देशवासियो को लौटा देना चाहिए। परतु भारत के उगाहे गए कर भारत को सपन्न न बना कर किसी अन्य देश की ही सपन्नता मे वद्धि करते है—इसका विरोध करते हुए उन्होने निश्चित स्वर मे कहा कि ऐसा तो अफगान और मुगल शासको के निकृष्टतम शासन काल मे भी नही हुआ। दूसरी ओर उन्होने दावा किया कि उन्होने जो चकाचौंध उत्पन्न करने वाले महल और स्मारक बनवाए तथा साथ ही साथ जिन विलासी कार्यो मे वे प्रवत्त हुए उन्होने भारत के उत्पादको और कारीगरो को प्रोत्साहन और सपोषण दिया। उन्होने इस प्रकार अपना निश्चित मत अभिव्यक्त करते हुए कहा —बुद्धिमान शासको के तथा मूर्ख शासको के अधीन शासन काल मे एक बात समान रही है कि करो मे वसूल किया गया धन जनता के पास ही लौट आया है और उसने देश के व्यापार और उद्योगो को सपुष्ट बनाया है।[77]

यहा यह उल्लेखनीय है कि राष्ट्रवादियो की इस माग—वसूल किए गए कर जनता को ही वापस लौटा देने चाहिए ताकि उनकी जेबें भारी हो सकें।[8] अथवा उनके व्यापार और उद्योग समृद्ध बन सकें—के पीछे करो को देश ही के भीतर खर्च करने से देश की गौण आय पर उसके पड़ने वाले प्रभाव के सबध मे राष्ट्रवादियो की जानकारी का परिचय प्राप्त होता है।[79]

दादा भाई नौरोजी ने निकासी की परिभाषा को और अधिक विस्तृत रूप दिया तथा विदेशियो द्वारा अपने वेतनो और आयो के भारत मे खर्च किए जाने वाले भाग के विरुद्ध भी शिकायत की। इस शिकायत के सबध मे उनका दावा था कि विदेशियो द्वारा किया गया उपभोग भी आशिक रूप मे भारतीय सामग्रियो और सेवाओ की हानि ही थी क्योकि अन्यथा ये वस्तुए उपभोग के लिए भारतीयो को ही सुलभ होती।[80]

भारतीय नेताओ मे अर्थशास्त्रियो ने अवश्य निवासी से होने वाली सपत्ति की हानि

प्रगति के लिए अपक्षित जीवन स्तर की व्यवस्था के लिए देश की पूजी को बचाना अत्यावश्यक है और उसका एक मात्र उपाय भारतीयो की सेवाओ मे नियुक्ति है।[84] इसी प्रकार 1887 मे एम० ई० ग्राट डफ को लिखे अपने प्रत्युत्तर मे दादा भाई ने शिकायत की कि वतमान नीति के अतगत ब्रिटिश भारत अपनी तुच्छ आय से निरतर निकासी के कारण अपनी किसी प्रकार की पूजी को रख पाने की स्थिति से वचित किया जा रहा है।[85] 12 फरवरी 1895 को 'हाउस आफ कामन्स' मे दिए गए अपने भाषण म उन्होने घोषित किया—निकासी के फलस्वरूप देश से पूजी हटा दी गई है और देशवासियो को पूजी को बढाने से वचित कर दिया गया है। वस्तुत इसस इगलड को अनिवायत लाभ पहुचा है और ब्रिटिश भारतीयो के साधन इस तरह लडखडा गए है कि वे किसी भी रूप मे अपने साधनो को पुनर्जीवन नही दे सकते। अत उनके लिए दरिद्रता का अभावग्रस्त जीवन जीने के सिवाय अन्य कोई चारा ही नही।[86] विलबी कमीशन के सामन जिरह के दौरान दादा भाई ने निकासी से भारत की पूजी को होने वाली हानि की ओर कमीशन का ध्यान दिलान की पूरी पूरी चेष्टा की तथा अपने आलोचको को बीच मे ही पकडते हुए उन्होने कहा कि भारतीयो को उपयुक्त खिराज देने में किसी प्रकार की आपत्ति नही है परतु यह खिराज इस परिणाम मे होना चाहिए कि जिससे भारत के पूजी निर्माण को किसी प्रकार की क्षति न पहुचे।[8]

दादा भाई नौरोजी ने विलबी कमीशन के अध्यक्ष के साथ जो लबा चौडा वाद-विवाद किया उसम उन्होने बडी ही सुस्पष्ट भाषा और नाटकीय शैली से निकासी के प्रश्न को प्रभावशाली ढग से ही पूजी निमाण तथा आय प्रजनन के साथ जोड दिया। इस विषय मे दादा भाई नौरोजी ने भारत जैसे अविकसित देश म निवेश वृद्धि और आय वृद्धि के पारस्परिक सबध म बडी ही सुव्यवस्थित तथा अकाल प्रौढ सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया। आइए, हम उनके तक को उसके मूल रूप[89] मे सिलसिलेवार समझें।

दादा भाई ने अपन साक्ष्य के प्रारभिक भाग मे प्रतिपादित किया कि देश की कुशल और प्रगतिशील सरकार के लिए भारत का 6400 लाख रुपय राजस्व नितात अपर्याप्त पड रहा है और यह राशि इतनी कम, सरकार की उस अस्वाभाविक प्रणाली के कारण है जो लोगो को दरिद्र बना रही है तथा उन्हे सरकार को अधिक भुगतान करन म नितान असमथ बना रही है। उन्होने अपना मत प्रकट करते हुए कहा कि विदेशी सत्ता द्वारा रक्त चूसे जान के स्थान पर यदि भारतीयो को अपने साधनो को भारत म ही रखन दिया जाए तो भारतीय आवश्यकता पडने पर करो के रूप म ही 20 000 लाख रुपया का भुगतान कर सकते है। लाड विलबी दादा भाई के इस मतव्य से सहमत नही थे, तभी उन्होने पूछा कि स्वतत्र सत्ता के अधीनस्थ किए जान पर एक निधन देश 2 रु० 12 आन (3 शिलिंग 8 पस) प्रति व्यक्ति कर के स्थान पर उसस बढाकर 1 पौंड 6 शिलिंग 6 पस प्रति व्यक्ति कर का भुगतान किस प्रकार कर सकता है? दादा भाई का स्पष्ट उत्तर था कि अपने लाभो का अपने ही पास रखन की अनुमति प्राप्त होने पर आज का निधन देश कल धनी बन जाएगा। यह तक विलबी की समझ म न आया अथवा वह समझना ही नही चाहता था अत उसन पूछा कि क्या दादा भाई यूरोपीय सिपाहियो और राजकीय

प्रशासको पर खच किए जा रहे 2000 लाख रुपयो पर आपत्ति करते हैं और यहा तक कि यदि यह रकम भारतीयो का लौटा दी जाए तो भी इससे दो रुपय के स्तर से बढकर 1 पौंड 6 शिलिंग 6 पेंस प्रति व्यक्ति के स्तर तक अर्थात 6400 लाख रुपया से बढकर 30 000 लाख रुपये प्रति वष तक कर वृद्धि मे सहायता कम मिल सकती है ? दादा भाई द्वारा इस प्रश्न का दिया गया उत्तर इस तथ्य का उदघाटन करता है कि उनकी दृष्टि मे निकासी का अथ केवल सपत्ति का स्थानातरण नही था। उनका उत्तर था कि देश से खीचा जाने वाला धन यदि बचा लिया जाए तो उसके आर्थिक प्रभाव ये होगे कि इससे देश समद्ध हो जाएगा। दूसरे शब्दो मे देश का लाभ केवल 2000 लाख रुपया की वास्तविक बचतो तक ही सीमित नही रह पाएगा। विलबी इस पर भी सतुष्ट नही था और उसने और अधिक कुरेदा—परतु आप इसे (भारत को) इस रकम (2000 लाख रुपये) से बढकर तो समृद्ध नही बना सकते ? दादा भाई का प्रत्युत्तर था—यदि यह रकम देश मे ही रहने दी जाए तो आर्थिक दष्टि मे वतमान की अपक्षा यह अपक्षाकृत अधिक उपयोगी प्रभाव ही डालेगी। इसका अथ केवल 2000 लाख रुपयो की बचत ही नही होगी प्रत्युत यह पुन उत्पादनो की, देश म पूजी को बढाने की दिशा म बचत होगी, परतु यहा विचारणीय है कि दादा भाई ने पूजी की बढोतरी को एक बुढिया की पाई वाली कहानी की तरह यात्रिक रूप मे नही देखा जिसस पसा चक्रवर्ती ब्याज (या नफा) की सहायता से हर साल बढता जाए। भले ही उनके वास्तविक आकडे और सगणनाए अस्पष्ट और कभी कभी निराधार भी हो परतु इतना निश्चित है कि वे निवेशित आर्थिक विकास की जड को ही पकड नही रहे थे तथा आर्थिक विकास के आधुनिक सिद्धातो का पूव सूचित ही नही कर रहे थे प्रत्युत निवेशगुणक की धारणा की भी कदाचित भविष्यवाणी कर रहे थे। इस पर जब विलबी ने विराध प्रकट किया—कि यहा भारत मे रखे गए 2000 लाख रुपया म भारत को केवल निश्चित राशि ब्याज की ही ता प्राप्ति होगी। दादा भाई न एकदम मह तोड उत्तर दिया—ब्याज ही केवल सब कुछ नही है, इससे तो देश के साधनो का विकास होगा जिससे आज की अपक्षा देश की पाच गुणा अधिक समद्धि हो सकती है। वस्तुत भारतीयो के रक्त के रूप मे भारत की पूजी देश स बाहर ले जाई जाती है उसे देश मे ही रहने दिया जाए और भारत के अपने साधनो का रूप लेने दिया जाए तो देश इसी से पर्याप्त सपन्न बन जाएगा। यह पूजी देश के रक्त समान है। विलबी ने फिर भी ठीक से न समझने का ढोग रचा[89] और टिप्पणी की—मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि भारत इतना सपन्न देश है कि 2000 लाख रुपये यदि यहा लगाए जाए तो वह एक वष के भीतर ही 20000 लाख से 30000 लाख रुपया अर्जित कर सकता है। दादा भाई न तत्काल यह उत्तर देकर विलबी की टिप्पणी को नाकारा कर दिया कि उनके द्वारा पूव सूचित परिणाम का अथ यह नही कि यह सब एक ही वष मे हो जाएगा। उनके कथन का अभिप्राय तो केवल इतना था कि यदि निकासी को रोक दिया जाए तो भारत आवश्यक करा का भुगतान यथासमय करने की स्थिति मे आ जाएगा। कर 20000 लाख रुपय हो अथवा 30,000 लाख रुपये। इस वाद विवाद के ८ विलबी ने दो तीन बार पुन यह प्रयास किया कि दादा भाई यह स्वीकार

2000 लाख रुपयो की छोटी सी रकम भारत के साधनो को एक बड़े परिमाण मे मफन बना सकती है—यह धारणा नितात निर्मूल तथा मिथ्या कल्पित है परतु दादा भाई तो अपन कथन पर डटे रह।

जी० वी० जाशी न भी निकासी को पूजी की क्षति माना और इस क्षेत्र म भी उहोने राष्ट्रवादी चिंतन का एक नया धरातल प्रदान किया। उनका सुभाव था कि निकासी को वार्षिक कुल राष्ट्रीय उत्पादन के एक अश के रूप म नही लेना चाहिए भल ही यह भाग चाहे जितना ऊचा और भारी क्यो न हो, प्रत्युत इसे तो वार्षिक शुद्ध आय क्षम अधिशेष अथवा बचत का एक भाग समझना चाहिए। इस प्रकार 1884 म अपने लख—'दी इकोनामिक रिजल्ट आव फ्री ट्रेड ऐंड रेलवे ऐक्सटेंशन'—म उहान सगणना की कि 1882 मे आयात पर निर्यात की अधिकता 23 करोड रुपये थी। भारत का कुल वार्षिक उत्पादन 350 करोड था और कुल उत्पादन 12 प्रतिशत पर सर्वाधिक अनुकूल दर से लाभ की राशि 40 करोड थी। अतएव राष्ट्रीय ससाधनो पर निकासी का भाग राष्ट्रीय उत्पादन के लाभो का पचास प्रतिशत से अधिक था।[90] छ वष पश्चात अपन लेख—'दि इकोनामिक सिच्युएशन इन इडिया' म जोशी जी ने निम्नलिखित शब्दो म अपनी उक्त धारणा को सीधी तर्कसम्मत अभिव्यक्ति दी

> निकासी का पूरा माप देश की कुल वार्षिक आय के साथ उसका अनुपात नही है यह अनुपात तो लगभग 6 प्रतिशत है। उसका वास्तविक माप देश के प्रशासन के सचालन पर होने वाले वार्षिक आवश्यक व्ययो को निकाल कर शुद्ध आय का अनुपात है और यह अनुपात लगभग एक तिहाई भाग है। शुद्ध राष्ट्रीय आय क पूरे एक तिहाई भाग का विदेशी दायित्वो के निभाने के लिए देश के बाहर चले जाना और बदले म देश को किसी प्रकार का आर्थिक लाभ न पहुचना सचमुच ही देश की भारी क्षति है और यही भारत मे लघु पूजी सचय का कारण है।[91]

डी० ई० वाचा और जी० एस० ऐयर सहित कितने ही अन्य राष्ट्रीय नेताओ न वार्षिक निकासी के सबध म इसी प्रकार के विचार प्रकट किए। उहोने भी देश स पूजी के बाहर ले जाने का देश की उल्लेखनीय और तात्विक क्षति बताया।[92]

द्वितीय कुछ एक भारतीय नेताओ का यह निश्चित मत था कि निकासी से उत्पन्न होने वाली पूजी की न्यूनता का परिणाम यह निकलता है कि इससे भारत की आर्थिक मुक्ति का आधारभूत औद्योगिक विकास प्रतिरुधित हो जाता है। वस्तुत उनका यह अनुभव था कि भारत म आधुनिक उद्योग की मदगति का प्रमुख दायित्व निकासी पर ही था। इस प्रकार दादा भाई नौरोजी ने अपने लख—'दि पावर्टी आफ इडिया' म तक प्रस्तुत किया कि यद्यपि बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण भारत की एक अत्यत अप्रतिहाय आवश्यकता थी परतु व्यवहार म उद्योग उपलब्ध पूजी की कमी के कारण सीमित था और यहा उहोने जान स्टुअर्ट मिल के इस मतव्य को उद्धृत किया—

उत्पादक श्रम को समथन और नियोजन देने वाला तत्व निवेशित पूजी है न कि श्रम के उत्पादन के लिए उसके पूर्ण होने पर क्रेताओ की किसी प्रकार की माग।' और भारत ...के अभाव मे पीडित है जिसका एक कारण तो यह है कि इसका अधिशेष उत्पादन

स्वल्प है और इससे भी बढ़कर बात यह है कि इसके दैनिक पुन उत्पादन का आवश्यकताओ की और यहा तक कि अधिशेष की निकासी कर दी जाती है। इसलिए देश अपनी सपदा की वृद्धि के लिए उद्योग का उपयोग ही नही कर पाता और इसके फलस्वरूप देश की दरिद्रता का उत्तरोत्तर विस्तार अबाधित रूप से होता जा रहा है।[93] 1881, मे अपनी इस तक प्रणाली की उन्होने व्यग्यात्मक रूप से टिप्पणी की—जबकि अग्रेज लोग भारत की मूल पूजी का ही अपहरण कर रहे है तो फिर वे इस बात पर आश्चर्य क्यो प्रकट कर रहे है कि भारत म उद्योगो की स्थापना नही हो सकती।[94] इसी प्रकार विलबी कमीशन के सामने जिरह मे उन्होने इस आरोप का खडन किया कि भारतीयो की उद्योगो म पूजी निवेश करने मे असहमति ही भारत के औद्योगिक विकास के अभाव का प्रधान कारण है। उन्होने दृढतापूर्वक कहा कि तथ्य यह है कि भारतीयो के पास उपलब्ध पूजी पर्याप्त नही है। इससे भारत अपने ही लाभ के लिए अपने ही ससाधनो स अपने ससाधनो का स्वतत्र विकास नही कर सकता। यदि प्रतिवर्ष भारत को पूजी से वचित न किया जाए तो वह निश्चित ही अपने साधनो का विकास करने मे समर्थ हो जाएगा।[95] बाद मे 1900 मे दिए गए अपने भाषण म दादा भाई ने घोषणा की कि यहा तक कि भारत के पुराने उद्योगो की क्षति का आशिक दायित्व निकासी पर है। ग्रेट ब्रिटन ने भारतीयो का जीवन रक्त चूस लिया है और वे अब अपने उद्योगो के सचालन की स्थिति म नही है, क्योकि इसके लिए उनके पास साधन ही नही हैं।[96]

जी० वी० जोशी ने यह मत भी प्रकट किया कि भारत मे औद्योगिक प्रयोजनो के लिए उपलब्ध कार्यरत पूजी की अपर्याप्तता का कारण बडे पैमाने पर पूजी के सग्रह का अभाव था और यह अशत भारत से ब्रिटेन को पूजी की निकासी का परिणाम था। उन्होने दृढतापूर्वक कहा कोई भी देश इस निकासी को सहन करते हुए अपने औद्योगिक क्षेत्र को प्रगतिशील नही बना सकता।[97] इसी प्रकार डी० ई० वाचा ने भी अनुभव किया कि भारत तब तक नए उद्योगो की स्थापना के सबध मे सोच तक नही सकता, जब तक कि वह पूजी की निकासी के अभिशाप से मुक्त नही हो जाता क्योकि पैसा पैसे को खीचता है और भारत के उद्योग धनाभाव से पीडित है। उन्होने अपने मतव्य की सत्यता के प्रमाण के रूप म जापान की उल्लेखनीय औद्योगिक प्रगति को उद्धृत किया जहा दम तोडने वाली प्रक्रियाए सपत्ति के राष्ट्रीय अधिशेष का वार्षिक अपहरण नही किया जा रहा था।[98] विलबी कमीशन द्वारा जी० के० गोखले से जिरह के दौरान दादा भाई नौरोजी और गोखले के मध्य हुए प्रश्नोत्तरो मे निकासी और औद्योगीकरण के अभाव के मध्यवर्ती सबध के विषय मे राष्ट्रवादी स्थिति को अत्यत ही स्पष्ट भाषा मे अभिव्यक्ति दी गई। गोखले से यह प्रश्न किया गया कि भारतीय नए उद्योगो की स्थापना क्यो नही करते ?

(दादा भाई) इसका क्या कारण है कि भारतीय इन उद्योगो का जैसे कि चाय उद्योग का अथवा इनमे से किसी और उद्योग को अथवा इनमे किसी उद्यम का हाथ मे नही ले सके जबकि विदेशी आए और उन्होने इन पर कब्जा जमा लिया। क्या इसका कारण यह नही है कि हमारे देश की पूजी देश म बाहर ले जाई जा रही है ?

(गोखले) हा, यही कारण है।

(दादा भाई) क्या यह सभी रोगा का मूल कारण नही है ?

(गोखले) हा, सभी रोगा की जड यही है।[99]

कुछ एक भारतीय नेताओ ने थोडा और आगे वढकर यह निर्देश भी किया कि जहा निकासी भारत की पूजी की क्षति का एक स्रोत है वहा अतीत मे यह इग्लड के पूजी सग्रह का एक स्रोत सिद्ध हुई है और उसने देश के साधनो को सफल वनाया है तथा देश के द्रुत औद्योगीकरण मे सहायता प्रदान की है।[100]

इस सबध मे यहा यह उल्लेखनीय है कि दादा भाई नौरोजी तथा उपर्युक्त अन्याय नेता कुल मिलाकर इस तथ्य से अपरिचित ही थे कि उनके द्वारा परिभाषित राष्ट्रीय अधिशेष अपने आप से औद्योगिक पूजी का रूप ग्रहण नही कर सकता, उसके इस रूप मे परिवर्तित होने के लिए तो दो अडचनो को हटाना होगा प्रथम, उन्होने इस तथ्य की उपेक्षा की कि वचत करने वाले वर्गों के अनाप शनाप खर्चों के कारण राष्ट्रीय पूजी का भीतर ही भीतर ह्रास होता जा रहा है। इसके साथ, वचत करने वाले वर्गों की प्रवृत्ति या तो सपत्ति के सग्रह की है अथवा, औद्योगिक, अनुत्पादक क्षेत्रो मे धन के निवेश करने की है। दादा भाई ने समस्या के इस पक्ष पर ध्यान अवश्य दिया परतु चलता सा। उन्होने विलबी कमीशन के समक्ष अपने साक्ष्य मे भारत की रियासतो के कुछ एक शासको की धन सग्रह की प्रवृत्ति की आलोचना की। इसी प्रकार जसाकि हम ऊपर निर्देश कर चुके है, जी० वी० जोशी ने सरकार की भारतीय जनता से सरकारी ऋण उगाहने की प्रवृत्ति की निंदा की क्योकि उनके अनुसार ये ऋण देश मे निवेश की जाने वाली पूजी का देश से अपहरण करते हैं। इसी प्रकार बगाली' ने 25 दिसबर 1880 के अक म तथा 28 जनवरी 1882 के अक मे वगाल की जमीदारी पद्धति की इसलिए आलोचना की कि इससे बगाल की उपलब्ध पूजी का व्यापार और उद्योग के क्षेत्र से हटाकर भूमि मे उसका निवेश किया जा रहा है। परतु साधारणतया भारतीय नेताओ के इस वग ने पूजी निर्माण के इस पहलू की प्राय उपेक्षा ही की। द्वितीय इन नेताओ ने इस तथ्य की ओर भी ध्यान नही दिया कि अधिशेष का औद्योगिक पूजी के रूप मे लाने स पूव तकनीक, पूजी सगठन, उद्यम कौशल आदि स सबधित समस्याओ का निपटारा भी आवश्यक है। वस्तुत जैस कि हम द्वितीय और ततीय अध्याय म अन्याय सदर्भों म देख चुके है कि वहुत सारे नताओ ने इन समस्याओ पर ध्यान अवश्य दिया परतु निकासी के सबध म उन नेताओ ने इन समस्याओ का गौण स्थान ही दिया। विशेषत दादा भाई नौरोजी न तो इन्ह तुच्छ मानते हुए इनकी पूण उपेक्षा की। उनका कदाचित यह विश्वास था कि निकासी का रोकना और उससे पूजी का निर्माण करना ही प्रधान लक्ष्य था, और इस लक्ष्य की सिद्धि हो जाने के उपरात ही अन्याय समस्याओ का सामना करना उचित है।

दादा भाई नौरोजी द्वारा निकासी के विरुद्ध लगाया गया एक अय आरोप यह था कि इसस विदेशी पूजी का देश म घुसन और देश का शोषण करन की सुविधा उपलब्ध होती थी। उनके अनुसार सुविधा जुटाने का यह काय दो रूपो म होता था, प्रथम, निकासी भारत के अदर पूजी ही के सग्रह म बाधा पहुचाकर और इस प्रकार स आतरिक पूजी को

की माग का प्रस्ताव पेश करते हुए उन्होने दावा किया कि वस्तुत यह निकासी पर पहले के ही प्रस्तुत प्रस्ताव का पूरक है। उन्होने कहा कि दादा भाई नौराजी जहा भारतीय राजस्व के एक बहुत बडे भाग की प्रतिवर्ष निकासी के विरुद्ध आदोलन कर रहे हैं, मैं स्वय भी यही दिखाने को उत्सुक हू कि राजस्व के एक बहुत बडे भाग की वसूली देश के दरिद्रा मे दरिद्रतम लोगो, भारत के किसानो, से ही की जाती है। उन्होने स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि इससे प्रकट होता है कि हम दोनो (मैं और दादा भाई) दो भिन्न भिन्न प्रश्नो पर विचार नही कर रहे हैं प्रत्युत एक ही प्रश्न के दो पहलुओ पर विचार कर रहे है। उन्होने दृढ स्वर मे कहा कि हम दो विभिन्न सुधारो की माग नहीं कर रहे हैं। हम तो केवल बाहरी और भीतरी दृष्टि से सुधार की आवश्यकता को दिखाते हुए उसी एक सुधार की माग कर रहे है। उन्होने दृढ स्वर मे अपना निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए कहा कि आर्थिक निकासी तब तक कम नहीं होगी जब तक भूमि लगान कम नही होंगे, और भूमि लगान तब तक कम नही होगे, जब तक धन की निकासी नही घटाई जाती।[106] इसी प्रकार 'अमत बाजार पत्रिका' ने 1 अक्टूबर 1900 के अक मे मत प्रकट किया कि भूमि पर ऊचे लगान एक भारी रोग है और यह अकाल के प्रमुख कारण निकासी का फल है।

डी० ई० वाचा ने 1886 मे निकासी के कृषि पर पडने वाले प्रभाव के एक अन्य पक्ष को उजागर किया। उन्होने दृढतापूर्वक कहा कि निकासी कृषि को सभी प्रकार की उत्पादक पूजी से वचित कर रही है। उन्होने बल देकर कहा कि जब तक सारी जनता के सभी लाभो की निकासी की जा रही है, तब तक धरती की उत्पादकता मे किसी प्रकार की कोई वृद्धि नही की जा सकती। क्योकि यह वृद्धि तभी सभव है जब धरती पर सघन पूजी का व्यय प्रत्येक स्थिति में निश्चित रूप से थोडी मात्रा में और कुल मिलाकर बडी मात्रा में किया जाए।[107]

बहुत सारे भारतीय नेता यह देखने मे भी सफल हो गए कि सपत्ति के एकपक्षीय स्थानान्तरण के परिणामस्वरूप होने वाली प्रत्यक्ष हानि के अतिरिक्त निकासी भारत के विदेशो के साथ व्यापार सबधो को बिगाडने के रूप मे एक दूसरा आघात भी कर रही थी क्योकि निकासी के साथ विनिमय अधिशेष अनिवार्य रूप से जुडा तत्व था और यह भारत के निर्यात की एक अनिवार्य विशेषता बन गई थी। भारत के लिए दो ही मार्ग थे या तो वह निर्यात करे या नष्ट हो जाए। फलत भारत को विदेशी क्रेताओ को अपना माल खरीदने को प्रलोभित करने के लिए अपने माल की कीमत घटानी पडती थी। दूसरे शब्दो मे निकासी के फलस्वरूप जिन शर्तो पर भारत आयात के बदले निर्यात करता था वह इसके सर्वथा अनुकूल नही थी।[108]

यहा यह एक उल्लेखनीय रोचक तथ्य है कि राष्ट्रवादियो को निकासी की आलोचना मे कुछ विशिष्ट महानुभावो का समर्थन प्राप्त हुआ। आदम स्मिथ ने वेल्थ आफ नेशन्स मे भारत के प्रारभिक ब्रिटिश शासको को भारत के लुटेरे डाकू बताया।[109]इसी प्रकार कार्ल मार्क्स ने भी निकासी के लिए लगभग उन्ही शब्दो का प्रयोग किया, जिनका दादा भाई नौरोजी प्रयोग किया करते थे। 1857 मे मार्क्स ने लिखा

में, केवल 1857 के विद्रोह के कुछ एक वर्षों को छोडकर और वह भी 250 लाख डालर के साधारण परिमाण तक, यह देश विशुद्ध रूप से पूंजी का निर्यातक ही रहा है।

निकासी मे कटौती

निकासी सिद्धात के कुछ एक समर्थकों का तो विश्वास था कि जब तक निकासी जारी है भारत का आर्थिक पुनर्निर्माण कभी सभव ही नही और यदि भारत को निकासी से एक बार मुक्ति मिल जाए तो और सब कुछ अपने प्राकृतिक रूप मे ही स्वत ठीक हो जाएगा।[110] कुछ एक अन्य नेताओ ने थोडा कम कठोर दृष्टिकोण अपनाया और उन्होंने भारत की दरिद्रता और अकाल को निर्मूल करने के लिए अन्य बातो के साथ साथ निकासी म कटौती का भी एक आवश्यक शर्त माना।[111]

इस सबध मे दो अन्य बातें भी विचारणीय है। प्रथम, जैसा कि हम पहले दिखा चुके ह दादा भाई तक इस तथ्य से परिचित थे कि विदेशी शासन के आवश्यक उपकरण के रूप मे थोडी बहुत निकासी का बना रहना तो सवथा अनिवाय ही है। विदेशी शासन को उखाड फेंके बिना तो इसे सवथा निर्मूल किया ही नही जा सकता और हमारे अध्ययन के अतगत अवधि के दौरान सामान्यतया भारत से विदेशी शासन को उखाड फेंकने की कल्पना ही दादा भाई के मस्तिष्क मे नही थी।[112] द्वितीय, दादा भाई और आर० सी० दत्त न ब्रिटिश जनता को यह समझाने की पूरी चेष्टा की कि निकासी मे कटौती से स्वय उन्हे असीम लाभ पहुचेगा क्योकि इससे उनका भारत को निर्यात कई गुना बढ जाएगा।[113] दादा भाई न अपने लक्ष्य मे सिद्धि प्राप्त करने के लिए हमारे अध्ययन के अतगत अवधि के दौरान ब्रिटिश जनता के विभिन्न वर्गों मे उत्पन्न हो रहे तीखे राजनैतिक मतभेदो का लाभ उठाने मे भी किसी प्रकार का सकोच नही किया। उन्होने पहल 1893 मे और फिर 1896 म ब्रिटन के श्रमिक वग से अपील करत हुए यह अभियोग लगाया कि उच्च वग के थोडे से लोग ही ह जो इस समय भारत स सभी प्रकार के लाभ उठा रहे है जबकि दूसरी ओर यदि निकासी समाप्त कर दी जाए तो भारत ब्रिटिश के सामान एक इतनी बडी भारी मण्डी बन जाएगा कि ब्रिटन को अपने श्रमिको की बेकारी का शब्द ही नहीं सुनना पडेगा।[114]

निकासी मे कटौती कैसे की जा सकती है? इस सबध म राष्ट्रवादियो का उत्तर बडा ही सीधा सादा था। निकासी के कारणो का हटा दीजिए। निकासी के कारणो की पहले ही विस्तृत समीक्षा की जा चुकी है अत राष्ट्रवादियो द्वारा सुझाए गए उपायो के विस्तृत विवेचन की कोई आवश्यकता नही। हम यहा केवल राष्ट्रवादियो द्वारा सुझाए गए उपचारो का मात्र उल्लेख ही करेंगे।

इन उपचारो मे सवाधिक महत्वपूण था नगर तथा सनिक सेवाओ का भारतीयकरण और इसके फलस्वरूप इन सेवाओ म यूरोपीय तत्वो की समुचित परिमाण म कटौती।[115] इस सबध मे यहा यह उल्लेखनीय है कि जैसा कि हम पहले दिखा चुके हैं दादा भाई नौरोजी न प्राय ही सकीण आधार देते हुए यह सुझाव दिया कि भारतीयकरण ही इस रोग की एकमात्र औषधि है। इसम निकासी सिद्धात एक प्रकार के फूहड और

उपहासास्पद बनकर रह गया। यह स्थिति उस समय और भी अधिक विकृत रूप धारण कर गई जब उन्होंने यह धारणा प्रकट की कि असैनिक सेवाओं की एक साथ इंग्लैंड और भारत में परीक्षा तथा अप्रतिश्रुत और गौण सेवाओं की न्यायोचित प्रतियोगिता देश का मपन्न बनाने की पर्याप्त आवश्यक शर्तें हैं।[116]

द्वितीय, भारतीय नेताओं ने गृहप्रभारों में कटौती की मांग की।[117] इस पग की वकालत कभी कभी तो निकासी से इसे संबंधित किए बिना ही की गई। गृह प्रभारों को अनेक रूपों में घटाया जा सकता है। भारतीय नेताओं में सर्वाधिक लोकप्रिय उपाय था ब्रिटेन द्वारा इस भार के एक बड़े भाग को वहन करने में भागीदार बनना।[118] कुछ एक नेताओं ने यह सुझाव भी दिया कि इंग्लैंड में लिए गए सरकारी ऋणों पर भारत द्वारा देय ब्याज के भुगतान के और स्वयं सरकारी ऋणों के भार को हटाकर[119] इन ऋणों के लिए शाही प्रतिभूति जुटा करके ब्याज की दर में कटौती करके[120] सरकारी ऋण इंग्लैंड में लेने के बदले भारत में ही लेकर[121] रेलपथ निर्माण की गति को कम करते हुए रेलवे ऋणों के भार को कम करके,[122] भारत के सरकारी भंडारों के लिए स्वयं सरकारी भंडारों के लिए स्वयं भारत में ही सामान की खरीदारी करके,[123] अनावश्यक आयात को रोकने के लिए भारतीय उद्योग को उन्नत करके[124] निजी विदेशी पूंजी के बढ़ते आयात के प्रवाह को रोककर[125] गृह प्रभारों को घटाया जा सकता है। भारतीय नेताओं द्वारा निकासी को रोकने के लिए सुझाया गया महत्वपूर्ण उपचार था—इंग्लैंड और भारत में गृह प्रभारों का न्यायोचित विभाजन।[126]

निकासी सिद्धांत में विश्वास न रखने वाले कुछ भारतीय

यह एक व्यापक मान्यता है कि भारतीय राष्ट्रवादियों में एक ऐसा वर्ग भी विद्यमान था जो निकासी सिद्धांत पर विश्वास नहीं करता था। इस वर्ग का नेतृत्व रानाडे के हाथ में था और वे निकासी के रूप में प्रसिद्ध धन के निर्यात को भारत की दरिद्रता के लिए उत्तरदायी कारण नहीं मानते थे।[127] *इस धारणा का आधार, 1890 में पूना में प्रथम* उद्योग सम्मेलन में उनके द्वारा दिए गए उद्घाटन भाषण के लिखित रूप का एक अवतरण है। इस भाषण में रानाडे ने घोषणा की थी कि कुछ ऐसे लोग भी हैं जो यह सोचते हैं कि जब तक हम इंग्लैंड को ऊंचे खिराज देने को विवश रहना पड़ेगा, जिसका अर्थ लगभग 20 करोड़ रुपये के अधिशेष निर्यात से हाथ धोना है तब तक हम पतन के गर्त में गिरे पड़े रहेंगे और किसी प्रकार भी अपना उद्धार आप नहीं कर सकेंगे। यह न तो किसी रूप में उपयुक्त है और न ही यह वीरोचित स्थिति है। उन्होंने निर्देश किया कि इस निकासी का एक भाग तो भारत में निवेशित अथवा भारत के लिए ऋण में ली गई विदेशी पूंजी पर ब्याज की राशि है और हमें इस विषय में शिकायत करने के बदले धन्यवाद करना चाहिए कि हमारे पास एक ऐसा ऋणदाता है, जो ब्याज की इतनी नीची दर पर हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। एक अन्य भाग भारत को संभरण किए गए भंडारों के मूल्य की राशि का है जिस भंडार के अनुरूप सामान का हम भारत में उत्पादन नहीं करते। अवशिष्ट भाग प्रशासन और सेना पर व्यय का तथा पेंशनों के भुगतान का है।

यद्यपि इस सबध मे अवश्य शिकायत की जा सकती है कि यह सारा आवश्यक खच नही है। रानाडे न अपने श्रोताओ को सलाह दी कि वे खिराज के प्रश्न के निरर्थक विवाद म अपनी शक्तियो का दुरुपयोग अथवा अपव्यय न करें। उन्हे इस प्रश्न को राजनीतिज्ञा पर ही छोड दना चाहिए।[13]

हमारे विचार म यह अवतरण सचमुच यह सिद्ध नही करता कि रानाडे इस बात म विश्वास नही करते थे कि भारत से सपत्ति की निकासी हो रही है अथवा यह आर्थिक दृष्टि से हानिकारक है। जैसा कि ऊपर दिखाया जा चुका है, रानाडे 1872 के प्रारभ म निकासी सिद्धात का भारत म प्रचार करन वाले प्रथम व्यक्ति थे और औद्योगिक सम्मेलन म दिए गए उनके इस भाषण के मुश्किल म ही दो वर्षों के उपरात 'भारतीय राजनैतिक आर्थिकता' विषय पर दिए गए इससे भी अधिक महत्वपूर्ण भाषण म भारत से सपत्ति और प्रतिभा की निकासी के लिए उत्तरदायी विदेशी शासन की निंदा की।[19] इसके अतिरिक्त ऊपर उद्धत अवतरण मे भी उन्होन भारतीयो को आधुनिक उद्योगो की वद्धि के लिए प्रोत्साहित करन के उद्देश्य विशेष से बुलाए गए औद्योगिक सम्मेलन का विरोध निकासी के प्रश्न का उठान के आधार पर किया न कि राजनीतिज्ञा का इस प्रश्न पर विचार न करन की सलाह दी। वस्तुत 1881 मे पूना सावजनिक सभा न जिसके कर्ता-धर्ता और सर्वेसर्वा उस समय रानाडे ही थे, कुछ विषय प्रस्तुत किए जिन पर भारतीय विशेष रूप स क्षुब्ध थे और इन विषयो मे एक विषय था—आयातो की अपेक्षा निर्यातो की अधिकता के माध्यम से निकासी का प्रश्न तथा उस निकासी को रोकने के उपाय।[10] इसी प्रकार भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस न, जिसके पर्दे के पीछे रानाडे महत्वपूर्ण और अग्रणी नता थ और जिसके प्रस्तावो के प्रारूप तयार करने म उनकी भूमिका विशेष महत्वपूर्ण थी, घोषणा की कि निकासी भारत की दरिद्रता का महत्वपूर्ण कारण है।[11] इस सबध म भी उससे बढकर और अधिक महत्वपूर्ण प्रमाणस्वरूप तथ्य यह है कि आर्थिक मामलो मे उनके दोना निकट सहयोगी और शिष्य—जी० वी० जोशी और जी० के० गोखले ने इस दृष्टिकोण की पुष्टि की कि निकासी न औद्योगिक विकास को प्रतिरुधित किया है और इस की जनता को दरिद्र बनाया है।[13] हा, यह कहना तो अवश्य ही गलत होगा कि जोशी और गोखले के विचार रानाडे के विचार थ परतु यह अनुमान गलत नही होगा कि शिष्या न एस किसी विचार का समथन नही किया होगा, जो उनके गुरु के सिद्धाता के मूल रूप म ही विरुद्ध हो।

इस कथन म इतना जरूर सत्य है कि रानाडे तथा कितने ही और भारतीय निकासी सिद्धात के विरुद्ध थे। रानाडे जोशी और गोखले और भारतीय नताओ म कदाचित बहुत सार अन्य निकासी सिद्धात को भारतीय राजनीति का अथवा राष्ट्रवादी प्रचार और आन्दोलन का प्रधान विषय नही बनाना चाहत थ। इसके अतिरिक्त वे इस प्रश्न का कुछ समय के लिए आगा स आभल भी करना चाहत थ। यहा यह भी उल्लेखनीय है जसा कि हम पहल दिखा चुके ह भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस, और भारतीय नताओ का बहुमत, वास्तव म दादाभाई नौरोजी अमत बाजार पत्रिका' और कुछ इनगिन लागो को छोडकर लगभग सभी भारतीय नताओ के विचार म देश को दरिद्रता के गढे म

धकेलने वाले मुख्य कारणों में निकासी भी केवल एक कारण ही था।

निकासी सिद्धांत के आलोचक

राष्ट्रवादी नेताओं की आर्थिक नीतियों के वैज्ञानिक दृष्टि से खरेपन का निर्णय देना तथा उनकी नीतियों का विश्लेषण करने के लिए तथा उन्हें सही सिद्ध करने के लिए उनके द्वारा प्रस्तुत तर्कों की समीक्षा करना कदाचित हमारे ग्रंथ के लिए उपयुक्त नहीं होगा। निकासी के राष्ट्रवादी विरोधियों के संबंध में भी हमारा यही मत है। परंतु इसके साथ ही निकासी सिद्धांत पर भारत में सरकारी और गैरसरकारी प्रवक्ताओं द्वारा सलाहकारों द्वारा तथा भारत में ब्रिटिश राज्य के रक्षकों द्वारा 1880 1905 की अवधि में और उसके उपरांत जिस उग्रता के साथ प्रहार किए गए, उसका उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है। इसके अतिरिक्त सरकारी पक्ष के अर्थशास्त्रियों और लेखकों की यह भी कल्पना थी कि राष्ट्रवादियों द्वारा निकासी पर किया जा रहा प्रहार उनकी पूर्ण मूर्खता और राष्ट्रवादी नेताओं के पूर्वाग्रह से नहीं तो उनकी आर्थिक अनभिज्ञता और संबंधित आर्थिक प्रश्नों की उपयुक्त जानकारी के अभाव से अवश्य उत्पन्न हुआ। इस संदर्भ में हम निकासी सिद्धांत पर ब्रिटिश प्रहार के प्रमुख तर्कों और राष्ट्रवादियों द्वारा दिए गए उत्तरों की समीक्षा करेंगे, जिससे यह स्पष्ट हो जाएगा कि निकासी के राष्ट्रवादी आलोचक आर्थिक वास्तविकताओं से अनभिज्ञ नहीं थे। उन्होंने तो अपने विरुद्ध बाद में लगाए जाने वाले आरोपों को पहले से ही भांप लिया था कि कदाचित यह कहा जा सकता है कि उनके समीक्षकों ने इस विषय के प्रति पूर्ण न्याय नहीं किया और न ही किसी सूक्ष्म चिंतन का परिचय दिया। वे अपने निकासीवाद के स्वरूप निर्धारण में भले ही सही रहे हों अथवा गलत, परंतु इतना निश्चित है कि आर्थिक मामलों में वे अनाड़ी नहीं थे और निकासी के प्रति उनका दृष्टिकोण देश की स्थिति के विस्तृत, पूर्ण और अंत संबंधित तथा समन्वित आर्थिक विश्लेषण का ही एक अंग था। निकासी सिद्धांत का तुरंत ब्रिटिश द्वारा खंडन थिओडोर मोरिसन के प्रत्युत्तर परक ग्रंथ, 'दी इकोनामिक ट्रांजिशन इन इंडिया' में किया गया। यह ग्रंथ 1911 में प्रकाशित हुआ और कदाचित यह सर्वाधिक विस्तृत और आलोचकों के दृष्टिकोण का सर्वोत्तम विश्लेषण था।[133] आधुनिक भारत के आर्थिक इतिहास में एल० सी० ए० नोल्स और वीरा एस्टे ने निकासी सिद्धांत की मोरिसन द्वारा आलोचना की व्यापक रूपरेखा को ही ग्रहण किया।[134] यह एक पर्याप्त रोचक तथ्य है कि निकासीवाद के समर्थक और विरोधी एक बात पर पूर्ण रूप से सहमत थे कि भारत को अपने निर्यातों के भाग के बदले कुछ आर्थिक तुल्य मूल्य की प्राप्ति नहीं होती। इसी प्रकार जान स्टेची ने 1878 के वित्तीय विवरण में टिप्पणी की कि इंग्लैंड के साथ भारत के संबंध और उस संबंध के वित्तीय परिणाम भारत को प्रतिवर्ष लगभग 200 लाख पौंड का उत्पादन बदले में बिना किसी प्रकार के प्रत्यक्ष रूप से व्यापारिक दृष्टि में तुल्य मूल्य की सामग्री के प्राप्त किए ही यूरोप को भेजने को विवश होना पड़ता है। आयातों पर निर्यातों की इस अधिकता को ही अर्थशास्त्री अपनी भाषा में खिराज का नाम देते हैं।[135] और मोरिसन ने 'निकासी' का इस प्रकार परिभाषित किया कि भारत से सामग्री अथवा

धन के निर्यातों की वह धनराशि जिसके बदले भारत को उस वर्ष उस धन राशि के तुल्य मूल्य का किसी प्रकार का सामान प्राप्त नहीं हुआ निकासी है।[136] इस प्रकार निकासीवाद के आलोचकों और समर्थकों के मध्य मतभेद का आधार एकतरफा निर्यात अधिशेष के सही आर्थिक शब्दार्थ उद्गम और परिणाम के संबंध में अपनी अपनी समझ है। निकासी सिद्धांत पर प्रहार का रूप इस प्रकार में था —

प्रथम, यह कहा गया कि भारतीय आवश्यक कटौतियों का हिसाब न करके प्रायः निकासी को बढ़ा चढ़ाकर पेश करते हैं। वे इस तथ्य की ओर ध्यान नहीं देते कि निर्यात अधिशेष का एक भाग तो अदृश्य आयातों, जैसे कि जहाजरानी सेवाएं, आयातों और निर्यातों पर लगने वाला बीमा शुल्क तथा भारतीय छात्रों और पर्यटकों द्वारा विदेशों में किए गए खर्चे आदि के खाते में चला जाता है।[137] पूंजी खाते के साथ व्यापार भी आयातों और निर्यातों को सापेक्ष महत्व देने की झूठी प्रवृत्ति लिए हुए हैं क्योंकि पूंजी के आयात वास्तविक निर्यात अधिशेष को घटा देते हैं और पूंजी के वापसी भुगतान इन्हें अतिरंजित रूप दे देते हैं।[138] अंतिम, निर्यात अधिशेष की संगणना करते समय सोने और चांदी के भारी आयातों की भी गिनती करनी चाहिए।[139] मारिसन ने संगणना की कि वार्षिक निकासी—जिसका अर्थ उसके अनुसार सोने और चांदी के साथ व्यापार तथा पूंजी के आयातों को मिलाकर विशुद्ध निर्यात अवशेष था—की राशि 210 लाख पौंड थी।[140]

द्वितीय, आलोचकों का कथन था कि भारत अतिरिक्त निर्यातों के बदले पर्याप्त आर्थिक तुल्य मूल्य की सामग्री प्राप्त करता है। निकासी का सबसे बड़ा भाग ऋण लिए हुए धन पर ब्याज की राशि का था। ये ऋण भारत के आर्थिक विकास और संपन्नता के सूचक थे न कि दरिद्रता के। विदेशी पूंजी की सहायता से रेलों का निर्माण किया गया है, सिंचाई का विकसित किया गया है तथा बागान और दूसरे औद्योगिक साहस के कार्य प्रारंभ तथा विकसित किए गए हैं जिनसे भारत लाभ अर्जित कर रहा है। इस लाभ का ही एक छोटा सा भाग ब्याज के रूप में देश के बाहर भेजा जाता है। इसके साथ साथ इन लाभों के अर्जन के अतिरिक्त यह उद्योग प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से देश की राष्ट्रीय आय में वृद्धि करते हैं। यदि सारे लाभ ही देश से बाहर भेज दिए जाएं तो भी किराए और श्रम की राशि का भुगतान तो इस देश को ही प्राप्त होगा।[141] अतः भारतीयों को अपने पूंजीगत साधनों की कमी को पूरा करने के लिए विदेशी निवेशकों का आभारी होना चाहिए।[142] भारत को प्राप्त लाभों को और अधिक बढ़ा चढ़ा कर इस प्रकार चित्रित किया गया कि भारत का इंग्लैंड के साथ राजनैतिक संबंधों का यह लाभ होता है कि इंग्लैंड उस विश्व की सबसे सस्ती बाजार में ऋण लेने की सुविधा जुटाता है। यदि भारत में निवेश के लिए पर्याप्त पूंजी के उपलब्ध होने की कल्पना कर भी ली जाए तो उस ऋण रूप में लेना अपेक्षाकृत अधिक महंगा पड़ेगा।[143] मारिसन ने घोषणा की कि वास्तव में भारत का सरकारी ऋण जिस प्रकार सस्ती दर पर मिलते हैं, उससे तो 'राजनीतिक निकासी'[144] की बात खत्म हो जाती है और निश्चय रूप में यह कहना ही पड़ता है कि भारत ब्रिटिश राज्य में अपने संबंधों के कारण आर्थिक लाभ प्राप्त कर रहा है।[145] इस संबंध में भारत की स्थिति की तुलना—यू० एस० ए०, रूस, आस्ट्रेलिया, और जापान जैसे उदाहरण देना

थे—इग्लड अथवा भारत म की गई सेवाओ का भुगतान, जहाजरानी, बीमा और बक प्रभार। भारतीयो ने इन सेवाओ पर विचार ही नही किया प्रत्युत इन्हे प्राय ही अपनी शिकायत का प्रमुख आधार भी बनाया। बक, बीमा व्यापार और भारत के भीतर ही तटवर्ती जहाजरानी स्पष्टतया भारत मे विदेशी व्यापार और उद्यम के ही अग थे और भारत मे विदेशी पूजी के निवेश के इन लाभो को राष्ट्रवादियो ने अपनी जाच पडताल का विषय बनाया था। जहा तक आलोचको के इस कथन का सबध था कि निर्यातो की अधिकता का एक भाग तो आयातो और निर्यातो पर होने वाले जहाजी खर्चे और बीमा की देनदारी का रूप था, दादा भाई ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया परतु साथ ही यह निर्देश किया कि निर्यातो और आयातो के मूल्य की सगणना करने का सरकारी ढग यह था कि निर्यातो की वतमान अधिकता मे ही अतगत पहले से ही इन किरायो आदि का विधान किया जा चुका है। यह कसे हुआ—इसका विश्लेषण उन्होने निम्नलिखित ढग से किया—भारतीय आयातो का मूल्य सरकारी खातो मे भारतीय पत्तनो पर प्रचलित मूल्य के रूप मे ही आका गया अत उस मूल्य मे तो भाडे का व्यय और बीमा की देनदारी स्वत सम्मिलित हो गए और दूसरी ओर निर्यातो का मूल्य भारतीय पत्तनो पर प्रचलित मूल्य के रूप म ही कूता गया, अत उसम भाडे और बीमा का व्यय—जो उसके मूल्य म सम्मिलित किया जाता था और जिसका भुगतान आयात के पत्तन पर किया जाना था—का अलग रखा गया। अत उनके द्वारा सगणित निकासी इस विशिष्ट वक्रता म मुक्त थी।[1] सत्य तो यह है कि वे इसके भी आगे बढ गए तथा उन्होने अपना मत प्रकट किया कि यदि निर्यातो के मूल्य मे मालभाडे और बीमे की रकम को जोड दिया जाए तो निकासी उनकी सगणना स भी अधिक बढे चढे रूप म सामने आएगी।[155] आलोचको के इस प्रमुख तक का कि निकासी का वास्तविक सबध तो पूजीगत सेवाओ तथा व्यक्तिगत सेवाओ के भुगतान से है, राष्ट्रवादियो द्वारा दिया गया उत्तर उपयोगिता तथा अनिवार्यता के मौलिक सुदृढ तथा परिपक्व आधार को लिए हुए था। उनका कथन था कि यदि किसी सेवा विशेष की वास्तव मे ही उपयोगिता और आवश्यकता है और उस विदेश म रुपया खच करके ही पाया जा सकता है तो इस रूप म तो निकासी को सहन करना अनुचित नही कहा जा सकता परतु इसके सवथा विपरीत यदि सेवा निरथक है अथवा उपयोगी होने पर भी स्वय भारत म उपलब्ध की जा सकती है तो उस पर रुपया खच करने के रूप मे निकासी अवश्यमेव आपत्तिजनक है।

इस धारणा का कि निकासी के प्रमुख भाग का सबध उत्पादक सरकारी ऋणो पर ब्याज और निजी विदेशी पूजीपति उद्यमियो के लाभो म है और ये दोनो ही भारत के आर्थिक विकास और सपन्नता के सूचक है राष्ट्रवादियो ने कई तरह स उत्तर दिया। उन्होने निर्देश किया कि अव्वल तो विदेशी पूजी आवश्यक ही नही थी। इसकी आव श्यकता तो तब पडती है जबकि देश के शासक इस देश की पूजी की निकासी करते रहे हैं और कर रहे हैं। इस निकासी के न होने पर तो भारत रेलपथ आदि के लिए स्वय ही पूजी जुटा पाता और साधारणतया अपनी पूजीगत आवश्यकताओ की पूर्ति स्वय करने म वास्तव म ही समथ होता। अत विदेशी पूजी न भारतीय पूजी का स्थान ग्रहण किया

है उसमे किसी प्रकार की वृद्धि नही की। यदि विदेशी पूजी का देशी पूजी की वद्धि म वास्तविक योगदान रहता तो उसका अवश्य स्वागत किया जाता। इसके अतिरिक्त भारत म आयातित पूजी वास्तव मे भारत की अपनी ही पहले निर्यात की गई पूजी थी। अत भारत मे वास्तविक रूप मे विदेशी पूजी का निवेश किया ही नही गया है।[156]

दूसरे भारतीय नेताओ का यह निश्चित मत था कि विदेशी पूजी वास्तव मे उतनी लाभकारी कदापि नही थी जितना इसके समथक कहत थे। रेलें भी शुद्ध वरदान नही हैं और उन्ह देश की आवश्यकता से अधिक तीव्र गति स आगे धकेला जा रहा है।[157] रेलो के निर्माण के लिए उठाए गए सरकारी ऋण स्पष्टतया न तो लाभप्रद हैं और न ही आवश्यक। निजी विदेशी पूजी केवल ब्याज को ही इस देश म बाहर नही खीच ले जाती प्रत्युत उद्यम के सभी प्रकार के लाभ भी हडप जाती है और इससे देश पूजी के पुनर्निवेश के गौण लाभो से भी वचित रह जाता है।[158] इसके अतिरिक्त रेलगाडियो न 19वी शताब्दी के अत तक किसी प्रकार का कोई लाभ नही दिखाया।[159] वेतन आदि के रूप म देश को कुछ लाभ अवश्य हुआ परतु इन वेतनो का भी एक अश विदेशियो को प्राप्त हुआ और यह भी निकासी का ही एक रूप है।[160] इससे भी बढकर उल्लेखनीय सत्य यह है कि विदेशी उद्यमो म श्रम की शोचनीय स्थिति का और पारिश्रमिक के रूप म मिलने वाली रकम की तुच्छता को देखते हुए यही कहा जा सकता है कि इनसे भारत को होने वाला लाभ मामूली ही है।[161]

भारतीय नेताओ ने और अधिक तक प्रस्तुत किए। उनका कथन था कि औद्योगिक क्षेत्र म एकाधिकार जमाने की प्रवत्ति के कारण विदेशी पूजी स्वदशी पूजी के उपयोगी विनियोजन का निरुत्साहित और वचित कर रही थी, उसके माग मे बाधा बन रही थी इस रूप म वह देश के लिए हानिकारक थी।[162] और कुल मिलाकर विदेशी पूजी का उद्देश्य भारत को विकसित और सपन्न बनाना नही था प्रत्युत उसका दोहन, शोषण और अपहरण करना था।[163]

इस प्रकार इस धारणा का कि भारत को सस्ते ब्याज की दर पर ऋण उपलब्ध होने से उसे लाभ पहुचता है उत्तर यह था कि अव्वल तो ऋणो की सवथा ही कोई आवश्यकता नही। दूसरे, उनका उपयुक्त ढग से प्रयोग ही नही किया जाता। वस्तुत वे ऋण कुछ और न होकर भारत से निष्कासित भारत की ही पूजी थे अत उनकी सस्ती दर पर उपलब्धि का प्रश्न ही नही उठता। इसके अलावा यदि ऊची दर पर ही सही देश म देशवासियो से ही ऋण लिया जाता तो भुगतान देश मे रहता और देश के साधनो को फलीभूत बनाता, जबकि नीची दर के विदेशी ऋण निकासी का ही कारण बनते है।

भारतीय नेताओ ने भारत की तुलना कुछ समय निर्यात अधिशेष रखने वाले अमरिका से करने को सवथा अनुचित बताया। इस तथ्य के अलावा कि अमेरिका आम तौर पर ऋण ली गई पूजी पर केवल ब्याज का ही भुगतान करता है और उद्यम के सारे लाभ देश के भीतर अपने पास ही रखता है।[164] भारत के निर्यात अधिशेष और अमरिका के निर्यात अधिशेष के बीच एक अन्य बहुत बडा और चौकाने वाला अतर था। अमरिका इस समय अपने निर्यात अधिशेषो के द्वारा बाहरी देशो के लिए गए ऋणो का भुगतान

थे—इंग्लैंड अथवा भारत में की गई सेवाओं का भुगतान, जहाजरानी, बीमा और बैंक प्रभार। राष्ट्रवादियों ने इन सेवाओं पर विचार ही नहीं किया प्रत्युत इन्हें प्राय ही धन की निकासी का प्रमुख आधार भी बताया। अत, बीमा व्यापार और भारत के भीतरी तटवर्ती जहाजरानी व्यवसाय भारत में विदेशी व्यापार और उद्यम के ही अंग थे और भारत में विदेशी पूंजी के विनियोग के लाभों का राष्ट्रवादियों ने काफी वाद विवाद का विषय बनाया था। इस सदर्भ में आलोचकों ने इस तर्क का खंडन था कि निकासी की अधिकता का एक भाग तो आयात और निर्यात के बीच का अंतर जहाजी भाड़ों और बीमा की लागतों का रूप था, जिसे बाद में भी इस तथ्य को स्वीकार किया परन्तु साथ ही यह निर्देश किया कि निकासी और आयातों के मूल्य की गणना करने का तरीका ऐसा था कि निकासी की वास्तविक अधिकता का, जो भारत द्वारा भेजा गया है, इस निकासी आदि का विचार किया जा चुका है। इसका कारण यह था—इसका निर्यातों उनके निम्नलिखित ढंग से लिया—भारतीय आयातों का मूल्य सरकारी आंकड़ों में भारतीय बंदरगाहों पर प्रचलित मूल्य के रूप में ही आंका गया था। इस मूल्य में तो भाड़े का व्यय और बीमा की लागत स्वतः सम्मिलित हो गए और दूसरी ओर निर्यातों का मूल्य भारतीय बंदरगाहों पर प्रचलित मूल्य के रूप में ही आंका गया, अतः उनमें भाड़े और बीमा का व्यय—जो उनके मूल्य में सम्मिलित किया जाता था और जिसका भुगतान आयात के देश पर किया जाता था—का अलग रखा गया। अतः उनके द्वारा गणित निकासी इस विशिष्ट व्यय से मुक्त थी।[134] सत्य तो यह है कि ये स्वयं भी आगे बढ़ गए तथा उन्होंने अपना मत प्रकट किया कि यदि निर्यातों के मूल्य में भाड़े और बीमे की रकम को जोड़ दिया जाए तो निकासी उनकी गणना से भी अधिक बड़े रूप में सामने आएगी।[135] आलोचकों के इस प्रमुख तर्क का कि निकासी का वास्तविक संबंध तो विदेशी सेवाओं तथा व्यापारिक सेवाओं के भुगतान से है, राष्ट्रवादियों द्वारा दिया गया उत्तर उपयोगिता तथा अनिवार्यता के सीमित मुद्दे तथा परिस्थिति आधार को लिए हुए था। उनका कथन था कि यदि किसी सेवा विशेष की वास्तव में ही उपयोगिता और आवश्यकता है और उसके लिए में रुपया खर्च करके ही पाया जा सकता है तो इस रूप में तो निकासी को सहन करना अनुचित नहीं कहा जा सकता परंतु इसके सर्वथा विपरीत यदि सेवा निरर्थक है अथवा उपयोगी होने पर भी स्वयं भारत में उपलब्ध की जा सकती है तो उस पर रुपया खर्च करने के रूप में निकासी अवश्यमेव आपत्तिजनक है।

इस धारणा का कि निकासी के प्रमुख भाग का सबध उत्पादक सरकारी ऋणो पर ब्याज और निजी विदेशी पूजीपति उद्यमियो के लाभो से है और ये दोनो ही भारत के आर्थिक विकास और सपन्नता के सूचक है राष्ट्रवादियो ने कई तरह से उत्तर दिया। उन्होने निर्देश किया कि अव्वल तो विदेशी पूजी आवश्यक ही नहीं थी। इसकी आवश्यकता तो तब पडी है जबकि देश के शासक इस देश की पूजी की निकासी करते रहे हैं और कर रहे है। इस निकासी के न होने पर तो भारत रेलपथ आदि के लिए स्वय ही पूजी जुटा पाता और साधारणतया अपनी पूजीगत आवश्यकताओ की पूर्ति स्वय करने मे वास्तव मे ही समर्थ होता। अत विदेशी पूजी ने भारतीय पूजी का स्थान ग्रहण किया

है उसमें किसी प्रकार की वद्धि नहीं की। यदि विदशी पूजी का देशी पूजी की वद्धि म वास्तविक योगदान रहता तो उसका अवश्य स्वागत किया जाता। इसके अतिरिक्त भारत म आयातित पूजी वास्तव मे भारत की अपनी ही पहले निर्यात की गई पूजी थी। अत भारत म वास्तविक रूप मे विदेशी पूजी का निवेश किया ही नहीं गया है।[156]

दूसर भारतीय नेताआ का यह निश्चित मत था कि विदेशी पूजी वास्तव म उतनी लाभकारी कदापि नही थी जितना इसके समथक कहते थे। रलें भी युद्ध वरदान नहीं हैं और उन्ह देश की आवश्यकता से अधिक तीव्र गति स आगे धकेला जा रहा है।[15] रेलो के निर्माण के लिए उठाए गए सरकारी ऋण स्पष्टतया न तो लाभप्रद है और न ही आवश्यक। निजी विदेशी पूजी केवल ब्याज को ही इस देश म बाहर नहीं खीच ले जाती प्रत्युत उद्यम के सभी प्रकार के लाभ भी हडप जाती है और इसमे देश पूजी के पुर्ननिवेश के गौण लाभो स भी वचित रह जाता है।[158] इसके अतिरिक्त रेलगाडियो न 19वी शताब्दी क अत तक किसी प्रकार का कोई लाभ नहीं दिखाया।[159] वेतन आदि के रूप म देश को कुछ लाभ अवश्य हुआ परतु इन वतनो का भी एक अश विदशियो को प्राप्त हुआ और यह भी निकासी का ही एक रूप है।[160] इसमे भी बढकर उल्लेखनीय सत्य यह है कि विदेशी उद्यमो म काम की शोचनीय स्थिति को और पारिश्रमिक के रूप म मिलने वाली रकम की तुच्छता को देखते हुए यही कहा जा सकता है कि इनसे भारत को होने वाला लाभ मामूली ही है।[161]

भारतीय नेताआ ने और अधिक तक प्रस्तुत किए। उनका कथन था कि औद्योगिक क्षत्र म एकाधिकार जमाने की प्रवत्ति के कारण विदशी पूजी स्वदशी पूजी के उपयोगी विनियोजन को निरुत्साहित और वञ्चित कर रही थी, उसके माग मे बाधा बन रही थी, इस रूप म वह देश के लिए हानिकारक थी।[16] और कुल मिलाकर विदेशी पूजी का उद्देश्य भारत को विकसित और सपन्न बनाना नही था प्रत्युत उसका दोहन, शोषण और अपहरण करना था।[163]

इस प्रकार इस धारणा का कि भारत को सस्ते ब्याज की दर पर ऋण उपलब्ध होने मे उसे लाभ पहुचता है, उत्तर यह था कि अव्वल तो ऋणो की सवथा ही कोई आवश्यकता नही। दूसर, उनका उपयुक्त ढग स प्रयोग ही नही किया जाता। वस्तुत वे ऋण कुछ और न होकर भारत से निष्कासित भारत की ही पूजी थे, अत उनकी सस्ती दर पर उपलब्धि का प्रश्न ही नहीं उठता। इसके अलावा यदि ऊची दर पर ही सही देश म देशवासियो से ही ऋण लिया जाता तो भुगतान देश म रहता और देश के साधनो को फलीभूत बनाता जबकि नीची दर के विदेशी ऋण निकासी का ही कारण बनते हैं।

भारतीय नेताआ ने भारत की तुलना कुछ समय नियात अधिशेष रखने वाले अमेरिका से करने को सवथा अनुचित बताया। इस तथ्य के अलावा कि अमेरिका आमतौर पर ऋण ली गई पूजी पर केवल ब्याज का ही भुगतान करता है और उद्यम के सार लाभ देश के भीतर अपने पास ही रखता है।[164] भारत के नियात अधिशेष और अमेरिका के निर्यात अधिशेष के बीच एक अन्य बहुत बडा और चौकाने वाला अतर था। अमेरिका इस समय अपने नियात अधिशेषो के द्वारा बाहरी देशो के लिए गए ऋणो का भुगतान

कर रहा है जिसका अर्थ यह है कि अतीत म यह निर्यात अधिशेष वाला देश था। इसके निर्यात अधिशेष इसकी आस्थगित वसूलियों से सबधित है। परतु भारत का मामला बिलकुल अलग-थलग था। वह पिछले ऋणों का भुगतान नहीं कर रहा है क्योंकि भारत के निर्यात अधिशेषों की सगणना ही केवल तब की जाती है, जब उनमे आयात पूजी आयातों मे सम्मिलित कर दी जाती है। इस प्रकार जहा तक भुगतान चिट्ठे का सबध है ऋण म ली गई धनराशि का भुगतान तो उसी समय स्वय निर्यातों के साथ ही कर दिया जाता है। इस प्रकार एक ओर तो भारत के पास अतीत म कोई आयात अधिशेष नहीं थे। 1857 के विद्रोह के पश्चात कुछ एक वर्षों तक थे भी तो उनका परिमाण तुच्छ था। दूसरी ओर भारत ने निर्यात अधिशेषों ने भविष्य के लिए इन दूसरे देशों पर किसी प्रकार की दावेदारी प्रदान नहीं की। इसलिए कालातर म आयात अधिशेष इसकी किसी प्रकार की क्षतिपूर्ति नहीं कर पाएगे। फलत भारत का निर्यात अधिशेष एक ऐसी विचित्र प्रक्रिया है—जिसकी पूजी के साथ व्यापार न तो कोई अतीत है और न ही कोई भविष्य। यह तो पैदा होते ही दम तोड़ने की सी स्थिति है।[165]

इन सब तर्कों के बावजूद निकासी सिद्धात के प्रस्तावक प्राय ही निकासी सबधी अपनी सगणनाओ स उत्पादक सरकारी ऋणों के लागत मूल्य को शामिल न करने पर सहमत थे।[166] इस सबध म यहा यह भी उल्लेखनीय है कि उपयोगिता का आधार मानते हुए इन नेताओ ने उधार ली गई पूजी के मत्थे किए गए सिंचाई व्यय के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं कहा। इसी प्रकार कुछ एक नेताओ न तो देश के उत्पादक ससाधनों के विकास के लिए विदेशों स ऋण लेने का समर्थन किया।[167]

भारतीय नेताओ न एक अन्य तथ्य की ओर सकेत करते हुए कहा कि भारतीय सरकारी ऋण का एक भाग पूर्णतया राजनैतिक प्रकृति का होने के कारण निरर्थक, अनावश्यक और अपने स्वरूप मे अनुत्पादक है तथा इसके बदले म तुल्य मूल्य का कुछ भी प्राप्त नहीं होता है।[168] 1858 म लगभग 690 लाख पौंड तक पहुचे साधारण सरकारी ऋण के उदगम की खोज करते हुए भारतीय नेता इस परिणाम पर पहुचे कि इसका अस्तित्व मे लाने वाली ईस्ट इंडिया कपनी है जिसने अपने शासन काल म ब्रिटिश द्वारा भारत को जीतने के लिए किए गए युद्धों के खर्चे की पूर्ति के लिए तथा भारत की कपनी के लाभों का भुगतान करने के लिए इस रोग की सृष्टि की है। इसके साथ इसम कपनी द्वारा ताज को भारत के प्रशासन के हस्तांतरण के मूल्य के रूप मे ईस्ट इंडिया कपनी के भागीदारों को क्षतिपूर्ति के रूप मे दी जाने वाली धनराशि तथा 1857 के विद्रोह को कुचलने मे खर्च की गई धनराशि भी जोड दी गई है। इस प्रकार 1858 के बहुत बाद भी भारत विदेशी शक्ति द्वारा विजित होने का मूल्य चुकाता आ रहा है।[169] भारत और इग्लैंड के अनुचित वित्तीय सबधों के उदाहरण है—1878 के अफगान युद्ध का, मिस्री युद्धों का, 1890 के बर्मा युद्ध तथा सीमात युद्धों का खर्च भारत के मत्थे मढना। ताज द्वारा भारत का प्रशासन सभालने के उपरात साधारण सरकारी ऋणों का भार उत्तरोत्तर बढता ही गया।[170] अत राष्ट्रवादी भारतीय नेताओ की दृष्टि से लगभग 1000 लाख पौंड भारतीय सरकारी ऋण का एक बहुत बडा भाग स्पष्टतया व्यापार ऋण नहीं है। इसलिए

नतिक दृष्टि से वह भारत का दायित्व नही। इसका ब्याज स्पष्टतया धन की निकासी है। यहा यह उल्लेखनीय है कि दादा भाई कभी कभी ऋण के इस अश के प्रति भी उदारता बरतने को महमत हो जाया करते थे।[171]

जहा तक भडारो का सबध था वे पहले से ही आयातो म सम्मिलित थे[172] और इसके अतिरिक्त वे निकासी प्रकृति के ही थे, क्योकि मूलत वे इस रूप मे अनावश्यक थे क्योकि उनका उत्पादन दश मे किया जा सकता था[173] परतु फिर भी इन भडारो के भुगतान के प्रति भारतीयो का दृष्टिकोण उदार था।[174]

निकासी के विरोधी भारतीय नता निकासी के जिस एक भाग को किसी भी स्थिति म क्षमा करने के लिए सवथा तैयार नही थ, वह था भारत सरकार द्वारा यूरोपीय कमचारियो पर किया जाने वाला व्यय। उनके विचार म सवाओ के लिए किया जाने वाला भुगतान निकासी की जड था। स्पष्ट है कि भारत का निकासी के इस भाग के वदले मे तुल्य मूल्य का कुछ भी तो प्राप्त नही होना। दूसरी ओर भारतीय नता यह मानने को तैयार नही थे कि गैर आर्थिक सेवाओ के द्वारा इस मद की निकासी की क्षति पूर्ति हो जाती है।[175] वस्तुत ये सेवाए आवश्यक ही नही थी। सत्य तो यह है कि देश को इन सेवाओ की कोई आवश्यकता ही नही है क्योकि स्वय भारतीयो द्वारा अपेक्षाकृत अधिक योग्यता और अधिक सस्तेपन के साथ ये सेवाए की जा सकती हैं।[176] अत इन सेवाओ के लिए किया जाने वाला भुगतान अनिवाय रूप स थोपा गया है और वास्तव मे निकासी का ही एक निश्चित रूप है। यह भी एक रोचक तथ्य है कि भारतीय नेताओ ने भारतीय कारखाना म विदशी तकनीशना की नियुक्ति[177] पर कोई आपत्ति नही की अथवा भारतीय विश्वविद्यालयो मे योग्य अध्यापको की नियुक्ति का भी विरोध नही किया।[178] इन नेताओ ने विदेशो म भारतीय छात्रो की शिक्षा पर किए जाने वाले व्यय म वद्धि के लिए सक्रिय सघष किया।[179] इन दानो मदो मे होने वाली निकासी को आवश्यक और उपयोगी माना गया। दूसरे, राष्ट्रवादियो का कथन था कि भारत सरकार द्वारा सनिक और असनिक प्रशासन पर किए जाने वाले व्यय का एक बहुत बडा भाग भारत के हित को दष्टि मे रखकर नही किया जा रहा था प्रत्युत इसका उद्देश्य ब्रिटिश और उसके नागरिको के हितो को सुरक्षित करना था।[180] अत कानून और व्यवस्था के नाम पर भी किया गया व्यय स्पष्ट रूप से धन की निकासी था। इसके अतिरिक्त दादा भाई नौरोजी न सरकारी अधिकारियो को भारत की सुरक्षा के दावे को चुनौती देते हुए प्रश्न किया कि भारत समुचित रूप से सुरक्षित कहा है जबकि स्वय अग्रेजो को इस लूटने की सुनी छूट मिली हुई है।[181]

कुछ एक भारतीय नेताओ ने यह भी टिप्पणी की कि यूरोपीय कमचारियो को दिए जाने वाले भुगतान को गर आर्थिक पहलू से कितना ही न्यायसगत सिद्ध करने का प्रयास क्यो न किया जाए, आर्थिक दष्टि से तो वह निश्चित रूप से ही धन की निकासी था।[182] दादा भाई न इस सबध मे व्यग्य प्रहार करते हुए ब्रिटिश जनता स प्रश्न किया कि क्या वे उपयोगी सवा क तक पर अपन प्रशासन के उच्च पदो पर और प्रमुख स्थाना पर फ्रासीसी युवको जैसे विदेशियो को आरूढ होने की अनुमति देंगे?[183] उन्होने इस बात का भी

लिखे अपने पत्र में उन्होंने बार बार और जोर देते हुए लिखा हमारे लिए निकासी एक व्यापारिक मामला नहीं है। यह विदेशी सत्ता द्वारा भारत के ससाधनो के खर्चों के अस्वाभाविक प्रशासन और अस्वाभाविक प्रबध का परिणाम है।[157] उन्होंने दृढतापूर्वक लिखा कि जहां तक इग्लैंड में प्रभारों की देयता का सबध हैं, वे भारत की किसी भी प्रकार की सहमति के बिना, अत्याचार के द्वारा बलपूर्वक ही लिए जा रहे हैं।[158] इस प्रश्न के समग्र राजनैतिक पक्ष ने उन्हें आश्चर्यचकित कर दिया। और उन्होंने लिखा कि लार्ड मकाले ने ठीक ही फरमाया है कि कधो पर रखे जाने वाले सभी प्रकार के जुओं में अजनबियों का जुआ सर्वाधिक भारी होता है।[159] बाद में 1897 में विलबी कमीशन के समक्ष जिरह के दौरान उन्होंने यह टिप्पणी की भारत में ब्रिटिश राज्य का स्वाभाविक और आवश्यक दोष भारत की आर्थिक, राजनैतिक और बौद्धिक निकासी है। इसे समुद्र पार के विदेशी शासन से पृथक किया ही नहीं जा सकता, क्योंकि यह प्रशासन इस सुदृढ सिद्धात पर विश्वास ही नहीं रखता कि भारतीयों को अपने देश की सेवा में समुचित भाग और उनके अपने ही खर्चों में उन्हें कुछ कहने का अधिकार मिलना चाहिए। इस टिप्पणी के साथ उन्होंने बडी ही सुस्पष्ट भाषा में निकासी के राजनीतिक कारणों की ओर इशारा किया।[160] निकासी सिद्धात के अध्ययन से निकलने वाले निष्कर्षों ने भारत में ब्रिटिश राज्य के स्वरूप व प्रयोजनो के विषय में दादा भाई के विचार व दृष्टिकोण को धीरे धीरे बदलना शुरू कर दिया। अब निकासी पर विचार करते समय सामान्य रूप से ब्रिटिश राज्य को दवी वरदान बतलाने वाले दादा भाई एक दूसरी भाषा में ही बोलने लगे। धीरे धीरे और लगभग अपनी इच्छाओं के विरुद्ध वे यह अनुभव ही नहीं करने लगे परतु सार्वजनिक रूप से घोषित करने लगे कि ब्रिटिश राज्य को उपयोगी दयालु और लोकहित कारी मानना मात्र एक भ्रम था। जैसाकि इसी अध्याय के प्रारंभिक भाग में हम निर्देश कर चुके हैं दादा भाई के अनुसार, भारत में औद्योगिक विकास के अभाव का और भारतीयों की दरिद्रता का सारे का सारा ही दायित्व निकासी पर है और यह निकासी शासकों की दूषित नीति का ही परिणाम है। उन्होंने यह मानने से इनकार कर दिया कि निकासी को समक्ष रखकर सोचा पर ब्रिटिश राज्य के अन्य कल्पित लाभों, न्याय और व्यवस्था, जीवन और सपत्ति की सुरक्षा विदेशी आक्रमण से बचाव तथा अकाल से बचाव की भारतीय जनता के लिए कोई उपयोगिता थी। 1880 में उन्होंने अकाल से बचाव के लिए उठाए गए पगों पर अपना मत प्रकट करते हुए कहा भारत के शासक अपने लिए इस सबध में किसी प्रकार का श्रेय लेने का कोई दावा नहीं कर सकते क्योंकि वस्तुत इन अकालों के लिए वे ही प्रमुख रूप से उत्तरदायी हैं। वे ही तो भारत की सपदा की निकासी कर रहे हैं जो परिणाम में भारतीयों के द्वार पर दुर्भाग्य भुखमरी और लाखों मौतें लाती है।[161] न ही भारत ब्रिटिश शासन द्वारा बाहरी आक्रमण के विरुद्ध जुटाई गई सुरक्षा से किसी भी प्रकार से लाभान्वित होता है, क्योंकि अग्रेज लोग भारत के प्रवेश द्वार पर तो सतरी बनकर खडे हैं और सारे विश्व को चुनौती देते हैं कि वे भारत की सभी बाहरी आक्रमणकारियों से रक्षा कर रहे हैं और करेंगे परतु जिस खजाने की रक्षा का वे दम भरते हैं चोर दरवाजे से उसी खजाने को चुपचाप ले जा रहे

हैं।[19] *स्थिति की वास्तविकता यह है कि देश की रक्षा करना तो दूर रहा,* अग्रेजी शासन तो विदेशी आक्रमण को स्थाई रूप दे रहा है उसे बढा रहा है, दिन प्रतिदिन उसकी सभावना म वद्धि कर रहा है। इसके साथ ही अग्रेजी शासन देश को समग्रत परतु धीरे धीरे विनाश के गढे मे धकेल रहा है।[193] वस्तुत अग्रेज निकृष्टतम आक्रमणकारी था और भारत को इससे बुरे दुर्भाग्य का सामना कभी नही करना पडा।[194] जीवन और सपत्ति की सुरक्षा के लाभो के सबध मे दादा भाई ने निम्नलिखित टिप्पणी की

> यह एक मिथ्या धारणा है कि भारत मे देशवासियो को जीवन और सपत्ति की सुरक्षा प्राप्त है। वास्तविकता यह है कि सुरक्षा नाम की कोई वस्तु है ही नही। एक रूप मे जीवन और सपत्ति की सुरक्षा उपलब्ध है और वह इस प्रकार मे है कि लोग किसी प्रकार की हिंसा से, आपसी मार पीट से तथा देसी निरकुश शासको के भय से सुरक्षित हैं। यह जीवन और सपत्ति की निस्सदेह वास्तविक सुरक्षा है और भारत इसके लिए कृतज्ञता प्रकट करने से इनकार नही करता, परतु इग्लड के स्वय अपने पजे से उसे सपत्ति की किसी प्रकार की सुरक्षा सवथा ही प्राप्त नही है। फलत जीवन की सुरक्षा भी प्राप्त नही। भारत की सपत्ति सुरक्षित नहो। जो सुरक्षित और पूणत सुरक्षित है, वह है, इग्लड, वह पूण रूप स और समग्र रूप स रक्षित और सुरक्षित है तथा वह अपनी यह सुरक्षा बनाए रखना चाहता है ताकि वह वतमान दर पर 30,000,000 से 40,000 000 पौड की सपत्ति प्रतिवष भारत से ले जा सके और इसे हजम कर सके। इसलिए मैं यह कहने का साहस कर सकता हू कि भारत को सपत्ति और जीवन की सुरक्षा प्राप्त नही है। इतना ही नही, उस तो ज्ञान और बुद्धि की सुरक्षा भी प्राप्त नही है। भारत म लाखो करोडो लोगो के लिए तो जीवन का केवल यही अथ है आधे पट खाना नसीब होना, अथवा भूखो मरना अथवा दुर्भिक्ष का सामना करना अथवा रोगो से जूझना।[195]

कानून और व्यवस्था के सबध मे 1876 मे दादा भाई ने लिखा

> एक भारतीय कहावत है कि 'किसी की पीठ पर भले ही लात मारो परतु किसी के पेट पर कभी लात नही मारनी चाहिए। देसी निरकुश शासन मे लाग अपन उत्पादना को सुरक्षित रख सकते थे और उनका उपभाग कर सकत थ। यह दूसरी वात है कि इसके पीछे उन्ह कभी कभी हिंसा का सामना भी करना पडता था। ब्रिटिश *निरकुश शासन मे लोगो को शाति तो प्राप्त है हिंसा का अस्तित्व नहीं है* परतु उनका कोष शातिपूवक, अनदेखे रूप से और चालाकी के साथ लूटा जा रहा है। अब भारतीय कानून और व्यवस्था के अतगत शातिपूवक भूखा मरता है और शातिपूवक ही मृत्यु का ग्रास बनता है।[196]

उन्होने इसके साथ आगे कहा मैं नही कह सकता कि अग्रेजा की एसी स्थिति के बार म क्या प्रतिक्रिया होगी।

निकासी सिद्धात ने भारत म ब्रिटिश राज्य की प्रकृति और उसके स्वरूप को समझने की दिशा म उन पर गहरा प्रभाव डाला। इस प्रकार उन्होने अपन निबध, दी पावर्टी आफ इडिया के लगभग निष्कष के रूप मे ही लिखा निकासी के कारण सारा ही शासन

चक्र एक गलत, अप्राकृतिक और आत्मघाती दिशा म घूम रहा है।[87] 12 फरवरी 1895 को हाउस ऑफ कामन्स म दिए गए अपने भाषण मे उन्होंने घोषणा की कि ब्रिटिश भारत वास्तव म ब्रिटिश भारत ही था, भारत का भारत नहीं।[88] उन्होंने और आगे कहा एक प्रकार स तो विपुलसम्पन्न भारतीयों की स्थिति देशी राज्यो के लोगो की स्थिति स भी बदतर है। लोग मालिको की भूमि पर और मालिको के साधनो स काम करते है। मालिक उनके वेतन श्रम का ही लाभ उठाते हैं इसके विपरीत भारतीय अपनी ही धरती पर और अपने ही साधनो स काम करते है इतने पर भी उन्हे अपने लाभ विदेशी मालिको को सौंप देने पडते हैं।[89] इसी प्रकार 31 जनवरी 1897 को लार्ड विल्बी को लिखे अपने एक पत्र म दादाभाई ने वकालत की, व (ब्रिटिश नागरिक) हम मित्र नागरिक कहते है उन्हे अपने इस कथन को अवश्यमेव यथार्थ का रूप देना चाहिए। इस समय तो मित्र की बजाय यह एक निरा झूठ और भद्दा मजाक है इस समय तो लोगो का नाता दास और स्वामी का ही है।[90] दादाभाई यह देखकर आश्चर्य चकित रह गए कि उपकार के नाम पर ब्रिटिश न शोषण का यह कैसा भ्रमजाल फैला रखा है। "ऐसा तो शोषण ब्रिटिश राज्य द्वारा इस ढग स किया जा रहा है कि दमन म न किसी प्रकार का व्यवहार खुले रूप म सामने आता है न किसी प्रकार ने जीवन तथा सम्पत्ति को क्षति पहुचाई जाती है, जिससे कि समाज इस लूट को देख पाए और इस पर कांप उठे।[91] उन्होंने दृढ स्वर म कहा, भारतीय शब्दों के इस चालू अन्याय और दुर्भाग्यपूर्ण प्रशासन के अन्तर्गत ब्रिटिश राज्य भारत का उपकारी होने का ढोंग करता है। सत्य यह है कि ब्रिटिश राज्य भारत का हित करना तो दूर रहा उसका खून ही चूस रहा है।[92] 1904 तक दादाभाई भारत म ब्रिटिश राज्य के वर्णन प्रसग म कटु और कठोर शब्दों का ही प्रयोग करने लगे थ। अगस्त 1904 म हेग म हुए अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन मे दिए गए अपने भाषण म दादाभाई ने ब्रिटिश राज्य को 'असभ्य' बतलाया। उनके द्वारा प्रयुक्त वास्तविक शब्द थ

> असभ्यता शब्द का क्या अभिप्राय है? क्या इसका अर्थ यह है कि यदि एक क्रूर व्यक्ति किसी दुर्बल व्यक्ति की पिटाई करता है और उसे लूट लेता है तो उसका यह दूषित कर्म असभ्यता है? यही बात राष्ट्रो पर ही लागू होती है और इसी ढग का प्रयोग ब्रिटेन भारत के प्रति कर रहा है। इसका अंत अवश्य ही होना चाहिए। पशु शक्ति का साम्राज्य असभ्यता ही है।[93]

निकासी सिद्धात ने एक अन्य रूप म भी दादाभाई के चिंतन को गहरापन दिया धीरे धीरे उन्होंने राष्ट्रवादियों की इस परपरागत धारणा पर अविश्वास करना प्रारंभ कर दिया कि भारत म जो कुछ भी गलत काम होता है उसका सारा दोष भारत मे रहने वाले स्वार्थी और भारतीय अधिकारियों को अपनी इच्छा के अनुकूल काय करने को विवश करने वाले अग्रेज अधिकारियों का है। विल्बी कमीशन के समक्ष जिरह मे उन्होंने सरकारी कर्मचारियों की बुरी काय प्रवृत्ति को नही प्रत्युत सरकार की गदी पद्धति अथवा मशीनरी को ही निकासी के लिए उत्तरदायी ठहराया। इस प्रकार उन्होंने कहा

> मेरा सामान्य प्रहार सरकारी अधिकारियो पर नही, प्रत्युत उस बुरी व्यवस्था

> पर है, जिसके अनुसार वे ... काम करते रहते हैं। उन्हें निरंतर शासक का मन खुश करना पड़ता है जिसका परिणाम ही अपमानजनक है। ... बुरी व्यवस्था के ही परिणाम हैं, जिसके अनुसार वे शासित हैं और जिस पर विचार करने और जिसके समाधान करने की आवश्यकता है ताकि वे स्वयं आत्मसम्मान अधिक संतोषजनक ढंग से अपना कार्य कर सकें ।[204]

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि जब निकासी सिद्धांत में दादाभाई ब्रिटिश राज्य की प्रवृत्ति का स्मरण करते हुए यहाँ कुछ एक अन्य नेताओं ने इस सिद्धांत का उपयोग ब्रिटिश शासन के शोषक चरित्र को उजागर करने के लिए किया। उदाहरणार्थ 9 जून 1900 के अंक में 'अमृत बाजार पत्रिका' ने निकासी सिद्धांत के समर्थन में इस आधार पर आवाज उठाई कि 'इंग्लैंड भारत की आर्थिक ... पर ... ' के सिद्धांत का प्रत्यक्ष समर्थन होता है।

> ... इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सामान्य धारणा यह है कि इंग्लैंड को कभी भारत से वस्तुतः नियमित नहीं लेना चाहिए। इंग्लैंड में तो यह विश्वास जम चुका है कि अंग्रेजों को भारतीयों का भार उठाना पड़ता है, परन्तु वे भारतीयों का अपना भार कभी नहीं उठाते थे। ब्रिटिश सरकार तो यह कभी नहीं मानती कि यह एक दोषी नीति रही है परन्तु यदि यह दिखाया जा सके कि इंग्लैंड भारत से निकास ही नहीं करता प्रत्युत बहुत भारी निकास प्रस्तुत करता है तो अंग्रेजों को यह मानना पड़ेगा कि उन्हें अपनी अन्याय तथा परा-जित प्रजा की हानि की पूर्ति के लिए कुछ न कुछ करना पड़ेगा।

निकासी के विरुद्ध जीवन भर संघर्ष करते रहने के उपरांत भारत में ब्रिटिश राज्य की प्रवृत्ति, चरित्र और उद्देश्यों के संबंध में निर्धारित धारणा ने उन्हें राजनीतिक युद्ध के मार्ग पर अग्रसर होने का बाध्य कर दिया। इस प्रकार जिस व्यक्ति ने अत्यंत हल्की मांगों को प्रस्तुत करने के साथ ही अपना राजनीतिक जीवन प्रारंभ किया था धीरे धीरे एक वर्ष से दूसरे वर्ष और एक स्तर से दूसरे स्तर पर अपनी रणनीति और राजनीतिक मांगों में उत्तरोत्तर अतिवादी बनता गया।

प्रशासनिक सेवाओं के भारतीयकरण के क्षेत्र में दादाभाई ने भारत सरकार के यूरोपीय कर्म-चारियों को 'जोंक' बताया[205] और 1885 के प्रारंभ में ही उन्होंने मांग पेश की कि नियंत्रण तथा अधीक्षण का उच्चतम अधिकार ही केवल अंग्रेजों के हाथ में रहना चाहिए तथा अन्य सभी सेवाओं की प्रबंध व्यवस्था भारतीयों को सौंप देनी चाहिए।[206] 1897 में उन्होंने अपनी मांग का और अधिक स्पष्ट विश्लेषण किया तथा दृढ़ता से कहा कि केवल वायसराय, गवर्नरों तथा उपराज्यपालों के पद ही अंग्रेजों के हाथ में रहने चाहिए।[207]

क्रांतिकारी मांगों का पक्ष रखने में अथवा ऊँचे राजनीतिक स्तर के नारे देने में दादा भाई ने जल्दबाजी से काम नहीं लिया और प्रारंभ में निकासी समाप्त न करने की स्थिति में गंभीर परिणामों की चेतावनी देने के रूप में अपने नकारात्मक अतिवाद को प्रकट किया। हाँ, धीरे धीरे परन्तु अनभिज्ञ रूप में इन चेतावनियों ने प्रत्यक्ष राजनीतिक नारों और मांगों का रूप अवश्य ग्रहण करना प्रारंभ कर दिया। 1880 में ही दादा भाई ने

ब्रिटिश साम्राज्य की अपनी भारत के अतीत के शासकों के साथ तुलना न करने के लिए खबरदार किया। उन्होंने घोषणा की कि यदि ब्रिटिश अपने आपको उच्च ज्ञान और श्रेष्ठ सभ्यता के अनुपात म पर्याप्त श्रेष्ठ सिद्ध नहीं करते और यदि भारत उनके अधीन व्यापक प्रगति और समृद्धि प्राप्त नही करता, तो भारत म उनके टिके रहने म कोई औचित्य नहीं। इसके अतिरिक्त पिछली निकासी को दुर्भाग्य मानकर भले ही भुला दिया जाय और क्षमा कर दिया जाए परंतु एक बार मामला साफ हो जाने पर भविष्य म की जाने वाली इस प्रकार की निकासी को तो सीधी सादी भाषा म डकैती और विध्वंस ही कहा जाएगा।[8] 1896 म उन्होंने टिप्पणी की कि यद्यपि भारतीयों का अब भी ब्रिटिश जनता के स्वस्थ अंतःकरण म पक्का विश्वास है परंतु वर्तमान व्यवस्था का परिणाम भारतीयों को इस निष्कर्ष पर पहुंचा देगा कि भारतीयों के सामने अपने वर्तमान प्रशासकों से पिंड छुड़ाने के सिवाय और कोई रास्ता नहीं है।[9] और फिर यदि निकासी जारी रही तो ब्रिटिश शासन भी एक विदेशी निचोड़न वाली क्रूर शक्ति बना रहेगा जिस के फलस्वरूप जनता यूरोपीय शासकों से मुक्त होने को उत्कंठित रहेगी।'[10] 'असंतोष के कारण' पर लार्ड मिन्टो को लिखे अपने पत्र मे, ब्रिटिश राज्य के प्रति वफादारी के महान उद्घोषक, जिन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के द्वितीय अधिवेशन मे यह घोषणा करने का साहस किया था कि हम बहादुरी से यह घोषणा करनी चाहिए कि हम पूर्ण रूप से ब्रिटिश राज्य के प्रति वफादार है [11] उसी व्यक्ति न पूर्वापेक्षा अधिक स्पष्ट वाणी मे गर्जना की, क्या किसी भी मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति के लिए यह सोचना संभव है कि कोई एक देश दूसरे देश को अपने अधीन कर ले और फिर उससे वफादारी और स्नेह की आशा करे? यह मानना मानव प्रकृति के विरुद्ध है। ऐसा न ही आज तक कभी हुआ है और न ही कभी होगा।[1] 1900 तक वफादार दादा भाई के मन म कदाचित अज्ञात रूप से ही राजद्रोह की भावनाएं घर करने लगी थी। उसी वर्ष उन्होंने शासकों को एक और चेतावनी दी, भारतीय आज तक ब्रिटिश द्वारा किए जा रहे शोषण को सहन करते आ रहे है और यह विश्वास करना एक भूल ही होगी कि उनकी वफादारी डिग नहीं सकती और जिस रूप म आज है उसी रूप म सदा के लिए बनी रहेगी।[13] भारतीय लोग अब स्थिति की वास्तविकता को समझने लगे हैं और यदि उनकी दशा को सुधारने के लिए कोई पग न उठाया गया तो हो सकता है कि वे शक्ति को नष्ट करने के लिए शक्ति का प्रयोग करने को प्रलोभित हो उठें।[14] यह तो थोड़े समय की ही बात थी, जबकि दादा भाई इस निष्कर्ष पर पहुंचे, यदि निकासी को रोकना है तो भारत को अवश्य ही राजनैतिक दृष्टि से स्वतंत्र होना पड़ेगा। दादा भाई के दिल और दिमाग की ताजगी, जिन्दादिली और वीरता के लिए उनका अभिनंदन ही करना पड़ेगा कि उन्होंने 79 वर्ष की पक्की आयु म जबकि धमनियों मे रक्त प्रवाह शिथिल पड़ जाता है ब्रिटिश के भारत पर शासन की अंतिम प्रकृति के संबंध मे अपने पूर्व विश्वास से हटकर स्व शासन की गुणात्मक छलांग लगाई।'[15] 1904 मे अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन मे, जिसने भारत के राष्ट्रवादी क्षेत्रों मे विशेषतः उदारपंथी क्षेत्रों म यथार्थ मे ही हलचल मचा दी, निकासी पर दिए गए अपने प्रसिद्ध भाषण मे दादा भाई ने अपनी राजनैतिक मान्यता को निम्न-

निश्चित रूप से सुस्पष्ट भाषा मे अभिव्यक्ति दी

> इसका एकमात्र उपाय भारतीयो को स्वशासन देना है। भारत के प्रति अन्य ब्रिटिश उपनिवेशो के समान ही व्यवहार अपेक्षित है। भारतीयो के इग्लैड के साथ सबध अवश्य जुड़े रहे परतु उन्हें दास बने रहने पर घोर आपत्ति है। वे अपने पर अपना ही शासन चाहते हैं तथा विश्व के अन्यान्य देशो के साथ प्रगति म भागीदार बनना चाहते हैं।[16]

उनकी इस घोषणा को समाजवादी सम्मेलन के क्रांतिकारी वातावरण से उत्तेजित मन की एकाएक और जल्दबाजी म निकाली गई भड़ास नही कहा जा सकता। उन्होने इस कथन के एक ही वष उपरात भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के बनारस अधिवेशन को दिए गए अपने सदेश मे विशेष निर्देश करते हुए सुस्पष्ट रूप स अपना दृढमत इस प्रकार से प्रकट किया

> स्वशासन के बिना भारतीय चालू निकासी और उसके फलस्वरूप प्राप्त होने वाली घोर दरिद्रता दुर्भाग्य और विनाश से कभी छुटकारा नही पा सकते। किसी प्रकार के कैसी भी तसल्ली देने वाले उपाय क्यो न किए जाए प्रशासनतत्र म किसी प्रकार की कैसी भी रद्दो बदल अथवा इधर-उधर की हर फेर क्या न की जाए, इनस न तो कोई लाभ हो सकता है और न ही सवथा कोई लाभ होगा। स्वय सरकार और स्वय प्रजा ही निकासी को बद कर सकती है। भारत के दुर्भाग्य और व्यथाओ की निवृत्ति के स्वशासन ही एकमात्र उपचार हैं।[17]

यहा यह स्मरणीय है कि ये दादा भाई ही थ जिन्होने भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के ऐतिहासिक कलकत्ता अधिवशन म दिए गए अपने भाषण म राष्ट्रीय आदोलन के भावी लक्ष्य का निर्देश करते हुए यह घोषणा की थी कि भारतीय जनता की सभी राजनतिक मागो को जिस एक ही शब्द मे समेटा जा सकता है वह है, स्वशासन अथवा स्वराज्य जैसा स्वराज्य इग्लैड मे है अथवा दूसरे दूसर उपनिवशो म है।[18]

दादा भाई के इस अतिवादी दृष्टिकोण, निकासी भारत के दुर्भाग्य का एक महत्व पूण कारण है के राजनतिक महत्व को भली प्रकार समझने के लिए उसकी राजनतिक महत्ता के तथा भारत की दरिद्रता के कारण मान गए अन्यान्य तत्वो, आधुनिक औद्योगिकता का अभाव अथवा अत्यधिक भूमि लगान अथवा ऊचे कराधान अथवा राजनैतिक अधिकारो की अनुपस्थिति, से तुलना अपेक्षित है। इनकी तुलना से पूव दो बातो का ध्यान रखना अत्यावश्यक है क्योकि उनकी उपेक्षा का अथ उपयुक्त परिप्रेक्ष्य स हाथ धोना होगा। प्रथम, अपने अतिम विश्लेषण मे स्वय दादा भाई ने भी भारत मे उद्योग के अभाव को ही भारत की दरिद्रता का कारण बताया। अतर केवल यह है कि उन्होन इस अभाव के कारण के रूप म निकासी को ही उत्तरदायी बताया। द्वितीय, भले ही इस 'निधनता का औद्योगिक सिद्धात' नाम दिया जाए, तार्किक विश्लेषण से तो हर हालत म ही यही क्रातिकारी राष्ट्रवादी, राजनैतिक अनुमान निष्कष के रूप म उभर कर सामने आता है कि ब्रिटिश भारत की सरकार ब्रिटिश व्यापार और ब्रिटिश उद्योग के हितो की रक्षा मे ही तत्पर है तथा भारतीय उद्योग और व्यापार अपनी पूणता मे तब तक नही आ

मात जब तक कि प्रमुख रूप से भारतीय उद्योग के हिता को ही देशभक्त के उद्देश्य को लेकर चलने वाला अपना ही राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित नही होता। फलत 19वी शताब्दी के परवर्ती काल मे और 20वी शताब्दी के प्रारम्भिक काल मे बहुत सारे उग्रवादी नेताओ यथा बाल गंगाधर तिलक, लाजपत राय और बी० सी० पाल ने भारतीय उद्योग के विकास पर लगे प्रतिबंधो को हटाने के लिए प्रबल संघर्ष किया। इसी प्रकार भूमि लगान सिद्धान्त और ऊचे कराधान के सिद्धान्त से भी समय-समय पर क्रान्तिकारी राजनीतिक मार्ग उठी। इस ग्रथ मे इन सब की चर्चा हम यथास्थान पहले ही कर चुके हैं।

विरागी तथा भारत की दरिद्रता के अन्याय सिद्धान्तो के राजनीतिक परिणामो के बीच मुख्य अंतर इस तथ्य मे निहित था कि किसी सीमा तक और कभी-कभी दरिद्रता के अन्याय सिद्धान्त विदेशी शासन का सहारा कर सकते थे परन्तु विरागी सिद्धान्त के बारे मे यह नहीं कहा जा सकता।

उदाहरण के रूप मे उद्योग के सिद्धान्त को ही लीजिए, इस क्षेत्र मे जहा भारत और ब्रिटेन के औद्योगिक हितो मे संघर्ष के कारण बहुत सारे मतभेद उत्पन्न हुए और उनसे कटुता भी बढी, वहा इस कटुता से उत्पन्न उन राजनीतिक दुर्भावनाओ को दूर करने की दिशा मे कुछ उपाय भी दिखाई देने लगे —प्रथम, औद्योगिक सिद्धान्त के समर्थको के अनुसार भारत मे ब्रिटिश राज्य भारत के औद्योगीकरण के मार्ग मे दुर्लंघ्य बाधा नही था। वर्तमान आर्थिक और राजनैतिक परिस्थितियो मे भी कुछ न कुछ औद्योगिक विकास सभव था। अतएव औद्योगिक संघर्ष को स्वराज्य आदोलन के साथ जोडने की कोई स्वाभाविक अथवा पूर्ण आवश्यकता नही थी। उदाहरण के रूप मे जस्टिस रानाडे द्वारा राज्य सहायता पर बल देने के बावजूद भारतीय उद्योग के विकास के लिए राजनीतिक स्वतंत्रता पूर्ण रूप से आवश्यक नही थी।[19]

द्वितीय कभी कभी इस बात ने सारे मामले को और भी अधिक जटिल बना दिया कि ब्रिटिश भारतीय सरकार प्राय ही उद्योगीकरण के पक्ष मे बोलती रहती थी और कभी कभी तो स्वयं भारतीयो द्वारा प्रदर्शित उत्साह की अपेक्षा कथनी के रूप मे भी औद्योगिक विकास के लिए अधिक उत्साह दिखाती थी।[20] इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने उद्योग के विकास के लिए 1905 मे वाणिज्य और उद्योग संबधी एक पृथक शाही विभाग की स्थापना और उसे सर्वोच्च महत्व देने के रूप मे साधारण और नगण्य होने पर भी कुछ न कुछ पग तो उठाए ही थे।[21] किसी भी रूप मे क्यो न हो यह आशावादी दृष्टिकोण सदैव बना रहा कि कराधान और भडारो तकनीकी शिक्षा और राज्य सहायता आदि से संबधित सरकारी नीति मे भारतीयो की इच्छानुरूप ही परिवर्तन किया जा सकता है। जसाकि 1918 के उपरात भारतीय उद्योग आयोग की सिफारिशो के उपरात एक सीमित परिमाण मे हुआ भी। जब एक बार सरकार अपनी नीति मे परिवर्तन कर लेती है तो उसे सतही तौर पर तो अधिक समय तक उद्योग विरोधी घोषित नही किया जा सकता। उद्योग-सिद्धान्त के समर्थक सदैव अपने तर्कों मे जटिलता को अपनाते रहे और सदैव यह दिखाने का प्रयास करते रहे कि ब्रिटिश भारत की सरकार इस दिशा मे काफी कुछ नहीं कर रही है और यदि भारत की अपनी सरकार होती तो वह इससे बहुत अधिक

ही करती। यह काम आसान नही था और इसके लिए विशेषज्ञों की सहायता लेनी पडी। राजनीति मे तो जब कोई भी काय विशेषज्ञो की सहायता स किया जाता है तो उसे जन साधारण पर प्रभाव की दृष्टि स नष्ट हुआ ही समझना चाहिए। फलत जहा भारत की निधनता के उपाय के रूप मे औद्योगिक विकास पर अधिक बल देने की बात थी, इसे शिक्षित वग को प्रभावित करने का साधन तो बनाया जा सकता था परतु इमे जनता और सरकार के बीच राजनैतिक सबध विच्छेद को गहरा करने का शस्त्र नही बनाया जा सकता था। इसके सवथा विपरीत सरकार दिखाने के लिए यह तक प्रस्तुत कर सकती थी कि उद्योग तो दोनो सरकार और राष्ट्रवादियो के लिए समान रूप से उद्यम का क्षेत्र जुटाता है।"[3] ततीय, उद्योग सिद्धात के प्रवतको को यह स्वीकार करना पडा कि जहा देश के औद्योगिक पिछडेपन का आशिक आरोप ईमानदारी से ही सरकार पर लगाया जा सकता है, वहा आरोप के एक बहुत बडे भाग के पात्र स्वय भारतीय है जिन्होने स्वय पूजी, श्रम उद्यम और तकनीक के उपलब्ध साधनो का उपयोग करने म तत्परता नही दिखाई।[4] इसका निष्कष स्पष्ट था कि भारतीयो को अपने शासको पर आरोप लगाने और उनकी आलोचना करने मे अपनी सारी शक्तियो का अपव्यय नही करना चाहिए, उन्हें अवश्य ही रचनात्मक दष्टिकोण अपनाना चाहिए तथा अपनी प्रतिभा को निजी प्रयास के रूप मे प्रयुक्त करना चाहिए।[5] बहुत सारे सरकारी प्रवक्ताओ न राष्ट्रवादियो के निजी प्रयास के दृष्टिकोण के सरकार के विरुद्ध सचालित राजनैतिक तथा आर्थिक आदोलन को स्पष्टत क्षीण बनाने वाला अनुभव किया और वे देश के औद्योगिक और आर्थिक पिछडेपन का सारा दोष अपने कधो से उतार कर स्वय भारतीयो के ही कधो पर डालना प्रारभ कर दिया। इस प्रकार उदाहरणाथ, डफरिन ने 1888 म यह घोषणा की कि व्यापार पर लगी पाबन्दिया हटाकर और परिवहन के साधनो, सडक, रेल तथा अन्याय यातायात सुविधाओ का बहुगुणा विस्तार करके हम उत्पाद और व्यापारिक गतिविधि को तीव्रता द सकते है और इस समय भी अपनी ओर स यह सब कर रहे हैं परतु उत्पादक केंद्रो का वास्तविक काय तो आखिर निजी उद्यमियो को ही करना चाहिए। इसके उपरात भारतीय राष्टीय काग्रेस के नताओ का आडे हाथो लेते हुए कहा कि सरकार जो काम नही कर पा रही उसे करने म आप लोग पीछे क्या रह रहे है?[6] भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के इतिहास से इस सबध मे एक घटना को उद्धत करना बडा ही रोचक होगा। 1901 मे काग्रेस ने एक समिति का गठन इस उद्देश्य से किया कि वह प्रतिवेदन प्रस्तुत कर कि क्या अगले अधिवेशन से इस प्रकार के प्रस्ताव उठाए जा सकते हैं जिनके अतगत राज्य की आर्थिक मदी का तथा उत्पादन और वितरण के साधनो के ज्ञान के अभाव का भारी दायित्व सरकार पर डाला जा सके। इस समिति ने भारतीयो से अनुरोध किया कि वे इस प्रकार के ज्ञान की प्राप्ति और उसके प्रसार के लिए यत्नशील बनें और इस तथ्य को स्वीकार करें कि पूजी और साख का प्रश्न निसदेह सर्वाधिक महत्वपूर्ण आर्थिक प्रश्न है परतु उसका हल स्वय हमारे अपने ही हाथ म है। समिति न भारतीयो से अनुरोध किया कि वे निरतर और ईमानदारी के साथ पूजी का सगठन करके देश की आर्थिक दशा के सुधार के माग की कठिनाइयो मे से एक को दूर

करने की चेष्टाएं करें।' इन प्रस्तावों म 1890 म पूना म हुए प्रथम औद्योगिक सम्मेलन म दिए गए जस्टिस रानाडे के भाषण की भावना को ही स्थापित किया जाता था। इनके उन्नायक कदाचित लगभग तीन दशाब्दियों तक कांग्रेस को सतत प्रेरणा देने वाले महानुभाव क प्रति श्रद्धा का भाव प्रकट करना चाहते थे परंतु य प्रस्ताव कभी पारित नहीं हुए। इस सीमित अथवा कांग्रेस द्वारा की गई इन प्रस्तावों की अस्वीकृति का कारण ज्ञात नहीं। हा यह अनुमान अवश्य लगाया जा सकता है कि कांग्रेस के नेताओं ने यह अवश्य अनुभव किया होगा कि य प्रस्ताव यदि उठाए गए तो सरकार के विरुद्ध राष्ट्रवादी दबाव क लिए निरंतर और क्रमश बनाए जाने वाले वातावरण के प्रमुख लक्ष्य स हटकर राष्ट्रवादी शक्ति बिखर जाएगी। अत कांग्रेस ने अपना नकारात्मक, अरचनात्मक और आंदोलनात्मक पक्ष को ही अपनाए रखा। उसने देश की दरिद्रता के लिए निम्नलिखित तत्वों पर अभियोग लगाना ही जारी रखा। स्वदेशी उत्पादनों का ह्रास, सपत्ति की निकासी, अत्यधिक कराधान अत्यधिक महगा प्रशासन, तथा भूमि के भारी लगान, ' जिन सबके लिए अकेले सरकार को उत्तरदायी ठहराया जा सकता था।

इस प्रकार ब्रिटिश शासन और उसकी कुछ आर्थिक नीतियों तथा इस विश्वास का कि भारत की आर्थिक दुर्बलता का अर्थात औद्योगिक पिछड़ेपन का प्रमुख कारण प्रमुख रूप स भारतीयों की अपनी ही दुर्बलताएं थीं, तथा 'निजी प्रयत्न स इस पिछडेपन को दूर किया जा सकता है स्वीकार करने का यह परिणाम निकला कि औद्योगिक सिद्धांत न भारतीय अर्थशास्त्रियों के एक आशावादी वर्ग को जन्म दिया और कम स कम प्रारंभ म तथा कुछ समय तक नरमपंथी नीतियों के लिए आर्थिक सद्धांतिक आधार का काम किया। '

इसी प्रकार यहा तक कि सरकार की भूराजस्व नीति का एक अतिवादी आलोचक भी भूमि लगान म कटौती कर देने स अथवा भविष्य मे किसी प्रकार की वृद्धि न होने स अथवा यहा तक कि अपने मंतव्य म सरकार द्वारा कपटपूर्ण ढंग स अतिशयोक्ति दिखाने पर संतोष कर लेता था जैसाकि 1901 म आर० सी० दत्त के मामले म बंगाल न भूमि लगान पर अपने प्रस्ताव द्वारा किया। सरकार भी कराधान और व्ययों के इन समीक्षकों को इधर उधर सीमित परिमाण मे थोड़े बहुत कर भार को घटा कर तथा किसी लोक कल्याण अथवा विकास की गतिविधि अथवा विभाग मे सरकारी खर्चों को बढ़ाकर थोड़ा-बहुत प्रसन्न कर सकती थी। रेलों की आलोचना जो पहले कितनी भी न्यायसंगत क्या न हो, अब रेलों के उपयोगी और लाभप्रद सिद्ध हो जाने से क्रमश धीरे धीरे मंद पड़ती जा रही थी। यहा तक कि राष्ट्रीय राजनैतिक प्रगति की मांगो स उत्पन्न अतिवादिता को भी थोड़े स प्रयत्न स सावधानी के साथ सगणित राजनैतिक रियायतों और सुधारों की खुराकें देकर शांत किया जा सकता था। किसी भी स्थिति मे भारतीय राष्ट्रवादी फिर भी तर्क कर सकते थे और यह सिद्ध कर सकते थे कि इन सभी मामलों म और साथ ही साथ विदेश व्यापार, मुद्रा तथा श्रम आदि के मामले म ब्रिटेन की आर्थिक नीति स्वार्थपूर्ण और भारतीय हितों के विरुद्ध थी। इस विषय म सरकारी तर्कों और बहानों के भ्रम जाल को उखाड़ने तथा वास्तविकता को देखने के लिए एक निश्चित परिमाण मे राजनैतिक तथा आर्थिक सूक्ष्म दृष्टि अपेक्षित थी। यह सूक्ष्म दृष्टि नेताओं को भले ही प्राप्त हो,

न्यायालय, ब्रिटेन की पूजी का भारत मे विनियोजन, विदेशी व्यापार, भूमि लगान और सामान्यत कराधान का पर्यायवाची बताया और लोगो के मन मे उन्होंने धीरे धीरे यह विश्वास उत्पन्न कर दिया कि भारत के आर्थिक पिछड़ेपन और दरिद्रता का कारण प्रमुख रूप से स्वय ब्रिटेन के शासन का भारत मे अस्तित्व और विदेशी राज्य की नीतिया है। वही देश की उन्नति के मार्ग मे प्रधान बाधाए है। भारत परपरा से दरिद्र नहीं है प्रत्युत स्वय ब्रिटिश राज्य द्वारा बनाया गया है। निकास मबधी यूरोपीय चरित्र पर बल रूप से भी वही राजनैतिक उद्देश्य सिद्ध होता था क्योकि इससे एक ओर तो जनता के सामने देश की राजनैतिक और आर्थिक पराधीनता के तथ्य को सामने रखने मे सहायता मिलती थी और दूसरी ओर इससे इस माग को बल मिलता था कि भारत मे ब्रिटिश राज्य अवश्य बना रहे परतु स्वय ब्रिटिश लोगो का यहाँ बना रहना चाहिए। स्पष्ट है कि इस माग की स्वीकृति की कोई सभावना नहीं थी, फलत इससे भारतीयों के विरुद्ध जनता के मन मे रोष की भावना को भड़काने मे सहायता मिलती।

इस प्रकार निकासी सिद्धात ने एक जटिल समस्या को जन्म दिया और उस समस्या का एक ऐसा हल सुझाया कि जिसने भारत मे ब्रिटिश राज्य की जड़ें ही कट जाती थी और एक ऐसे प्रतविरोध को उजागर किया जिससे अनिवार्य राष्ट्रीय दृष्टिकोण का उद्गम होता था भारत सरकार और जनता के मध्य स्थायी रूप से राजनैतिक मुठभेड की स्थिति उत्पन्न होती थी और अतत ब्रिटिश राज्य को उखाड फेकने की क्रातिकारी राजनैतिक माग को जन्म मिलता था। निकासी सिद्धात के समर्थक तो राजनैतिक सुधारो से सतुष्ट होने वाले नही थे क्योकि इन सुधारो से निकासी किसी प्रकार कम होने वाली नहीं थी। अत राजनैतिक सुधारो के किए जाने पर भी निकासी पर आधारित राजनैतिक सघर्ष मे कमी नहीं होने जा रही थी।[31] इसके अतिरिक्त निकासी सिद्धात ने भारतीय समाज के सभी आतरिक झगडो को पीछे धकेल दिया तथा सारे समाज का ध्यान विदेशी राज्य की देन निकासी की ओर ही समग्रत केंद्रित कर दिया। इस प्रकार दादा भाई के आर्थिक दृष्टिकोण के निराशावादी चरित्र ने 1872 मे प्रारभ मे स्वीकार करने के उपरान्त अत मे उस छोडने का विरोध रानाडे के आशावादी दृष्टिकोण की तुलना मे, उन्हे विनाश का भविष्य वक्ता बना दिया और 1904 मे उस समय निश्चित रूप से नकारात्मक व निराशाजनक लगने वाले स्वराज्य के लिए आह्वान देने के योग्य बना दिया।

निकासी सिद्धात के क्रातिकारी राजनैतिक अभिप्रायो से इसके समर्थक ही नहीं प्रत्युत आलोचक भी कही अधिक बढ़-चढ़ कर परिचित थे। 1886 मे भारत राज्य सचिव रडोल्फ चर्चिल ने निर्देश किया

> देश पर थोपे गए विदेशी राज्य के फलस्वरूप समझे जाने वाले और देश के बाहर हुए खर्चों की अतिरिक्त राशि की पूर्ति के लिए समग्रत भार रूप मे उठाए जाने वाले नए कराधान के भार की अधीरता एक गभीर राजनैतिक खतरे का रूप धारण कर लेगी। हमे आशका तो यह है कि भारत सरकार से सबध अथवा उसकी जानकारी न रखने वाले महानुभाव इस खतरे की गुरुता को समझ ही नहीं पाएगे परतु जिनको भारत सरकार की जानकारी है और जिन पर उसके सचालन का दायित्व

है, उन्होंने बहुत पहले से ही इसे एक अत्यंत गंभीर प्रकृति का खतरा बताया है।[35] इसी प्रकार जे० डी० रीस ने अपनी पुस्तक 'दि रियल इंडिया' में दादा भाई को आड़े हाथों लिया कि उन्होंने इस तथ्य को समझा ही नहीं कि गृह प्रभारों के बिना भारत में ब्रिटिश सरकार रह ही नहीं सकती थी।[36] बहुत सारे भारतीयों ने निकासी सिद्धांत के प्रचंड प्रचार का इस आधार पर विरोध किया कि यह देर अबेर राजनैतिक स्वतंत्रता की अपरिपक्व माँग को जन्म देगा।[37] इसी कारण कदाचित रानाडे ने निकासी पर आवश्यकता से अत्यधिक बल देने की प्रवृत्ति का विरोध किया।

संक्षेपतः निकासी सिद्धांत अपने राजनैतिक आशयों में क्रांतिकारी तत्त्व था, इसने राजनैतिक अधिकार के प्रश्न को राजनीति का केंद्र बिंदु बना दिया। इसकी स्वीकृति ने न केवल ब्रिटेन और भारत के स्वाभाविक राजनैतिक संघर्ष को सतह पर ला दिया प्रत्युत ब्रिटेन के भारत पर राजनैतिक प्रभुत्व को भी अमान्य बना दिया। इससे यह भी स्पष्ट हो गया कि क्यों अन्यान्य कितने ही क्षेत्रों में राष्ट्रवादियों द्वारा की गई ब्रिटिश की अर्थनीति की आलोचना और उसके फलस्वरूप उन राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा सुझाए गए उपचार तो ब्रिटिश साम्राज्य के प्रबल श्रद्धालुओं को भी स्वीकार थे, परंतु निकासी की बात प्रबलतम क्रांतिकारियों तक को भी मान्य नहीं थी।

निकासी सिद्धांत ने आर्थिक प्रश्न को राजनैतिक स्तर पर उठाकर सार्वजनिक जीवन को राजनैतिक प्रशिक्षण देने में भी सहयोग दिया। जहाँ अन्यान्य आर्थिक प्रश्न कदाचित आर्थिक उपचारों द्वारा साध्य थे अतः विशेष परिस्थितियों में आर्थिक विवाद की परिधि में ही आते थे, वहाँ निकासी का हल केवल राजनैतिक था। अतः निकासी सिद्धांत ने राजनैतिक निष्क्रियता को सक्रियता में बदलने में भी योगदान दिया।

निकासी सिद्धांत में सर्वसाधारण लोकप्रिय बनने की प्रबल राजनैतिक क्षमता थी। यह एक ऐसी सरल और सीधी सादी धारणा थी कि जिसे एक किसान भी आसानी से समझ पाता था। राष्ट्रवादी वक्ता निकासी पर भाषण करते समय अपने अत्यंत अशिक्षित श्रोताओं से भी शीघ्र समझ जाने की प्रतिक्रिया पा लेते थे। एक देश से दूसरे देश का धन का स्थानांतरण, आर्थिक शोषण के सिद्धांतों का एक ऐसा विषय था जिसे सर्वथा आसानी से समझा जा सकता था क्योंकि यह उनके दैनिक अनुभव से संबंधित था। निकासी पर प्रहार को सुनते समय किसान इस प्रकार अनुभव करता था जमकि धन उसकी जेब से खिसक रहा है। उन्हें इस जैसा और कोई विचार इतना क्षुब्ध नहीं कर सकता था कि उन पर इसलिए कर लगाए जा रहे हैं कि दूर देश में रहने वाले गुलछर्रे उड़ा सकें। अतः निकासी में किसानों के देश को संघटित करने के नारे की सामर्थ्य थी। निकासी नहीं एक ऐसा नारा था, जिसकी सभी सफल क्रांतियों को आवश्यकता रही है और वे इसे अपनाती रही हैं। इसे सिद्ध करने के लिए किसी प्रकार के ऊँचे और जटिल तर्कों की आवश्यकता नहीं इसके बल्कि स्वतः स्पष्टता तो इसका आंतरिक गुण है। भारत के विषय में यह स्वतः सिद्ध थी और इस विश्वास ने कि भारत सोने की चिड़िया थी और धीरे धीरे उसकी सारी संपदा लूट ली गई है और उसे आज की दरिद्रता और दुर्भाग्य की स्थिति में ला फेंका गया है, जब भारतीय राष्ट्रीयतावाद चरम सीमा पर ही टिका रहा

था, उस समय उन वर्षों में राष्ट्रवादियों की निराशा ने अत्यंत तर्कप्रिय और प्रबल शक्तिशाली रूप ग्रहण कर लिया। अतः यह आकस्मिक नहीं था कि निकासीवाद पर सरकारी और साथ ही साथ गैर सरकारी ब्रिटिश लेखकों ने पूरी शक्ति और निरंतरता के साथ तीखे प्रहार किए। सम्भवतः ऐसा शायद किसी भी अन्य सिद्धान्त अथवा माँग का नहीं रहा। इस सिद्धांत के प्रमुख जन्मदाता और प्रचारक दादा भाई नौरोजी की, जिनकी ब्रिटिश राज्य के प्रति वफादारी गहन गहरी थी और जिनका ब्रिटिश जनता में सबसे गहरा विश्वास था, स्वच्छंद और अतिवादी रूप में निंदा की गई।[31] यहाँ तक कि उन्हें धूर्त और छिपा विद्रोही कहा गया।[32] परंतु दूसरी ओर गांधीयुग के राष्ट्रीयता की दृष्टि से उग्र विचार वाले नवयुवकों ने 19वीं शताब्दी के रानाडे, फिरोजशाह मेहता और गोखले जैसे अत्यंत नरम और समझौतावादी नेताओं को थोड़े समय के लिए ही सही, घृणा की दृष्टि से देखा और उन्हें 'अर्जीनवीस' कहकर उनका तिरस्कार किया। गांधी युग के राष्ट्रीय प्रेमी नवयुवकों की दृष्टि में उस समय भी दादा भाई अत्यंत सम्मानित थे और भारतीय राष्ट्रीयतावाद के पिता के समान आदरणीय थे।

संदर्भ

1 नौरोजी एसज पृ० 26 50

2 वही पृ० 29 31

3 वही पृ० 32 3 दादाभाई ने इस भेद को भी उजागर किया कि 20 वर्ष से भी काफी पहले भारत पर ब्रिटिश शासन के प्रभावों पर विचार करने के लिए कुछ बाड से हिंदू विद्यार्थी और विचारशील लोग गुप्त रूप से बैठकें किया करते थे उनकी शिकायतों के प्रमुख अंग थे यह प्रभाव विभिन्न रूपों में भारत से इंग्लैंड को संपत्ति का निष्कासन भारत के सपूतों का दमन हो देश के प्रशासन में योगदान देने तथा विचार अभिव्यक्त करने की सुविधा का अभाव आदि (वही) वास्तव से इससे बहुत पहले ही 1830 के आसपास भारत द्वारा इंग्लैंड को दिए जाने वाले उपहार-शुल्क के विरुद्ध राजाराम मोहन राय ने शिकायत की थी (बी० बी० मजूमदार पूर्वोद्धृत पृ० 71 2 पर)

4 नौरोजी एसज पृ० 39 और देखिए पृ० 40-1 भारत के संसाधनों के विकास के इस विचार को दादाभाई नौरोजी के परवर्ती विचार विदेशी पूंजा के भारत में निवेश का अर्थ है भारत की संपदा का अपहरण से भिन्न रूप में देखना उचित है

5 वही पृ० 97 111

6 वही पृ० 112 36

7 वही पृ० 123

8 वही

9 वही पृ० 98 9 108 123

10 वही पृ० 133-4

11 वही पृ० 135-6

12 वही पृ० 102

13 वही, पृ० 106

14 नौरोजी स्पीचेज, परिशिष्ट पृ० 164

15 वही परिशिष्ट पृ० 165 इसके साथ ही उन्होंने इस प्रवाह के हानिकारक परिणामों की चर्चा की "जहां तक इस समय मैं जांच पड़ताल कर सका हूं उससे मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि ईस्ट इंडिया कंपनी जिस किसी प्रदेश पर अपना अधिकार करती थी नरिस्ता भी उनके पद चिह्नों पर चलती हुई उस प्रदेश पर अपना अधिकार कर लेता था जब से सिंचाई के लिए रेल पथों के लिए तथा अन्य लोक कार्यों के लिए ऋण अमरीका के साथ युद्धों से लाभों की दुर्लभ प्राप्ति लौट कर आई है तब से ऐसा लगता है कि भारत ने जो रक्त गंवाया उसकी कुछ ही बूंदें लौटी हैं (परिशिष्ट पृ० 167) तथा देखिए परिशिष्ट पृ० 172 181

16 नौरोजी पावर्टी पृ० 125

17 1901 में उन्होंने इस विषय पर अपेक्षाकृत अधिक सुप्रसिद्ध लेखों और भाषणों को 'पावर्टी ऐंड अनब्रिटिश रूल इन इंडिया' शीर्षक एक ही पुस्तक में संग्रहीत किया, जिसका शीर्षक स्वयं ही उनके राजनीतिक तथा आर्थिक दृष्टिकोण का संक्षिप्त रूप था उनके अन्य बहुत सारे लेखों तथा भाषणों आदि को, जिनमें से उन्होंने प्रायः सभी में निकासी पर प्रहार किए हैं 1887 में संग्रहीत किया गया है उनके भाषणों, लेखों, निबंधों तथा प्रवचनों के संस्करण का सी० एल० पारिख तथा नटसन ने नौरोजी स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज शीर्षक से संपादन किया है अगस्त 1904 में ऐम्स्टरडम में हुई अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी कांग्रेस के समक्ष दिया गया उनका एक रोचक भाषण 'इंडिया' के 2 सितंबर 1904 के अंक में उपलब्ध है

18 नौरोजी पावर्टी, पृ० 201

19 नौरोजी स्पीचेज पृ० 329

20 प्रधान और भागवत, पूर्वोद्धृत पृ० 8 दुर्भाग्यवश हम इस भाषण की प्रति अथवा प्रतिवेदन को ढूंढने में असफल रहे हैं हमारे विचार में कदाचित कोई प्रति उपलब्ध नहीं है

21 रानाडे एसेज पृ० 23

22 एम० एम० मार्च 1873 खंड II पृ० 89 90 और देखिए पृ० 92 3

23 दत्त स्पीचेज II पृ० 27 47 8 61 84

24 दत्त ई० एच० I पृ० XIII और देखिए पृ० XII

25 वही पृ० 420

26 दत्त ई० एच० II पृ० XIV और देखिए पृ० 213 344 348 529-9

27 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 636-41 683 793-4 राय पावर्टी पृ० 6-8 242, 278 315 20 328 29 और इंडियन फेमिन पृ० 37 मालवीय स्पीचेज पृ० 232 3 248 51 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1846 पृ० 62 सी० पी० ए० पृ० 607-07 रिप० आइ० एन० सी० 1898 पृ० 104 गोखले स्पीचेज, पृ० 15 87 8 908 10 जी० एस० अय्यर 'हिन्दू' 'समाचार पत्र' III प्रश्न 18963 और ई० ए० पृ० 59 125 128 9 336-8, 357 8 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 253 5 269-70 637 703 11, बी० एम० मालबारी इंडियन प्रॉब्लम (बंबई 1894) पृ० 23 'स्टडीज इन डि बगाल रिलिफ' (आम्बुर 1958) में अनुनय गंगा द्वारा संपादित पृ० 209 पर गंगानारायण बोस, आर० एन० मुधोलकर इंडियन पॉलिटिक्स पृ० 41, ए० नन्दी इंडियन पॉलिटिक्स पृ० 124 7 28 सितंबर 1897 सन का इंडियन

गोसाइटी द्वारा सम्मेलन में पारित प्रस्ताव इंडिया 14 जनवरी 1898 आर० एम० सयानी, सी० पी० ए० प० 351-4 366 सी० वाई० चिन्तामणि, एस० आर० जनवरी 1902 प० 28-9, एम० के० पटेल रिप० आई० एन० सा० 1902 पृ० 762 और रिप० आई एन० सा० 1904, प० 114 ए० एम० घोष सी० पी० ए० प० 743 7८0-3

28 और दक्षिण ए० बा० पी० 6 फरवरी 18९0 29 जनवरी और 18 जून 1885 22 मई 1892 24 दिस० 1896 13 फरवरी और 7 अप्रैल 1897 22 फरवरी और 1 8 और 9 जून 1900, 13 नव० 1901

29 उदाहरण के लिए दक्षिण साधारणी 31 अक्तू० (आर० एन० पी० बग० 6 नव० 18९0) मराठा 6 फरवरी और 19 जून 1881 तथा 13 अप्रैल 1884 इंडियन स्पेक्टेटर 25 फरवरी (आर० एन०पी० बंब 3 मार्च 1883) इंडियन स्पेक्टेटर 18 मई हिन्दू टाम्स 20 मई (वही 24 मई 1884) समय 30 जून (आर० एन० पी० बग० 5 जुलाई 1884) प्रतिवार 22 अगस्त (वही 6 सित० 1884) भारतवासी पत्र, 6 सितंबर (वही 13 सित० 1884), पताका 17 जुलाई (वही 25 जुलाई 1885) समय 28 जून (वही 3 जुलाई 1886) बंगवासी 7 अगस्त प्रजाबंधु 6 अगस्त (वही, 14 अगस्त 18९6) इंडियन स्पेक्टेटर 5 जुलाई 1885 भारतीय समाचारपत्रों के मत का सामान्य सार देखिए सी० पी० बाई० अक्तू० 1887 इंदु प्रकाश 5 सित० और ट्रिब्यून 14 सित० (सी० ओ० आई० अक्तू० 1887) हिंदू 25 जून 1894 7 जुलाई 1898 बंगाली 13 मार्च 1897 हिंदुस्तान 20 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 27 जुलाई 1898) स्वदेशमित्रन 15 मई (आर० एन० पी० एम० 31 मई 1900) प्रभात दिस० 1900 और राजहंस, 2 जनवरी (आर० एन० पी० बंब 12 जन० 1901), न्यू इंडिया 16 सित० 1901 कासिम उल अखबार 11 मई (वही, 16 मई 1903) हिंदू निशान 27 मई (वही 30 मई 1903), वर्तमान चितामणि 14 नव० (वही 14 नव० 1903), केसरी 21 जुलाई (आर० एन० पी० बंब 25 जुलाई 1903) केसरी 9 मई (वही 13 मई 1905) 1880 से पहले निकासी का विरोध करने वाले कुछ समाचारपत्र ये इंदु प्रकाश 13 दिस० (आर० एन० पी० बंब 18 दिसंबर 1875) जाम जमशेद 23 अगस्त (वही 26 अगस्त 1876) शुभसूचक 15 जून (वही 23 जून 1877) नेटिव ओपीनियन 30 दिस० 1877 (वही 5 जन० 1878)

30 प्रस्ताव XII

31 आई० एन० सी० (1897, 1901, 1902 और 1904 के प्रस्ताव स० IX, VIII (ए), III और III

32 नौरोजी स्पीचेज प 30-1 पावर्टी प० 211 638 तथा अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी कांग्रेस म दिया गया भाषण इंडिया 2 सित० 1904 प० 116 ए० बा० पी० 28 जुलाई 1870 जामे जमशेद 23 अगस्त (आर० एन पी० बंब 23 अगस्त 1876) शुभ सूचक 15 जून (वही 23 जून 1877) समय 28 जून (आर० एन० पी० बग० 3 जुलाई 1886) बंगवासी 7 अगस्त (वही 14 अगस्त 1886) स्वदेशमित्रन तिथिरहित (आर० एन० पी० एम० सित० 1887) आंध्र प्रकाशिका 5 नव० (वही नव 1887) हिंदू 29 जन० 1891 राय पावर्टी प० 251 3 विशंभर नाथ, एल०सी०पी 1898 खंड XXXVII प० 519 बंगाली 25 मई 1901 एस० एन० बनर्जी सी पी० ए० प० 709 दत्त ई० एच प० 85

33 प्रमाण के रूप म देखिए इंडियन स्पेक्टेटर ने अपने 5 जुलाई 1885 के अंक म लिखा 'आप

कह सकते हैं कि जितना आपने हम पर कर लगा रखा है उससे दुगना कर मुगलो ने हम पर लगाया था उनके कराधान मे क्या अंतर था देखिए वे भारत के ही निवासी थे अथवा उन्होंने प्रत्येक रूप मे भारत को अपनी जन्मभूमि के रूप मे अपना लिया था कराधान अत्याचार तथा लूटमार द्वारा वे जितना भी राजस्व वसूल करते थे वह सारा इसी देश मे खर्च होता था एक कौडी भी इस देश से बाहर नही जाती थी भले ही वह पैसा सिंचाई नहरो के लंबी दूरीवाली सडको के और पुलो के अथवा महलो और मसजिदो के निर्माण पर और यहा तक कि आतिशबाजी और नाचने वाली सुंदरियो पर खर्च होता था यह सारा पैसा उन लोगो के पास वापस पहुच जाता था जिनसे लिया गया था और देखिए ए० बी० पी० 18 जून 1885 राय पावर्टी प० 251 3 नौरोजी, स्पीचेज परिशिष्ट प० 41 52, ए० नन्दी इंडियन पालिटिक्स प० 126, दत्त ई० एच० I प० XII 100 वाचा सी० पी० ए० प० 605 एल० एम० घोष सी० पी० ए० प० 759

34 नौरोजी एसेज प० 30 पावर्टी प० 211 स्पीचेज प० 238 9 अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी कांग्रेस म दिया गया भाषण इंडिया 2 सित० 1904 प० 116 समय 30 जून (आर० एन० पी० बंग० 5 जुलाई 1884), सिंध टाइम्स 20 मई (आर० एन० पी० बंब 24 मई 1884) केसरी 21 जुलाई (वही 25 जुलाई 1903) केसरी 9 मई (वही 13 मई 1905)

35 इस अवधि म भारतीय अर्थव्यवस्था की एक महत्वपूर्ण चरित्रगत विशेषता थी निर्यातो म बचतें जिसकी भारतीय नेताओ ने आलोचना की देखिए इसी पुस्तक म विदेश व्यापार से संबंधित पाचवा अध्याय वास्तव मे आवश्यक और समुचित परिणाम मे आयातो से निर्यातो की अधिकता बनाए रखने के उद्देश्य स निर्यातो को सरकारी तौर पर ही प्रोत्साहित किया गया था ब्रिटिश शासनकाल मे व्यापार का संतुलन बनाए रखने के लिए निर्यातो को बढ़ाने का सरकारी प्रयास भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख रूप से संचालक साथ ही प्रमुख विरोधी तत्व था एक ओर तो सरकारी नीति ब्रिटिश उद्योग के पोषण के लिए निर्यातो म वृद्धि करने की थी और दूसरी ओर आयातो के अपेक्षाकृत प्रचुरता ने आयातो पर निर्यातो की अधिकता को संकुचित रूप दे दिया और इसका भुगतान संतुलन अव्यवस्थित हो गया और सरकार इंग्लैंड स ऋण लेने के उपाय को अपनाने के लिए विवश हो गई इसका अनिवार्य परिणाम यह हुआ कि इन ऋणों के भुगतान के लिए फिर और अधिक परिमाण म निर्यात करने की स्थिति उत्पन्न हो गई इस प्रकार भारत से होने वाले निर्यातो का उपयोग या तो ऋणो के भुगतान के लिए होने लगा अथवा आयातो के भुगतान के लिए इससे भारत स लाभरहित उद्योगो और निर्यातको के हितो का ब्रिटेन के लाभ संपन्न उद्योगो और निर्यात के हितो स संघर्ष का उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था यह संघर्ष भारत से धन की निकासी पर ब्रिटिश प्रेस के और ब्रिटिश राजनीतिज्ञो के एक वर्ग द्वारा किए गए प्रारंभिक प्रहार को स्पष्ट करता है ब्रिटिश शासन की सारी अवधि म भारत से संपत्ति की निकासी के राजनीतिक प्रभावो और परिणामों के संबंध म विभिन्न स्तर पर मतभेद बने ही रहे

36 नौरोजी एसेज प० 101 113 4 पावर्टी प० 33 141 198 568 9 574 स्पीचेज प० 317 9 323 381 2 665 7 परिशिष्ट प० 42 3 ए० बी० पी० 28 जुलाई 1870 और 6 फरवरी 1880 भोलानाथ चन्द्र एम० एम मार्च 1873 खंड II प० 89-90 मराठा 25 मई 1884 सिंध टाइम्स 20 मई इंडियन स्पेक्टेटर 18 मई (आर० एन० पी० बंब 24 मई 1884) जोशी पूर्वोद्धत पृ० 636-40 683 695 राय पावर्टी पृ० 7 8

मुधोलकर इंडियन पालिटिक्स पृ० 40-1 ए० मनी इंडियन पालिटिक्स, प० 112 3 125 हिन्दू 7 जलाई 1898 द इंडिया 19 अगस्त और 16 सित० 1901, इंडियन फारम 24 जनाई 1903 रस इंग्लैंड ऐंड इंडिया पृ० 143 ई० एच० II प० 343-4 528 9 स्पीचेज II प० 47 8 जा० एम० अय्यर ई० ए० पृ० 336 338 353 357-8 मालन, स्पीचज प० 87 8 एस० एम० घोष सी० पी० ए० प० 750 753 और देखिए पीछे अध्याय 4 माह स निगवरी द्वारा 26 अप्रल 1875 के एक भाषण म की गई इस टिप्पणी का भारतीय नेताओ न अक्सर हवाला दिया है कि भारत क सबध म इस चीज का अतिरजित रूप में वणन किया जा रहा है कि यहा से बिना किसी प्रकार के प्रत्यक्ष प्रतिदान क इतने अधिक राजस्व का निर्यात किया जा रहा है भारत म उन भागो म तो नश्तर मुधोलकर यहा स रक्त निकालना ही चाहिए जहा उसका अत्यधिक सग्रह हो गया है अथवा वह समुचित मात्रा म उपलब्ध है पहने म हो रक्त क अभाव स दुखिया निढाल और दुबला हो तो ऐसा हो नही जाना (नौरोजी पावर्टी प० IX) और देखिए नौरोजी स्पीचज प० 130 233 288 परिशिष्ट प० 13 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प० 708-09 दत्त स्पीचज II पृ० 84 और देखिए आन स्ट्रैची फाइनान्शल स्टटमट (वित्त विवरण) 1878 9 कडिका 52 और रिपार्ट आफ इंडियन फमान कमीशन 1880 पृ० 94

37 नौरोजी एसज प० 113-4 पावर्टी प० 33 131, 136 9 198 स्पीचज प० 317 8 381 2, 667 और देखिए आर० ए० मुधोलकर इंडियन पालिटिक्स पृ० 41 और जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 336 7

38 उदाहरणार्थ देखिए, नौरोजी पावर्टी, पृ० 32-33 उन्होने कहा कि किसी देश क विदेश व्यापार की सामान्य स्थिति प्राय यह होती है कि उसक निर्यात क अन्त स्व निर्यात के मूल्य और उसके लाभ क समकक्ष आयात होता है

39 वहा प० 131 138 196

40 वही पृ० 33 139 इसके अतिरिक्त जब किसकी कमीशन ने उन पर यह सिद्ध करने क लिए दबाव डाला कि बताइए किस प्रकार आप यह कह सकते हैं कि निर्यातका क लाभ भारतीय निर्यातो के वतमान मूल्यो म सम्मिलित नही किए गए हैं तो वे इसका सतोषप्रद और सगवत उत्तर नहा दे पाए (स्पीचज परिशिष्ट पृ० 53-4)

41 निम्न उद्धरण गणनाओ म आकड पौड और रुपये दोना म दिए गए हैं, इसका कारण है यह कि दोनो के अनुपात म प्राय अतर आता रहता था

42 नौरोजी एसेज प० 50

43 वही प० 115

44 नौरोजी पावर्टी प० 34

45 वही प० 566

46 नौरोजी स्पीचेज प० 318 21

47 वही प० 667

48 जोशी पूर्वोद्धत प० 639-40

49 सी० पी० ए० प० 604 606

50 वही प० 709

51 दत्त ई० एच० II प० XIV तथा देखिए पृ० 528-9

एन० पी० बव 3 मार्च 1883), जोशी, पूर्वोद्धृत, पृ० 618, 637 8 राय, पार्वर्टी पृ० 6 318-21 एस० एन० बनर्जी, सी० पी० ए०, प० 254, आर० एम० सयानी सी० पी० ए०, प० 366 हिंदुस्तान 20 जुलाई (आर० एन० पी० एन० 27 जुलाई 1898), स्वदेशमित्रन 15 मई (आर० एन० पी० एम० 31 मई 1900), वाचा, सी०पी०ए०, पृ० 605, दत्त स्पीचेज II प० 84 ई० एच० I प० XIII ई० एच० II प० XIV XV 127 215 613 केसरी 21 जुलाई (आर०एन०पी० बव 25 जुलाई 1903) एस० एम० घाप सी० पी० ए०, पृ० 752 3

66 1902-03 म गृह प्रभारो की राशि 17 700 000 पौंड थी और इसका वितरण निम्नलिखित रूप से किया गया गया था रेल पथ राजस्व खाता 6 500 000 पौंड ऋणो का सूद और उनका सचालन व्यवस्था 2 800 000 पौंड भडार 1, 800 000 पौंड सेना के प्रभावी खर्चे 1 300 000 पौंड नगर प्रशासन 400 000 पौंड पनडुब्बी 200 000 पौंड, नगर तथा सैन्य सेवा के कर्मचारियों की पेंशनो और अवकाश भत्ता पर होने वाले अप्रभावी खर्चे 4 700 000 पौंड इंपीरियल गजटियर आफ इंडिया (1908) खंड IV पृ० 194

67 नौरोजी स्पीचेज पृ० 319 20 397 परिशिष्ट प० 3 राय पार्वर्टी प० 315-6, दत्त इंग्लैंड ऐंड इंडिया प० 143 सी० पी० ए०, प० 490, स्पीचेज II प० 47 ई० एच० I प० XIII ई० एच० II प० XV XVI 215 20, 373 5 ए० नदी इंडियन पालिटिक्स प० 113 एम० के० पटेल, रिप० आई० एन० सी० 1902 पृ० 76, जी० एस० अय्यर ई० ए० 353- रेलवे के लिए देखिए पीछे अध्याय स० 5 भडारो के लिए देखिए नौरोजी, पार्वर्टी, प० 35 37 ए० बी० पी०, 14 अप्रैल 1881 और 17 अप्रैल 1884 राय पार्वर्टी पृ० 317 भारत सचिवालय के रखरखाव पर होने वाले व्यय के लिए देखिए पीछे अध्याय 12

68 देखिए इसी पुस्तक के अध्याय 3 का पाद टिप्पणी म उद्धृत भारतीय नेता और ए० बी० पी० 6 फरवरी 1880 पताका 17 जुलाई (आर० एन० पी० बग, 25 जुलाई 1885) जी० एस० अय्यर विलबी कमीशन खंड III प्रश्न 18638 हिंदुस्तान 20 जुलाई (आर० एन० पी एन० 27 जुलाई 1898) स्वदेशमित्रन 15 मई (आर० एन० पी० एम० 31 मई 1900) हिंद निशान 27 मई (वही 30 मई 1903) केसरी 21 जुलाई (आर० एन० पी० बव 25 जुलाई 1903)

69 सयानी पूर्वोद्धृत प० 413-4 पर

70 नौरोजी पार्वर्टी पृ० 216 और देखिए नौरोजी एसेज प० 114 134 पार्वर्टी पृ० 141 199 203 217 224 5 655 6 स्पीचेज प० 232 250 294 315 384-6 389 616 परिशिष्ट पृ० 3 23

71 ए० बी० पी० 28 जुलाई 1870 29 जन० और 18 जून 1885 22 मई 1892 27 मार्च और 24 दिस० 1896 13 फरवरी और 7 अप्रैल 1897 22 फर० 1 4 8 9 जून 3 अगस्त और 1 अक्तू 1900 13 नव० 1901

72 भोलानाथ चन्द्र एम० एम० खंड II (1873) पृ० 90 93 जोशी पूर्वोद्धृत प० 640 683 794 मालवीय स्पीचेज प० 232 3 248 51 514 5 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1886 प 62 स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 32 और सी० पी ए० पृ० 366 प० 604-07 राय पार्वर्टी प० 6 7 241 2 278 315 और इंडियन फेमीन पृ० 37 एस एन० बनर्जी सी० पी ए० पृ० 254 269 637, 708 आर० एम० सयानी सी० पी ए० प० 366 आर० एन० मधोलकर इंडियन पालिटिक्स प० 46-7 ए० नदी इंडियन पालिटिक्स पृ० 124-6 28 दिसबर

एस० अय्यर, ई० ए०, प० 243, हितवादी 3 अक्तू० (आर० एन० पी० बंग० 7 नवंबर 1903) और देखिए वाचा रिप० आई० एन० सी० 1886 पृ० 61

102 नौरोजी, स्पीचज पृ० 152 3, 196 319 382, परिशिष्ट पृ० 3 5, 7 8 उसने आगे टिप्पणी की कि यदि हमें अपनी पूजी के संग्रह की पूर्ण स्वतंत्रता हो तो हम देश में आने वाली विदेशी पूजी का ईमानदारी से बराबर मुकाबला कर सकते हैं और उस समय विदेशी पूजी से हानि की अपेक्षा कदाचित लाभ ही अधिक होगा इस समय हम विदेशी पूजी की हानि से ही वंचित होना पड़ता है क्योंकि हम असहाय हैं और पतित अवस्था में हैं (वहां, परिशिष्ट प० 7) तथा देखिए गोखले के दादाभाई के प्रश्नों के दिए गए उत्तर विलबी कमीशन खंड III प्रश्न 18169 71 18183-4

103 वही पृ० 250 1 परिशिष्ट पृ० 6-7

104 वही पृ० 153 663

105 दत्त ई० एच० II, पृ० XIV तथा पृ० 372 3

106 वही प० 348 9 534-6

107 दत्त स्पीचेज II, प० 27 8

108 वाचा रिप० आई० एन० सी०, 1886 पृ० 61

109 देखिए पीछे अध्याय 4 जोशी पूर्वोद्धृत प० 641 ए० बी० पी० 17 जुलाई 1892 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1898 पृ० 105, जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 357 8

109-ए एडम स्मिथ दि वेल्थ आफ नेशंस' (माडर्न लाइब्रेरी 'यूयार्क द्वारा प्रकाशित कैनन संस्करण तिथिरहित) खंड 5 अध्याय 1 भाग III पृ० 710

109-बी ब्रिटिश इनकम्स इन इंडिया' 'यूयार्क डेली ट्रिब्यून 21 सितंबर 1857 मार्क्स ऐंड एंजल्स आन कालोनियलिज्म (मास्को तिथि रहित) प० 143

109-सी एन० एफ डेनियलसन के नाम मार्क्स का पत्र 19 फरवरी 1881 वही प० 304

109 डी इंपीरियल गजटियर आफ इंडिया (1908) प० 201 उदाहरणार्थ अवकाश यात्रा भत्ता और सेवानिवृत्ति भत्तों के रूप में इंग्लैंड में ही भुगतान की गई राशि भारत के 1902 03 के शुद्ध वार्षिक राजस्व के 12 प्रतिशत के लगभग थी (उसमें से ही आंकड़े सगणित किए गए हैं प० 194 201) 1895 में पी सी० राय ने दावा किया कि यह अनुपात 16 प्रतिशत है (पावर्टी, प० 318) बहुत सारे भारतीय नेताओं ने भी 1892 के संसदीय हिसाब खाते के आधार पर सगणना करने की चेष्टा की सैनिकों को छोड़कर यूरोपीय कर्मचारियों द्वारा वेतनों और पेंशनों के रूप में भारत में और इंग्लैंड में प्राप्त किए जाने वाले धन की राशि सगणना करने पर सचमुच चौंकाने वाली थी यह राशि लगभग 15 करोड़ रुपये या अथवा दूसरे शब्दों में भारत सरकार के कुल राजस्व का लगभग 30 प्रतिशत थी नौरोजी स्पीचज प० 134 परिशिष्ट प० 6 89 90, मालवीय स्पीचेज प० 232 3 248 515-6 राय पावर्टी प० 325 6 ए० नदी इंडियन पालिटिक्स प 124 वाचा सी० पी ए० प० 607 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० प 711 दत्त इ० एच० I पृ० XIII, 427 पादटिप्पणी और देखिए गोखले, स्पीचेज प० 1187 8

110 मसानी पूर्वोद्धृत, पृ० 316 पर दादाभाई नौरोजी और देखिए नौरोजी पावर्टी पृ० 142 200-01 203 574-6 स्पीचेज पृ० 115 6 120 361 378 527 529-30 परिशिष्ट, प० 6 26 लन्दन इंडियन सोसाइटी द्वारा 14 जून 1898 को पारित प्रस्ताव प० 25 ए० बी० पी० 4 9 जून 1900 28 मार्च 1901

124 देखिए पीछे अध्याय 2 जी० एस० अय्यर, ई० एच०, पृ० 85 एम० एन० बनर्जी, सी० पी० ए० पृ० 709

125 देखिए पीछे अध्याय 3

126 देखिए पीछे अध्याय 12

127 केलाक पूर्वोद्धृत प० 127 तथा देखिए ज० सी० गायाजी 'रानाडज वक एज ऐन इकोनामिस्ट' इडियन जरनल आफ इकोनामिक्स जन० 1942 खड XXII स० 3 प० 308

128 रानाडे एसज पृ० 186 7

129 देखें ऊपर

130 ज० पी० एस० एस० जुलाई 1881 (खड IV स० I) पृ० 16

131 आई० एन० सी० 1896 और 1897 के प्रस्ताव XII और XI क्रमश

132 जा० वी० जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 640 683 793-4 गोखले स्पीचेज, पृ० 15 87 8 908 10 और विनवी कमीशन खड III प्रश्न 18169 84 1905 तक गोखले के विचार बड ही सकोच पूवक प्रस्तुत किए गए थे (स्पीचेज पृ० 15 87 8 908 10) परतु 1905 की भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अध्यक्षीय भाषण म उन्होने दृढ़तापूवक घोषणा की कि अनेक वर्षों म देश से सपत्ति की भारी और विनाशकारी निकासी शुद्ध आयातो पर निर्यातो की अधिकता के (कोश सहित) रूप म चल रही है पिछले चालीस वर्षों म हुई इस निकासी की राशि 1 अरब स्टर्लिंग पौंड स कम नहा होगी (सी० पी० ए० प० 844)

133 निकासीवाद के प्रारभिक खडनो म एक था जान स्ट्रची का प्रयास जो उन्होंने 1878 क वित्तीय विवरण म तथा 1880 के रिपोर्ट आफ दि इडियन फमीन कमीशन भाग VIII कडिका-4 म प्रस्तुत किया हा विस्तत खण्डन सवप्रथम 1911 म ही देखने को मिला जो थियोडोर मारिसन की पुस्तक दि इकोनामिक ट्राजीशन इन इन्डिया से (लदन 1911) (1916 का पुन मद्रण) अध्याय 7 और 10 म उपलब्ध है

134 एल० सी० ए० नौल्स दि इकोनामिक डेवलपमेंट आफ दि ब्रिटिश ओवरसीज एपायर (लदन 1928) पृ० 392 3 ऐंस्टे पूर्वोद्धृत, पृ० 509 11 तथा देखिए जी० फिन्डले शिरास पावर्टी एड किडड इकोनामिक प्राब्लम्स इन इडिया (भारत सरकार 1935 ततीय सस्करण)

135 कडिका 52

136 मोरिसन पूर्वोद्धृत प० 193 और देखिए सिसनी पूर्वोक्त पष्ठ 397 नौल्स पूर्वोद्धृत प० 392 3 केवल जा डी० रीम ने तथ्यो की उपेक्षा की और दृढ़तापूवक कहा जो कुछ भी बाहर जाता है उस सबका मूल्य चुकाया जाता है और उपभोग की ऐसी सभी वस्तुए, उदाहरणाथ सूती सामान और सोना चादी जो कि देश की सर्वाधिक मागें हैं कल्पना कीजिए कि भारत व्यापक परिमाण म इनका निर्यात बद कर देता है इसक फलस्वरूप उसे उसी अनुपात म भुगतान भी कम मिलेगा और तदनुसार उसकी जनता दुखी होगी वस्तुत बदले मे लिया गया सामान अथवा पसा जनता को ही मिलता है न कि सरकार को (पूर्वोद्धृत प० 302)

137 मोरिसन पूर्वोद्धृत प० 188 92 नौल्स पूर्वोद्धृत प० 392 एन्स्टे पूर्वोद्धृत प० 333 जी० एफ० शिरास पूर्वोद्धृत प० 25

138 मोरिसन पूर्वोद्धृत प० 184-6 200-02 नौल्स पूर्वोद्धृत प० 392

139 कर्जन स्पीचेज III प० 388 रास पूर्वोद्धृत प० 302 यहा तक कि नौल्स का भी अनुमान था कि निकासीवाद के समीक्षको द्वारा सगणित निर्याता की अधिकता मे सोने चादी क आयात

नहीं है तथा ई० ला एल० सी० पी० 1904 खड XLIII पृ० 538

155 नौरोजी स्पीचेज पृ० 320-1, 666

156 देखिए पीछे अध्याय 3 नौरोजी पावर्टी, प० 33-4 38 566-9 स्पीचेज प० 133 319 322 615 परिशिष्ट, प० 3 7 8, 55-6 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 127 8, गोखले विलबी कमीशन खड III प्रश्न 18169, 18183 4

157 देखिए पीछे अध्याय 5

158 देखिए पीछे अध्याय 3

159 देखिए अध्याय 5

160 देखिए अध्याय 3 5

161 देखिए अध्याय 3 8

162 देखिए अध्याय 3

163 वही , 3

164 वही

165 नौरोजी पावर्टी प० 37, 131 2 136 पादटिप्पणी 141 568 9 574 स्पीचज प० 382 3, मराठा 25 मई 1884 न्यू इडिया सितबर 1902 और पीछे अध्याय 4

166 नौरोजी पावर्टी प० 3-4 565 स्पीचेज प० 133 319 596 दत्त ई० एच II प० 375

167 नौराजी पूर्वोन्घृत प० 87 746 इडियन स्पेक्टेटर 26 अक्तूबर 1884 मराठा 9 अगस्त 1885 जसाकि हम पहले ही निर्देश कर चुके हैं 1860 के आसपास तक तो दादा भाई भी रेल पथा के निर्माण के लिए विदेशो से ऋण लेने के पक्ष म थे (एसेज प० 124 6, 132)

168 नौरोजी स्पीचेज प० 319 दत्त ई० एच II प० XV जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 353

169 नौराजी स्पीचेज पृ० 319 20 दत्त ई० एच० I प० 398 9 406-09 ई० एच० II प० XV XVI 215 20 373 5 604, एक दूसरे सन्दभ म भी भारतीयो ने निर्देश किया कि भारतीयो के रक्त और धन के मूल्य पर ही भारतीय साम्राज्य हथियाया गया है नौराजी पावर्टी पृ० 567 640 स्पीचेज 221 2 गोखले स्पीचेज प० 1207 दत्त ई० एच० I पृ० 399

170 नौरोजी स्पीचज पृ० 319-20 गोखले स्पीचज प० 1205-06 दत्त, ई० एच० II प० XV XVI 604 और देखिए अध्याय XII सनिक व्यय सबधी भाग

171 नौराजी स्पीचज प० 320-1

172 नौराजा पावर्टी पृ० 35 37

173 देखिए पाछे पादटिप्पणी 67

174 नौरोजी पावर्टी पृ० 565

175 विशषतया देखिए नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट प० 42 3 54

176 नौरोजा स्पीचज प० 196 7 395 और आग 484 5 496 7 506 परिशिष्ट प० 6, 25 32 47 73 171 2 गोखले स्पीचज प० 908-09 1866 के प्रारम दादाभाई ने "यूरोपियन ऐंड एशियाटिक रेसस" शीषक से एक लेख लिखा। इस लेख का उद्देश्य यह दिखाना था कि भारत और एशिया क लोगो म भी यूराप के लोगों के समान हा ऊची नतिकता और उच्च स्तर की प्रतिभा है (स्पीचेज पृ० 535 और आग)

177 नौराजा स्पीचेज परिशिष्ट पृ० 47

178 गोखले स्पीचेज पृ० 62.

सम्मिलित नही थे

140 मोरिसन पूर्वोद्धृत पृ० 223

141 स्ट्रेची फाइनान्स स्टेटमेंट 1878 कडिका 52 रिपोर्ट आफ दि इंडियन फमीन कमीशन 1880 भाग VIII कडिका-4 चिसनी पूर्वोद्धृत पृ० 397 स्ट्रेची इंडिया (1903) पृ० 195 6 235 6 रीस पूर्वोद्धृत प० 80 124 289 302 मोरिसन पूर्वोद्धृत, प० 205 तथा आग, 218 222 नोल्स पूर्वोद्धृत प० 392 ऐंस्टे पूर्वोद्धृत, प० 509, जा० एफ० शिराम पूर्वोद्धृत, प० 23 4

142 मोरिसन पूर्वोद्धृत पृ० 224 ऐंस्ट, पूर्वोद्धृत पृ० 509 जी० एफ० शिरास पूर्वोद्धृत प० 23-4

143 रीस पूर्वोद्धृत प० 302 मोरिसन पूर्वोद्धृत, पृ० 239-41 ऐंस्टे पूर्वोद्धृत, प० 509-11

144 मोरिसन पूर्वोद्धृत पृ० 239 40 तथा देखिए जी० एफ० शिरास पूर्वोद्धृत, प० 24

145 मोरिसन पूर्वोद्धृत पृ० 241 तथा देखिए ऐंस्टे पूर्वोद्धृत, प० 510

146 चिसनी पूर्वोद्धृत पृ० 397 स्ट्रेची इंडिया (1903) प० 194 रीस, पूर्वोद्धृत प०289 302 मोरिसन पूर्वोद्धृत प० 183 204 16 जी० एफ० शिराम पूर्वोद्धृत पृ० 22 24

147 मोरिसन पूर्वोद्धृत प० 205 229

148 वही प० 235 6 स्ट्रेची इंडिया (1903) प० 236

149 स्ट्रेची फाइनान्स स्टेटमेंट 1878 कडिका 52 रिपोर्ट आफ दि इंडियन फमिन कमीशन 1880 भाग VIII कडिका 4, चिसनी पूर्वोद्धृत प०397 8 जाज हैमिल्टन हसाड (चौथी सिरीज) ख० XCIX 1901 प० 1213 स्ट्रेची इंडिया (1903) प० 192 5 इम्पीरियल गजटियर आफ इंडिया (1908) प० 194 मोरिसन पूर्वोद्धृत प० 237 वी० लावेट पूर्वोद्धृत प० 236 नोल्स पूर्वोद्धृत प० 393 ऐंस्टे पूर्वोद्धृत प० 510 जी० एफ० शिरास पूर्वोद्धृत पृ० 23 निकासीवाद के पीछे आलोचकों का यह विश्वास काम कर रहा था कि राजनीतिक निकासी न केवल लाभदायक है प्रत्युत अपरिहार्य भी है इस प्रकार चिसनी ने 1893 मे दृढ़तापूर्वक कहा कि यद्यपि गृह प्रभार और यूरोपीय कर्मचारियों द्वारा अपनी बचतों को इग्लैंड ले जाना शब्द के अर्थ के रूप मे सचमुच ही धन की निकासी थी परतु इसके लिए शिकायत करना मूर्खता ही था क्योंकि इसका अर्थ तो यह अनुमान लगाना होगा कि अंग्रेज अधिकारियों द्वारा सचालित अंग्रेज प्रशासन के अभाव में भारत अपने आप आतरिक शांति और सुरक्षा प्राप्त कर लेता जो लोग इस विश्वास के पीछे किसी क्षुद्रतम आधार की भी कल्पना करते हैं ऐसा लगता है कि उन्हे भारत के इतिहास की और भारतीय लोगो की साधारण सी भी जानकारी नही है (पूर्वोद्धृत प० 398) तथा देखिए स्ट्रेची इंडिया (1903) प० 194 5

150 मोरिसन पूर्वोद्धृत प० 237

151 वही प० 241

152 नौरोजी एसेज प० 36 85 889 101 112-4 स्पीचेज पृ० 665

153 नौरोजी एसेज प० 101 113 पावर्टी प० 33 137 568 9 स्पीचेज प० 382 3 जोशी पूर्वोद्धृत प० 618 638 9 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 338 353 गोखले स्पीचेज, पृ० 87 8

154 नौरोजी स्पीचेज प० 320-1 382 666 और देखिए नौरोजी पावर्टी पृ० 131 138 196 तथा आगे ऐंस्टे पूर्वोद्धृत प० 333 की पादटिप्पणी यह ध्यान देने की बात है कि आयात की घोषित कीमत मे माल भाडा सम्मिलित है परतु निर्यात के घोषित मूल्य मे यह सम्मिलित

कहा है तथा ई० सा, एल० सी० पी० 1904 खंड XLIII पृ० 538
155 नौरोजी स्पीचज पृ० 320-1, 666
156 देखिए पीछे अध्याय 3 नौरोजी पावर्टी, प० 33-4 38 566-9 स्पीचज प० 133 319, 322, 615, परिशिष्ट पृ० 3 7 8 55-6 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 127 8 गोखले, विलबी कमीशन खंड III प्रश्न 18169, 18183 4
157 देखिए पीछे अध्याय 5
158 देखिए पीछे अध्याय 3
159 देखिए अध्याय 5
160 देखिए अध्याय 3 5
161 देखिए अध्याय 3 8
162 देखिए अध्याय 3
163 वही , 3
164 वही
165 नौरोजी पावर्टी, प० 37 131 2, 136 पादटिप्पणी, 141 568 9 574 स्पीचेज प० 382 3, मराठा 25 मई 1884 न्यू इंडिया सितंबर 1902 और पीछे अध्याय 4
166 नौरोजी पावर्टी पृ० 3-4 565 स्पीचेज प० 133 319 596 दत्त ई० एच II पृ० 375
167 नौरोजी पूर्वोद्धृत पृ० 87 746 इंडियन स्पेक्टेटर 26 अक्तूबर 1884 मराठा 9 अगस्त 1885 जैसाकि हम पहले ही निर्देश कर चुके हैं 1860 के आसपास तक तो दादा भाई भी रेल पथों के निर्माण के लिए विदेशों से ऋण लेने के पक्ष में थे (स्पीचेज प० 124 6 132)
168 नौरोजी स्पीचज प० 319 दत्त ई० एच II प० XV जी० एस० अय्यर ई ए० प० 353
169 नौरोजी स्पीचेज प० 319 20 दत्त ई० एच० I प० 393 9 406 09 ई० एच० II प० XV XVI 215 20, 373 5 604 एक दूसरे सन्दर्भ में भी भारतीयों ने निर्देश किया कि भारतीयों के रक्त और धन के मूल्य पर ही भारतीय साम्राज्य हथियाया गया है नौरोजी पावर्टी प० 567 640 स्पीचज 221 2 गोखले स्पीचेज प० 1207 दत्त ई० एच० I प० 399
170 नौरोजी स्पीचज पृ० 319-20 गोखले स्पीचेज प 1205-06 दत्त ई० एच० II प XV XVI 604 और देखिए अध्याय XII सैनिक व्यय संबंधी भाग
171 नौरोजी स्पीचज प० 320-1
172 नौरोजी पावर्टी प० 35 37
173 देखिए पीछे पादटिप्पणी 67
174 नौरोजी पावर्टी प० 565
175 विशेषतया देखिए नौरोजी, स्पीचेज परिशिष्ट प० 42 3 54
176 नौरोजी स्पीचज प० 196 7 395 और आगे 484 5 496 7 506 परिशिष्ट प० 6 25 32 47 73 171 2 गोखले स्पीचज पृ० 908-09 1866 के प्रारंभ दादाभाई ने दि यूरोपियन एंड एशियाटिक रेसेस' शीर्षक से एक लेख लिखा। इस लेख का उद्देश्य यह दिखाना था कि भारत और एशिया के लोगों में भी यूरोप के लोगों के समान ही ऊंची नैतिकता और उच्च स्तर की प्रतिभा है (स्पीचेज प० 535 और आगे)
177 नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट, पृ० 47
178 गोखले स्पीचेज पृ० 62

179 देखिए पीछे अध्याय 2
180 देखिए पीछे अध्याय 12
181 आगे दखिए
182 जोशी पूर्वोद्धत प० 640 1 वाचा सी० पी० ए०, प० 605 गोखले स्पीचेज प० 908
183 नौरोजी पावर्टी पृ० 227 स्पीचेज प० 134
184 नौरोजा पावर्टी पृ० 52 3 तथा दखिए वाचा सा० पी० ए० प० 607
185 गोखले स्पीचेज पृ० 1188 और दखिए उदाहरण के लिए नौरोजी एसज पृ० 123 374, पावर्टी प० 56 8 203 05 225 631 स्पीचज प० 134 परिशिष्ट पृ० 171 सी० शकरन नायर सी० पी० ए० प० 388 9 गोखले स्पीचज पृ० 120
186 नौरोजी पावर्टी प० 33
187 उदाहरण के लिए देखिए नौरोजी स्पीचेज प० 316 7 319 329 361, 378
188 वही प० 339
189 वही प० 322 और देखिए पृ० 668
190 वही परिशिष्ट प० 3 यहा यह उल्लेखनाय है कि कितन ही और भारतीय नताओ ने भी इ वात पर ध्यान दिया था कि निवासी के मूल कारण राजनीतिक ही हैं देखिए जोशी पूर्वोद्ध प० 683 राय पावर्टी प० 7 242 गोखले स्पीचेज प० 15
191 नौरोजी पावर्टी प० 212
192 वही पृ० 211 2
193 वही प० 224
194 वही प० 225
195 वही प० 224-5 31 जनवरी 1901 को लदन के श्रोताओ को सबोधित करत हुए उन्होन दोहराया जिस ढग स तुम जीवन और सपत्ति की रक्षा दूसरा के द्वारा की जान वाला हिंसा से करत हो उसका वास्तविक रूप यह है कि तुम सपत्ति की र ा इसलिए करत ह दूसरा कोई उस सपत्ति को न हथिया सके और तुम स्वय उस पर अधिकार जमा सका। एसा करना दुखद न होता तो जिन्दगी मजाक हो जाती है। जरा आख उठा कर भारत व करोडो आदमियो को देखिए तो सही जो दिन प्रति दिन वष प्रतिवष अच्छी फसल द अभावग्रस्त जीवन बिताने और दु ख भोगन को विवश हैं (स्पीचज प० 228)
196 नौरोजी स्पीचज प० 389
197 नौरोजा स्पीचेज प० 125
198 नौरोजी स्पीचेज पृ० 153
199 वही, प० 153-4
200 वही पृ० 400 प० 387 भी दखिए
201 वही, प 328
202 वही प० 329
203 इडिया 2 सितबर 1904 उन्होंने व्यग्यपूवक टिप्पणी की ब्रिटिश इस देश से सपन्न जाते हैं। अन जब देश म फसल कम होती है लाखो करोडो भूख से मर जाते ह ब्रिटिश प्रशासन ने अपनी उदार लोकोपकारी प्रवृत्ति का यह प्रमाण दिया है। और दखिए वही परिशिष्ट प० 4 5 2
04 नौरोजी, स्पीचज परिशिष्ट प० 29

सी० पी० ए० प० 158 उन्होंने फिर भी निवासी के मामले में ब्रिटिश जनता और ब्रिटिश संसद को निर्दोष बताया परंतु ब्रिटिश भारतीय अधिकारियों भारत और ब्रिटिश सरकार के राज्य सचिव को पूरी तरह दोषी सिद्ध किया (वही परिशिष्ट, प० 58-60)

205 उदाहरण के लिए देखिए, नौरोजी पावर्टी प० 227

206 नौरोजी, स्पीचेज, पृ० 120

207 वही परिशिष्ट प० 74 और देखिए वही परिशिष्ट प० 43, 75

208 नौरोजी पावर्टी प० 218 तथा प० 216

209 नौरोजी, स्पीचेज पृ० 334 उन्होंने लिखा भारतीयों का प्यार ही एक ऐसी सुदृढ़ आधार शिला है जिस पर विदेशी शासक मजबूती और स्थिरता के साथ खड़ा हो सकता है अन्यथा वह एक स्वप्न महल की तरह बिखर जाएगा (वही, पृ० 332)

210 वही प० 368

211 नौरोजी सी० पी० ए० पृ० 8

212 नौरोजी, स्पीचेज, पृ० 392

213 वही प० 223

214 नौरोजी पावर्टी पृ० 659

215 उदाहरण के लिए देखिए नौरोजी, स्पीचेज, परिशिष्ट प० 21 2 25 6

216 इंडिया, 2 सितंबर 1904

217 नौरोजी स्पीचेज, पृ० 671 इन्हीं भावों को दादाभाई ने इससे पूर्व दिसंबर 1903 में उस समय भी अभिव्यक्त किया था जब उन्होंने हिंदुस्तान रिव्यू और कायस्थ समाचार को भेजे गए अपने संदेश में ब्रिटिश सर्वोच्चता के अंतर्गत स्वशासन अथवा स्वराज्य की मांग की थी। (एच० आर० दिसंबर 1903 पृ० 474)

218 नौरोजी सी० पी० ए० पृ० 863 तथा देखिए प० 883 886

219 देखिए 1890 के प्रथम औद्योगिक सम्मेलन में उनका उद्घाटन भाषण एसेज प० 180-94 और देखिए वही प० 119 20

220 उदाहरणार्थ 1858 के आरंभ में महारानी की घोषणा में यह कहा गया था भारत के शांतिपूर्ण उद्योग को प्रोत्साहन देना हमारी हार्दिक अभिलाषा है डफरिन ने अपने सुप्रसिद्ध सेंट एंड्रयूज भाषण में घोषणा की कि भारत की दरिद्रता को दूर करने के दो ही उपचार हैं उत्पादक उद्योगों का विस्तार और उत्प्रवास (स्पीचेज प० 242) कर्जन ने भी 1903 में कलकत्ता की कि जब से मैं भारत में हूं जिन विषयों ने मेरा गहरा ध्यान आकृष्ट किया है उनमें प्रथम है भारत की औद्योगिक गतिविधि का विकास मेरी दृष्टि में इसी पर भारत की भावी आशा निर्भर है (स्पीचेज III प० 114) और देखिए वही प० 117 133 139-41 और देखिए जी एस० अय्यर ई० ए० प० 101-02

221 रिपोर्ट आफ दि इंडियन इंडस्ट्रियल कमीशन पूर्वोद्धृत 1916-18 प 75 8 105 07 ऐस्ट पूर्वोद्धृत प० 210 3 न्यायमूर्ति रानाडे ने 1890 में घोषणा की यह ठीक है कि सरकार सहायता कर सकती है परंतु नगण्य रूप से प्रारंभिक कार्य में नेतृत्व दीजिए सरकार हमारी सहायता को उत्सुक है (एसेज प० 190)

222 ऐंस्ट पूर्वोद्धृत पृ० 216-26

223 रानाडे तक ने घोषणा की कि औद्योगिक क्षेत्र में शासकों और शासितों के हितों में किसी प्रकार

का कोई सघर्ष नहीं दोनो ही समान रूप से देश की औद्योगिक और आर्थिक प्रगति को अग्रसर करने को इच्छुक हैं (एसेज प० 180) और देखिए वही, प० 181 190

224 रानाडे एसेज प० 187 188 193-4 ए० एस० मुदालियर रिप० आई० एन० सी०, 1886 प० 65 और पीछे अध्याय 2 तुलनीय जे० सी० कोयाजी *रानाडेज वर्क्स एज ऐन इकानोमिस्ट* इंडियन जरनल आफ इकोनामिक्स जनवरी 1942 खंड XXII संख्या 3 प० 307 16

225 रानाडे एसेज प० 119-20 187 190-4 जोशी पूर्वोद्धत प० 805 806 814 और पीछे अध्याय 2

226 डफरिन स्पीचेज प० 242 और देखिए कर्जन स्पीचेज III प० 139-41 फिरोजशाह मेहता खुले तौर पर यूरोपियो पर यह आरोप लगाने की सीमा तक बढ गए कि वे औद्योगिक विकास के आन्दोलन का उपयोग भारतीयो को राजनीतिक आदोलन से विमुख करने के एक साधन के रूप मे कर रहे थे (स्पीचेज प० 817) इससे पूर्व मार्च 1904 मे कर्जन यह घोषित कर चुके थे कि मै नही समझता कि भारत के विकास के वर्तमान स्तर पर राजनीतिक क्षेत्र मे मुक्ति की माग का कोई औचित्य है ? (स्पीचेज II प० 49)

227 आई० एन० सी० 1901 का प्रस्ताव XVI

228 आई० एन० सी० *1902 का प्रस्ताव III और 1904 का प्रस्ताव III*

229 आर० पी० पराजपे ने गोखले के राजनीतिक कार्यक्रम के नरम साधना का विश्लेषण निम्नलिखित रूप से किया है उनकी यह धारणा थी कि ब्रिटिश राज्य के अतर्गत और विश्व मे अपना समुचित स्थान पाने के लिए 9 10 भाग का कार्य तो भारत मे और स्वय भारतीयो को ही पूरा करना है कार्य के इस बडे अश के सपन्न हो जाने पर विदेशी शासन की नौकरशाही के कारण स्वाभाविक थोडी बहुत कठिनाइया का आना स्वाभाविक ही है परतु उन्हे दूर करने मे बहुत समय नहीं लगेगा पराजपे ने आगे यह टिप्पणी ठीक ही की कि *अपनी त्रुटियो के इतने गहरे ज्ञान का अर्थ यह कदापि नहीं कि जनता के सामने गला फाड फाड कर अपने को क्षुद्र* घोषित करो और दूसरो की दृष्टि मे नीचे गिरो गोपालकृष्ण गोखले (पूना 1915 द्वितीय सस्करण) प० 34 यहा जस्टिस रानाडे के सतुलित राजनीतिक दृष्टिकोण की परिभाषा को जानना भी रोचक होगा 1896 मे उन्होने लिखा उपयुक्तता का अर्थ है कि असभव के पीछे भटकने का दभ न करना अथवा दुष्प्राप्य की कामना न करना प्रत्युत समझौता और औचित्य की भावना से यथासभव हस्तगत हो सकने वाले लक्ष्य के प्रति स्वाभाविक विकास के रूप मे *प्रतिदिन एक एक पग आगे बढते जाना* आर्थिक क्षेत्र मे जनता की घोर दरिद्रता का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने के उपरात रानाडे ने *लिखा हा यह वस्तुस्थिति कल की तो है नहीं और न ही यह विदेशी विजय और प्रतियोगिता का* एकमात्र परिणाम है यह तो पुरानी और बहुत पुरानी परपरागत स्थिति है (एसेज प० 182)

230 मसानी पूर्वोद्धत प 414 पर

231 वही प० 523

232 वस्तुत दादाभाई और पत्रिका दोनो इस निष्कर्ष से सबधित न करने पर यह मानने को प्रस्तुत थे *कि भारत मे भूमि लगान काफी बहुत ऊचा कतई नही थ* (नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट प० 52 और ए० बी० पा० 1 जून 1900) पत्रिका ने 18 अक्तूबर 1900 के अक में भी निर्देश किया कि निकासी के प्रस्तुत तथ्य के अतर्गत भुगतान करने के लिए सतत धन की उगाही तो

करनी ही है। यदि भूमि लगान घटाए गए तो देश को किसी और मद स धन की व्यवस्था करनी पड़गी

233 उसने इस बात पर भी ध्यान दिया कि दत्त भूमि लगान पर आवश्यकता से अधिक बल देने की अपनी पूव स्थिति से बदल चुके हैं और अब भारत को निधन बनाने के लिए निकासी और उद्योग क अभाव पर भी बराबर आरोप लगाने लग हैं

234 उदाहरणाय, दादाभाई ने 1887 म वाचा को लिखा विधान परिषदो मे प्रतिनिधित्व के सुधार मात्र स तब तक कोई लाभ नही होगा जब तक साथ मे निकासी को बद करन के अयान्य सुधार नही अपनाए जाते (मसानी पूर्वोद्धत, पृ० 316 पर) तथा दखिए नौरोजी स्पीचेज प० 361

235 26 जनवरी 1886 को खजाने को लिखा गया पत्र, जो स० 26 दिनाक 28 जनवरी के डिस्पच आफ सक्रटरी आफ स्टट टु गवनमट आफ इडिया (फाइनास) मे सलग्नक सख्या 2 के रूप म भजा गया

236 रीस पूर्वोद्धत प० 288

237 उदाहरण क रूप म दिसबर 1881 क बगाल मगजान ने लिखा इस प्रकार की जगली बात चीत से श्रीमान दादाभाई का क्या अभिप्राय है ? राजस्व की जिस हानि पर दादाभाई विलाप करते हैं तभी रुक सक्ती है जब भारत स्वतत्र हो जाएगा तथा स्वय भारतीयो द्वारा हा प्रशासित होगा परतु वह दिन आन वाला नहा है और बहुत नब समय तक आन वाला नही है अत *विदशियो द्वारा दश क साधनो क उपभोग किए जान की बात करना मूखता ही है (प० 177 8)* और दखिए न्यू इडिया, 7 अप्रल 1902

238 उदाहरण क लिए दखिए नौरोजी स्पीचेज परिशिष्ट प० 77 8

239 1908 म जे० डा० रीस ने लिखा यह सत्य है कि ब्रिटिश राज्य मे विश्वास की दढता के कारण दादाभाई बहुत से अभियोगो स बच निकलत हैं परतु इस कथन को केवल एक फ्रासीसी उक्ति के समान हा समझा जा सकता है हमारे दुर्भाग्य हम खा न जाए उससे पहले ही हमे उन्ह खा जाना चाहिए (पूर्वोद्धत पृ० 238)

भारतीय राजनीतिक अर्थव्यवस्था

> सिद्धात केवल व्यवहार का व्यापक रूप है और समीवर्ती कारणो के सदभ मे सिद्धात का अध्ययन ही व्यवहार है।
>
> *जस्टिस रानाडे*

> समाज की प्रचलित परिस्थितिया तथा इसके भावी और समकालीन हित के सबध म व्याप्त मान्यताए उन आर्थिक धारणाओ के निर्धारक तत्व हैं जिन्हे चितको का अनुमोदन और राजनीतिज्ञो की स्वीकृति प्राप्त रहती है।
>
> जी० सुब्रह्मण्य ऐयर

हमारे अध्ययन के अतगत अवधि मे कुछ एक भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने 'भारतीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था' की धारणा को जन्म दिया। 1892 मे दक्कन कालेज पूना म 'भारतीय राजनैतिक अर्थव्यवस्था' पर अपने प्रतिष्ठित भाषण मे जस्टिस रानाडे ने इस विषय का समग्र और पूर्ण रूप मे वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया।[1] भारतीय अर्थशास्त्र के इतिहास म उनके मूल सिद्धात अत्यन्त प्रसिद्ध है, अत यहा उनके विस्तृत विवरण देने की आवश्यकता नही। परतु जो बात इतनी अच्छी तरह विदित नही है वह यह है कि उनके सिद्धातो को कितने व्यापक स्तर पर राष्ट्रीय नेताओ म मान्यता प्राप्त थी। इस विषय पर रानाडे के विचारो का हम यहा नीचे सक्षेप म विवेचन करेंगे

क्लासिकी राजनैतिक अर्थव्यवस्था को सभी समयो म और सभी स्थानो पर, सार्वदेशिक रूप से समग्र रूप और प्रमाण रूप से तथा आर्थिक विकास के सभी स्तरो पर सही मानने का दावा वास्तविकता से कोसो दूर था। क्लासिकी अर्थव्यवस्था का आधार वे प्रकल्पनाए थी, जिन्हें सार्वदेशिक रूप मे प्रयोग म नही लाया जा सकता था। वस्तुत इग्लैड की विशेष परिस्थितिया ही उनके जन्म के लिए उत्तरदायी थी अन्यथा वे उस समय के किसी भी समाज के लिए अनुरूप कदापि नहीं थी।[4] विशेषत भारत जैसे पिछडे अप्रगतिशील तथा कृषि प्रधान देश के लिए तो, जिसम प्रतियोगिता के बदले यथास्थिति और रस्मो रिवाज ही हावी रहते है उनकी शायद ही कोई उपयोगिता थी। द्वितीय ब्रिटिश राजनीतिज्ञो के अतीत म व्यवहार और अन्य देशो द्वारा किए जा रहे समकालीन

व्यवहार क्लासिकी अर्थव्यवस्था की मान्यताओं अथवा प्रकल्पनाओं की कदापि पुष्टि नहीं करते थे।[6] वस्तुस्थिति तो यह थी कि ब्रिटिश सरकार ने ग्लानों को प्रतिभूति देते हुए बागान उद्योग को सहायता देते हुए अथवा भूमि पर राज्य स्वामित्व का दावा करते हुए अथवा कानून के द्वारा किसानों की क्षुद्र सम्पत्ति की रक्षा करते हुए इन सिद्धांतों का कठोरता से पालन नहीं किया था।[7] ततीय, क्लासिकी अर्थशास्त्रियों के दावों के आगे यूरोपीय और अमेरिकन अर्थशास्त्रियों ने प्रश्न चिह्न लगा दिया था।[8] यहाँ तक कि उन पर कितने ही अंग्रेज अर्थशास्त्रियों ने भी प्रहार किया था।[9] इसके अतिरिक्त कुछ एक क्लासिकी अर्थशास्त्री स्वयं अपने आप ही अपने विज्ञान की सर्वव्यापकता और समग्रता के दावे को छोड़ने की पूरी चेष्टा कर रहे थे।[10] चतुर्थ क्लासिकी अर्थशास्त्री अधिक से अधिक निश्चल आर्थिक परिस्थितियों का ही विश्लेषण कर सकते थे परन्तु वे गतिशील आर्थिक विकास पर प्रकाश डालने में लगभग असमर्थ थे।[11] इन सब तत्वों को देखते हुए अपरिहार्य निष्कर्ष यही निकलता था कि अर्थशास्त्र के सिद्धांत अथवा नियम भौतिकी और गणित के नियमों के अनुसार अमूर्त तथा सार्वभौमिक नहीं थे प्रत्युत वे सापेक्ष और ऐतिहासिक दृष्टि से परिस्थिति पर निर्भर तथा इसी से निकलते थे। वह समय और स्थान के अनुसार परिवर्तनशील थे।[12] अतः किसी देश की आर्थिक नीतियों के निर्धारण के लिए निर्णायक तत्व अमूर्त आर्थिक सिद्धांत न होकर आर्थिक विकास की विशिष्ट अवस्था ही होनी चाहिए।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि रानाडे ने आर्थिक सिद्धांतों की उपयोगिता तथा अर्थशास्त्र की वैज्ञानिक तर्कसंगति को मानने से कभी इनकार नहीं किया।[13] इसके विपरीत उन्होंने अर्थशास्त्र को स्वतः सिद्ध कानूनों की स्थिति को कला का रूप देकर उसका अवमूल्यन करने वालों की विशेष रूप से ही भर्त्सना की।[14] वे तो केवल व्यवहारिकता का सुदृढ़ आधार लेकर उसे और अधिक सूक्ष्म तथा वैज्ञानिक बनाना चाहते थे।[15] उनका कथन था कि अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है अतः उसके सिद्धांतों की स्थापना इतिहास के माध्यम से विशिष्ट आर्थिक गतिविधियों के अध्ययन से ही करनी अपेक्षित है न कि वियोजक रीति के अनुसार, ताकि उन्हें ऐतिहासिक अनुभव, व्यावहारिक निरीक्षण तथा सामाजिक यथार्थता के साथ निकटता से जोड़ा जा सके। अथवा जैसा कि डी० जी० कर्वे ने लिखा है रानाडे को केवल विस्तृत, समाजशास्त्रीय तथा रचनात्मक आर्थिक दृष्टिकोण ही मान्य था।[16] 1881 में रानाडे ने स्वतंत्र व्यापार के प्रश्न को समग्र आर्थिक दृष्टिकोण से देखने के लिए तथा प्रश्न के साथ जुड़े राजनीतिक तथा सामाजिक तत्वों की उपेक्षा करने के लिए अंग्रेज अर्थशास्त्रियों की तीव्र निंदा की तथा अपना निश्चित मत व्यक्त किया कि यदि राजनैतिक आर्थिकता को विद्यालय के अध्यापक की अध्यात्म विद्या से भिन्न रूप में ग्रहण करना है तो आर्थिक पक्ष को जनता के ऊँचे हितों और आकांक्षाओं के अधीन ही कर देना चाहिए। वस्तुतः उन्होंने निर्देश किया कि यही कारण है कि नाग व्यावहारिक अर्थात् राजनैतिक आर्थिकता की बात करते हैं विशुद्ध आर्थिकता की नहीं करते।[17] इस संबंध में रानाडे क्लासिकी अर्थशास्त्रियों के व्यवहार के रहे और उन्होंने प्राय ही आर्थिकता को राजनैतिक आर्थिकता के रूप में जि

समय आने पर रानाडे की क्लासिकी आर्थिकता की आलोचना ने

भारतीय राजनैतिक आर्थिक चिंतन की आधारशिला रखी। हमारा विश्वास है कि यह विकास प्रमुख रूप से इन दो तत्वो की उपज था (ए) रानाडे का निष्कर्ष, इस विश्वास मे उदभूत था कि आर्थिक सिद्धात, *सामाजिक यथार्थ पर अत्यत निर्भर होने के कारण* तथा आर्थिक व्यवहार की प्रतिबिंबात्मक विशेषता लिए रहने के कारण सापेक्षता लिए रहते हैं। इस रूप मे क्योकि भारत के आर्थिक हित और परिस्थितिया इग्लैड के आर्थिक हितो और परिस्थितियो से सवथा भिन्न हैं अत भारत पर लागू होने वाले आर्थिक सिद्धात भी सवथा भिन्न होने चाहिए।[18] बी *तथा अन्य बहुसख्यक समकालीन राष्ट्रवादियो* द्वारा रानाडे के पक्ष और निष्कर्ष की स्वीकृति।

इस प्रकार 1877 म ही के० टी० तलग ने सभी देशा पर राजनतिक आर्थिकता के सिद्धाता के समान रूप से लागू न होने के तथ्य के प्रदर्शन के लिए एक अग्रेज अथशास्त्री टी० ई० कलिफ वेसली को उद्धृत किया।[18 ए] उनका यह भी कथन था कि व्यावहारिक प्रश्नो का निर्णय करते समय आर्थिक सिद्धातो के केवल एक तत्व को ही नही लिया जा सकता। सामाजिक और राजनतिक कल्याण के अन्य तत्व भी समान रूप स महत्व रखते है।[19] दादाभाई ने अपने लेख 'दी पावर्टी आफ इडिया' मे यह तक प्रस्तुत किया कि स्वदेशियो द्वारा शासित देशो म राजनैतिक आर्थिकता सही हो सकती है परतु यह प्रभारा और सप्रेषणा की व्यवस्था करने को विवश विदेशियो द्वारा शासित देश म कठोरता से इसे लागू नही किया जा सकता।[20] पथ्वीशचन्द्र न भी राजनैतिक आर्थिकता के अमूत सिद्धातो का लेकर किसी देश की समाज-शास्त्रीय स्थितिया पर विचार किए बिना ही उन सिद्धातो को कठोरता से लागू करने की निंदा की। उन्होन अपने पक्ष के समथन मे अग्रेज अथशास्त्रिया की आत्मतुष्ट हठधर्मी की गलतिया के प्रमाण के रूप म अमेरिका, आस्ट्रेलिया और यूरोप के महाद्वीप को उद्धृत किया।[21] जी० वी० जाशी न आर्थिक सिद्धात की सीधी चचा तो नही की परतु उनके द्वारा राज्य की भूमिका, उन्मुक्त व्यापार, आदि प्रश्नो पर किये गए चिंतन से रानाडे के मौलिक सद्धातिक कायक्रम के प्रति उनकी सहमति और आस्था स्पष्ट सिद्ध हो जाती है। आर० पी० दत्त ने आर्थिकवाद पर विचार प्रकट नही किए परतु उन्होंने इस तथ्य का अवश्य देखा कि जब अग्रेज लाग इग्लैड म उन्मुक्त व्यापार के पक्ष म आदोलन चला रहे थे, उस समय भी इग्लैड म प्रवेश करन वाले भारतीय माल पर लगने वाले भारी करा की रिकार्डो, कोब्डन ब्राइट और रावट पील उपेक्षा ही कर रहे थ। दत्त महोदय ने स्थिति का निष्पक्ष विश्लेषण करने के लिए यूरापीय अथशास्त्रिया की प्रशसा की जिन्होने अग्रेज राजनीतिज्ञो के इग्लैड और भारत म बरते जाने वाले दोगले व्यवहार की निर्भ्रांत शब्दो म निंदा की।[23]

यद्यपि वे स्पष्ट रूप से ही रानाडे के चरण चिह्नो का अनुकरण कर रहे थे तथापि उनका इस प्रश्न से सबधित विवेचन ऐतिहासिक महत्ता लिए हुए है। उन्मुक्त व्यापार के प्रश्न पर विचार करत हुए उन्होंने यह दिखाने के लिए कि किसी देश की आर्थिक नीतिया का निर्धारण उस देश की आवश्यकताओ के सदर्भ म होता है न कि आर्थिक सिद्धातो के परिप्रेक्ष्य म, जमनी और अमेरिका की सरक्षक नीतिया का उद्धृत किया। उन्होने टिप्पणी की कि उन्मुक्त व्यापार की नीति इग्लैड की अपनी विशिष्ट परिस्थितियो के कारण ही

से अनुरोध किया कि वह घोषणा करे कि वह अपने अर्थशास्त्रीय सिद्धान्त इग्लैड से उधार लेने नही जा रही है। निष्कर्ष रूप म इसने राष्ट्रीय आर्थिकता के निर्माण की वकालत की।[31] विपिनचद्र पाल के "न्यू इडिया" न भी अपने 21 अप्रैल 1902 के अक म आर्थिक सिद्धातो की सापेक्षता पर विचार किया। इसके अनुसार भारत और अन्य यूरोपीय देशा की जनता म तथा उन दोनो देशो के सामाजिक सगठन और जलवायु तथा एतिहासिक वातावरण मे व्यापक भेद है। इसी प्रकार दोनो देशो के आर्थिक सिद्धाता के सामाजिक मूल कारण भिन्न भिन्न ह। इसम यह निष्कर्ष निकाला कि आर्थिक दृष्टिकोण किसी देश के किसी विशिष्ट समय की विशिष्ट औद्योगिक स्थितिया का परिणाम है अत उनका एक युग म दूसरे युग मे तथा एक देश स दूसरे देश मे परिवर्तित तथा भिन्न रूप ग्रहण करना अनिवार्य है।[3] बहुत सारे अन्य राष्ट्रवादी नेताओ न भारत म उन्मुक्त व्यापार के प्रयोग म लाए जाने के विरुद्ध किए जाने वाले आदोलन के समय आर्थिक सिद्धातो की सापेक्षता की ओर सकेत किया।[33]

उपर्युक्त बहुत सारे नेता इस सबध म रानाडे से एक विषय म आगे बढ गए। व यह समझने और कहने म सफल हो गए कि भारत की स्थितियो की इग्लैड म तथा यूरोप और अमेरिका के अन्य बहुत सारे राष्ट्रो की स्थितिया से भिन्नता का कारण इस देश का राजनैतिक परिस्थिति ही थी क्योकि भारत की अर्थव्यवस्था और वित्त पर विदेशी सत्ता का नियत्रण था।[34]

राज्य की भूमिका

क्लासिकी अर्थव्यवस्था का एक पक्ष सरकार की तटस्थता नीति का सिद्धात था जिस राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियो न निरतर और बडी प्रबलता के साथ चुनौती दी। उन्होंने इस धारणा को सर्वथा अस्वीकार कर दिया कि सरकार का कार्यक्षेत्र न्याय और व्यवस्था को बनाए रखने तक सीमित है।[35] उन्होने इस बात की वकालत की कि राज्य की गतिविधि का क्षेत्र इस प्रकार विस्तृत और व्यापक बनाया जाए कि जिसस उन सभी मामलो मे, जिनम राष्ट्रीय प्रयास की अपेक्षा निजी प्रयास कम प्रभावी हो सकते है सरकार हस्तक्षेप कर सके।[3] राज्य को राष्ट्रीय उद्देश्य के लिए राष्ट्रीय इच्छा के सामूहिक अग के रूप मे ही कार्य करना चाहिए।[37] उनका यह और भी दृढ मत था कि पश्चिम के विकसित देशा की अपेक्षा भारत जैसे आर्थिक दृष्टि स पिछडे देश म राज्य द्वारा राष्ट्रीय आर्थिक और औद्योगिक हितो के सरक्षक के रूप म कार्य करने की आवश्यकता अधिक प्रबल थी क्योकि लोगो की वशानुगत दुर्बलताओ पर काबू पाने म राज्य ही सहायक हो सकता है। और यह राज्य का कर्तव्य है कि वह देशवासियो को सशक्त विदेशियो के मुकाबले हीन स्थिति और जडता से उभरने म सहायता करे।[38] जी० वी० जोशी ने तो विशेष रूप स यह अनुभव किया कि भारत म राज्य का यह कर्तव्य है कि वह प्रतियोगिता के आर्थिक कानूनो के कठोर प्रवर्तन पर इस प्रकार म नियत्रण करे और मार्ग प्रदर्शन करे कि जिसस दस्तकारी का आधुनिक उद्योगो मे अप्रतिहार्य परिवर्तन इस प्रकार म नियमित हो जाए कि उसके फलस्वरूप होने वाली आर्थिक अर्थव्यवस्था और दुर्भाग्य न्यूनतम रह जाए।[39] राज्य के

कथन था कि भारत मे तो स्थिति उससे सवथा भिन्न है। यहा ता हिता मे किसी प्रकार का कोई वगगत सघप नही है, अन्य स्थानो के समान इस देश मे ता वर्गों म किसी प्रकार की कोई मोटी दरार नही है। यहा हम राज्य से एक वग के विरुद्ध दूसरे वग की सहायता करन अथवा पूजीपति वग के प्रति पक्षपात करने के लिए तो नही कह रह ह। हम तो राज्य से सारे समाज की ही वतमान असहाय स्थिति म उसकी सहायता के लिए निवदन कर रहे ह। भारतीय समाज के सभी वग शक्तिशाली विदेशियो स प्रतियोगिता म पिछड रहे ह और दुखी ह और सभी वग समान रूप स भारत के द्रुत आर्थिक विकास म रुचि रखत है।[44]

राज्य के आर्थिक मामला मे हस्तक्षेप तथा निजी हितो के ऊपर सामुदायिक कल्याण को प्राथमिकता दने के जुडवें सिद्धात को आधार मानते हुए भारतीय नताओ न भारत सरकार स माग की कि वह देश के औद्योगिक विकास के लिए प्रत्यक्ष, सुविचारित तथा सुनियमित नीति का अनुसरण करे क्योकि उनकी दृष्टि मे देश का औद्योगिक विकास राष्ट्रीय आर्थिक कल्याण की एक आवश्यक शत थी।[45] उनमे से बहुतो न कृषि का भी राज्य द्वारा अनेक प्रकार से सहायता दिए जाने की बात कही।[46] रानाडे ने तो इस सिद्धात को इस रूप मे लिया कि राज्य तो सारे समाज का सरक्षक है और जिस किसी भी क्षेत्र मे दुबल को सबल से बचाने की आवश्यकता हो, राज्य का उधर प्रवत होना कतव्य बन जाना है।[47] उन्होन किसाना को सुरक्षित करने और साहूकारो को नियमित करने के लिए कानून बनान का समथन किया।[48] उन्होने सपत्ति के और अधिक न्यायोचित वितरण की भी वकालत की।[49] इसी प्रकार जी० एस० ऐयर न श्रमिका के पक्ष मे राज्य के हस्तक्षप की इस तक के आधार पर वकालत की कि श्रम और पूजी के असमान सघप मे दुबल की रक्षा करना राज्य का दायित्व है।[50] यहा यह फिर दोहरा दिया जाए कि बहुत सार अन्य भारतीया ने शातिपूवक चल रहे निजी औद्योगिक प्रतिष्ठानो म सरकारी हस्तक्षेप का तीव्र विरोध किया।[51]

यहा हम अपने पाठको को सावधान करना चाहगे कि कही वे राष्ट्रवादियो के राज्य द्वारा आर्थिक मामलो मे हस्तक्षेप करने के सैद्धातिक सुरक्षात्मक पग मे और समाजवादी तथा यहा तक कि लोक कल्याणकारी राज्य की इच्छा से उद्योग के लिए राजकीय सहायता की माग म, जो किन्ही मामलो म स्वय राज्य द्वारा किसी उद्योग के सचालन का रूप ले सकती थी,[5] घपला न कर बठें तथा इस विषय मे सचेत रह। समाजवाद और यहा तक कि सरकारी पूजीवाद की वकालत करन की तो कोई बात ही नही थी ये अथशास्त्री ता केवल यही चाहते थे कि सरकार कृषि अथव्यवस्था के औद्योगिक पूजीवादी अथव्यवस्था म सक्रमण के लिए प्रेरणा तथा प्रोत्साहन जुटाए। इस रूप मे य नेता लाग केवल यही चाहत थे कि भारत जस पिछडे देश म निजी उद्यम की कमियो की पूर्ति सरकार कर। रानाडे राज्य की भूमिका मे यही अभिप्राय लत थ, इस तथ्य की पुष्टि उनके लखो, 'नीदरलड्स इडिया ऐंड दी कलचर सिस्टम', आइरन इडस्ट्री, पायनीयस अटैम्पटस तथा 'इडस्ट्रियल कान्फ्रेंस' के अध्ययन मे सुस्पष्ट हो जाती है।[53] उनकी 1886 की एक अप्रसिद्ध रचना स भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। जहा वे एक ओर सामान्य रूप से भडारा

ए अपेक्षित सामग्री के लिए सरकारी कारखाना मे सभी प्रकार के कुशल उत्पादनो ात करते हैं,[54] वहा वे 1886 की वित्त समिति के प्रतिवेदन से भी अपनी असहमति करते हुए सरकार पर जेलो के उत्पादन पर लगे समिति द्वारा प्रस्तावित प्रतिबधो टाने पर *तीव्र आपत्ति करते हैं क्योकि उनके विचार मे इससे सरकारी धन की* ता स सरकारी अधिकारियो की प्रतियोगिता म निजी उद्यम का पीछे धकेलने मे हन मिलेगा। उन्होने विशेष रूप से ही सरकारी काय की सहायता से वाष्प यन्त्र, खाना, तबू, कागज, गलीचे आदि बनाने के लिए जेलो का उपयोग करने की आलो- की। दूसरे शब्दो मे जिस सामान का उत्पादन निजी उद्यमी कर रहे थे, सरकार द्वारा सामान के उत्पादन के लिए जेलो का उपयोग करने पर आपत्ति की।[55]

जी० वी० जोशी ने सरकारी समाजवाद के अथवा सरकारी पूजीवाद के किसी भी त्र का और भी अधिक सुदृढता और स्पष्टता स विरोध किया। इस प्रकार उन्होने) म लिखा, हमारी योजना निश्चित रूप से ही सरकारी समाजवाद जसी योजना है उदाहरणाथ जैसे कि 1848 मे अस्थायी सरकार ने घातक और दुभाग्यपूण लता के साथ चेष्टा की थी।[56] प्रथम, उन्होने बार बार दोहराते हुए यह णी की कि *राज्य की कायवाही का एकमात्र उद्देश्य शक्तिशाली और उन्नत विदे* के साथ साधन हीन भारतीय उद्यमियो के असमान सघष मे सतुलन की व्यवस्था । है ताकि भारतीय उद्यम का आरम्भ मे ही गला न घोट दिया जाए।[57] द्वितीय । दृढ मत था कि मूल रूप से औद्योगिक विकास निजी प्रयास का ही कायक्षेत्र तथा ार क्षेत्र है। राज्य की भूमिका तो निजी उद्यमी को स्वतत्र रूप मे दायित्व सभा के योग्य बनाने तक ही सीमित है। ज्यो ही निजी उद्यमी अपने पैरो पर खडा हो जाए ी सरकार को उसके माग से एकदम हट जाना चाहिए। उस स्थिति म राज्य के औद्योगिक क्षेत्र पर एकाधिकार का प्रयत्न करना सवथा अनुचित ही होगा।[58] ततीय, ीय सहायता द्वारा निजी उद्यम को नष्ट करने के लिए राज्य के आक्रामक और रूप ग्रहण कर लने की आशका को स्वीकार करत हुए उन्होने उसके क्षेत्र दिशा अवधि पर कडी सीमाए लगाने का प्रस्ताव रखा।[9] अतिम, उन्होने सरकार की ात के लिए आलोचना की कि वह सिंचाई वन सरक्षण और तकावी भत्ते जसे कार्यो पने ही अभिकरणो द्वारा पूरा कर रही है जबकि य सभी काय इस देश के ही निजी ियो द्वारा सपन्न किए जाने चाहिए और सरकार को तो केवल इस दिशा म निजी ियो को प्रशिक्षित और प्रोत्साहित करना चाहिए तथा इन कार्यों के सचालन के लिए ावश्यकता हो तो उपदान देना चाहिए।[60]

-लगान कर अथवा किराया

ाय नेताओ द्वारा सरकारी सिद्धातवादी ढाचे पर आपत्ति किया जाने वाला क्षेत्र राजस्व प्रशासन था। मतभेद के प्रमुख विषय थे, भूमि लगान का स्वरूप और कृषि र अतिम स्वामित्व। *भारतीय प्रशासकों का यह व्यापक मत था कि अनन्त काल स* मे भूमि पर राज्य का अतिम अधिकार चला आ रहा है। अत धरती बोने वाले अथवा

जमीदार सरकार के किरायेदार है। फलत जमीदारा द्वारा सरकार को चुकाया जाने वाला लगान किराया है कर नही।[61] राष्ट्रवादी अथशास्त्रियो और दूसरे नेताओ न इस धारणा को पूर्ण रूप से अस्वीकार कर दिया। उनका कथन था कि भारतीय जमीदार अपनी भूमि का ठीक उसी प्रकार स्वामी है, जिस प्रकार विश्व के किसी अन्य भाग का जमीदार अपनी भूमि का है। उन्होने इस बात को दृढतापूर्वक सामने रखा कि अतीत इतिहास की गलत व्याख्या की जा रही है और यहा तक कि भूमि पट्टेदारी म निहित सिद्धातो की भी अवहेलना की जा रही है। अत उनकी मान्यता थी कि सरकार द्वारा वसूल किया जान वाला भूराजस्व एक कर है और सरकार की आवश्यकताओ के लिए उस इस ढग स वसूल किया जा रहा है, जिस ढग से कि अन्य देशो म वहा की सरकारें करती है।[6] यह एक रोचक तथ्य ह कि सरकारी प्रवक्ता प्राय इस बात पर बल देत थे कि ब्रिटिश शासक सारी भूमि पर स्वामित्व का दावा करत हुए केवल देश के भूतपूर्व शासका का ही अनुकरण कर रह थे। जी० वी० जोशी न बल दकर कहा कि यह दावा इसलिए किया जा रहा है क्योकि सभी तार्किक कठोरताओ के साथ भारतीय जीवन के तथ्यो पर पश्चिमी सिद्धाता को अविचारपूर्वक ही लागू किया जा रहा है।[63]

रानाडे और जोशी जी ने भारतीय पद्धति के भूमि लगान के रिकार्डियन आधार पर भी प्रहार किया। *सरकारी दृष्टिकोण और सिद्धात के पीछे यह धारणा काम कर रही थी* कि भारत म राज्य के किरायेदार अथवा जमीदार पूजीपति किसान है और वह 'आर्थिक किराया' चुकाते है।[64] यही बढिया भूमि के उत्पादन के और सबसे अधिक घटिया भूमि, जिस जोतकर केवल खचा पूरा होता है, के उत्पादन के बीच का मूल्य सबधी अतर है। इस परिभाषा के अनुसार जोत के मूल्य के अतगत किसान के श्रम के मूल्य के साथ ही साथ लाभ की वतमान दर पर उसकी पूजी का मूल्य भी सम्मिलित था।[65] इससे स्पष्ट था कि किराये के इस सिद्धात के अनुसार सीमात भूमि पर उत्पादन मूल्य द्वारा निर्धारित मूल्या मे किसी प्रकार की वृद्धि किए बिना तथा मजदूरी को किसी प्रकार से प्रभावित किए बिना ही राज्य भूमि के स्वामी के रूप मे भूमि के आर्थिक किराये को भूराजस्व के तौर पर हडप सकता था।[66] रानाडे और जोशी ने रिकार्डो के किराये के सिद्धात के मूल रूप की आलोचना नही की परतु उन्होंने यह मानने से इनकार कर दिया कि *भारत म इस* सिद्धात की कोई उपयोगिता है। क्लासिकी राजनैतिक अथव्यवस्था म पूजीपति किसान का किराया पूजी की प्रतियोगिता, जनसख्या के आधार तथा भूमि की विभिन्न स्तरीय उत्पादन क्षमता द्वारा निर्धारित किया जाता है।[67] रानाडे की आपत्ति यह थी कि क्योकि राज्य देश मे एकमात्र भू-स्वामी बन गया है अत खेतिहरा का प्रतियोगी मूल्य न देकर एकाधिकार के रूप म मनमाना किराया चुकाना पडता है। सरकार मनमाने ढग से जितना चाहे, किराया बढा सकती है और यह प्राय खेतिहरो के लाभो और परिश्रम पर छापा मारता है।[68] जोशी जी की इसस और अधिक मौलिक आपत्ति यह थी कि उन्होने निर्देश किया कि रिकार्डो के सिद्धात के अतगत पूजीपति किसानो की आवश्यकता है और भारत म पूजीपति किसाना का अस्तित्व ही नही। भारतीय किसान जमीदारो और *रैयतवाडी दोनो इलाको, मे अधिक लाभा स प्रेरित पूजीपति किसान की अपेक्षा भूस्वामी*

से किराये पर लेकर भूमि जातने वाला ही है। उनके अनुसार स्थिति के दो मौलिक पक्ष है (क) खेतिहर का तात्कालिक उद्देश्य आजीविका प्राप्ति है न कि निवशित पूजी पर लाभ का अजन करना है। (ख) खेतिहरो मे भूमि के लिए प्रबल प्रतियोगिता है। इसके कारण बढती हुई जनसरया क्रमश खेति योग्य खाली भूमि की उत्तरोत्तर अनुपलब्ध तथा कृपि उद्योगो की असफलता आदि हैं। इनके फलस्वरूप किसान क्रूर आर्थिक आवश्यकताओ का शिकार बन गया है और उस शीघ्र ही अपनी भूमि से हाथ धाने तथा भूमिहीन मजदूर बनने के बदले सरकार द्वारा अथवा निजी जमीदार द्वारा निधारित मनमाने किराये का भुगतान करने के लिए राजी होना पडता है, भले ही उस इसके लिए क्या न सामान्य जीवन के स्तर से भी नीचे का जीवन बिताना पडे।[69]

रानाडे और जाशी जी ने रिकार्डो के किराया सिद्वात के प्राकृतिक परिणाम अनुपार्जित आय के सिद्धात की भी आलोचना की। इस सिद्वात के अनुसार, यदि किसी भूखड पर उस समय तक निवेशित पूजी पर लाभ की चालू दर से अधिक किराया बढाया जाता है तो दोना का अतर किराये मे अनुपार्जित वद्धि कहलाएगी, जा लाभ की दर मे सामान्य गिरावट का तथा समाज की सामान्य प्रगति का परिणाम होगा। अत उस पर समाज का ही न्यायोचित अधिकार होगा न कि दूसरा के रक्त को चूसने वाल भूखड के स्वामी का।[70] रानाडे और जोशी जी का तक था कि भारतीय भमि लगान पद्धति म इम सिद्धात को लागू करन से समाज, अथव्यवस्था तथा किराया ऊचे हुए हैं और जमीदारी व्यवस्था की स्थिति स्थिर हुई है। परतु वास्तव मे एसा नही था। इग्लड म जहा पीढियो से भूमि एक ही परिवार के हाथ म रहनी आती है, वहा भारत म उसके विरुद्ध भूमि का स्वामित्व निरतर बदलता रहता है। फलत प्रत्यक नया खरीदार भूमि का पूरा ही चालू मूल्य उपार्जित और अनुपार्जित दोना का भुगतान करता है। उस प्रक्रिया म भूतकाल की अनुपार्जित आय सवथा लुप्त हो जाती है।[71] इसके अतिरिक्त जोशी जी ने टिप्पणी की कि लगान अधिकारी प्राय ही अनुपार्जित आय की खोज म बलपूवक ही वद्धि करने का रास्ता अपनाते है और इस प्रकार बेचारे किसाना की आजीविका ता ही हडप लेते हैं।[7]

उन्मुक्त व्यापार बनाम सरक्षण

राष्ट्रवादी प्रारभ से ही उन्मुक्त व्यापार बनाम सरक्षण के प्रश्न म गहरी रुचि रखत थ। 1877 मे ही अपने विस्तृत लेख 'फ्री ट्रेड एड प्रोटैक्शन', म के० टी० तैलग न एक भारतीय के दृष्टिकोण से टिप्पणी की कि यह विषय हमारे देश के समग्र भविष्य सामाजिक, राजनैतिक व औद्योगिक के साथ इतनी घनिष्टता स जुडा हुआ है कि इसके सबध म सही दृष्टिकोण को अपनाने की महत्ता स्वत सिद्ध है, इसम किसी प्रकार की अतिरजना सभव ही नही।[3]

राष्ट्रवादी नेताओ न लगभग एक मत से ही यह माग की कि देश के स्वस्थ आर्थिक विकास के हित मे भारत सरकार को देश के विकासशील उद्योग को सरक्षण देकर उनको सहायता करनी चाहिए।[74] उदाहरणाथ जी० सुब्रह्मण्य ऐयर न 1903 म लिखा कृपि

से अलग विभिन्न प्रकार के व्यवसायो को अस्तित्व मे लाना देश की अत्यधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता है और इसकी पूर्ति *सरक्षण की नीति को अपनाने के द्वारा ही हो सकती है*। जब तक तथाकथित उन्मुक्त व्यापार और असमान प्रतियोगिता की स्थिति जारी है तब तक देश ऐसे किसी उज्ज्वल भविष्य की आशा नही कर सकता, जिसे भौतिक दृष्टि सपन्न कहा जा सके। अपने देश के बाजारो मे खपत के लिए देश मे उत्पादित खाद्यान्न और कच्चे माल के निर्यात पर कर लगाने के माध्यम से उसे देश मे ही सुरक्षित बनाना तथा देशी उद्योगो के *विकास की दृष्टि से विदेशी प्रतियोगी उत्पादनो के आयात पर* प्रतिरक्षात्मक शुल्क लगाकर उस प्रतिबधित करना, यही एक मात्र नीति भारत को बचा सकती है।[5] किंतु, यह कम आश्चर्यजनक बात नही कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने अपने प्रथम बीस वर्षो के जीवन म एक बार भी सरक्षण की माग नही की। इसका कारण अशत शायद उसके अपने मित्र इग्लड के क्रातिकारियो को सतुष्ट रखने की भावना थी और *अशत ब्रिटेन के उन्मुक्त व्यापार के प्रति दृढ और निश्चयात्मक रुझान के कारण हिच-*किचाहट स्पष्टतया राजनतिक दृष्टि से इस माग को मनवाना सभव नही था।[6]

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने उन्मुक्त व्यापार को, सरक्षण के माध्यम से, भारत के औद्योगिक विकास के माग की एक प्रमुख बाधा अनुभव करते हुए भारतीय परिस्थितियो म उन्मुक्त व्यापार की उपयोगिता को निरथक सिद्ध करना प्रारभ कर दिया। उनका *कथन था कि इसके विपरीत भारत के सुदीघ और व्यापक हितो मे सरक्षण लाभदायक है* न कि हानिप्रद। इस सबध म 1877 म सवप्रथम और सर्वाधिक वैज्ञानिक प्रयास पूर्वोद्धृत लेख के माध्यम से के०टी० तलग ने किया। बाद के बहुत सारे लेखक तलग महोदय के लेख को ही आधार बनाते दिखाई देत है।

उन्मुक्त व्यापार के विरुद्ध राष्ट्रवादियो का प्रमुख तक यह था कि यह भारतीय परि-स्थितियो के अनुकूल नही है।[7] भारतीय नताओ का कथन था कि इसने इग्लैड म उपयोगी भूमिका निभाई होगी परतु यहा भारत म तो उसने उद्योग को बडी भारी हानि पहुचाई है।[8] उन्होने आगे दृढ स्वर म कहा कि वस्तुत उन्मुक्त व्यापार तो बराबर के देशो के मध्य ही चल सकता है। यहा भारत और इग्लड की स्थिति तो कुछ कुछ ऐसी है कि एक (भारत) भूखा, थका मादा (बीमार) और पगु है तथा दूसरा (इग्लैंड) केवल शक्ति-शाली ही नही प्रत्युत उसके पास सवारी के लिए घोडा भी है।[9]

कुछ एक भारतीय नताओ ने इस धारणा, म रक्षण से उपभोक्ता की स्वतत्रता और उद्यमी की स्वाधीनता प्रतिबधित होती है का भी खडन किया। उनका कथन था कि *स्वतत्रता और स्वाधीनता का अथ शायद असीमित प्रतियगिता के द्वारा भारत के विकास-*शील उद्यम का नष्ट भ्रष्ट करने की विदेशियो को खुली छूट देना नही हो सकता। वास्तव म भारतीय स्थितियो म वास्तविक स्वतत्रता सरक्षण और कृत्रिम पोषण के माध्यम से ही प्राप्त हो सकेगी, जबकि उन्मुक्त व्यापार का अथ ही अपक्षाकृत सशक्त दल इग्लड को सरक्षण प्रदान करना सिद्ध हो रहा है।[10] उपभोक्ता के लिए जहा तक सरक्षण के मूल्य का सबध है भारतीय राष्ट्रवादी नता इस बात से सहमत थे कि राष्ट्र इस भार का वहन कर लेगा क्योकि मूल्यो के, गिरावट के वेतन और नौकरी म वृद्धि के तथा राष्ट्रीय

भारत मे व्याप्त स्थितियो जैसी स्थितियो मे सरक्षण की स्वीकृति दी थी।[89] वस्तुत भारत के लिए एक विशिष्ट स्थिति के रूप मे सरक्षण की माग करने वाले अपने को सिद्धान्त रूप मे स्वतत्र व्यापारी सिद्ध करने का ही दावा कर रहे थे।[90]

भारत के मामले म सरक्षण को उचित तथा न्यायसगत सिद्ध करने के लिए भारतीय नेताओ मे से कइयो ने एक बहुत ही बढिया तक प्रस्तुत किया। उदाहरणार्थ 19वी शताब्दी के मध्य तक इग्लड मे भारतीय उत्पादको के आयात पर थोपे गए भारी करो को उद्धत करते हुए के० टी० तैलग ने दृढ स्वर म कहा, हमारे स्वदेशी उत्पादनो को नष्ट करने के लिए अपनाया गया उपाय यही सरक्षण है। उन्होने दावा किया कि सभी भारतीयो की यह माग है कि हमारे विरुद्ध तलवार के रूप मे प्रयोग किए गए शस्त्र का प्रयोग अब हमारे रक्षक के रूप म करना चाहिए।[91] इसी प्रकार आर० सी० दत्त ने जली कटी सुनाते हुए टिप्पणी की, उद्योगो के विरुद्ध सरक्षण न भारत मे जनता की उत्पादन क्षमता का समाप्त कर दिया है और उसके उपरात प्रतियोगी को पुन प्रतियोगिता मे आने से हटाने के लिए भारत पर उन्मुक्त व्यापार थोप दिया गया है।[9]

अपनी सरक्षण की माग का मजबूत बनाने के लिए भारतीय नताओ न राजनतिक आर्थिकता के सिद्धाता के बदले राष्ट्रो के व्यवहार को देखन का अनुरोध किया। उन्होने स्पष्ट निर्देश किया कि लगभग यूराप और अमेरिका के सभी स्वतत्र राष्ट्रो और यहा तक कि कनडा और आस्ट्रेलिया जैसे ब्रिटेन के अपन उपनिवेशो ने विदेशी प्रतियोगिता के खतरे के उपस्थित होने पर अपने नवजात उद्योगो को सरक्षण प्रदान किया ह।[93] उन्होने बड ध्यानपूवक यह देखा कि 18वी शताब्दी के अतिम दशको मे और 19वी शताब्दी के प्रारभिक दशको म स्वय इग्लैंड न सरक्षण की देखभाल मे ही अपने आधुनिक उद्योगो का विकास किया है। इसी सरक्षण की कृपा का ही फल था कि औद्योगिक यत्र गतिशील होकर पूर्णता के उस चरम शिखर पर पहुचा कि जहा से इग्लड स्वतत्र व्यापार के सिद्धात की घोषणा करन म समथ हो सका है।[94] आर० सी० दत्त और जी० सुब्रह्मण्य यह देखने म भी नही चूके कि जहा 18वी शताब्दी की समाप्ति के बाद से ऐडम स्मिथ जैसे ब्रिटिश अथशास्त्री उन्मुक्त व्यापार के सिद्धात का गला फाडकर प्रचार करते चले आ रहे है वहा ब्रिटिश राजनीतिज्ञो ने उन्मुक्त व्यापारी का रूप बहुत पीछे ही ग्रहण किया और वह भी तब जबकि उन्ह यह अपने अनुकूल लगा।[95] बहुत सारे राष्ट्वादी नता इस सीमा तक कहने लगे कि ब्रिटन ईमानदारी स उन्मुक्त व्यापार के सिद्धात पर विश्वास नही करता और उसका प्रयोग एक बहाने के रूप म कर रहा है। जी० वी० जोशी ने भारत म अपन उत्पादनो का धकेलने के लिए और प्रतियोगी औद्योगिक विकास को रोकने के लिए इस 'आध्यात्मिक ढाचे' का नाम दिया।[96]

उन्मुक्त व्यापार की आलोचना तथा उद्योगो के लिए सरक्षण की वकालत करते हुए भी किसी महत्वपूण राष्ट्वादी नेता ने सरक्षण के पक्ष म कट्टर सैद्धातिक नीति नही अपनाइ। इस सबध म उनका दृष्टिकोण विभिन्न सिद्धातो पर आधारित था। स्वभावत ही उन्मुक्त व्यापार की अस्वीकृति भी किसी सिद्धात विशेष पर आधृत नही थी। अन्याय आर्थिक विषयो म उनके दृष्टिकोण के समान उनकी सीमा शुल्क नीति भी सामान्य आर्थिक

के अधीन करने की प्रवत्ति ने भारतीय अथशास्त्र का विशिष्ट मूलतत्व दिया। आर्थिक विचारो और नीति के इस दष्टिकोण ने प्रारभ से ही भारतीय अथशास्त्र और भारतीय राजनीति मे घनिष्ठ सबध स्थापित कर दिए। इसने राष्ट्रीय नेताओ को इस योग्य बना दिया कि वे लगभग प्रत्येक महत्वपूर्ण आर्थिक प्रश्न को देश की राजनैतिक पराधीनता की स्थिति से जोड सकें और भारतीय वास्तविकता के इस सर्वाधिक महत्वपूर्ण राजनैतिक और आर्थिक पक्ष पर विचार कर सकें कि भारत विदेशी शासक द्वारा आर्थिक शोषण के लिए ही शासित किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त जब राष्ट्रवादी नेताओ का आर्थिक चिंतन समकालीन अग्रेजी चिंतन से आगे था और यूरोप तथा अमेरिका के चिंतन के साथ कदम से कदम मिला रहा था, जबकि वह इस बात पर बल दे रहा था कि आर्थिक विकास के विभिन्न स्तरो पर विद्यमान देशो के लिए एक से आर्थिक सिद्धातो का प्रयोग नही किया जा सकता और दृढतापूर्वक *यह माग कर रहा था कि प्रत्येक देश के लिए आर्थिक सिद्धातो का विधान सबधित देश की* सामान्य आर्थिक आवश्यकताओ के सदर्भ मे ही किया जाना चाहिए, तब भी भारतीय पद्धतियो के किसी नए आर्थिक विचार अथवा सिद्धात का उदय नही हुआ।[101] आर्थिक चिंतन के साथ 'भारतीय राष्ट्रवादी' जसे विशेषण तो अवश्य जोडे गए परतु भारतीय राष्ट्रवादी अथशास्त्रियो ने ऐसे नए आर्थिक नियमो का आविष्कार नहीं किया, जो असामान्य भारतीय परिस्थितियो की उपज हो और जिनका प्रयोग विशिष्ट भारतीय परिस्थितियो मे ही सभव हो। हम उनसे जो मिलता है वह है क्लासिकी अथशास्त्रियो और उनके परवर्ती आलोचको के चिंतन का मिश्रित रूप। वस्तुत भारतीय राजनैतिक आर्थिकता का आर्थिक चिंतन की पद्धति न कहकर 'आर्थिक चिंतन का एक दष्टिकोण' 'भारतीय आर्थिक समस्याओ पर विचार तथा आर्थिक विचार विमर्श की शली आदि नाम देना ही अधिक उपयुक्त होगा।

यह व्यापक रूप मे इस तथ्य का परिणाम है कि राष्ट्रवादी अथशास्त्रियो की आर्थिक सिद्धात मे रुचि गौण अथवा परिस्थिति से उदभूत थी। वे आर्थिक सिद्धांतो के विकास मे अथवा अथशास्त्र को भारतीय रूप देने मे रुचि रखने वाले व्यावसायिक अथशास्त्री नही थे। अत उन्होने स्वय सिद्धात के रूप मे उस पर काबू पाने की कोई चेष्टा नही की। आर्थिक सिद्धात पर उनके विचारो को वस्तुत समकालीन आर्थिक समस्याओ पर उनकी बहुत सी रचनाओ से ही निकाला जा सकता है। उनकी राजनैतिक अथव्यवस्था सवथा व्यावहारिक विचारो की ही उपज थी क्योकि भारत के शासक राष्ट्रवादियो की माग का विरोध करने के लिए क्लासिकी अथव्यवस्था का सहारा लेते थे, इसलिए भारतीय अथशास्त्रियो ने भी क्लासिकी अथव्यवस्था की सावदेशिकता को तथा भारत की परिस्थितियो मे उसकी उपयोगिता को चुनौती देना आवश्यक समझा। उनके आर्थिक चिंतन के इस अपेक्षाकृत लौकिक उदगम को उन्होने कभी-कभी जानबूझ कर अभिव्यक्ति दी। इस प्रकार उन्होने कहा कि उन्हे तटस्थता नीति के सिद्धात का खडन करना है क्योकि वह उद्योगो को राज्य द्वारा दिए जाने वाले सरक्षण के माग मे आडे आता है।[10] किराए के रिकाडियन सिद्धात का खडन उन्हें इसलिए करना पडा क्योकि इसका उपयोग भूमि लगाना की ऊची

सदर्भ

1 रानाडे एसेज, पृ० 1 39 क्लासिक अथशास्त्र पर रानाड के विचारो का प्रारभिक परिचय आगस्टस माग्रडियान के फ्री टेड ऍन इग्लिश कामस की उनकी समीक्षा से होता है ने० पी०एस० एस० जुलाई 1881 (खड IV सख्या 1) प० 50 और आगे तुलनाय मानवर पूर्वोद्धत खड I प० 214 5

2 रानाडे के दृष्टिकोण की विस्तत परीक्षा के लिए देखिए जेम्स मेनाक रानाडे एड आफ्टर इडियन जनरल आफ इक्नामिक्स जनवरी 1942 (खड XXII स० 3), भवतोश दत्त, दि बकग्राउन्ड आफ रानाडेज इकोनामिक्स वही ज० पी० कोयाजी रानाडेज चक गेज ऐज इकनोमामिस्ट वही डी० जा० कर्वे रानाडे दि प्रोफेट आफ लिबरेटेड इडिया (पूना, 1942) अध्याय 4 पी० के० गोपालकृष्णन डवलमैंट आफ इकोनामिकल आइडियाज इन इडिया (दिल्ली 1959) अध्याय 3

3 रानाडे एसेज प० 2

4 वही प० 4 5 9 10

5 वही प० 8 10 22 3 42 3 और रिव्यू आफ फ्री ट्रेड ऍड इग्लिश कामस, पूर्वोद्धत प० 51

6 एसेज प० 4 6 14 उन्होंने यह भी निर्देश किया कि भारत की समस्याए और दशाए इग्लड क अपेक्षा यरोप और अमरीकी महाद्वीपा की समस्याओ और दशाओ से अधिक मेल खाती हैं। अत महाद्वीपीय अथव्यवस्था के अध्ययन से प्राप्त शिक्षा अग्रजी राजनीतिक अथव्यवस्था की पाठ्यपुस्तको म निहित नीतिवाक्यो की अपेक्षा अधिक व्यावहारिक प्रभाव डालेगा

7 वही प० 3, 28 9 32 3 89

8 वही प० 16-21

9 वही पृ० 10 11 34-9

10 वही पृ० 6-7 16

11 वही प० 8 9

12 वही पृ० 1 5 21 2 89 90 यहा रानाडे ने इग्लड स भिन्न होने के आधार पर भारत के पाश्चात्य राजनीतिक सस्थान होने स अगरेज राजनीतिनो के इनकार करने पर तो न्याय प्रहार किया परतु आर्थिक नीतियो का चर्चा करते समय वे इस तथ्य को सवथा भूल गए (वही पृ० 2, 4-5)

13 तुलनीय क्लाक रानाडे ऍड आफ्टर, पूर्वोक्त स्थल पृ० 253 कर्वे पूर्वोद्धत, प० 54-6.

14 रानाडे एसेज प० 21

15 उन्होंने लिखा व्यापक व्यवहार का नाम ही तो सिद्धात है तथा अनुमानित कारणो क सदभ म किया गया अध्ययन ही वस्तुत व्यवहार है। सिद्धान्त का निर्णायक तत्व व्यवहार ही है वही उसका सत्यता की परीक्षा करता है तथा गहरी जड पकडे स्थाई और विभिन्न मौलिक सत्यो की मुट्ठ पकड के कारण विभिन्न परिस्थितियो का ग्रहण करता है (वही)

16 कर्वे पूर्वोद्धत प० 56 और रानाड की टिप्पणियो भी देखिए एडम स्मिथ न आर्थिक रूप और सामाजिक स्थिति को कभी पृथक करके नहीं देखा और इस प्रकार उपयोगिता की स्थिति बनाए रखा जिसे अब उनके उत्तराधिकारियो न उनके सिद्धात पर आवश्यकता से अधिक बल देते हुए छोड दिया है (एसेज पृ० 16)

17 'रिव्यू आफ "फ्री ट्रेड ऐंड इंग्लिश कामर्स' पूर्वोक्त स्थल प० 51 53-4'
18 वही, प० 56, एसेज पृ० 11 22 और आग 42 3 89
18-ए तलना फ्री ट्रेड प्रोटक्शन— फ्राम ऐन इडियन पाइट आफ व्यू (बंबई 1877) प० 47 तथा देखिए प० 2 15, 17 69
19 वही पृ० 2 3 53
20 नौरोजी पावर्टी, पृ० 136
21 राय, पावर्टी पृ० 66 सरक्षण बनाम उन्मुक्त व्यापार विवाद का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा वास्तव म उन्मुक्त व्यापार और सरक्षण समय और स्थान की स्वत सिद्ध कल्पनाए हैं। यह तो औचित्य का प्रश्न है न कि प्राकृतिक कानून का (वही पृ० 65)
22 उदाहरण के लिए देखिए, जोशी पूर्वोद्धृत, पृ० 749 808 और 886
23 दत्त ई० एच० प० 299-302 और देखिए उनकी स्पीचज II पृ० 122 5
24 जी० एस० अय्यर, ई० ए० 104-07
25 वही प० 129 30
26 वही, परिशिष्ट पृ० 4
27 वही, परिशिष्ट प० 5 उन्होंने व्यापारवाद क उदय स अतिम जमन सप्रदाय तक यूरोप म आर्थिक चितन के विकास के सक्षिप्त इतिहास की खोज की (वही, परिशिष्ट पृ० 7 22) यह भी पर्याप्त रोचक है कि जब उन्होंने व्यक्तिगत लाभ पर राष्ट्रीय विकास को गौरव दने क लिए आर्थिक सिद्धातो और उनके ऐतिहासिक आडा की सापक्षता की समथक सूचा को प्रस्तुत की, उस समय उन्होंने यह अपनी सूक्ष्म दृष्टि से देख लिया था कि यह सूचा समकालीन समाज के प्रभावी सुधार म सहायक होने के बदले व्यापारिता के नए रूप की स्थापना क लक्ष्य की ही साधक अधिक है (वही, परिशिष्ट पृ० 22 3)
28 वही परिशिष्ट, पृ० 5
29 वहा परिशिष्ट पृ० 1 2 तथा देखिए पृ० 210-1, 242, 267 और परिशिष्ट पृ० 4
30 वही, परिशिष्ट पृ० 3
31 और देखिए मराठा, 26 मार्च 1899
32 और देखिए न्यू इडिया 18 दिसबर 1902
33 एस० एम० बनर्जी स्पीचेज I पृ० 202 ए० बी० पी० 1 दिसबर 1870 सोमप्रकाश 3 अप्रैल (आर० एन० पी० बग 8 अप्रल 1882) मराठा स्टेंडर्ड 21 जनवरी (आर० एन० पी० एम० 25 जनवरी 1902)
34 नौरोजी, पावर्टी, पृ० 136 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 207 राय पावर्टी पृ० 38-9 66 न्यू इडिया 18 दिसबर 1902, जी० एस० अय्यर ई० ए पृ० 358 तथा देखिए ए० बी० पी० 6 अप्रल 1882
35 रानाडे एसेज पृ० 32 जोशी, पूर्वोद्धृत पृ० 809 जी० एस० अय्यर, ई० ए० प० 155
36 रानाडे एसेज पृ० 32 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 671 2 74 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 155 परिशिष्ट पृ० 6 गोखले स्पीचज प० 54 5
37 रानाडे एसेज प० 87 जोशी पूर्वोद्धृत प० 612 746 748 785 6, 808 जी एस० अय्यर, ई० ए० परिशिष्ट पृ० 6 रानाडे ने 1896 में यह टिप्पणी की थी "आधिर राज्य का अस्तित्व इसलिए तो है कि वह अलग अलग सदस्यों को उनके सभी प्रयत्नो म सक्षम बनाते हुए उन्हें

अधिक ऊचा अधिक प्रसन्न अधिक समृद्ध और अधिक पूर्ण बनाए दि मिसलेनियस राइटिंग्ज आफ दि लेट आनरेबल मिस्टर जस्टिस एम० जी० रानाडे (बबई 1915) पृ० 172 तथा देखिए, वही पृ० 78

38 रानाडे, एसेज पृ० 86, 90-2 जोशी पूर्वोद्धृत, पृ० 672 3, 747 8 785 6 807-09 826 हा 1877 म रानाडे के विचार अवश्य कुछ भिन्न थे। पूना सार्वजनिक सभा की ओर से डक्कन रायटस कमीशन की रिपोट पर लिखे एक पत्र म उन्होंने घोषणा की 'देश की भौतिक सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थिति मे किसी प्रकार का स्थाई परिवतन लाना सरकार की शक्ति और सामर्थ्य के बाहर है। भारतवासी किसी विदेशी अभिकरण द्वारा सुधार किए जाने म विश्वास नहा रखते। कम से कम विषय की तात्कालिकता की माग के अनुसार इतने थाड समय में तो कुछ सुधार हो पाना सभव नहीं जी० सी० एस० एस० जनवरी 1879 (खड I सख्या 3) पृ० 36 तुलनीय मानकर पूर्वोद्धृत खड 1 पृ० 213

39 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 680-3 785 6

40 रानाडे एसेज पृ० 32 तथा लोक का प्रतिनिधित्व करने वाली सरकार को लोक कल्याण की दिशा म सर्वोत्तम रूप से किए जाने वाले सभी कार्यों को अपने हाथ म लेने का अधिकार है और यह उसका तदनुरूप नैतिक दायित्व है (वही पृ० 87)

41 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 822

42 रानाडे एसेज पृ० 21

43 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 130-1 तथा देखिए वही परिशिष्ट पृ० 6 10 11

44 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 748 9

45 देखिए पीछे अध्याय 3 उदाहरणार्थ रानाडे एसेज पृ० 32 4 जोशी पूर्वोद्धृत, पृ 671 701 752 830 राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा औद्योगिक विकासपर दिए बल के लिए देखिए पीछे अध्याय 2

46 देखिए पीछे अध्याय 10

47 रानाडे एसेज पृ० 31

48 देखिए पीछे अध्याय 10 उदाहरणार्थ देखें एसेज पृ० 30-1 हा इसस पूर्व 1881 म उन्होंने राज्य द्वारा जमीदारो और किरायादारो के सबधो को नियमित करने के किसी भी प्रयास का विरोध किया था। उनके विरोध का आधार यह था कि ये मामले इतने नाजुक और इतने जटिल हैं कि इन्हे सुलझाने की बात निजी प्रयास और आपसी समझौते पर हा छोड देनी चाहिए। इस दिशा म किसी भी प्रकार के सरकारी प्रयास का परिणाम असफलता और नैतिक रूप से झूठा व अतिरिक्त और कुछ नहीं निकलेगा (दि सेंट्रल प्राविंसेज लैंड रेवेन्यू ऐंड टेनेंसी बिल्स जे० पी० एस एस० अप्रैल 1881 खड III सख्या 4 पृ० 22) और देखिए पृ० 17 तुलनीय मानकर पूर्वोद्धृत खड I पृ० 214

49 उन्होने लिखा 'प्रगतिशील सिद्धात वहा इस स्वतत्रता की अनुमति देता है जहा दो दल योग्यता और साधना म मुकाबले म बराबर के हैं। परतु जहा यह स्थिति नहा है वहा समानता और स्वतत्रता की बात कोरे मे खाज का काम करता है। ऐसी भावना स बहुत सारे जरूरतमदो और थोडे से शक्तिशालियो म उत्पादन व वितरण की व्यवस्था करनी है अर्थात न्याय और औचित्य का ध्यान रखना है। इस प्रकार के मामलो म पुरातनपथियो के अंतिम स्थिति के दृष्टिकोण को जीवन के सभी आयामो के सदभ म नए ढग से देखना होगा (एसेज पृ० 31)

50 देखिए पीछे अध्याय 8 उदाहरण के लिए ई० ए० पृ० 227 8 तथा देखिए, मराठा, 1 जुलाई 1888

51 देखिए पीछे अध्याय 8 उदाहरण के लिए ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियम 27 फरवरी 1879, फैक्टरी लेजिस्लेशन इन इंडिया जे० पी० एस० एस० जुलाई 1881 (खंड IV संख्या 1) पृ० 31 इंदु प्रकाश 9 फरवरी (आर० एन० पी० बंब 14 फरवरी 1885) हिंदू 14 मई 1889 26 मार्च 1901

52 कम से कम एक लेखक डी० जा० कर्वे यह इस गलती करने से नहीं बच सके (पूर्वोद्धृत पृ० 119 132) दूसरी और जेम्स क्लाक (रानाडे, पृ० 130) बी० दत्त (पूर्वोद्धृत पृ० 262 272), और गोपालकृष्णन (पूर्वोद्धृत पृ० 124) स्पष्ट ही इस अतर को देख सके थे

53 विशेष रूप से देखिए, एसेज पृ० 89-90 169 190 193 4

54 वही पृ० 33

55 रिपोर्ट आफ दि फाइनांस कमेटी, 1886 खंड I पृ० 407

56 जोशी, पूर्वोद्धृत पृ० 819

57 वही पृ० 746-50 820

58 वही पृ० 673-4 808 820 826 हिंदू 21 अप्रैल 1902 भी देखें

59 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 822 3

60 वही, पृ० 821 तथा देखिए पृ० 825 861 2

61 उदाहरण के लिए देखिए रिपोर्ट आफ इंडियन फमिन कमीशन 1880 भाग II वग VII कंडिका 2 रिचार्ड स्ट्रेची और जान स्ट्रेची पूर्वोद्धृत पृ० 14 5, विगनी पूर्वोद्धृत पृ० 311 कर्जन स्पीचेज I पृ० 128 रिजाल्यूशन आफ दि गवमेंट आफ इंडिया दिनांक 16 जनवरी 1902 कंडिका 9 स्ट्रेची इंडिया (1903) पृ० 120 ई० ला एन० सी० पी० 1904 पृ० XLIII पृ० 539 यह उल्लेखनीय है कि कितने ही सरकारी अधिकारी और लेखक इस व्यापक दृष्टिकोण से असहमत थे उदाहरण के रूप में देखिए लॉर्ड सलट लार्ड सलिसबरी एव० ई० सुलेवान की कार्यवाही और ल्त फमिन इन इंडिया परिशिष्ट एम० एन० ओ० बयू० में उद्धृत, भारत सरकार के संप्रेषण दिनांक 8 जून 1880 होम (पब्लिक) प्राग 45 (ए) जून 1880 बीडन पावेल पूर्वोद्धृत पृ० 49

62 माडलिंग स्पीचेज, पृ० 466 488 514-5 भारत प्रकाश 3 फरवरी (आर० एन० पी० बंब 5 फरवरी 1881) जोशी पूर्वोद्धृत, पृ० 547 8 573-4 824 887 रानाडे 'प्राग्रेस ऑफ द डिपाचर आफ गवनमेंट इन लड पालिसी' जे० पी० एस० एस० अप्रैल 1884 (खंड VI संख्या-4) पृ० 45 पूना सार्वजनिक सभा का 4 जून 1884 का पत्र जे० पी० एस० एस० जुलाई 1886 (खंड IX संख्या 1) पृ० 5 स्वदेशमित्रन 23 अप्रैल (आर० एन० पी० एम० 30 अप्रैल 1897) पी० मेहता स्पीचेज पृ० 670-2 वाचा सी० पी० ए० पृ० 570 दत्त फमिन इन इंडिया पृ० 94 और आगे, ई० एच० I पृ० 372 4 381 2 ई० एच० II पृ० 140 371 2 और देखिए नौरोजी पावर्टी पृ० 60 220-1 स्पीचेज पृ० 316, परिशिष्ट पृ० 50 182 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 223 पार्नेल्पणी राय पावर्टी पृ० 254

63 जोशी पूर्वोद्धृत पृ० 886 उन्होंने आगे कहा 'यह समाजवादी सिद्धांत इस विषय में यूरोपीय अर्थशास्त्र संबंधी अर्थसिद्धांतों का अपभ्रंश मात्र है और जिसकी व्यावहारिक अभिव्यक्ति स्थिति भारत के बाहर भूमि के राष्ट्रीयकरण के भावाग्रही आंदोलन के माध्यम से होती है (,

जोशी एक दृष्टि से सही थ न तो रिकार्डो न और न ही जेम्स मिल ने यह सुझाव देने का साहस किया कि अनुपार्जित आय मे निहित क्रांतिकारी कर नीति इंग्लिश परिस्थितियो म लागू की जाए तुलनीय, स्टोक्स, पूर्वोद्धत, प० 89 90

64 देखिए स्टोक्स, पूर्वोद्धत विशेष रूप से अध्याय 2 पृ० 108-09 114 137

65 वही पृ० 88 डविड रिकार्डो दि प्रिंसिपल्स आफ पोलिटिकल इकानोमी ऐंड टक्सेशन (एवरीमन लायब्रेरी सस्करण लन्दन 1943) अध्याय 2 और 32, एरिक रोल ए हिस्ट्री आफ इकोनामिक थाट (न्यूयार्क 1947) प० 195 6

66 स्टोक्स पूर्वोद्धत प० 77 89 93 127 8, 131 3

67 वही पृ० 135 तथा रिकार्डो पूर्वोद्धत अध्याय 2

68 रानाडे एसेज पृ० 30 लड ला रिफार्म्स एड ऐग्रीकल्चरल वक्स ज० पा० एम० एस०, अक्तूबर 1881 (खड IV सख्या 2) प० 54

69 जाशी, पूर्वोद्धत पृ० 892 4 900-01 यहा यह उल्लेखनीय है कि रानाड और जोशी जान स्टुअट के राजनीतिक अथव्यवस्था के सिद्धाता पर बहुत विश्वास करके चल रहे थ, अध्याय 10

70 स्टोक्स पूर्वोद्धत प० 89 90, रिकार्डो पूर्वोद्धत अध्याय 2 और 32, उदाहरणाय अनुपार्जित वद्धि के सिद्धात को लाड कजन के 16 जनवरी 1902 के भूमि प्रस्ताव म भी स्पष्ट अभिव्यक्ति मिली देखिए कडिका 18 22.

71 रानाडे एसेज, पृ० 29 30 जोशी पूर्वोद्धत पृ० 363 894 6

72 जोशी पूर्वोद्धत, पृ० 894 901 इस सरकारी तक पर कि सरकार के सारे समाज के न्यासधर होने के नाते उसके लिए लगान म अनुपार्जित वद्धि का समाज के एक छोटे से वग विशप के लाभ के लिए छोडना कहा का न्याय होगा, टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा काश खेतिहर जनसख्या का एक छोटा अश होते ? (वही पृ० 902) यह सचमुच व्यगात्मक भल न हो परतु विचित्र स्थिति अवश्य है कि इग्लड म मुट्ठी भर जमीदारो के शोषण से विशाल जन समुदाय को बचाने क लिए इग्लड के लेखक रिकार्डो द्वारा दिए गए सिद्धात का भारत म समाज क हित के नाम पर जनता के विशाल समुदाय पर ऊचे कर थोपने के लिए प्रयोग किया जा रहा है

73 पृष्ठ 1

74 भोलानाथ चन्द्र, एम० एम० जून 1873 (खड II) प० 99 109 235 नौरोजी, पावर्टी पृ० 62 तलग फ्री ट्रड ऍड प्रोटेक्शन पृ० 32 62-4 69 70 जोशी पूर्वोद्धत प० 680-2 749 रानाडे एसेज प० 25, राय पावर्टी अध्याय 1 (विशेष रूप से पृ० 44 51), गोखले वितवी कमीशन खड III प्रश्न 18165 7 पी० मेहता स्पीचज पृ० 750, दत्त, इग्लड ऍड इडिया प० 133 स्पीचेज II पृ० 127 8 इन इडिया 27 नवबर 1903 जी० एस० अय्यर ई० ए० पृ० 101 107 255 345 6 349 50 ईस्ट ऍड वस्ट अगस्त 1903 प० 884 पर एस० एन० बनर्जी रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ० 136 सी० पी० ए० पृ० 636 जी० आर० एम० चितनवीस एल० सी० पी० 1894 खड XXXIII पृ० 156 पी० ए० चारलु, एल सी०पी० 1899 खड XXXVIII पृ 178 9, वाचा स्पीचज पृ० 442 रास्त गुफ्तार 24 माच (भार० एन० पी बब 30 मार्च 1878) गुजरात मित्र 7 अप्रल (वही 13 अप्रल 1878) मराठा 12 19 जून 4 दिस० 1881 26 माच 1882, 11 अप्रल 1897 26 मार्च, 21 अप्रैल 1899 11 नवबर 1900 30 माच 1902 वर्त्त समाचार 8 जुलाई (आर० एन० पी० बब 9 जुलाई 1881) ए स्टेटमट आफ इडियन कवश्चस ज० पी० एम० एस० जुलाई

88 तत्रग पूर्वोक्त स्थल प० 36 7

89 तलग पूर्वोक्त स्थल प० 67 मराठा 19 जून 1881 ए० बा० पी० 6 अप्रल, 1882, रानाड, एसेज प० 25 राय पावर्टी प० 45 6 एस० एन० बनर्जी रिप० आई० एन० सी०, 1896, प० 136 दत्त इडिया 27 नवबर 1903 म

90 जोशी पूर्वोद्धत प० 822 पी० महता स्पीचेज प० 750 वाचा रिप० आई० एन० सी० 1895 प० 159 स्पीचेज प० 422 पी० मेहता स्पीचेज, की भूमिका प० 14 और तलग स्पीचज प० XI XII नौरोजी पावर्टी (प० 62) की भूमिकाए सी० पी० ए०, प० 881 एल० एम० घोष सी० पी० ए० प० 754 और दखिए वर्के पूर्वोद्धत प० 134

91 उन्होने यहा तक कहा कि भारत म सरक्षण इग्लड के प्रति अन्याय नहा होगा। यदि यह अन्याय हो भी तो उसकी क्षतिपूर्ति हो जाएगी अत वह लागू किया जा सकता है (पूर्वोक्त स्थल प० 63 4) और दखिए पी० मेहता स्पीचज प० 750

92 दत्त ई० एच० I प० 302 दत्त न अपनी 'इकानामिक हिस्टरी आफ इडिया पुस्तक के दानो खडा म तथा अपन अनेक भाषणो और लेखा म इस विवरण को विस्तार के साथ प्रमाणित किया और दखिए ए० बी० पी०, 30 माच 1882 जी० एस० अय्यर, ई० ए० प० 106 242 3 वाचा सी० पी० ए० प० 623 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए०, प० 692 6

93 ए स्टेटमट आफ क्वश्चस ज० पी० एस० एस० जुलाई 1881 (खड IV स० 1) प० 15 ए० बी० पी० 30 माच 6 अप्रल 1882 रानाडे एसज प० 25 राय पावर्टी प० 58 66 मराठा 17 जनवरा 1886 11 अप्रल 1897 11 नवबर 1900 दत्त ई० एच० I प० 302 इण्डिया 27 नवबर 1903 एस० एन० बनर्जी सी० पी० ए० पृ० 696 जी० एस० अय्यर इ ए० प० 104 05 109 245 328 ए० प० 526 एस० एन० बनर्जी इन सी पा० ए० प० 696 जी० एस० अय्यर ई० ए० प० 104-05 109, 245 328

98 तलग पूर्वोक्त स्थल प० 65, राय पावर्टी प० 53 8 मराठा 11 अप्रल 1897 दत्त इडिया *27 नव० 1903 जी० एस० अय्यर ई० ए०, प० 244 5 328 ईस्ट ऐंड वस्ट अगस्त 1903* प० 884 एन० जी० चन्दावरकर सी० पी० ए० प० 526 एस० एन० बनर्जी सी० पा० ए० पृ० 696

95 दत्त ई एच० I प० 302 जी० एस० अय्यर ई० ए पृ० 252 3

96 जोशी पूर्वोद्धत प० 674 मराठा 17 जनवरी 1886 एस० एन बनर्जी रिप० आई० एन० सी० 1896 पृ 136 राय पावर्टी प० 39 दत्त इडिया 27 नवबर 1903 जी एस० अय्यर ई० ए० प० 116 7 258 9 329

97 दत्त स्पीचज II पृ० 127 इसी प्रकार 22 नवबर 1903 के अक म मराठा न घोषणा की कि भारत न तो उन्मुक्त व्यापार चाहता है न ही शुद्ध सरक्षण वह तो दोना का इस रूप म चाहता है जिससे वतमान परिस्थितियो के सर्वाधिक अनुकूल उसकी राष्ट्राय अथव्यवस्था म सुधार हो सके और देखिए रानाडे रिव्यू आफ फ्री ट्रड ऐंड इग्लिश कामस पूर्वोक्त स्थल पृ० 56 जाशी पूर्वोद्धत पृ० 822 राय पावर्टी प० 65

98 ट्रिब्यून 1 अप्रल (आर० एन० पा० पी० 12 अप्रल 1902) मराठा 5 जुलाई 1903 इण्डियन पीपुल 16 अक्तूबर 1903 हिंदू *27 नवबर 1903 एच० आर० नवबर 1903 प 442* बगाली 13 फरवरी 1904

99 प० 441

आर्थिक राष्ट्रीयतावाद

वस्तुस्थिति यह है कि कोई भी राष्ट्र एक ही समय विजेता राष्ट्र और परोपकारी राष्ट्र नही बन सकता।

अमत बाजार पत्रिका 22 फरवरी 1892

आप अपने ब्रिटिश शासन के ईमानदार समथक होने की घोषणा करते ह और उस शासन को बनाए रखने के लिए अनिवायत अपेक्षित तथा अविभाज्य स्थितियो और परिणामो की घोर निंदा करते हैं।

जाज हैमिल्टन

भारत मे ब्रिटिश राज्य के स्वरूप और उददेश्य का विश्लेषण

हमारे अध्ययन के अतगत अवधि मे भारतीय राष्टवादी नताओ द्वारा ब्रिटिश शासन के प्रति अपनाए गए दष्टिकोण का निधारक तत्व अतत उसके स्वरुप और उद्देश्य का बोध था। उनमे से अधिकाश के बारे म यह जानकारी सैद्धातिक तक वितक अथवा कोरी कल्पनाओ से प्राप्त नही थी। उनका सच्चा और व्यावहारिक ज्ञान ही उनकी धारणा का मूल आधार था। उनकी इस जानकारी का एक क्षेत्र आर्थिक नीतिया थी। समकालीन प्रशासन और राजनीति म सबधित लगभग प्रत्यक आर्थिक विषय पर एक ओर स्वय भारतीयो के बीच आपसी विचार विमश का और दूसरी ओर भारतीयो तथा शासको के बीच हुए तक वितक का इस मौलिक राजनैतिक जानकारी पर प्रभाव पडा। अत म आर्थिक नीतियो और विशषत भारत की दरिद्रता के कारणो और परिणामी उपचारो के सबध मे उत्पन्न विविध वादविवादो से राष्ट्रवादी नताओ के अनेक बडे वर्गों जी० के० गोखले, जी० वी० जोशी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, डी० ई० वाचा और आर० सी० दत्त आदि को हिचकिचाहट व अस्पष्ट रूप से तथा दादा भाई नौरोजी बी० जी० तिलक जी० सुब्रह्मण्य एयर, अमृत बाजार पत्रिका और मराठा तथा अन्य अनक राष्ट्रवादी पत्र पत्रिकाओ आदि जैसो को साफ तौर म, यह विश्वास करने को विवश होना पडा कि कुल मिलाकर भारत म ब्रिटिश

आर्थिक मामला के सबध मे कृतनता और प्रशसा का स्थान निरतर की जाने वाली शिकवा शिकायत और दोष निकालन की प्रवृत्ति ने ले लिया।[3] भारतीय नेता यह शिकायत करने लगे कि निधनता इस देश मे जड पकड रही है। सरकारी राजस्व अधिकारियो द्वारा किसान को लूटा खसूटा जा रहा है। स्वदेशी उद्योगो को नष्ट कर दिया गया है और आधुनिक उद्योग को जानबूझकर निरुत्साहित किया जा रहा है अथवा कम स कम पर्याप्त प्रोत्साहन नही दिया जा रहा है, देश के लिए आवश्यक खाद्य सभरण का निर्यात किया जा रहा है। भारतीय उद्योग और कृषि के हितो के विरुद्ध ही मुद्रानीति अपनाई जा रही है। विदेशियो के स्वामित्व वाले बागान उद्योगो मे भारतीय श्रमिक को दास बनाया जा रहा है भारतीय राजस्व और कृषि विकास की आवश्यकताओ की उपेक्षा करके रेलो का विस्तार किया जा रहा है। कराधान का भार लोगो को निचोड रहा है। लोकवित्तो का राष्ट्र निर्माण के विभागो से हटाकर इतर भारतीय हितो के पोषण म, अनावश्यक आजीविका जुटान मे तथा विस्तारवादी युद्ध लडने म खच किया जा रहा ह। अतिम, सबस भारी शिकायत उन्ह यह थी कि भारत स सपत्ति और पूजी की निकासी की जा रही है। वे यह अनुभव करन लगे कि य सभी आर्थिक दोष प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप म भारत म बरती जा रही ब्रिटिश आर्थिक नीति क ही परिणाम थे। यदि भारतीय आर्थिक जगत असगठित ह तो व्यापक रूप स इसका दायित्व ब्रिटन पर ही है। इस प्रकार इन राष्ट्रवादी नताओ की दृष्टि म ब्रिटिश राज्य के भूतकाल के और वतमान काल के अन्य सभी लाभ आर्थिक अवगति के सामन निरथक स हो जात ह।[1] विश्वास के इस भग ने न केवल ब्रिटिश शासन के परिणामो के सबध मे प्रश्न करने प्रारभ कर दिए, प्रत्युत 'क्यो', और किस लिए यह स्थिति है इस पर भी विचार करना प्रारभ कर दिया भारत न भौतिक प्रगति क्यो नही की ? इस सबध म प्रारभिक आशाओ की पूर्ति क्यो नही हुई ? इस असफलता क लिए कौन उत्तरदायी है ? क्या भारत को यह क्षति अनजाने पहुची है अथवा जानबूझकर कर पहुचाई गई है ? दूसर शब्दो म भारत मे ब्रिटिश शासन का उद्देश्य क्या था ? निष्कप रूप म ब्रिटिश राज्य के परोपकारी स्वरूप म उनका विश्वास उठने लगा और उन्ह यह दिखाई दन लगा कि ब्रिटिश शासन भौतिक विकास की दृष्टि मे भारत क लिए हानिकारक ही रहा है।

जैसाकि सर्वविदित है विशाल सख्या म भारतीय नेता वर्षो तक यह विश्वास करत रह कि भारत की आर्थिक दुगति का कारण ब्रिटिश जनता ब्रिटिश ससद और ब्रिटिश शासक वग द्वारा भारत की स्थिति से भली प्रकार परिचित न होना है अथवा अधिक स अधिक यह सब ब्रिटेन की दलगत राजनीति का फल है और उसके परिणामस्वरूप गलत नीतियो का प्रवतन होता है और नौकरशाही द्वारा सही नीतियो तक को भी गलत ढग स लागू किया जाता है। इसके अतिरिक्त अशत स्वय नताओ द्वारा अपन ही दश म गलत नीतियो को अपनाया जाना है। दूसरे शब्दो म भारत क आर्थिक पिछडेपन के लिए शासको का अज्ञान अथवा निणय म गलतिया अथवा अधिक से अधिक लोकतत्रीय राजनीति के दोष ही उत्तरदायी थे न कि किसी प्रकार की सोच समझकर निर्धारित की गई नीति अथवा इच्छा का यह परिणाम था। अत इन राष्ट्रवादी नेताओ क लिए तसल्ली का मुख्य

कभी तो एक ही सास मे ब्रिटिश स्वार्थपरता को उजागर करते रहे तथा ब्रिटिश के दूसरो की उन्नति के लिए मिशनरी भाव म अपनी आस्था की भी पुष्टि करते रहे, उन्हे अपने राजनैतिक विश्वास और आर्थिक बोध के बीच न सुलझ सकने वाला अतर विरोध दिखाई ही नहीं दिया। उदाहरणार्थ दादा भाई नौरोजी ने भारत मे ब्रिटिश शासन को 'अन ब्रिटिश' कहकर ऐसा किया।[10] तृतीय, समाचार पत्रो ने प्राय ही जन नेताओ की अपेक्षा सामान्य राष्ट्रवादी नेताओ की भावनाओ को अधिक सुस्पष्ट, अधिक प्रत्यक्ष और अधिक साहसपूर्ण अभिव्यक्ति दी। इन पत्रो ने आर्थिक प्रश्नो पर और उनके राजनैतिक परिणामो पर लोकप्रिय राष्ट्रीय धारणा को विकसित करने तथा उसे एक विशेष रूप देने म महत्व पूर्ण योग दिया। किसी भी स्थिति मे यह कहा जा सकता है कि जहा तक बहुसख्यक भारतीय राष्ट्रीय नेताओ व जनता का सबध है, भारतीय नेताओ के सभी वर्गो द्वारा आर्थिक नीतियो से सबधित चलाये गए आदोलन ने ही ब्रिटिश सरकार के उपकारिक्ता के भ्रम को तोडा।[11] ब्रिटिश राजनीतिज्ञो और भारतीय राष्ट्रवादी नेताओ ने इस रहस्य को भली प्रकार समझ लिया था कि ब्रिटिश सत्ता का रहस्य केवल शारीरिक शक्ति न होकर नैतिक शक्ति भी था। यह सत्ता खाली तलवार पर टिकी हुई नही थी, जिसस उन्होने इस देश को विजित किया था प्रत्युत जनता की लगातार सहमति पर भी आधारित थी।[1] केवल राजनैतिक और भावनात्मक अपीले ब्रिटिश राज्य के नैतिक आधार को कमजोर नही कर सकती थी। व अधिक स अधिक ब्रिटिश राज्य की परोपकारी निरकुशता के तौर पर निदा कर सकती थी।[13] सत्य तो यह है कि बहुत सारे ब्रिटिश प्रशासको और राजनीतिज्ञो न अपने शासन के निरकुश स्वरूप को प्रसन्नतापूर्वक न केवल अभिस्वीकार किया प्रत्युत उसका समर्थन भी किया। उनका दावा केवल यह था कि शासन की निरकुशता, मकाले का मुदत शाही निरकुशतावाद अथवा जिसकी प्रसिद्धि पैतृकवाद के रूप म हुई, लोकोपकारिता के लिए आवश्यक थी और यह 'शक्ति' के बिना सभव नही थी।[14] किसी भी स्थिति मे राजनैतिक स्वतत्रता का अभाव सबके सामने था परतु यह अभाव एक राजनैतिक दोष था, जिस विशुद्ध रूप मे उन सीधे सादे लोगो को दिखाया जाना था, जो अपने आप मे इस बुराई को नही देख सकते थे। अत ब्रिटिश राज्य के दानो शुभपरिणामो और शुभ भावनाओ के रूप मे लोकोपकारी चरित्र के प्रति लोकप्रिय विश्वास को क्रमश क्षीण करने वाली आर्थिक नीतियो स सबधित राष्ट्रवादी आन्दोलन का अपना एक ऐतिहासिक महत्व है। इसस राजनैतिक वफादारी के क्षेत्र म अनिवार्यतया विश्वास की भावना क्षीण होने लगी। बहुत सुलझे हुए नेता भले ही कुछ कहते रहते, इस आदोलन की अवधि म शासन पर लगाए गए आरोपो की प्रवृत्ति के कारण जनसाधारण के मन मे वफादारी की भावना रह नही सकती थी।[15] इस आदोलन म सभी राजनैतिक विचार धारा के नेता, मृदु प्रकृति के दादा भाई नौरोजी रानाडे, दत्त गोखले और जोशी से लेकर उग्रवादी तिलक दानो भाई शिशिरकुमार और मोतीलाल घोष और असख्य राष्ट्रवादी समाचारपत्रो, न समान रूप म भाग लिया। इस रूप म यह कहना सर्वथा न्यायसगत होगा कि सभी राष्ट्रवादी नेताओ न विद्रोह का नहीं तो असतोष का बीज अवश्य बोया। वस्तुत उन दोनो के बीच कदाचित वास्तविक अतर केवल यह था कि जहा कुछ एक

जानते हुए भी राजद्रोही थे, वहां दूसरे वफादार थे और अपनी राज्यभक्ति का ढिंढोरा पीटते थे और ब्रिटिश राज्य को स्थायी रूप देने के इच्छुक थे। एम जोग व्यक्तिगत रूप से ब्रिटिश राज्य के अंतिम दिनों तक वफादार बने रहे परंतु उन्होंने जहां भी उपयुक्त समझा, वहां ही वस्तुगत रूप में ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें काटने में कोई कसर नहीं छोड़ी। वस्तुतः वे राजद्रोह के मूलाधार थे और यही प्रधान कारणों में से एक कारण है कि 1880 1905 की अवधि को बौद्धिक असंतोष और राष्ट्रीय जागरूकता के प्रसार आधुनिक राष्ट्रीय आंदोलन की शुरुआत का काल कहा जाता है।

यह भी एक पर्याप्त रोचक तथ्य है कि बहुत सारे समकालीन सरकारी अधिकारियों और ब्रिटिश राजनीतिज्ञों ने इस तथ्य को भली प्रकार समझ लिया कि अपने युग के राष्ट्रवादियों में सर्वाधिक मृदुभाषी नेता भी यही भूमिका वस्तुगत रूप से निभा रहे थे। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि मृदु और समझौतावादी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस भी अपनी सरकार में उपलब्ध दोषों के प्रति निरंतर आलोचनात्मक रवैया का दमन के बजाय उन्हें अच्छी तरह उघाड़ने की, प्रवृत्ति के कारण परिवर्तित रूप लेती जा रही थी। इस प्रकार उदाहरण के रूप में भारत सचिव जार्ज हैमिल्टन ने 1897 में कांग्रेस की भारतीय प्रशासन पर प्रहार करने का कोई अवसर न खोने के लिए तथा भारत की जनता पर उस प्रशासन के प्रभाव को क्षीण करने के प्रयास के लिए आलोचना की।[16] जनरल चिसनी ने तो कांग्रेस को पूर्णतः 'राजद्रोही' बताया।[17] राष्ट्रवादी प्रेस की भूमिका के संबंध में 1886 में डफरिन ने लिखा कि "इस ढंग से निस्संदेह इन पत्रों के पढ़ने वालों के मन में एक भावना जड़ जमाती जाएगी कि हम अंग्रेज सामान्यतया मानव जाति के और विशेषतया भारतीयों के कट्टर शत्रु हैं।[18]

आर्थिक साम्राज्यवाद का विरोध

1880 1905 की अवधि में भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं द्वारा आर्थिक नीति के जिस स्वरूप की वकालत की गई उसने इन वर्षों को 'आर्थिक राष्ट्रीयतावाद' के युग का नाम दे दिया। इन नेताओं के अनुसार भारतीय जनमानस को सर्वाधिक प्रभावित करने वाली समस्या आर्थिक समस्या थी जिसे निर्धनता का नाम दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यह एक राष्ट्रीय समस्या थी, अर्थात् यह भारतीय समाज के सभी वर्गों के हितों को बुरी तरह से दुष्प्रभावित करती थी। इससे भी कहीं बढ़कर बात यह थी कि भारतीय नेताओं ने इस निर्धनता का दायित्व न तो प्रकृति पर डाला और न ही भारतीय समाज पर, प्रत्युत इसके लिए विदेशी शासकों को ही उत्तरदायी ठहराया। उन्होंने निर्धनता से छुटकारे के कुछ उपचार सुझाए परंतु उन्हें स्वीकार नहीं किया गया। इसका परिणाम यह निकला कि बहुत सारे नेता शासकों की ईमानदारी पर संदेह करने लगे और यह अनुभव करने लगे कि भारत द्वारा आर्थिक दृष्टि से उन्नति न कर पाने का मूल कारण विदेशी शासकों का और उनकी नीतियों का अस्तित्व ही है। वे यह मानने लगे कि जब तक देश सर्वप्रथम इन यूरोपीय शासकों से छुटकारा नहीं पा लेता तब तक राष्ट्रीय आर्थिक पुनरुद्धार हो ही नहीं सकता।

भारतीय नेताओं द्वारा सुझाए गए उपचारों अथवा उनकी आर्थिक नीतियों का स्वरूप साम्राज्यवाद विरोधी था। वे ब्रिटेन और भारत के मध्य चालू आर्थिक सबधों में मौलिक परिवर्तन चाहते थे। यहाँ तक कि जहाँ उनकी राजनैतिक मांगें मृदु थी वहाँ उनकी आर्थिक मांगें क्रांतिकारी रूप से राष्ट्रीय थी। उनकी आर्थिक नीतियों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्हे भारत पर ब्रिटिश के प्रभुत्व अथवा आधुनिक साम्राज्यवाद की पद्धति के जटिल आर्थिक तत्र की गहरी जानकारी हो गई थी। आर्थिक विकास के गठन के अतर्गत सभी आर्थिक प्रश्नों की शृंखला पर विचार करने के तथा समग्र रूप में उनके पारस्परिक सबधों के मदन में अध्ययन करने के उपरात ही उन्होंने यह सारी जानकारी प्राप्त की। इसके पश्चात इस पद्धति पर आधृत लगभग सभी आर्थिक नीतियों का ही उन्होंने विरोध किया। उन्होंने समकालीन आर्थिक शोषणों के तीन रूपों पर विशेष ध्यान दिया, वाणिज्य के माध्यम से, उद्योग के माध्यम से तथा वित्त के माध्यम से, और उन्होंने स्पष्ट रूप से समस्या की जड को पकडा कि ब्रिटिश आर्थिक साम्राज्यवाद का उद्देश्य भारत की अर्थ व्यवस्था को ब्रिटेन के अधीनस्थ करना है। विदेशी शासकों द्वारा भारत में उपनिवेशवादी अर्थव्यवस्था की मूल चरित्रगत विशेषताओं को निम्नलिखित रूप से विकसित करने की चेष्टा का भारतीय नेताओं ने बडी तीव्रता से विरोध किया भारत को कच्चे माल के पूरक देश का रूप देना, ब्रिटिश उत्पादनों की मण्डी बनाना तथा विदेशी पूजी के निवेश का क्षेत्र बनाना। उन्होंने देश के औद्योगिक विकास में सहायक होने के बदले घातक सिद्ध होने तथा देश की औद्योगिक परागति में और अधिक वृद्धि करने वाले सिद्ध होने के कारण सरकार की सीमा शुल्क, व्यापार परिवहन और कराधान की नीतियों का विरोध किया। इन नेताओं में बहुतो ने तो दोनों, राजनैतिक तथा आर्थिक, आधारों पर रेलो, बागान और उद्योगों में बडे पैमाने पर विदेशी पूजी के आयात का तथा सरकार द्वारा इन क्षेत्रों को दी गई सुविधाओं का विरोध किया। सेना और असैनिक सेवा पर हो रहे व्ययों पर प्रहार करते हुए उन्होंने ब्रिटिश सर्वोच्चता के भौतिक आधार को ही चुनौती दे डाली। सरकार की भूमि लगान और कराधान की नीतियों पर प्रहार करते हुए उन्होंने ब्रिटिश शासन के आर्थिक आधार को कमजोर करने की चेष्टा की। उन्होंने भारतीय सेना और भारतीय वित्त के एशिया और अफ्रीका में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रसार के लिए प्रयोग को आर्थिक शोषण का एक अन्य रूप बताते हुए उसकी निंदा की। कुछ नेता तो इस सीमा तक बढ गए कि वे स्वय ब्रिटिश शासन के खर्चे के सारे भार को भारतीय वित्त पर डालने के औचित्य पर ही प्रश्न करने लगे। निकासी के प्रश्न को तो उन्होंने साम्राज्यवादी प्रवृत्ति के आर्थिक दृष्टिकोण का सजीव उदाहरण बताया। उन्होंने साधारण लोकप्रिय परतु सशक्त भावनाओं के अनुसार इस विदेशी आर्थिक शोषण का प्रतीक बताया।

उनकी सभी आर्थिक मांगों का अतत मूल आधार यह इच्छा थी कि वास्तविक राष्ट्रीय आर्थिक नीति का निर्धारण इग्लैड के नहीं प्रत्युत भारत के हितों के ही सदर्भ में किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त आर्थिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वे भारतीय आर्थिकता की इग्लैड की अधीनता को कम करने और यहाँ तक कि समाप्त करने की

साधना मे वद्धि की जा सके। उन्होने सरकारी राजस्व को इस प्रकार से व्यय करने पर बल दिया जिससे समाज के अधिक से अधिक लोगो को अधिक से अधिक लाभ मिल सके। यह ठीक है कि उन्होने कृषक वग अथवा श्रमिक वग की मागो को अलग से नही उठाया, न ही उन्होने जमीन की पटटेदारी की चालू प्रथा मे किसी प्रकार के सुधार की माग को उठाया और न ही कारखाने के कमचारियो की आवश्यकताओ को वाणी दी। यहा तक कि यह तत्व परवर्ती समय मे भी राष्ट्रवादी आदोलन की एक दुबलता का ही सूचक है परन्तु उनका यह विवेकपूण दृष्टिकोण था क्योकि उनका विश्वास था कि इस देश के समाज के सभी वग ब्रिटिश राज्य मे आर्थिक दृष्टि से पिछडे हुए हैं और उनके आदोलन के फलस्वरूप होने वाले राष्ट्रीय आर्थिक पुनरुद्धार के व्यापक कायक्रम से सभी को लाभान्वित होना आवश्यक है।[19] उनका विचार था कि जब वे सारे ही राष्ट्र के लिए आर्थिक न्याय और समानता की प्राप्ति के सघष मे सलग्न थे वे वर्गों मे न्याय और औचित्य के प्रश्न को न ही उठाए तो अच्छा है। उन्होने ऐसा कोई काम न करने का निश्चय किया जिससे लोगो मे अलगाव की भावना पनपे जब कि समय की माग सभी लोगो को एक राष्ट के रूप मे सगठित करने की थी। इस परिप्रेक्ष्य मे, जो उस समय निश्चित रूप से सही था, उन्हे समकालीन यथाथता के अन्य पक्षो की उपेक्षा करने के लिए ही विवश किया। भारत की अथव्यवस्था की दुबलताओ की उनके द्वारा विवेकपूण पकड का ही यह परिणाम था कि उन्होने अपना सारा ध्यान, सारा चिंतन भारत को औपनिवेशिक ढाचे पर ही केंद्रित किया। इस कारण से कम से कम बौद्धिक प्रकाश की प्रथम चकाचौंध मे भारत के आतरिक सस्थागत ढाचे की दुबलताए उनके ध्यान से ओझल ही हो गई और वे यह न सोच सके कि वे राष्ट्रवादी दृष्टिकोण की सीमाओ के अतगत दलित वर्गों और समुदायो के हितो के रक्षण के लिए बहुत कुछ कर सकते थे। इसका अथ यह कदापि नही कि उन्होने इस दिशा मे कुछ किया ही नही। अपने द्वारा निर्धारित सीमाओ के अतगत उन्होने विशेषत किसानो और श्रमिको के कल्याण के लिए आदोलन किया। उदाहरण के रूप मे उन्होने बागान मजदूरो के सरक्षण के लिए व्यापक और प्रबल राजनैतिक आदोलन किया, यहा उनके इस काय मे भारतीयो के किसी अन्य हित के साथ कोई टकराव नही था क्योकि इन श्रमिको के नियोजक बागान मालिक विदेशी थे। यहा यह भी उल्लेखनीय है कि 19वी शताब्दी के अत मे कई राष्ट्रवादी नेताओ के दृष्टिकोण मे नया श्रमिक समथक रूप दिखाई देने लगा था। किसानो के मामले मे उन्होने भूमि लगानो को कम करने और स्थायी बदोबस्त करने के लिए निरतर और अत मे थोडा सफल आदोलन किया। बहुतो ने जमीदारो द्वारा बहुत ऊचे लगान लगाए जाने के विरुद्ध किसानो को सरक्षण देने की वकालत की।[20] इसके अतिरिक्त उनका विश्वास था कि उनका मुख्य सबध किसानो की दरिद्रता से था, वह किसान उनके सारे आर्थिक आदोलन मे लगभग अदृश्य मानव के रूप मे विद्यमान था। शायद ही कोई राष्ट्रवादी माग थी जिसका अनत किसानो की सहायता से कोई सरोकार नही था। राष्ट्रवादी नेताओ का विश्वास था कि जिस प्रकार आर्थिक साम्राज्यवाद का प्रमुख शिकार किसान था, उसी प्रकार राष्ट्रीय आर्थिक विकास का वह प्रमुख लाभ प्राप्त करने वाला होगा। कुल मिलाकर राष्ट्रीय

नेताओं का कृषि संबंधी दृष्टिकोण उनकी आर्थिक नीतियों की कदाचित प्रधान दुर्बलता ही रहा।

इसके साथ ही यह तथ्य भी यहां ध्यान देने योग्य है कि जहां भारतीय नेताओं ने किसानों और श्रमिकों के वर्गगत हितों की वकालत करना स्वीकार नहीं किया, वहां उन्होंने उनमें से अधिकांश के अपने ही संबंधित वर्ग शहरी शिक्षित मध्य वर्ग, के संकुचित हितों के विरुद्ध जाने वाली नीतियों को प्रस्तावित करके एवं बहुत ही ऊंचे स्तर की परोपकारिता के सिद्धांत का पालन किया। दूसरे शब्दों में उनकी आर्थिक नीतियां रोजगार तलाश करने वाले मध्यवर्ग के हितों से प्रेरित नहीं थीं। यह परिणाम उनकी आर्थिक नीतियों के अध्ययन का ही निष्कर्ष है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि यद्यपि मध्यवर्ग विदेशी वस्त्रों का प्रधान उपभोक्ता था तथापि उन्होंने कपास पर आयात शुल्क हटाने की मांग की उन्होंने उद्योगों के संरक्षण की मांग की। इसका मूल्य भी अंततः इसी वर्ग को चुकाना पड़ता। यद्यपि बढ़िया दानेदार चीनी का उपयोग इसी वर्ग द्वारा अधिकांशतः किया जाता था तो भी दानेदार चीनी पर लगे कर के औचित्य का इस वर्ग के बहुत सारे नेताओं ने समर्थन ही किया। यद्यपि विदेशी सामान अपेक्षाकृत अधिक सस्ते थे तो भी इन लोगों ने स्वदेशी का प्रचार किया। उन्होंने रुपये के अवमूल्यन का स्वागत किया यद्यपि इसका स्पष्ट अर्थ यह था कि आयातित विदेशी सामान के खरीदार होने के नाते इस वर्ग के सदस्यों को, निश्चित आय वाले शिक्षित कर्मचारी होने के कारण रुपये के किसी प्रकार के अधिमूल्यन से लाभ और अवमूल्यन से हानि ही संभावित थी। बहुतों ने आयकर का समर्थन और नमक शुल्क का विरोध किया। वे ऊंचे वेतनों में कटौती और निम्न वेतनभोगियों, चपड़ासियों, सिपाहियों और क्लर्कों, के वेतनों में वृद्धि चाहते थे। उद्योग की उन्नति और लोक हितकारी गतिविधियों के लिए वे ऊंचे कराधान की वकालत करने को प्रस्तुत थे। उन्होंने मध्यवर्ग का आराम पहुंचाने वाले रेलों के विकास का विरोध किया और उसके बदले सिंचाई और उद्योग के विकास का पक्ष ग्रहण किया। बहुत सारे राष्ट्रवादियों ने विदेशी पूंजी से राष्ट्र के विकास का विरोध किया यद्यपि इस विकास से शिक्षित भारतीयों के लिए आजीविका के अनेक नए क्षेत्र उपलब्ध होते थे। उन्होंने मुकदमेबाजी द्वारा किसानों का सर्वनाश करने वाली ब्रिटिश द्वारा निर्मित कचहरियों का स्थान समझौता न्यायालयों अथवा ग्राम पंचायतों को देने के लिए सक्रिय आंदोलन किया। यह ठीक है कि उन्होंने कुछ एक शहरी मध्यवर्गीय और उच्चवर्गीय लोगों की कुछ एक मांगों को उठाया परंतु भारतीय समाज के सभी वर्गों की आर्थिक मांगों के आधार पर किए जा रहे आंदोलन के एक अंग के रूप में ही यह सब कुछ किया।

इस संबंध में दोनों, भारतीय और विदेशी लेखकों द्वारा एक गलती प्रायः ही यह की जाती है कि प्रारंभिक भारतीय राष्ट्रवादी लेखकों लोक नेताओं पत्रकारों और चिंतकों को भारत के नए वर्गों के और भारतीय राष्ट्रीयतावाद के बौद्धिक प्रतिनिधि के रूप में ग्रहण करने के स्थान पर उन्हें मध्यवर्गीय के रूप में ही देखा जाता है। बुद्धिजीवी होने के नाते उनमें से कुछ एक विभिन्न हितों और वर्गों और समुदायों का भी प्रतिनिधित्व कर सकते थे और उन्होंने ऐसा किया भी परंतु क्योंकि वे बुद्धिजीवी थे उनका चिंतन स्वार्थ

स प्रेरित न होकर जागरूकता के स्तर पर विचारधारा से ही प्रेरित था। एक चिंतक, एक दार्शनिक और परिभाषा के व्यापक रूप में एक बुद्धिजीवी अपनी जाति, वर्ग, समाज, जहां वह उत्पन्न हुआ है के संकुचित स्वार्थों से ऊपर उठ सकता है और प्राय उठता है। वह अपने निजी स्वार्थों की अपेक्षा वर्ग समुदाय और राष्ट्र के हितों का ही प्रतिनिधित्व कर सकता है। यह बात द्रुत सामाजिक परिवर्तन के, पुराने सामाजिक राजनैतिक ढांचे के नष्टभ्रष्ट होने के नए वर्गों और आर्थिक तथा राजनैतिक पद्धतियों के उदय के समय और भी विशेष रूप से सही हो जाती है। संपूर्ण विश्व के सभी इतिहासों में सर्वोत्तम और सच्चे चिंतकों तथा बुद्धिजीवियों के समान 19वीं शताब्दी के भारतीय विचारक और बुद्धिजीवी भी दार्शनिक ही थे, किसी दल अथवा वर्ग के भाड़े के टट्टू नहीं थे। यह ठीक है कि व वर्गों और समुदायों से ऊपर नहीं उठ पाए तथा उन्होंने वर्गों और समुदायों के हितों का विशुद्ध रूप से प्रतिनिधित्व भी किया परंतु यह सब उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से उस वर्ग अथवा जाति के सदस्य होने के नाते अथवा उसके वफादार सेवक होने के नाते नहीं किया प्रत्युत उन्होंने तो यह सिद्धांत के अंतर्गत ही किया। दूसरे शब्दों में उन्होंने अपना सारा चिंतन व्यक्तिगत रूप में और राष्ट्रीय दृष्टिकोण से ही किया परंतु ऐसा हुआ कि वस्तुगत रूप में तथा अपनी सचेत धारणाओं के परिप्रेक्ष्य के बाहर उनका चिंतन सामाजिक हित से जुड़ने के साथ साथ जैसा कि वास्तव में हुआ विशिष्ट वर्गों व वर्गों के हितों से भी जुड़ गया। विचारणीय विषय तो यह है कि भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं और लेखकों का चिंतन और उनकी गतिविधि का सुस्पष्ट रूप में अध्ययन और विश्लेषण किया जाना चाहिए जिससे कि यह देखा जा सके कि वे किसका प्रतिनिधित्व करना चाहते थे और और किसका प्रतिनिधित्व कर रहे थे। यह किसी राजनैतिक नेता का अथवा व्यवहारशील बुद्धिजीवी का प्रथम किसी एक वर्ग अथवा जाति विशेष से उद्भव मानना और फिर उस पर इस प्रकार उस वर्ग अथवा जाति विशेष का होने का ठप्पा लगाना यांत्रिक भौतिकवाद के बचकाना प्रयास (समाज शास्त्रीय दृष्टि से भी) के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। वास्तव में प्रारंभिक भारतीय राष्ट्रवादी नेता अपने आप में कोई एक वर्ग नहीं थे। उनके आर्थिक विचार और नीतियां जो प्रतिक्रिया का स्तर तथा अन्य स्तर विचारक के थे न कि किसी संकुचित निजी स्वार्थों वाले निश्चित समुदाय के।

भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं का आर्थिक दृष्टिकोण मूलत पूंजीवादी था। आर्थिक जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने पूंजीवाद के विकास की सामान्यतया और औद्योगिक पूंजीपतियों के हितों की विशेषतया वकालत की। परंतु यदि कभी कभी ऐसा लगता है कि भारतीय नेताओं ने औद्योगिक पूंजीपतियों पर आवश्यकता से कुछ अधिक ध्यान दिया तो यह इसलिए नहीं हुआ कि उनका दृष्टिकोण इस वर्ग विशेष के निहित स्वार्थों तक ही सीमित था। वास्तविकता यह थी कि उनका यह विश्वास था कि आर्थिक क्षेत्र में देश के पुनरुद्धार का एकमात्र उपाय पूंजीवादी प्रणाली पर औद्योगिक विकास था। अथवा, दूसरे शब्दों में उस समय वस्तुगत रूप में औद्योगिक पूंजीपतियों का हित ही राष्ट्र के प्रमुख हित के साथ मेल खाता था। वे पूंजीपतियों के समर्थक थे क्योंकि उनका विश्वास था कि अन्य भागों और देशों में जिस द्रुत औद्योगीकरण की वे रट लगाते आ रहे थे

उसे यही वर्ग वास्तविक रूप दे सकता था। वे केवल औद्योगिक पूंजीवादी वर्ग का केवल इस रूप में प्रतिनिधित्व करते थे कि उनका आर्थिक चिंतन और कार्यक्रम पूंजीपतियों के पथ पर व्यवहार में आने वाले औद्योगीकरण की सीमा से बाहर जा ही नहीं पाता था।

इस संदर्भ में यह बात स्मरणीय है कि 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण में भारतीय पूंजीपति वर्ग, औद्योगिक और व्यापारिक मूलतः सरकार समर्थक था और उसने पनपते राष्ट्रवादी आंदोलन को सक्रिय समर्थन नहीं दिया। कांग्रेस के प्रत्येक अधिवेशन में कोष की कमी के रोने चिल्लाने के अभिलेख का अध्ययन यह मानने को विवश करता है। मुख्य वाणिज्य और उद्योग प्रारंभिक राष्ट्रवादियों का वित्तीय सहायता के रूप में एक पाई तक नहीं देते थे। दादाभाई नौरोजी ए० ओ० ह्यूम और विलियम वेडरबर्न ने इंग्लैंड में काम करते समय अपना निजी धन लगाया। सक्रिय रूप से भारत समर्थक अंग्रेज नेता विलियम डिगबी को अपने जीवन निर्वाह के लिए बहुत सारे भारतीय राजकुमारों के निजी हितों के इंग्लैंड में प्रतिनिधित्व करने का काम करना पड़ा। जस्टिस रानाडे, ए० एम० बोस, एल० एम० घोष, पी० एम० मेहता, डी० ई० वाचा, लाजपतराय, मदन मोहन मालवीय और अन्यान्य को अपनी व्यावसायिक आय पर जीवन निर्वाह करना पड़ा। लोकमान्य तिलक कानून के प्राइवेट छात्रों के लिए खोले गए ट्यूशन के कालेज से अपनी आजीविका चलाते थे। जी० के० गोखले दक्षिण शिक्षा समिति के सदस्य के रूप में थोड़ा सा ही वेतन पाते थे। सुरेंद्रनाथ बनर्जी एक प्राइवेट कालेज चलाते थे। जी० सुब्रह्मण्य और विपिनचंद्र पाल पत्रकार के रूप में काम करते थे। पाल महोदय को तो तुच्छ वेतन मिलता था। इस युग में राष्ट्रवादी पत्रकार सच्चे अर्थों में वह व्यक्ति होता था, जो मामूली से वेतन पर और प्रायः भूखे पेट राष्ट्रीय विचारों का प्रचार करता रहता था। इस अवधि में कांग्रेस द्वारा इकट्ठी की गई विपुल धनराशि केवल राष्ट्रीय विचारधारा के समर्थक महाराजा दरभंगा जैसे राजकुमारों और बड़े बड़े जमींदारों से ही प्राप्त हुई। बम्बई सूती कपड़ा उत्पादक मिलों के प्रवक्ताओं ने यहां तक कि 1905 में भी स्वदेशी आंदोलन को समर्थन देने से इनकार कर दिया। प्रथम विश्वयुद्ध के उपरांत ही भारतीय पूंजीपति वर्ग राष्ट्रवादी आंदोलन का उल्लेखनीय परिमाण में समर्थन और राष्ट्रवादी नेताओं तथा दलों को वित्तीय सहायता देने लगा।

यहां हम इस तथ्य को फिर दोहराना चाहेंगे कि प्रारंभिक राष्ट्रवादी आंदोलन एक ऐसा आंदोलन था जिसका संचालन राष्ट्रवादी बुद्धिजीवी, यदि आप कहना चाहें तो दार्शनिक कर रहे थे। उन्होंने पूंजीवादी दृष्टिकोण इसलिए नहीं अपनाया कि इसके पीछे उनके संकुचित स्वार्थ निहित थे प्रत्युत इसके पीछे उनका यह विश्वास काम कर रहा था कि पूंजीवादी विकास ही एक ऐसा मार्ग था कि जिस पर चलकर भारत आर्थिक दृष्टि से विकसित और संपन्न हो सकता था। बुद्धिजीवी होने के नाते वे चालू सुस्थापित आर्थिक सिद्धांत और पश्चिमी व्यवहार के ढांचे के अंतर्गत ही न्याय करते रहे परंतु इस समय के साथ उन्होंने राष्ट्रीय क्रांतिकारी स्थिति अपनाई जिसका स्वाभाविक परिणाम भारत में साम्राज्यवाद के वर्तमान ढांचे को उखाड़ फेंकना और इस रूप में देश की आर्थिक गति-हीनता को समाप्त करना था। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश भारतीय सरकारी अधिकारियों

के चिंतन की अपेक्षा इन नेताओ के चिंतन मे समकालीन यथार्थता अधिक झलकती थी। ब्रिटिश भारतीय आर्थिक नीतियों की अपेक्षा इन नेताओ की आर्थिक नीतियों म भारतीय समाज के सभी वर्गों के हितो का प्रतिनिधित्व प्राप्त था। यह सत्य है कि उनका पूजीवादी वग को भारत का आर्थिक कणधार मानने का विश्वास आर्थिक दृष्टि से उनकी एक बहुत बडी दुबलता सिद्ध हुआ। यह एक एसा पक्ष था जिसने प्रारभिक भारतीय नेताओ को राजनैतिक समथन के लिए जनता के कुछ एक उच्च और मध्यम वग पर निभर रहने का विवश कर दिया। यही कारण था कि इस अवधि मे राष्ट्रीय आदोलन म न गहराई आ पाई और न ही जन जन म उसे व्यापक समथन मिला अत वह अप्रभावी बन गया।

समय आने पर आर्थिक आदोलनो न भारतीय राष्ट्रवादी नताओ को राजनैतिक माग पेश करने को प्रेरित किया क्योकि वे अब अनुभव करने लगे थे कि राजनैतिक शक्ति प्राप्त होने पर ही आर्थिक नीतियो को भली प्रकार लागू किया जा सकता है। व अब स्वतन्त्र औद्योगिक अथ व्यवस्था के, विकास पर पडने वाले प्रभाव की दृष्टि स ही राजनैतिक प्रश्नो पर विचार करने लग। हा, उनकी राजनैतिक रिआयतो की माग उनके आर्थिक अभिप्राय मे हटकर ही उठाई गई। उनकी प्रशासन मे सुधार और राजनतिक सत्ता मे भागीदारी की मागो का एक महत्वपूण कारण प्रशासन को आर्थिक विकास और लोककल्याण का एक बहतर साधन बनाने की इच्छा थी। जैसा कि हम पहले लिखा चुके हैं कि लगभग प्रत्येक महत्वपूण आर्थिक प्रश्न को राष्ट्वादी नेताओ के एक वग न अथवा दूसरे वग ने देश की राजनैतिक दृष्टि म पराधीनता की स्थिति के साथ अथवा राजनतिक स्वशासिता के साथ अथवा कम से कम राजनतिक अधिकारो मे भारतीयो की भागीदार बनने की इच्छा के साथ जोड दिया।[1] अत म बहुत सारे राष्ट्रीय नेता इस निष्कष को निकालने पर विवश हो गए कि क्योकि ब्रिटिश भारतीय प्रशासन केवल शोषण के काय की पूर्ति का साधन था,[2] अत देश तभी आर्थिक दृष्टि से विकसित हो सकता है जब विशुद्ध ब्रिटिश शासन का स्थान एक एसी राजनैतिक व्यवस्था ले जिसम भारतीय महत्वपूण और प्रभावी भूमिका निभाए।

हमारे अध्ययन के अतगत अवधि म यदि राष्ट्रवादी नेताओ के पास राजनतिक अथवा आर्थिक लाभो के रूप म दिखाने के लिए कुछ नही था तो इसका कारण कदाचित् उनके राजनतिक काय और आदोलन का एक अपना ही ढग था। इस अवधि म राष्ट्रवादी गतिविधि का एक महत्वपूण पक्ष विरल अपवादो को छोडकर, लोकप्रिय आदोलनो और गतिविधियो तथा राजनैतिक सघर्षो का अभाव था, जिनके बिना प्रस्तावो, स्मरण-पत्रो, समाचार-पत्रो के सपादकीयो और लेखो का कोई राजनीतिक प्रभाव ही नही पड सकता था। आर्थिक प्रश्नो की गहरी और यहा तक कि बुद्धिमत्ता पूण जानकारी के बावजूद भारतीय राष्ट्रवादी नता भारत सरकार की नीतियो को प्रभावित करने म यदि सफल नही हो पाए अथवा राष्ट्रवादी आदोलन को विशेष शक्ति नही दे पाए तो इसका कारण उनकी आर्थिक नीतियो और मागो के पीछे जनता के आदोलन और सघष का अभाव था। उनकी असफलता इस दाहरे विश्वास को न तोडने म निहित थी कि ब्रिटिश राज्य अपराजेय है और पूजीवादी उत्पादन शैली एकमात्र सभव उपाय है। ब्रिटिश सत्ता

की पूरा शक्ति को चुनौती देने का आत्म विश्वास और सामर्थ्य जुटाने में उन्हें दशाब्दियां लग गईं। उस समय तक वे ब्रिटिश भारतीय प्रशासन में सुधार की बात कहते थे जिससे कि उसे भारतीय आर्थिक विकास का एक अच्छा साधन बनाया जा सके। उन्होंने ब्रिटिश शासकों की खुशामद की, उन पर प्रभाव डालने की चेष्टा की परन्तु उखाड़ फेंकने की नहीं सोची। भारतीय नेता इसके अतिरिक्त स्वयं अपने और विशाल जनता के बीच की गहराई खाई को पाट नहीं सके अथवा जनता के विशाल समुदाय को राजनैतिक गतिविधि में अपना सक्रिय साथी नहीं बना सके। परन्तु उनके पास मनुष्य के मन का अध्ययन करने की प्रतिभा थी। अतएव उनकी ठोस उपलब्धियों के अभाव का कारण सही आर्थिक जानकारी का अभाव और नीतियां न होकर राजनैतिक जन समर्थन का अभाव ही था। यह सुझाया जा सकता है कि यह वस्तुतः राजनैतिक जन समर्थन था न कि अपेक्षाकृत अच्छी आर्थिक जानकारी अथवा नीतियां अथवा उनकी वकालत थी, जो इस अध्ययन के अंतर्गत बाद के समय के भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का हमारे अध्ययन के अंतर्गत अवधि के आंदोलन से भिन्न करता है। इस प्रारंभिक काल में ही ब्रिटिश प्रशासन की आर्थिक परिधि की राष्ट्रवादी आलोचना की प्रमुख रूपरेखा का भली प्रकार और वैज्ञानिक ढंग से निर्धारण किया गया। परवर्ती राष्ट्रवादियों को तो इस पर बहुत निर्भर करना पड़ा। निस्संदेह उन्होंने पुराने आर्थिक सत्यों और तर्कों का व्यापक परिमाण में प्रचार किया। उन्होंने पुराने सत्यों में राजनैतिक जीवन फूंका परन्तु फिर भी यह कहा जा सकता है कि वे इनसे आगे नहीं बढ़ पाए।

महत्वपूर्ण विषय यह है कि उन्होंने मुख्य आर्थिक प्रश्नों को इस ढंग से पेश किया कि उससे ब्रिटेन और भारत के आर्थिक हितों के मध्य संघर्ष उजागर हो गया। उन्होंने इस तथ्य का निर्देश किया कि भारतीय यथार्थता का सर्वाधिक महत्वपूर्ण राजनैतिक और आर्थिक पक्ष यह था कि भारत आर्थिक शोषण के लिए विदेशी शक्ति द्वारा शासित किया जा रहा था। उनके अनुसार भारतीय अर्थव्यवस्था का इंग्लैंड तथा यूरोपीय राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था से भिन्न पक्ष संक्षेपतः यह था कि इस देश की अर्थव्यवस्था और वित्त विदेशी शक्ति द्वारा नियंत्रित है। उन्होंने आर्थिक समस्या के समाधान के लिए स्पष्टतः ऐसे सुझाव दिए जिन्हें ब्रिटिश सरकार कभी स्वीकार नहीं कर सकती थी, इस रूप में उन्होंने इस तथ्य को सामने रखा कि राष्ट्रीय आर्थिक मांगों की पूर्ति के लिए तथा नीतियों को लागू करने के लिए राजनैतिक स्वायत्तता आवश्यक थी। उन्होंने एक ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जिसमें शासक और शासित के बीच टकराव इस प्रकार से बढ़ता गया कि राजनैतिक सत्ता अथवा स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष अनिवार्य हो गया। एक बार विदेशी शासकों और राष्ट्रवादी आंदोलन कर्त्ताओं के बीच जब विवाद के मुख्य विषय इस रूप में प्रस्तुत किए गए जब एक बार भारत व ब्रिटिश शासन के बीच अन्तर्विरोध स्पष्ट हो गया तो सही रणनीति अपनाना तो समय की बात ही रह गई। वास्तविक राजनैतिक संघर्ष बाद में आ सकता था और आया। शक्तियों और रणनीति को समझने की गलतियों को प्रमुख संबंधित विषयों के संदर्भ में ठीक किया जा सकता था।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि इस युग के लगभग सभी राष्ट्रवादी नेताओं की राज-

नैतिक गतिविधि जनता का सावधानी के साथ राजनतिक शिक्षण देने तथा उन्हें आधुनिक राजनैतिक और राष्ट्रवादी चिंतन तथा गतिविधि के योग्य बनाने के ही उद्देश्य का लिए हुए थो। भारतीय नता यह भली प्रकार समझते थे कि उनका काय भावी राजनैतिक सघष के लिए भूमिका तैयार करने का ही था। उदाहरणाथ डी० ई० वाचा का 12 जनवरी 1905 को लिखे एक पत्र मे दादा भाई नौरोजी न लिखा—

कांग्रेस ने पनपती पीढी के मन मे स्वय अपनी मदगति और अप्रगतिशीलता के विरुद्ध असतोष और अधय के जो भाव उत्पन्न किए हैं, वह अपने आप म एक उपलब्धि है। यह उसका अपना ही विकास और प्रगति है काय अपेक्षित क्रांति का सिर चलाना है भले ही वह हिंसापूर्ण हो अथवा शांतिपूर्ण क्रांति के स्वरूप का निधारण ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश जनता की बुद्धिमत्ता या मूर्खता पर निभर रहेगा।[1]

इस युग के नताओ की उपलब्धियां बहुत हैं। हा, इसके लिए तात्कालिक लाभो को सफलता का मापदड नही बनाना होगा। उन्होने भारत की जनता को सामान्य आर्थिक हितो के प्रति जागरुक किया। उन्होन भारतीयो को सामान्य शत्रु स परिचित कराया और इस प्रकार एक सामान्य राष्ट्रीयता की भावना को सुदृढ बनान म सहायता दी। उन्होन जनता का अपनी आर्थिक दुदशा और अपमानित स्थिति स तथा उसमे सुधार की सभावना स परिचित कराया। उन्होंने अस्पष्ट आर्थिक आकाक्षाओ को एक सुस्पष्ट राष्ट्रवादी स्वरूप दिया तथा आर्थिक विकास के विचारो का प्रचार किया। उन्होंने लोगो के मन मे राष्ट्रीय सपत्ति मे वद्धि करने की लालसा उत्पन्न की और इसके साथ उनके सामने आर्थिक विकास का सुनियोजित कायक्रम प्रस्तुत किया तथा आर्थिक उन्नति की प्राप्ति के लिए माग की आर्थिक और राजनतिक बाधाओ का और उन पर विजय पाने के उपायो का निर्देश किया। इन महान कार्यो का पूरा करने म दोनो, मदु नरपंथी और उग्रवादी नताओ न समान रूप से ही योगदान दिया। दोनो ने ही आर्थिक विश्लेषण की उच्च स्तर की क्षमता और राष्ट्रभक्ति का प्रदशन किया। हमारा यह निष्कर्ष निकालना गलत नही होगा कि इनकी असफलताओ के बावजूद उन्होंने राष्ट्रीय चिन्तन के विकास के लिए सुदृढ आधारशिला रखी। इस प्रकार व आधुनिक भारत के निर्माताओ म गौरवमय स्थान रखत है। उस युग के नताओ मे से ही एक के निम्नलिखित आख्य मे बढकर कदाचित इस युग के महापुरुषो के कार्यो का अधिक उत्तम मूल्याकन नहीं किया जा सकता है

वक हम यह नही भूलना चाहिए कि हम देश की प्रगति की उस स्थिति म है जहा हमारी नहीं उपलब्धियां का छोटा दिखाई दना स्वाभाविक है तथा हमारे लिए बारबार दुखदायक असफलता का मुह देखना भी स्वाभाविक है। इस सघष मे यही हमारी नियति है। हम जब सौंपे गए काय को निभा चुकत ह तो हमारा उत्तरदायित्व समाप्त हो जाता है। अब आग का काय देश की भावी पीढी को दिया जाना चाहिए ताकि वे सफलतापूर्वक देश की सवा कर सकें। हम वर्तमान पीढी के नाता को प्रमुख रूप स अपनी असफलताओ क साथ ही अपने देश की सवा करने म सन्तुष्ट होना चाहिए। यह कहना कितना ही कठिन क्यो न हो हमारी इन असफलताओ

स भावी पीढी को वह शक्ति मिलेगी जिससे वह महान लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेगी।[4]

सदर्भ

1 उदाहरण क रूप में देखिए नौरोजी एसेज पृ० 26-7 और रानाडे एसेज प० 23 65 6 118 9

2 उदाहरणार्थ देखिए, नौरोजी एसेज पृ० 37 131 5 दि एक्सीजसीस आफ प्रोग्रेस इन इडिया जे० पी० एस० एस० अप्रल 1893 (खड XV सख्या 4) पृ० 15-6

3 यहा तक कि 1904 मे वित्त सदस्य एडवड ला ने उस समय के नेताओ मे सर्वाधिक मदुभाषी जी० के० गोखले की सतत आलोचना के विरुद्ध उत्तेजित होकर इस प्रकार से चीखे चिल्लाए थे 'जब वह सदन म अपना स्थान ग्रहण करते हैं तो वह कदाचित अचेतन रूप से हैं वे आदतन विलाप करने वाले की भूमिका और आचरण करने लगते हैं सरकार के दोषो पर उनका शोक और रुदन इतना अधिक करुणापूर्ण होता है मानो उन्होने सब अभ्यास और प्रशिक्षण द्वारा ऐसा किया है (एल० सी० पी० 1904 खड XLIII प० 542)

4 उदाहरणार्थ दादा भाई नौरोजी न लिखा हम बार बार यह याद दिलाना सवथा निरथक और ओछापन है कि ब्रिटिश राज्य न अराजकता के बाद व्यवस्था ला दी है इस देश के अनुवर्ती दोषो का तथा देश क भौतिक और नतिक दिवालियेपन का स्थाई बहाना नहा बनाया जा सकता आज के भारतीयो ने वह अराजकता न देखी है और न ही वह उसका अनुभव करत हैं भले ही व उसे समझने हैं और व्यवस्था लाने के लिए आभार भी प्रकट करत हैं परतु साथ ही वतमान म वे निवासी दुर्गति और विनाश ही देख रह हैं तथा उस पर विलाप कर रहे हैं (पावर्टी प० 219) इसी प्रकार आर० सी० दत्त ने लिखा ब्रिटिश शासन ने शाति अवश्य स्थापित की है परतु ब्रिटिश प्रशासन ने भारत मे राष्ट्रीय सपन्न के स्रोतो को उन्नत अथवा विस्तत नहा किया है (ई० एच० II प० VII) और केसरी न अपन 31 माच 1903 के अक म लिखा भारतीयों मे एकता और समानता है परतु यह उसी प्रकार की एकता और समानता है जिस प्रकार की समानता एक स्वामी के सेवकों म पाई जाती है अथवा एक गडरिए की भेडों के समुदाय मे पाई जाती है हमारे शासक हमे उत्तरदायी काय सौंपने को अथवा व्यापार और उद्योग म हमे साझीदार बनाने को तयार नही (आर० एन० पी० बब 4 अप्रल 1903) और देखिए प्रमाण के लिए नौरोजी पावर्टी प० 209-12 224-8 579 652 3 मराठा पूर्वोद्धत प० 443 447 पर उद्धत सी० पी ए० पृ० 22 पर बगाली 10 मई 1884 मराठा के 6 जून 1886 के अक में ए० एल० राय का लेख एस० एम० घोष सी० पी० ए० प० 762 आर० एन० मुधोलकर इडियन पालिटिक्स पृ० 37 जी० एस० अय्यर, ई० ए० प० 330.

5 यह पर्याप्त रोचक तथ्य है कि समझौता पसन्द नेताओ ने ही नहीं प्रत्युत अमृत बाजार पत्रिका और बी० जी० तिलक ने भी भारत के उद्देश्य के लिए ब्रिटिश जनता और संसद का हृदय जीतने की आवश्यकता अनुभव की उदाहरण के लिए देखिए ए० बी० पी० 8 अक्तूबर 1874

26 अप्रल 1883 तिलक, रिप० आई० एन० सी० 1904 पृ० 150 1, और प्रधान ऐंड भागवत पूर्वोद्धत, प० 80

6 यहा यह ध्यान म रखना चाहिए कि विभिन्न नेताओ ने यह धारणा को विभिन अवसरो पर और विभिन्न प्रश्नो के सबध में अपनाई उदाहरण के लिए आर० सी० दत्त के लिए सम्भण 1897 1901 की थोडी सी अवधि म अथात इग्लड और इडिया ग्रथ के तथा इकानामिक हिस्टरी आफ इन्डिया के प्रथम खड के वर्षों की मध्यावधि म आया

7 नौरोजी पावर्टी प० V VII 211 214 स्पीचज, प० 142 227 8 276-8 328 396 19 जनवरी 1898 के स्टेटसमन म 7 अगस्त 1903 के इडिया' म प० 67 जोशी पूर्वोद्धत प० 674-7 राय, पावर्टी, प० 37 9 पी० मेहता स्पीचेज प० 815 जी० एस० अय्यर इ० ए० शापक (प्रथम)पृ०तथा प०116 7 123 5 239 329 ईस्ट ऐंड वेस्ट 1903(खड II)प० 888, दत्त इ० एच० I प० XV ई० एच० II प० XVIII (वस्तुत उनके इकोनामिक हिस्टरी' ग्रथ के दोनो खडो म यह भावना अन्त प्रविष्ट है) प्रधान एड भागवत पूर्वोद्धत, प० 72 पर तिलक, एल० एम० घोष सी० पी० ए० प० 761, गोखले स्पीचज प० 1084 1156 7 30 मई और 6 जून 1886 के मराठा में ए० एल० राय का लेख समाचारपत्रो के लिए देखिए हितेच्छु 25 माच (आर० एन० पी० बब 3 अप्रल 1880) ए० बी० पी० 19 अक्तू० 1882 4 जून 1883 7 अक्तू० 1886 12 फर० 1892 20 मई 1896 मराठा 21 दिस० 1884 30 दिस० 1894 30 अक्तू० 1904 आनन्द बाजार पत्रिका 31 माच (आर० एन० पी० बग० 5 अप्रल 1884), नवविभाकर 21 अप्रल (वही 26 अप्रल 1884) साधारणी 15 जून (वही 21 जून 1884) समय 30 नव० (वही 5 दिस० 1885) शमसुन अखबार 12 अप्रल (आर० एन० पी० एम० अप्रल 1886) खसमुल अखबार 17 जून (वही जून 1886) धूमकेतु 20 मई (आर० एन० पी बग०, 28 मई 1887) बगवासी 30 जून (वही 7 जुलाई 1888) 14 जून (वही 21 जून 1890) तोहफा ए हिंद 13 अगस्त, (आर० एन० पी० एन० 19 अगस्त 1891) हितकारी तिमिरहित (आर० एन० पी० बग० 17 दिस० 1892) बगवासी 1 सित० (वही 8 सित० 1884) पूना वैभव 15 माच (आर० एन० पी बब 21 माच 1896) जमी उल उलुम 14 अप्रल (आर० एन० पी० ए० 21 अप्रल 1896) इदु प्रकाश 8 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 18 अगस्त 1898 बगाली 9 अप्रल 1900 केसरी तारीख नहा है (आर० एन० पी० बब० 18 जन० 1902) इडियन पीपुल 27 फर० 1903 हिंद 13 अक्तू० 1903 हिंद विजय 8 फर (आर० एन० पी० बब 11 फर० 1905)

8 उदाहरणाथ अरुणोदय 15 मई (आर० एन० पी० बब 21 मई 1881) ए० बी० पी० 19 अक्तू० 1882 13 फरवरी 1894 साम प्रकाश 21 अगस्त (आर० एन० पी० बग० 26 अगस्त 1882) हिंदी प्रदीप, जनवरी-फरवरी (आर० एन० पी एन० 8 जून 1901) सी० वाइ० चिंतामणि एच० आर० म फरवरी 1903 प० 233

9 ए० ओ ह्यूम ए स्पीच आन दि इन्डियन नेशनल काग्रस ऐंड इट्स ओरिजिंस एम्स ऐंड ओब्जेक्ट्स 30 अप्रल 1888 को इलाहाबाद की जनसभा म दिया गया भाषण पृ० 16

10 फिरोजशाह मेहता ने इस धारणा को दूसरे रूप म प्रस्तुत किया उन्होंने राष्ट्रवादी आन्दोलन को ब्रिटिश शासन के बनिया वाले भाग से अधिक परिष्कृत बनाने का एक प्रयास बताया (स्पीचज प 483)

11 1903 में कांग्रेस के अध्यक्ष लालमोहन घोष ने इसे बड़े ही रोचक ढंग से निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया 'हम क्या यह नहीं पूछना चाहिए कि क्या हम उस नीति पर विश्वास करें जिसने बहुत वर्षों पूर्व हमारे स्वदेशी उद्योगों की हत्या कर दी है अभी कल की ही बात है जिसने बिना किसी प्रकार का संकोच किए उदार प्रशासन के अंतर्गत हमारे सूती उत्पादों पर भारी उत्पादन कर लगा दिए हैं जो निरंतर 200 लाख पौंड की सीमा तक प्रति वर्ष हमारे राष्ट्रीय संसाधनों की निकासी कर रही है और जो हमारी कृषक जनता तथा कृषि उत्पादनों पर भारी कर थोप कर अतीत में सर्वथा अज्ञात विषम अकालों की तीव्रता व्यापकता और निरंतरता में वृद्धि कर रही है ? क्या हम विश्वास करें कि इन परिणामों को लाने के लिए उत्तरदायी विविध प्रशासनिक कृत्य ब्रिटिश राज्य के लोकोपकारी स्वरूप से ही सीधे प्रेरित थे ? (सी० पी० ए० में पृ० 743 पर)

12 ब्रिटिश दृष्टिकोण के लिए देखिए (जाज हैमिल्टन के विचार) स्टोक्स पूर्वोद्धृत पृ० 300 पर कर्जन स्पीचेज I पृ० VI भारतीय दृष्टिकोण के लिए देखिए नौरोजी स्पीचेज पृ० 123 332 एसेज पृ० 36 पावर्टी पृ० 216 सी० पी० ए० पृ० 181 पर आर० बी० घोष, स्पीचेज पृ० 152 ए० एम० बोस०, सी० पी० ए० पृ० 436 दि ब्रोकेन प्लेज ऐंड इटस कांसीक्वेंसेज जे० पी० एस० एम० जुलाई 1879 (खंड II संख्या 1) पृ० 43 46 मराठा 6 नवंबर 1881 दत्त इग्लैंड ऐंड इंडिया पृ० 118

13 उदाहरण के रूप में देखिए 'गोखले स्पीचेज पृ० 1079

14 उदाहरणार्थ कर्जन स्पीचेज II पृ० 91 और स्पीचेज III पृ० 98 जे० स्ट्रेची इंडिया (1903) पृ० 495 6 चिरनी पूर्वोद्धृत पृ० 390, 394 398 9 इस दृष्टिकोण के विस्तृत विवेचन के लिए देखिए स्ट्रोक्स पूर्वोद्धृत पृ० 65 और अध्याय 4 जेम्स मिल के दृष्टिकोण के लिए देखिए, डिगबी पूर्वोद्धृत पृ० 264 डफरिन के अनुसार भारत में ब्रिटिश राज्य का आधार 'हमारी सेनाएं हैं जो अशिक्षित और उदासीन जनता की पराधीनता को बनाए हुए हैं और जनता के शेष वर्ग में यह सार्वदेशिक भावना जड़ पकड़े हुए है कि हमारे प्रशासन में कितनी ही त्रुटियां क्या न हों वह न्यायपरायण निष्पक्ष और लाभकारी है और इसका एकमात्र विकल्प या तो मुसलमानों की क्रूरता और अराजकता को वापस लाना होगा अथवा रूस की भारत पर विजय (डफरिन टू सेक्रेटरी आफ स्टेट, 9 जुलाई 1886 डफरिन पेपर्स) इसी प्रकार 30 सितंबर 1897 के अंक में 'टाइम्स' ने यह शेखी बघारी कि उनकी अपनी जाति के इतिहास में ऐसी कोई उपलब्धि नहीं जिसमें अपनी भारत सरकार की अपेक्षा ब्रिटिश जनता किसी अन्य में अधिक गर्व का अनुभव करे किसी और में ये सभी गुण साहस न्याय दूरदृष्टि तथा आत्म त्याग सर्वोत्तम रूप में निरंतर और गौरव के साथ दृष्टिगोचर नहीं हुए किन्हीं विशेष बातों के लिए कितनी भी आलोचना क्यों न की जाए मुख्य तथ्यों को चुनौती नहीं दी जा सकती यह सब लिखने के उपरांत उसने घोषणा की भारत में समन्वीय सरकार के नियम लागू नहीं हो सकते उसने लिखा कि ऐसा करना अराजकता को बुलावा देना है भारत की जनता किसी भी रूप में स्वशासन के सर्वथा और पूर्णतया अयोग्य है और वे अपने देशवासियों द्वारा शासित होना कभी स्वीकार नहीं करेंगे

15 1887 में जे० बी० पीले ने डफरिन को लिखे एक पत्र में टिप्पणी की 'बंगाल में भारत के लोगों को ऐसी कोई शिकायत नहीं है कि जिससे क्षुब्ध होकर वे शांति और चैन को दर एक दें तथा शासकों के विरुद्ध तलवार निकाल कर खड़े हो जाएं (2 अक्तूबर 1887 डफरिन पेपर्स)

प्रारभिक राष्ट्रवादियो द्वारा किए गए आर्थिक आदोलन ने इस शिकायत की भावना को ही जन्म दिया

16 हसाड चौथी सिरीज खड XLV 26 जनवरी 1897 लगभग 534 भारत सचिव जाज हैमिल्टन ने दादाभाई नौरोजी को 6 दिसबर 1900 को लिखे एक पत्र मे शिकायत की आप स्वय अपने को ब्रिटिश राज्य का सच्चा समथक घोषित करते हैं परतु उस राज्य की व्यवस्था के लिए उसके साथ अविभाज्य रूप से जुडी स्थितियो और परिणामो की आप निन्दा करते हैं (मसानी पूर्वोद्धत, पृ० 459 पर) 30 दिसबर 1897 के अक मे टाइम्स ने इसी प्रकार की भावना व्यक्त की लिखा राष्ट्रवादी नेताओ के प्रति ब्रिटिश के शत्रुतापूर्ण व्यवहार के लिए देखिए एच० एल० सिंह पूर्वोद्धत अध्याय 4 तथा देखिए डब्ल्यू० एम० सितो कर दि नेटिव प्रेस आफ इडिया एशियाटिक क्वाटरली रिव्यू खड VII 1889 पृ० 62 रोस, पूर्वोद्धत अध्याय 10 और पृ० 286-8

17 उन्होने आगे कहा वे सदव ब्रिटिश सरकार के प्रति वफादारी का दम भरते हैं परतु जो प्रस्ताव वेपारित करते हैं उनसे स्पष्ट है कि वे इस सरकार के लिए काम करना असभव बना देना चाहते हैं (पूर्वोक्त स्थल प० 385 (प० 482 7 भी देखें

18 डफरिन द्वारा 17 मई 1886 को भारत सचिव को लिखा पत्र डफरिन पपस कुछ महीनो के उपरात 7 अगस्त 1889 को ए० ओ० ह्यूम को लिखे पत्र म डफरिन ने स्पष्ट शब्दो म कहा कि वह भारतीय समाचारपत्रो की स्वतत्रता की एक सीमा निर्धारित करना चाहते हैं इस तथ्य को दृढ़तापूर्वक कहने के उपरात कि ब्रिटिश सरकार न भारत को स्वतत्र प्रेस इस आवश्यक उद्देश्य के लिए दिया है कि वह सरकार के कार्यों की यथोचित आलोचना और समथन कर तथा जनता की भावनाओ और आकाक्षाओ को अभिव्यक्ति दे उन्होने प्रेस से अपने निम्नलिखित दो दायित्वो के निभाने की अपील करते हुए कहा प्रथम सरकार की आलोचना यथाथ तथ्यो पर आधृत होनी चाहिए सरकार क कल्पित अभिप्रायो अथवा अनुमान पर आश्रित धारणाओ को लेकर किसी प्रकार की निन्दा कदापि उचित नहीं द्वितीय सरकारी नीति की किसी प्रकार की आलोचना क्यो न हो ब्रिटिश प्रशासन पर इस देश म अथवा इग्लैड म यह अभियोग नहीं लगाया जाना चाहिए कि वह यह सब कुछ द्वेषपूर्ण भावनाओं स प्रेरित होकर कर रहा है (डफरिन पपस)

19 उदाहरण के रूप म दादाभाई नौरोजी न 1893 मे भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस म सभापतिपद से भाषण करत हुए इस तथ्य पर बल दिया उन्होने कहा मैं इस बात को मानता हू कि हम यह पूणत विश्वास करना चाहिए कि हम जो भी राजनीतिक व राष्ट्रीय लाभ प्राप्त करें किसी न किसी प्रकार से समाज के सभी वग उनसे लाभान्वित होगे प्रत्येक वग को मिलने वाले लाभ का रूप भिन्न भिन्न होगा हम सबके हित समान हैं और हम एक ही दिशा में गतिशील हैं हम इकट्ठे ही डूबेंगे और इकट्ठे ही तरेंगे यदि देश सपन्न है और एक को यदि जीवन क एक क्षेत्र म उन्नति का अवसर मिलता है तो दूसरे को दूसरे क्षेत्र म मिलेगा जसे कि हमारे यहां देश म यह उक्ति प्रचलित है यदि कुए म पानी होगा तो कूड म पहुचेगा ही यदि हमारे पास समृद्धि का कुआ है तो हमम से प्रत्येक व्यक्ति अपना भाग ले सकेगा परतु यदि कुआ ही सूखा है तो हम सबको बिलकुल प्यासा रहने पर विवश होना पड़ेगा (इन सी० पी० ए० प० 180-1 पर) और देखिए जोशी पूर्वोद्धत प० 748-9, आर० एम० सयानी सी० पी० ए० प० 309

20 यहां यह उल्लेखनीय है कि 1920 और 1940 के बीच की अवधि के दौरान अधिक प्रगतता के

साथ सक्रिय आदोलन क लिए अखिल भारतीय काग्रेस द्वारा ग्रहण की गई भूमि लगानो को कम करने की माग ही कृषि सबधी एकमात्र माग थी 1936 तक ऊचे लगान से किसानो के सरक्षण क प्रश्न को अलग अलग निजी तौर पर कार्यकर्ता के प्रयत्नो पर ही छोड रखा था 1936 म काग्रेस ने पहली बार काश्तकारी पद्धति और भूमि लगान पद्धति म मौलिक परिवतन की माग की उन्होने कृषि सबधी करो और लगानो म छूट देकर छोटे किसानो की तत्काल सहायता करने की पहली बार ही माग की(इडियन नेशनल काग्रेस रिजाल्यूशस आन इकोनामिक पालिसी ऐंड प्रोग्राम 1924 54 नई दिल्ली 1954 पृ० 13 3) गाधी जी द्वारा प्रस्तुत ग्यारह सूत्रो म कृषि सबधी एकमात्र माग थी सविनय अवज्ञा आदोलन समाप्त करन के मूल्य के रूप म किसानो को भूमि लगान म कटौती क रूप म राहत (बी० पट्टाभि सीतारमैया दि हिस्टरी आफ इडियन नशनल काग्रेस *1885 1935 मद्रास 1935 पृ० 619*)

21 यह पर्याप्त रोचक है कि आर० सी० दत्त न कम से कम एक भारतीय को वायसराय की कार्यकारिणी परिषद म सम्मिलित करने का तथा उसे भूमि लगान उद्योग और कृषि विभाग सौंपने का अनुरोध किया (सी० पी० ए० पृ० 497 8)

22 इडियन पीपुल, 27 फरवरी 1903 अन्यान्य सदर्भों के लिए देखिए पीछे पृ० 7 पर पादटिप्पणी स० 79

23 समानी पूर्वोद्धृत पृ० 441 पर इसी प्रकार पूना सावजनिक सभा द्वारा बडी महनत से तयार किए गए ज्ञापन पर सरकार की दो पक्तियो के उत्तर पर गोखले न निराशा प्रकट की तो जस्टिस रानाडे न समझाते हुए कहा आप अपन देश के इतिहास म अपने स्थान को क्यो नहीं समझते ये ज्ञापन नाममात्र क लिए सरकार को दिए जाते हैं वस्तुत ये जनता को सबोधित हैं ताकि वे यह समझ सकें कि इन मामलो म उन्ह क्या विचार करना है किसी प्रकार के सफल परिणामो की अपेक्षा किए बिना ही इस काय को वर्षों तक चलाना चाहिए क्योकि इस देश म इस प्रकार की राजनीति सवथा एक नई वस्तु है गोखले स्पीचेज पृ० 929 पर)

24 गोखले स्पीचेज पृ० 1113

ग्रथ सूची

नोट सक्षेप की दृष्टि मे केवल ग्रथ म उद्धृत स्रोतो का ही उल्लेख किया जा रहा है। पुस्तक मे प्रयुक्त सक्षिप्त शीर्षक प्रत्येक शब्द के पूरे शीर्षको के पश्चात कोष्ठक मे दे दिए गए हैं

प्राथमिक स्रोत

(क) पुस्तकें

ऐवस्टेक्टस आफ दि प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवनर जनरल आफ इडिया, *कानून और विनियमो की रचना के उद्देश्य से सकलित (वार्षिक) 1877 1905* (एल० सी० पी०)

बैनर्जी सुरेंद्रनाथ, स्पीचेज खड 1 5 कलकत्ता, 1880, 1885, 1890, 1894, 1996 *(स्पीचेज I आदि) स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज (जी० ए० नारायण ऐंड कपनी मद्रास* द्वारा तिथि निर्देश के बिना प्रकाशित) (एस० ऐंड डब्ल्यू)

बगाल नशनल चैंबस आफ कामस रिपोट (वार्षिक) 1887 91, 1894 1905 भरूचा, एस० बी०, स्पीचेज आफ इडियन एकोनामिक्स, (बबई तिथि रहित)

बबई मिल ओनस एसोसिएशन की रिपोट (वार्षिक) 1885 6 1886 7 चन्दावरकर एन० जी० स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज कर्किनी द्वारा सपादित एन० बी० बबई 1911

कजन लाड (केडलस्टोन) स्पीचेज खड 1 4 कलकत्ता, 1900 1902 1904, 1906 (स्पीचेज I आदि)

देसाई, अबानाल शेसरनाल, स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज (बबई 1918) भारत सचिव द्वारा *तथा भारत सचिव को दिए गए सप्रेषण 1875-1905*

डफरिन, मारक्विस आफ ऐंड आवा, स्पीचेज (कलकत्ता 1889)

डफरिन पपस माइक्रोफिल्म प्रतिलिपिया मे (नेशनल आकाइव्ज आफ इडिया, नई दिल्ली)

दत्त, आर० सी०, दि पैंजटरी आफ बगाल 1874 इग्लड ऐंड इडिया, (लदन 1897)

सर फिलिप फासिस मिनिटस आन दि सबजेक्ट आफ ए परमनेंट सैटलमैंट फार बगाल बिहार ऐंड ओरिसा, आर० सी० दत्त द्वारा भूमिका (कलकत्ता 1901), फैमिस ऐंड लड एसेंसमैंट इन इडिया, (लदन 1900) (फमिस इन इडिया), इकोनामिक हिस्टरी आफ इडिया, अर्ली ब्रिटिश रूल, 1956 1901 म लदन मे प्रथम प्रकाशित का मुद्रित रूप (ई० एच० I) इकोनामिक हिस्टरी आफ इडिया इन दि विक्टोरिया एज (लदन मे प्रथम प्रकाशित का छटा सस्करण) (ई० एच० II) स्पीचेज ऐंड पेपस आन इडियन क्वैश्चस, 1897 1900 (कलकत्ता 1904) (स्पीचेज II) ओपन लैटस टु लाड कजन, (कलकत्ता 1904) (ओपन लटस)

एलगिन अल आफ, स्पीचेज (कलकत्ता 1898)

ऐमिनट इडियस आन इडियन पालिटिक्स, सी० एल० पारिख द्वारा सपादित, (बबई 1892) (ऐमिनैंट इडियस)

फाइनास कमेटी रिपोट आफ 1886

फाइनाशल स्टेटमैंट आफ दि गवनमट आफ इडिया (वार्षिक 1877-1905)

घोप, लालमोहन स्पीचेज दो भाग (कलकत्ता 1883 1884)

घोप, डा० रास बिहारी, (स्पीचेज एड राइटिंग्ज, तृतीय सस्करण मद्रास तिथि रहित)

गोखल जी० के० स्पीचेज, जी० ए० नाटेसन द्वारा प्रकाशित द्वितीय सस्करण (मद्रास, 1916) पत्र व्यवहार, अप्रकाशित दि लाइब्रेरी आफ दि गाखले इस्टीच्यूट आफ पोलिटिक्स ऐंड इकानामिक्स पूना

गवनमट आफ इडिया (भारत सरकार) के अधिनियम, 1880-1905

हसाड (ससदीय विवाद) 1880-1905

होम (पब्लिक) डिपाटमेंट आफ गवनमट आफ इडिया, प्रोसिडिंग्ज 1880-1905

ह्यूम, ए० ओ० ए स्पीच आन इडियन नेशनल काग्रेस ऐंड इटस ओरिजिस एम्स ऐंड आब्जेक्टस, 30 अप्रल 1888 म इलाहाबाद म हुई जनसभा म भाषण

इडियन एसोसिएशन की रिपोट (वार्षिक) 1880 1905 छिटपुट (स्टे रिपोट)

इडियन करेंसी कमेटी की रिपोट, 1893, (कलकत्ता 1893)

इडियन करेंसी कमेटी, मिनिटस आफ एविडस ऐंड एपडिक्स 1893, सी 7060-2

इडियन डिबेट्स (हसाड म) फरवरी 1902

इडियन एजुकेशन कमीशन की रिपोट, 1883

इंडियन फमिन कमीशन की रिपाट, (1880 लदन)

इंडियन फमिन कमीशन की रिपोट (1898 कलकत्ता)

इंडियन फमिन कमीशन की रिपाट (1901 कलकत्ता)

इंडियन लीफलैट्स (इश्तहार) इडियाज अपील टु दि इग्लिश इलक्टस [illegible] डिस्ट्रीब्यूटेड आन बिहाफ आफ पिपुल आफ इडिया बाई दि ब्रिटिश इन्डिया एसोसिएशन आफ कलकत्ता, दि बॉबे प्रेसीडेंसी एसोसिएशन, दि पूना सावजनिक सभा

आफ मद्रास दि सिंध सभा आफ कराची, दि प्रजा हितवर्धक सभा आफ सूरत, 1885
इंडियन नेशनल कांग्रेस की रिपार्टें (वार्षिक) 1885-1904 (रिप० आई० एन० सी०)
इंडियन नेशनल कांग्रेस कटेनिंग फुल टक्स्ट आफ प्रेसीडेंशियल ऐड्रेस रिप्रिंट आफ आल दि कांग्रेस रिजाल्यूशन्ज आदि मद्रास, तिथि निर्देश नहीं (सी० पी० ए०)
इंडियन नेशनल कांग्रेस, रिजुल्यूशन आन इकोनामिक पालिसी ऐंड प्राग्राम 1924 54 (नई दिल्ली 1954)
इंडियन पालिटिक्स, (जी० ए० नटेसन, मद्रास द्वारा 1898 म प्रकाशित)
अय्यर जी० सुब्रह्मण्य सम इकानामिक आस्पक्टस आफ ब्रिटिश रूल इन इंडिया (मद्रास 1903) (ई० ए०)
अय्यर एस० सुब्रह्मण्य (स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज मद्रास तिथि रहित)
जोशी जी० वी० राइटिंग्ज ऐंड स्पीचेज, (पूना 1912)
लाजपत राय लाला लाजपत राय, दि मैन इन हिज वर्ड, (मद्रास 1907)
लड प्राब्लम्स इन इंडिया, पेपस बाई आर० सी० दत्त ऐंड अदस, (मद्रास 1902)
लड रैवेन्यू पालिसी आफ इंडियन गवनमेंट, (कलकत्ता 1902) (इक्स्यूटिंग रिजाल्यूशन बाई दि गवनर जनरल आफ इंडिया इन कौंसिल न० 1 तिथि 16 जनवरी 1902)।
लसडाउन, मारक्विस आफ स्पीचेज, 1888 94 2 खड (कलकत्ता 1894)
मालाबरी बहराम जी० एम० दि इंडियन प्राब्लम (बबई 1894)
मालवीय, मदनमोहन स्पीचेज, (गणेश ऐंड कंपनी मद्रास द्वारा प्रकाशित, तिथि रहित)
मार्डलिक वी० एन० राइटिंग्ज ऐंड स्पीचेज (बबई 1896)
मेहता फिरोजशाह एम० स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज सी० वाई० चिंतामणि द्वारा सपादित, (इलाहाबाद 1905) (स्पीचेज) सम अनपब्लिशड ऐंड लेटर स्पीचेज एन्ड राइटिंग्ज (बबई 1918)
मारल ऐंड मटिरियल प्रोग्रेस रिपाट, दि थड डिसैनियल जे० ए० बेंस द्वारा तयार की गई (लदन 1894)
मारल ऐंड मटिरियल प्रोग्रेस रिपाट, दि फोर्थ डिसैनियल फ्रासिस सी० डेक द्वारा तयार की गई (लदन 1903)
नौराजी, दादाभाई एसज स्पीचज ऐंड राइटिंग्स, सी० एल० पारिख द्वारा सपादित (बबई 1887) (एसेज) पावर्टी ऐंड अनब्रिटिश रूल इन इंडिया, (लदन 1901) (पावर्टी) स्पीचेज ऐंड राइटिंग्ज (जी० ए० नटेसन ऐंड कंपनी द्वारा प्रकाशित द्वितीय सस्करण मद्रास तिथि रहित) (स्पीचेज)
पाल, विपिनचद्र, दि न्यू स्पिरिट (कलकत्ता 1907)
पेपस रिलेटिंग टु चेंजेस इन दि इंडियन करेंसी सिस्टम, (शिमला 1893)
पार्लियामेंटरी पेपस (1876-1905) (पी० पी०)
पूना सावजनिक सभा, भारत से सबधित विषयों को ईस्ट इंडिया फाइनास कमेटी के समक्ष रखने के लिए सूचनाए सग्रहीत करने के लिए नियुक्त पूना सावजनिक सभा

की उपसमितियों की रिपोर्ट, पूना 1873
प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवर्नर आफ मद्रास, 1898, 1899, 1902, 1903
प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि गवर्नर आफ बॉबे, 1895, 1896, 1899, 1900, 1901, 1905
प्रोसीडिंग्स आफ दि कौंसिल आफ दि लैफ्टिनेंट गवर्नर आफ बगाल 1898
प्रोसीडिंग्स आफ दि लजिस्लेटिव कौंसिल फार दि एन० डब्ल्यू० पी० ऐंड अवध 1901
प्रोसीडिंग्स आफ दि पब्लिक मीटिंग आफ दि इडियन करेंसी एसोसिएशन 13 जुलाई 1892
प्रोसीडिंग्ज आफ दि पब्लिक मीटिंग हेल्ड ऐट दि फ्रामजी कावसजी इस्टीच्यूट अडर दि आस्पीसिज आफ दि बाबे प्रसीडेंसी एसोसिएशन आन सटरडे 15 जुलाई 1893 (15 जुलाई 1893 को शनिवार के दिन बबई प्रातीय सभा द्वारा फ्रामजी कावसजी सस्थान म हुई जनसभा की कार्यवाही)
प्रोसीडिंग्स आफ दि फस्ट नार्थ अरकाट डिस्ट्रिक्ट कान्फ्रेंस हेल्ड आन 21 22 जुलाई 1900 एट चित्तौड
पब्लिक सर्विस कमीशन प्रोसीडिंग्ज, 1887 7 खड (कलकत्ता)
रानाडे, एम० जी० एस्सज आन इडियन इकोनामिक्स (बबई 1898) (एस्सेज) दि मिसलेनियस राइटिंग्ज, बाइ रमाबाई रानाडे द्वारा प्रकाशित (बबई 1915) 'प्ली फार प्रोटेक्शन, इडियन शुगर इडस्ट्री,' मई और जून 1890 को टाइम्स आफ इंडिया मे दिए गए तीन लेख जिनकी भूमिका वी०जी० काले ने लिखी (बबई तिथि रहित)
राय, पृथ्वीशचद्र दि पावर्टी प्राब्लम्स इन इण्डिया (कलकत्ता 1895) (पावर्टी) दि इडियन शुगर ड्यूटीज (कलकत्ता 1899) इडियन फॉमिस, देयर काजेज ऐंड रेमैडीज, (कलकत्ता 1901) (फमिस)
रिजाल्यूशन आफ दि गवनमट आफ इडिया, सकुलर न० 96 एफ 6 59, 19 अक्तूबर 1888, फैमिन प्राग न० 19, सि० 1888
रिजाल्यूशन आफ दि गवनमेंट आफ इडिया, 27 नव० 1893 (जनरल) फाइल न० 95 सीरियल न० 7
रायल कमीशन आफ दि ऐडमिनिस्ट्रेशन आफ दि एक्सपेंडीचर आफ इडिया, रिपोर्ट आफ खड 3 और 4 पार्लियामेंटरी पेपर (हाउस आफ कामस) 1900, खड 29 सी 130 और सी 131 (विलबी कमीशन)
रणछोडलाल छोटेलाल लैटम आन दि करेंसी क्वश्चन (अहमदाबाद 1895)
सेन, केशवचद्र लाइफ ऐंड वर्क्स आफ ब्रह्मानद केशव प्रेम सुदर बसु द्वारा सकलित, (कलकत्ता 1940)
सोर्स मैटिरियल फार ए हिस्टरी आफ दि फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया, (बबई, खड 1 1957)
तेलग, के० टी० फ्री ट्रेड ऐंड प्रोटेक्शन फ्राम ऐन इडियन प्वाइंट आफ व्यू, (बबई 1877) सिलेक्ट राइटिंग्ज ऐंड स्पीचेज (बबई 1885)।
वकील, एम० एच० दि करेंसी प्राब्लम इन इडिया ऐंड सर डेविड बारबार, दि लैंग्वो

इडियन, ऍड दि रूपी (बबई 1892)
वाचा, डी० ई० स्पीचेज ऍड राइटिंग्स (जी० ए० नटेसन ऍड कपनी द्वारा प्रकाशित, प्रथम सस्करण, मद्रास, तिथिरहित) (स्पीचेज)
वाडिया, जे० ए० दि आर्टिफिशल करेंसी ऍड दि कामस आफ इडिया, बबई, 1902

(ख) पत्र-पत्रिकाए

अमत बाजार पत्रिका, (कलकत्ता) 1870 1905 (ए० बी० पी०) *
एशियाटिक क्वाटरली रिव्यू, (लदन) 1886 1905
बगाल मैगजीन, (कलकत्ता) 1873 82
बगाली, (कलकत्ता) 1880-1905
ब्राह्मो पब्लिक ओपीनियन (कलकत्ता) 1878 1881
कलकत्ता रिव्यू
कनकाड, (कलकत्ता) 1887
डान, (कलकत्ता) 1897 1905
ईस्ट ऍड वेस्ट, (बबई) 1901-1905
हिंदू, (मद्रास) 1880-1905
हिंदुस्तान रिव्यू ऍड कायस्थ समाचार (1899 1902) तक कायस्थ समाचार नाम से प्रसिद्ध (इलाहाबाद) 1899 1905 (एच० आर०)
इडिया (लदन) 1890 1905
इडियन पीपुल (इलाहाबाद) 1903 04
इडियन रिव्यू (मद्रास) 1901-1905
इडियन स्पेक्टेटर ऍड वायस आफ इडिया, बबई 1890-1901, (आई० एस० वी० ओ० आई०)
इदु प्रकाश, (बबई) 1883 1895 (छिटपुट प्रतिया)
जरनल आफ ईस्ट इडिया एसासिएशन (लदन) 1867-1895
जरनल आफ दि पूना सावजनिक सभा क्वाटरली (पूना) 1878-1897 (जे० पी० एस० एस०)
जरनल आफ दि रायल स्टेटिस्टिकल सासाइटी, 1902, 1911
मराठा, पूना 1881 1905
मुकर्जी ज मैगजीन, कलकत्ता 1872-1876 (एम० एम०)

* पत्रिका क तीन विभिन्न सस्करणा नगर, मुफस्सिल और विदेश का प्रयोग किया गया है इसकी तिथियो म एक सावधान पाठक को मिलने वाले अतर का कारण इस तथ्य से स्पष्ट हो जाएगा हमारे लिए इसके सिवाय और कोई विकल्प नहीं था क्योंकि पत्रिका क कार्यालय म सग्रहीत पत्रिका के अंक इसी रूप में उपलब्ध हैं इस प्रकार सभी प्रयुक्त तिथिया कार्यालय के सग्रह क ही अनुरूप हैं

नेटिव ओपीनियन (बबई), 1880-1889 (बिखरी हुई प्रतिया)
न्यू इडिया, (कलकत्ता) 1901-1904 (बहुत सारे सस्करण अप्राप्य)
रिपोट आफ दि नेटिव प्रेस फार बौम्बे (साप्ताहिक)1870-1905 (आर० एन० पी० बब)
रिपोट आन दि नेटिव प्रेस फार बगाल (साप्ताहिक) 1875 1905 (आर० एन० पी० बग०)
रिपोट आन दि नेटिव प्रेस फार मद्रास (मासिक और बाद म साप्ताहिक) 1875 1905 (आर० एन० पी० एम०)
रिपोट आन दि नेटिव प्रेस फार पजाब, नाथ वेस्ट प्राविसेज ऐंड अवध आदि (साप्ताहिक) 1875 1888 (आर० एन० पी० पी० एन०)
रिपोट आन दि नेटिव प्रेस फार पजाब(साप्ताहिक)1888-1905(आर० एन० पी० पी०)
स्टेटसमैन, हेमत प्रसाद घोष्ज द्वारा सकलित अखबार की कटिंग
दि टाइम्स (लदन) (छिटपुट प्रतिया)
टाइम्स आफ इडिया, 11 और 18 माच 1896
वायस आफ इडिया बबई 1883 89 न्यू सिरीज, 1901 1904 (वी० ओ० आई०)

गौण स्रोत

ऐंस्टे वीरा दि इकोनामिक डेवलपमेट आफ इडिया, (लदन 1949), ततीय सस्करण
बेडेन पावल, बी० एच० ए शाट एकाउट आफ दि लड रेविन्यू ऐंड इटस ऐडमिनिस्ट्रेशन इन ब्रिटिश इडिया विद ए स्कैच आफ दि लड टैन्योर (आक्सफोड 1894)
बागल, जे० सी० हिस्टरी आफ दि इडियन एसोसिएशन 1876 1951 (कलकत्ता, 1953)
बालफोर लेडी बी० दि हिस्टरी आफ लाड लिटस इडियन एडमिनिस्ट्रेशन 1876 80, (लदन 1899)
बनर्जी, पी० एन० फिस्कल पालिसी इन इडिया (कलकत्ता 1922) ए हिस्टरी आफ इडियन टक्सेशन (कलकत्ता 1930)
बैनर्जी, एम० एन० ए नेशन इन मेकिंग, (कलकत्ता 1925)
बैरन पाल ए० दि पोलिटिकल इकोनामी आफ ग्रोथ, (इडियन एडिशन, न्यू दिल्ली 1957)
बसु बी० डी० दि रुइन आफ इडियन ट्रेड ऐंड इडस्ट्रीज, (ततीय सस्करण, कलकत्ता 1935)
भाटिया, बी० एम० फैमिंस इन इडिया 1860 1945, (बबई 1963)
बाम्बे फैक्टरी लेबर कमीशन—रिपोट 1885 (बबई)
बोस, बिपिन कृष्ण स्ट्रे थाट्स आन सम इन्सीडटस आफ माई लाइफ (कलकत्ता, 1919)
बुकानन डी० एच० दि डेवलपमट आफ कपटलिस्टिक इटरप्राइज इन इडिया,(न्यूयाक, 1934)

बुक्लड सी० ई० बगाल अडर दि लैफ्टिनेंट गवनर 1854-1898, 2 खड (कलकत्ता, 1901)
चबलानी, एच० एल० स्टडीज इन इडियन करेंसी ऐंड ऐक्सचेंज (बबई 1931)
चमनलाल, डी० कुली, दि स्टोरी आफ लेबर ऐंड कैपीटल इन इडिया, 2 खड, (लाहौर 1932)
चद्रा, भोलानाथ राजा दिगबर मित्र खड 1 द्वितीय सस्करण 1896, खड 2 (कलकत्ता, 1906)
चिसने, जनरल जाज इडियन पालिटी (ततीय सस्करण, लदन 1904)
चौधरी आर० दि इवाल्यूशन आफ इडियन इडस्ट्रीज, (कलकत्ता 1939)
चितामणि, सी० वाई० इडियन पालिसीज सिस दि म्यूटिनी, (इलाहाबाद 1937), 1947 का पुन मुद्रण
क्लो ए० जी० इडियन फक्टरी लैजिस्लशन, ए हिस्टोरिकल सर्वे इडियन इडस्ट्रीज ऐंड लेबर की बुलेटिन स० 37 (कलकत्ता 1926)
कायाजी, जे० सी० दि इडियन करेंसी सिस्टम 1835 1926 (मद्रास 1930)
डकोस्टा, जान फैक्ट्स ऐंड फनिसीज रिगार्डिंग इरिगेशन एज ए प्रिवेंटिव आफ फमिन इन इडिया, (लदन 1878)
दास, आर० के० फैक्टरी लजिस्लेशन इन इडिया (बर्लिन 1923) दि लबर मूवमट इन इडिया, (बर्लिन 1923), प्लाटशन लेबर इन इडिया (कलकत्ता 1931), हिस्टरी आफ इडियन लेबर लैजिस्लशन, (कलकत्ता 1931)
डेविस सी० कोलिन दि प्राब्लम आफ दि नाथ वस्ट फ्रटियर, 1890-1908 (कब्रिज 1932)
डिगबी विलियम 'प्रास्पेरस' ब्रिटिश इडिया, (लदन 1901)
फारस्ट जी० डब्ल्यू० एडमिनिस्ट्रशन आफ दि मारक्विस आफ लसडौन ऐज वायसराय ऐंड गवनर जनरल आफ इडिया 1888 1894 (कलकत्ता 1894)
फ्रेसर लावेट इडिया अडर कजन ऐंड आफ्टर (ततीय सस्करण, लदन 1912)
गाडगिल, डी० आर० दि इडस्ट्रियल इवाल्यूशन आफ इडिया इन रीसेंट टाइम्स, (चतुथ सस्करण, कलकत्ता 1948)
घोष, पी० सी० दि डेवलपमट आफ दि इडियन नेशनल काग्रेस 1892 1909 (कलकत्ता 1960)
गोपाल, एस० दि वायसरायल्टी आफ लाड रिपन 1880-1884 (लदन 1953)
गोपालकृष्णन, पी० के० डेवलपमेंट आफ इकानामिक आइडियाज इन इडिया 1880-1950, (नई दिल्ली, 1959)
गुप्ता, जे० एन० लाइफ ऐंड वर्क आफ रमेश चद्र दत्त, (लदन 1911)
हैमिल्टन, सी० जे० दि ट्रेड रिलेशस बिटवीन इग्लड ऐंड इडिया (1600-1896), (कलकत्ता 1919)
होमलड जान एस० गोपालकृष्ण गाखले, (कलकत्ता 1933)

मेहता, एम० डी० दि इडियन काटन टैक्सटाइल इडस्ट्री, (बबई 1953)
मिटजलेर, लायड ए० दि थयारी आफ इटरनेशनल ट्रेड, ए सर्वे आफ कार्टेम्परारी इकानामिक्स, हारवड एस एलिस, द्वारा सपादित (फिलाडेल्फिया, 1948)
मिल, जान स्टुअट प्रिंसिपल्स आफ पोलिटिकल इकोनामी (लदन 1920)
मिश्र बी० बी० दि इडियन मिडिल क्लासेज, (लदन 1961)
मिश्र, बी० आर० लड रैविन्यू पालिसी इन दि युनाइटेड प्राविसेज अडर ब्रिटिश रूल (बनारस 1942)
मित्रा, ए० ससस आफ इडिया 1951 खड-6 वेस्ट बगाल, सिक्किम और चद्रनगर भाग-1 ए रिपोट (दिल्ली, 1953)
मोदी, एच० पी० सर फिराजशाह मेहता ए पोलिटिकल बायोग्राफी 2 खडो म (बबई 1921)
मौरिसन, थियोडर दि इकानामिक ट्राजीशन इन इडिया, (लदन 1916) 1911 के सस्करण का पुन मुद्रण
मुकर्जी, राधाकमल लड प्राबलम्स आफ इडिया, (लदन 1933)
मुखतार अहमद फैक्टरी लेबर इन इडिया, (मद्रास 1930)
मुरदोच जान फमिन, फैक्ट्स ऐड फैलेसीज, (तिथि रहित)
नियोगी, जे० पी० दि इवाल्यूशन आफ इडियन इनकम टक्स, (लदन 1929)
पैसा फड सिल्वर जुबली नबर (पूना 1935)
पाल, विपिनचद्र मिमारीज आफ माई लाइफ ऐंड टाइम, 2 खडो म (कलकत्ता, 1932 और 1951)
पालेकर, एस० ए० ट्रेड इन इडिया (बबई 1944)
प्रसाद आई० दुगा सम आसपैक्टस आफ इडियन फारेन ट्रेड 1757-1893 (लदन 1932)
पिल्लई, पी० पी० इकोनामिक कडीशस इन इडिया (लदन 1925)
प्रधान, जी० पी० और भागवत, ए० के० लाकमान्य तिलक (बबई 1958)
पुणेकर, एस० डी० ट्रेड यूनियनिज्म इन इडिया बबई 1948
रामगोपाल लोकमान्य तिलक (बबई 1956)
राव, वी० के० आर० वी० टैक्सेशन आफ इनकम इन इडिया (कलकत्ता 1931), एन एस्से आन इडियाज नेशनल इनकम 1925 29 (लदन 1939) दि नेशनल इनकम आफ ब्रिटिश इडिया 1931 32, (लदन 1940)
राय परिमल इडियाज फारन ट्रेड सिस 1870, (लदन 1934)
रीस जे० डी० दि रियल इडिया (द्वितीय सस्करण, लदन 1908)
रिकार्डो, डैविड दि प्रिंसिपल आफ पोलिटिकल इकोनमी ऐंड टैक्सेशन (एवरीमैन्स लाइब्रेरी लन्दन 1943)
राल एरिक ए हिस्टरी आफ इकानामिक थाट सशोधित सस्करण (न्यूयाक 1947)
राय पार्वती चरण दि रट क्वेश्चन इन बगाल (कलकत्ता 1883)

सायाल, एन डेवलपमेंट आफ इडियन रेलवेज (कलकत्ता 1930)
सान्याल, रामगोपाल ए जनरल बायोग्राफी आफ बगाल सिलिब्रिटीज, (कलकत्ता 1889)
शास्त्री, शिवनाथ मेन आई हैव सीन (कलकत्ता 1919)
सेन, अमित नोट्स आन दि बगाल रिनेसिया (द्वितीय सस्करण, कलकत्ता 1957)
शाह के० टी० सिक्सटी इयस आफ इडियन फाइनास (बबई 1921)
शाह, के० टी० और खभात के० जी० वेल्थ ऐंड टैक्सेबल कैपसिटी आफ इडिया (बबई 1924)
शिलवकर, के० एस० दि प्राब्लम आफ इडिया (लदन 1940)
शिरास, जी० एफ० पावर्टी एड किंडड इकोनामिक प्राब्लम्स इन इडिया (1935 ततीय सस्करण)
सिंह, हीरालाल प्राब्लम्स ऐंड पालिसीज आफ दि ब्रिटिश इन इडिया 1885 1898 (बबई 1963)
सीतारमया, बी० पट्टाभि दि हिस्टरी आफ दि इडियन नेशनल काग्रेस 1885 1935 (मद्रास 1935)
स्पियर, परसीवल इडिया, ए माडन हिस्टरी (ऐन आबर 1961)
स्टेटिस्टिकल ऐब्स्ट्रैक्ट फार ब्रिटिश इडिया फ्राम 1891 2 टु 1900-01
स्टोक्स, एरिक दि इग्लिश युटिलिटेरियन ऐंड इडिया (आक्सफोड 1959)
स्ट्रैची जान और स्ट्रैची रिचड दि फाइनासेज ऐंड पब्लिक वक्स आफ इडिया फ्राम 1869 टु 1881 (लदन 1882)
ए० गुप्त (सपा०) स्टडीज इन दि बगाल रिनेसा (कलकत्ता जादवपुर 1958)
तहमकर डी० वी० लोकमान्य तिलक (लदन 1956)
थाम्प्सन ई० और गैरेट जी० टी० राइज ऐंड फुलफिलमेट आफ ब्रिटिश रूल इन इडिया (लदन, 1935)
थामस, पी० जे० ग्रोथ आफ फेडरल फाइनास इन इडिया (मद्रास 1939)
थानर, डेनियल इन्वेस्टमेट इन एपायर (फिलाडेल्फिया 1920)
तिवारी, आर० डी० रेलवेज इन माडन इडिया (बबई 1941)
वकील, सी० एन० और मुराजन एस० के० करेंसी ऐंड प्राइसेज इन इडिया (बबई 1927)
वकील, सी० एन० फाइनशियल डेवलपमटस इन माडन इडिया (बबई 1925)
वाडिया, पी० ए० और मर्चेंट के० टी० अवर इकानामिक प्राब्लम (द्वितीय सस्करण बबई 1946)

अनुक्रमणी

भारत सरकार से रियायती दर पर प्राप्त कागज इस पुस्तक में इस्तेमाल किया गया है